लोकाकार
१ प्रकरण १
पृष्ठ १
उंचा लोक
त्रिछालोक
नीचा लोक
निगोद
४ राजू त्रसनालक उंची है
सर्व राजू ३४३

पूर्व
ये नव लौकांतिक के विमान

विनंति

पुस्तकको यत्नासे पढना, आशातना नहीं करना. और गुणोंके ही अनुरागी होना, दोषको छोड देना. हितकारक बातोंका ही संग्रह कर लेना और इस मुजब वर्ताव करना.

Printed at the Satyavijaya P. Press—Ahmedabad.

सूचना.

इस पुस्तकको पढने वाले गणको किसी भी प्रकारका संदेह उत्पन्न होवे तो उसका खुलासा इस पुस्तकके कर्तासे करना. मणिभुवनजी तो फक्त पुस्तक छपानेका खर्च देनेवाले हैं परंतु इसके गुण-दोष विषय वो जुम्मेदार नहीं हैं.

शुध्धि पत्र.

खंड १—प्रकरण १.

पृष्ठ.	पंक्ति.	अशुद्ध.	शुद्ध.
९	८	चापठ	चौपठ.
१०		फुटनोट (टीप)में—पहले कोटमें चडनेके दश हजार पंक्तियें, दुसरे तीसरे कोटमें चडनेके पांच २ हजार पंक्तियें. यों सर्व २०००० पंक्तियें एकेक हाथके अंतरसे हैं, जिस्के ५००० धनुष्य हुये. २००० धनुष्यका एक कोशके हिसाबसे २॥ कोश उंचा समवसरण है.	
१८	५	प्रकाशे	प्रगमे.
२१	६	आजीविका भय	आजीविका भय, मरण भय.
२३	२१	(टीपमें) पडम	पउम.
३३	५	वनिता	इक्षागभूमी (उस वक्त ग्राम नहीं था)
३४	७	जीतार्थ	जीतारी.
३५	२	कुशलपुर	कंचनपुर.
३५	११	धरराजा	श्रीधरराजा.
४१	२	विपुला	वप्रा.
४५	१७	(टीपमें) नहीं है के आगे	तथा पश्चानुपूर्वी गिणते १३ में होते है
४८	१४	पद्य	पद्म.

खंड १ प्रकरण २

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२१	१३	आ	१॥
२२	५	और	और उत्कृष्ट एक सागर.
२३	४	३४ लाख	४४ लाख.
२५	१३	लाख	लाख.
२६	३	११०००	१२०००
२७	[illegible]	चंत्रमें टंविगी	टिंवरु.
२९	६	आठमें आठ	आठ.
३१	३	लेड	लेण.
३३	१४	नव	नवे.
४०	१३	पेहल	मेहल.
४१	३	कानक	कानतक.
५२	१७	फिरताहे इसके आगे	वेताड पर्वतसे उत्तर दिशा और चूल हेमवंतसे दक्षिण दिशा गंगा सिंधूके मध्यमें रुषभ कूट गोल पर्वत १२ योजन का उंचा हैं, जिसपे चक्रवर्ती नाम लिखते हैं.
५९	९	मीली है इसके आगे	इसमें लक्ष्मी देवी रहती हैं.
६०	४	सोमाण	सोमाणस.
६८	९	३१६९२७	३१६२२७
७०	१२	दूर है इसके आगे	—इन द्विपोंका जैसा नाम है वैसेही आकारके मनुष्य उसमें रहते हैं, एकंत मिथ्यात्वी होता हैं.
७२	१	त्रयालीस	बहोतर (७२)
७३	३	लंबे	चौडे.
७७	३	यह योजन ४ हजार कोसके.	
७९	१	ग्रह और नक्षत्रकी टीका अदल बदल है	
१०३	१३	आयुष्य	मनुष्य.
१०४	१९	णियदंति	णिय दंति.

खंड १—प्रकरण ३

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१२	७	चित शान्ति	चितकी चपलता
१२	१७	वत्थंव	वत्थं च
१२	१७	कम्नलं	कम्बलं
१२	१८	लज्जका	लज्जठा.
१३	१६	महसिणा	महेसीणा.
१६	१	भूल	मूल.
२१	६	नहीं क्या	कि नहीं.
२३	१०	निरोधना	विराधना
२९	२१	स्त्रीकथा	स्त्रीकथाराजकथा.
२९	१४	मंत्र	यंत्र.
४३	२	वंकात	वहोत.
४३	१०	लत्तामो	लब्भामो.
४९	१७	अमित्रं	अभ्यंतर.
४६	१०	जुदी रखाय	जुदी २ खाय.
९७	१४	टोल	टाले.
६८	९	असेद	अभेद.
७१	१२	पुरिमल	पुरिमंडल.
७७	१३	थापो	थापी.
८२	७	पावे	मावे.
८३	१९	मनुस्मृती	कासीखंड.
८८	१८	सदा	महा.
९३	१६	५७००	५२००
९९	१९	मिट्ठा	मीठा.

खंड १—प्रकरण ४.

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
,,	१०	याभो	भार्या.
,,	१०	गाकी	गउकी.
,,	१९	सूदेव	सूरदेव.
,,	१७	कोल	कांपिलपुर.
१२	१०	वर्णव था इसके साडी वारे क्रोड पद थे आगे	

१७	१	५०००	९००
२२	३	क्षेत्रयोग	नक्षत्रयोग.
२३	७	मुत्र.	मुक्र.
३१	१६	पाचदल	पायदल.
३४	६	छेहीने	सातहीने.
३५	१०	हुमक	हुकम.
४०	१	काटा	कोठा.
७०	३	फला	कला
७०	४	७० लाख ५६— वर्षका १ पूर्व.	७० लाख ५६ हजार क्रोड वर्षका एक पूर्व.
८४	४	तीन गुप्ती नहीज चाहीये.	
८६	४	मराशता	मकाशता.

खंड १—प्रकरण ५.

१	१२	निग्रंथेतिवाके.	पडिआह भत्ते कहंतुदं- आगे. तेद्वीए वोसट काएति वच्चे महाणोतिवा समणोतिवा भीक्खुतिवा. णिगंत्थेतिवा (ये पाठ ज्यादा है अर्थ नीचे प्रमाणे.
२	१६	पेक्ष.	पेज्जंच.
३	१०	सज्ञपजोग	अज्ञप जोग.
४	२	आयण्ण वाय	आयं वाय.
४	४	णियाग	णियोग.
४	१५	जाणह जंमहं भतारो	जमह जाणहं भयंतारो
११	१०	भोजनसे	भाजनसे.
११	१४	विणइच	विणइज्जं.
१४	२	हत्यादी	इत्यादी.
१९	४	खंध के आगे—	शाख माति शाख.
३१	२०	तोषइव	तोयइव.
३२	२	गेठाहत्था	गेंडा हाथी.

खंड २.

पृष्ट	ओली	अशुद्ध	शुद्ध.
१	७	साधू	श्रुत.
३	१६	नाल	नालं.
५	१०	अखंती	असंख्याती.
९	१	तप	तक.
१०	१	वर्ग	वर्ण.
१४	मे. पृष्ठकी वनस्पतिकी टीप १२ में पृष्ठ मे हैं.		
१५	१०	गडके	रगडके
२०	४	कुगाल	कुणाल.
२२	६	पुर्वोका	पूर्वोका था
३१	१५	पहोंचेगा	पचेगा
५०	४	अ, १८	अ. २८
५३	५	वखदान	खदान.
५४	४	सद	सदा.
५८	६	मोढ	मोठ.
६२	१८	खडा	खाडा.
६२	२०	अठाइ	अढाइ.
६३	९	२७२	२०२
६५	९	१८ नर्क	१४ नर्क.
६६	२	लोक	लोका लोक.
६४	४	स्पर्श	५ रस
७०	१७	परधा	पराघात
७१	३	अत्रसनाम	त्रसनाम
७२	४	पल	फल
७९	६	परीदी	परी.
८३	२	स्नेह	(पडूची क्रियाका अर्थ स्नेह भावपे उतारा है खोटा हैं; सत्र अर्थ द्वेषभाव पर उतारना)
८९	१४	उली	उलीन्चे.

९१	२	नाणपउलेणं	नाणपउसेणं
१०१	१५	खड्डा	खोडा
१०६	१७	मिस्सो	मिस्सी
१०९	१४	चघइ	चयइ.
११०	१३	कमीनकमी	कभीनकभी
१२६	१५	कहाहैं	कराहैं
१३०	८	करणी	कोरणी
१३४	८	भार	भाव
१३६	८	जाना	जूना
१४०	३	श्रुती	मती
१४५	९	(भगटी)	(भगट)
१५०	३	इत्तराहसें	इसतराहसें
१५६	१८	पंचवर्ण	वर्णादी पांच
१५८	११	वस्त्र	सुवर्ण
१६१	९	नींवड	विनय
१६१	१७	क्राये	किये
१६२	३	उज्व	उज्वल
१६३	८	एक	अर्ध
१६४	टीप	बाद	बादर
१६७	२३	सम्यक्त्व	श्रुतधर्म.
१६८	१६	तो बताया	आगे बतायँगे
१७६	३	मनको	मतको
१८०	२	दवमें	देवमें
१८९	७	(झाडू)	(ओटला)
२०१	५	कूपण	कूपल
२०२	४	यूमषखमरक्खा	यूमछ खरसरका
२०३	९	मसकं	मस्तकं
२०६	६	लोकभी	लोकमेंभी.
२३०	१४	मयडा	पयडा
२३१	३	१—२—३—४—५	२—३—४

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२२६	१६	धर्म	धम्म
२३६	१७	निवाण	निव्वाण
२५९	४	पावे	पाले
२६१	९	हजार	०
२६२	८	अथर्व	अथर्वण
२६२	११	स्वीमीकों	स्वामीके पास.
२७०	१९	लगते हैं	लगाते हैं
२७६	१२	ख्याली	ख्यालके
२७८	१५	कुंव	कुटुंब
२७८	२०	सरणा	झरणा.
२९३	४	जवर	जव्वर
३०४	३	यातना	यत्ना
३०७	६	इनी	इनकी
३२५	५	पहला अहिंसाव्रत पांच अणुव्रत.	
३२५	२०	ड्रन	इन.
३४७	१९	अवी	ज्यादा
३६३	१८	कवल	कबूल.
३७३	१८	जागते	जाणते
३९२	१५	प्रमाणसे जात प्रमाण	प्रमाण
४०५	१२	शिग्रपद	शिग्र शिव पद
४०६	१८	उगट	उगटणा.
४१४	१०	पैश	पेशाव.
४१६	२०	कुटंव	कुंथवे.
४३०	१६	वखन	वचन.
४३१	२०	भापा नही वोले	भापा वोले.
४३५	६	हाल	हल.
४४३	१३	कायां	कार्य.
४४५	९	त्यांही	त्यौंही.
४८२	१७	भित	पित

४८५	३	खेड	खंड.
४८६	१८	एवेणि	एखणी.
५०८	३	केस	करके.
५१५	१९	पासा क्रुसंति	फासा फुसंती.

और भी कितनेक स्थलमें ह्रस्व-दीर्घ, भाषाकी अशुद्धि व छापाखाना सम्बन्धी दोष रह गये हैं, जिस्को पाठक गण सुधारके पढेंगे ऐसी विनंति की जाती है.

प्रस्तावना.

इस अपार संसारसागरमें परिभ्रमण करते हुये प्राणीको जन्ममरणादि कष्टसे मुक्त करनेवाला एक 'धर्म' ही है. सर्व धर्मों ये बात मान्य रखते हैं और ये भी स्विकारते हैं कि 'दया'में ही 'धर्म' है.

यद्यपि सर्व धर्ममें भगवती दयाको प्रधान पद दिया गया है तो भी सब धर्मवाले, दयाका सत्य स्वरुप समझ नहीं सके हैं. कित्नेे धर्मवाले ऐसे समझते है कि बीमार प्राणीको मारनेसे (दुःखरुप जिंदगीसे छुडानेसे) दया होती हैं! कित्नेक मानते हैं कि खटमल, विंछु, सिंहादि प्राणीका वध करनेसे दया होती है! कित्नेक यज्ञमें पशुका बलीदान देनेमें दया समझते हैं! परंतु इंद्रियोंपर व स्वार्थांधता पर संपूर्ण विजय करनेवाला जैन धर्म तो सर्व जीवोंकी दयामें ही धर्म मानता हैं और स्वार्थसे परमार्थको ही प्रथम पद देता हैं. इसी सबबसे जैन धर्म श्रीमद् शंकराचार्य जैसे प्रबल प्रतिस्पर्धीयोंके सामने टीक सका और बोधादि धर्मोंको हिंदसे भागना पडा ऐसा जैन धर्मको भागना नहीं पडा परंतु ये पवित्र भूमिमें कायम ही रहा.

जैन धर्ममें दान–शील–तप और भाव ये चार धर्मसाधन बताये हैं. दान, धनके जोरसे हो सकता है; शील, मनके जोरसे और तप, तनके जोरसे हो सकता है. इन तीनहीमें जैसा भाव होय वैसा फल मिलता है. मराठीमें कहा है कि 'वासना तसे फल" ये भावकी सुधारनाके लिये 'ज्ञान' आवश्यकीय है; क्यों कि सम्यक् भावसे तीन ही वस्तु संसारको (भव भ्रमणको) घटानेवाली होती है और मिथ्या भावसे तीन ही वस्तु संसारको बढानेवाली होती है. इस लिये ज्ञानकी अत्यंत ही जरुरत है.

जैनमें ज्ञानके पांच भेद कहे हैं, जिसमें मुख्य ' श्रुत ज्ञान ' है. श्रुत ज्ञानकी साहाय्यसे मति आदि ४ ज्ञानकी प्राप्ति होती है. सर्व जीवोंको सत्यासत्यका भान करानेवाला, सम्यक् मार्गमें लानेवाला, विवेकवंत बनानेवाला, मोक्ष रस्तेपे च्हडानेवाला एक श्रुत ज्ञान ही है. इस दुषम कलीकालके अंधकारमें श्रुत ज्ञान एक मशाल तुल्य प्रकाश करता है. श्री उत्तराध्ययन सूत्रके दशमे अध्ययनमें कहा है कि, " इस वक्त अर्थात् पंचम कालमें जिन-तीर्थंकर तो है ही नहीं, परंतु तीर्थंकरके मार्गको बतानेवाले जिनोक्त शास्त्र तथा तदुपदेशक है, जिनसे न्यायमार्ग प्राप्त करनेमें, हे जीव ! तू समय मात्रका भी प्रमाद मत कर."

ऐसा उपकारी श्रुत ज्ञानका संरक्षण व प्रसार अत्यंत ही आवश्यकीय है. सुभाग्यसे आजकल मुद्रायंत्र (छापा) आदि साधनोंके सबबसे ज्ञानका फैलाव थोडे खर्चसे और थोडी तकलीफसे हो सक्ता है.

श्रुतज्ञानके प्रसारके लिये जो जो महात्माओं और गृहस्थों प्रयास करते हैं वे सब धन्यवादके पात्र हैं. इस ग्रंथके कर्त्ता बालब्रह्मचारी मुनिश्री अमोलख ऋषिजी के जिनोंने तीन मास जित्ने अल्प समयमें ये बडा ग्रंथ तैयार किया और हैद्राबाद निवासी श्रीयुत् लालाजी नेतरामजी रामनारायणजी के जिनोंने परोपकारार्थ बडा [illegible]उठाकर ग्रंथको प्रगट कराया यह दोनो महाशय इसी सबबसे [illegible]वादके पात्र है. साधूमार्गी जैन वर्गमें इत्ना बडा पुस्तक [illegible]मास जित्ने अल्प समयमें बनानेवाले और छपवा कर अमूल्य [illegible]ट करनेवाले हमारे जाननेमें कोइ नहीं आये. इस लिये ये दोनु [illegible]पकारी महाशयोंके संक्षिप्त जिवन चरित्र इधर देनेका योग्य समझा गया है.

इस ग्रंथके कर्त्ताका संक्षिप्त जीवनचरित्र.

मारवाड देशके मेडते शहरके रहीस मंदरमार्गी बडे साथ ओसवाल कॉंसटीया गोतके भाइ कस्तुरचंदजी व्यापार निमित्ते मालवाके आसटे ग्राममें आ रहेथे, उन्का अकस्मात आयुष्य पूर्ण होनेसे उन्की सुपत्नी जवाराबाइने वैराग्य पाके ४ पुत्रोंको छोड साधमार्गी जैन पंथमें दीक्षा ली और १८ वर्ष तक संयम पाला. मातापिता व पत्नीके वियोगकी उदासी से शेठ केवलचंद भोपाल शहरमें आ रहे और पिताके धर्मानुसार मंदीरमार्गीयोंके पंच प्रतिक्रमण, नव स्मरण, पूजा आदि कंठाग्र किये. उस वक्त श्री कुंवरजी ऋषिजी भोपाल पधारे उन्का व्याख्यान सुननेकु भाइ फुलचंदजी धाडीवाल केवलचंदजीको जवरदस्तीसे ले गये. महाराजश्रीने सुयगडांगजी सूत्रके चतुर्थ उद्देशकी दशमी गाथाका अर्थ समझाया. जिससे उन्को व्याख्यान प्रतिदिन सूननेकी इच्छा हुइ. शनैः शनैः प्रतिक्रमण, पच्चीस वोलका थोक इत्यादि अभ्यास करते २ दिक्षा लेनेका भाव हो गया. परंतु भोगावली कर्मके जोरसे उन्के मित्रोंने जवरंदस्तीसे हुलासाबाइके साथ उन्का लग्न कर दिया. दो पुत्रको छोड वो भी आयुष्य पूर्ण कर गइ. पुत्र पालनार्थ, सम्बन्धीयोंकी प्रेरणासे तीसरी वक्त ब्याव करनेके लिये मारवाड जाते रस्तेमें पूज्य श्री उदेसागरजी महाराजके दर्शन करनेको रतलाम उतरे. वहां वहुत शास्त्रके जाण, भर युवानीमें सजोड शीलव्रत धारन करनेवाले भाइ कस्तुरचंदजी केवलचंदजीको मिले, जो उन्को कहने लगे कि, "विषका प्याला सहज ही गिर गया, तो पुनः उसको भरनेको क्यों तैयार होते हो ?" यों कहते उन्को पूज्यश्रीके पास ले गये. पूज्यश्रीने कहा : "एक वक्त वैरागी वने थे अब वनडे (वर) बननेको तैयार हुये क्या ?" इत्यादि वचनों सुण केवलचंदजी ब्रह्मचर्यव्रत धारण कर भोपाल गये. दिक्षा लेनेका विचार स्वजनोंको दर्शाया

परंतु आज्ञा नहीं मीलनेसे एक मास-तक भिक्षाचारी कर आज्ञा संपादन करी और १९४३ चेत सुदी ५ के रोज श्री पुनाऋषिजी के पास दिक्षा ले पूज्य श्री खुबाऋषिजीके शिष्य हुवे.

श्री केवलचंदजीके ज्येष्ठ पुत्र अमोलखचंद पिताकी साथ ही दिक्षा लेनेकु तैयार हुवा परंतु बालवयके सबबसे स्वजनोंने आज्ञा नहीं दी और मोसालमें पहुंचा दिया. एकदा कवीवर श्री तिलोक-ऋषिजीके पाटवी शिष्य पंडित श्री रत्नऋषिजी और तपस्वी श्री केवलऋषिजी इच्छावर ग्राम पधारे. वहांसे दो कोश खेडीग्राममें अमुलखचंद थे वो पिताके दर्शन करनेकु आये. दर्शन से वैराग्य पुनः जागृत हुआ और १० वर्ष जितनी छोटी वयमें दीक्षा धारण कर ली. (संवत् १९४४ फाल्गुन वदी २) श्री अमोलख ऋषि श्री केवलऋषिजीके शिष्य होने लगे परंतु उन्होंने कहा कि मेरा अबी शिष्य करनेका इरादा नहीं है. तब पूज्य श्री खुबाऋषीजीके पास ले गये. पूज्यश्रीने अमोलखऋषिजीको अपने ज्येष्ठ शिष्य श्री चेना ऋषिजीके शिष्य बनाये थोडे ही कालमें श्री चेनाऋषिजी और श्री खुबा ऋषिजीका स्वर्गवास होनेसे श्री अमोलख ऋषिजीने श्री केवल ऋषिजीके साथ तीन वर्ष विहार किया. फिर श्री केवल ऋषिजी एकल विहारी हुवे और श्री रत्नऋषिजी दूर ग्राम रहे. इस लिये अमोलख ऋषिजी दो वर्ष तक श्री भेरु ऋषिजीके साथ रहके पीछे श्री रत्नऋषिजीका मिलाप होनेसे उन्के साथ विचरे. इन महापुरुषोंने उन्को योग्य जाण बहुत खंतसे शास्त्राभ्यास कराया, जिस्के प्रसादसे गद्य–पद्यमें कित्नेक ग्रंथ बनाये और अनेक स्वमति–परमतियोंको सद्धर्ममें द्रढ किये.

श्री अमोलख ऋषिजीके, संवत् १९५६ में मोतीऋषिजी नामके एक शिष्य हुए, कि जिनोंने बंबइ में काल किया.

इस "जैन तत्व प्रकाश" ग्रंथ संवत् १९६० में घोडनदी

(दक्षिण) में चातुर्मास रह अनेक शास्त्र और ग्रंथोंके आधारसे शीर्फ तीन महीनेमें लिख दीया. उस वक्त (संवत् १९६०) श्री केवल ऋषीजी ठा. २ का चातुर्मास अहमदनगर था, चातुर्मास उतरे वाद चार ही ठाणे मिल वंवइ पधारे. मुनि श्रीकी शुद्ध क्रिया और अच्छे उपदेशसे प्रसन्न हो वंवाइ संघने महाराजको हनुमान गलीमें चातुर्मास कराया. ह्यां "रत्न चिंतामणी मित्र मंडल" की स्थापना हुइ और जैनशाला खोली गइ. उक्त मंडलकी तर्फसे महाराज श्री अमोलख ऋषिजी कृत 'जैनामूल्य सुधा' नामका पद्यवंध ग्रंथ छपाया.

इस वक्त (१९६१) हैद्रावादके चुस्त साधूमार्गी श्रावक पन्नालालजी कीमती वंवइ आये और महाराजश्रीको विनंति करने लगे कि, हैद्रावादमें "जैनीओंके घर तो वहुत है, परंतु कोइ मुनिराज पधारे नही हें, जो आप पधारोगे तो नया क्षेत्र खुलेगा और वहुत ही उपकार होगा." महाराजश्रीको भी ये वात पसंद आइ.

चातुर्मासके वाद वंवइसे विहार कर इगतपुरी पधारे. वहांके उदार प्रणामी भाइ मूलचंदजीने अति आग्रह कर महाराजको चातुर्मास कराया और श्री अमोलख ऋषिजी कृत "धर्मतत्व संग्रह" ग्रंथ छपवाके मुफत वांट दिया. घोटी गामके श्रावकोंने भी ये पुस्तककी प्रतों अपने खर्चसे मुफत वांटी.

चातुर्मास वाद वैजापुर आये. वहांके भाइ भीखूजी संचेतीने "धर्मतत्व संग्रह" की गुजराती आवृत्ति छपवाके संघको अर्पण करी. वांहासे औरंगावाद जालने पधारे. वहांके आगे विहार करने लगे तव श्रावकोंने कहा की आगे कोइ साधु गये नहीं है, रस्ता विकट है; परंतु ये शूरवीर मुनिवरों क्षुधा तृषादि अनेक परिसह सहन करते आगे के आगे ही विहार करते गये और हैद्रावाद आ पहुंचे, चारकवाणमें मुकाम किया और सेंकडो लोगोंको द्रढ जैनी वनाये.

प्रसिद्ध कर्त्ताका संक्षिप्त जिवनचरित्र.

दक्षिण हैद्रावादमें दिल्ली जिल्लेके कानोड (महेंद्रगढ) से आके निवास करनेवाले अग्रवाल वंशमें शिरोमणि धर्म-न्याय-विनय दया-क्षमा आदि गुणों युक्त लालाजी साहब नेतरामजी के पुत्र रामनारायणजीका जन्म संवत् १८८८ पोष वद ९ का हुवा और उन्के पुत्र सुखदेवशाहजीका जन्म संवत् १९२० पोष सुद १५ का हुवा. और उन्के पुत्र जवालाप्रसादजीका जन्म संवत् १९५० के श्रावण वदी १ का हुवा. उक्त तीनो लालाजीने सनातन जैन धर्मके पूज्य श्री मनोहरदासजी की संप्रदायके पूज्य श्री मंगलसेनजी स्वामी पास सम्यक्त्व धारण करी है. परंतु ह्यां हैद्रावादमें आये पीछे साधूदर्शन न होनेसे जैन मंदीरमें जाते थे और हजारो रुपे खर्चके मनहर मंदीर भी ह्यां बनाया है. तथा प्रभावना, स्वामीवत्सल आदि कार्योमें अच्छी मदद करते हैं; ह्यांके जौहरी वर्गमें अग्रेसर है और राज्यदरबारमें लाखो रुपेका लेनदेन करते है.

लालाजीके तर्फसे एक दानशाला हमेश चालू है. और भी अनाथोंकी साहाय्यता अच्छी तराह करते है. सांसारिक प्रसंगोंमें भी लख्खो रुपेका व्यय उन्होने किया है. इतना श्रीमंत होने पर भी बीलकुल अभिमानी नही है.

महाराजश्री अमोलख ऋपिजीके उपदेश श्रवण करनेसे लालाजीको ज्ञानका ज्यादे प्रेम उत्पन्न हुवा और ज्ञानाभ्यास कर तन-मन-धनसे जैन धर्म दीपाया. दीपमालिकाके दूसरे दीन मुनि श्री अमोलख ऋषिने संपूर्ण उत्तराध्ययन सूत्रकी सझाय मपदाके-बीचमें सुनाइ और ज्ञानवृद्धिके लाभका वर्णन सुनाया, जिस्को सून लालाजीने ज्ञानवृद्धिकी इच्छासे इस "जैन तत्व प्रकाश" ग्रंथकी १२०० प्रत और "केवलानंद छंदावली" की २५०० प्रत छपवाके श्री संघको अर्पण करी. १२०० प्रतोंमेंसे ५०० प्रतों 'जैन समाचार'

साप्ताहिक पत्रके ग्राहकोंको भेट देनेके लिये अहमदावाद भेजनेका और ७०० प्रतों अन्य स्थलोंके श्री संघको भेजनेका ठराव किया. लालाजी साहवकी धर्मज्ञान फैलावकी अैसी उत्कंठा हरएक श्री-मंतोंको अनुकरणीय है. अैसे उदार कृत्योंसे धर्म दीपता है, सद्ज्ञा-नके फैलावसे अपने भी ज्ञानावरणीय कर्मोंका नाश होता है और पढनेवालेकों भी लाभ पहुंचता है.

इस पुस्तकका कुछ बयान.

इस पुस्तकको दो खंडमें विभक्त किया है, दोनो खंडके मिलके ११ प्रकरण किये गये हैं. इतने प्रकरणोंमें, जैनीयोंको जो जो मुख्य २ बावतोंकी जरुरत थी सबका समावेश किया गया है. प्रथम खंडके पांच प्रकरणोंमें अनुक्रमे पंच परमेष्टी के गुणों इत्यादिका सविस्तर बयान है. सद्देव–सद्गुरुके शास्त्रानुसार लक्षण, तीनलोकके अव-श्य जाणने योग्य पदार्थोंका स्वरुप इत्यादिका कथन किया हैं. दुसरे खंडके ३ प्रकरणोंमें अनुक्रमे धर्मप्राप्तिसे लगाके मोक्ष प्राप्ति तकके उपायका प्रतिपादन किया है. ये पुस्तक सर्वको पठन–पाठन करने योग्य है. अैसे पुस्तकको ज्युं बने त्युं ज्यादे व ज्यादे प्रकाशमें लाना चाहिये. इतनी बडी पुस्तक "जैनसमाचार" सप्ताहिक पत्र के स्वधर्मी ग्राहकों को अमुल्य भेट देना ठेहराया जिससे ग्राहकोंकी वृद्धि हुई. तब उक्त पत्रके मालिकने ५०० के बदल ७०० पुस्तककी याचना की. लालासाहेबने ७०० पुस्तक अमुल्य देना कबूल किया और इस उत्तम कार्य के लिये लालासाहेबके तरफसे मैने खुद अहमदावाद जाकर ७०० प्रत ग्राहकोंको तथा और भी बहुतसी अन्य स्थल भेट रेल व पोस्ट मारफत रवाना करी. यह लालासाहेब की उदारता वि-शेष प्रशंसनीय है.

ली. गुणानुरागी.

रामलाल पंनालाल कीमती.

रामपुरावाला.

अनुक्रमणिका.

ॐ असिआउसायनमः

श्री

जैन तत्व प्रकाश.

प्रवेशिका.

सिद्धाणं नमो किच्चा, सञ्जयाणं च भावउ ।
अत्थ धम्म गइ तच्चं, अणु सूठी सुणहमे ॥

श्री उत्तराध्ययन सूत्र-अध्ययन २०

अर्थः ॥

"सिद्ध" (अरिहंत-सिद्ध) और "संजती" (आचार्य-उपाध्याय-साधू) को विशुद्ध भावसे नमस्कार करके, सर्व अर्थकी सिद्धि करे ऐसा यथा-तथ्य [सत्य] धर्म ग्रहण करने योग्य अनुक्रमे कहता हुं सो, हे भव्यों! मन-बचन-कायाके योगको स्थिर [निश्चल] करके श्रवण करो!

॥ विशेषार्थः ॥

"सिद्धाणं नमो किच्चा"

सिद्ध भगवान दो प्रकारके हैं:—(१) भाषक सिद्ध और (२) अभाषक सिद्ध. भाषक (बोलते) सिद्ध सो अरिहंत भगवान, कि जो इस भवके अंतमें सिद्ध होनेवाले हैं. होनेवाले सिद्धको भी सिद्ध ही कहा जाता है; जैसे श्री उत्तराध्ययन सूत्रके १९ अध्ययनमें मृगापुत्रको "जुगराय दमीसरे" अर्थात् जुगराय पद भोगते ही "दमीश्वर (ऋषीश्वर)" कहा है, क्यों कि मृगापुत्र आगेको ऋषीश्वर होंगे. इस लिये उनको ऋषीश्वर कहा है. तैसे ही अरिहंत भगवान आगेको सिद्ध भगवान होनेवाले हैं इस लिये उनको भी सिद्ध भगवंत कहते हैं.

अभाषक सिद्ध उनको कहते हैं के जो सर्व कार्यकी सिद्धि करके सिद्ध स्थानमें सच्चिदानंद—सिद्ध स्वरुप—निजात्म पदको प्राप्त भये हैं.

इन दोनों प्रकारके सिद्धका वर्णन अनुक्रमे किया जायगा.

प्रकरण १ ला.

अर्हंत.

जो चैतन्य अर्हंत वा अरिहंत पदको प्राप्त होते हैं वे पहले तीसरे भव-में वीस बोलकी आराधना करते हैं.

॥ अर्हंत पद उपार्जन करनेके २० बोल. ॥

॥ गाथा. ॥

अरिहंत सिद्ध पव्वयणे, गुरुथेरे बहु सुय तव सीसु ॥
वच्छला यतीसं, अभिखनाण सुवगये ॥ १ ॥
दंशण विणे आवसय, सील वयनिरयारो खिणालवे,
तव चेइए, वयावच्च सम्याहीए ॥ २ ॥
अपुव्वनाण गाहणे, सुयभत्ती पव्वणे पभावणीया ॥
एत्थेही कारणे ही, तित्थयरे लहे जीवो ॥ ३ ॥ *

—श्री ज्ञाताजी.

---

* अरिहंत सिद्ध सूत्रगुरु, स्थिवर बहुसूत्री जाण;
गुण करता तपस्वी तणा, उपयोग लगावत ज्ञान ॥ १ ॥
शुद्ध सम्यक्त्व नित्य आवश्यक, व्रत शुद्ध शुभ ध्यान;
तपस्या करता निर्मली, देत सुपातर दान. ॥ २ ॥
वयावच सुख उपजावता, अपूर्व ज्ञान उद्योत;
सूत्र भणत मारग दिपत, बंधे तीर्थंकर गोत. ॥ ३ ॥

(१) अरिहंत, (२) सिद्ध, (३) प्रवचन वा शास्त्र, (४) गुरु, (५) स्थिवर, (६) बहुसूत्री वा पंडित (७) तपस्वी ये सातका गुणानुवाद करनेसे, (८) ज्ञानमें वारंवार उपयोग लगानेसे, (९) सम्यक्त्व निर्मल पालनेसे, (१०) गुरु आदिक पूज्य जनोंका विनय करनेसे, (११) निरंतर पंच आवश्यक अर्थात् (देवसी–रायसी–पख्खी–चौमासी और संवत्सरी प्रतिक्रमण) करनेसे, (१२) शील अर्थात् ब्रह्मचर्य प्रमुख व्रतप्रत्याख्यान निरतिचार अर्थात् दोष रहित पालनेसे, (१३) सदा निवृत्ति (वैराग्य) भाव रखनेसे, (१४) बाह्य अर्थात् प्रगट और अभ्यंतर अर्थात् गुप्त तपस्या करनेसे, (१५) सुपात्र दान देनेसे, (१६) गुरु–रोगी–तपस्वी और नवदीक्षित की वयावच्च [सेवा भक्ति] करनेसे, (१७) समाधि भाव अर्थात् क्षमा रखनेसे, (१८) अपूर्व [नित्य नवा] ज्ञानका अभ्यास करनेसे, (१९) जिनेश्वरकी वाणी बहुमानपूर्वक सरधनेसे, और (२०) जैन धर्मकी तन–मन–धनसे उन्नति करनेसे, प्राणी तीर्थंकर गोत्र उपार्जन करते हैं.

तीर्थंकर गोत्र उपार्जन हुये पीछे एक भव

स्वर्ग [देवलोक] का तथा नर्कका § बीचमें करके मनुष्य लोकमें [कर्मभूमिके १५ क्षेत्रमें] आर्य देशमें, निर्मल कूलमें, मातेश्वरीको १४ उत्तम स्वप्न * प्राप्त होनेके साथ, मति-श्रुत और अवधि ये तीन ज्ञानके साथ, शुभ मुहूर्तमें अवतार ** लेते हैं.

सवा नव मास पूर्ण हुये चंद्रबलादिक शुभ योगमें जन्म लेते हैं. उस वक्त छप्पन कुमारिका देवी जन्म महोत्सव करती हैं; फिर [१० भवनपतिके २०, १६ वाणव्यंतरके ३२, ज्योतिषीके २, १२ देवलोकके १० ऐसे] ६४ इंद्र मिलके मेरु पर्व-

---

§ कृष्ण महाराज तथा श्रेणिक राजा वत्.

* चौदह स्वप्नके नामः-(१) ऐरावण हाथी, (२) धोरी बैल, (३) शार्दूल सिंह, (४) लक्ष्मी देवी, (५) पुष्पकी दो माला, (६) चंद्रमा, (७) सूर्य, (८) इंद्रध्वजा, (९) पूर्ण कलश, (१०) पद्म सरोवर, (११) क्षीर समुद्र, (१२) देव विमान, (१३) रत्नराशि अर्थात् रत्नोंका ढगला,(१४) निर्धूम अग्निकी शिखा अर्थात् ज्वाला. नर्कसे आते हैं उन्की माता बारमा देव विमानके बदले भवनपतिका भवन देखती है.

** अवतारको "च्यवन कल्याण," जन्मको "जन्म कल्याण" और दिक्षाको "दिक्षा कल्याण" कहते हैं.

तके पंडग वनमें जन्ममहोत्सव बहोत उमंग और धूमधामके साथ करते हैं. यह इंद्रोंका जीतव्यवहार है अर्थात् परंपरासे चला आता रिवाज है. फिर पिता जन्ममहोत्सव करते हैं और गुणनिष्पन्न उत्तम नामकी स्थापना करते हैं.

बालक्रिडा कर फिर यौवन प्राप्त हुये जो भोगावली कर्म भोगवणे होवे तो पाणिग्रहण (लग्न) कर शुष्क वृत्तिसे भोग भोगते हैं.

दिक्षाके अव्वल, १२ मास तक नित्यप्रति एक क्रोड आठ लाख सोनैये [मोहोर] का दान देते हैं. जैनी लोगोंको यह उदारता अनुकरण करने योग्य है.

फिर नव लोकांतिक देव आके चेताते हैं तब आरंभ परिग्रह त्रिविध त्रिविध [३ करण और ३ योगसे] त्यागके दिक्षा ग्रहण करते हैं, उस वक्त चौथा मनःपर्यव ज्ञानकी प्राप्ति होती है.

दिक्षाके बाद थोडे काल तक छद्मस्थ रहते हैं. तब तक अनेक प्रकारके देव—दानव—मानव के उपसर्ग* सहन कर अनेक प्रकारकी दुक्कर तपस्या

* कितनेक, विना उपसर्ग उत्पन्न हुवे भी कर्म खपाते हैं.

कर चार घनघाती कर्मको खपाते हैं अर्थात् क्षय करते हैं.

प्रथम दर्शन मोहनीय और चारित्र मोहनीय कर्म क्षय होनेसे अनंत यथाख्यात चरित्रवंत होते हैं. मोहनीय कर्मके क्षय होनेसे ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, और अंतराय इन तीनो कर्मोंका शीघ्रमेव नाश होता है; जिससे तीन गुणकी प्राप्ति होती है. [१] ज्ञानावरणीय कर्मके क्षय होनेसे अनंत केवल ज्ञान प्राप्त होता है, जिससे सर्व द्रव्य-क्षेत्र-काल-भावको जाननेवाले होते हैं. [२] दर्शनावरणीय कर्मके क्षय होनेसे अनंत केवल दर्शनकी प्राप्ति होती है; जिससे सर्व पदार्थके देखनेवाले होते हैं. [३] अंतराय कर्मके क्षय होनेसे अनंत दान लब्धि, लाभ लब्धि, भोग लब्धि, उपभोग लब्धि और अनंत वीर्य लब्धिकी‡ प्राप्ति होती है.

‡ तीर्थंकरके बलका प्रमाण नीचे लीखा है:—दो हजार सिंहका बल एक अष्टापद पक्षीमें; १० लाख अष्टापदका बल एक बलदेवमें; दो बलदेवका बल एक वासुदेवमें; दो वासुदेवका बल एक चक्रवर्तीमें; क्रोड चक्रवर्तीका बल एक देवतामें; क्रोड देवताका बल एक इंद्रमें; ऐसे अनंते इंद्र मिलकर भी तीर्थंकरकी चिट्टी अंगुली नहीं नमा सकते हैं !

और शेष ४ कर्म रहे सो निरंकुर [अर्थात् भवांकुर उत्पन्न करनेकी सत्ता रहित] होते हैं. जैसे भुंजे हुये धान्य (अनाज) भक्षण करनेसे पेट तो भरता है परंतु वो धान्य उग सकता नहीं है, एकका अनेक करनेके कायमें नहीं आता है. तैसे ही (१) साता वेदनीय कर्म, (२) आयुष्य कर्म, (३) नाम कर्म, और (४) गोत्र कर्म रह जाते हैं, कि जो नये कर्मको जन्म नहीं देते हैं. आयुष्य कर्मके क्षय होनेसे चारों कर्मोंका क्षय आपसे ही हो जाता है.

पूर्वोक्त चार घनघाती कर्म खपानेसे ही अर्हंत अथवा अरिहंत पदकी प्राप्ति होती है.

अरिहंत भगवान बारे गुण, ३४ आतिशय और ३५ वाणी गुण युक्त होते हैं और १८ दोष रहित होते हैं, जिस्का विस्तार नीचे लिखे प्रमाण हैं.

श्री अरिहंतके १२ गुण.

१. अनंत ज्ञान, २. अनंत दर्शन, ३. अनंत चारित्र, ४. अनंत तप, ५. अनंत बल वीर्य, ६. अनंत क्षायिक सम्यक्त्व, ७. वज्रऋषभ नाराच संघेण, ८. सम चौरस संस्थान, ९. चौतीस अतिशय, १०.

पेंतीस वाणीगुण, ११ एक हजार आठ उत्तम लक्षण, १२ चौसट इंद्रके पुजनीक. ये बारह * गुण युक्त श्री अरिहंत प्रभु होते हैं.

---

* कितनेक अनंत चतुष्ट्य और अष्ट प्रतिहार्य मिलके १२ गुण कहते हैं. ये अष्ट प्रतिहार्य इस मूजब हैं:—(१) प्रभु मणिरत्नमय सिंहासनपे बिराजते हैं. (२) पीछे १२ गुणा उंचा अशोक वृक्ष शोभता है. (३) शिरपे एकपे एक ऐसे तीन छत्र. (४) दोनु तरफ चोंसठ जोडे चम्मर. (५) पीठ पीछे भामंडल (६) चारों तर्फ अचेत (वैक्रिय) फूलोंकी वृष्टि (७) एक योजनमें वाणिका विस्तार और (८) अंतरिक्षमें गैवी बाजें.

ये प्रतिहार्ययुक्त प्रभु बारह प्रपदामें बिराजते हैं तब प्रपदा इस तरह बैठती है:—श्रावक—श्राविका—विमानिक देवता ये तीन ईशान कूणमें बैठते हैं; साधु—साध्वी—विमानिक देवकी देवीयां ये तीन अग्नि कूणमें बैठते हैं; भवनपति—वाणव्यंतर—ज्योतिषी ये तीन वायु कूणमें बैठते हैं; भवनपतिकी देवी—वाणव्यंतरकी देवी—ज्योतिषीकी देवी ये तीन नैरुत्य कूणमें बैठती हैं. (चार जातके देवता, चार जातकी देवांगना और चतुर्विध संघ इस तराह १२ प्रपदा होती है. कोइ ऐसा भी कहता है के चार जातके देवता, चार जातकी देवांगना और मनुष्य—मनुष्यणी—तिर्यंच—तिर्यंचणी ऐसी १२ प्रपदा.)

ऐसी १२ प्रपदाको उपदेश देती वक्त समवसरणका ठाठ अलौकिक होता है. जिस क्षेत्रमें अन्यमतियोंका जोर ज्यादे

अरिहंत भगवान ३४ अतिशय और ३५ वाणी गुण सहीत होते हैं और १८ दोष रहीत होते हैं, जिस्का विवेचन अब किया जायगा.

॥ ३४ अतिशय. ॥

(१) मस्तकादिक सर्व शरीरके रोम [केश] मर्यादा उपरांत अशोभनीक बढे नहीं. (२) शरीरको रज, मैल प्रमुख कीसी प्रकारका अशुभ लेप लगे नहीं. (३) रक्त और मांस गायके दुधसे भी अति उज्वल और मधुर होता है. (४) पद्म कमल जैसा सुगंधी श्वासोश्वास होता है. (५) प्रभु आहार [भोजन] करे और निहार [दिशा] करे सो चर्मचक्षुवालेंसे देखा जाय नहीं. [अवधि प्रमुख ज्ञानका धणी देख शके.] (६) प्रभु विहार

होता है और बहुत प्रपदा आनेका अवसर होता है तब देवता समवसरणकी रचना करते हैं. पहला कोट चांदीका बनाके सोनेके कांगुरे करते हैं, उस्के भीतर १३०० धनुष्यका अंतर छोडके सोनेका कोट और रत्नोंके कांगुरे बनाते हैं और उस्के भीतर १३०० धनुष्यका अंतर छोडके रत्नोंका कोट और मणिरत्नके कांगुरे बनाते हैं. अंदरमें ५०० पंक्तियें रत्नमय होती हैं. सब मीलके समवसरणका चडाव अढाइ कोशका उचा होता है.

करे तब उन्के आगे आगे आकाशमें देदीप्यमान गरणाट शब्द करता चक्र चले और भगवान विराजे तब खडा रहे. (७) भगवानके शिरपे आकाशमें तीन छत्र लंबी लंबी लटकती हुइ मोतीयोंकी झालर युक्त दीखते हैं. (८) प्रभुके दो तर्फ अति उज्वल कमलके तंतू गायका दूध और चांदीके पत्रे जैसे रत्न जडित दंडीयुक्त ६४ जोडे चमरके वींझते हुवे दिखते है. (९) प्रभु विराजे वहां मणीरत्न–स्फाटीक जैसा निर्मळ देदीप्यमान सिंहके स्कंधके संठाण अनेक रत्नोंसे जडा हुवा, अंधकारका नाश करनेवाली पादपीठिका युक्त सिंहासन प्रभूसे ४ अंगुल नीचे दीखता है.(१०)प्रभूके आगे बहुत छोटी २ ध्वजाका परिवार सहित अति उंची रत्नस्थंभ युक्त इंद्रध्वजा दीखती है. (११) जांहां २ अरिहंत भगवान खडे रहे अथवा विराजे वांहां २ अशोक वृक्ष अनेक शाखा–प्रति शाखा–पत्र–पुष्प–फल–सुगंध–छाया–ध्वजापताका करके सुशोभीत भगवंतके शरीरसे १२ गुणा उंचा दीखता है. (१२) अरिहंत भगवानके पींछे चोटीके ठिकाणे, शरद ऋतुके जाज्वल्यमान सूर्यमंडलकी तरह, सूर्यसे १२

गुणा अधिक तेजस्वी, अंधकारका नाश करनेवाला 'प्रभामंडल'* दिखता है. (१२) प्रभु जांहां जांहां विचरते है वांहां २ भूमि (पृथ्वी) बहोत सम (बरोबर) और खड्डे टेकरे रहीत हो जाती हैं. (१४) बंबूलादिकके कांटे उलटे होजाते हैं (१५) शीतकालमें उष्णता और उष्णकालमें शीत होकर ऋतु सर्वको सुखदायी होजावे. (१६) प्रभु विराजमान होवे वांहां चौतर्फ एक योजन (४ कोश) तक मंद शीतल सुगंधी वायू चले, जिससे अशूचिमय सर्व वस्तु दूर हो जावे, (१७) बारिक बारिक सुगंधी अचेत जलकी एक योजन प्रमाणे वृष्टि होवे, जिससे धूल दट जावे. (१८) चौतर्फ देवताने वैक्रिय बनाये हुवे अचीत पंचवर्णी पुष्पकी वृष्टि ढींचण (गोडे) प्रमाणे एक योजनमें होती है, जिनोंके मूख उपर और बींट नीचे रहते हैं. (११) अमनोज्ञ (खोटे) वर्ण–गंध–रस–स्पर्श उपसमे अर्थात् नाश पामे,

* ग्रंथमें लीखा है के भामंडलमे प्रभावसे, प्रभुके ४ मुख चारों दिशामें दीखते हैं, जीससे देशना सूननेवाले सर्व जनोंको ऐसा भास होता है के प्रभु हमारे सन्मुख ही देख रहे हैं. वैसे, ब्रह्माको चतुर्मुखी कहनेका भी यह ही कारन होगा.

(२०) मनोज्ञ [अच्छे] वर्ण—गंध—रस—स्पर्श प्राप्त होवे. (२१) देशना [व्याख्यान] देवे तब एक योजन तक भगवंतका शब्द सर्व प्रषदा बराबर श्रवण कर सके और सर्वको प्रिय लगे. (२२] अर्धमागधी * [आधी मगध देशकी और आधी सर्व देशकी मीली हुइ भाषामें धर्मदेशना फुरमावे, [२३] भगवानकी भाषाको आर्यानार्य सब देशोंके द्वीपद अर्थात् मनुष्य, चतुष्पद अथवा पशु और पक्षी—सर्प इत्यादि सब अपनी अपनी भाषामें समज जाते हैं, (२४) भगवंतकी देशना सूनकर जातिवैर (जैसाके सिंहबकरीका, कुत्ताबील्लीका इत्यादि) और भवांतरके वैर नष्ट होता है. (२५) अन्य दर्शनी और अन्यमति भगवंतको देखके अभिमान छोड कर नम्र हो जावे. (२६) वादी प्रवादि विवाद करनेके लिये भगवानकी पास आवे परंतु उत्तर देनेको अशक्त हो जावें (२७) भगवान विचरे उन्के चारों तर्फ २५ योजन तक 'इति' अर्थात् मुषक—तीड इत्यादिका उपद्रव न होवे. [२८] मरकी—प्लेग—हैजेकी बिमारी न

* "भगवंचणं अधमागधीए भाषाए धम्ममाइक्खाति"

होवे. [२९] स्वदेशके राजाका तथा शैन्यका उपद्रव न होवे. [३०] परदेशके राजाका तथा शैन्यका उपद्रव न होवे [३१] अतिवृष्टि न होवे. [३२] अनावृष्टि न होवे. [३३] दुर्भिक्ष—दुष्काळ न होवे. [३४] जहां तीड-महामारी-स्वचक्र परचक्रका भय इत्यादि होवे वहां भगवानके पधारनेसे सर्व उपद्रव तत्काल ही नाश पावें. [ये सर्व बोल पचीस २ योजनम न होवे.] ये ३४ मेंसे ४ जन्मसे, १५ केवल्य ज्ञान उत्पन्न हुवाके बाद और १५ देवताके किये हुये होते हैं.

॥ प्रभुकी वाणीके ३५ अतिशय. ॥*

(१) संस्कारयुक्त वचन बोले, (२) उच्च स्वरसे बोले, जिस्को एक योजन तक बैठी हुइ परिषद् अच्छी तराहसे श्रवण करती है (३) सादी भाषामें परंतु मानपुवर्क शब्दोंमें बोले; " रे तूं ! " इत्यादि तुच्छकार वाचक शब्द नहीं बोले. (४) जैसे

* प्रभुकी वाणीके ये गुणोंकी तर्फ हरएक उपदेशकको ध्यान-लगाना चाहिये. युरोपीअन वक्ताओं श्रोतागणपे प्रबल असर करते हैं उस्का सबब यह है के वे लोग उपदेश देनेकी रीतका अभ्यास करते हैं.

आकाशमें महा मेघका गर्जारव होता है ऐसे ही प्रभू-की वाणी भी गंभीर होती है; ये वाणीका अर्थ भी गं-भीर-गहन-उंडा होता है. अर्थात् उच्चार और तत्व दोनोमें गंभीर वाणी बोलते हैं. (५) जैसे गुफामें वा शिखरबंध प्रासादमें जा कर बोलनेसे प्रतिछंद अर्थात् प्रतिध्व-नि होती है ऐसे ही प्रभुकी वाणि भी प्रतिध्वनी करती है. (Thundering tone) (६) सरस अथवा स्निग्ध बचन बोले. (७) रागयुक्त बोलें–६ राग और ३० रागणीमें उपदेश देवे, जिससे श्रोतागण तल्लीन हो जावे, (Harmonious tone) जैसेकी वीणा-सें मृग और पूंगीसे सर्प तल्लीन हो जाता है. ये सात अतिशय उच्चारके बारेमें कहे. अब अर्थ स-म्बन्धी अतिशयः—(८) थोडे शब्दोंमें विशेष अर्थका समास करके बोले; इस लिये भगवानके वाक्योंको 'सूत्र' कहा जाता है, (९) परस्पर विरोध रहित ब-चन बोले; एक बक्त "अहिंसा परमो धर्मः" ऐसा कह कर ' धर्म निमित्ते हिंसा करनेमें दोष नहीं " ऐसा विरोधवाला वाक्य प्रभु कभी नहीं बोलते हैं, (१०) जूदा जूदा अर्थ प्रकाशे, जो परमार्थ चला है उस्को पुरा करके फिर दूसरा प्रकाशे, परंतु गरबड

कर देवे नहीं. (११) संशय रहित वचन कहै. ऐसा खुलासा से फरमावे कि सुननेवालेको बिलकुल संदेह नहीं रहै. (१२) दोषरहित वचन बोले अर्थात स्वमति—अन्यमति बडे बडे पंडित जन भी प्रभूके वचनमें किंचित् मात्र दोष नहीं निकाल शकें. (१३) सर्वको सुहाता * वचन कहै, जिसको सुणते श्रोताका मन एकाग्र हो जाय. (१४) देश—काल उचित बोले अर्थात् बडे विचक्षणपणेसे समय विचारके बोले. (१५) मिलते वचन कहे,-अर्थका विस्तार तो करे परंतु अटम् सटम् कहके वक्त पुरा न करे (१६) तत्व प्रकाशे, जीवादिक नव पदार्थका स्वरूपसे मिलता वचन कहै तथा सार सार कहै, असारको छोड दे. (१७) संक्षेपसे कहै, अर्थात् पदके अगाडी दूसरा पद थोडेमें पुरा करदे, तथा निःसार बात सांसारिक क्रियादिककी थोडेमें पुरी करै, विस्तारे नहीं; (१८) बात रूप कहे-ऐसा खुल्ला अर्थ प्रकाश करे की छोटासा बालक भी मतलब समझ जाय. (१९) स्वश्लाघा और परनिंदा

* वेद भी कहता है कि:—" सत्यं ब्रूहि, प्रियं ब्रूहि " अर्थात् सत्य ऐसा बोलो कि जो सुननेवालेको प्रिय भी लगे.

रहित प्रकाशे; देशनामें अपनी स्तुती और अन्य-की निंदा नहीं करे. [' पाप ' की निंदा करे परंतु ' पापी ' की निंदा नहीं करे.] (२०) मधुर वाणिसे उपदेश करे, दुध और मीशरीसे भी अधिक मिष्ठता—माधुर्यता प्रभुकी वाणिमें है, इस लिये श्रोता जन व्याख्यान छोड कर जानेको पसंद नहीं करते. [२१] मार्मिक बचन न कहे, जीससे कीसीकी गुह्य बात खुल्ली होवे ऐसी बात न करे. (२२) योग्यता देख कर गुणकी प्रशंसा करे, खुशामद न करे, योग्यतासे अधिक गुण न कहे. (२३) सार्थ धर्म प्रकाशे, जिससे उपकार होवे तथा आत्मार्थ सिद्ध होवे ऐसा कहे. (२४) अर्थका तुच्छपणा न करे अर्थात् छिन्न भिन्न करके न फरमावे (२५) शुद्ध बचन कहे; व्याकरणके नियमानुसार शुद्ध भाषा प्रकाशे.* (२६) मध्यस्थपणे प्रकाशे अर्थात् बहोत जोरसे भी नहीं, बहोत जलदीसे भी नहीं, और

* व्याकरणकी कीतनी जरूरत है सो इस परसे ध्यानमें लेना चाहिये. अशुद्ध वाणीमें अर्थ हितकारक होने पर भी श्रोतागणके हृदयमें बात जचती नहीं है. इस लिये उपदेशक वर्गको लाजिम है के भगवानके गुणोंका अनुकरण करना और व्याकरण भी पढना.

बहोत धीरेसे भी नहीं इस तरह बोले. (२७) श्रोताजनोंको प्रभूकी वाणी चमत्कारी लगे की "हा हा ! प्रभूकी फुरमानेकी क्या चातुरी और क्या शक्ति है !" [२८] हर्षयुक्त कहे, जिससे सुणनेवालेको हूबहू रस प्रकासे. (२९) विलंब राहित कहे, बिचमें विसामा नहीं लेवे (३०) सुणनेवाला जो प्रश्न मनमें धारके आया होवे उस्का बिना पूछे ही खुलासा हो जावे इस तराह प्रकाशे. [३१] अपेक्षा बचन कहे, एक बचनकी अपेक्षासे दुसरा बचन कहे और जो फरमावे वो श्रोताके हृदयमें ठसता जावे. [३२] अर्थ-पद-वर्ण-वाक्य सर्व जूदे २ फरमावे. (३३) सात्विक वचन प्रकाशे. इंद्रादिक बडे तेजस्वी प्रतापी आ जावे तो भी डरे नहीं. (३४) जो अर्थ फरमाते हैं उस्की सिद्धि जांहां तक होवे वांहां तक दूसरा अर्थ निकाले नहीं, एक बात दृढ करके दूसरी बात पकडे. [३५] चाहे कितना लंबा समय उपदेशमें चला जावे तोभी थके नहीं, उत्साह बढता ही रहे.

अरिहंत प्रभु १८ दोष रहीत होते हैं.

(१) अज्ञान नहीं:—सर्व लोकालोककी कोइ

भी वस्तु प्रभुसे गुप्त नहीं है, सर्व चराचर पदार्थको जान रहे हैं—देख रहे हैं.

(२) मद नहीं:—प्रभु सर्व गुण संपन्न होने पर भी सब तराहके अभिमानसे रहित हैं; क्युं की "संपूर्ण कुंभो न करोति शब्दं" संपुर्णताका यह ही चिन्ह है के मद नहीं रखता है.

(३) क्रोध नहीं:—प्रभु महा क्षमावंत हैं. "क्षमा सूरा अरिहंता" कहे जाते है.

(४) मान नहीं—कहा है कि—

विनयवंत भगवान कहावे,
(तो भी) न काहूको शिस नमावे!

अर्थात् प्रभु विनयका सागर है तो भी किसीकी खुशामद नहीं करते हैं, किसीकी पास लघुता नहीं बताते हैं.

(५) माया नहीं:—प्रभु सदा सरल स्वभावी —निष्कपटी रहते हे.

(६) लोभ नहीं:—ज्ञानरूपी अखूट लक्ष्मीका भंडार जिन्की पास है ऐसे प्रभूजीको किसी बातका लोभ नहीं होता है.

[७] रति नहीं:—मनोज्ञ वस्तुके संयोगसे प्रभू हर्षीत नहीं होते हैं, क्यों की वो तो 'वीतराग' कहे जाते हैं, अवेदी—निष्कामी हैं इस लिये उन्को रतीमात्र 'रति' नहीं है.

[८] अरति नहीं:—अनीष्ट—अमनोज्ञ वस्तुके संयोगसे मनमें किंचित् खेद नहीं उत्पन्न होता है.

[९] निद्रा नहीं:—दर्शनावरणीय कर्मका क्षय होनेसे निद्राका नाशकर दीया है. प्रभु तो सदा काल जागृत ही रहते हैं.

[१०] शोक नहीं:—भूत-भविष्य-वर्तमान के ज्ञाता होनेसे प्रभूको किसी बातका आश्चर्य भी नहीं है और किसी बातका शोक भी नहीं हो सकता है.

(११) अलिक नहीं:—कदी झूठ नहीं बोले, वचन नहीं पलटे. सदा एकांत सत्यका प्रकाशक हैं.

(१२) चोरी नहीं करे:—कोइ वस्तु कीसीकी आज्ञा विना ग्रहण नहीं करे.

(१३) मत्सर भाव रहित:—जिनेश्वरसे अधिक गुणके धारक कोइ है ही नहीं तो भी गोशालावत्

कोइ ढोंग करके अपनी प्रभुता बढावे तो भी प्रभु मत्सर भाव कभी धारण न करे.

(१४) भय नहीं:–इह लोकका भय (मनुष्य-तर्फका भय), परलोक भय (मनुष्य-तिर्यंच-देवताका भय, आदान भय (धनादिकका भय), अकस्मात भय, आजीविका भय, पुजाश्लाघाका भय यह ७ प्रकारके भय होते हैं परंतु इन सबसे प्रभू विरक्त हैं; अभय हैं.

(१५) प्राणीवध न करे:—महा दयालु प्रभू सर्वथा प्रकारे त्रस–स्थावरोंकी हिंसासे निवर्ते हैं, सदा "माहणो, माहणो!" ऐसा उपदेश फरमाते हैं. किंचित् मात्र हिंसाकी सम्मति नहीं देते हैं.

(१६) प्रेम नहीं:—शरीर–स्वजनका तो प्रभूने त्याग ही कर दीया है; फिर उस्पे प्रेम करनेका तो कुच्छ कारण नहीं रहा और वंदनीक निंदनीक दोनोको समान गिनते है. ओसा नहीं है कि जो पूजा करेंगे उस्पे तुषमान होकर उस्की कार्य सिद्धि करेंगे और जो आसातना करगे उस्को कुच्छ दुःख देंगे. निरागी प्रभु पुजाश्लाघा नहीं इच्छते

हैं, न किसीको किसी प्रकारका फल देते ह.

(१७) क्रिडा नहीं:—सर्व प्रकारकी क्रिडासे प्रभु निवृत हुए हैं. गाना—बजाना—नाचना-रास खेलना—रोसनाइ प्रमुख करना—मंडप बनाना—भोग लगाना इत्यादिक हिंसक क्रियासे प्रभुको प्रसन्न करनेको इच्छनेवाले लोग भारी मोहदशामें हैं, क्योंकि सर्व प्रकारकी क्रिडासे प्रभु निवृत हूए हैं.

(१८) हंसे नहीं:—हास्य तो कोइ अपूर्व वस्तु देखने सुणनेसे आता है. परंतु प्रभुसे तो कोइ वस्तु गुप्त नहीं है; इस लिये कोइ वस्तु वा बनाव प्रभुको अपूर्व और आश्चर्यकारक नहीं लगता है, इस लिये प्रभुको हंसनेका क्या कारण है?

नमोथ्थुणं (जिनराजको नमस्कार रूप स्तवन)

ऊपर कहे मुजब अनेक गुणके धरणहार प्रभु "आदीगराणं" अर्थात् श्रुत धर्म और चारित्र धर्मकी आदिके कर्त्ता है (धर्मकी स्थापना आदिमें श्री अरिहंत प्रभु करते हैं फिर गणधर आचार्य

प्रमुख आगे चलाते हैं). "तीथ्थयराणं" अर्थात् तीर्थके * कर्त्ता भी अरिहंत भगवान ही हैं. "सहसबुधाणं" अर्थात् प्रभु स्वयमेव प्रतिबोध पाके स्वयमेव दिक्षा लेतें हैं. (भगवानके शिरपे कोइ गुरु नहीं होता हैं,उन्को तो कर्त्तव्य कर्मका ज्ञान अवधि ज्ञानसे अव्वल से ही होता है) "पुरुषोत्तमाणं" अर्थात् प्रभु सृष्टिके सर्व पुरुषोंमें उत्तमोत्तम हैं. "पुरुष सिंहाणं" अर्थात् ये संसाररुपी वनमें प्रभु निडर सिंह समान हैं. जैसे सिंह किसीसे पराभव नहीं पाता है वैसे प्रभुकी पास भी किसी पाखंडीका जोर नहीं चलता है. सिंह सरीखे सूरवीर प्रभु अपने प्रवर्ताये मार्गमें निडर प्रवर्तते हैं. "पुरुषवर पुंडरीयाणं" अर्थात् जैसे पुंडरिक कमल रुपमें और सुगंधीमें अनुपम है ऐसे अरिहंत भी महा दिव्य रुपवंत और यशरुप सुगंधयुक्त है.** 'पुरिस वर गंधहथ्थीणं'

---

* 'तीर्थ' उसे कहा है कि जो संसारके तीर (पार) पहोंचावे. कुछ ग्राम–पाहाड–नदी–घर ये संसारके पार नहीं पहुंचा सकते हैं. इस लिये भगवानने साधु–साध्वी–श्रावक–श्राविका ये चार तीर्थकी स्थापना की है.

** श्री उत्तराध्ययन सुत्र २६ वे अध्ययनमें कहा हैः–

जहा पडम जले जायं, नेव लिप्पइ वारीणा,

अर्थात् जैसे चतुरंगिणी सैन्यामें गंध हस्ती श्रेष्ट और अपनी गंधसे शत्रुके शैन्यको भगानेवाला होता है तैसे ही प्रभु चतुर्विध तीर्थमें श्रेष्ट और अपना सदुपदेशरुप पराक्रमसे और कीर्त्तिरुप सुगंधसे पाखंडी जनोंको भगाते हैं और जैसे गंध हस्ती अस्त्रशस्त्रका प्रहारकी दरकार नहीं करते आगेके आगे ही चलता है, तैसे अरिहंत प्रभु ज्यों ज्यों परिसह पडते हैं त्यों त्यों कर्म शत्रुको विदारनेमें ज्यादे सुरपणा धारण करते हैं. " लोगुत्तमाणं " अर्थात् सर्व लोकमें अरिहंत प्रभु ही उत्तम हैं " लोगनाहाणं " अर्थात् सर्व लोकके नाथ अरिहंत प्रभु हैं " लोगहियाणं " अर्थात् सर्व लोकके हितके कर्त्ता अरिहंत है. " लोग पइवाणं " अर्थात् जैसे अंधारेमें दीपक होनेसे प्रकाश होता है और वस्तु शुद्ध दीखती है तैसे ही अरिहंत भगवान के विचरनेसे भव्योंके हृदयमेंसे अनादि कालका

एवं अलित कामेयं, तं वूय बुम महाणं.

२ जैसे पद्म कमल कीचड (कादर्व) में उत्पन्न हो कर जलसे लिपाता (लिप्त होता) नहीं है; तैसे ही प्रभु भोगादिक कीचडमें पैदा होकर संसार त्याग कर पुनः संसारके भोगमें लुब्ध नहीं होते हैं.

मिथ्यात्व रूप अंधकार भगवानकी वाणी रुप दीप-कके प्रकाशसे नष्ट होता है और सत्यासत्य धर्मा-धर्म यथातथ्य मालूम होता है. "लोग पज्जो-यगराणं" अर्थात् लोकमें प्रद्योत वा प्रकाश करन-हार अरिहंत प्रभु है.

दृष्टांतः--कोइ धनवंत पुरुष धनप्राप्तिके लिये देशान्तर जाता था. रास्तेमें चोर लोग उस्को रस्ता भूलाके एक भयंकर अटवीमें ले जाके सर्व धन छीन लिया और आंखोंपे पट्टी बांधकर वृक्षके साथ उस्को बांधकर चले गये. वह बेचारा मुसाफीर वहोत दुःखी हुआ इतनेमें इस्के सुभाग्यसे एक महाराजा चतु-रंगिणी सैनाके साथ उस जंगलमें आ पहुंचे. उस दुःखी मुसाफिरको देखकर दया आइ इस लिये बो-ले: "डरो मत!" ऐसा अभयदान दिया. (शिव नगरी अर्थात् मोक्ष पुरीमें जानेके लिये चलता हुआ यह आत्माको कर्म रुप चोरोंने घेर लिया और ज्ञा-नादि द्रव्य लूटके मोह रूप वृक्षके साथ बांध दीया और अज्ञान रुप पट्टा आंखोंपे बांध लिया. सुभाग्यसे अरिहंत प्रभु रुप महाराजा पाखंड रूप वनचरोंको शिकारके लिये आ पहुचें और उनको जगजंतुको

दुःखी देखकर दया उपनी. इस लिये बोले "मत डरो!" क्योंकि "मां हणो, मां हणो" ऐसे दयामय शब्दोच्चार एकीले येही प्रभु कर रहे हैं; इस लिये इन्को "अभय दयाणं" कहे जाते है.)

परंतु वो बेचारे धनाढयकी आंखोंपे पट्टा होनेसे उस्को महाराजाके शब्दका विश्वास नहीं आया. तब महाराजाने उस्को आंखोंका पट्टा खोला; जिससे वो महाराजा—तीर्थंकर भगवान "चक्खुदयाणं" अर्थात् ज्ञानरुप चक्षुके देनेवाले कहे जाते है.

आंखों खुलनेसे वो धनाढय चौतरफ देखने लगा और बहोत आनंद पाया. जब उसने अपना सब हाल महाराजाको विदीत किया तब महाराजाने उस्को रास्ता भी बता दिया इस लिये वो महाराजा—तीर्थंकर भगवान "मग्गदयाणं" अर्थात् मोक्ष मार्गके दिखाने वाले कहे जाते हैं.

जब वो मुसाफीर महाराजाका बताया हुवा मार्ग स्विकार करके चलता है तब परम कृपालु महाराजा उस्को अटवीके पार उतारनेके लिये (ज्ञानरूपी) सिपाइका शरण देते हैं; इस लिये "सरण

दयाणं " कहे जाते हैं.

इतना ही नहीं परंतु मुसाफीरको 'जीव' अ- र्थात् खाने खर्चनेके लिये धन भी देता है इस लिये ये महाराजाको—ये आरिहंत प्रभुको " जिवदयाणं " अर्थात् संयम रुपी जीवीत देनेवाले कहे जाते है.

आखीर, जब वो मुसाफीर चला जाता है तब उस्को कहते है के, " देख; अब तुमको सब तराह- की सामग्री दीगइ है, इससे तुम सुख समाधिसे मु- साफरी खतम करेंगे, परंतु देखो ! गफलत नहीं क- रना, चोरोंसे चेतना, रस्ता बताया है वो मत चूकना " इस तराह किंमती बोध देता है इस लिये ये महा- राजाको—ये अरिहंत प्रभुको " बोहीदयाणं " अर्थात् बोध वा सम्यक्त्व देनेवाले कहे जाते हैं. (अत्र द्रष्टांत खतम हुआ.)

" धम्मदयाणं " अर्थात् प्रभु ऐसा ' धर्म ' बताते हैं के जो जीवोंको दुर्गतिमें जाते रोकता है.

" धम्मदेसियाणं " अर्थात् द्वादश जातकी प्रषदामें बैठकर स्याद्वाद निःशंकित श्रुत धर्म और चारित्र धर्मका यथातथ्य स्वरुप दर्शाके धर्म देशना

करनेवाले एक अरिहंत देव ही हैं. " धम्मनायगाणं " अर्थात् धर्म रुप रस्तेमें चलनेवाले सम्यक् द्रष्टियोंके नायक (मालक) एक अरिहंत देव ही हैं. " धम्मसारहीणं " अर्थात् जैसे गाडीको सीधे रस्ते चलानेवाला सारथी होता है तैसे ही अरिहंत प्रभु चार तीर्थको सीधे रस्ते दोरते हैं. (मेघकुमार वत् जो कभी कोइ कुरस्ते जानेको तैयार होवे तो उपदेश रुप चाबुक लगा कर मोक्ष रुप सीधे रस्ते चलाते हैं, इस लिये प्रभुको ' धर्मके सारथी ' कहे जाते हैं.) अत्र एक द्रष्टांत कहते हैः—

कोइ एक बडा सार्थवाही बहोत जनोंको साथ ले कर विदेशमें धनप्राप्तिके लिये चला. सार्थवाही कि जो सर्व रस्तेसे वाकिफ था उसने सर्वको चेता दिया कि, " हे बन्धुओं ! मरुस्थलकी अटवी (जंगल) जब आ पहुंचेगी तब जल, वृक्ष कुछ द्रष्टिगोचर नहीं होंगे. परंतु तुमको चाहिये कि समभाव रख कर दुःख सहन करना और हुसयारीसे अटवी पसार करना. एक और भी बात चेतानेकी जरूरत है कि, जब थोडी अटवी बाकी रह जायगी तब एक अति मनोहर बाग दिखेगा.

वो देखनेमें अति मनोहर होगा परंतु अंदर जाने-वालेके प्राण जायगे इस लिये में अवलसे चेताता हुं." जब सार्थवाहीके कहे मुजब बगीचा आया तब क्षुधा—तृषा और तापसे आकुलव्याकुल हो गये हुवे बहोत लोग बगीचेमें गये और फल खाने लगे. यद्यपि ये फल खानेमें तो मिष्ट थे परंतु खा-नेवालेंको शीघ्र ही हझारों बिंच्छूके डंस जितनी पीडा हूइ तब सार्थवाहीका उपदेश याद आया परंतु अब पछतानेसे क्या होता है? थोडी देरमें सबके प्राण चले गये. और जिन लोगोंने सार्थ-वाहीके चेताने मुजब बगचिंकी तर्फ द्रष्टि भी नहीं करी थी और आगे मुसाफीरी करने लगे थे वो थोडी देरमें अटवीके पार हो गये. इस द्रष्टांतमें सार्थवाही सो अरिहंत प्रभु; साथके लोक सो चार तीर्थ; अटवी सो यौवनावस्था; बगीचा सो स्त्री समझना.

"धम्म वर चाउरंत चक्क वटीणं" अर्थात् जैसे चक्रवर्ती राजा अपने पराक्रमसे चारों दिशामें शत्रुओंका नाश करके अपना एक छत्र राज क-रता है और अखंड आज्ञा प्रवर्ताता है तैसे ही

अरिहंत प्रभु स्वयमेव प्रतिबोध पाके अपने पराक्रमसे चार घनघाती कर्मशत्रुओंका नाश करते हैं अथवा चार गतिका अंत करते हैं और तीनों लोकमें अखंड आज्ञा प्रवर्ताते हैं. प्रभुको इन्द्र नरेन्द्र भी पूजते हैं. प्रभुजी चक्रवर्तीकी तरह (अपनी अतिशयादि रिद्धिसे) अति ही शोभनीय दिखते है. इस लिये प्रभु धर्ममें वर (प्रधान) चक्रवर्ती महाराजा जैसे हैं. " दीवो—ताणं—सरण—गइ—पइठाणं " अर्थात् अरिहंत प्रभु संसार रुप समुद्रमें पडे हुवे प्राणियोंको द्वीप (बेट) समान आधारभूत हैं—शरण रुप हैं—डुबते प्राणीको अवलंबन रुप हैं. अत्र संसार सागरका यत्किंचित् वर्णन किया जाता हैः--संसारसमुद्र जन्ममरण रुप जलसे संपूर्ण भरा है, जिसमें संयोग-वियोग रुप तरंग अहोनिश उठती है. चिंता रूप गंभीरपणा है. वधबन्धनादि कलोल उठती है. मान-अपमान रुप फेणा उठती है. अष्ट कर्म रुप वाडवानल अग्नि है- चार कषाय रुप चार पाताल कलसे हैं. तृष्णा रुप वेल चडती है, मोह रुप भमर पडता है. अहंकार रुप पाणी उछलके पीछा पडता है. प्रमाद रुप अजगर है. पंच इन्द्रिय

रुप मगर मच्छ हैं. कुगुरु रूप मच्छीगर जाल डालते हैं. क्लेश रूप कीचड है. सत्य व्रत नियम रुप मोती हैं. इत्यादि अनेक शुभाशुभ वस्तु इस संसार समुद्रमें भरी हैं. इसमें पडे हुवे जीव अति दुःख पाते हैं, जिस्को देखकर दयालु आरिहंत प्रभुने सत्तरे भेद संयम रुप पाटीयेंको बारे भेद तपरुप कीलेसे जडके जहाज (नावा) बनाइ है, जिस्में संवेग रुप कुवा, ध्यान रुप ध्वजा, उपदेश रुप चाटूवे, समकित रुप सुकान आदि सब सामग्री रखी गइ है. यह नाव वैराग्य रुप पवनके जोरसे चलती है. केप्टन श्री आरिहंत प्रभू कैवल्य ज्ञान रुप दूरबीन लगाकर दूर तक देखते हैं और मोह रुप पाहाड व तृष्णा रुप भमरसे जहाजको बचाते हैं. ये कप्तान ऐसे उदार हैं के दुःखी जीवोंको बिनामूल्य जहाजमें बैठाते हैं और खानपानादि देकर मोक्ष द्विपमें पहुंचाते हैं.

"अपाडिहय-वर-नाण-दंसण धराणं" अर्थात् अप्रातिहत [किसीसे नहीं हणाय ऐसा] और वर [उत्तम] कैवल्य ज्ञान और कैवल्य दर्शन के धारक अरिहंत प्रभु हैं, जिससे सर्व द्रव्य, क्षेत्र, काल, भावको यथातथ्य जानते हैं और देख रहे हैं.

"वियट छउमाणं" अर्थात् अरिहंत भगवान विशेष करके छद्मस्थपणेसे निवर्ते हैं. "जिणाणं" अर्थात् कर्म रूप शत्रुकि जिनोने सर्व जगतको हैरान किया है उन्को श्री जिनराजने सर्वतःपराजय किया है. " जावयाणं " अर्थात् प्रभु तो कर्मको जीत गये हैं परंतु उन्के अनुयायीयोंको भी कर्मका पराजय करनेकी शक्ति देते हैं " तिन्नाणं—तारयाणं " अर्थात् प्रभु इस दुस्तर संसारसागरको तिरते हैं और अन्य जनोंको भी तारते हैं. " बुद्धाणं—बोहियाणं " अर्थात् प्रभु तत्वके जाण-कार हैं और अन्यजनोंको तत्व बताते हैं. " मुत्ताणं—मोयगाणं " अर्थात् प्रभु रागद्वेषादि क-र्मोंसे मुक्त हुए हैं और अपने अनुयायियोंको भी कर्मसे मुक्त करते हैं. "सव्व नुणं—सव्व दरिसीणं" अर्थात् इस जगतमें जितने सुक्ष्म-बादर-त्रस-स्था-वर-कृत्रीम-अकृत्रीम-नित्य-आनित्य पदार्थ हैं सबके द्रव्य-क्षेत्र-काल-भावको प्रभु जानते हैं और देखते हैं.

ऐसे ऐसे अनंत गुण युक्तको अरिहंत भग-वंत कहे जाते हैं.

॥वर्तमान चौवीसीके तीर्थंकरोंके नाम और अंतर॥

(१) गत चौवीसीके चौवीसमे तीर्थंकर मोक्ष पधारे पीछे १८ क्रोडाक्रोडी (अर्थात् क्रोड वक्त क्रोड) सागरके पीछे वर्तमान चौवीसीके पहले तीर्थंकर श्री ऋषभदेवजी (आदिनाथ) हुवे. वनिता नगरीमें जन्म लिया. पिताका नाम नाभी राजा, माताका नाम मरुदेवा राणी. उनका शरीर सुवर्ण जैसा; लक्षण * वृषभ (बैल) का; देह ५०० धनुष्यका; आयुष्य ८४ लाख पूर्वका,** जिस्मेंसे ८३ लाख पूर्व तक संसारमें रहे और एक लाख पूर्वका संयम पाल तीसरे आरेके तीन वर्ष साडे आठ महीने बाकी रहे तब महा वदी तेरसको दश हजार साधुके साथ मोक्ष पधारे.

(२) फिर पचास लाख क्रोड सागर पीछे दूसरे श्री आजितनाथ तीर्थंकर हुवे. अयोध्या नगरीमें जन्म हुआ. पिताका नाम जितशत्रु राजा, माताका नाम विजयादेवी राणी; देहका वर्ण सुवर्ण

*लक्षण अर्थात् चिन्ह पांवमें है;कोइ छातीमें भी कहते हैं.

** एक पूर्वके वर्ष सीत्तर लाख, छप्पन हजार को क्रोडसे गूणे (७०५६०००००००००) इतने वर्ष होते हैं.

वत्; उंचाइ ४५० धनुष्यकी; लक्षण हाथीका; आयुष्य ७२ लाख पूर्वका, जिस्मेंसे ७१ लाख पूर्व संसारमें रहे और एक लाख पूर्व दिक्षा पाल एक हजार साधूके साथ मोक्ष पधारे.

(३) फिर ३० लाख क्रोड सागर के पीछे तीसरे श्री संभवनाथ भगवान हुवे. सावत्थी नगरीमें जन्म हुआ. पिताका नाम जीतार्थ राजा, माताका नाम सन्यादेवी. देहका वर्ण सुवर्ण वत्; उंचाइ ४०० धनुष्यकी; लक्षण अश्वका; आयुष्य ६० लाख पूर्वका, जिसमेंसे ५९ लाख पूर्व संसारमें रहे और एक लाख पूर्व दिक्षा पाल एक हजार साधुके साथ मोक्ष पधारे.

(४) फिर दश लाख क्रोड सागर पीछे चौथे श्री आभिनंदन तीर्थंकर हुवे. वनिता नगरीमें जन्म हुआ. पिताका नाम संवर राजा, माताका नाम सिद्धार्था राणी. देहका वर्ण सुवर्ण वत; उंचाइ ३५० धनुष्यकी; लक्षण बंदरका; आयुष्य ५० लाख पूर्वका, जिस्मेंसे ४९ लाख पूर्व संसारमें रहे और एक लाख पूर्व दिक्षा पाल एक हजार साधुके साथ मोक्ष पधारे.

(५) फिर नव लाख क्रोड सागरके पीछे पांचमें श्री सुमतिनाथ भगवान हुवे. कुशलपुर नगरमें जन्म हुआ. पिताका नाम मेघरथ राजा, माताका नाम सुमंगला राणी, देहका वर्ण सुवर्ण वत्; उंचाइ ३०० धनुष्यकी; लक्षण क्रोंच पक्षीका; आयुष्य ४० लाख पूर्वका, जिस्मेंसे ३९ लाख पूर्व संसारमें रहे और एक लाख पूर्व दिक्षा पाल एक हजार साधुके साथ मोक्ष पधारे.

(६) फिर ९० हजार क्रोड सागरके पीछे छठे श्री पद्मप्रभू तीर्थंकर हुवे. कौसंबी नगरीमें जन्म हुआ. पिताका नाम धरराजा, माताका नाम सुसिमाराणी. देहका वर्ण लाल; उंचाइ २५० धनुष्यकी; लक्षण पद्मकमलका; आयुष्य ३० लाख पूर्वका, जिस्मेंसे २९ लाख पूर्व संसारमें रहे और एक लाख पूर्व दिक्षा पाल १००० साधुके साथ मोक्ष पधारे.

(७) फिर नव हजार क्रोड सागरके पीछे सातमे श्री सुपार्श्वनाथ भगवान हुवे. वणारसी नगरीमें जन्म हुआ. पिताका नाम प्रतिष्ठ राजा, माताका नाम पृथ्वीदेवीराणी. देहका वर्ण सुवर्ण वत्; उंचाइ २०० धनुष्यकी, लक्षण स्वस्तिक (साथीआ)

का; आयुष्य २० लाख पूर्वका, जिस्मेंसे १९ लाख पूर्व संसारमें रहे और एक लाख पूर्व दिक्षा पाल ५०० साधुके साथ मोक्ष पधारें.

(८) फिर ९०० क्रोड सागर पीछे आठमे श्री चंद्रप्रभ हुवे. जन्मभूमि चंद्रपुरी, पिता महासेन राजा, माता लक्ष्मणा राणी. देहका वर्ण श्वेत उज्वल, उंचाइ १५० धनुष्यकी, लक्षण चंद्रमाका. आयुष्य १० लाख पूर्वका, जिस्मेंसे ९ लाख पूर्व संसारमें रहे और एक लाख पूर्व दिक्षा पाल एक हजार साधूके साथ मोक्ष पधारे.

(९) फिर ९० क्रोड सागर पीछे नवमे श्री सुविधिनाथ हुए. जन्मभूमि काकंदी नगरी, पिता सुग्रीव राजा, माता रामादेवी. देहका वर्ण श्वेत उज्वल; उंचाइ १०० धनुष्यकी; लक्षण मगर मच्छका; आयुष्य दो लाख पूर्वका, जिस्मेंसे एक लाख पूर्व संसारमें रहे और एक लाख पूर्व दिक्षा पाल १००० साधूके साथ मोक्ष पधारे.

(१०) फिर नव क्रोड सागर पीछे दशमे श्री शीतलनाथ हुए. जन्मभूमि भदीलपुर. पिता द्रढरथ राजा, माता नंदादेवी राणी. देहका वर्ण सुवर्ण

व्रत; उंचाइ ९० धनुष्यकी; लक्षण श्रीवत्स साथीआका. आयुष्य एकलाख पूर्वका, जिस्मेंसे ०॥। लाख पूर्व संसारमें रहे और पाव लाख पूर्व दिक्षा पाल १०२० साधूके साथ मोक्ष पधारे.

(११) फिर एक क्रोड सागरमेंसे एक सो सागर छासठ लाख छव्वीस हजार वर्ष कमी थे तब इग्यारमे श्री श्रेयांसनाथ हुए. जन्मभूमि सिंहपुरी, पिता विष्णु राजा, माता विष्णु देवी राणी. देहका वर्ण सुवर्ण वत्; उंचाइ ८० धनुष्यकी; लक्षण गेंडाका. आयुष्य ८४ लाख वर्षका, जिस्मेंसे ६३ लाख वर्ष संसारमें रहे और २१ लाख वर्ष दिक्षा पाल १००० साधुके साथ मोक्ष पधारे.

(१२) फिर चौपन्न सागर पीछे बारवे श्री वासुपुज्य तीर्थंकर हुए. जन्मभूमि चंपा पुरी, पिता वसुपुज राजा, माता जया देवी राणी; देहका वर्ण लाल; उंचाइ ७० धनुष्य; लक्षण पाडे (भैंस)का. आयुष्य ७२ लाख वर्षका, जिस्मेंसे १८ लाख वर्ष संसारमें रहे और ५४ लाख वर्ष दिक्षा पाल ६०० साधुके साथ मोक्ष पधारे.

(१३) फिर तीस सागर पीछे तेरवे श्री विम-

लनाथ तीर्थंकर हुए. जन्मभूमि कंपिलपुर नगर, पिता कृतवर्म राजा और माता श्यामा देवी राणी. देहका वर्ण सुवर्ण वत्, उंचाइ ६० धनुष्यकी; लक्षण वराह (सुवर) का. आयुष्य ६० लाख वर्षका, जिस्मेंसे ४५ लाख वर्ष संसारमें रहे और १५ लाख वर्ष दिक्षा पाल ६०० साधूके साथ मोक्ष पधारे.

(१४) फिर नव सागर पीछे चौदवें श्री अनंतनाथ प्रभु हुए. जन्मभूमि अयोध्या नगरी, पिता सिंहसेन राजा, माता सुयशा राणी. देहका वर्ण सुवर्णवत्; उंचाइ ५० धनुष्यकी; लक्षण सिकरे पक्षीका. आयुष्य ३० लाख वर्षका, जिस्मेंसे २२॥ लाख वर्ष संसारमें रहे और ७॥ लाख वर्ष दिक्षा पाल ७०० साधूके साथ मोक्ष पधारे.

(१५) फिर चार सागर पीछे पन्नरवें श्री धर्मनाथ तीर्थंकर हुए. जन्मभूमि रत्नपुरी नगरी, पिता भानू राजा, माता सुव्रता राणी. देहका वर्ण सुवर्ण वत्; उंचाइ ४५ धनुष्यकी; लक्षण वज्रका. आयुष्य १० लाख वर्षका, जिसमेंसे ९ लाख वर्ष संसारमें रहे और एक लाख वर्ष दिक्षा पाल ८०० साधूके साथ मोक्ष पधारे.

(१६) फिर तीन सागरमें पौणे पल्य कमी पीछे सोलहवें श्री शान्तिनाथ प्रभु हुए. जन्मभूमि हस्तिनागपुर; पिता विश्वसेन राजा, माता अचरा देवी राणी. देहका वर्ण सुवर्ण वत्; उंचाइ ४० धनुष्यकी; लक्षण मृग (हीरण) का. आयुष्य एक लाख वर्षका, जिस्मेंसे ०॥। लाख वर्ष संसारमें रहे और ०। लाख वर्ष दीक्षा पाल ९०० साधूके साथ मोक्ष पधारे.

(१७) फिर आधा पल्योपम पीछे सत्तरवें श्री कुंथुनाथ प्रभु हूए. जन्मभूमि गजपुर नगर, पिता सुर राजा, माता श्री देवी. देहका वर्ण सुवर्ण वत्; उंचाइ ३५ धनुष्यकी; लक्षण छाग [बकरे] का; आयुष्य ९५ हजार वर्षका, जिसमेंसे ७१। हजार वर्ष संसारमें रहे और २३॥। हजार वर्ष दीक्षा पाल एक हजार साधूके साथ मोक्ष पधारे.

(१८) फिर ०। पल्यमेंसे एक क्रोड और एक हजार वर्ष कमी पीछे अढारवें श्री अर्हनाथ [अरनाथ] प्रभु हूए. जन्मभूमि हस्तिनागपुर [गजपुर], पिता सुदर्शन राजा, माता देवी राणी. देहका वर्ण सुवर्ण वत्; उंचाइ ३० धनुष्यकी; ल-

क्षण नंदावर्त्त साथीयाका. आयुष्य ८४ हजार व-र्षका, जिस्मेंसे ६३ हजार वर्ष संसारमें रहे और २१ हजार वर्ष दिक्षा पाल १००० साधूके साथ मोक्ष पधारे.

[१९] फिर एक क्रोड एक हजार वर्ष पीछे उगणिसवें श्री मल्लीनाथ भगवान हुए. जन्म भू-मि मिथिला नगरी. पिता कुंभराजा. माता प्रभावती राणी. देहका वर्ण हरा, उंचाइ २५ धनुष्यकी, ल-क्षण कळसका; आयुष्य ५५००० वर्षका, जिस्मेंसे १०० वर्ष संसारमें रहे और ५४९०० वर्ष दिक्षा पाल ५०० साधु और ५०० साध्वी के साथ मोक्ष पधारे.

[२०] फिर ५४ लाख वर्ष पीछे वीसमें श्री मु-नीसुव्रत भगवान हुए. जन्मभूमि राजग्रही नगरी. पिता सुमित्र राजा, माता पद्मावती राणी. देहका वर्ण श्याम [आसमानी]; उंचाइ २० धनुष्यकी; लक्षण कूर्म [काचबा] का; आयुष्य ३० हजार वर्षका, जिंस्मेंसे २२॥ हजार वर्ष संसारमें रहे और ७॥ हजार वर्ष दिक्षा पाल १००० साधुके साथ मोक्ष पधारे.

[२१] फिर छे लाख वर्ष पीछे इक्कीसवें श्री

नमिनाथ भगवान हूए. जन्मभूमि मथुरा नगरी, पिता विजय राजा, माता विपुला राणी. देहका वर्ण सुवर्ण वत् ; उंचाइ १५ धनुष्यकी; लक्षण निलोत्पल कमलका. आयुष्य १०हजार वर्षका, जिसमेंसे ९००० वर्ष संसारमें रहे और एक हजार वर्ष दिक्षा पालके १००० साधूके साथ मोक्ष पधारे.

[२२] फिर पांच लाख वर्ष पीछे बावीसवें श्री नेमनाथ [रिष्टनेमी] भगवान हूए. जन्मभूमि सौरिपुर, पिता समुद्र विजय राजा, माता सिवा देवी राणी. देहका वर्ण श्याम [आसमानी], उंचाइ १० धनुष्यकी, लक्षण संखका. आयुष्य १००० वर्षका, जिसमेंसे ३०० वर्ष संसारमें रहे और ७०० वर्ष दिक्षा पालके ५३६ साधूके साथ मोक्ष पधारे.

[२३] फिर पौणे चौरासी हजार वर्ष पीछे तेवींसवें श्री पार्श्वनाथ भगवान हुए. जन्मभूमि वणारसी नगरी, पिता अश्वसेन राजा, माता वामादेवी राणी. देहका वर्ण हरा; उंचाइ नव हाथकी; लक्षण सर्पका. आयुष्य १०० वर्षका, जिसमेंसे ३० वर्ष संसारमें रहे और ७० वर्ष संयम पाल १००० साधुके साथ मोक्ष पधारे.

(२४) फिर अडाइसे वर्ष पीछे चौवीसवे श्री महावीर प्रभु हुए. जन्म भूमि क्षत्रीकुंड ग्राम. पिता सिद्धार्थ राजा, माता त्रिसला देवी राणी; देहका रंग सुवर्ण वत्; उंचाइ सात हाथकी; लक्षण सिंहका. आयुष्य ७२ वर्षका, जिसमेंसे ३० वर्ष संसारमें रहे और ४२ वर्ष संयम पाल अकीले मोक्ष पधारे. (उस वक्त चौथे आरेके ३ वर्ष ८॥ महिने बाकी थे.)

प्रथम श्री ऋषभ देवजीसे लगाके चौवीसवें श्री महावीर स्वामी तक एक क्रोडा क्रोड सागर कुच्छ विशेष, उसमें ४२००० वर्ष कमी अंतर जानना.

ये जो वर्त्तमान चौविसीके अंतर कहे सो सदा साश्वते हैं. गये कालमें अनंत चौविसी हुइ सो इतने इतने ही अंतरसे हुइ; इतना ही आउष्य और अवघेणा सर्व तीर्थंकरोकी समजनी. और आगामिक कालमें जो अनंत चौविसी होगी सो भी इसी तराह समजनी. अंतर, आयुष्य, अवघेणा प्रमुख सर्व एककी अपेक्षासे जानना. उत्सार्पिणीमें पहलेसे आखीर तक और अवसर्पिणीमें आखीरसे पहले तक उलट पलट जानना.

अतीत कालके २४ तीर्थंकरों.

इस भरत क्षेत्रमें अतित अर्थात् गये कालमें नीचे मुजब २४ तीर्थंकर हुएः—(१) श्री केवलज्ञानीजी (२) श्री निर्वाणीजी (३) श्री सागरजी (४) श्री महाशयजी (५) श्री विमलप्रभुजी (६) श्री सर्वानुभूतिजी (७) श्री श्रीधरजी (८) श्री श्रीदत्तजी (९) श्री दामोदरजी (१०) श्री सुतेजजी (११) श्री स्वामिनाथजी (१२) श्री मुनिसुव्रतजी (१३) श्री सुमतिजी (१४) श्री शिवगतिजी (१५) श्री अस्तांगजी (१६) श्री नमीश्वरजी (१७) श्री अनिलजी (१८ श्री यशोधरजी (१९) श्री कृतार्थजी (२०) श्री जीनेश्वरजी (२१) श्री शुद्धमतिजी (२२) श्री शिवंकरजी (२३) श्री स्यंदनजी (२४) श्री संप्रातजी.

अनागत कालके २४ तीर्थंकरों.

इस भरत क्षेत्रमे अनागत [आवते] कालमें जो २४ तीर्थंकर होंगे उन्के नाम नीचे मुजब हैंः—

१ श्री पद्मनाभजी [श्रेणिक राजाका जीव, प्रथम नर्कसे निकल कर] २ श्री सुरदेवजी [महावीर स्वामीके काका सुपार्श्वका जीव देवलो-

कसे आयेंगे.] ३. श्री सुपार्श्वजी [कोणिक राजाका पुत्र उद्दाइ राजाका जीव * देवलोकसे.] ४. श्री स्वयंप्रभजी [पोटिला अणगारका जीव, तीसरे देवलोकसे.] ५. श्री सर्वानुभूतिजी [द्रढयुद्ध श्रावकका जीव, पांचवें देवलोकसें.] ६. श्री देवश्रुतिजी [कार्तिक शेठका जीव, पहले देवलोकसे.]** ७ श्री उदयनाथजी [शंख श्रावकका जीव[१], देवलोकसे.] ८. श्री पेढालजी [आणंद श्रावकका जीव[२], देवलोकसे.] ९. श्री पोटिल्लजी (सुनंद श्रावकका जीव[३], देवलोकसे.) १०. श्री सतकीर्तिजी (पोखलीजीके धर्मभाइ सतक श्रावकका जीव[३], देवलोकसे.) ११ श्री मुनीव्रतजी (कृष्णजीकी माता देवकीजीका जीव, नर्कसे)

* पाटलीपुरपति.

** इन्को इन्द्र नहीं जानना, क्यों कि इन्द्रका आयुष्य दो सागरका है और इन्का आंतरा थोडा है; इस लिये कोइ दुसरे कार्तिक शेठका जीव है.

१. यह, भगवतीजीमें कहे हुवे संख श्रावक नहीं परंतु दूसरा कोइ समझना.

२. यह, महावीर स्वामीके श्रावक नहीं परंतु दूसरा कोइ

म. चक्रवर्ती आदि छे पद्वी पायेंगे.

३. चक्रवर्ती आदि छे पद्वी पायेंगे.

१२. श्री अममजी (कृष्णजीका जीव[1], तीसरी नर्कसे) १३. श्री निःकषायजी (सुजेष्टाजीका पुत्र सत्यकी-रुद्रका जीव, नर्कसे) १४. श्री निष्पुलाकजी (कृष्णजीके भाइ बलभद्रजीका जीव, पंचम देवलोकसे) १५. श्री निर्ममजी (राजग्रहीके धन्ना सार्थवाहकी बन्धुपत्नि सुलसाजी श्राविकाका जीव, देवलोकसे.) १६. श्री चित्रगुप्तजी (बलभद्रजीकी माता रोहिणीका जीव, देवलोकसे) १७ श्री समाधिनाथजी (कोलापाक बोराया सो रेवती गाथापतिणीका जीव, देवलोकसे) १८. श्रीसंवरनाथजी (सत तिलक[2] श्रावकका जीव, देवलोकसे.) १९. श्री यशोधरजी (द्वारकाको जलानेवाला दीपायन तापसका जीव, देवलोकसे.) २०. श्री विजयजी (करणका जीव[3], देवलोकसे) २१. श्री मल्लदेवजी (निग्रंथ पुत्र कहा सो, मल्ल नारद[4]का जीव, देवलोकसे.) २२. श्री

---

१. इन्को कितनेक तेरमे कहते हैं. परंतु ये बात मिलती नहीं है; क्यों कि तेरमेका अंतर ४६ सागरका होता है.

२. कितनेक गांगली तापसको सत तिलक कहते हैं. सत्य ज्ञानी जाणे.

३. इनको कितनेक सौ कारवाके भाइ कहते हैं; कितनेक चंपापती श्री वासुपुज्यजीके परिवारके कहते हैं. सत्य ज्ञानी जाणे.

४. इनको कितनेक रावणका वखतका नारद कहते हैं.

देवचंद्रजी (अंबड श्रावकका जीव*, देवलोकसे.)
२३. श्री अनंतवीर्यजी (अमरका जीव, देवलोकसे)
२४. श्री भद्रंकरजी (स्वतकजीका जीव, सवार्थसिद्ध विमानसे.)

इस अढाइ द्वीपमें जघन्य (कमीमें कमी) तो २० तीर्थंकर होते हैं. और उत्कृष्ठ (ज्यादासे ज्यादा) १७० तीर्थंकर होते हैं. १७० तो श्री अजितनाथ भगवानके वक्तमें हुवे थे और २० तो पंचमहाविदेह क्षेत्रमें अबी विचरते हैं.

* * * * *

२० विहरमान के नाम, इत्यादि.

१. श्री संधीर स्वामी; पिता श्रेयांस राजा, माता सत्यकी राणी, पत्नि रुक्मिणी, लक्षण वृषभ (बैल) का.

२. श्री युगमंदीर स्वामी; पिता सुसढ राजा, माता सुतारा राणी, पत्नि प्रियंगमा, लक्षण छाग (बकरे) का.

---

*. उत्तराइजीम कहा हुआ अंबड श्रावक नहीं परंतु जिन्ने सुलसाजीकी परीक्षा करी है वोही है,

३. श्री बाहू स्वामी; पिता सुग्रीव राजा, माता विजयादेवी राणी, पत्नि मोहना, लक्षण मृग (हरीण) का.

४. श्री सुबाहु स्वामी; पिता निसढ राजा, माता विजया राणी, पत्नि किंपुरिषा, लक्षण मर्कट (वानर) का.

☞ ये चारों तीर्थंकर जंबुद्विपके सुदर्शन मेरुके चारों दिशामें विचरते हैं.

५. श्री सुजात स्वामी; पिता देवसेन राजा; माता देवसेना राणी, पत्नि जयेसना, लक्षण सूर्यका.

६. श्री स्वयंप्रभ स्वामी; पिता मित्रभुवन राजा, माता सुमंगला राणी, पत्नि वीरसेना, लक्षण चंद्रमाका.

७. श्री रिषभानंदन स्वामी; पिता कीर्तराजा, माता वीरसेणा राणी, पत्नि जयवती, लक्षण सिंहका.

८. श्री अनंतवीर्य स्वामी; पिता मेघराजा, माता मंगला राणी, पत्नि विजयवती, लक्षण छाग (बकरे) का.

☞ ये चारों तीर्थंकर धातकी खंडके पूर्व महाविदेहके विजय मेरुके पास विचरते हैं.

९. श्री सुरप्रभ स्वामी; पिता नागराजा, माता भद्राराणी, पत्नि विमलाजी, लक्षण सूर्यका.

१०. श्री विशालधर स्वामी; पिता विजयराजा; माता विजयादेवी, पत्नि नंदसेना, लक्षण चंद्रमाका.

११. श्री विजयधरस्वामी; पिता पद्मरथ राजा; माता सरस्वती राणी, पत्नि विजया; लक्षण वृषभ (बेल) का.

१२. श्री चंद्रानन स्वामी; पिता वाल्मिक राजा, माता पद्मावती राणी; पत्नि लीलावती, लक्षण वृषभका.

☞ ये चारों तीर्थंकर धातकी खंडके पश्चिम महाविदेहके अचलमेरूके पास विचरते हैं.

१३ श्री चंद्रबाहु स्वामी; पिता देवनंद राजा, माता रेणुकाराणी, पत्नि सुगंधा, लक्षण पद्मकमलका.

१४. श्री ईश्वर स्वामी; पिता कुलसेन राजा, माता यशोज्वला राणी, पत्नि भद्रवती, लक्षण चंद्रमाका.

१५. श्री भुजंग स्वामी; पिता महाबल राजा, माता महिमावती राणी, पत्नि गंधसेना, लक्षण पद्मकमल,

१६. श्री नेमप्रभू स्वामी; पिता वीरसेन राजा माता सेनादेवी राणी, पत्नि मोहना, लक्षण सूर्यका.

☞ ये चारों तीर्थंकर पुष्करार्ध द्विपके पूर्व दिशा मंदिरनाम मेरुके पास विचरते हैं.

१७. श्री वीरसेन स्वामी; पिता भूमिपाल राजा, माता भानुमति राणी, पत्नि राजसेना, लक्षण वृषभका.

१८ श्री महाभद्र स्वामी; पिता देवसेन राजा, माता उमा राणी, पत्नि सूर्यकांता, लक्षण हाथीका.

१९. श्री देवयशस्वामी; पिता सर्वभूति राजा, माता गंगादेवीराणी, पत्नि पद्मावती, लक्षण चंद्रमाका.

२०. श्री अनंतवीर्य स्वामी; पिता राजपाल राजा, माता कनीनी राणी, पत्नि रत्नमाला, लक्षण स्वस्तिक [साथिया] का.

☞ ये चार तीर्थंकरों पुष्करार्ध द्विपके पश्चिम दिशा विद्युत्माली मेरुके पास विचरते हैं.

इन २० विहरमान प्रभुजीका ८४ लाख पूर्वका आयुष्य है, जिस्मेंसे ८३ लाख पूर्व तो गृहवासमें रहेते हैं, फिर दिक्षा लेकर एक मास छद्मस्थ

रहते हैं, फिर केवल ज्ञानकी प्रप्ति होती है.

२० विहरमानका देहमान ५०० धनुष्यका, आयुष्य ८४ लाख पूर्वका और दिक्षा एक लाख पूर्वकी होती है. ये २० तीर्थंकर भरत क्षेत्रकी वर्तमान चौवीसीके सत्तरवें तीर्थंकर श्री कुंथुनाथजीके निर्वाण गये पीछे उन्के सासनमें एक ही समे जन्मे. वीसवें तीर्थंकर श्री मुनीसुव्रत स्वामीके निर्वाण पधारे पीछे उन्के सासन में वीसने ही एक ही समय दीक्षा ली, एकही समय एक मास पीछे कैवल्य ज्ञान प्राप्त हुआ. और आगामिक चौविसीमें सातवें तीर्थंकर श्री उदयनाथजीके निर्वाण बाद उन्के सासनकी वक्तमें वीस ही एक समय मोक्ष पधारेंगे के तुर्त दुसरी विजयमें जो तीर्थंकर पैदा हुये होंगे वे दिक्षा ग्रहण करके तीर्थंकर पदको प्राप्त होंगे. इस तरांह अनादि कालसे चला आता है और आगे अनादिकाल चलेगा, परंतु २० तीर्थंकरमें कभी कमी नहीं होगे.

श्री अजीतनाथजीके वक्तके उत्कृष्ठ १७० तीर्थंकरों.

(३२) जंबुद्वीपकी ३२ महाविदेहके ३२ तीर्थंकरों.)

१. श्री जयदेवजी, २. श्री करणभद्रजी, ३.

श्री लक्ष्मीपतिजी ४. श्री गंगधरजी, ५. श्री विशाल-चंद्रजी, ६. श्री प्रियंकरजी, ७. श्री अमरदत्तजी, ८. श्री कृष्णनाथजी, ९. श्री अनंतहृदयजी, १० श्री गुणगुप्तजी; ११. श्री पद्मनाथजी. १२. श्री जलधरजी, १३ .श्री युगादित्यजी, १४. श्री वरद-त्तजी, १५. श्री चंद्रकेतूजी, १६, श्री महाकायजी, १७ श्री अमरकेतूजी, १८. श्री अरण्यवासजी, १९. श्री हरीहरजी, २०. श्री रामचंद्रजी, २१ श्री शांती देवजी, २२. श्री अनंतकर्तजी, २३. श्री गजेंद्र प्रभू २४. श्री सागरचंद्रजी २५. श्री महेश्व-रजी; २६. श्री लक्ष्मीचंद्रजी, २७ श्री ऋषभनाथजी, २८. श्री सौम्यकांतजी, २९. श्री नेमीभद्रजी, ३० श्री अजितभद्रजी, ३१. श्री महीधरजी, ३२ श्री राजेन्द्रश्वरजी.

(३२) धातकीखंडकी पहली महाविदेहके ३२ तिर्थकर

१. श्री वीरचंद्रजी, २. श्री वत्ससेनजी, ३ श्री नलकांतजी ३ श्री मुजकेसजी, ५. श्री ऋुकमाकजी, ६. श्री क्षेमंकरजी; ७ श्रीमृ-गाकजी, ८. श्री मुनीमूर्तीजी, ९ श्री विमलचंदजी,

१० श्री आगामिकजी, ११. श्री दुष्कर तपजी, १२ श्री वसुद्धिपजी, १३. श्री महल्लनाथजी, १४. श्री वनदेवजी, १५. श्री बलभूतजी; १६. श्री अमृतवाहनजी, १७ श्री पुर्णिमेंद्रजी; १८. श्री रेवांकितजी, १९. श्री कल्पशाकजी, २०. श्री नलणीदत्तजी, २१. श्री विद्यापतिजी, २२. श्री सूपार्श्वजी, २३ श्री भानुनाथजी, २४ श्री प्रभंजनजी, २५ श्री विशिष्टनाथजी, २६. श्री जल प्रभजी, २७ श्री महा भीमजी, २८ श्री ऋषीपालजी, २९ श्रीकुंडदत्तजी, ३० श्री महावीरजी, ३१ श्री भूतानंदजी, ३२ श्री तिर्थेश्वरजी.

(३२) धातकीखंडकी दुसरी महाविदेहके ३२ तिर्थंकर

१ श्री दत्तजी; २ श्री भूमीपतिजी, ३. श्री मेरूदत्तजी, ४. श्री सूमित्रजी; ५. श्री सेणनाथजी, ६ श्री प्रभानंदजी, ७. श्री पद्माकरजी, ८ श्री महाघोपजी, ९ श्री चंद्रप्रभूजी, १०. श्री भूमिपालजी, ११. श्री सुमतीसेनजी, १२. श्री अतीअचुतजी, १३. श्री तीर्थभूतजी, १४. श्री ललीतांगजी, १५. श्री अमरचंद्रजी, १६. श्री समाधीनाथजी, १७. श्री मुनीचंद्रजी,

१८. श्री महेन्द्रजी, १९. श्री शशांकजी, २०. श्री जगदीश्वरजी, २१. श्री देवेंद्रजी, २२. श्री गुणनाथजी, २३. श्री नारायणजी, २४. श्री कपीलनाथजी, २५. श्री प्रभाकरजी, २६. श्री जिनरक्षितजी, २७. श्री सकलनाथजी, २८. श्री सीलारनाथजी, २९. श्री उद्योतनाथजी, ३०. श्री वज्रंधरजी, ३१. श्री सहस्त्रधरजी, ३२. श्री अशोकदत्तजी.

(३२) पुष्करार्ध द्विपकी पहली महाविदेहके ३२ तिर्थंकर

१. श्री मेघवाहनजी, २. श्री जीवरक्षकजी, ३. श्री महापुरुषजी, ४. श्री पापहरजी, ५. श्री मृगांकजी, ६. श्री सुरसिंघजी, ७. श्री जगत् पुज्यजी, ८. श्री सुमतीनाथजी, ९. श्री महामहेन्द्रजी, १०. श्री अमरभूतिजी, ११. श्री कुमारचंद्रजी, १२. श्री वीरसेनजी, १३. श्री रमणनाथजी, १४. श्री स्वयंभूनाथजी, १५. श्री अचलनाथजी, १६. श्री मकरकेतुजी, १७. श्री सिद्धार्थनाथजी, १८. श्री सफलंनाथजी, १९. श्री विजयदेवजी, २०. श्री नरसिंहनाथजी, २१. श्री सितानंदजी, २२. श्री वृंदारकजी, २३. श्री चंद्रतपजी, २४. श्री चंद्रप्रभजी, २५. श्री द्रढरथनाथजी, २६. श्री महा-

यशजी, २७. श्री उष्मांकजी, २८ श्री प्रद्युम्नजी, २९. श्री महातेजजी, ३०. श्री पुष्पकेतुजी, ३१. श्री कामदेवजी, ३२. श्री समरकेतुजी.

(३२) पुष्करार्ध द्विपकी दुसरी महाविदेहके ३२ तिर्थंकर

१. श्री प्रश्नचंद्रजी २. श्री महासेनजी, ३. श्री वज्रनाभजी, ४. श्री सुवर्णबाहुजी, ५. श्री कुरु-विंदजी, ६. श्री वज्रविर्यजी, ७. श्री विमलचंद्रजी, ८. श्री यशोधरजी, ९. श्री महाबलजी, १० श्री वज्रसेनजी, ११. श्री विमलबोधजी, १२. श्री भीमनाथजी, १३, श्री मेरुप्रभजी, १४. श्री भद्रगुप्तजी, १५ श्री सुदृढसिंहजी, १६. श्री सुव्रतनाथजी, १७. श्री हरिश्चंद्रजी, १८, श्री प्रतिमाधरजी, १९. श्री प्रतिश्रेयजी, २० श्री प्रतिषेणजी, २१ श्री कनककेतुजी, २२ श्री अजितवीरजी, २३ श्री फाल्गुमित्रजी, २४ श्री ब्रह्मभूतिजी, २५ श्री हितकरजी, २६ श्री वरुणदत्तजी, २७. श्री यशकीर्तिजि. २८, श्री नागेंद्र-कीर्तिजी; २९ श्री महीकृतब्रह्मजी, ३० श्री महेंद्रजी, ३१ श्री वृधमानजी; ३२ श्री सुरेंद्रदत्तजी.

---

(१०) पांचभरत और पांच ऐरावतके १० तिर्थंकर

१. जंबुद्विपके भरत क्षेत्रमें श्री अजितनाथजी.

२. धातकी खंडके पहले भरत क्षेत्रमें श्री सिधांत नाथजी.

३. धातकी खंडके दुसरे भरत क्षेत्रमें श्री कर्पटनाथजी.

४. पुष्करार्ध द्विप के पहले भरत क्षेत्रमें श्री प्रभासनाथजी.

५. पुष्करार्ध द्विपके दुसरे भरत क्षेत्रमें श्री प्रभावकनाथजी.

६. जंबूद्विपके ऐरावत क्षेत्रमें श्री चंद्रनाथजी.

७. धातकी खंडके पहले ऐरावत क्षेत्रमें श्री जयनाथजी.

८. धातकी खंडके दुसरे ऐरावत क्षेत्रमें श्री पुष्पदंतजी.

९. पुष्करार्ध द्विपके पहले ऐरावत क्षेत्रमें श्री जयनाथजी.

१०. पुष्करार्ध द्विपके दुसरे ऐरावत क्षेत्रमें श्री बलभद्र स्वामीजी.

ऐसे सर्व मिलके १७० तीर्थंकर हुए. जिनमें १६ विद्रुम जैसे रक्त वर्णके, ३८ पन्ने जैसे हरे वर्णके, ५० हीरे जैसे उज्वल वर्णके, ३० नीलम जैसे नील वर्णके, ३६ सुवर्ण जैसे पीले वर्णके हैं.

तीर्थंकरका देह सूर्य जैसा प्रकाशकारी है और रक्त, मांस, मेद, मल, मूत्र रहित, [काम-देव सदृश] और शंख-चक्रादिक शुभ लक्षणों सहित है. चंद्र, सूर्य, ध्वज, छत्र, पर्वत, कमल, सा-गर, वृक्ष, मंदिर, स्वस्तिक इत्यादिक उत्तम १००८ लक्षणों युक्त है. अति ही मनोहर, निर्धूम अग्नि जैसा दैदिप्यमान है. ज्यादह क्या वर्णन करें, श्री मानतुंगाचार्य एक श्लोकमें वर्णन करते हैं कि—

स्त्रीणां शतानि शतशो जनयन्ति पुत्रान्
नान्या सुतं त्वदुपमं जननी प्रसूता ।
सर्वा दिशो दधति भानि सहस्ररश्मिं
प्राच्येव दिग् जनयति स्फुरदंशुजालम् ॥

अर्थात् इस दुनियामें हजारों स्त्रियां पुत्रोंको जन्म देती है परन्तु तीर्थंकरको माता समान जन्म देनेवाली दूसरी माता कोइ है ही नहीं. जैसे सर्व-

नक्षत्र—ताराओंको तो सर्व दिशा जन्म देती हैं परन्तु सूर्यको तो अकेली पूर्व दिशा ही जन्म देती है !

सर्व तीर्थंकरोंकी अवघेणा जघन्य ७ हाथकी और उत्कृष्टी ५०० धनुष्यकी होती है* आयुष्य जघन्य ७२ वर्षका और उत्कृष्ट ८४ लाख पूर्वका होता है. गुण तो सर्व तीर्थंकरोंके एकसारिखे होते हैं.

ऐसे अनंत २ गुणधारी अनंत अरिहंत भगवानको मेरा नमस्कार सदा त्रिकाल हो !

इति परमपूज्य श्री कहानजी ऋषिजीके संप्रदायके बालब्रह्मचारी मुनी श्री अमोलख ऋषिजी विरचित् श्री " जैन तत्व प्रकाश " ग्रंथका " अरिहंत " नामक प्रथम प्रकरण समाप्तम् ॥

---

*यह अवघेणा पांचमे आरेके १०,००० वर्ष जायेंगे उस वक्त जो मनुष्य होंगे उनके हाथमे गीनी गई है. अपने २ हाथसे तो सबकी १२० अंगुलकी उंचाई होती है.

प्रकरण २ रा.

सिद्ध.

"सिव मयल मरुय मणंत मक्खय मव्वाबाह म-पुणरावर्ति सिद्धि गइ नामधेयं."

अर्थात्:—उपद्रव रहित, अचल. जन्म—कर्म अंकुर रहित. अंत रहित. अक्षय. पीडा रहित. पूनः जन्म रहित ऐसे धामको "सिद्ध गति" कहते हैं; कि जिस्में रहनेवालेंको "सिद्ध" भगवान कहे जातेहैं.

श्री उववाइजीमें प्रश्न किया है:—

कहिं पडिहया सिद्धा कहिं सिद्धा पतिठिया।
कहिं बोदि चइताण कत्थ गताणु सिझइ॥

अर्थात्—सिद्ध प्रभु कहां जाके अटके हैं? कहां जाके स्थिर रहे हैं? किस जगह शरीरका त्याग किया है? कहां जाके सिद्ध हुए हैं?

ये प्रश्नका उत्तर दिया है किः—

अलोय पडिहया सिद्धा लोयग्रेय पतिठिया।
इहं बोदि चइताणं तत्थ गंतूण सिझइ॥

अर्थात्–सिद्ध प्रभु आ लोकसे अडके रहे हैं. लोकके अग्र भागमें स्थिर रहे हैं. ह्यां (मनुष्य लोकमें) शरीरका त्याग किया है और मोक्षमें जाके सिद्ध हुए हैं.

अब ऐसा प्रश्न स्वाभाविक रितसें होता है कि, सर्व लोकके उपर अग्र भागमें सिद्ध भगवान विराजत हैं तो लोकालोकका हाल कैसा है?

तीन लोकका बयान.

एक दीवा उलटा, उस्पे दुसरा दीवा सीधा और उस्पे तीसरा दीवा उलटा रखनेसे जैसा आकार होता है ऐसे सर्व लोक हैं. ए सर्व सम्पूर्ण लोक ३४३ †राजू घनाकारमें हैं. अर्थात् इतनेमें ही त्रस

† एक राजू जमीनका प्रमाणः–३, ८१, २७, ९७० मणका एक लोहका गोलाको एक 'भार' कहा जाता है. ऐसे हजार गोलेका एक गोला बनाके कोइ देवता बहोत उंचा जाके उस्को नीचा डाले तब वो गोला ६ महीने, ६ दिन, ६ प्रहर और ६ घटिकामें जितनी जगा (आकाश) उल्लंघे इतनी जगाको एक 'राजू' की जगा कही जाती है.

और स्थावर जीव भेले हैं, बाकी सर्व ठिकाणे स्थावर जीव ही भरे हुवे हैं.

नीचा लोकका बयान.

सातमी नरक.

"अलोक" के उपर सातमी "तमंतमा प्रभा" नामक नरककी हद तक एक राजूकी उंची और घनाकार ४६ राजूके विस्तार जितनी जगा है, जिस्में एक लाख आठ हजार योजनका जाडा पृथ्वीपिंड है. उस्मेंसे ५२॥ हजार योजन नीचे छोडना और ५२॥ हजार योजन उपर छोडना, बीचमें तीन हजार योजनकी पोलार है. उस पोलारमें एक ही †पाथडा (गुफाके आकार जगा) है, उस्में पांच नरकावासे "नेरीए" (नरकके जीव) को रहनेके लिये हैं. काल, महाकाल, रुद्र, महारुद्र, अइपइठा ये पांच नरकावासेमें असंख्यात कुंभीयें

† जैसे मकानमें मजले होते हैं वैसे ही नरकमें मजले होते हैं, जिनको 'आंतरे' कहते हैं. और बीचमें जो थर (मट्टीका पिंड) होता है उसको 'पाथडा' कहता है. आंतरे खाली हैं और पाथडे पोले होते हैं, जिस्में नरकावासे हैं और उसमें नेरीये रहते हैं.

और असंख्यात नेरीए हैं. ये नेरीएका ५०० धनुष्यका उत्कृष्ट शरीर और आयुष्य जघन्य २२ सागरका*—उत्कृष्ट ३३ सागरका होता है.

*सागरका प्रमाण:—अनंत सूक्ष्म प्रमाणुका एक बादर प्रमाणु होता है, जिस्के दो टुकडे करनेकी शक्ति तिव्र शस्त्रसें भी नहीं है. अनंत बादर प्रमाणुका एक 'उष्ण श्रेणिया' (गर्मी पडती है सो पुद्गल) होता है. ८ उष्ण श्रेणियाका 'एक शित श्रेणिया' होता है. ८ शित श्रेणियाका एक 'उर्ध्वरेणु' होय (तग्वलेमें उडती रज दिखे सो). ८ उर्ध्वरेणुकी एक 'त्रस रेणु' (त्रसकायका शरीर) होय. ८ त्रसरेणुकी एक 'रथरेणु' (रथ चलते धूल उडे सो) होय. ८ रथरेणुका एक देवकुरु उत्तरकुरु क्षेत्रके मनुष्यका वालाग्र. ८ देवकुरु उत्तरकुरु क्षेत्रके मनुष्यका वालाग्रका एक हरिवास—रमकवासके क्षेत्रके मनुष्यका वालाग्र. ८ हरिवासके मनुष्यके वालाग्रका एक महाविदेहके मनुष्यका वालाग्र. ८ महाविदेहके मनुष्यके वालाग्र जित्नी जाडी एक लींख. ८ लींखकीएक यूका(ज्यूं). ८यूकाका एक यवमध्य. ८यव मध्यका १ उत्सेध अंगुल. ६ अंगुले १ पउ. २ पउ=१ विहथी. २ विहथी=१ हाथ. २ हाथ=कुच्छ. २ कुच्छ=१ ध-

छट्टी नरक.

सातमी नरकके उपर छट्टी " तम प्रभा " नामक

नुष्य. २००० धनुष्य=१ कोश (गाउ) ४. गाउ=१ यो-जन. अैसा एक योजन लंबा चौडा (गोळ) और एक ही योजन उंडे कूवेमें, देवकुरुके मनुष्यके एक दो यावत् सात दिन के भीतरके बच्चे (लडके) के केश एकके दो टुकडे न होवे अैसे बारीक कतर के भरे; अैसे भरे कि वो बालाग्र विग्रसे नहीं, दबे नहीं, अग्निसे जले नहीं, हवासे उडे नहीं. अैसा भरे. फिर १०० वर्ष जावे तब कूवेमेंसे १ बालाग्र निकाले; इसतराह निकालते २ वो कुवा खाली होवे उतने वर्षको एक पल्योपम कहते हैं और, अैसे १० कोडाकोडी १०००००००००००००००० कूवे खाली होवे तब एक सागरोपम होता है. [समयका हिसाब इसमुजब है:—आंख मीचके तूर्त उघाडे इतनेमें असंख्यात समय होवे; अैसे असंख्यात समयकी एक आवलिका होती है. ३७७३ आवलिका—१ श्वासोश्वास (निरोगी मनुष्यका); ३७७३ श्वासोश्वास—१ मूहूर्त (कच्ची दो घडी); ३० मूहूर्त—१ अहोरात्री (रात्री और दिवस); १५ अहोरात्री—१ पक्ष; २ पक्ष—१ मास; २ मास —१ ऋतु (वंसतादिक); २ ऋतु—१ अयन (उत्तरायन इत्यादि); २ अयन—१ संवत्सर; ५ संवत्सर—१ युग.]

नरककी हद तक एक राजू उंची और ४० राजू घनाकार विस्तार जितनी जगा है, जिस्में १,१६,००० योजनका पृथ्वीमय पिंड है. उस्मेंसे १००० योजन नीचे और १००० योजन उपर छोडना बीचमें १,१४,००० योजनकी पोलार है. इस्में तीन पाथडे और दो आंतरे हैं. पाथडेमें ९९,९९५ नरकावासे हैं, जिस्में असंख्यात कुंभीयें और नेरीए हैं. ये नेरीएका शरीर उत्कृष्ट २५० धनुष्यका उंचा और आयुष्य जघन्य १७ सागरका-उत्कृष्ट २२ सागरका होता है.

पांचमी नरक.

छट्ठी नरककी हदके उपर पांचमी "धूमप्रभा" नामक नरककी हद तक एक राजुकी उंची और ३४ राजुके विस्तार जितनी जगा है, जिस्में १,१८००० योजनका जाडा पृथ्वीमय पिण्ड है, जिस्के १००० योजन नीचेके और १००० योजन उपरके छोडकर बीचके १, १६००० योजनकी पोलार है. ये पोलारमें पांच पाथडे और चार आंतर हैं. आंतरे तो खाली हैं और पाथडेमें तीन लाख नरकावासे हैं, जिस्में असंख्यात कुंभियें और नेरीये हैं. ये नेरीयेका

देहमान उत्कृष्ट १२५ धनुष्यका और आयुष्य जघन्य १०—उत्कृष्ट १७ सागरका है.

चौथी नरक.

पांचमी नरककी हदके उपर चौथी "पंकप्रभा" नरक तक एक राजू उंची और २८ राजूके विस्तार जितनी घनाकार जगा है, जिस्में १, २०,००० योजनका जाडा पृथ्वीपिंड है. उस्मेंसे १००० योजन उपरके और १००० नीचेके छोडनेसे बीचके १,१८,००० योजनकी पोलार है, जिस्में ७ पाथडे और ६ आंतरे हैं. पाथडेमें १०, ००००० नरकावासे हैं, जिस्में असंख्यात कुंभियें और नेरीये हैं. ये नेरीयेका उत्कृष्ट देहमान ६२॥ धनुष्यका और आयुष्य जघन्य ७ सागर और उत्कृष्ट १० सागरका है.

तीसरी नरक.

चौथी नरककी हदके उपर तीसरी "वालुप्रभा" नामक नरककी हद तक एक राजू उंची और २२ राजूके विस्तार जितनी घनाकार जगा है, जिस्में १,२८००० योजनका जाडा पृथ्वीमय पिंड है. उस्मेंसे १००० योजन उपरके और १००० नीचेके छोडनेसे बीचके १, २६,००० योजनकी पोलार है,

जिस्में ९ पाथडे और ८ आंतरे हैं. पाथडेमें १५,०० ०,०० नरकावासे हैं, जिस्में असंख्यात कुंभिये और नेरीये हैं, जिन्का उत्कृष्ट देहमान ३१ धनुष्यका और आयुष्य जघन्य ३ सागर और उत्कृष्ट ७ सागरका है.

दुसरी नरक.

तीसरी नरकके हद उपर दुसरी "सक्कर प्रभा" नामक नरककी हद तक एक राजू उंची और १६ राजूके विस्तार जितनी घनाकार जगा है, जिस्में १,३२००० योजनका जाडा पृथ्वीमय पिण्ड है. इ-स्मेंसें १००० योजन उपरके और १००० नीचेके छोडनेसे १,३०००० योजनकी पोलार है, जिस्में ११ पाथडे और १० आंतरे हैं. पाथडेमें २५,००,००० नरकावासे हैं, जिस्में असंख्यात कुंभियें और नेरीये हैं, जिन्का देहमान उत्कृष्ट १५॥ धनुष्य और १२ अं-गुलका है और आयुष्य जघन्य एक सागर–उत्कृष्ट तीन सागरका है.

पहली नरक.

दुसरी नरकके हद उपर पहली "रत्नप्रभा" ना-मक नरककी हद तक एक राजूमें १८००० योजन कमी इतनी उंची और १० राजू जितनी घनाकार

जगा है, जिस्में १,८०,००० योजनका जाडा पृथ्वी-मय पिण्ड है. इस्मेंसे १००० उपरके—१००० नीचेके योजन छोडनेसे बीचके १,७८,००० योजनकी पोलार है, जिस्में १३ पाथडे और १२ आंतरे हैं. एक नीचेका और एक उपरका आंतरा तो खाली है और बीचके १० आंतरेमें १० जातके भवनपति देव रहते हैं. और पाथडेमें ३०,०००,०० नरकावासे हैं, जिस्में असंख्यात कुंभिअें और नेरीअें हैं, जिन्का देहमान उत्कृष्ट ७॥ धनुष्यका और ६। अंगुलका और आयुष्य जघन्य १०००० वर्ष—उत्कृष्ट एक सागरका है.

नरकोंका सविस्तर बयान.

सातों नरकके सर्व मिलके ४२ आंतरे, और ४९ पाथडे और ८४,०००,०० नरकावासे हैं. सर्व नरकावासे भीतरसे गोलाकार और बाहीरसे चौखुणे हैं. सर्वका धरतीका तला पाषाणमय और अत्यंत दुर्गंधमय हैं. वहांकी मट्टी एक तिल जितनी ह्यांके मनुष्य लोकमें लाके रख्खे तो जघन्य आधा कोस और उत्कृष्ठ चार चार कोशके पशु—पक्षी उस्की दुर्गन्धसे तत्काल मरण पामे.

८४,०००,०० नरकावासेमें पहली नरकके पहले पाथडेका सीमंत नामे नरकावासा ४५,०००,०० योजनका लंबा चौडा है. सातमी नरकका अपइठा नामे नरकावासा १,०००,०० योजनका लंबा चौडा है और बाकीके सर्व नरकावासे असंख्यात योजनके लंबे चौडे हैं.

प्रत्येक नरकके नीचे पहले तो "घनोदधी" का पिण्ड २०,००० योजनका है; उस्के नीचे "घनवाय" का पिण्ड उससे असंख्यात गुणा है; उस्के नीचे "तनुवाय" का पिण्ड उससे असंख्यात गुणा है; उस्के नीचे "आकास्तिकाय" असंख्यात गुणा है. सातों नरकके नीचे इसी तरह हैं. इन्के आधारसे नरक ठेरी हैं; जैसे के पारे पे पथ्थर ठेरता है ओर हवामें वह्लन ठेरता है तैसे ही नरक घनवाय–तनुवाय–घनोदधि और आकास्तिकायके उपर ठेरती है.

(१) रत्नप्रभा नरक काले रत्नमय भयंकर जगा है. (२) शर्करप्रभा नरकमें तीक्ष्ण पथ्थर हैं. (३) वालुप्रभा नरकमें उष्ण रेती है. (४) पंकप्रभामें लोही–मांसका पंक या कादव है. (५) धूम्र प्रभा नरकमें धूंवा–धुमाडा है. (६) तमप्रभा न-

रकमें अंधकार है और (७) तमतमा प्रभा नरकमें इससे भी ज्यादे भयंकर अंधकार है.

नारकीमें शरीर ३ होते हैं (१) वैक्रिय, (२) तेजस, (३) कार्मण.

नारकीमें समुद्घात ४ हैंः-वेदनीय, कषाय, मारणांतिक और वैक्रिय.

नारकी नपुंसक वेद है.

नारकीमें उपयोग ९ हैंः-मतिज्ञान उपयोग, श्रुतज्ञात उपयोग, अवधिज्ञान उपयोग, मतिअज्ञान उपयोग, श्रुतअज्ञान उपयोग, विभंगज्ञान उपयोग, चक्षुदर्शन उपयोग, अचक्षुदर्शन उपयोग, अवधिदर्शन उपयोग.

नारकीमें आहार ३ प्रकारका है-ओझ, रोम, अचेत छ दिशाका आहार ले परंतु एकही प्रकारका अशुभ आहार करे.

पहली नरकसे छठी नरक तकमें जानेवाले जीव मनुष्य और तिर्यंच भवसे उधर जाते हैं. और ये नरकोंके जीव वहांसे मनुष्य वा तिर्यंचमें ही जाते हैं. सातमी नरकमें जानेवाले जीव मनुष्य और तिर्यंच भवसे उधर जाते हैं परंतु सातमी नरकके जीव

वहांसे शीर्फ तिर्यंचमें ही जाते है.

नरकका इतना बयान करके अब तीसरी नरक तक परमाधामी देव (यम) वहांके नेरीयेंको पूर्व कर्मानुसार जो मारताड करते हैं उस्का कुच्छ बयान किया जायगा.

परमाधामीका बयान.

(१) "अम्ब" नामक परमाधामी, जैसे कोइ पुरुष आमको मसलके उस्का रस ढीला करता है तैसेही, नेरीयेंको परिताप उपजाके उस्का सब शरीर निर्बल करे, नसें ढीली कर देते हैं. (२) "अम्बरस" नामक परमाधामी नेरीयेंको मारके हड्डी मांस जूदे कर देते हैं. (३) "शाम" नामक परमाधामी नेरीयेंको जबर प्रहार करते हैं. (४) 'सबल' नामक परमाधामी नेरीयेंका मांस फाडते हैं. (५) "रुद्र" नामक परमाधामी नेरीयेंको बरछी-भाले-शूली आदिसे भेदते हैं. (६) "महारुद्र" नामक परमाधामी कसाइकी माफीक नेरीयेंके टुकडे करते हैं. (७) "काल" नामक परमाधामी वैक्रिय अग्नि और भट्टी बनाके नेरीयेंके मांसके टुकडे टुकडे करके भुंजते हैं. (८) "महाकाल" परमाधामी नेरीयेंको उन्काही मांस चीमटेसे तोड २ उस्कोही खीलाते हैं. (९) "अ-

सिपत्र" परमाधामी तलवार प्रमुख शस्त्रसे नेरीयेंको काटते हैं. (१०) "धनुष्य" परमाधामी कुंडलाकार धनुष्यसे सहस्त्र बाण एकही साथमें नेरीयेंको मारते हैं और उन्के शरीरकी आरपार नीकालते हैं. (११) "कुंभ" परमाधामी नेरीयेंका शरीरमें मशाला भरते हैं. (१२) "वालु" परमाधामी उष्ण रेतीमें नेरीयेंको भडभूंजाकी तराह सेकते हैं. (१३) "वेतरणी" परमाधामी, धोबीकी माफीक नेरीयेंको वेतरणी नदी के उष्ण जलमें सिल्लापे धोते हैं–नीचोते हैं–अति त्रास देते हैं. (१४) "खरस्वर" नामक परमाधामी, वैक्रिय समलीवृक्ष बनाते है, जिस्के पत्र तरवार–बरछी जैसे तिक्ष्ण होते हैं, फिर ये वृक्षके नीचे नेरीयेंको बैठाते है, और हवा चलाते हैं, जिससे पत्र टूट २ नेरीयेकी देहको भेदते हैं. (१५) "महाघोष" नामक परमाधामी नेरीयेंको अंधारे कोठेमें खीचोखीच भरते हैं.

नेरीयेंका जन्म कैसा होता है?

नरकके नरकावासेकी उपरकी भींतमें बिल*

---

* कितनेक कहते हैं कि कुंभियें ही उत्पत्तिस्थान हैं. परंतु प्रश्न व्याकरणमें उपरसे पडनेका लीखा है. ज्यादे खुलासा दिगंबरी ग्रंथोंमें है.

है, वहां उत्पन्न होनेकी योनी (स्थान) है. वहां पापी जीव जाके उपजते हैं और अंतर्मुहुर्तकी अंदर पांच प्रजा बांधते हैं:-(१) प्रथम अशुभ पुद्गलका आहार कर (२) शरीर बांधते हैं. (३) फिर इन्द्रियें फुटती हैं. (४) फिर श्वासोश्वास चलते हैं (५) फिर मन और भाषा मैली बांधकर वहांसे नीचे गिरते है, जहां ४ प्रकारकी कुंभी पडी रहती हैं. (१) उंटकी गरदनके जैसी वक्र (२) घृतके सीदडेकी तराह पेट चौडा और मुख सकडा. (३) डब्बेकी तराह उपर-नीचे बराबर (४) तीजारे या अफीम के डोडे की तराह पेट चौडा और मुख सकडा और भीतर चारों तर्फ तिक्ष्ण धारा. ईनमेंसे हरेकमें वो नेरीया आके पडता है के तुर्त उस्का शरीर फुल जाता है. सकडी जगा और तिक्ष्ण धार लगनेसे वहोत दुःखी हो बूम पाडता है, तब परमाधामी आके संडासी आदि शस्त्रसे उसे खेंचते हैं; तब टुकडे होके बाहीर नीकलते है अत्यंत वेदना होती है. परंतु वो मरता नहीं है, क्युं कि बंधे हुए कर्म भुक्तनेके हैं इस लिये वो मरता नहीं है परंतु दुःखी होता है.

फिर थोडी डेरमें उस्का शरीर बराबर जम जाता है, जेसा पारा बीखराया हुवा पीछा भेला हो जाता

है. फिर वो क्षुधा तृषा अत्यंत लगनेसे बृम पाडता है

परमाधामी कैसे उपद्रव देते हैं ?

जब नेरियेको क्षुधा लगती है तब वो बूम पाडता है. तब परमाधामी उस्के ही अंगोपांग काटके उस्कोही खीलाते है और कहते है कि, तेने पूर्व जन्ममें बहुतही प्राणीयोंको मारके मांसाहार किया था, तो अब ये भी मांसाहार तुजको पसंद पडना ही चाहिये ? जब वो नेरीयाको प्यास लगती है और वो पानीके लिये प्रार्थना करता है तब परमाधामी संडासीसे उस्का मुख फाडके उस्में धातुका गरम रस जोरसे डालते हैं और कहते हैं कि मदिरा और बीनछाणा पाणी तो बहोत पसंद था तो ये भी थोडा-बहोत लीजिये ! लहेजतदार है !

लोहेकी तप्त कीयी हुइ पुतलीकी साथ उस्को आलिंगन कराके परमाधामी कहता है, अये दुष्ट ! परस्त्री तुजको बहोत प्रीय थी तो अब ये सुंदर लालवर्णकी स्त्रीको आलिंगन क्यों नहीं देता है ? ऐसे कहके उपरसे मार मारता है.

इसी तराह, कितनेक यम लोहीकी नदीमें तो कोइ अग्निमें चलाते हैं, कोइ लख्खों टन बोजाकी

गाडी खैंचाते हैं. इत्यादि नेरियेके पूर्व कृत्योंके अनुसार उपद्रव देते हैं.

दो प्रश्न स्वाभाविक रित्ये होते हैं: (१) परमाधामी इस तराह क्यों नेरीयेंको सताते हैं? (२) परमाधामीको ये भयंकर मारफूटका दोष लगता होगा कि नहीं ?

ये प्रश्नोंका खुलासाः—परमाधामी पूर्व भवमें अज्ञान तप और असंख्य प्राणीका क्षय करनेके प्रभावसे ही होते हैं. इस लिये वे परमाधामी होकर नेरीयेंको सतानेमेंही आनंद मानते हैं, जैसेकि ह्यां कीतनेक निर्दय लोक शिकारमें आनंद मानते हैं, कितनेक पाडेकी लडाइ—हाथीकी लडाइ आदिमें आनंद मानते हैं. परमाधामीको दोष नहीं लगता है ऐसा नहीं है; दोष तो अवश्यमेव लगता है, जिन्के प्रभावसे वे भी नीच योनीमें बकरे कुकडे होके अधुरे आयुष्यसे मरते हैं.

४—५—६—७ नरकमें कीस तराह उपद्रव है?

चौथी—पांचमी नर्कमें दो प्रकारकी आपसकी वेदना है. (१) सम्यक् द्दष्टिकी और (२) मिथ्यात्व द्दष्टिकी. सम्यक् द्दष्टिवाले नेरियें तो अपने पूर्वके कि-

ये हुये पापके फल प्राप्त हुये हैं अैसा ज़ानकर अेक ठिकाणे पडे २ तडफडते हैं, परंतु दुसरेको सताते नहीं. दुसरे उस्को सतावे तो वो समभावसे सहन करते हैं. मिथ्यात्व दृष्टिवाले जो नेरीयें हैं वे तो (जैसे ह्यां कोइ नवीन कुत्ता आनेसे दुसरे कुत्ते उस्पे टुट पडते हैं और दांत—पंझा आदिसे त्रास उपजाते हैं तैसेही) नये आनेवाले नेरीयेंकी साथ मुक्के, लात, शस्त्र आदिसे मारामारी करते हैं. (नेरीयेंको मरजी मुजब कनिष्ट रुप धारण करनेकी सत्ता मीली है)

छटी—सातमी नर्कके नेरीयें आपसमें अति द्वेषी होके लाल कुंथुवे जैसा गौबरके कीडे जैसा बडे छोटे वज्रमय मुखवाले वेक्रिय शरीर करके अेक अेकके शरीरमें प्रवेश करके आरपार निकलते हैं और सारे शरीरमें चालणे जैसे छीद्र बना देते हैं, जिससे महा भयंकर वेदना होती है.

१० प्रकारकी क्षेत्रवेदना.

नरकमें उपर कहे मुजब छेदन—भेदन होता है, इतना ही नहीं परन्तु वहां १० प्रकारकी तो क्षेत्रवेदना है.—

१ अनंत क्षुधा—जगतमें जितनी खानेकी व-

स्तु हैं वो सब अेक नेरियेको देनेसे भी उस्को तृप्ति नहीं होवे इतनी उस्को क्षुधा रहती है.

२ अनंत तृषा—सर्व जगतका पाणी एक नेरीयेको पीला देवे तो भी उस्की तृषा शान्त नहीं होती है.

३ अनंत शीत—नेरीयेको वहांसे उठाकर कोइ हिमालयके बर्फमें सूला देवे तो उस्को आनंद होवे कि इससे वहां शीत कमी है!

४ अनंत उष्णता—जलती भट्टीमें नेरियेको सुलावे तो नरककी उष्णताके प्रमाणमें उस्को वहां बहोत कमी उष्णता लगती है.

५ अनंत दाह ज्वर. ६ अनंत खुजली. ७ अनंत रोग (जलोदर, भगंदर, कुष्टरोग, इत्यादि १६ प्रकारके मोटे रोग और ५,६८,९९,५८४ प्रकारके छोटे रोग उस्को हमेश ही लगे रहे हैं.)

८ अनंत अनाश्रय (किसीका आश्रय—दिलासा-मदद नहीं है) ९ अनंतशोक.

१० अनंत भय (नरकमें सर्वत्र भयंकर अंधकार व्याप्त हो रहा है, और नारकीका देह भी का-—भयंकर होता है. और चारों तर्फसे मार २ के

पोकार पड रहे हैं. इस लिये नारकी प्रतिक्षण भयसे आकुलव्याकुल रहता है.

नरकमें कोन जाते हैं ?

ऐसी भयंकर–त्रासदायक जगामें कोन जाते है ? ये सवालका जबाव संक्षेपमें श्री सुयगडांग सूत्रके प्रथम अंगके पंचम अध्यायमें कहा है किः—

निच्चंतसे पाणिणो थावरेय
जे हिंसति आयसूहं पडुच्चा ॥
जे लुसअे होइ अदत्तहारी
न सिखति सेय वियस किंची ॥४॥
पागझी पाणे बहुणांति घाति
अनिव्वते घात मूवेतिबाले ॥
णिहोणी संगच्छति अंतकाले
अहो शिरो कट्टु उवेइ दुग्गं ॥ ५ ॥

अर्थातः–निर्दयतासे सदा त्रस जीव (बेंद्रिय–तेंद्रिय–चौरेंद्रिय–पचेंद्रिय), स्थावर जीव–(पृथ्वी–पाणी–अग्नि–वायु–वनस्पति) का जो हिंसा करता है, फक्त अपना ही सुख इच्छता है और जीवोंकी आज्ञा बिना उन्का मर्दन करता है, धर्ममार्गमें कभी नहीं प्रवर्तन करता है, खुशी होके प्राणीयोंको

मारता है, व्रत प्रत्याख्यानसे रहीत है ऐसे अज्ञानी जीव घातसे निवर्तें बिना मृत्यु पाके निचा शिर करके नरकमें पडके महा कष्ट प्राप्त करता है.

भवनपतिका अधिकार.

जो पहली नरकके १२ आंतरे हैं, उसमें ११५८३ योजन झाझेरी (कुच्छ ज्यादा) जगा है जिस्मेंसे एक आंतरा उपरका और अेक नीचेका छोडके बिचके १० आंतरेमें १० भवनपति देव रहते हैं. इन आंतरेमें २ विभाग हैं; दक्षिण और उत्तर. दोनो दिशाके देवताकी जात अेक ही है, परन्तु दोनोके इन्द्रके नाम अलग २ है.

दक्षिण दिशामें ४०६००००० भवन हैं और उत्तर दिशामें ३,६६,००००० भवन हैं. ये भवन जघन्य (छोटेसे छोटे) तो जंबुद्विप प्रमाणे (अेक लाख योजनके), मध्यम अढाइद्वीप प्रमाणे (४५ लाख योजनके) और उत्कृष्ट (बडेसे बडे) असंख्याते द्विप समुद्र जितना (असंख्यात योजनके) हैं. सब भवन बाहीरसे गोलाकार और भीतरसे चतुष्कोणाकार . संख्याते योजनके भवनमें संख्याते देव और अ-

संख्याते योजनके भवनमें असंख्याते देव रहते हैं.

दक्षिण दिशाके मालिक असुरकुमारके राजा चमरेन्द्र है, जिनके ६४००० सामानीक देवता हैं, २५६००० आत्मरक्षक देवता हैं, ६ अग्रमहिषी हैं, ७ अणिका, †३ प्रषदा अभ्यंतरके २४००० देव, मध्यके २८००० देव, बाह्यके ३२००० देव हैं. इन्द्रका आयुष्य जघन्य १०,००० वर्षका, उत्कृष्ट अेक सागरका और इन्द्राणीका आयुष्य जघन्य १०,००० वर्षका, उत्कृष्ट साडीतीन पल्योपमका होता है.

दक्षिण दिशाके अन्य भी जो नागकुमारादिक ९ जातके देवता हैं उन्के इन्द्रके छे छे हजार सामानिक देवता, चोवीस २ हजार आत्मरक्षक देवता, पांच २ अग्र महिषी, ७ अणिका, तीन प्रषदा अभ्यंतरके ६००० देव, मध्यके ७००० देव, बाह्यके ८००० देव हैं. आयुष्य जघन्य १० हजार वर्षका, उत्कृष्ट ७॥ पल्योपमका और उन्की देवीयोंका आयुष्य जघन्य १०००० वर्षका, उत्कृष्ट ०॥। पल्योपमका होता है. उत्तर दिशाके मालक असुरकुमारका राजा बलेन्द्रके

---

† सात अणिका अर्थात् ७ तराहकी फोजः—गांधर्व, नाटक, अश्व, हस्ती, रथ, पायक (पायदळ), पाडे (भेंसे.)

६०००० सामानिक देवता, २४०००० आत्मरक्षक देवता, ६ अग्र महिषी, ७ अणिका, ३ प्रषदा अभ्यंतरके २२००० देव, मध्यके २४००० देव, बाह्यके २६०००देव हैं. उन्का आयुष्य जघन्य १०००० वर्षका झाझेरा (कुच्छ ज्यादा) और उन्की इन्द्राणिका जघन्य १०००० वर्षका उत्कृष्ट ४॥ पल्योपमका है.

उत्तर दिशाके अन्य भी जो नागकुमारादिक ९ जातके देवता हैं उन्के इन्द्रके छे छे हजार सामानिक देवता, २४००० आत्मरक्षक देव, ५ अग्रमहिषी, ७ अणिका, ३ प्रषदा अभ्यंतरके ५००० देव, मध्यके ६००० देव, बाह्यके ७००० देव हैं. आयुष्य जघन्य १०००० वर्षका, उत्कृष्ट देश उणा (कुच्छ कमी) दो पल्योपमका और देवीयोंका आयुष्य जघन्य १०००० वर्षका, उत्कृष्ट देश उणा १ पल्योपमका है.

ये देवता कुमार (बालक) की तराह क्रिडा करनेमें रति मानते हैं, इस लिये इन्को 'कुमार' कहते हैं. महापुण्यवंत प्राणी हैं. ॥ इति भवनपतिका अधिकार पूर्ण हुआ ॥

॥ ये सर्व मिलके ७ राजू मठेरा (कुच्छ कमी) उंचा और १६९ राजू घनाकारके प्रमाणसे नीचे लोकका अधिकार पूर्ण हुआ ॥

भवनपतिका यंत्र.

	दशभवनपतीके नाम	दक्षिणदिशाके इंद्रके नाम	उत्तरदिशाके इंद्रके नाम	शरीरका वर्ण	वस्त्रका× वर्ण	मुगटका चिन्ह××	दक्षिणदिशा के भवन	उत्तरदिशा के भवन
१	असुरकुमार	चमरेन्द्र	बलइंद्र	कृष्णवर्ण	लाल	चूडामणी	३४ लाख	३० लाख
२	नागकुमार	धरणेंद्र	भूतेंद्र	सपेतवर्ण	हरे	नागफण	४४ लाख	४० लाख
३	सुवर्णकुमार	वेणूइंद्र	वेणूदालिंद्र	कनकवर्ण	श्वेत	गरुड	३८ लाख	३४ लाख
४	विद्युतकुमार	हरीकांतइंन्द्र	हरीशिखरेंद्र	लालवर्ण	हरे	वज्र	४० लाख	३६ लाख
५	अग्नीकुमार	अग्निशिखरेंद्र	अग्निमाणवेंद्र	लालवर्ण	हरे	कळश	४० लाख	३६ लाख
६	द्वीपकुमार	पूर्णेंद्र	विशिष्टेंद्र	लालवर्ण	हरे	सिंह	४० लाख	३६ लाख
७	उदधीकुमार	जलकांतइंद्र	जलप्रभइंद्र	श्वेतवर्ण	हरे	अश्व	४० लाख	३६ लाख
८	दिशाकुमार	अमीतेंद्र	अमितवहनेंद्र	लालवर्ण	श्वेत	हाथी	४० लाख	३६ लाख
९	वायूकुमार	वलवकेंद्र	प्रभंजनइंद्र	हरावर्ण	लालसन्ध्या फूलजैसा	मगर	४० लाख	३६ लाख
१०	स्थनितकुमार	घोषेंद्र	महाघोषेंद्र	कनकवर्ण	श्वेत	वृधमान सरावले	४० लाख	३६ लाख

× इसरंगका वस्त्र पहरनेका जास्तीशोक है. यह चिन्ह देवताके मूगटमें होता है ×× इससे जातकी पहीछान होती है.

तिरछा लोकका वर्णन.

रत्नप्रभा पहली नरकके उपर जो पृथ्वीपिंड १००० योजनका छोडा था उस्मेंसे १०० योजन नीचे छोडना और १०० योजन उपर छोडना, बिचमें ८०० योजनकी पोलाड है, जिस्में ८ जातके व्यंतर देव के असंख्य नगर (ग्राम) हैं. और उपर जो १०० योजन छोडे उस्मेंसे १० योजन नीचे छोडना, १० योजन उपर छोडना, बीचमें ८० योजनकी पोलाड है, जिस्में भी असंख्यात वाणव्यंतरके नगर हैं.

ये नगर जघन्य (छोटेमें छोटे) भरत क्षेत्र प्रमाणे (५२६ योजन झाझेरे) मध्यम महाविदेह प्रमाणे (३३६८४ योजन झाझेरे), उत्कृष्ट जंबूद्विप प्रमाणे (एक लाख योजन) के हैं. उन्में असंख्याते देवता रहते हैं.

इन दोनो पोलाडमें दो दो विभाग हैं (१) दक्षिण और (२) उत्तर. इन्में एकेक जातके दो दो इन्द्र रहते हैं. इन्का वर्णन नीचेके यंत्रमें दिया गया है:—

व्यंतरका यंत्र.

८०० योजनकी प्रथम परतरके ८ व्यंतरका यंत्र.			८० योजनकी दुसरी परतरके ८ वाण व्यंतरका यंत्र.			दोनो परतरके देवोंका वर्ण और चिन्ह.	
व्यंतरका नाम	दक्षिणके इन्द्र	उत्तरके इन्द्र	वाणव्यंतरका नाम	दक्षिणके इन्द्र	उत्तरके इन्द्र	शरीरका वर्ण	मुगटका चिन्ह
पिशाच	कालेन्द्र	महाकालेन्द्र	आणपन्नी	सन्नीहितेन्द्र	सन्मानेन्द्र	काला	कदंब वृक्ष
भूत	सुरुपेन्द्र	प्रतिरुपेन्द्र	पाणपन्नी	धातेन्द्र	विधातेन्द्र	काला	सुलस वृक्ष
यक्ष	पूर्ण भद्रेन्द्र	माणी भद्रेन्द्र	इसीवाइ	इसीन्द्र	इसीपालेन्द्र	काला	वड वृक्ष
राक्षस	भीमेन्द्र	महाभीमेन्द्र	भूतवाइ	इश्वरेन्द्र	महेश्वरेन्द्र	श्वेत	खटंव वृक्ष
किन्नर	किन्नरेन्द्र	किंपुरुषेन्द्र	कंदीये	सूवछेन्द्र	विशालेन्द्र	हरा	आशोक वृक्ष
किंपुरुष	सुपुरुषेन्द्र	महापुरुषेन्द्र	महाकंदीये	हास्येन्द्र	हास्यरतिन्द्र	श्वेत	चंपक वृक्ष
महोरग	अतिकायेन्द्र	महाकायेन्द्र	कोहंडग इन्द्र	श्वेतेन्द्र	महाश्वेतेन्द्र	काला	नाग वृक्ष
गांधर्व	गीतारतेन्द्र	गीतरसेन्द्र	पहंग देव	पहंगेन्द्र	पहंपतीन्द्र	काला	टींबरी वृक्ष

ये दोनो प्रतर (भूमि) के मिलके ८ व्यंतर और ८ वाणव्यंतर १६ ज़ात हैं, इन्के ३२ इन्द्रके प्रत्येकके चार २ हजार सामानिक देव, सोले २ हजार आत्मरक्षक देव, चार २ अग्रमहिषी ७ अणिका, ३ प्रषदा अभ्यंतरके ८००० देव, मध्यके १०००० देव, बाह्यके ११००० देव हैं. आयुष्य जघन्य १०००० वर्षका, उत्कृष्ट एक पल्योपमका, इन्की देवीयोंका आयुष्य जघन्य १०००० वर्षका, उत्कृष्ट आधी पल्योपमका है. ये देवता मनहर नगरोंमें देवीयोंके साथ गाने बजानेमें और क्रिडामें आनंद मानते हैं; पुन्यफल भोगवते हैं.

॥ इति व्यंतराधिकार पूर्ण हुआ ॥

मनुष्य लोकका वर्णन.

रत्नप्रभा पृथ्वीपिंडके उपर यह अपन रहते हैं सो पृथ्वीके मध्य भागमें (बहुत ही बीचमें) मेरु पर्वत है, और मेरु पर्वतके मध्य बीचमें नीचे गोस्तन (गायके बोबे) के आकार ८ रुचक प्रदेश हैं. वहांसे ९०० योजन नीचे और ९०० योजन उपर

ऐसे १८०० योजनका उंचा और १० राजूके घना- कार विस्तारमें त्रीछा लोक है. उसमेंसे ९०० योजन नीचे जो वाणव्यंतर देव रहते हैं उन्का तो बयान हुआ. अब १० योजन जो उपर पृथ्वी रहीथी उ- स्के उपर मनुष्य लोक तथा द्विप समुद्र पर्वत नदी हैं, उन्का वर्णन चलता है.

मेरुका वर्णन.

सर्व पृथ्वीके मध्यमें मेरु पर्वत है, कि जो मल स्थंभके आकार नीचे चौडा और उपर सकडा गो- लाकार है. सर्व एक लाख योजनका उंचा है, उस्में से १००० योजन तो पृथ्वीमें है और ९९००० यो- जन पृथ्वीके उपर है. पृथ्वीके भीतर १००९०$\frac{१०}{११}$ यो- जन जितना जाडा है. पृथ्वीके उपर बराबर पूरा १०००० योजनका चौडा है. यों कमी होता होता आखीर १००० योजनका चोडा रह गया है, उस्के ३ कान्ड (विभाग) किये हैं. पहला कान्ड पृथ्वीमें १००० योजनका सो मिट्टी पाषाण कांकरे और वज्र रत्नमय है. दुसरा कान्ड पृथ्वी उपर ६३००० योज- नका स्फाटिक रत्न अंक रत्न रुपे और सुवर्णमय

है. तीसरा कान्ड वहांसे आगे ३६००० योजनका है सो लाल सुवर्णमय है.

इस मेरु पर्वतके उपर ४ वन (वगीचे) है. (१) भद्रसाल वन पृथ्वीके बराबरमें है; पूर्व—पश्चिममें २२००० योजन लंबा और उत्तर—दक्षिणमें २५० योजन चौडा है. (२) इस भद्रसाल वनसे मेरु पर्वतपर ५०० योजन उंचा जावे वहां दुसरा नंदनवन है. ५०० योजनका चौडा, मेरुके चारों तर्फ वलीयां (चूडी) के तराह फिरता हुवा है. (३) इस नंदन वनसे ६२५०० योजन उपर जावे वहां तीसरा सोमानस वन है. ५०० योजन चौडा, मेरु पर्वतके चारों तर्फ वलीया के तराह फिरता हुवा है. (४) सोमानस वनसे ३६००० योजन उपर जावे वहां चौथा पांडुक वन है. ४९४ योजन चौडा चारों तर्फ वलीयां की तराह फिरता हुवा है. ह्यां तीर्थंकरोंके जन्माभिषेक करनेकी चार दिशामें चार शिला है. पूर्वमें पांडुक शिला, और पश्चिममें रत्नशीला. इन एक एक पे दो दो सिंहासन है. ह्यां पूर्व पश्चिमके महाविदेह क्षेत्रके चार तीर्थंकरोंका जन्माभिषेक होता है. दक्षिणमें पांडुकंबल शिला, उत्तरमें रक्त कंबल शिला,

इनपे एक एक सिंहासन है. दक्षिणमें भरत क्षेत्रके और उत्तरमें ऐरावत क्षेत्रके तीर्थंकरोंका जन्माभिषेक होता है. इस बनके बीचमें एक उंची चुलीका (चोटीके आकार डूंगरी) निकली है, वो चालीस योजनकी उंची नीचे बारा योजन बीचमें आठमें आठ योजन और उपर चार योजनकी चौडी सर्व वैडूय (हरे) रत्नमय है. ॥ इति संक्षेपमें मेरुका अधिकार. ॥

जंबुद्विपका वर्णन.

मेरु पर्वतके चारों तर्फ थालीके आकारमें पृथ्वीपे जंबुद्विप है. सो पूर्वसे पश्चिम तक और दक्षिणसे उत्तर तक एक लाख योजनका लंबा चौडा है. इस्के बिचमें १०००० योजनका मेरु पर्वत है.

दक्षिण और उत्तरके क्षेत्रोंका वर्णन.

मेरु पर्वतसे दक्षिण दिशाकी तर्फ पैंतालीस हजार योजन विजयवंत नामक दरवज्जा है. इस्के पास जंबुद्विपके भीतर भरत क्षेत्र है. यह मेरुकी तर्फ ५२६ योजन और ६ कलाका* चौडा है. और १४४७१

* एक योजन के १९ भाग करना, उस्मेंसे १ भाग लेना; उस्को एक कला कहते हैं.

योजन चूलहेमवंत के पास लंबा है. इस्के मध्य बीचमें बेताड पर्वत पडा है, सो १०७२० योजन और १२ कला लंबा है, उत्तर दक्षिणमें ५० योजन चौडा है, २५ योजनका उंचा है, ६। योजन धरतीमें है. सर्व पर्वत रुपाका है. इस पर्वतमें दो गुफा हैः— पूर्वमें खंडप्रभा गुफा और पश्चिममें तमस गुफा. ये गुफा ५० योजनकी लंबी, १२ योजनकी चौडी, ८ योजनकी उंडी और महा अंधकार युक्त है. समभूमिसे बेताड पर्वतपर १० योजन उंचा जाना. वहां उत्तर—दक्षिण दोनु तर्फ १० योजनकी चौडी पर्वत जितनी लंबी दो श्रेणि है. दक्षिण दिशामें गगनवल्लभ प्रमुख ५०० नगर (मोटे २ शहेर) हैं और उत्तरकी तर्फ रथपुर चक्रवाल प्रमुख ६० नगर हैं. वहां विधाधरोंका राज्य है. वहांके रहनेवाले विधाधर मनुष्योंने रोहिणी—प्रज्ञप्ति—गगनगामिनी प्रमुख हजारों विद्याकी सिद्धि की है.

ह्यांसे उपर बेताड पर्वतपर १० योजन जावे वहां दो तर्फ दो श्रेणि (खुली जगा) है. १० योजनकी चौडी और उतनी ही लंबी है. ह्यां बहुत अभियोगी देवताको रहने के भवन (महेल) हैं. ह्यां

(१) सोम (पूर्व दिशाके मालक); (२) यम (दक्षिण दिशाके मालक, (३) वरुण (पश्चिम दिशाके मालक), (४) विसमण (उत्तर दिशाके मालक) ये चारों लोकपालके आज्ञामें रहनेवाले त्रिझमक देवता रहते हैं (१) आणझमक (अन्नके रखवाले), (२) पाणझमक (पाणीके रखवाले), (३) लेड झमक (सुवर्णादिक धातुके रखवाले), (४) सेणझमक (मकानके रखवाले), (५) वत्थ झमक (वस्त्रके रखवाले), (६) फ़ल झमक (फलके रखवाले) (७) फुल झमक (फुलके रखवाले), (८) फलफुल झमक, (९) अबीपतीया झमक [पान भाजीके रखवाले], (१०) बीज झमक (बीज धानके रखवाले). यह दश ही सर्व जगतकी वस्तुकी रखवाली करते हैं. जो ये नहीं होवे तो वाणव्यंतर देवता वस्तुका हरण कर लेवे. इस लिये ये त्रिकाल [श्याम, सबेर, दोपेर] फेरी देनेको निकलते हैं. इस लिये त्रिकाल अवश्य धर्मध्यान करना.

अभियोग श्रेणिकी समभूमिसे पांच योजन उपर जावे वहां १० योजन चौडा पर्वत जितना लंबा वैताडका शिखरतला है. वहां बहोत वाणव्यंतर दे-

वता देवांगना क्रिडा करते हैं. इस्का मालक वेताडगीरी कुमार देवता मोटी रिद्धिका धणी रहता है.

भरत क्षेत्र के उत्तर के किनारे पर जो चूल हीमवंत नामे पर्वत है उस्के मध्य बीचमें पद्मद्रह (कुंड) है. उसके पूर्व के और पश्चिम के द्वारसे गंगा और सिंधू नामे दो नदी निकलके भरत क्षेत्रमें दक्षिण दिशा तर्फ वेताड पर्वत के नीचे होके दक्षिणके लवण समुद्रमें जाके मिली हैं. उससे भरत क्षेत्रके छे भाग हुये हैं. उने छे खंड कहते हैं.

भरत क्षेत्र के मध्य भागमें वेताड पर्वत आनेसे भरतके दो नाम हुये हैं. (१) दक्षिणकी तर्फ दाक्षिणार्ध भरत और (२) उत्तरकी तर्फ उत्रराधे भरत कहते हैं. भरतके दक्षिणके किनारेपे जो लवण समुद्र है उस्के नालेमें पाणी होके भरत क्षेत्रमें आया है, जिससे एक खाडी नव जोजनकी लंबी हो गइ है. इस खाडीके तीर (किनारे) पे तीन तीर्थ (देवभवन) हैं; पूर्वकी तर्फ मागध, बीचमें वरदाम, और पश्चिममें, प्रभास.

पश्चिममें खाडी, पूर्वमें वेताड, दक्षिणमें गंगा, और उत्तरमें सिंधू इन चारोंके ११४ योजन और

११ कला चारही तर्फ छोड अंतर–मध्य भागमें नव योजन चौडी और बारे योजनकी लंबी अयोध्या नगरी है. †

आरों का वर्णव.

इस भरत क्षेत्रमें वीस क्रोडाक्रोडी (क्रोडके क्रोडसे गुणे इत्ने) सागरका कालचक्र बारे आरे करके फिरता हैं, जिनमेंसे छे आरेको 'सरापिणी' [सुलटा] और छे आरेको 'उत्सर्पिणी' [उलटा] काल कहते हैं. पहला आरा सुखमासुखमी [एकंत सुख] नामे चार क्रोडा क्रोडी सागरका. इस आरे के मनुष्यका तीन कोशका उंचा शरीर और तीन पल्योपमका आयुष्य होता है. मनुष्यके शरीर में २५६ पांसली होती हैं. और तीन दिनसे आहार

† ऐसा कहते हैं की, अयोध्या नगरीके ठीकाणे पृथ्वीमें बज्रमय शाश्वता साथीया हैं. नव कर्म भूमीयों की प्रवृत्ति होती हैं तब इंद्र महाराज उस साथीये पे पहले नगर वसाके उसका अयोध्या नाम देते हैं.

की इच्छा होवें तब शरीर प्रमाणे* आहार करे. इस आरेके मनुष्यका वज्रऋषभ नारच संघेण और समचउरस संठाण. स्त्री पुरुष महा दिव्य रुपवंत और सरल स्वभावी होते हैं. इस आरेमें पृथवीकी सरसाइ सक्कर [मिश्री] जैसी होती हैं.

इस आरे के मनुष्य की दश प्रकारके कल्प वृक्ष इच्छा पूरी करते हैं—[१] मतंगा वृक्ष—मधूर फल दे. [२] भिंगावृक्ष—सूवर्ण रत्नके भाजन (वरतन) दे. [३] तुटियंगा वृक्ष—४९ जातके बाजिंत्रके मनोज्ञ शब्द सुणावे. (४) जोइ वृक्ष—सूर्य जैसा प्रकाश करे (५) दिव वृक्ष—दीवकी रोसनाइ करे. [६] चितगा वृक्ष—सुगन्धी फूलेंके भूषण दे. (७) चितरसा वृक्ष १८ प्रकारके मनोज्ञ भोजन दे. (८) मणवेगा वृक्ष सुवर्ण रत्नके भूषण [गहने—दागीने] दे. (९) गिहगारा वृक्ष ४२ भोमीये [मजल] मेहल जैसा होवे. (१०) अनियगणा वृक्ष—उत्तम वस्त्र दे.

इस आरेके मनुष्य मनुष्यणीके आयुष्य छे

*ग्रन्थकार कहते है की पहले आरेमें तूर जित्ना, दूसरे आरेमें बोर जित्ना, और तीसरे आरेमें आंवले जित्ना आहार करते हैं.

महीना रहे तब एक पुत्र पुत्रीका जोडा होवे. ब-च्चेकी प्रतीपालन ४९ दिन कर, फिर वो दंपती हो सुख भोगवे और उनके माबापको एकको छीक और एकको बगासी आणेसे मरके देवता होवे. उ-नके शरीरको क्षेत्रका अधिष्टिक देवता उठाके क्षीर समुद्रमें डाले.

दूसरा सुखम (सुख) नामे आरातीन कोडा को-डी सागरका लगे तब वर्ण गन्ध रस स्पर्श के पर्याय-में अनंत गुणी हीनता होती हैं. घटता २ इस आरेमें दो कोशका शरीर ऊंचा और दो पल्योपमका आ-युष्य होता हैं. शरीरमें १२८ पांसली होती हैं. दो दिनके अंतरसे आहारकी इच्छा होती हैं. पृथ्वीका स्वाद खांड जैसा. इस आरेके मनुष्योंकी भी दश प्र-कारके कल्प वृक्ष इच्छा पूरी करते हैं. छे महीनेका आ-युष्य रहे तब जुगलनी एक पुत्र पुत्रीका जोडा प्र-सवती हैं. बच्चेकी प्रतीपालन ६४ दिन करते हैं. फिर वो दंपती बन जाते हैं और सब पहले वत्.

तीसरा आरा सुखमा दुःखभी [सुख बउमीत दुःख थोडा] दो कोडा कोडी सागरका लगे तब वर्णादिक की पर्यायमें अनंत गुणी हीणता होती है.

इस आरेके मनुष्यका एक कोशका ऊंचा शरीर और एक पल्योपमका आयुष्य होता है. मनुष्योंके शरीर में ६४ पांसली. एक दिनके अंतरसे आहारकी इच्छा होवे. पृथ्वीका स्वाद गुड जैसा. इन मनुष्योंकी भी दश कल्पवृक्ष इच्छा पूरी करते हैं. छे महीने आयुष्य रहे तब पुत्र पुत्रीका जोडा होवे. बच्चेकी प्रतिपालन ७९ दिन करे फिर हुशार होके आपसमें क्रिडा करते हैं. इनके माबाप छीक और बागसी आणेसे मरके देवता होवे, इनके सरीरको देव क्षीर समुद्रमें डाल देते हैं.

इस तीसरे आरेके पहले दो भाग लगये रचना रहती है. फिर तीसरा भाग अर्थात् छांसटलाख क्रोड छासट हजार क्रोड छांसट सो क्रोड छांछट क्रोड छांसटलाख छांसट हजार छेसो छांसट (६६६६६६६६६६६६६६६६६६६६६) सागर बाकी रहे तब कालके दोषके स्वभावसे दश प्रकारके कल्पवृक्ष इच्छित वस्तु अपूर्ण देणे लगते हैं, तब जुगल मनुष्य आपसमें लडने लगते हैं. उनको समजाणे पन्नरे कुलकर अनुक्रमे होते हैं. उनमें पहलेसे पांचमे तक 'हकार' दंड चलता है. छट्टेसे दशमे तक 'मकार'

दंड चलता हैं और इग्यारमे पन्नरमे तक 'धिक्कार' दंड चलता हैं अर्थात् लडते हुवे जुगलीयेको 'हैं' 'मत' 'धिक्कार' कहने से वो शरमा करे भग जातेथे*

ह्यां तक तो अकर्म भूमी पणरहा, अर्थात १ 'असी'=हथीयारसे, २ 'मसी'–व्यापारसे, और ३ 'कसी'–कृषी कर्मसे इनको कुछ जरुर नहींथी, क्योंकि कल्पवृक्ष इच्छा पूर्ण करतेथे तीसरे आरेके चोरासी लाख पूर्व झाझेरे (कुछ ज्यादा) बाकी रहे तब पन्नरमे कुलकर सो पहले तिर्थंकर. अयोध्या नगरीमें होते हैं. उस वक्त कालके दोषसे वो कल्पवृक्ष सर्वथा फल देने बंद हो जाते हैं. तब मनुष्य क्षुधासे पीडित होके अकूलाते हैं. उनकी दया लाके तिर्थंकर

*पहले कुलकरका एक पल्योपमके दशमे भाग, दूसरेका सोमे भाग, तीसरेका हजारमे भाग, चोथेका दश हजारमे भाग, पांचमेका लाखमे भाग, छट्ठेका दश लाखमे भाग, सातमेका क्रोडमे भाग, आठमेका दश क्रोडमे भाग, नवमेका सो क्रोडमे भाग, दशमेका हजार क्रोडमे भाग, इग्यारमेका दश हजार क्रोडमे भाग, बारमेका लाख क्रोडमे भाग, तेरमेका दशलाख क्रोडमे भाग. चौदमेका क्रोडा क्रोडमे भाग और पन्नरमेका ८४ लाख पूर्वका आयुष्य जाणना–पद्मपुराण.

भगवान् उनको वहां स्वभावसेही उत्पन्न हुवा हुवा चौवीस प्रकारका अनाज खाना बताते हैं. कच्चा अनाज खानेसे पेटमें दुःखे तब अरणीकी लकडीसे अग्नी पाड उस्में पचानेकी कहते हैं. भोले प्राणी अग्नीको अनाज जलाती देख कहते हैं की इसका ही पेट नहीं भराय तो ये हमे क्या देवेंगी ? तब प्रथम कुंभकारकी स्थापना करते हैं. यों अनुक्रमे अठारे श्रेणी अठारे प्रश्रेणी व्यापारीयों की स्थापना करते हैं. तब इंद्र इनको राजपद देता है फिर राणी पुत्र की वृद्धि होती. सर्वको छोड दिक्षा ले मोक्ष पधारते हैं. तीर्थंकर भगवानका विस्तारसे बयान पहले प्रकरणमें हुवा हैं. इसी वक्त पहले चक्रवर्ती भी माताको उत्तम १४ स्वप्न देके जन्म लेते हैं. युवान अवस्थामें राजपद प्राप्त होता हैं. इनके शरीरमें ४० लाख अष्टापद जित्ना बल होता हैं. ये १३ अष्टमतप (तेले) कर भरत क्षेत्रके छेह खंड साधते हैं.

चक्रवर्तीकी रिद्धि.

७ एकेंद्री (पृथ्वीमय) रत्न. [१] चक्र रत्न, छे खंड साधनेका मार्ग बताता है. [२] छत्र रत्न, बारे

योजन लंबा नव योजन चौडी छांया करे, धूप ठन्ड हवासे बचाता है (३) दंड रत्न रास्तेमें सडक बनाता है. बेताडकी दोइ गुफाके कीमाड उघाडता है. [यह तीनी चार२ हाथके लंबे होते हैं.] [४] खड्ग रत्न, पच्चास अंगुल लंबा, सोले अंगुल चौडा, अध अंगुल जाडा, अति तिक्षण धार यह हजारों कोसके शत्रुका सिर काट लाता है. (यह चारही रत्न आयुध्यशालामें पेदा होते हैं) [५] मणी रत्न, चार अंगुल लंबा दो अंगुल चौडा, यह बारे योजनमें चंद्रमाकी तरह प्रकाश करता है. हाथीके कानको बांधनेसे विघ्न हरता है. (६) कांगणी रत्न, चार अंगुल चारही तर्फसे होते है, सोनारकी एरणके आकारे; आठ *सोनैये जित्ना वजनमें, इससे तमस गुफामें और खंडप्रभा गुफामें एकेक योजनके आंतरे ४९ मंडल पांचसे धनुष्यके गोल करते है. उससे चक्रवर्ती जीवे वांहां लग चंद्रमा सरीखा प्रकाश रहेता है. (७) चर्म रत्न, दो हातका लम्बा होता है. यह गंगा सिंधू जैसी बडी नंदीमें १२ योजन लंबी और नव योजनकी चौडी नावाके जैसे होजाता है. इसमें सब सैन्या बै-

*पांच रतीका मासा और सोले मासाका सोनैया.

टके पार होजाती है (ये तीन रत्न लक्ष्मी भंडारमें पेदा होते हैं.)

सात पचेंद्री रत्न. (१) सेनापति बीचले दो खंड छोड आसपासके चार खंड साधे. गुफाके कीमाड खोले. (२) गाथापती. चर्म रत्न पृथ्वीके आकारमें बन जावे, जिसमें पहले पेरमें चोवीस प्रकारका अनाज [धान] और सर्व प्रकारके फलफूल पत्ते (भाजी) मेवे मसाले बोवे, दूसरे पेरमें सब तैयार होजावे, तीसरे पेरमें लुणके तैयार करके चौथे पेरमें सबको जिमादेवें. [३] बडाइ रत्न. चक्रवर्तीका जहां पडाव होय वहां एक मुहुर्तमें बारे योजन लंबा नव योजन चौडा नगर बसावे. चक्रवर्तके लिये बैतालीस भोमीया पेंहेल पोषधशाला युक्त बनावे. [४] पुरोहित रत्न, मुहुर्त बतावे. सामुद्रिक सुकन स्वप्नका फल बतावे, शांती पाठ भणे (जप करे) यह चारही रत्न चक्रवर्तीकी नगरीमें पैदा होवे. और चक्रवर्ती जित्ने ऊंचे होवे. (५) स्त्री रत्न [श्रीदेवी] वैताड पर्वतके उत्तर दिशाकी विद्याधरकी श्रेणीमें राज कन्या होती है. चक्रवर्तीसे ऊंचासमें चार अंगुल औछी (कमी) प्रमाणोपेत महादिव्य रूपवंत

सदा कुमारिकाकी पेरे यौवनवंती रहती है. इस्को पुत्र नहीं होता है, फक्त कोइ वक्त मुक्ताफल प्रसवती है. (६) अश्व रत्न [कमलापत घोडा] एकसो आठ अंगुल पूछसे मुखतक लंबा, खुरीसे कानक अस्सी अंगुल ऊंचा, क्षिण मात्रमें इच्छीत ठीकाणे पहुंचावे, संग्राममें विजय करे (७) गज रत्न. [हाथी] चक्रवर्तीसे दूणा ऊंचा, महासोभायमान, अवसरका जाण, सवारीमें काम आवे. (यह दोइ बेताड पर्वतके मूलमें पैदा होवे.)

नवनिधि.

(१) नैसर्व निधि ग्रामादिक बसानेकी, कटकके पडावकी रीत बतावे. (२) पंडुक निधिसे तोले मापेकी प्राप्ती होवे. (३) पिंगल निधिसे मनुष्य पसूके सर्व प्रकारके भूषणोंकी प्राप्ती होवे. (४) सवरयण निधिसे सर्व प्रकारके रत्न जवेरातकी प्राप्ति होवे. (५) महापद्म निधिसे सर्व प्रकारके वस्त्रकी तथा रंगने धोनेकी वस्तुकी प्राप्ती होवे. (६) काल निधिसे अष्टांग निमितके इतिहासके या कुंभकारादिकके कर्मके पुस्तकोंकी प्राप्ति होवे. (७) महाकाल निधिसे सुवर्णादि सर्व धातूकी प्राप्ति होवे. (८) माणवक नि-

धिसे संग्रामकी विधिके पुस्तक, और सूभटोंकी प्राप्ति होवे. (९) शंखानिधिसे धर्म अर्थ काम मोक्षकी विधि बतानेवाले तथा संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंस, संकीर्ण, गद्य, पद्य, इनकी रीती बतानेवाले शास्त्रकी प्राप्ति होवे. और सर्व प्रकारके वाजित्रकी प्राप्ति होवे. ये ९ निध्यान पेटी (सन्दूक) के जैसे १२ योजन लम्बे, ९ योजनके चौडे. ८ योजन ऊंचे, आठचक्र युक्त होते हैं. ये ९ निध्यान जहां गंगा नदी समुद्रमें मिलती है वहां रहते हैं. चक्रवर्ती इनको साधे पीछे उनके पगके नीचे चलते हैं. इन ९ निध्यानमें द्रविक वस्तु तो साक्षात निकलती हैं और कर्मीक वस्तु बनानेकी विधिके पुस्तक निकलते हैं उनको पढके इच्छित कार्य सिद्ध करते हैं.

इन ९ निध्यान १४ रत्नके एकेक हजार देव अधिष्टायक हैं सो कार्य करते हैं.

फुटकर रिद्धिः—आत्मरक्षक देव दोहजार, छे खंड का राज, देश[१] बत्तीस हजार, इत्नेही मुकटबंध

१—२८ पुरुष. ३२ स्त्री यों ६० मनुष्यका एक कुल 'घर' होता हैं. ऐसे दश हजार कुलका एक ग्राम; ऐसे तीस हजार ग्रामका एक देश, ऐसे बत्तीस हजार ५ चक्रवर्तीको होते हैं.

राजा, राणी[१] चौसट हजार, हात्थी—घोड—रथ—चौरासी २ हजार, पायदल छिन्नुक्रोड, नाटकीयें बत्रीसि हजार, राजधानी सोले हजार, द्रोणमुख (बंदर) निन्याणु हजार, ग्राम छिन्नूक्रोड, बगीचे उगण पचास हजार, बडे मंत्री चउदे हजार, म्लेच्छराजा सोले हजार, रत्नागर सोले हजार, सोना चंदीके आगर बीस हजार, पाटण[२] बहुतर हजार, गोकुल[३] तीनक्रोड, रसोइये तीनसेसाठ, अंगमर्दक छत्तीस क्रोड, दासदासी निन्याणु क्रोड, अंगरक्षक निन्याणु लाख, आयुध शाला तीनक्रोड, हकीम तनिक्रोड, पंडित आठहजार, बयालीस भूमीये महेल चौसट हजार, साठ

१ कोइ एक लाख बाणु हजार स्त्री कहते हैं सो एकेक राज कन्याके साथ एकेक प्रधान और प्रोहितकी कन्या आती है.

२ पाटणमें कुतीयावणकी दुकान होती हैं. कुंतीयावण अव्रती समद्रष्टी होता हैं. उसके भंडारका वीमाणीक देव अधिष्टायक हैं. वो इच्छित वस्तु देता हैं.

३ दश हजार गायका एक गोकूल होती हैं.

ये सर्व रिद्धि संपूर्ण भरत क्षेत्रमें होता हैं.

क्रोड मण अन्न नित्य खपे, बारे क्रोड मण लूण नित्य लगे, तीन क्रोड मण हींग नित्य लगे,–इत्यादि और भी बहुत रिद्धि जाणनी. इसको छोडके संयम लेवे तो स्वर्ग तथा मोक्ष पधारे और राजमें मरे तो नर्कमें जाय.

इस आरेमें साधू केवली होते है और पांच (नर्क–तिर्यंच–मनुष्य–देव–मोक्ष) गतिमें जानेवाले जीव होते हैं.

चौथा दुसम सुसम नामे (दुःख बहुत सुख थोडा) आरा एक कोडा कोडी सागरमें बयालीस हजार बर्ष कमीका होता हैं, तब वर्णादिके पर्यायमें अनंत गुण हीणता होती हैं और घटते २ पांचसो धनुष्यका सरीर ऊंचा और क्रोड पूर्वका आयुष्य रहता हैं. ३२ पांसली. दिनमें १ वक्त भोजनकी इच्छा होती हैं. इस आरेमें छे [1]संघेण और छे

१–(१) बज्र रुषभनाराच संघेण–महा पराक्रमी (२) ऋृषभनाराच संघेण. ३ नाराच संघेण. ४ अर्धनाराच संघेण [ये तीनीमें एकेकसे उतरता पराक्रम जाणना.] ५ कीलक संघेण–केलेके झाडकी तरेह हड्डी ६ छेवटा संघेण–अलग २ हड्डीयों होवे.

[1]संठाण होते हैं. गती पांच ही जाणनी.

इस आरेमें २३ तिर्थंकर ११ चक्रवर्ती और नव २ बलदेव ९ वासुदेव ९ प्रति वासुदेव होते हैं. इनमेंसे तिर्थंकर चक्रवर्तीका ब्यान तो पहले कहा.

वासूदेव पूर्व भवमें निर्मल तपसंयम पालके नियाणा करके एक भव बीचमें स्वर्ग नर्कका करके अवतरते हैं तब माता ७ स्वप्न देखती हैं. शुभवक्त जन्म ले योग्य अवस्था प्राप्त हुये राजपद प्राप्त होता है. तब सात रत्न पैदा होते हैः—१ सुदर्शन चक्र. २ खड्ग ३ कौमुदी गदा. ४ पुष्पमाल. ५ धनुष्य अचूकबाण [शक्ती] ६ मणी ७ महारथ. यह बेताड पर्वतके दक्षिण दिशाके तीन खंडका राज करते हैं, इनके सरीरमें बीस लाख अष्टापदका बल होता है. और सर्व रिद्धि चक्रवर्तसे आधी जाणनी. ये नियाणा करके होते हैं इसलिये संयम नहीं लेसकते हैं, इनकी गति एक नर्ककी जाणनी.

---

१ समचौरससंठाण—सर्वांग सुन्दर. २ निगोपरिमंडल संठाण—उपरसे अच्छा. ३ सादिय संठाण—नीचेसें अच्छा. ४ वावना संठाण. ५ कूब्ज (कूबडा) संठाण. ६ हुड संठाण. सर्व अंग खराब.

बलदेव (राम) वासूदेवकी तराह माताको चार स्वप्न देके वासूदेव पहले जन्म लेते हैं. वासूदेव हुये पीछे दोनु भाइयोंके आपसमें प्रेम बहुत होता हैं. दोनु मिलके राज करते हैं. इनमें दशलाख अष्टापदका पराक्रम होता हैं. यह वासूदेवका आयुष्य पूर्ण हुवे पीछे संयम ले करणीकर स्वर्ग तथा मोक्षमें जाते हैं.

इस आरेके तीन बर्ष साडी आठ महीने बाकी रहे तब चोवीसमे तिर्थंकर मोक्ष पधारते हैं. इति

पांचमा दुःखम नामे (अकेला दुःख) आरा इक्कीस हजार बर्षका लगता हैं तब वर्णादिककी पर्यायमें अनंत गुण हीणता होती हैं. और घटते २ उत्कृष्ट सवासो बर्षका आयुष्य और सात हाथका देहमान तथा १६ पांसली रहजाय. दिनमें दो वक्तकी आहारकी इच्छा होवे.

इस आरेमें दश बोल विच्छेद जाते हैं (१) केवल[1] ज्ञान (२) मनःपर्यव ज्ञान (३) परम अवधी[2] ज्ञान.

१ चोथे आरेके जन्मे हुयेको पांचमे आरेमें केवल ज्ञान होवे, परंतू पांचमे आरेके जन्मेको केवल ज्ञान न होवे.

२ सर्व लोक और लोक जैसे अलोकमें असंख्यात खंडवे देखे, उसे परम अवधी कहते हैं; सो पांचमे आरेमें नहोवे. किंचित किसीको होजावे पण पूरा बोल सके नही.

(४—५—६) परिहार विशुद्ध—सुक्ष्म संपराय—यथा ख्यात ए ३ चारित्र. ७ पुलाक लब्धी. *८ आहारिक सरीर. ९ क्षायिक समकित. १० जिनकल्पी साधू. ए दश-बोल नहीं रहे. और तीसबोल पांचमे आरेमें प्रवर्त्तेः— १ मोटे शेहेर गामडे जैसे होवे. २ गामडे स्मशान जैसे होवे. ३ उत्तम कुलके दास दासी होवे. ४ राजा यम जैसे कठोर दंड देनेवाले होवे. ५ कुलीन स्त्री दुराचारिणी होवे ६ पुत्र पिताकी आज्ञा भंग करने लगे. ७ शिष्य गुरुकी निंदा करने लगे. ८ खराब मनुष्य सुखी होवे ९ अच्छे लोग दुःखी होवे. १० क्षुद्री (सापादिक, विच्छू डांसादि) जीव बहुत होवे. ११ दुष्काल बहुत पडने लगे. १२ ब्राह्मण लालची होवे. १३ हिंसाके उपदेशक बहोत होवे. १४ एक धर्मके अनेक भेद होवे. १५ मिथ्यात्वकी वृद्धि होवे १६ देव दर्शन दुर्लभ होवे. १७ बेताड पर्वतके विद्या-धरोंकी मंत्र शक्ति घटजाय. १८ सरस वस्तूकी सर-साइ जाय १९ पसूवोंका आयुष्य कमी होय. २० मिथ्यात्वीयोंकी पूजा थाय. २१ साधूकों चौमासे करने जैसे क्षेत्र थोडे रहे. २२ साधूकी १२ पडिमा

---

* इससे चक्रवर्तीकी शन्या जलाके भस्म करे.

श्रावककी ११ पडिमा विच्छेद जाय २३ गुरु चेलेको ज्ञान नहीं देवे. २४ चेले अविनीत, क्लेशी होवे. २५ अधर्मी ठग कपटी क्लेशी इत्यादि दुर्गुणी मनुष्यकी उत्पत्ति बहुत होवे. २६ शांत मिलापी सरल ऐसे मनुष्यकी उत्पत्ति कमी होवे. २७ कित्नेक धर्मी नाम धराके उत्सूत्र परुपके लोगोंको भरमाने लगे. २८ आचार्य अपने २ धर्मकी परंपरा जुदी २ स्थापने लगे. २९ म्लेछ राजा होवे. ३० धर्मपर प्रीती घट जाय.

इसी तराह पांचमा आरा होवेंगा. ऐसे इक्कीस हजार वर्ष पूरे हुये पीछे छेले दिनको पहले देवलोकके सक्रेंद्रका आसन चले (अंग फरुके) तब वो ह्यांके सब लोकको कहेंगे की, हुशार हो जावो, कल पांचमा आरा उतरके छट्ठा आरा बेठेगा, सुकृत करना सो कर लो. जो उत्तम पुरुष होयेंगे सो संथारा करके स्वर्ग जायगे. फिर संवर्तक नाम महावायू चलेगा जिससे सर्व पाहाड किले घर टूट पडेंगे. फक्त बेताड पर्वत गंगा सिंधू नदी रुषभ कूट लवण समुद्रकी खाइ. सिवायके और सर्व क्षय होजायेंगे. उस वक्त पहले पहरमें जैन धर्म और दूसरे पहरमें सर्व धर्म विच्छेद जाय. तीसरे पहरमें राज्यनीति विच्छेद जाय. चौथे पहरमें बादर अग्नी विच्छेद जाय.

छट्टा दुशमा दुशम (दुःखम दुःख) आरा इकीस हजार वर्षका बेठेगा उस बक्त भरत क्षेत्रका अधिष्ठायक देवता फक्त बीजरुप मनुष्य पसूको उठाके गंगा और सिंधूनदीके बेताड पर्वतके उत्तर और दक्षिणमें चार २ कांठे यों आठ कांठे, एकेक कांठेमें नव २ बिल+ सर्व बहुतर बिल है, एकेक बिलमें तीन २ मजले, उनमें उन मनुष्योंको रख देवेगें. उस बक्त वर्ण गंध रस स्पर्सके पर्यायमें अनंतगुणे पुदगलकी हीणता हो जायगी. उन मनुष्योंका उत्कृष्ट बीस वर्षका आयुष्य और एक हाथका सरीर रह जायगा. आठ पांसली. और आहारकी इच्छा अप्रमाण अर्थात इच्छा तृप्त होवेगी नहीं. उस बक्त रातको ठंड बहुत पडेगी. दिनको ताप बहुत पडेगा इसलिये मनुष्य बाहिर निकल नहीं सकेंगे. फजरको सूर्य उदयके दो घडी पहली और स्यामको सूर्य अस्तके दो घडी पीछे तक बिलके बाहिर रह सकेंगे. तब गंगा सिंधूका पाणी चलते सर्पके जैसा आंका वांका वहेगा. गाडेके जित्ना चौडा और आधा पइडा डूबे जित्ना ऊंडा रहेगा. उसमें मच्छ कच्छ बहुत होंगे, उसे वो मनुष्य प-

+ ऊंदर घूसके होते है जैसे.

कडके नदीकी रेतीमें गाड देवेंगे और जल्दी बिलमें चले आवेंगे. वो सीत तापसें पक जायंगे तब उसे लावेंगे और सब जणे उस्पे टूट पडेंगे, टूकडे २ कर खाजायंगे. उन्की हडीयोंको पसू चाटके रहेगे. ये मनुष्य मरे मनुष्यकी मस्तककी खोपरीमें पाणी पीवेंगे. ये मनुष्य अति निर्बल, कूरूप, दुर्गंधी, रोगिष्ट, सूगले, अपवित्र, नग्न, पसूकी तरह रहेंगे. जैसे तिर्यंचमें माता या भगिनीका कुच्छ बिचार नही है ऐसे उन्कों भी कुच्छ विचार नहीं रहेगा. छे वर्षकी स्त्री गर्भ धारण करेगी. लडका लडकी बहोत होयंगे. भंड सूरी जैसा परिवार लेके फीरेंगी. महा क्रेषी और महा दुःखी होवेंगे. धर्म पुन्य रहित एकांत मीथ्यात्वी मरके नर्क तिर्यंच गतिमें जायंगे. यह अवसरपिणीके छे आरेका दश कोडाकोडी सागरका स्वरुप पूर्ण हुवा.

अवसर्पिणीका वर्णव.

अवसर्पिणीके पहला आरा दुःखमादुःखमी श्रावण वदी १ दिन बेठेगा. इस्का सर्व स्वरुप अवसर्पिणीके छट्ठे आरे जैसा जाणना.

अवसर्पिणीका दूसरा दुःखमा आरा श्रावण वएकमको बेठता है. उसही दिन बादल गाजवीज

होके पहला पुष्कर नामे मेघ सातदिन सातरात एक सरीखा पडता है, उससे जमीनकी उष्णता मिट जाती है. फिर दूसरी वक्त क्षीर (दूध) जैसा मेघ सात अहो रात्री बरसता है सो दुर्गंध मिटा देता है. ह्यां सात दिनका उघाड देके फिर घृत नामा (घी जैसा) तीसरा मेघ सात अहोरात्री लग बरसता है जिससे धरतीमें स्निग्धता (चीगटाइ सरसाइ) पैदा होती है. फिर चौथा अमृत नामे मेघ सात अहोरात्री बर्षेगा, जिससे चौवीस प्रकारके अनाज और सर्व वनस्पतिके अंकूर प्रगटते है. फिर सात दिनका उघाड देके पांचमा रसनाम (सोटा–सेलडीके रस जैसा) मेघ सात अहोरात्री लग बर्षता है, जिससे खाटा मीठा तीखा कडूवा कषायला इत्यादि स्वाद वनस्पतिमें प्रगमता है. यह पांचही बर्षाद* भरतक्षेत्र जित्ने लंबे चौडे पडते है. उस

* पांच सप्ते वर्षाद ओर दो सप्तेका उघाड यों सात सप्तेके ४९ दिन हुये तो श्रावण वदी एकम से भाद्रपद सुदी पांचम तक ४९ दिन आते है इसलिये ४९–५० दिन में छमछरी करी जाती है. ये छमछरी (संवत्सरी) पर्व अनादी कालसे शाश्वता है.

बीचमें दो सप्तेका उघाड कहा सो ग्रंथसे जाणना.

वक्त वो बिल वासी मनुष्य बिलके बाहिर निकलके प्रथमतो चमकके भीतर भराते हैं. भीतर दुर्गंधीसे घबराके फिर बाहिर आते हैं. यों निडर होते २ वृक्षके पास आते हैं, फलादिकका भक्षण करते हैं, वो स्वाद लगते हैं तब मांस आहारका त्याग कर आपसमें ऐसा नियम (बंदोबस्त) बांधेते हैं की आज पीछे जो मांसाहार करेगा उस्की छांयमें भी खडे नही रहनां. फिर यों करतें जाती भेद पडेगा, सब रीती अब पांचमे आरेमें चल रही है वैसी होजाती है. दिनोदिन आयुष्य अवघेणा सुखकी वृद्धि होने लगती है. यों इक्कीस हजार बर्ष पूरे होयगे तब—

तीसरा आरा "दुःखमसुखम" नामे लगेगा; उस्की रचना सब चौथे आरे जैसी जाणनी. इस्के तीन बर्ष ८॥ महीने जायगे तब पहले तीर्थंकर होते है. यों पहले प्रकरणमें आंतरे कहे हैं उसी तराह इस आरेमें तेवीस तीर्थंकर इग्यारे चक्रवर्त नव बलदेव वासूदेव सब होते है. ऐसे एक कोडाकोडी सागरमें बेतालीस हजार बर्ष कमी पूरे होयगे तब—

चौथा "सुखम दुःखम" नामे आरा लगेगा. चौरासी लाख पूर्वके अंदर चोवीसमे तीर्थंकर मोक्ष

पधार जाते है. बारमे चक्रवर्त भी आयुष्य पूर्ण करजाते है. फिर क्रोड पूर्व माठेरे गये पीछे कल्प वृक्षकी उत्पत्ति होने लगती है. तब मनुष्य उनसे इच्छा पूरी होती देखके काम धंधा सब छोड देते हैं. यों बादर अग्नी और सर्व प्रकारका धर्म विच्छेद जाता है. जावत तीसरा एक भाग व्यतीत हुवे तब सब अकर्म भूमी बन जाते है. और जुगल [युग्म] उपजने लग जाता है. ऐसे दो क्रोडाक्रोड सागर पूर्ण हुये पीछे—

पांचमा "सुखम" नामे आरा लगता है. उस्के सब हाल दूसरे आरे जैसे जाणना. यों तीन क्रोडाक्रोड सागर पूरे होय तब—

छट्ठा आरा "सुखमा सुखम" पहले आरे जैसा चार क्रोडाक्रोड सागर पूर्ण करेगा. आयुष्य अवघेणा रीती भाती सब वैसीही जाणनी.

☞ दश क्रोडाक्रोड सागरकी उत्सर्पिणीका ब्यान पूर्ण हुवा.

इसी तराह भरत क्षेत्रमें वीस कोडाकोडी सागरका कालचक्र फिरता है. जंबू द्विपके उत्तर दिशामें अपराजित दरवज्जे के भीतर ऐरावत क्षेत्र है जिसकी सर्व रचना भरतक्षेत्र जैसी जाननी. विशेष इत्नाही है कि, ऐरावत क्षेत्र की मर्यादाका करने वाला शि-

खरी पर्वतसे रक्ता और रक्तवती दोइ नदीयों निकल के बेताड पर्वत के नीचे होके उत्तरके लवण समुद्रमें जाके मिली हैं जिससे ऐरावतके भी छे खंड हुये हैं.

मेरुसे दक्षिणमें भरत क्षेत्रकी मर्यादाका करने-वाला मेरुकी तर्फ उत्तरमें "चूली हेमवंत" नामक पर्वत सोनेका है. सो योजनका ऊंचा, पच्चीस योजन पृथ्वीमें पूर्व पाश्चिममें २४९२५ योजन उत्तरकी तर्फ लम्बा हैं. १०५२ योजन १२ कला चौडा. इस पर्व-तके मध्यबीचमें 'पद्म' नामे द्रह (कुंड) है. एक हजार योजन लम्बा, पांचसो योजन चौडा, दश यो-जन ऊंडा है. इस कुंडमेंसे तीन नदी निकली हैं. गंगा सिंधू दो नदी तो चउदे २ हजार नदीयोंके परिवारसे भरत क्षेत्रमें गइ है और रोहीता नदी उत्त-रकी तर्फ हेमवंत क्षेत्रमें होके अठाइस हजार नदीके परिवारसे पश्चिमके लवण समुद्रमें मिली हैं. 'पद्म' द्रहके बीचमें रत्नमय कमल है उसपे 'श्री देवी' सर्व परिवारसे रहती हैं.

मेरुसे उत्तर दिशामें ऐरावत क्षेत्रके पास 'शि-खरी' नामे पर्वत है उस्की रचना सब चूली हेमवंत पर्वत जैसी जाणनी. पद्म द्रह जैसी उस्पे 'पुंडरिक'

द्रह है उसमेंसे तीन नदी निकली हैं. रक्ता और रक्तवती नदी तो चउदे २ हजार नदीके परिवारसे ऐरावत क्षेत्रमें गइ हैं. और सुवर्णकुला नदी दक्षिणकी तर्फ एरण्यवय क्षेत्रमें होके अठावीस हजार नदीके परिवारसे पूर्वके लवण समुद्रमें जाके मिली हैं.

मेरुसे दक्षिणमें "चूल हेमवंत" पर्वतके पास उत्तरकी तर्फ हेमवय नामे युगलीये मनुष्यका क्षेत्र है. पूर्व पश्चिममें ३७६७४ योजन १६ कला उत्तरकी कोरपे लम्बा है और २१५५ योजन ५ कला उत्तर दक्षिणमें चौडा है. इस्के बीचमें एक शब्दपातीवृत बेताड नामका गोल पर्वत है. ह्यां सदा तीसरे आरेके पहलीके दो भाग जैसी रचना रहती है.

मेरुसे उत्तरमें शिखरी पर्वतके पास दक्षिणकी तर्फ 'ऐरण्यवय' नामे जुगलीयाका क्षेत्र है. इसकी सब रचना हेमवय क्षेत्र जैसी जाणनी. इसमें वीकट पाती गोल बेताड है. मेरुसे दक्षिणमें हेमवंत क्षेत्रके पास उत्तरकी तर्फ 'महाहेमवंत' नामे पर्वत सोनेका है, दोसो योजन उंचा ५० योजन धरतीमें पूर्व पश्चिम ५४९२९ योजन १६ कला लम्बा है और उत्तर दक्षिणमें ४२१० योजन १० कला चौडा हैं. इ-

स्के मध्यमें 'महापद्म' द्रह (कुंड) है, दो हजार योजन लम्बी एक हजार योजन चौडी दश योजन उंडी. इस्मेंसे दो नदी निकली हैं. 'रोहीता' नदी दक्षिणकी तर्फसे निकल हेमवंत क्षेत्रमें होके अठाइस हजार नदीके परिवारसे पूर्वके लवण समुद्रमें मिली हैं. और 'हरीकंता' नदी उत्तरकी तर्फसे निकल हरीवास क्षेत्रमें होके छप्पनहजार नदीके परिवारसे पूर्वके लवण समुद्रमें जाके मिली है. इस द्रहके मध्यमें रत्नकमल हैं. उसमें 'ह्री' नामे देवी सब परिवारसे रहती है.

मेरुसे उत्तर दिशामें ऐरण्यवय क्षेत्र के पास दक्षिणकी तर्फ रुपीपर्वत रुपेका है. इसकी रचना सब महाहेमवंत पर्वत जैसी जाणनी. इसके मध्यमें 'महा पुंडारिक द्रह' महापद्म द्रह जैसी जाणना. इसमेंसे दो नदी निकली हैं—'रुपकला' नदी उत्तरसे निकालके ऐरण्यवय क्षेत्रमें हो अठाइस हजार नदीके परिवारसे पश्चिमके लवण समुद्रमें मिली हैं. और 'नरकंता' नदी दक्षिण दिशाकी तर्फसे निकल रम्यकवास क्षेत्र होके छप्पनहजार नदीके परिवारसे पूर्वके ल॰ समुद्रमें जाके मिली हैं.

मेरुसे दक्षिणमें महा हेमवंत पर्वतके उत्तरकी तर्फ ' हरीवास ' नामे जुगलीयाका क्षेत्र हैं. पूर्व पश्चिममें ७३९७१ योजन १७ कला लंबा है. और उत्तर दक्षिणमें ८४२१ योजन १ कला चौडा है. इस्के मध्यमें ' गंधवती ' वृत बेताड है. इसमें सदा दूसरे आरे जैसी रचना जाणनी.

मेरुसे उत्तरमें रुपी पर्वतके पास दक्षिणमें ' रमकवास ' युगलीयोंका क्षेत्र है. इसकी रचना सब हरीवास क्षेत्र जैसी जाणनी में इस्के मध्यमें मालवंत वृत बेताड पर्वत है.

मेरुके दक्षिणमें हरीवास क्षेत्रके पास उत्तरमें ' निषेध ' पर्वत है. ४०० योजन ऊंचा, १०० योजन धरतीमें, पूव पश्चिम ९४१५६ योजन २ कला लम्बा है. उत्तर दक्षिणमें १६८४२ योजन चौडा है. इसके मध्यमें ' तिगिच्छ ' द्रह है. चारहजार योजन लंबा, दोहजार योजन चौडा, दश योजन उंडा, इसमेंसे दो नदी निकली हैं. ' हरीसलीला ' नदी दक्षिणसे निकलके हेमवय क्षेत्रमें होके छप्पनहजार नदीके परिवारसे पूर्वके लवण समुद्रमें जाके मिली हैं. और ' सीतोदा ' नदी उत्तरसे निकलके देव कुरु-

क्षेत्रके मध्यभागमें होके चित, विचित, पर्वत और निषध, देवकुरु, सूर, सुलस, विद्युतप्रभ,* इन पांच महाद्रहके मध्य भागमेसें निकलके भद्रशाल वनमें होके मेरु पर्वतसे दो योजन अन पहोंचती विद्युतप्रभ गजदंताके नीचे होके ह्यांसे पश्चिममें फिरके पश्चिम महाविदेह क्षेत्रके दो भाग करती सर्व पांचलाख बतीसहजार नदीयोंके परिवारसें पश्चिमके लवण समुद्रमें मिली है. इस तिगिच्छ द्रहके कमलमें 'धृती' देवी रहती है.

इस निषध पर्वतके पास उत्तरमें पूर्वकी तर्फ 'विद्युतप्रभ' नाम गजदंता पर्वत लाल सोनेका है. और दक्षिणमें सोमानस नामे गजदंता पर्वत रुपेका है. ये दोइ हाथीके दांत जैसे बांके है. निषेधके पाससे बांके होके मेरुको जा अडे है. तीसहजार नवसे दो योजनके लंबे है. निषेधके पास चारसो योजन ऊंचे और पांचसे योजनके चौडे है, आगेके उंचपणमें बृद्धि पाते और चौडापणमें घटते २ मेरुके पास

*इन एकेक द्रहके पास दश २ पूर्वमें और दश २ पश्चिममें यों वीस २ पर्वत हैं. पाचही द्रहके १०० हैं.

पांचसो योजनके ऊंचे और अंगुलके असंख्यातमे भागके चौडे रहे हैं.

मेरुसे उत्तरमें रम्यक वास क्षेत्रके पास दक्षिणमें 'नीलवंत' नामे पर्वत हरे सोनेके निषध पर्वत जैसा हैं. इसके मध्यमें 'केसरी' नामे द्रह, तिगिच्छ द्रह जैसी हैं. इसमेंसे दो नदी निकली हैं. 'नारीकंता' नदी उत्तरसे निकलके रम्यक वास क्षेत्रमें होके छप्पन हजार नदीके परिवारसे पश्चिमके लवण समुद्रमें मिली हैं. और 'सीता' नामे नदी दक्षिणसे निकलके उत्तर कुरू क्षेत्रके मध्य भागमें होके झमक, समक पर्वत और नीलवंत, उत्तर कुरु, चंद्र, ऐरावत, माल्यवान, इन पांच द्रह* के मध्य भागमें होके भद्रशाल वनमेंसे मेरुको दो योजन दूर रखती हुइ मालवंत गजदंताके नीचेसे निकल पूर्वकी तर्फ होके पूर्व महाविदेहके दो भाग करती पांचलाख बत्तीस हजार नदीके परिवारसे पूर्वके लवण समुद्रमें मिली हैं. इस केसरी द्रहके कमलमें 'कीर्ति देवी' सब परिवारसे रहती है.

इस नीलवंत पर्वतके पास पूर्व माल्यवंत गज-

* ह्यां भी पूर्वकी तरह १०० पर्वत जाणना.

दंत पर्वत हरे सोनेके और पश्चिममें गंध मादन गजदंता पर्वत पीले सोनेके, विद्युत प्रभ गजदंता जैसा जाणना. मेरुसे दक्षिणमें निषेध पर्वतके पास उत्तरमें विद्युत प्रभ और सोमाण गजदंताके बीचमें देव कुरु क्षेत्र युगलीयाका है. पूर्व पश्चिम दोइ गजदंताके बीचमें त्रेपन हजार योजन लंबा और उत्तर दक्षिणमें ११८४२ योजन और २ कलाका चौडा हैं. इसमें सदा पहला आरा प्रवर्तता हैं. इस क्षेत्रमें जंबूवृक्ष रत्नमय साडी आठ योजनका ऊंचा हैं, जिसपे जंबूद्वीपका मालक 'अणाढी' नामे देव महा रिद्धिवंत रहता हैं.

मेरुसे उत्तरमें नीलवंत पर्वतके पास दक्षिणमें दोइ गजदंताके बीचमें उत्तर कुरु क्षेत्र है. सो देव कुरु जैसा जाणना. इस क्षेत्रमें जंबूवृक्ष जैसाही सामली वृक्ष है. इसपे गरुड देवता रहता है. ये उत्तर दक्षिणके लाख योजन पूरे हुये*

---

*उत्तर दक्षिणके लाख योजनका हिसाब.

क्षेत्र:	योजन.	क्षेत्र.	योजन.
मेरु पर्वत	१००००	महाहेमवंतपर्वत	४२१० $\frac{१०}{१९}$
पि । भद्रशालवन	५००	रुपी पर्वत	४२१० $\frac{१०}{१९}$

मेरुसे पूर्व और पश्चिम दिशाका वर्णव.

मेरु पर्वतके दोनो तर्फ पूर्व पश्चिममें महाविदेह नामा क्षेत्र है. यह महाविदेह क्षेत्र निषेध और नीलवंत पर्वतके बीचमें तेतीस हजार छे से चोतीस योजनका चौडा है और मध्य बीचमें भद्रशाल वन मेरु पर्वत मिलाके एक लाख योजनका लंबा है.

इस महाविदेह क्षेत्रके बीचमें मेरु होनेसे दो भाग हुए हैं. एकका नाम पूर्व महाविदेह और दुसरेका नाम पश्चिम महाविदेह हैं. इस पूर्व महाविदेहमें सीता नदी और पश्चिम महाविदेहमें सीतोदा नदी पडनेसे इस्के दो दो भाग हुये हैं. एक उत्तरकी तर्फ और दूसरा दक्षिणकी तर्फ. यों दोनु महाविदेहके

क्षेत्र.	योजन.	क्षेत्र.	योजन.
उत्तर भद्रशाल वन	५००	हेमवय क्षेत्र	२१०५ ५/१९
देव कुरुक्षेत्र	११८४२ २/१९	ऐरण्य वयक्षेत्र	२१०५ ५/१९
उत्तर कुरुक्षेत्र	११८४२ २/१९	चूलहिमवंतपर्वत	१०५२ १२/१९
निषेध पर्वत	१६८४२	शिखरी पर्वत	१०५२ १२/१९
नीलवंत पर्वत	१६८४२	भरत क्षेत्र	५२६ ६/१९
हरीवास क्षेत्र	८४२१ १/१९	ऐरावत क्षेत्र	५२६ ६/१९
रमकवास क्षेत्र	८४२१ १/१९	सर्व जोड	१०००००

चार भाग हुये हैं. एकेक भागमें आठ २ विजय हैं. चारही भागकी बत्तीस विजय हुइ.

मेरुके दोनु पास तो भद्रशाल वन बावीस २ हजार योजनका है. नीलवंत पर्वतके दक्षिण दिसा मालवंत गजदंता पर्वतके पूर्व दीशा शीतानदीके उत्तर दिशा पेली कछ नामा विजय है उत्तर दक्षिण नीलवंत पर्वत सीता नदीके वीचमें ८२७१ योजन एक कलावकी लंबी और पूर्व पश्चिम वीसहजार दोसे तेरे योजनमें कुछ कम (एक योजनके आठ भाग करना इसमेंका एक भाग कमी) चौडी. इस कछ विजयके मध्य वीचमें एक वेताड पर्वत है. पूर्व पश्चिममें विजय जितना (२२१२⅞ योजन) लंबा २५ योजन उंचा ५० योजन चौडा. इसपे उत्तर और दक्षिणमें दो श्रेणिमें विद्याधरोंके ५५ नगर हैं. उपर अभोगी देवताकी श्रेणी दो गुफा वगैरे सर्व अधीकार भरत क्षेत्रके वेताड जैसा जाणना.

कछ विजयके वेताडके उत्तरके विभागमें नीलवंत पर्वतके नितंबमें (पास) पूर्वमें सिंधू कुंड, वीचमें+ ऋषभ कूट, और उत्तरमें गंगा कुंड है. इन दोनु

+ ये ऋषभ कूट ८ योजनका उंचा हैं.

कुंडमेंसे सिंधू और गंगा दो नदी निकलके बेता-
डकी दोइ गुफाके नीचे होके इस विजयके भरत क्षे-
त्रकी तरह छे भाग करती हुइ अठावीस हजार न-
दीके प्रवाहसे सीता नदीमें आके मिलती है.

बेताडकी दक्षिण दिशाकी कछ विजयमें गंगा
सिंधूके बीचमें क्षेमंकरा नाम राजधानीकी नगरी है.
इस्में कछ नामे चक्रवर्ती राजा होके भरतकी तराह
छे ही खंड साधते हैं (राज करते है).

इस कछ विजयके पास चित्रकूट नामे बखरा
(हद करनेवाला) पर्वत है. पूर्व पश्चिमे १६५९२
योजन और दो कलाका लंबा और पांचसे यो-
जन चौडा नीलवंत पर्वतके पास चारसे योजन
ऊंचा आगे बडता २ सीता नदीके पास पांचसे यो-
जन ऊंचा है.

इस पर्वतके पास पश्चिममें दूसरी सूकछ नामे
विजय है. इस्में क्षेमपुर राजधानी है. और सब कछ
विजय जैसी रचना जाणनी. इस विजयके पास
नीलवंत पर्वतके मूलसे ग्रहावती कुंडसे ग्रहावती नदी
निकलके उत्तर दिशामें सीता नदीमें मिली है. यह
निकली वांहासे मिली वांहातक एक सरीखी (पा-

णीके नेहर जैसी) सवासो योजनकी चौडी है.

इस्के पास पूर्वमें तीसरी महाकछ नामे विजय अरिष्टा राजधानी और सब कछ विजय जैसा बेताड दो नदी छे खंड जाणना. इस विजयके पास ब्रह्मकूट बखारा पर्वत चित्रकूट जैसा जाणना. इसके पास चौथी कछावर्त विजय. अरिष्टवती राजधानी. जिस्के पास द्रहवतीनदी, ग्रहवतीनदी जैसी जाणनी. जिस्के पास पांचमी आवर्त विजय षड्गी राजधानी. जिस्के पास नलीनीकूट वखारा पर्वत. जिसके पास छटी मंगलावर्त विजय, मंजूषा राजधानी. जिस्के पास वेग-वती नदी. जिस्के पास सातमी पुष्करविजय ऋषभ-पुरी राजधानी. जिस्के पास पुष्कलावती विजय* पु-डरीगणी राजधानी. यह आठही विजय मेरुसे पूर्व निलवंतसे दक्षिणे और सीतनदीसे उत्तरमें आइ हैं.

पुष्कलावती विजयके पास पूर्वमें सीतामुखनामे बाग पूर्व पश्चिम विजय जित्ना (१६५९२,१/१९) और उत्तर दक्षिण सीतानदीके पास दो हजार नवसे बा-वीस योजन चौडा उत्तरमें घटता २ नीलवंत पर्वत

* इस विजयमें अबी श्री मंदिरस्वामी पहले विह-रमान बिचरते हैं.

के पास उगणीसीया एक भाग जित्ना चौडा है.

इस्के पास ही बरोबरीसे सीता नदीके दक्षिणकी तर्फ इस जैसा ही सीतामुख नाम बन है, वो निषेध पर्वतके पास एक उगणीसीया भाग जित्ना चौडा है.

इस वनके पास पश्चिममें मेरुकी तर्फ नवमी वत्स विजय, सुसीमा राजधानी, जिस्के पास त्रीकूट बखरा पर्वत. जिस्के पास दशमी सुवत्स विजय, कुंडला राजधानी, जिस्के पास तप्तांतर नदी. जिस्के पास इग्यारमी महावत्स विजय, अपरावती राजधानी, जिस्के पास वेश्रमण बखारा पर्वत. जिस्के पास बारहमी वत्सावर्त विजय, प्रभंकरा राजधानी जिस्के पास मंतांतरी नदी. जिस्के पास तेरहमी रम्यविजय, अंकावती राजधानी, जिस्के पास अंजकूट बखार पर्वत, जिस्के पास चौदहमी रम्यक विजय, पद्मावती राजधानी, जिस्के पास उन्मांतातर नदी जिस्के पास पंद्रहमी रमणी विजय, शुभा राजधानी, जिस्के पास मतांजल कूट बखरा पर्वत, जिस्के पास सोलहमी मंगलावती विजय, रत्नसंचय राजधानी. यह आठ विजय मेरुसे पूर्वमें, निषेध पर्वतसे दक्षिण-

में, सीतानदीसे उत्तरमें है. इस्के पास मेरुका भद्रशाल वन २२००० योजनका आ गया है.

यह पूर्व महा विदेहका अधिकार हुवा. अब मेरुसे पश्चिम महाविदेहमें, मेरुसे पश्चिम दिश विद्यूत प्रभगजदंता और भद्रसाल वनके पास निषेध पर्वतसे उत्तर दिशा सीतोदा नदीसे दक्षिण दिशा ह्यां सत्तरमी पद्म विजय, अश्वपुरी राजधानी, इस्के पास पश्चिममें अंकावती वखरा पर्वत. जिस्के पास अठारमी सूपद्म विजय सिंहपुर राजधानी. जिस्के पास क्षीरोदा नदी, जिस्के पास उगणीसमी महापद्म विजय. महापुरा राजधानी. जिस्के पास पद्मावती वखरा पर्वत. जिस्के पास वीसमी पद्मावती विजय विजय पुर राजधानी. जिस्के पास इकीसमी शंख विजय, अपराजिता राजधानी. जिस्के पास असीविष वखारा पर्वत, जिस्के पास बावीसमी नलीन विजय* अपरा राजधानी. जिस्के पास अंतर वाहिनी नदी. जिस्के पास तेवीसमी कुमुद विजय, आसोका नगरी. जिस्के पास सुकवाहा वखारा पर्वत, जिस्के पास २४ मी नलीनावती विजय, वितशोका नगरी.

*नलीनावती विजय उतरती २ मध्यमें हजार योजनकी ऊंडी है.

यह आठ विजयके पास पश्चिममें सीतोदा मुखवन, सीतामुख वन जैसाही आ गया है.

इस्के बरोबर पास उत्तर दिशामें भी सीतोदा मुख वन ऐसा ही है. जिस्के पास पूर्वदिशा मेरुकी तर्फ पच्चीसमी वप्र विजय विजया नगरी, जिस्के पास चेइ-कूट बखारा, पर्वत जिस्के पास २६ मी सुवप्र विजय वैजीयंती राजधानी, जिस्के पास उन्मी मालनी नदी. जिस्के पास २७ मी महावप्र विजय, जयती राजधानी. जिस्के पास सूरकूट बखारा पर्वत. जिस्के पास २८मी वप्रावती विजय, अप्राजीता राजधानी. जिस्के पास गंभीर मालनी नदी. जिस्के पास २९ मी वल्गुविजय चक्रपुर राजधानी जिस्के पास नागकूट बखारा पर्वत. जिसके पास तीसमी सुवल्गु विजय, खड्गीपुर राज-धानी, जिसके पास फेन मालनी नदी, जिसके पास इकतीसमी गंधीला विजय, अवध्या राजधानी, जिस्के पास देवकूट बखरा पर्वत. जिस्के पास बत्रीसमी गं-धीलावती विजय हैं, जिस्के पास भद्रशालवन गंध-मादन गजदंता पर्वत और उत्तर कुरुक्षेत्र आ गया है.

ये सर्व विजय कछविजय जैसी, सर्व पर्वत चित्र कूट जैसे, और सर्व नदी ग्रहवती नदी जैसी

जाणना. ये पूर्व पश्चिमके लाख योजन.

इस* जंबूद्विपके चार ही तर्फ गोलाकार जगती (कोट) है. आठ योजनका उंचा, नीचे बारे योजन, बिचमें आठ योजन, उपर चार योजन चौडा हैं. इसके चार ही दिशामें चार दरबाजे है. पूर्वमें विजय, दक्षिणमें विजयंत, पश्चिममें जयंत, उत्तरमें अपराजित ये चार ही दरबाजे आठ योजन ऊंचे और चार योजन चौडे हैं. इस जगतीकी परघी (चार ही तर्फका फिराव] ३१६९२७ योजन तीन कोश १२८ धनुष्य साढी तेरे अंगुल झाझेरा है.

लवण समुद्रका वर्णव.

जंबूद्विप के बाहिर चारही तर्फ वलिया (चूडी)

---

* जंबू द्वीपके पूर्व पश्चिमके लक्ष योजनका हीसाब.

एकेक विदेह २२१२ॱॱ यो, १६ विजयके ३५४०६ यो.
एकेक बखरा पर्वत ५०० यो. ८ बखराके ४००० यो.
एकेक अंतर नदी १२५ योजन. ६ नदीके ७५० यो.
एकेक सीता मुखवन २९२२ यो. २ वनके ५८४४ यो.
एकेक भद्रशाल वन २२००० यो. २ वनके ४४००० यो.
मध्यमें मेरु पर्वत........................१०००० यो.

सर्व योजन. १०००००

जैसा दो लाख योजनका चौडा लवण समुद्र है, जिसका पाणी लूण जैसा है. ये समुद्र किनारेपे तो बालाग्र जित्ना उंडा है और आगे उंडासमें बढते २ ९५ हजार योजन जावे तब मध्यमें एक हजार योजन उंडा आता हैं.

जंबूद्विपमें भरतक्षेत्रकी मर्यादाका करनेवाला चूल हेमवंत पर्वत है, जिस्के दोनु तर्फके छेडेसें जगती के बाहिर समुद्रमें पूर्वमें दो और पश्चिममें दो ऐसी चार दाढे (डुगरे) हाथीके दांत जैसे बाकी एक दक्षिणकी तर्फ और एक उत्तरकी तर्फ मुडती हुइ निकली हैं. एकेक तर्फ सात २ अंतरद्विपे [बेट] हैं. चारही तर्फके पहले चार द्विपे जगतीसे तीनसो योजन दूर हैं, जिनके नामः—१ रुचक, २ अभासिक, ३ वैषणी, ४ लांगुली. ये तीनसो योजन के लंबे चौडे हैं. इनके आगे चारसो योजन चारही तर्फ दूसरे द्विप हैं:—१ हयकर्ण, २ गयकर्ण, ३ गोकर्ण, ४ संकुलीकर्ण. ये चारसो २ योजनके लंबे चौडे हैं. इनके आगे पांचसो योजन चारही तर्फ तीसरे द्विप हैं:—१ अदर्शमुखा, २ मेढमुखा, ३ अयोमुखा, ४ गोमुखा. ये पांचसे २ योजनके लंबे चौडे हैं. इनके आगे छेसो

योजन चारही तर्फ चौथे द्विपे हैः—१ हयमुखा, २ गयमुखा, ३ हरीमुखा, ४ व्याघ्रमुखा. ये छेसो योजन के लंबे चौडे हैं. इनके आगे सातसो योजन चारही तर्फ पांचमे द्विप हैः—१ अश्वकर्ण, २ सिंहकर्ण, ३ अकर्ण, ४ गोकर्ण. ये सातसो योजनके लंबे चौडे हैं.

ह्यांसे आठसे योजन आगे छट्ठा चोकः—१ उलका मुख, २ मेघ मुख, ३ विद्युन्मुख, ४ यह आठसे योजनके लंबे चौडे हैं. ह्यांसे नवसे योजन आगे सातमा चोकः—१ घनदंत, २ लष्टदंत, ३ गुढदंत, ४ सुधदंत. ये नवसे योजनके लंबे चौडे हैं. यह अट्ठाइस हुवे. यह वांके है, इस लिये जुगतीसे तो २८ ही तीन २ से योजन दूर है.

ऐसे ही उत्तर दिशाकी तर्फ ऐरावतका शीखरी पर्वतमेंसे ही दो तर्फ दाढो और २८ द्विप हैं, उन्का येही नाम और प्रमाण जाणना.

इन ५६ अंतर द्विपे पे जुगलीये मनुष्य रहते हैं. उन्का पलके असंख्यातमे भाग आयुष्य और पौणे आठसे धनुष्यकी अवघेणा है. यह मरके देवता होते हैं.

जंबू द्विपके दरवजेसे लवण समुद्रमें चार ही दरवजेसे चार ही दिशा ९५००० योजन जावे वांहा

चार ही दिशा चार पाताल कलशे हैं:-१ वडवाय पूर्वमें, २ युग दक्षिणमें, ३ केतू पश्चिममें, ४ इश्वर उत्तरमें. यह चार ही एकेक लाख योजनके ऊंडे, बीचमें ५०००० योजनके चौडे, तले और मूख दस २ हजार योजनके चौडे है. हजार योजनकी ठीकरी जाडी है. इन्के तीन कांड है, एकेक कांड तेतीस हजार तीनसे तेंतीस योजन झाझेराका है. पहले कान्डमें वायू (हवा), दूसरेमें वायू पाणी भेला, तीसरेमें कोरा पाणी भरा है, चार ही कलसेके बीचमें नव २ छोटे २ कलशेकी लड है. पेली दोसे पन्नर कलसेकी लड, दूसरी दोसे सोलेकी, यावत् नवमी दोसे तेवीसकी लड है. लडके कलसे हजार योजनके ऊंडे बीचमें पांचसे योजनके, मूख और तले सो योजनके चौडे और दश योजनकी ठीकरी जाडी है. इन्के तीनसे तेतीस योजन झाजेरेकी एकेक कान्ड ऐसे तीन कान्ड हैं. पेलेमें हवा, दूसरेमें हवा पाणी भेला, तीसरेमें पाणी भरा है. सर्व कलसे ७८८८ हुये. इन्में नीचेके कान्डकी हवा गुंजायमान होवे तब उस्में पाणी उछलके दो कोश आठम पखीको ऊंचा जाता है, जिससे भरती आती है. इस्में एकेक कलशेपे एक

लाख बयालीस हजार देवता सोनेके कुडछेसे पाणी दाबते हैं. परंतू दवा हुवा पाणी रहता नहीं है. जिससे लवण समुद्रके मध्य भागमें पाणीके डगमाला (ढग) सोले हजार योजनका ऊंचा और दश हजार योजनका चौडा हैं. लवण समुद्रमें २५ नाग कुमार देवताके पर्वत और १२५०० योजनका गौतम द्विपा हैं. श्री महावीर स्वामीसे गौतमजीने पूछा है की—लवण समुद्र जंबू द्विपमें झलक नाखेके नही? प्रभूने कहा के, तिर्थंकर तथा चार ही तीर्थके तप संयम धर्मके अतिशय करके गये कालमें झलका नही, वर्तमानमें झलके नहीं, आवते कालमें झलकेगा नहीं. ॥ इति लवण समुद्रका अधिकार ॥

लवण समुद्रके चार ही तर्फ बलीयाकार फिरता चार लाख योजनका धातकी खंड नामे द्विप है. इस्में दो इक्षुकार नामे पर्वत दक्षिण और उत्तरके दरवाजेसें निकले हैं, पांचसे योजनके उंचे और धातकी खंड जित्ने लंबे हैं. इससे धातकी खंडके दो खंड हुये हैं.

पूर्व के धातकीखंडके मंध्यमें वीजय मेरु और [illegible] धातकीखंडके मध्यमें अचल नामे मेरु चौ-

रासी २ हजार योजनके ऊंचे है. एकेक मेरुके पास सर्व क्षेत्र नदी पाहाड जंबूद्वीप जित्ने लंबे ऊंचे और द्वीप जित्ने लंबे जाणना. धातकीखंडमें जंबूद्वीपसे दूणे पदार्थ है. ॥ इति धातकीखंडका अधिकार ॥

धातकीखंडके चारही तर्फ आठलाख योजनका चौडा कालोदधी समुद्र है. यह इस किन्नारेसे उस किन्नारे तक एकसा हजार योजनका ऊंडा बरोबर पाणी भरा है. इस्का पाणीका सवाद पाणी जैसा. कालोदधी समुद्रके चारही तर्फ सोलेलाख योजनका चौडा पूष्करद्वीप है इस्के मध्यबीचमें वलीया (चूडी) की तरह फिरत चारही तर्फ मानु क्षेत्र नामे पर्वत सतरेसे एकवीस (१७२१) योजन ऊंचा और मूलमें (नीचे) एक हजार बावन योजन तथा शिखरमें चारसे चोवीस योजनका चौडा है. इस पर्वतके भीतर मनुष्योंकी वस्ती है. धातकीखंडकी तरह इस्के बीचमें इखूकार पर्वत पडके दो भाग कीये है. पूर्वमें मंदीर मेरु और पश्चिममें विद्युन माली मेरु चोरासी हजार योजनके ऊंचे है. इस्मेंभी धातकीखंड जित्ने सर्व पदार्थ जाणना. यह पेंतालीसलाख योजनका चौडा मनुष्य लोक तथा

अढाइ द्वीप हुये. § इस अढाइद्वीपमें उगणतीस* आंक जित्ने मनुष्य हैं. अढाइद्विपके बाहिर १ मनुष्यकी

§ जंबूद्विप १ लाख योजनका, लवण समुद्र दोइ तर्फके ४ लाख योजन. धातकीखंडके दोइ तर्फके ८ लाख योजन. कालोदधी समुद्रके दोइ तर्फके १६ लाख योजन और पुष्करार्ध द्विपके दोइ तर्फके १६ लाख योजन. सर्व ४५ लाख योजनका अढाइद्विप (मनुष्य) लोक हैं.

* उगणतीस आंक—७९२२८१६२५१४२६४-३३७५९३५४३९५०३३६, उत्कृष्ट इत्ने स्त्री पुरुष होते हैं. क्षेत्रके हिसाबसे इत्ने मनुष्योंका समावेस होना मुशकील हैं. इसलिये स्त्रीकी योनीमें ९ लाख सन्नी मनुष्य उपजते हैं. उने मिलाके उपरके आंक जित्ने मनुष्य होते हैं. और कित्नेक कहते है की श्री अजितनाथजी की वक्तमें उत्कृष्ट मनुष्योंकी संख्या हुइथी तब २९ नवके अंक जित्नी जाणना. और छट्टे आरे दिकके प्रसंगसे जो कमीसे कमी मनुष्य हुये तो भी २९ एक के अंकसे कमी न होयेंगे.

अढाइ द्विपमे जो मनुष्यका आयुष्य है उत्नाही हाथी और सिंहका आयुष्य. मनुष्यके चौथे भाग घोडेका आयुष्य, आठमे भाग बकरे, गाडर और सियालका, पांचमे भाग गाय भेंस ऊंट और गद्धेका, दशमे भाग कुत्तेका आयुष्य जाणना.

पेदास, २ बादर अग्नी. ३ द्रह [कुंड] ४ नदी. ५ गर्जारव. ६ वीजली. ७ बादल. ८ वर्षाद. ९ खड्डे १० दुष्काल. ये दश बोल नही हैं.

मानु क्षेत्र प्रर्वतके बाहीर पुष्कर द्विपमें देवताकी वस्ती हैं. पुष्कर द्विपके बाहिर चार ही तर्फ फिरता छट्टा पुष्कर समुद्र बत्तीस लाख योजनका है. यों आगेके द्विप समुद्र एकेककों फिरते एकेकसे दुगुणे जाणने. ७ मा वारुणी द्विप. ८ मा वारुणी समुद्र* ९ मा क्षीर द्विप. १० मा क्षीर समुद्र** ११ मा घृत द्विप. १२ मा घृत समुद्र‡ १३ मा इक्षु द्विप. १४ मा इक्षु समुद्र+ १५ मा नंदीश्वर द्विप++ १६ मा नंदीश्वर समुद्र. १७ मा अरुण द्विप १८ मा अरुण समुद्र १९ मा रुण द्विप. २० मा रुण समुद्र. २१ मा पवन द्विप. २२ मा पवन समुद्र. २३ मा कुंडल द्विप. २४ मा कुंडल समुद्र. २५ मा संख द्विप. २६ संख समुद्र. २७ रुचक द्विप§ २८ रुचक समुद्र. २९ मा भुजंग द्विप ३० मा

*इस्में मदीरा जैसा पाणी है. ** इसमें दूध जैसा पाणी है. ‡ इसमें घृत जैसा पाणी हैं+इस्में इक्षुरस जैसा पणी है++ ह्यां अठाइ महोत्सव इंद्रादिक देव करते हैं§ ह्यां तक जंघाचारण विद्याचारण मुनी जाते है.

भुजंग समुद्र. ३१ कुस द्विप. ३२ कुस समुद्र. ३३ कुचे द्विप. ३४ कुचे समुद्र. इस तराह एकेकको फिरते और एकेकसे दूणे असंख्यात द्विप समुद्र हैं. छेला स्वयंभूरमण समुद्र अर्ध राजू जित्ना दोनु तर्फसे चौडा है.‡ उसके आगे ११२१ योजन चार ही तर्फ अलोक है. इति ॥

ज्योतीष चक्रम्.

मेरु पर्वतके पास सम भूमी है, वहांसे उपर ७९० योजन तारा मंडल हैं. ताराके विमान अर्धकोशके लंबे चौडे और पाव कोश के ऊंचे पांच ही रंगके रत्नोंमें हैं. इन विमानमें रहनेवाले देवताओंका आयुष्य जघन्य (कमसे कम) पाव पल्यका उत्कृष्ट पाव पल्य झाझेरा. और इनकी देवीयोंका जघन्य पल्यके आठमे भाग उत्कृष्ठ पल्यके आठमे भाग

तथा रुचक द्विपके मध्यमें बलीयाकार रुचक पर्वत है उसमें छप्पन दिग कुमारीमेंकी ४० रहती है. आठ नंदनवन और आठ गज दंतायें सब ५६ हैं.‡ अढाइ उद्धार पल्योपमके जित्ने समय होते है उत्ने द्विप समुद्र हैं.

झाझेरा हैं. इनका विमान दोहजार देव उठाते हैं§

तारामंडलसे दश योजन ऊंचा सूर्यका विमान अंक रत्नमय, एक योजनके ६१ भाग करना, जिसमेंके ४८ भागका लंबा चौडा और २४ भाग उंचा हैं. सूर्य विमानवासी देवका आयुष्य जघन्य पाव पल्यका उत्कृष्ट एक पल्य एक हजार वर्षका, इनकी देवीका जघन्य पाव पल्यका उत्कृष्ट आधीपल पांचसे वर्षका. इन्के विमानको १६ हजार देव उठाते हैं। सूर्यके विमानसे ८० योजन उपर चंद्रमाका विमान स्फाटिक रत्नमय एक योजनके ६१ भाग करे उसमेंके ५६ भागका लंबा चौडा और २८ भागका उंचा हैं. चंद्र विमानवासी देवका जघन्य पावपल्य उत्कृष्ठ एक पल्य एक लाख वर्षका और उनकी देवीका जघन्य पाव पल्य उत्कृष्ट आधी पल ५० हजार वर्षका आयुष्य. इनके विमानको सोले हजार दे-

§ ये ज्योतीषीके विमानको जो उठानेवाले देवता कहे हैं उनके चार भाग करना, जिस्मेंका एक भाग पूर्वमें सिंहके रुपसे, दूसरा भाग दक्षिणमें हाथीके रुपसे, तीसरा भाग पश्चिममें बैलके रुपसे. चौथा भाग उत्तरमें घोडेका रुप धारण कर विमान उठाते हैं.

वता उठाते हैं. चंद्रमासे चार योजन उपर नक्षत्र माल हैं. नक्षत्रके विमान पांच ही वर्णके एक कोशके लंबे चौडे अध कोशके उंचे होते हैं. नक्षत्रका आयुष्य जघन्य पावपल्य उत्कृष्ट आधी पल्यका, उनकी देवीका आयुष्य जघन्य पाव पल्य उत्कृष्ट पाव पल्य झाजेरा. इनके विमानको चार हजार देव उठाते हैं.

नक्षत्र मालसे चार योजन उपर 'ग्रहमाल' हैं, ग्रहके विमान पांच वर्णके रत्नोंके होते हैं. दो कोशके लंबे चौडे और एक कोशके उंचे होते हैं. ग्रहका आयुष्य जघन्य पाव पल्यका उत्कृष्ट एक पल्यका. जिनकी देवीका आयुष्य जघन्य पाव पल्यका उत्कृष्टा आधी पल्यका. इनके विमानको आठ हजार देव उठाते हैं. ग्रहमालके चार योजन उपर बुद्धका तारा हरे रत्न मय हैं. बुद्धके तीन योजन उपर शुक्रका तारा स्फाटिक रत्न मय हैं. शुक्रसे तीन योजन उपर मंगलका तारा रक्त रत्नमय हैं. मंगलसे तीन योजन उपर शनीका तारा जांबू रत्नमय हैं. इन चारही तारेका विमानका आयुष्य सर्व ग्रह जैसा जाणना. ये सब नवसे योजनमें ज्योतिषी चक्र सदा फिरता है. चंद्रमा और सूर्य दो ज्योतिषीके इंद्र हैं.

एकेक चंद्र सूर्यका परिवार ८८ ग्रह* २८ नक्षत्र× छासट हजार नवसे पचोतर कोडाकोडी (६६९७५०-०००००००००००००००) तारा, चार अग्र महिषी–इंद्राणी,

* २८ नक्षत्रः—अभीच—श्रवण—धनिष्टा—शत-भिषा—पूर्वभाद्रपद—उत्तराभाद्रपद—रेवती—अश्वनी—भर-णी—कृतिका—रोहणी—मृगश्र—आद्रा—पुनर्वसु—पुष्प—अस्लेखा—मघा—पुर्वाफाल्गुणी—उत्तराफाल्गुणी—हस्त—चित्रा—श्वांत—विशाखा—जेष्टा—मूल—पूर्वाषाढा-उत्तराषाढा.

× ८८ ग्रहः—अंगारक—विकाल—लोहीताक्ष—शनेश्वर—आधूनीक—प्राधूनीक—कण—कणक—कणक कणक—कणवीतानी—कणसतानी—सोम—सहित—अश्वा-सन—कार्योंपिग—कर्बुक—अजकरक—दुंदभक—शंख—शंखनाभ—शंखवर्ण—कंश—कंशनाभ—कंशवर्णाभ—नीला—नीलाक्षभास—रुप—रुपायभास—भस्म—भस्मरास—तिल—तिलपुफवर्ण—दक—दकवर्ण—काय—बंध्य—इंद्रागी—धुम केतू—हरी—पिंगलक—बुद्ध—शुक्र—बृहस्पति-राहू—अगस्ती—माणक—कामस्पर्शा—धुरक—प्रमुख—विकट—विशंध-कल्प—प्रकल्प—जयल—अरुण—अनिल—काल—महाकाल—स्वस्तिक—सौवास्तिक—वर्धमानक—पलांबोक—नित्योद्यो-तक—स्वयंप्रभु—अवभास—श्रेयस्कर—क्षेमंकर—आभंकर—

चार हजार सामानीक, सोले हजार आत्मरक्षक, तीन प्रषदा—अभ्यंतरके ८०००, मध्यके १००००, बाह्यके १२०००, देव होते हैं. सात अणिका (शैन्य) इत्यादि बहुत परिवार हैं.

ये सर्व ज्योतिषी मेरु पर्वतसे चारही तर्फ ११२१ योजन दूर फिरते हैं. इनके विमान उर्ध्व मुख आधा कवीठके संस्थानसे हैं. जंबुद्विपमें २ चंद्रमा, २ सूर्य; लवण समुद्रमें ४ चंद्रमा, ४ सूर्य; धातकी खंडमें १२ चंद्रमा, १२ सूर्य; कालोदधी समुद्रमें ४२ चंद्र, ४२ सूर्य; पुष्करार्धद्विपमें ७२ चंद्र, ७२ सूर्य; अढाइद्विपमें सर्व १३२ चंद्रमा, १३२ सूर्य. सदा पांच मेरुके आस-

---

प्रभंकर —अरज —विरज —आसोक—वितसोक —विमल—वितप्त—विवस्त्र—विशाल—शाल—सुवृत—अनीवृत—एकजटी—द्विजटी—करि—करिक—राजा—अर्गल—पुष्प केतु—भावकेतु— ॥ ये ८८ ग्रहमें जो राहु ग्रह है उस्का पांचही वर्णका विमान हैं. राहु दो तराहके होते हैं (१) 'नित्य राहू' सदा कृष्णपक्षमें चंद्रमाकी कला ढांकता हैं. और शुक्लपक्षमें उघाडता है. और 'पर्व राहू' सो फिरता २ चंद्र सूर्यके विमानके आगे आवे तब ग्रहण होता हैं. परंतु इससे चंद्र सूर्यको बिलकुल दुःख नही होता है.

पास फिरते हैं और अढाइ द्विपके बाहिर ऐसेही ब-ढते २ असंख्यात चंद्रमा और असंख्यात सूर्य सदा स्थिर रहते हैं. अढाइ द्विपके बाहिरके ज्योतिषीके वि-मान अढाइ द्विपके भीतरके ज्योतिषीके विमानसें लंबाइ चोडाइ उंचाइमें आधे हैं. और इंट जैसा सं-ठाण हैं. इन विमानोंका तेज मंद ऊगते चंद्र सूर्य जैसा होता हैं. अढाइ द्विपकें बाहिर जहां दिन है वहां दिन और रात है वहां रात हमेशां बनी रहती है.

ये ९०० योजन नीचे और ९०० योजन उपर यों १८०० योजनमें तिरछे लोकका ब्यान पूरा हुवा. मेरु तीन लोक फरसे है.

---

‡ जंबूद्विपमें दो सूर्य, इस्के दूणे लवण समुद्रमें चार. जंबूद्विप और लवण समुद्र दोइ मिलके ६, इसके दूणे धातकीखंडमें १२. जंबूद्विपके दो लवण समुद्रके ४ धातकीखंडके बारे सर्व १८ के दूणे ३६ और धातकीखंड के १२ ये मिलके कालोदधी समुद्रमें ४८. ऐसेही जोड करते २ आगे अढाइद्विपके बाहिरके चंद्र सूर्यकी संख्या सर्व जाणनी और सर्वका परिवार जुदा २ पहले प्रमाणे जाणना.

उंचे लोकका वर्णव.

शनीश्चरके विमानकी ध्वजा पताकासे १॥ राजू उपर १९॥ राजू घनाकार विस्तार जित्नी जगामें पहले दूसरे देवलोककी हद है. जंबूद्विपके मेरुसे दक्षिणदिशामें पहला सुधर्मा देवलोक और उत्तरमें दूसरा ईशाण देवलोक लग्गड (कुंभारके वर्तन रखनेका) जैसा, घनोदधी (जमे पाणी) के आधारसें हैं. पहले देवलोकमें बत्तीस लाख और दूसरे देवलोकमें अढाइ लाख विमान पांचसे २ योजनके उंचे और २७०० योजनकी अंगणाइ (नीव–भूतलीया) हैं. पहले देवलोकके शक्रेंद्रजीकी आठ और दूसरे देवलोकके इशाण इन्द्रजीकी नव अग्रमहिषी–इन्द्राणीयों हैं. पहले देवलोकके देवका जघन्य एक पल्य, उत्कृष्ट दो सागरका आयुष्य है. और परिग्रही (पतिवाली) देवीका जघन्य एक पल्यका, उत्कृष्ट सात पल्यका आयुष्य और अपरिग्रही (वैश्या जैसी) देवीका जघन्य एक पल्य, उत्कृष्ट पचास पल्यका आयुष्य है. ह्याके देवोंको एक पल्यके ही आयुष्यवाली देवी

भोगमें आती हैं. दूसरे देवलोकके देवका जघन्य एक पल्य झाझेरा उत्कृष्ट दो सागरका झाझेरा आयुष्य हैं. इनकी परिग्रह देवीका जघन्य एक पल्य झाजेरा उत्कृष्ट नव पल्यका और अपरिग्रही देवीका जघन्य एक पल्य झाजेरा उत्कृष्ठ पच्चावन पल्यका जिस्मेंसे ह्यांके देवको तो एक पल्य झाजेरे आयुष्यवाली देवी उपभोगमें आती हैं. इन दोनु देवलोकमें मनुष्य जैसे भोग है. * इन दोनु देवलोककी हदसे एक राजू उपर १६॥ राजू घनाकार विस्तार जित्नी जगामें तीसरे चौथे देवलोककी हद है. दक्षिणमें तीसरा सनत्कुमार देवलोक और उत्तरमें चौथा महेन्द्र देवलोक लग्गड के जैसा घनवाय (जमी हवा) के आधारसे हैं. तीसरे देवलोकमें बारे लाख और चौथे देवलोकमें आठलाख विमान छसे २ योजनके ऊंचे और २६०० योजनकी अंगणाइ हैं. तीसरे देवलोकके देवका जघन्य दो सागर उत्कृष्ट सात सागरका आयुष्य हैं. और चौथे देवलोकमें, जघन्य दो सागर झाजेरा उत्कृष्ट ७ सागर झाजेरा आयुष्य हैं. तीसरे देवलोकमें पहले देवलोककी अ-

* दूसरे देवलोकके आगे देवीयोंकी उत्पत्ति नही हैं.

परिग्रही देवी एक पल्यसें एक समय अधिक दश पल्यके आयुष्यवाली और चौथे देवलोकमें दूसरे देवलोककी अपरिग्रही देवी एक पल झाजेरीसे एक समय अधिक पन्नरे पल्यके आयुष्यवाली उपभोगमें आती हैं. ह्यांके देव स्पर्श मात्रसे तृप्त होते हैं. इन दोनु देवलोककी हद्से अर्ध राजू उपर पांचमा ब्रह्म देवलोक और वहांसे आधा राजू उपर छट्टा लांतक देवलोककी २७॥ राजू घनाकार जित्नी जगामें हैं. ये दोनु देवलोक मेरु पर्वतके बरोबर उपर गागर (घडे) बेवडे के जैसे पांचमा घनवायके और छट्टा घनवाय तनवाय दोनुके आधारसे रहे हैं. पंचमेमें चार लाख और छट्टेमें पचास हजार विमान ७०० योजनके उंचे और २५०० योजनकी अंगणाइ हैं. पांचमे देवलोकमें जघन्य सात सागर उत्कृष्ट दश सागरका और छट्टे देवलोकमें जघन्य दश सागर उत्कृष्ट चउदे सागरका आयुष्य है. पांचमे देवलोकमें पहले देवलोककी अपरिग्रही देवी दशपलसें एक समय अधिक बीस पलवाली और छट्ठे देवलोकमें दूसरे देवलोककी पन्नरे पलसे एक समय अधिक पच्चीस पलके आयुष्यवाली देवी भोगमें आती है.

ये देवता देवीका शब्द सुणनेसे ही तृप्त होते हैं. इस पांचमे देवलोककी तीसरी अरिष्ट परतर (मजल) के पास दक्षिण दिशामें त्रसनालके भीतर पृथवी प्रणामरुप कृष्णवर्ण आठ कृष्ण राजी हैं.

नवलोकांतिक देवके नव विमान हैं:—१ इशाण कूणमें अर्ची विमान, जिसमें सारस्वत देव; २ पूर्व दिशामें अर्चीमाली विमान, जिसमें अदित्य देव; [इन दोनुके ७०० देवका परिवार है.] ३ अग्नी कूणमें बैरोचन विमान, जिसमें वन्ही देव; ४ दक्षिण दिशामें प्रभंकर विमान, जिसमें वरुण देव; (इन दोनोके १४००० देवका परिवार है) ५ नैरुत्य कुणमें चंद्राभ विमाण, जिस्में गर्दतोय देव; ६ पश्चिममें सूर्याभ विमान, जिस्में तुषित देव रहते हैं [इन दोनुके सात हजारका परिवार हैं]; ७ वायू

*ह्यांसे असंख्यातमे अरुण वर समुद्रमेंसे अप कायकी महा अन्धकार मय तमस काय १७२१ योजन की चौडी, भींत जैसी नीकलके उपर गइ है. चार देवलोकको उलंघ पांचमे देवलोककी तीसरी प्रतरवास नीचेसें सरावला और उपरसे पींजरे जैसी रही है; असंख्यात योजनमें है. सो कृष्णा राजी है.

कूणमें शुक्राभ विमान, जिसमें अवाबाध देव; ८ उ-त्तरमें सूप्रतिष्ट विमान, जिसमें अग्नी देव; और ९ म-ध्य बीचमें रिष्ठाभ विमान, जिसमें अरिष्ट नामे देव रहता हैं. (इन तीनोके ९००० देवका परिवार है.) ये नव ही देवता एकांत सम्यक् द्राष्टि, श्री तिर्थंकरको दिक्षाके अवसरमें चेतानेवाले, थोडे ही भवांतरसे मोक्ष जानेवाले, लोकके किनारेपे (रहते) हैं, इस लिये 'लोकांतिक' कहे जाते हैं. इनका सर्व अधिकार पांचमे देवलोक जैसा.

छट्टे देवलोककी हद्से पाव राजू उपर सातमा महा शुक्र देवलोक और वहांसे पाव राजू ऊंचा आ-ठमा सहसार देवलोक ये दोनुकी १४॥ राजू घनाकार जित्नी जगामें हद है. ये दोनु घनोदधी घनवायके आधार हैं. सातमेमें चालीस हजार विमान, आ-ठमेमें छे हजार विमान, आठसे योजनके ऊंचे और २४०० योजनकी अंगणाइ हैं. सातमे देवलोकके दे-वताका जघन्य १४ सागरका उत्कृष्ट सतरे सागरका आयुष्य है. और अठामे देवलोकके देवका जघन्य सतरे सागर उत्कृष्ट आठरे सागरका आयुष्य है. सा-नमे देवलोकमें पहले देवलोककी अपरिग्रही देवी वीस

पलसे एक समय अधिक तीसपलके आयुष्यवाली और आठमे देवलोकमें दूसरे देवलोककी अपरिग्रही देवी पच्चीस पलसे एक समय अधिक पेंतीस पलवाली भोगमें आती है. ह्यांके देव, रुप देख तृप्त होते हैं.

आठमे देवलोककी हदसे पाव राजू उपर १२॥ राजू घनाकार जित्नी जगामें दक्षिणमें नवमा 'आण' देवलोक और उत्तरमें दशमा 'पण' देवलोककी हद हैं. ये दोनु देवलोक लग्गडके जैसे आकासके आधारसे हैं. इन दोनु देवलोकमें ४०० विमान ९०० योजनके उंचे और २३०० योजनकी अंगणाइ हैं. नवमे देवलोकके देवका जघन्य १८ सागर उत्कृष्ट १९ सागरका आयुष्य और दशमे देवलोकका जघन्य १९ उत्कृष्ट २० सागरका आयुष्य है. नवमे देवलोकमें पहले देवलोककी अपरिग्रही देवी तीस पलसे एक समय अधिक चालीस पलवाली और दशमे देवलोकमें दूसरे देवलोककी अपरिग्रही देवी पेंतीस पलसे एक समय अधिक पेंतालीस पलवाली उपभोगमें आती है. ह्यांके देव देवीका विकारी मनसे मन मिला तृप्त होता हैं.

इन दोनु देवलोककी हदसे आधा राजू उपर

और १०॥ राजू घनाकार जित्नी जगामें दक्षिणमें इग्यारमे अरुण और उत्तरमें बारमे अच्युत देवलोककी हद है. ये दोनु देवलोक लग्गडके जैसे आकासके आधारसे रहे हैं. इन दोनु देवलोकके ३०० विमान ९०० योजनके ऊंचे और २३०० योजनकी अगणाइ है. इग्यारमे देवलोकके देवका जघन्य २० सागरका, उत्कृष्ट २१ सागरका और बारमे देवलोकका जघन्य २१ सागर, उत्कृष्ट २२ सागरका आयुष्य है. इग्यारमे देवलोकमें पहले देवलोककी अपरिग्रही देवी चालीस पलसे एक समय अधिक पचास पलवाली और बारमे देवलोकमें दूसरे देवलोककी अपरिग्रही देवी पैंतालीस पलसे एक समय अधिक पचावन पलवाली उपभोगमें आती है. ह्या मनसा भोग है.

देवलोकके नाम.	इन्द्रके माम.	सामानीक देव.	आत्मरक्षक देव.	अभ्यंतर प्रषदाके देव.	मध्यप्रषदा के देव.	बाह्यप्रषदा के देव.	चिन्ह.	अवघेणा.
सुधर्मा.	सक्रेंद्र	८४०००	३३६०००	१२०००	१४०००	१६०००	मृग	७ हाथ.
इशाण.	इशाणेंद्र	८००००	३२००००	१००००	१२०००	१४०००	महिषं	७ ,,
सनत्कुमार	शनतकुमारेंद्र	७२०००	२८८०००	८०००	१००००	१२०००	वराह	६ ,,
महेन्द्र	महन्द्र इंद्र	७००००	२८००००	६०००	८०००	१००००	सिंह	६ ,,
ब्रह्म	ब्रह्मेंद्र	६००००	२४००००	४०००	६०००	८०००	बकरा	५ ,,
लांतक	लांतक इंद्र	५००००	२०००००	२०००	४०००	६०००	दादुर	५ ,,
महाशुत्र	महाशुक्रेंद्र	४००००	१६००००	१०००	२०००	४०००	अश्व	४ ,,
सहसार	सहसारेंद्र	३००००	१२००००	५००	१०००	२०००	हाथी	४ ,,
आण पाण	दोनु देवलोक के एक पाणेन्द्र	२००००	८००००	२५०	५००	१०००	सर्प गेंडे	३ ,, ३ ,,
अरण अचुत	दोनुके एक अचुतेंद्र	१००००	४००००	१२५	२५०	५००	वृषभ शाहामृग	३ ,, ३ ,,

इन बारे देवलोकके १० इन्द्रके सात अणिका (शैन्या) होती हैं १ गंधर्व (गानेवाले) की, २ नाटक (नाचनेवाले) की, ३ हाथीकी, ४ घोडेकी–५ रथकी, ६ पायक, ७ वृषभकी, इन एकेकके हजार २ देव होते हैं.

भवन पतिके २० बाण व्यंतरके ३२ ज्योतिषीके २ बारे देवलोकके १० सर्व ६४ इन्द्रके तीन प्रषदा होती हैं. अभ्यंतरकी प्रषदाके देव बुलावे तव आते हैं. मध्यम प्रषदाके देव बुलाये बिना बुलाये दोनु तराह आते हैं. बाह्य प्रषदाके देव बिना बुलाये वक्तपे हाजर रहते हैं. सामान्कि देव सो बरोबरीके उमराव जैसे; आत्म रक्षक देव सो सदा हुकममें रहनेवाले. सब इंद्रके ३३ देव होते हैं सो राजाके पुरोहित जैसे. और चार लोकपाल होते हैं:—पूर्वके सोम नामक, दक्षिणके यम नामक, पश्चिमके वरुण नामक, और उत्तरके वैसमण (कूबेर)नामक, ये चारही दिशाके रखवाले हैं. सर्व इन्द्रोंका उत्कृष्ट आयुष्य होता हैं.

उपरोक्त स्थानमें तीन प्रकारके किल्मीषी देव होते हैं. (१) 'तीन पल्या' तीन पल्के आयुष्यवाले तो भवन पती देवतासे लगाके पहले देवलोक तक (२) 'तीनसागर्या' तीन सागरके आयुष्यवाले चौथे देवलोक तक और (३) तेरसागर्या—तेरे सागरके आयुष्यवाले छट्टे देवलोक तक. ये देव, जैसे मनुष्यमें चाण्डालकी जाति निन्दनिय होती है, तैसे देवताओंमें निन्दनिय, कूरुपे, मिथ्या द्रष्टी, अज्ञानी हैं. ये

तप संयम और धर्मके चोर तथा निंदक मरके होते हैं.

प्रत्येक ठिकाणे जो संख्याते योजनके देवस्थान हैं उसमें संख्याते और असंख्याते योजनके देवस्थान हैं उसमें असंख्याती उपपात [देवताके पेदा होनेकी] शय्या (पलंग) हैं. उसपे एक देव दुष वस्त्र ढांका हुवा होता है.

ह्यां मनुष्य तिर्यंचमें* नियम—व्रत—तप—संयमादि करणी कर वहां उपजते हैं. तब वो शय्या फूलती है (जैसे अंगारपे गहूंकी रोटी). सेज फूलती देख उस विमानवासी देव देवी भेले होके खमा २ करते हैं. वो देव एक मुहुर्तमें पांच प्रजा (आहार, सरीर, इन्द्री, श्वासोश्वास और मन भाषा भेली) बांधके वो वस्त्रसे शरीर ढांकके तरुणवय जैसे बैठे हो जाते हैं. तब दूसरे देव उनको पूछते हैं:—"आपने क्या करणी की थी जिससे हमारे नाथ हुये ?" तब वो देव अवधि ज्ञान** लगाके देखते हैं. पूर्वभव देखके कोइ ह्यां खबर देनेको आनेका इरादा करे. तब वो देव कहते हैं कि, आप वहां जाके ह्यांकी क्या बात

* तिर्यंच आठमे देवलोक तक जाता है. ** देवताको अवधि ज्ञान जन्मसे स्वाभाविक ही होता है.

करोगे ? इसलिये थोडा नाटक देखके पधारो. तब नाटककी अणिकाके देव वामी भूजासे १०८ कुंवर और डावी भूजासे १०८ कन्या वैक्रिय कर ४९ बाजिंत्र युक्त बत्तीस प्रकारका मनोहर नाटक पाडते हैं. एक घडीके सामान्य नाटकमें ह्यांके २००० वर्ष बीत जाते हैं. फिर देवता वहां सुखमें लुब्ध होके पुन्यफल भोगवनेमें ही लग जाते हैं.

इग्यारमे–बारमे देवलोककी हद एक राजू उपर आठ राजू घनाकार जित्नी जगामें नवग्रीवैककी हद हैं. नवही गागर वेवडेके जैसे एकेक के उपर आकाश के आधारसे हैं. इन तीनहीकी तीन त्रिक करी हैं. पहले त्रिकमें १ भद्दे, २ सुभद्दे, ३ सुजाए, इन तीन ग्रीवेकके १११ विमान हैं. दूसरी त्रिकमें ४ सुमाणस, ५ सुदंशण, ६ प्रियदंशण, इन तीनीके १०७ विमान है. तीसरी त्रिकमें ७ अमोह ८ सुपडिभद्दे. ९ सुजसोधर. इन तीनीके १०० विमान हैं. ये विमान १००० योजनके उंचे और बावीससे योजन की अंगणाइ हैं. ह्यांके देवताकी दो हाथकी अवघेणा है. इन देवको भोगकी इच्छा नहीं होती है. आयुष्य यंत्र प्रमाणेः—

नवग्रीवेक के नाम.	भद्दे	सुभद्दे	सुजाए	सुमाणस	सुदंसण	प्रिय दंसण	आमोह.	सुपडिभद्दे	जसोधर
जघन्य आयुष्य	२२ सागर	२३ ,,	२४ ,,	२५ ,,	२६ ,,	२७ ,,	२८ ,,	२९ ,,	३० ,,
उत्कृष्ट आयुष्य	२३ सागर	२४ ,,	२५ ,,	२६ ,,	२७ ,,	२८ ,,	२९ ,,	३० ,,	३१ ,,

नव ग्रीवेककी हदसे एक राजू उपर ६॥ राजूके विस्तार जित्नी जगामें पांच अनुत्तर विमानकी हद है. पांचही आकासके आधारसे हैं, १ विजय २ विजयंत. ३ जयंत. ४ अपराजित. ये चारही चार दिशामें अर्ध चंद्रमाके असंख्यात योजनके लंबे चौडे हैं. और चारहीके मध्यमें संपूर्ण चंद्रमा जैसे गोल एक लाख योजनका लंबा चौडा है. ये पांचही विमान ११०० योजनके ऊंचे और २१०० योजनकी अंगणाइ हैं. चार अनुत्तर विमानके देवताका जघन्य ३१ सागर, मझम ३२ सागर, और उत्कृष्ट ३३ सागरका आयुष्य है. और सर्वार्थ सिद्धका जघन्य उत्कृष्ट ३३ सागरका आयुष्य है. पांचहीके एक हाथकी अवघेणा. सर्व विमानोंसे ये पांच विमान श्रेष्ट हैं, इसलिये 'अनुत्तर विमान' नाम है. सर्वार्थ सिद्ध विमान के मध्य बीचमें छतमें एक मोतीका चंद्रवा है,

उसमें सर्वके मध्यका एक मोती ६४ मणका है. उसे चारही तर्फ चार मोती बत्तीस २ मणके हैं. उस्के पास आठ मोती सोले २ मणके हैं. उसके पास सोले मोती आठ २ मणके हैं, उसके पास बत्तीस मोती चार २ मणके हैं, उसके पास ६४ मोती दो २ मणके हैं, उसके पास १२८ मोती एकेक मणके हैं. सर्व २५६ मोतीका झुमका अति शोभनीक है. हवासे मोतीसे मोती अथडाय तब उसमेसें अनेक राग रागणी निकलती हैं. सर्व विमानवासी देवताको अपने २ सिरपे दिखता है, जैसे अपने सिरपे मध्यान्हका सूर्य दिखता है. ह्यां एकांत शुद्ध संयम पालनेवाले चौदे पूर्वके पाठीं साधू उपजते हैं. सदा ज्ञान ध्यानमें मग्न रहते हैं. किसी प्रकारका संदेह पडे तो वांहासे श्री तिर्थंकरजीको वंदनाकर प्रश्न पूछते हैं. श्री तिर्थंकर भगवान उत्तर देते हैं सो वो अपने मनमें समज जाते हैं. सर्व पुद्गली सुखसे ह्यां अनंत गुणा अधिक सुख है.

ये नवग्रीवेक और पांच अनुत्तर विमानवासी देव अहमेन्द्र हैं अर्थात् इनके सिरपे कोइ मालक नहीं है. ह्यां उत्पत्ति स्थान तो देवलोक जैसा ही है,

परंतु सामानीक, आत्म रक्षक, प्रपदा, नाटक चेटक कुच्छ नहीं है. सर्व अपने २ ज्ञानमें मग्न हैं.

जिस देवताका जित्ना सागरका आयुष्य है उन्हे उत्नेही हजार वर्षमें आहारकी इच्छा होती हैं, तब वो रोम २ से शुभ २ रत्नोंके पुद्गल खेंचलेके तुर्त तृप्त हो जाते हैं. और उत्नेही पक्षमें श्वासोश्वास लेते हैं. जैसे सर्वार्थ सिद्धमें ३३ सागरका आयुष्य है, उन देवको ३३ हजार वर्षमें भूख लगती है, और ३३ पक्षमें श्वास लेते हैं.

ये सर्व छव्वीस स्वर्गके विमान ८४९७०२३ हुवे. सर्व विमान रत्नमय अनेक स्थंभ और अनेक चित्रसे युक्त है. अनेक खूटी, अनेक पूतलीयों, लीला युक्त शोभनीक हैं. मघमघायमान सुगंध महकती हैं. महेलोंके चारही तर्फ बगीचें हैं, जिनमें रत्नोंकी वाव और रत्नोंके अति सुन्दर वृक्षादि है, वो हवासें हले तब अनेक राग रागणी निकलती हैं. बागमें सोने चांदीकी रेती बिछी है. अनेक आसन पडे हैं. वहां देवता पुन्यफल भोगवते बीचर रहे हैं.

॥ इति देवगति वर्णव. ॥

सर्वार्थ सिद्धकी हदसे तेरे योजन उपर ११

राजूके विस्तार जित्नी जगामें बाकी रहा सो सर्व लोक है.

सर्वार्थ सिद्धकी धजा पताकासे १२ योजन उपर सिद्ध शिला अरजुन (श्वेत) सोनेमें पेंतालीस लाख योजनकी लंबी चौडी मध्यमें आठ योजनकी जाडी, चारों तर्फ कमी होती २ किनारे पर अंगुलके अंसख्यातमे भाग पतली, सीधे छत्र तथा तेल पूरित दीवे जैसी संस्थासे संस्थित, मक्खनसे भी अधिक सुहाली, अति ही निर्मल है. इस्की १४२-३०२४९ योजन सो झाजेरी परधी हैं. इसके १२ नाम हैं. (१) इसीतीवा (छोटी), [२] इसीपभारेतिवा (बहूत छोटी), (३) तणुतिवा (पतली), ४ तणुपभारेतिवा (बहूत पतली) ५ सिद्धी तिवा (सिद्ध स्थान), ६ सिद्धालयतिवा (सिद्धका घर), ७ मुत्तितिवा (मुक्ति स्थान), ८ मुत्तालयतिवा (मोक्ष घर), ९ लोयग्रेतिवा (लोकाग्रे रही), १० लोयग दुसिया तिवा [प्राप्त होनी दुर्लभ], ११ लोयग पडि वुझमाण तिवा [शांती देनेवाली], १२ सव्व प्राणभूत जीव सत्व सुहावाहातिवा (सर्वको सुख देनेवाली).

इस सिद्ध सिलाके उपर एक योजनके उपरके कोशके छट्टे भागमें शुद्ध मनुष्य लोकके उपर पेंतालीस लाख योजन जित्नी लंबी चौडी और ३३३ धनुष्य ३२ अंगुल जित्नी उंची जगामें अनंत सिद्ध भगवंत बिराजते हैं.

ये तीन लोकके ३४३ राजू* घनाकार राजू

---

* घनाकार ३४३ राजूका हिसाबः—

निगोदसे सातमी नर्क तक घनाकार राजू					४६
सातमी नर्क से छठी नर्क तक			,,	,,	४०
छठी	,, ,,	पंचमी ,,	,,	,,	३४
पंचमी	,, ,,	चौथी ,,	,,	,,	२८
चौथी	,, ,,	तीसरी ,,	,,	,,	२२
तीसरी	,, ,,	दूसरी ,,	,,	,,	१६
दूसरी	,, ,,	पहली ,,	,,	,,	१०
त्रीछा लोकके			,,	,,	१०
पहला	दूसरा	देवलोक	,,	,,	१९॥
तीसरा	चौथा	देवलोक	,,	,,	१६॥
पाचमा	छठा	देवलोक	,,	,,	३७॥
सातमा	आठमा	देवलोक	,,	,,	१४॥
नवमा	दशमा	,,	,,	,,	१२॥

और ऊंचे १४ राजू जिसमें एक राजूकी चौडी और १४ राजूकी ऊंची जित्नी जगामें त्रस स्थावर दोनु जीव भेले भरे हैं. बाकी सर्व लोककी जगामें स्थावर जीव खीचोखीच भरे हैं. इस्के उप्रांत अनंत अलोक हैं, जिसमें फक्त एक आकाश (पोलाड) भरा है.

॥ इति तीनं लोकका यत्किंचित् वर्णव. ॥

पन्नरे प्रकारके सिद्ध.

सिद्ध क्षेत्रमें सिद्ध पन्नरे प्रकारसे होते हैंः—

१ तीर्थंकर सिद्धा—तिर्थंकरकी पदवी भोगवके सिद्ध होवे. २ अतिर्थंकर सिद्धा—सामान्य केवली सिद्ध

इग्यारमा बारमा	,,	,,	,,	१०॥
नवग्रीवेग		,,	,,	८॥
अनुत्तर विमान		,,	,,	६॥
सिद्ध क्षेत्र		,,	,,	११
सर्व लोकके		घनाकार राजू		३४३

होवे. ३ तीर्थ सिद्धा–तीर्थ (साधू–साध्वी–श्रावक –श्राविका) में से सिद्ध होवे. ४ अतीर्थ सिद्धा+ तीर्थका विच्छेद होवे उस वक्त जाति स्मरणादिक ज्ञानसे बोध पाके सिद्ध होवे. ५ स्वयंबुद्ध सिद्धा–स्वतः (गुरुविना) जाति स्मरणादि ज्ञानसे पूर्व भवका संबंध देखके स्वतः दिक्षा लेके सिद्ध होवे. ६ प्रत्येक बुद्ध सिद्धा–वृक्ष, वृषभ, स्मसान, बादल, वियोग, रोग इत्यादिक देखके अनित्यादि भावसे स्वयमेव दिक्षा ले सिद्ध होवे. ७ बुद्ध बोधित सिद्धा–आचार्यादिकके प्रतिबोधसे दिक्षा ले सिद्ध होवे. ८ स्त्री लिंग सिद्धा–स्त्री वेद (बीकार) का क्षय करे, फक्त अवयव रुप स्त्री लिंग रहे वो दिक्षा ले सिद्ध होवे. ९ पुरुष लिंग सिद्धा-ऐसे ही पूरुष विषय वांछा त्याग दिक्षा ले सिद्ध होवे. १० नपुंसक लिंग सिद्धा–ऐसे ही नपुंसक वेद क्षय हुये फक्त लिंग (रुप) रहे सो दिक्षा ले सिद्ध होवे. ११ स्वलिंग सिद्धा–जो रजोहरण मुहपति आदिक

+इस चौवीसीके नवमे सुबुधीनाथ भगवानसे सत्तरमे कुंथुनाथ भगवान तक मोक्ष पधारे पीछे बीचमें तीर्थका विच्छेद होताथा उस वख्त जो सिद्ध होवे सो अतीर्थ सिद्ध.

साधूका लिंग धार तुर्त प्रणामकी विशुद्धि होनेसे सिद्ध होवे. १२ अन्य लिंग सिद्धा—अन्यमतके विषे कि-सीको अज्ञान तपसे विभंग ज्ञान उत्पन्न होवे, उससे जैन साधूकी क्रिया देख अनुराग जगे, जैन शैली आवे, तब विभंग ज्ञान फिट अवधि ज्ञान होवे, ज्यों ज्यों प्रणामकी विशुद्धि होती जाय त्यों त्यो ज्ञानकी वृद्धि होते २ परम अवधि (सर्व लोक और लोक जैसे अलोकमें असंख्य खंडवे देखे) की तुर्त चार घन घातिक कर्म खपा केवली होके मोक्ष पधार जाय. (जो आयुष्य जास्ती होता तो लिंग बदलते.) यह अन्य लिंग सिद्धा. १२ ग्रहलिंग सिद्धा—गृहस्थी धर्म क्रिया करते प्रणामकी विशुद्धता होते तूर्त केव-लले मोक्ष पधारे, आयुष्य थोडेके कारण भेष (लिंग) नहीं बदल सके, सो ग्रह लिंग सिद्धा. १४ एक सिद्धा-एक समयमें एक ही सिद्ध होवे सो एक सिद्धा १५ अनेक सिद्धा—एक समयमें दोसें लगा कर एकसो आठ तक सिद्ध होवे सो अनेक सिद्धा.

चउदे प्रकारे सिद्ध.

१ तीर्थ प्रवर्ते उस वक्त एकसो आठ सिद्ध

होवे * २ तीर्थंका विच्छेद हुये दश सिद्ध होवे. ३ तीर्थंकर बीस सिद्ध होवे. ४ सामान्य केवली एकसो आठ सिद्ध होवे. ५ स्वयं बुद्ध १०८ सिद्ध होवे. ६ प्रत्येक बुद्ध ६ सिद्ध होवे. ७ बुद्ध बोधित १०८ सिद्ध होवे. ८ स्वलिंग १०८ सिद्ध होवे. ९ अन्यलिंग दश सिद्ध होवे. १० गृहस्थलिंग ४ सिद्ध होवे. ११ स्त्री-लिंग २० सिद्ध होवे. १२ पूरुषलिंग १०८ सिद्ध होवे १३ नपुंसकलिंग दश सिद्ध होवे. १४ सर्व भेले उत्कृष्ट एक समयमें १०८ सिद्ध होवे.

पहली–दूसरी–तीसरी नर्कके निकले दश सिद्ध होवे. चौथी नर्कके निकले ४ सिद्ध होवे. पृथवी पाणी के निकले ४ सिद्ध होवे. वनस्पतिके निकले ६ सिद्ध होवे. पचेंद्री गर्भज तिर्यंच तिर्यंचणी और अनुष्यके आये दश सिद्ध होवे. मनुष्यणीके आये २० सिद्ध होवे. भवनपति वाणव्यंतर ज्योतिषी देवताके निकले १० सिद्ध होवे. भवनपति वाणव्यंतरकी देवीके निकले ५ सिद्ध होवे. ज्योतिषीकी देवीके निकले २० सिद्ध होवे. विमानीक देवके निकले १०८ सिद्ध होवे.

---

* ये सर्व बोल १ समय आश्री जाणना. एक समयमें इतने सिद्ध होय.

विमानिककी देवीके निकले २० सिद्ध होवे.

ऊंचे लोकमें ४ सिद्ध होवे, नीचे लोकमें २०, त्रीछे लोकमें १०८, समुद्रमें २* नदी प्रमुखमें ३* प्रत्येक विजयमें जूदे जूदे २० (तोभी १०८ से ज्यादे नहीं होवे), मेरु पर्वतपे भद्रशाल नंदन सोमानस वनमें ४, पडंग वनमें २, अकर्म भूमीमें १०* कर्म भूमीमें १०८, पहले—दूसरे—पांचमे—छट्टे आरेममें* १०, तीसरे चौथे आरेमें १०८, जघन्य अवघेणा (२ हाथ * *वाले) ४, मध्यम अवघेणावाले १०८, उत्कृष्टी (५०० धनुष्यकी) अवघेणावाले २ सिद्ध होवे.

इस मध्य लोकके पन्नरे कर्म भूमीके क्षेत्रमें आठही कर्मका क्षय कर, उदारिक—तेजस—कारमण सरीरको सर्वथा छोड, जैसे एरंडका फल फटनेसे उस्का बीज स्वभावसे ही उडके ऊंचा जाता है तथा तूंबेको पत्थर बांध पाणीमें डाला वो बंधन टूटनेसे ऊंचाही जाता है तथा अग्नीमेंसे धूम्र ऊंचाही जाता है, तैसेही कर्मबंधनसे मुक्त हुवा जीव शिघ्र सिद्ध

*ये ४ ही ठीकाणे कोइ देवता किसीको उठाके डाल देवे और वो मुक्ति जावे इस आश्री जाणना.

* * वावना संठाणवाला सिद्ध होवे तो.

श्रेणी उर्धगती जित्ने आत्माके प्रदेश है उत्नेही आकाश प्रदेशका अवलंबन करते विग्रह (बांकी) गति रहित, एक समय मात्रमें सिद्ध शिलाके उपर लोकके अग्र भागमें जाके ठेरते हैं.

सिद्ध स्थानमें ह्यांसे तीसरे भाग हीणी (कमी) अवघेणा रह जाती है, अर्थात् ह्यां आत्माके और जीवके प्रदेश क्षीर नीरकी तरहसे मिल रहे है. जब सिद्ध अवस्था प्राप्त होती है तब कैवल्य आत्माके प्रदेशही घनरुप होके रह जाते हैं. तब ह्यांके सरीरसे वांहा तीसरे भाग कमी अवघेणा रहती है. जैसे ह्यांसे जो पांचसे धनुष्यकी अवघेणावाले सिद्ध हुये हैं उन्की वांहा तीनसे तेंतीस धनुष्य और बत्तीस अंगुलकी उत्कृष्टी अवघेणा रहती है. जो सात हाथकी अवघेणावाले सिद्ध हुये हैं उन्की वांहा चार हाथ सोले अंगुलकी अवघेणा रहती है. और जो दो हाथ (वावना संस्थानी) वाले सिद्ध उनकी वांहा एक हाथ चार अंगुलकी आत्म प्रदेशकी निराकार अवघेणा रहती है.

सिद्ध भगवानके आठ गुण.

१ ज्ञानावरणीय कर्मके क्षय होनेसे अनंत

ज्ञानी हुये, जिससे लोकालोककी सर्व रचना जानते हैं. २ दर्शनावरणीय कर्मके क्षय होनेसे अनंत दर्शी हुये. सर्व लोकालोकका स्वरुप हस्तावलकी तरह देख रहे हैं. ३ वेदनीय कर्मके क्षय होनेसे निराबाध (व्याधि-वेदना रहित) हुये. ४ मोहनीय कर्मके क्षय होनेसे अगुरु लघू (भारीपणे हलकेपणे रहित) हुये. ५ आयुष्य कर्मके क्षय होनेसे अजरामर (वृद्ध-पणे रहित और मृत्यू रहित) हुये. ६ नाम कर्मके क्षय होनेसे अमूर्ती (निराकार) हुये. ७ गोत्र कर्म क्षय होनेसे खोड (अपलक्षण-दोष) रहित हुये. ८ अंतराय कर्मके क्षय होनेसे अनंत शक्तिवंत (खामी रहित) हुये.

सिद्ध भगवान कैसे हैं ?

श्री आचारांग सूत्रमें कहा है किः-

॥ सव्वे सरा णिअडंति, तक्का जत्थ ण विज्जाति, मती तत्थ ण गाहिता, ओए अप्पाति ठाणस्स खेयन्ने ॥ अध्ययन ५-उद्देश ६-गाथा ३३०

अर्थः-सिद्धकी अवस्थाको वर्णन करनेको कोइ भी शब्द समर्थ नहीं है, कल्पना उधर जा सकती ही नहीं है; मति उधर पहोंच सकती नहीं है. वहां सकल रहित आत्मा ही संपूर्ण ज्ञानमय विराजमान है.

॥ से ण दीहे, ण हस्से, ण वट्टे, ण तंसे, ण चउरंसे, ण परिमंडले, ण किन्हे, ण णीले, ण लोहिए, ण हालिद्दे, ण सुकिल्ले, ण सुरहिगंधे, ण दुरहिगंधे, ण तित्ते, ण कडुए, ण कसाते, ण अंबिले, ण महुरे, ण कक्खडे, ण मउए, ण गरुए, ण लहुए, ण सीए, ण उण्हे, ण णिद्धे, ण लुक्खे, ण काउ, ण रुहे, ण संगे, ण इत्थी ण पुरिसे, ण अन्नहा, परिण्णे, सण्णे ॥ ३३१ ॥

मुक्ति स्थित जीव नहीं है दीर्घ (लंबा), नहीं ह्रस्व (ठुंका), नहीं गोलाकार, नहीं त्रिकोणाकार, नहीं चतुष्कोणाकार, नहीं मंडलाकार; नहीं काला–नीला–रक्तवर्णी–पीला–श्वेत; नहीं सुगंधी–दुर्गंधी; नहीं तीखा–कडुआ–कसायला–खट्टा–मिट्टा; नहीं कर्कश–सुकुमाल, नहीं भारे–हलका–ठंडा–गरम–स्निग्ध–रुक्ष; नहीं शरीरवाला, नहीं जन्म धरनेवाला, नहीं संग पानेवाला, नहीं स्त्री रुप, नहीं पुरुष रुप, नहीं नपुंसक रुप.

उवमा ण विज्जती । अरुवी सत्ता । अपयस्स पयणात्थि ॥ ३३२ ॥ से ण सद्दे, ण रुवे, ण गंधे, ण रसे, ण फासे, इच्चेतावंति त्ति बेमि ॥ ३३३ ॥

मुक्त जिवोंके लिये कोइ उपमा ही नहीं, क्युं कि वो तो अरुपी हैं, उन्को अवस्था विशेष भी नहीं है, इस लिये उन्का वर्णन करनेकी कोइ शब्दमें शक्ति नहीं है. वो नहीं है शब्द रुप, नहीं रुप रुप, नहीं गंध रुप, नहीं रस रुप, और नहीं है स्पर्श रुप.

श्री भक्तामर स्तोत्रमें कहा है किः—

त्वामव्ययं विभुमचिंत्यमसंख्यमाद्यम् ।
ब्रह्माणमीश्वरमनंतमनंगकेतुम् ॥
योगीश्वरं विदितयोगमनेकमेकम् ।
ज्ञानस्वरुपममलं प्रवदंति संतः ॥ २४ ॥

अर्थात्ः—हे प्रभो ! संत पुरुषों आपको अव्यय (स्थिरैकस्वभावी), विभु [परम ऐश्वर्य युक्त], अचिन्त्य [जिसकी कल्पना न होसके ऐसा] असंख्य (गुणोंसे असंख्य), आद्य, ब्रह्म, ईश्वर, अनंत [अंत नहीं है जिस्का], अनंगकेतू [कामदेवका नाश करनेवाला], योगीश्वर, विदितयोग [ज्ञान दर्शन—चारित्र रुप योग जिन्को विदित है], अनेक [ज्ञानसे सर्वगत हो इस लिये सर्वव्यापक हो. अर्थात् पर्यायसे अनेक हो], एक [अनन्य स्वरुप], ज्ञान स्वरुप, अमल (अष्टादश दोष रहीत) कहते हैं. ऐसे श्री सिद्ध भगवंतको मेरा त्रिकाल नमस्कार हो !

॥ इति परमपूज्य श्री कहानजी ऋषिजीके संप्रदायके
बालब्रह्मचारी मुनी श्री अमोलख ऋषिजी विरचित
श्री "जैनतत्व प्रकाश" ग्रंथका "सिद्ध"
नामक दुसरा प्रकरण समाप्तम् ॥

प्रकरण ३ रा.

आचार्य.

पुस्तकके मंगलाचरणमें अरिहंत, सिद्ध और संयतिः ये तिन पदको नमस्कार किया है, जिसमेंसे अरिहंत और सिद्धका वर्णन तो किया गया, अब रहा संयतिका बयान. संयतिकी सामान्य व्याख्या ऐसी है कि, " स्वयं आत्मानम् जयति इति संयाति " अर्थात अपनी आत्माको वशमें करें उनको संयति कहना. ' याति ' शब्दमें ' यम् ' धातु है कि जिस्का अर्थ काबुमें रखना (to restrain) ऐसा होता है. नरक-तिर्यंचादि स्थितिमें परवश्यताके लिये तो हरएक जीव दुःख सहते है, परंतु शक्तिमान् मनुष्य हो कर क्षुधा-तृषादिक कष्ट सह कर आत्माको अपने काबुमें ल्यानेवाले ' संयाति ' तो थोडे ही होते हैं.

'संयति' ३ प्रकारके हैं:—आचार्य, उपाध्याय और साधुजी. इस प्रकरणमें आचार्यजीका ही वर्णन किया जायगा.

'आचार्य' उनको कहे जाते है कि जो आदरने योग्य--अंगिकार करने योग्य वस्तुको आप तो अंगिकार करे और दूसरेको करावे. आचार्यजीके ३६ गुण हैं:—

गाथा.

पंचिंदिय संवरणो, तह, नवविह बंभचेर गुत्ति धरो ॥
चउविह कसाय मुक्को, इह अठारस गुणेहिं संजुत्तो ॥ १ ॥
पंच महव्वय जुत्तो, पंच विहायार पालण समत्थो ॥
पंच समिइ तिगुत्तो, छत्तीस गुणो गुरु मझ्झ ॥ २ ॥

पांच महाव्रत, पांच आचार, पांच समिति, तीन गुप्ति कर सहित पांच इंद्रि वस करे, नव वाड विशुद्ध ब्रह्मचर्य पाले, चार कषाय वर्जे : ये ३६ गुण संयुक्त होवे उनको आचार्य [गुरु] कहना.

पांच महाव्रत.

(१) "सव्वं पाणाइ वायाउं वेरमणं"—सर्व प्रकारे प्राणातिपात [जीवहिंसा] से निवर्ते.

दश प्राणके धरणहारको प्राणी कहना:-(१) श्रोतेन्द्रि [कान], (२) चक्षु इन्द्रि [आंख], (३) घाणेंन्द्रि [नाक], (४) रसेन्द्रि [जीव्हा], (५) स्पर्शेन्द्रि [त्वचा], (६) मन, (७) बचन, (८) काया, (९) श्वासोश्वास, (१०) आयुष्य. ये १० प्रकारका प्राणीयोंको बल-जोर है.

इस्मेंसे एकेन्द्रिय [पृथ्वी पाणी अग्नि वायु वनस्पति] में प्राण ४. (१) स्पर्षेन्द्रि (२) काया (३) श्वासोश्वास (४) आयुष्य. बेन्द्रिय [काया और मुख दो इन्द्रि होवे उन] में ६. (५) रसेन्द्रि और (६) बचन जास्ती हुवा. तेन्द्रिय (नाक जास्ती) में ७ प्राण. (७) नाक बधा. चौरेन्द्रियमें ८ प्राण. (८) आंख बधी. असन्नी पचेन्द्रिय (जो समुर्छिम-स्त्रीपुरुषके संयोग बिना पेदा होते हैं सो जीव) में ९ प्राण. (९) कान बधे. सन्नी पचेन्द्रिय (नर्क देव तथा मात पिताके संयोगसे पेदा हुवा मनुष्य-तिर्यंच) १० प्राण. (१०) मन बधा. इन १० प्राणके धरनेवाले प्राणीयोंका सर्वथा प्रकारे त्रिविध त्रिविध (९ कोटिसे) बध करे नहीं-करावे नहीं और करनेवालेको अच्छा जाने नहीं, मन-बचन-कायासे.

पहले महाव्रतकी पांच भावना.

'इरिया सम ही भावना.'-खाने-पहरनेकी वस्तु बीना देखेनहीं वापरेतथा चलती वखत देखके चले.

(२) 'मनपरिजाणाइ भावना.'—शत्रु—मित्र, धर्मी-अधर्मी इन सबपे समभाव रक्खे. जो धर्म करे उनको भला जाने, और जो पाप करे उन्की दया लावे कि बीचारे पापका बदला कैसे मुश्केलसे सहन करेंगे !

(३) 'वत्ति परिजाणाइ भावना.'—हिंसक असत्य सदोष अयोग्य बचन नहीं बोले.

(४) 'आयण भंड निक्खेवणा भावना.'— भंड-उपगरण-वस्त्र-पात्र यत्नासे वापरे.

(५) 'आलोइ पाण भोय भावना'--वस्त्र--पात्र -भोजन इत्यादि नित्य देखके वापरे.

पहले महाव्रतके ३६ * भांगे.

चार प्राणसे लगा कर दश प्राण तकके धरणहारको 'प्राणी' कहते हैं परन्तु ह्यां विशेषमें

* पहले महाव्रतके नीचे लीखे मुजब ८१ भांगे भी हो सकते हैः—पृथ्वी, अप, तेउ, वाउ, वनस्पति, वेन्द्रिय, तेन्द्रिय, रेन्द्रिय,पचेन्द्रिय ये ९को ९ कोटिसे गीणते ९×९=८१ होते हैं.

(१) ' प्राण ' बेन्द्रिय-तेन्द्रिय-चौरेन्द्रियको ' प्राणी ' कहा जाता है, क्यों कि उन्की मुख-नाक-आंख इन प्राणोंके विशेषणसे ही पहीचान होती है. (२) 'भूत.' भूतादिक त्रिकालमें जो एकसा रहैं उसे भूत कहते है, परन्तु ह्यां विशेषमें वनस्पतिको 'भूत' कहते है, क्यों कि यह त्रिकालमें एक ही जगाह रहती है. (३) " जीव. " सदा जीवता रहै-किसीका मारा मरे नहीं उसे जीव कहते हैं. सो सब जीव अमर हैं, जीवका विनास नहीं है, फक्त शरीरका विनास है. परन्तु ह्यां विशेषमें पचेन्द्रियको जीव कहा है, क्यों कि सब लोक पचेन्द्रियको ही जीव मानते हैं; होस्पीटल, धर्मशाला, पींजरापोल वगैरा करके जीवरक्षण करते हैं. (४) ' सत्व. ' सर्व जगतमें एक जीव ही सत्व है परंतु ह्यां विशेषमें पृथ्वी-पाणी-अग्नि-वायुको सत्व [मूल पदार्थ] कहा है, क्यों कि पृथ्वी आधारभूत है. पाणी तो जीवन रूप ही है, अग्नि पचनादिक क्रियामें उपयोगी है, वायुसे श्वासोश्वास और शुद्धि होति है; दुसरा कारण ये भी है कि, विष्णुवाले इन चारोंको ' तत्व ' कहते हैं, इन चार ही से शरीर बना बताते हैं. पृथ्वीकी

अस्थी (हड्डी) आदिक, पाणीका मुत्र-प्रस्वेद आदिक, अग्निका जठरादिक, वायुका श्वासोश्वास; और पंचमा आकाश मिलाके पांच तत्व कहते हैं.

प्राण—भूत—जीव—सत्व ये चारको ९ कोटीसे नव गुणे करनेसे ३६ हुए; ये पहले महाव्रतके ३६ भांगे हुए.

दुसरी तराहसे भी पहले महाव्रतके ३६ भांगे हो सकते हैं:—शूक्ष्म[१], बादर[२], त्रस,[३] और स्थावर[४] ये चार प्रकारके जीव, इन्को ९ कोटिसे नव गुणे करनेसे ३६ भांगे हुए.

ये सब वर्णन पहला महाव्रत ' सव्वं पाणाइ वायाउं वेरमणं ' नामक महाव्रतका हुआ. अब दुसरा महाव्रत.

" सव्वं मुसाइ वायाउ वेरमणं "--सर्वथा प्रकारे मृषावाद (झुंठ बोलने) से निवर्ते. क्रोध-

---

१ शूक्ष्म जीव इतने छोटे हैं कि जो द्राष्टिमें नहीं आ सकते. वो किसीके मारे मरते नहीं है, वज्रमय भींतमेंसे भी नीकल शकते हैं ३४३ राजू रूप संपुर्ण लोकमें ठसाठस भरे हैं. २ जो प्रत्यक्ष द्रष्टिमें आते है ऐसे जीवको वादर कहते है. ३ बेन्द्रियादिक हलते—चलते जीवोंको 'त्रस' जीव कहते है. ४ पृथ्वी आदि पांच ही को स्थावर कहते है.

लोभ-भय-हंसी ये चारोंके वस हो झूठ बोले नहीं-बोलावे नहीं-बोलतेको भला जाने नहीं, मन-वचन-कायासे.

दुसरे महाव्रतकी पांच भावना.

(१) 'अणु वीय भासी'—विचारके बोले; अर्थात् बोलनेके पहले मनमें ऐसा सोचे कि इस मेरे बोलनेसे मेरी या दुसरेकी आत्माको कुछ तकलीफ (दुःख) तो न होगी-बूरा तो न लगेगा. ऐसा विचारके निर्दोष-मधुर और कार्य पडे इतना ही बोले.

(२) 'कोहं परिजाणाइ'—क्रोधके वसमें हो न बोले. क्रोधके जोसमें झूठ बोला जाता है इस लिये मुनीको क्रोध करना ही नहीं और जो क्रोध आवे तो तूर्त क्षमा करे.

(३) 'लोभं परिजाणाइ'—लोभके वसमें हो न बोले. लोभ (तृष्णा) में झूठ बोला जाता है इस लिये कभी तृष्णा आवे तो तूर्त संतोष धारण करे.

(४) 'भयं परिजाणाइ'—भयके वस हो न बोले; क्युं कि जब भय (डर) पैदा होता है तब सत्यासत्यका विचार नहीं रहता है. इस लिये भय आनेसे धैर्य धारण करे.

(५) 'हासं परिजाणाइ'-हांसीके वस न बोले; हांसी आवे तब मौन [चूपकी] धारण करे.

क्रोध-लोभ-भय और हंसी ये चार कारणसे न बोलना, इनको ९ कोटिसे ९ गुणे करनेसे दुसरे महाव्रतके भी ३६ भांगे होते हैं. अब तीसरा महाव्रत.

३. " सव्वं अदीन्नं दाणा उ वेरमणं "-अर्थात् सर्व प्रकारे, बिना दीयी हुइ वस्तुसे निवर्ते. ग्राम-नगर और रण (जंगल) ये तीनो स्थलमें ६ प्रकारकी वस्तुकी चौरी करे नहीं. (१) 'अपं वा' अर्थात् अल्प-थोडी वस्तुकी अथवा अल्प मुल्यकी वस्तुकी, (२) ' बहुअं वा ' अर्थात् बहोत वस्तुकी अथवा बहु मुल्यकी वस्तुकी, (३) ' अणु वा ' अर्थात् छोटी वस्तुकी, (४) ' स्थुलं वा ' अर्थात् बडी वस्तुकी, (५) ' चितमत्तं वा ' अर्थात् सचेत-जीवसहित वस्तुकी, (६) ' अचितमत्तं वा ' अर्थात् अचेत -निर्जीव वस्तुकी. इन ६ प्रकारकी वस्तुकी चौरी करे-करावे नहीं और करतेको भला जाने नहीं, मन-वचन-कायासे.

अदत्तके और भी ४ प्रकार होते हैंः (१) स्वामी अदत्त अर्थात् कोइ वस्तु या मकान उस्के मा-

लीकको बीना पूछे लेवे सो; (२) जीव अदत्त अर्थात् हिंसा (क्यों कि कोइ जीव ऐसी रज़ा नहीं देता है के मेरा वध करो.); (३) तीर्थंकर अदत्त अर्थात् तीर्थंकर भगवानने शास्त्रमें साधूका कल्प [आचार] कहा है उसे उल्लंघ के भेष बनावे तथा आहार-वस्त्र-मकान सदोष भोगवे सो; (४) गुरु अदत्त अर्थात् गुरुकी आज्ञाका उल्लंघन करे अथवा बिना आज्ञा कुछ काम करे सो. इन चारों प्रकारकी चौरीसे साधू निवर्ते.

तीसरे महाव्रतकी पांच भावना.

(१) 'मिउग्गाहजाती'-निर्दोष स्थानकमें रहनेके लिये मकानके मालककी या नौकरादिककी आज्ञा ले के भोगवे.*

(२) 'अणुणविहपाण भोयणे मोती'-गुरु तथा बडे साधूकी आज्ञा बिना आहार प्रमुख कोइ वस्तु वापरे नहीं.

---

* जंगलमें जो दुसरा आज्ञा देनेवाला न होवे और जो अप्रतित उपजे ऐसी वस्तु न होवे तो सक्रेन्द्रजीकी आज्ञा लेके वापरे.

(३) ' उग्गहं सिउग्गाहितंसी. '-नित्य प्रत्ये काल-क्षेत्रकी मर्यादा बांधे-आज्ञा लेवे.

(४) " उग्गहं वउग्गाहिंसा अभीखणं २ "— सचेत (शिष्यादिक), अचेत (तृणादिक) मिश्र उपगरण युक्त शिष्यादिक सदा आज्ञा ले-मर्यादा युक्त ग्रहण करे.

(५) ' अणुवीइ मित्तोग्गह जाती '-अपने स्व-धर्मी एक ठिकाने रहनेवाले साधूके वस्त्रपात्रादिक उन्की आज्ञा लेके भोगवे तथा गुरु-वृद्ध-रोगी-तपस्वा-नवादिक्षितकी वैयावच्च करे.

तीसरे महाव्रतके ५४ भांगे.

थोडी, बहुत, छोटी, मोटी, सचेत, अचेत ये ६ प्रकारकी वस्तुकी चोरी ९ कोटीसे नहीं करनी अर्थात् ९×६=५४ भांगे हुए. अब चौथा महाव्रत.

४ * " सव्वं मेहूणाउ वेरमणं "—देवांगना, म-

* श्री दशवैकालिक सूत्र—अध्ययन ६ में कहा है कि—

गाथा.

मूलमेय महम्मस्स । महादोस समुस्सयं ॥
तम्हा मेहुणसंसग्गं । निग्गन्था वज्जयन्ति णं ॥१७॥

नुष्यणी और तिर्यंचणी के साथ साधु और देव–मनुष्य-तिर्यंचकी साथ साध्वी सर्वथा प्रकारे मैथुन सेवे नहीं-सेवावे नहीं-सेवताको भला जाने नहीं, मन-वचन-कायासे.

चौथे महाव्रतकी पांच भावना.

(१) ' णो णिग्गंथे अभिक्खणं २ इत्थीणं कहं कह इत्तए '–स्त्रीके हावभाव शृंगारकी वारंवार कथा करे नहीं.

(२) ' णो णिग्गंथे मणोहराइ इंदियाइ आलोएतए णिझएतए '–स्त्रीके अंगोपांग विकारद्रष्टिसे देखे नहीं.

(३) ' णो णिग्गंथे इत्थीणं पुव्वरयाइं पुव्वकिलियाइ सुमरितए '–गृहस्थाश्रममें जो स्त्रीसंग किया था उसको याद करे नहीं.

(४) ' णातिमपाण भोयण भोइ '–मर्यादा

अर्थात्–अब्रह्मचर्य है सो सर्व अधर्मका मुल है, सर्व महादोषका समुह है, इसलिये साधु उसको मन–वचन–कायासे वर्जते हैं. (एक वख्तके मैथुनसेवनसे ९ लाख सन्नी पचेन्द्रिय और असंख्यात असन्नीकी घात होती है.)

(मुख) उप्रांत तथा कामोत्तेजक स-रस आहार नित्य भोगवे नहीं.

(५) ' णो णिग्गंथे इत्थी पसु पंडग संसताइ सयणा सणाइं सेवित्तए '—जिस मकानमें स्त्री [मनुष्यणी वा देवांगना], पशु [गाय-घोडी प्रमुख], पडंग (नपुंसक) रहते होवे वहां रहे नहीं.

ये पांच कामसे चित्तशान्ति और व्रतका भंग होता है ऐसा जान कर उन्का त्याग करे.

चौथे महाव्रतके २७ भांगे.

स्त्री, पशु, नपुंसक ये तीनको ९ कोटीसे गिणनेसे २७ भांगे चौथे महाव्रतके हुए.

५ " सव्वाउ परिग्गहाउ वेरमणं " अर्थात् सचेत, अचेत और मिश्र ये तीन प्रकारका परिग्रह रक्खे* नहीं-रखावे नहीं-रखतेको भला जांने नहीं, मन-वचन-कायासे.

गाथा.

* जं पि वत्थं व पायं वा। कम्बलं पायपुच्छणं ॥
तं पि संजमलज्जका। धारन्ति परिहरन्ति य ॥२०॥

पांचमें महाव्रतकी पांच भावना.

(१) शब्द, (२) रुप, (३) गंध, (४) रस, (५) स्पर्शः ये पांच ही अच्छाका संयोग होनेसे प्रसन्न न होवे और बुरेका संयोग मिलनेसे नाराज न होवे.

पंचमे महाव्रतके ५४ भांगे.

थोडा, बहुत, छोटा, मोटा, सचेत, अचेत ये प्रकारके परिग्रहको ९ कोटिसे निषेधे इस लिये ९×६=५४ भांगे हुए.

श्री दशवैकालिक सूत्रके छठे अध्ययनकी ये गाथामें कहा है किः–साधु संयम (लौकीक)लज्जाके लिये वस्त्र--पात्र -कंवल--पीछौना--रजोहरण मुर्छा (ममत्व) का त्याग करके रक्खे (रखनेसे साधुपनाका भंग नहीं होता है.)

गाथा.

न सो परिग्गहो वुत्तो । नायपुत्तेण ताइणा ॥
मुच्छा परिग्गहो वुत्तो । इइ वुत्ते महसिणा ॥ २१ ॥

छकायके रक्षण करनेवाले श्री महावीर देवने पुर्वोक्त वस्त्र--पात्रादिकको 'परिग्रह' नहीं कहा है, परन्तु 'धर्मोपगरण' कहा है; तदपि जो वस्त्रादिकपे ममत्व भाव रक्खा जावे तो महान ऋषीश्वरोंने उसको 'परिग्रह' कहा है.

☞ पांच महाव्रतके विधविध प्रकारके भांगे में जो जो काम कहे गये हैं उनको ' दीया वा ' (दिनको),' राउ वा ' (रात्रीको), ' एगेउ वा ' (अकीला), ' परिसागे उवा ' (प्रषदामें),' सुत्ते वा ' (सुता), ' जागरमाणे वा ' (जाग्रतावस्थामें) ये ६ प्रसंगमें करे नहीं. सर्व भांगेको ६ गुणे करनेसे, पहेले महाव्रतके ३६×६=२१६ ' तणावे ' हुए, दुसरे महाव्रतके ३६×६=२१६, तीसरेके ५४×६=३२४, चौथेके २७×६=१६२ और पांचमेके ५४+६=३२४ और सब मिलके १२४२ ' तणावे ' हुए. जैसे तंबुका एक ' तणावा ' (नाडा) ढीला पडनेसे भीतर पाणी टपकने लगता है वैसे ही साधूके पंचमहाव्रतके १२४२ ' तणावे ' मेंसे एक भी ढीला पडनेसे पाप रुपी जल आने लगता है.

' पंचाचार. '

१ ज्ञानाचार, २ दर्शनाचार, ३ चारित्राचार, ४ तपाचार, ५ वीर्याचार.

१ ज्ञानाचार.

द्वादशांगी भगवतकी वाणीको आठ दोष र-हित आप पढे और अन्यको पढावे.

काले विणए वहुमाणे, उवहाणे तहय निन्हवणे ।
वंजण अत्थ तदुभए, अठविहो नाण मायारो ॥

(१) 'काले'–असझाइको वर्जके सूत्रोक्त कालो काल सझ्झाय (ज्ञानाभ्यास) करे. असझाइ ३२*हैं.

* ३२ असझाइके नामः–(१) 'उकावाय'–तारा टूटे तो एक मुहुर्त असझाइ, (२) 'दिशादाहा'–फजर और स्यामको दिशा लाल रंगकी रहे वांहां तककी असझाइ, (३) 'गज्जिया'–गर्जना होवे तो एक मुहुर्तकी असझाइ, (४) 'विज्जुए'–विजली होनेसे एक मुहुर्तकी असझाइ, (५) 'निग्घाए'–कडके तो आठ प्रहरकी असझाइ, (६) 'जुवे'–बालचंद्र शुकल पक्षकी प्रथमा द्वितीया तृतीया ये तीन रातमें चंद्रमा रहे वहां तककी असझाइ, (७) 'जखाले'–आकाशमें मनुष्य–पशु–पीशाचादिकके चिन्ह दिखे वहां तककी असझाइ, (८) 'धुम्मीए'–काली धूंयर (धूंइ) पडे वहां तक असझाइ, (९) 'महिये'–श्वेत धुंअर (मेगरवा) पडे वहां तक, (१०) 'रयघाए' आकाशमें धुळका गोटा चडा हूआ दिखे वहां तक, (११) 'मंस'–मांस दृष्टिमें आवे वहां तक, (१२) 'सोणी'–रक्त (लोही) द्रष्टिमें आवे वहां तक, (१३) 'अठी'–अस्थी (हड्डी) द्रष्टिमें आवे वहां तक, (१४) 'उचार'–भिष्टा द्रष्टिमें आवे वहां तक, (१५)

(२) 'विणए'–जिनसाशनका मूल हि विनय है, इस लिये विनय (नम्रता) सहित ज्ञान ग्रहण करे. ज्ञानी ज्ञान प्रकाशे तव 'तहेत,–प्रमाण वचनं' कहके वचनको ग्रहण करे. ज्ञानीकी आज्ञामें रहे, सन्मान देवे, आहार वस्त्रकी साता उपजावे. तथा ज्ञा-

'सुसाण'--स्मशानके चारों तर्फ १००-१०० हाथ, (१६) 'रायमरणे'--राजाके मृत्युकी हडताल रहे.वहां तक, (१७) 'रायवुगय'--राजाओंका युद्ध होवे वहां तक, (१८) 'चंद वरागे'--चंद्रगृहण होय तो बार प्रहर (खग्रास ग्रहण होनेसे १२ प्रहर; थोडा ग्रहण होनेसे कमीकाल समझना) (१९) 'सुरो वरागे'--सुर्यगृहण होय तो १२ प्रहर, (२०) 'उवसंतो' पचेन्द्रियका कलेवर (निर्जीव देह) पडा होवे तो चारों तर्फ १००--१०० हाथ, (२१) आश्विन सुदी पूर्णीमा, (२२) कार्तिक वदी प्रतिपदा (प्रथमा), (२३) कार्तिक सुदी पुर्णीमा, (२४) मृगशीर्ष वदी प्रतिपदा, (२५) चैत्र सुदी पूर्णीमा, (२६) वैसाख वदी प्रतिपदा, (२७) आषाढ सुदी पुर्णीमा, (२८) श्रावण वदी प्रतिपदा--ये ६ दिनरात संपुण असझाइ पालना, क्यों कि इसी वक्तमें देवताका आगम होता है; अशुद्ध उच्चार होवे तो विघ्न प्राप्त हो जावे. (२९) फजर, (३०) दोप्रहर, (३१) स्याम, (३२) मध्य रात्री--ये ४ वक्त एकेक मुहुर्त. ये ३२ असझाइ टालकर शास्त्र पढना. ये भगवंतआज्ञाका भंग करनेसे आज्ञाभंगका दोष, ज्ञानासातनाका दोष और कभी उन्माद आदि मानसिक विकृति भी होती है.

नके साहित्योंको नीचे और अपवित्र ठिकाने रक्खे नहीं. ऐसे विनय पूर्वक ग्रहण किया हुआ ज्ञान सुप्राप्य है और चीरंस्थायी होता है.

(३) 'बहू माने'–गुरवादिक जो ज्ञान देनेवाले होवे उन्का बहुमान करे, और उन्की ३३ आसातना* वर्जे.

* (१–२–३) गुरु महाराजके आगे–पीछे-बरोबर बैठे नहीं. (४–५–६) गुरु महाराजके आगे पीछे–बरोबर खडे रहे नहीं. (७–८–९) गुरु महाराजके आगे–पीछे–बरोबर चले नहीं. (१०) पहल शुची न करे. (११) पहली इरीया वही पडीकमे नहीं. (१२) कोइ आवे तो पहले आप ही बुलावे नहीं. (१३) सुते हुवे शिष्यको गुरु बुलावे और जागता होय तो तुर्त उठके उत्तर देवे. (१४) सर्व आलोयणा करे (बीती हुइ बात सब कह दे.) (१५) वस्तु लावे सो पहली गुरूको दिखावे. (१६) पहले, गुरूको आमंत्रे (देवे). (१७) फिर गुरूको पुछके-दुसरेकों देवे. (१८) अच्छी वस्तु गुरूको देवे. (१९) गुरूका वचन सुणा अणसुणा करे नहीं. (चुप न रहे.) (२०) बीछानेपे बैठे बैठे उत्तर देवे नहीं (२१) गुरुके साथ उंचे शब्द (बहु वचन) से बात करे, जैसे कि जी, आप इत्यादि.(२२) रे! तुं! इत्यादि नीच शब्द बोले नहीं. (२३) गुरूकी शिखामण हितकारी जान कर ग्रहण करे. (२४) रोगी, तपस्वी, ज्ञानी नवादेक्षित की गुरूके हुकमसे भक्ति करे, (२५) गूरूकी चूक (भुल)

(४) 'उवहाणे'—उपध्यान युक्त शास्त्र पढे; किसी शास्त्रको पढना शुरु करे उस्के पहले और पढ रहे बाद आंबिलादिक करे और यथाविधि पढे.

(५) 'निन्हवणे'—अपनेको विद्याभ्यास करानेवाले छोटे या अप्रसिद्ध होवे तो उन्का नाम छीपाके दुसरे*विद्वान और बडेका नाम लेवे नहीं.

(६) 'वंजणे'—शास्त्रके व्यंजन-स्वर-अक्षर-पद-गाथा-अनुस्वर-विसर्ग कमी जास्ती जाणके न प्रकाशे. (व्याकरणका जाण होवे). आचारांगजी

किसीके आगे प्रकाशे नहीं. (२६) गुरूके हुकम बिना आप किसीके प्रश्नका उत्तर देवे नहीं. (२७) गुरूकी महिमा सुन खुशी होवे. (२८) यह मेरी प्रषदा और ये गुरुजीकी,—ऐसा भेद न पाडे. (२९) व्याख्यान बहोत देर तक चलावे तो आप अंतराय देवे नहीं. (३०) व्याख्यानमें गुरुजीने प्रकाशा हुवा अधिकार आप पीछा उसी प्रषदामें विस्तारसे प्रकाशे नहीं. (३१) गुरूके उपकरण (वस्त्रादिक) को पग लगावे नहीं. (३२) गुरूके उपकरण विना आज्ञा वापरे नहीं. (३३) गुरूसे द्रव्ये (आसन नीचा रक्खे) भावे नम्रतासे रह, गुरूका सदा भला चहावे.

*कहावत है कि:—"अपनेपे आवे रेलो, तो बात परि ठेलो!"

सूत्रके दुसरे श्रुतस्कंधके तीसरे अध्ययनमें मुनीको १६ वचनके जाण होना लिखा है.

(७) 'अत्थ'-अर्थको विपरीत न करे, मनकल्पित अर्थ न करे; गोपे नहीं.

(८) 'तदुभये'-मुल पाठ और अर्थ विपरीत न करे.

२. दर्शनाचार.

दर्शनके २ भेद. (१) सम्यक् दर्शन अर्थात् सत्य पदार्थका सत्य स्वरुप और असत्यका असत्य स्वरुप हृदय (अंतःकरण) में दर्शे सो; (२) मिथ्या दर्शन अर्थात् सत्यका असत्य और असत्यका सत्य स्वरुप भाषे सो. जैसे पीलीयेके रोगीको श्वेत पदार्थका भी पीला रंग भाष होता है वैसे मिथ्या दर्शनवालेको असत्य ही भाष होता है.

आचार्यजी मिथ्या दर्शनका संपूर्ण नाश करते है और सम्यक् दर्शनके ८ अतिचार टालते हैं:-

गाथा.

निसंकीयं निकंखीयं, निविति गिच्छा अमुढ द्दीठीय।
अबुबुह थिरकरणे, वच्छलप्पभावणा अठ ॥ १ ॥

(१) 'नीसंकीयं'—जिनेश्वरके बचनमें शंका लावे नहीं. अर्थात् अपनी कमसमजसे शास्त्रकी कोइ बातका मतलब समजनेमें नहीं आवे तो उसे झुठा नहीं जाने; क्यों कि अनंत ज्ञानी प्रभुने जेसा ज्ञानमें देखा वैसा ही फुरमाया है [वो कभी असत्य प्रकाशनेवाले नहीं है] परन्तु अलपज्ञकी समजमें न आवे इस्में ज्ञानीका क्या दोष ? समजनेवालेका कर्मका ही दोष ! जैसे,किसी जौहरीने कहा कि ये रत्न क्रोड रुपेका है, परन्तु अपनेको रत्नकी परीक्षा नहीं है तौ भी जोहरीका वचनपे विश्वास रखना पडता है.

(२) 'नीकंखीयं'—अन्य मतकी कांक्षा [वांछा] नहीं करनी. अन्य मतके कइ ढोंग [गान तानादि फितुर] देख कर औसा नहीं कहना कि, अपने मह्जबमें ये मजाह होती तो अच्छा था ? बराबर विश्वास रखना कि बाह्य

और अभ्यंतर त्याग और आत्मदमन विना कोइ काल मोक्ष नहीं है.

(३) 'वितिगिच्छा'—करणीका फलका संदेह नहीं लाना. "मुझे संयम पालते-तपस्या करते इतने वर्ष हो गये तो भी फल अभी तक मीला नहीं तो अब मीलेगा नहीं क्या?" ऐसा कभी नहीं कहना. करणी कदापि अफल नहीं होती है. जैसे खेतमें बीज बोया और वृष्टि हुइ तो परिपक्व वखते अनाज दिखते हैं तैसे ही आत्मारुप जमीनमें क्रिया [करणी] रूप बीज बोया, उसपे शुभ भाव रुप पाणीकी वृष्टि हुइ तो जैसे वो खेत कालांतरमें फलीभूत होता है तैसे करणी भी अवश्य फल देगी.

(४) 'अमुढ दीठि'—मूर्खके जैसी द्रष्टि न रखवे. जैसे मूर्ख भली-बुरी सब वस्तुको एक सरिखी जाने तैसे सब मतको एकसा नहीं जानना. 'दया'* येही सच्चा धर्म है.

* अद्रोहो सर्व भूतेषु कर्मणा मनसा गिरा ।
अनुग्रहश्च दानं च सतां धर्मः सनातनः ॥

(५) ' उवबूह '—साधर्मीका सत्कार करना अर्थात् अपने जैसे रजोहरण मुहपति आदिक चिन्हके धरणहार शुद्ध श्रद्धावंत शुद्ध क्रियावंत शुद्ध व्यवहारी जो साधू हैं उनका विनय करे—वयावच्च करे—आहार पाणी वस्त्र पात्रकी आमंत्रण करे—जो मांगे सो याचके ला देवे—गुणग्राम, वंदना, आदि जो करने जैसा होय सो करे.

(६) ' स्थिर करण '—धर्मसे चलीत हुये होगे उन्को स्थिर करे अर्थात् कोइ धर्मात्मा उपसर्ग उपजनेसे तथा अन्यमतियोंके प्रसंगसे सच्चे धर्मसे विमुख-चलित हुये होगे तो उस्को उपदेश दे कर और दिला कर द्रढ श्रद्धावंत करे, साता उपजाके पुनरपि प्रणाम् स्थिर करावे.

(७) ' वच्छल '—वत्सलता करे, अर्थात् जो कोइ दुःखी और व्याधिग्रस्थ होवे तो यथाशक्ति उनको औषध-आहार-वस्त्र-साहाय्य आदि दे कर साता उपजावे, जिससे वो धर्ममें द्रढ रह शके.

(८) ' प्रभावणा '—जैन धर्मकी प्रभावना करे. जैन धर्म तो स्वगुणसे ही प्रकाशते है तो

भी आप दुक्कर तप, दुक्कर व्रत–अभिग्रह, सत्य बोध, कवित्व शक्ति, इत्यादिसे धर्मको दीपावे.

३. चारित्राचार.

चार गतिसे तार पांचमी (मोक्ष) गतिको पहोंचानेवाले 'चारित्र' आचारके ८ अतिचारको आचार्यजी टालते हैः—

पणिहाण जोग जुत्तो, पंच समिइहिं तिहिं गुत्तीहिं।
एस चरित्तायारो, अठविहो होइ नायवा ॥

पांच समिति तीन गुप्ति अच्छी तराह निर्दोष खंडन–विराधना रहित पाले.

(१) "इर्या समिति" चलती वखत यत्ना रखे. इस्के चार भेदः—(१) 'आलंबन' इर्या समिति (यत्ना) वंत साधूको सदा ज्ञान द-र्शन चारित्रका आधार है. (२) 'काल'–इर्या पालनेवाले दिन होय वांहां तक ही स्थानकके बाहीर तथा ग्रामादिकके बाहीर ग्रामादिकमें विचरे. रात्री होवे वांही मकान या वृक्षादिकके आश्रय रहे. रात्रीको चलनेसे अन्धकारके योगसे तथा चं-

द्रादिकके प्रकाशमें एकेंद्रियादिक जीव द्रष्टि आवे नहीं उन्की विराधना होनेका संभव है. तथा रात्रीको सुक्ष्म अपकाय (पाणी) की वृष्टि होती है; इस लिये उन्की विराधना होवे. जो उचारादिक निवर्तनेकु जाना पडे तो शरीर वस्त्रसें आच्छादन करके रजोहरणसे भुमिका पूजते हुये दिनको देखी हुइ भूमिमें कारणसे निवर्तन हो पीछा तूर्त स्थानकमें आके रहे. (३) 'मार्ग'—इर्या समितिवंत स्ववससें रस्ता छोड उवट (जंगल) में न चले; क्यों कि तृणादिकके कारणसे इर्या नहीं पले तथा अफरसी भूमिकामें सचित पृथ्वीका संभव है. उदाइयों के घर फूटे, उस्मेंके जीव मरे, कांटा कंकर लगनेसे असमाधि—व्याधि उपजे. इत्यादि दोष जाण कुमार्ग जाना वर्जे. (४) 'जयणा' के ४ भेदः—(१) द्रव्यसे सदा नीचे देख चले. (२) क्षेत्रसे सदा देह प्रमाणे (३॥ हाथ) पृथ्वी देखके चले. (३) कालसे दिनको देखके रातको पूजके चले. (४) भावसे १० बोल* वर्जके चले; क्युं कि ये १० काम चलती

---

* (१) 'शब्द'—(राग—रागणी) करे नहीं—सूणे नहीं. (२) तमाशा आदि देखे नही. (३) 'गंध'—कोइ वस्तु सूंघे

वखत करनेसे यत्ना पूरी पलती नहीं है. एक समे दो काम हो सकता नहीं है.

(२) "भाषा समिति"—बोलती वक्त यत्ना रखे. इस्के ४ भेदः—(१) द्रव्यसे—सोलह* भाषा वर्जे, (२) क्षेत्रसे—रस्ते चलता बोले नहीं. (३) कालसे—प्रहर रात्री गये पीछे जोरसे शब्दोच्चार करे नहीं; क्युं कि पाडोसी जाग्रृत हो जावे तो विविध प्रकारके आरंभसमारंभ करनेकु लग जावे. (४) भावसे—बोलती वक्त पूरा उपयोग रखे, देश-काल उचीत निर्वद्य मधुर सत्य बोले.

(३) "एषणा समिति":—सेज्जा (स्थानक) वस्त्र आहार पात्र ये चारोंकी प्रथम 'एषणा' करे

नहीं. (४) 'रस'—कोइ वस्तू खावे नहीं. (५) 'स्पर्श'—कोमल या कठीन मार्ग आनेसे रागद्वेष करे नहीं. (६) 'वायणा'—शास्त्रादिक पढे नहीं. (७) 'पूछणा'—प्रश्न पुछे नहीं. (८) 'परीयटना'—ज्ञान फेरे नहीं. (९) 'अणुपेहा'—भूला ज्ञान याद करे नहीं. (१०) 'धर्मकथा'—उपदेश करे नहीं.

* करकस, कठोर, छेदक, भेदक, पीडाकर, हिंसाकर, सावद्य, मिश्र, क्रोधकारी, मानकारी, मायाकारी, लोभकारी, रागकारी, द्वेषकारी, मूकथा (अप्रतीतकारी सुणी देखी), वेकथा (निरर्थक कथा—स्त्री कथा, देश कथा, भत्तकथा).

अर्थात् द्रष्टि करके देखे कि सदोष है कि निर्दोष; फिर 'गवेषणा' करे अर्थात् मालकको पूछके निर्णय करे. 'ग्रहणा' अर्थात् निर्दोष ठहरनेसे यथायोग्य वस्तू ग्रहण करे.

'एषणा' समितिके ४ भेदः—(१) क्षेत्रसे दो काश उपरांत आहार भोगवे नहीं. (२) कालसे—प्रथम प्रहरमें लाया हुवा आहार चौथे प्रहरमें भोगवे नहीं. (३) भावसे-संजोयणादिक पांच दोष कहे सो वर्जके आहार करे. आहार वस्त्र पात्र मकानपे ग्रधीपणा धारण करे नहीं. फक्त संयम निर्वाहका कारण जाण जैसा मिला वैसेसे ही आत्माको संतोष देवे ओर सूत्रोक्त क्रिया कालोकाल समाचरे (४) द्रव्यसे-९६ दोष *टालके सेज्जा-वस्त्र-आहार और पात्र ग्रहण करे.

---

* ९६ दोष संक्षेपमें कहे जाते हैं:-(१) 'आहाकम्मं'—साधुके लिये बनाके देवे सो. (२) 'उदेसीयं'—एक साधु निमित्त आहार बनाके देवे कि यह मेरे मित्र या सगे हैं. (३) 'पुइकम्मं'—अपने लिये और साधुके लिये जूदा आहार निपजाया होवे परंतु साधुके निमित्त निपजाये हुवे आहारमेंसे एक दाणा भी अपने निमित्त निपजाया आहारमें पड जावे

(४) " आदान भंड निक्षेपना समिति"— आदान=ग्रहण करते, निक्षेपना=रखते, भंड=उपगरणकी यत्ना करे. यह भंड-उपगरण दो प्रकारके होते हैंः–[१] ' उग्गहीक '—साधूको सदा उपयोगमें आवे सो. [२] ' उपग्रहीक '—प्रयोजन उपने काम आवे सो.

तो वो भी साधुको काम न आवे. (४) 'मी सिज्जाए'–साधुके लिये और अपने लिये भेला निपजाया होवे. (५) ' ठवणा ' यह तो साधुजीको ही देउंगा ऐसा जाण स्थाप रखे. (६) ' पाहुडीए '–कल महाराज मेरे घरकु वेहरनेकु आवेंगे इस लिये में भी प्राहुणाको कल जीमावुंगा, ऐसा विचारके साधुको आमंत्रे. (७) ' पाउर '–दीवा मणि प्रमुखसे अंधारेमें उजाला करके देवे. (८) ' कीयगडे '–कोइ वस्तु दामसे [मोल] ला देवे. (९) ' पामीचे ' किसीकी पाससे उधार लेके देवे. (१०) ' परियट्टे '–किसीकी पाससे वस्तुका अदला बदला करके देवे. (११) 'अभीहड्डे'–स्थानकमें या रस्तेमें सामे लाके देवे(१२)'भिन्न'–घडेका या कोठीका या किसीबरतनकामट्टीसे या लाखसे मुख बंध कीया होवे उसे उखाडके देवे. (१३) ' मालोहड्डे '–साधूको खडे रखके मेडी उपरसे तथा तलघरमेंसे लाके देवे सो न लेवे; क्युं कि शुद्ध अशुद्धकी मालूम नहीं पडे. (१४) ' अछीजे '—निर्बलके हाथमेंसे सबल छीनके देवे तो न लेवे, क्युं कि उन्को दुःख होवे और अंतराय लगे. (१५) ' अणीसिठे '—मालककी आज्ञा विना दुसरे देवे तो

शास्त्रोंमें साधूके उपगरण इस प्रकारे कहे हैं:- पात्रे ३ प्रकारके:-काष्टके, तूम्बेके और मट्टीके होते हैं. रजोहरण, की जो जमीन झाडनेका काममें आता है वो उन, अंबाडी सणका बनता है. मुहपति, कि जो वायूकाय तथा सूक्ष्म त्रस जीवकी रक्षाके लिये हैं. मुहपतिको ८ पट कपडेके चाहिये. मुहपति-

न लेवे, क्यों कि अप्रतीत उपजे और क्लेष होवे. (१६) 'अज्जोयरे'-रसोइ नीपजाती वख्तमें साधुका आवागमन सुण कर आटामें आटा, दालमें दाल जास्ती मिलाके निपजाके साधुको देवे तो न लेवे. ये१६ 'उद्गमन' के दोष सरागी गृहस्थ भद्रिक भावसे दान देनेकी उत्सुकतासे लगावे, परंतु साधु उन्को कर्मबंधका हेतु समजके कहे के 'अहो आयुष्यवंत! यह मेरे लेने योग्य नहीं!"

(१७.) 'धाइ'—धात्री कर्म करके लेवै अर्थात् गृहस्थके बालकको रमावे—खीलावे कि जिससे गृहस्थ अच्छा आहार देवे. परन्तु इससे साधुके ब्रह्मचर्यके बारेमें लोगोंको शंका उत्पन्न होवे (१८) 'दूइ'—दूती कर्म करके लेवे, अर्थात् गृहस्थकी बात दुसरे ठिकाने पहोंचानेका कह कर गृहस्थको प्रसन्न करके आहार लेवे तो दोष लगे(१९) 'नीमंते"—गृहस्थको भूत-भविष्यकी बात और स्वप्न फल-सामुद्रिक-व्यंजन (तिलमसादिक) का फल, तेजी-मंदी इत्यादि कह कर लेवे तो दोष लगे. (२०) 'अजीव'-अपनी

का मंडनके लिये ' हिंदी जैनहितेच्छु 'मासिक पत्र-के पुस्तक १ लेमें विस्तारसे चर्चा छपी गइ है सो देख लेना. ऊन-सूत या रेशमकी पछेवडी ज्यादेमें ज्यादे ३ रखी जाती हैं. चोलपट. संथारो [बीछोणा].

जात—संबंध कहके आहार लेनेसे दोप लगे. (२१)'वणीमग' –भिक्षुककी तराह दीनतासे मांगे तो दोपलगे. (२२) ' तिगिच्छ '—औपध प्रमुख बताकर आहार लेनेसे दोप लगे. (२३) ' कोहे '—क्रोध करके लेवे (२४) ' माणे '—अभिमान करके लेवे. (२५) ' माया '—कपट करके लेवे. (२६) ' लोहे'—लोभ करके लेवे. (२७) 'पुव्व पच्छ संतवे'—दान देनेके अवल और पीछे दातारके गुणग्राम करके लेवे (२८) 'विज्जा' मनोज्ञ पदार्थ देख दुसरी वस्त लेनेकी इच्छा कर विद्याके प्रभावसे रुप परावर्त करे आर पुनरपि आहार लेवे. (२९) 'मंत्र'—मंत्र—वशीकरण इत्यादि करके लेवे. (३०) ' चुन्ने' —पाचक चुर्णादि करके देवे और करनेकी विधि वताके आहार लेवे. (४१) 'जोगे,—तंत्र विद्या अर्थात् इंद्रजालकरके लेवे (३२) ' मूल कम्म '—गर्भपात आर गर्भधारणकी औपधि वताके लेवे. ये १६ दोप ' उतपात ' के कहे अर्थात् रसलंपट साधु ये दोप लगाते हैं. गृहस्थसें भी ये खराव है.

(३३) 'संकीये'–दोपीत–आधाकर्मी होनेकी शंका पडने परभी आहार लेवे तो दोप लगे. (३४) ' मखीये '–हाथकी रेखा या भाजन सचित जलादिकसे किंचित् भी भरा होवे तो आहार लेनेसे दोप लगे. (३५) 'निखिते'–सचीत (पृथ्वी–पा-

गुच्छकं अर्थात् गोच्छा [रजोहरण जैसा]. मात-रीयो अर्थात् लघुनितिके लिये पात्र [जमीनपे लघुनिति करनेसे दुर्गंध पैदा हो कर प्रजाजनोंको चेपी दर्द होता है और जंतु ऊत्पन्न होते हैं, इस

णी अग्नि–वनस्पति)या कीडी आदिक के नगरे उपर कोइ वस्तु रखी होवे तो लेवे नहीं. (३६)'पेहीये'–अचित् वस्तु स-चित के नीचे रखी होवे तो लेवे नहीं (३७) 'साहरीये'–सचित (धान प्रमुख) के बीचमें वस्तु रखी होय तो लेवे नहीं. (३८) 'दायगो'–अयोग्य दातार जैसेकि अंसत वृद्ध–बाल–नपुंसक–बीमार–अन्ध–उन्मत्त—बंधीवान—खुजलीके ददवाले—बा-लकको स्तनपान कराती माता—सात मासके उपरकी गर्भव-ती स्त्री. इत्यादिकके हाथसे न लेवे. [३९) 'मिस्सीए' —मिश्र (कुच्छ सचित कुच्छ अचित) न लेवे, जैसेकि होला (चीणे), एबी (गेहुंकी). (४०) 'अपाणित'—सचित वस्तु अचित की गइ होवे परंतु पूर्ण अचित न हुइ होवे तो न लेवे [आहुणो धावेण वीवज्जए] तत्कालका धोवण पाणी (एक मुहुर्त पहले-का) लेवे नहीं. असेही चटनी प्रमुख दुसरी वस्तुके लिये भी समजना. (४१) 'लित'-तूर्तके लिपे हुवे स्थलपे जाके न लेवे, क्युंकि कित्नेक ठिकाने गोवरमें मिट्टी मिलाते हैं, इससे मिश्र रह-नेका संभव है. तथा वो उखड जायतो पीछा आरंभ करना पडे. (४२)'छंडूए'-छांडते २ ढोलते २ वस्तू लाके देवे सो न लेवे. ये १० बोल ('एषणा') के दोष गृहस्थ और साधू दोनु मिलके लगावे.

लिये एक पात्रमें लघुनिति करके फासुक भूमिकामें परठेवे.] झोली. पाणी छाणनेके लिये गलणा. इत्यादि ऊपगरण साधुको सदा उपयोगमें आते हैं सो उघीक हैं और सेज्जा स्थानक, पाट-पाटला,

---

(४३) ' संजोयणे ' ठिकाणे आये पीछे, विना कारण, स्वाद निमित्ते वस्तुका संयोग मिलावे, जैसे दुध आया और सक्कर ले आओ. (४४) ' पम्माणे '—प्रमाण उपरांत आहार करे. [४५] 'इगाल'—मनपसंद आहारकी प्रशंसा करे [४६] ' धुम्म '—अप्रिय आहारकी निंदा करे. [४७] ' कारणे '—साधू ६ कारणसे आहार करे; क्षुधा वेदनी उपसमानेके लिये, गुरुवाविककी वयावच्च करनेके लिये, इर्या समिति पालनेके लिये, संयमका निर्वाह करनेके लिये, प्राणीयोंकी रक्षा करनेके लिये, और धर्म ध्यान ध्यानेके लिये. और ६ कारणसे साधु आहार छोडते है:—रोग पेदा होनेसे, उपसर्ग पेदा होनेसे, ब्रह्मचर्यमें द्रढ रहनेके लिये, दया पालनेके लिये, तपस्या करनेकी इच्छाके लिये और संथारा करनेके लिये.

ये ५ दोष माडलेपे [आहार करनेकु वैठे हूवे साधु]लगावे.

[४८] ' उघाड कमाड़ '—कमाड [द्वार] उघाडके देवे तो दोष. [४९] ' मंडपाहूडीए '—देव-देवी निमित्ते किया हूवा आहार लेवे तो दोष. [५०] ' वल्ल पाहुडीए '—वलवाकूला उछालनेको कीया हुवा आहार उछाले पहले लेवे तो दोष [५१] ' अदीठ '—विन देखाती जगासे [भींत-पडदे के अंतरसे] लाके देवे तो दोष. [५] ' पारिठया '—ख-

-पराल-इत्यादि कारणसर उपयोगमें लिये जाते ह सो उपग्रहीक कहे जाते हैं. ३ पातरे, २ पीछोडी, १ चोलपटा, १ ओघा, १ गोच्छा, १ मुहपाति, १ मातरीआ, १ बीछावणा, १ झोली, १ गलणा. ये

राव आहार पठो [फेंक दे] के अच्छा आहार लेवे तो दोष.

ये ५२ दोष श्री आवश्यक सूत्रमें कहे हैं.

(५३) 'दानठा'—दान देनेको किया हुवा आहार लेवे तो दोष (५४) 'पुनठा'—मृत्युगत मनुष्यके पीछे पुन्य निमित्त वनाया हुआ अहार लेवे तो दोष. (५५) 'समण्ठा'—बावा—जोगी—अतीतके लिये वनाया आहार लेवे तो दोष. (५६) 'वणीमगठा'—दानशाला [सदाव्रत]का लेवे तो दोष. [५७] 'नियागं' सदा एक ही घरसे लेवे तो दोष.(५८) 'सेज्जतंर' स्थानक की आज्ञा देनेवाले के घरसे लेवे तो दोष.(५९) 'राय-पिंड'-चार महाविगय (मांस—मंदिरा—मध अर्थात् सेहत ओर मक्खन भोगवे तो दोष (६०) 'किमिच्छी'—विना कारण मनोज्ञ वस्तु मांग २ के लेवें तो दोष. (६१) 'संघट्टे' —सचितके संघट्टेसे (धक्का लगाके) लेवे तो दोष. (६२)'पहु-जंपी'—खाना थोडा और फेंक देना ज्यादे ऐसी वस्तु लेवे तो दोष. [६३] 'परहडी'—वेश्या आदिक निन्द्य कुलका आहार लेवे तो दोष. [६४] 'मामगं'—जिसने ना कही उस्के घरका लेवे तो दोष. (६५) 'पूव्व पच्छ कम्मं'—आहार देनेके पहले या पीछे दोष लगावे तो.ऐसा आहारलेनेसे दोष (६६) 'अचितकुल'—अप्रतीतकारी कुलका लेवे तो दोष.

१४ ऊपगरण स्थैवरकल्पी साधुके रखनेमें आते हैं. इसमेंसे पातरा पीछोडी कमी करे तो 'ऊपगरण उणोदरी तप' होता है.

इन ऊपगरणोंको [१] द्रव्यसे, यत्नासे ग्रहण करे और धरे. किसी भी उपगरणको दीनको देखे बिन और रात्रीको पूंजे बिन हाथ न लगावे. (२) वस्त्र-पात्रादि कोइ भी वस्तु साधुके नेसरायकी गृहस्थके घरमें रखके ग्रामानुग्राम विहार न करे, क्युं कि प्रतिबंध होता है और प्रतिलेहणा नहीं होती है, इत्यादि बहोत दोष हैं. [३] कालसे 'ऊभयकाल भंडोपगरण पडिलेहणाए' अर्थात् दोनु वक्त (श्याम-सवार) भंड-ऊपगरणकी पडिलेहणा करनी. प्रतिले-खना २५ प्रकारसे होती है. सो विचक्षण मुनी वस्त्रके ३ विभाग करे; एकेक विभागमें ऊपर,

ये १५ दोष श्री दशवैकालिक सूत्रमें कहे हैं.

(६८) 'सयाणपिंड'-समुदाणी (१२ कुलकी) भिक्षा करे नहीं परन्तु शीर्फ स्वजातिकी ही भिक्षा लेवे तो दोष. (६९) 'परीवाडी'-जीमनेको बहुत लोग वैठे होवे उन्को उ-ल्लंघके जावे तो दोष.

ये २ दोष उत्तराध्ययन सूत्रमें कहे है.

बीचमें और नीचे द्रष्टि लगाके देखे. यों ३ विभाग को देखे उसे ३×३=९ अखोडे. ऐसे ही दुसरी तर्फ देखे सो ९ पखोडे. ये १८ हुवे. तीनइधर के और तीन उधर के विभागमें जिवादिककी शंका होवे तो गोच्छेसे पूजे ये ६ पूरीमां. ये २४ हुवे. तथा पच्चीसमा शुद्ध उपयोग रक्खे.

पलेवण करती वक्त बोले नहीं, इधर उधर चित्त फिरता रक्खे नहीं. पडीलेहे और बिन पडीलेहे वस्त्र भेलें करे नहीं. अनुक्रमे मुहपति–गोच्छा–चोलप-टा–पछोवडी–रजोहरणादिककी प्रतिलेहणा करे. (४) भावसे, यत्नावंत–करुणाभाव रक्खके, एकांत स्वपर हितार्थ, संयमनिर्वाहार्थ उपकरण धारण करे. श्री उत्तराध्ययन सूत्रके २३ मे अध्ययनमें श्री गौ-त्तम स्वामीने फरमाया है कि, "लोगलिंग पवुच्च-ती" अर्थात् साधु लिंग (भेष) धारण करते है सो

[७०) 'पाहुणामत'—पाहुणाके लिये निपजाया आहार उन्के जीमे पहले लेवे तो दोष. (७१) 'मंस'—त्रसका मांस लेवे तो दोष. (७२) 'सखंडी—बहुत लोक (न्यात) को जिमनेके लिये निपजाया आहार लेवे तो दोष. (७३) भिक्षा-चरको अंतराय देकें लेवे तो दोष. (७४) 'सागरत्रयंग'–गृह-

लोगोंको प्रतीत उपजानेके लिये, कुच्छ अभिमानका या देहरक्षाका कारणसे नहीं. सर्व उपगरण मूर्च्छा–ममता रहीत वापरे.

स्थीका काम करनेका वचन देके लेवे तो दोष.

ये ९ दोष श्री ठाणांगजी सूत्रमें कहे हैं.

(७५) 'कलाइकंत'—सूर्योदय पहले और सूर्यास्त पीछे लेवे तो दोष. (७६) 'आणाइकंत'—प्रथम प्रहरका चोथे प्रहर भोगवे तो दोष. (७७) 'मग्गाइकंत—चार ही आहार दो कोस उपरांत भोगवे तो दोष. (७८) 'आउप'–आमंत्रणसे जावे तो दोष. (७९) 'कंतारमंत'–अटवी उल्लं-घनेको आहार नीपजाया वो लेवे तो दोष. (८०) 'दुभिख'–दुष्कालमें गरीबोंको देनेको रखा गया आहार लेवे तो दोष (८१) 'गीलाणभत्ते'–रोगी तथा वृद्ध के लिये निपजाया आहार उन्के भोगवे पहले लेवे तो दोष. (८२) 'वादलीया भ-त्ते'—बहुत वर्षादमें गरीबोंको देनेकु निपजाया हुवा आहार लेवे तो दोष. (८३) 'रय दोष'—सचित रजसे भरा आहार लेवे तो दोष.

ये ९ दोष श्री आचारांग सूत्रमें कहे हैं.

(८४) 'रयत दोष'—वर्ण–गंध–रस पलट जानेसे भी लेवे तो दोष. (८५) 'सयगही'–अपने हाथसे आहार उठा कर लेवे तो दोष. (८६) 'बाहीच'—घरके बाहीर लाके देवे सो लेवे तो दोष. (८७) 'मोरंच'–दातारकी कीर्ति करके लेवे तो दोष. (८८) 'बालठा'–बालकके लिये बनाया सो लेवे तो दोष.

५ " परिठेवणीया समिति "—निरऊपयोगी वस्तुको यत्नासे परठवे (एकांत स्थलमें रख देवे). निरऊपयोगी वस्तुके नामः—[ऊचार] वडीनीत (भिष्टा), [पासवण] लघूनीत (मुत्र), [वण] वमन (उलटी), [जल] पसीना, [सिंघेण] नाकका मेल, [मेल] सरीर का मेल, नख, केश, प्रमुख अजोग वस्तुको, (१) ' द्रव्यसे ' ऐसे ठिकाने पठवे

ये ५ दोष श्री प्रश्न व्याकरण सूत्रमें कहे है.

(८९) ' गुव्वीणठा '—गर्भवती के लिये बनाया आहार उस्के जीमे पहले लेवे तो दोष. (९०) 'किती'—हांक मारके लेवे तो दोष. (९१) अडवीभत्त '—अटवी किनारे दानशाला होवे उस्का लेवे तो दोष. (९२) 'आतिथभत्त'—कोइ भिक्षा करके लाया होवे उस्की पाससे लेवे तो दोष. (९३) ' पासत्था भत्ते' भेषधारी होके उपजीविका करनेवालेसे भिक्षा लेवे तो दोष. (९४) ' दुगछभत्त'—अजोग (अभक्ष्य) आहार लेवे तो दोष. (९५) ' सागरीये निशाय'—गृहस्थके साहायसे आहार लावे तो दोष.

ये ७ दोष श्री निसीथ सूत्रमें कहे हैः

(९६) ' पारियासीय दोष'—भिक्षुक लोगोंके निमित्तसे बहुतकाल संग्रह करके रक्खा वो तो नहीं ले गये और वो आहार साधु लेवे तो दोष. (निसीथ और व्रहतकल्पमें ये दोष कहा है.),

कि जो ऊंची जगा न होवे, कि जांहासे वो चीज पड जावे, नीची जगा न होवे कि जांहा मेला हो रहेवे, अप्रकासीक खडा न होवे कि उस्के आश्रय रहे हुवे जीव मर जावे. कीडे उदाइ के नगरे, दाणे, हरी, त्रणे न होगे की जिससे उन्के जीवको त्रास या मृत्यु निपजे. ऊंचेसे निचे न डाले, नीचेसे उपर न फेंके, इत्यादि यत्नासे परिठवे. (२) 'क्षेत्रसे' जिस्की जगा हो उन्की आज्ञा प्रथम ग्रहण करे. आज्ञा देनेवाला कोइ न होवे और उस जगामें अप्रतीत क्लेश उपजता न होवे तो *सक्रेन्द्र महाराजकी आज्ञा ग्रहण करे. (३)"कालसे" दिनको तो द्रष्टिसे अच्छी तराह भुमीका देखके परिठवे, और रातके लिये स्यामको जगा देख रखे की जांहा कीडी, नगरे, हरी, प्रमुख कुच्छ न हो तो वांहा रातको यत्नासे परिठवे. (४) "भावसे" शुद्ध उपयोग युक्त परिठवे. स्थानकसे बाहिर नीकलते 'आवश्यहीर' शब्द कहे. (मेरेको यह

* श्री महावीर स्वामीको पहले देवलोकके सकेन्द्रजी कह गये है कि चार ही तीर्थ निरवद्य काममें मेरी हद्दकी [मेरुसे दक्षिण दिशाकी] जगा वापरे तो मेरी आज्ञा है.

काम अवश्य करना है.) पठोवती वखत " अणु जाणहा मिमीउगहं " कहे (धरतीके मालिककी आज्ञा है); परिठे पीछे ' वोसीरे ' ३ वक्त कहे (ये मेरी नहीं); पीछा स्थानकमें प्रवेश करता 'निसइ २' कहे. (अब कामसे निवृत्त हो आया.) फिर ठिकाणे आके इरियावही प्रतिक्रमे.

अब तीन गुप्तीगुप्ता. अर्थात् तीन गुप्तीको गोपवके रक्खे.

(१) मनगुप्तीः—मन एक विचार रुप बडा जब्बर शस्त्र है. महा पापी भी काम नही करे ऐसा २ कोइ २ वक्त विचार कर लेता है.इस लिये मनको तीन प्रकारके बिचारसे नीवारः—(१) ' सारंभ ' दुसरेकों दुःख देनेकी इच्छा. (१) ' समारंभ '—परिताप उपजानेकी इच्छा (३) 'आरंभ'—जीव काया जुदा करनेकी इच्छा. इन तीनों कामोंसे नीवारके धर्म और शुक्ल ध्यानमें लगावे.

(२) वचन गुप्तीः—वचनसे भी अनंत प्राणीयोंका सत्यानाश होजाताहै. इस लिये तीन प्रकारके वचन नहीं बोले; सारंभ (दुःखकारी,) समारंभ [प-

रितापकारी,] आरंभ [मृत्यूकारी.] यह तीनी प्रकार के वचन न बोले तथा देशकी कथा, राजाओंकी कथा, स्त्रीयोंकी कथा, भोजनकी कथा इत्यादि वर्ज के सत्य मधुर निर्दोष वचन ऊच्चारे.

[३] "काया समिति" कायासे या कायानिमित्ते अनेक जीवोंकी घात होती है ऐसा जाणती न कर्मसे काया बचावे; सारंभ [दुःख देनेसे], समारंभ [किसीको परिताप ऊपजाणेसे,] आरंभ [किसीके प्राण हरण करनेसे.) और तप संयम ज्ञान ध्यानादिक सत्कार्य कायासे करे, यह चारित्र संयमके आठ अतिचार वर्जके शुद्ध चारित्र पाले.

"तपाचार"

कर्म रुप मेलको तपसें दूर कर चैतन्यको निर्मल करे सो तप.

गाथा.

सो तवो दुविहो वुत्तो, बाहिरभ्यंतरो तहा
बाहिर छविहो वुत्तो, एवं अभ्यंतर तवो ॥

इस तपके दो भेद कीयेहै. [१] बाह्य [प्रगट,] (२) अभ्यंतर (गुप्त—देखनेमें न आवे वैसा.)

बाह्य तपके छे भेदः—

गाथा.

अणसण, मुणोयरिया, भिक्खायरियायरसपरिच्चाउ।
कायाक्लेषो संलिणयाय बाह्य तवो होइ ॥

१ "अणसण" अन्न प्रमुख च्यारहा आहारके त्याग करे सो अणसण. अणसणके दो भेद (१) इतरीया (थोडा-मर्यादा युक्त कालका) (२) अत्रकाहीया (जावजीवका).इतरिया तपके छे भेदः-(१) श्रेणी तप (२) प्रतरतप. (३) घनतप. (४) वर्गतप (५) वर्गावर्ग तप (६) प्रकीर्ण तप.

[१] श्रेणी तपके अनेक भेद. चोथ[१उपवास] छट (बेला) अठम (तेला), यों च्यडता २ जावत पक्ष १ मास २ मास जावत छ मास तक की तपस्या करे, इसे "श्रेणी तप" कहना. छ मासके उपर तप नहीं.

[२] 'प्रतर तप' यह सोळे कोठेमें आंकडे भरे हैं वेसी तपस्या करे १ ऊपवास २ बेला ३ तेला ४ चोला २ बेला ३ तेला ४ चोला यों सोलेही कोठेका तप करे, सो 'प्रतरतप'.

१६ प्रतर तप.

१	२	३	४
२	३	४	१
३	४	१	२
४	१	२	३

(३) ऐसेही ८×८=६४ कोठेका तप करे सो, 'घन' तप.

(४) ऐसेही ६४×६४=४०९६ कोठेका तप करे सो 'वर्ग' तप.

(५) ऐसेही ४०९६×४०९६=१६७७७२१६कोठे में आंक आवे ऐसा तप करे सो 'वर्गावर्ग' तप.

(६) 'प्रकीर्ण तप' के अनेक भेदः--(१) कनकावली (२) रत्नावली (३) एकावली और (४) मुक्तावली.

(ये ४ तप और बृहत् सिंह क्रिडा, लघुसिंह क्रिडा, गुण रत्न संवत्सर तप, सर्वतोभद्र तप, वज्र मध्य पडिमा, जवमध्य पडिमा, भद्र पडिमा, महाभद्र पडिमा ये सबका कोठा ये पुस्तकके अंतमें छपा गया है, सो देखना.)

आंबिल वर्धमान तप उसे कहते है, एक आंबिल करके एक उपवास करे, फिर दो आंबिल--एक उपवास, फिर तीन आंबिल-एक उपवास, यों सो आंबिल तक चडावे इत्यादिक अनेक प्रकारके तपकरे सब 'प्रकीर्ण तप' कहे जाते हैं.

अवकाही [जावजीव] के तपके दो भेदः--[१] 'भत्तपच्चखाण' सो फक्त आहारका त्याग करे

और [२] 'पादोपगमन' सो आहारका और सरीर का दोनुका त्यागकरे; संथारा करे, पीछे काटी हुइ वृक्षकी डालकी तरह पडे रहे, हले चले नहीं, यह 'अवकाहीया अणसण तप' कित्नेक मुनी उपसर्ग उत्पन्न हुये करतेहैं और कित्नेक मुनी आयुष्यका अंत जाण करतेहैं.

२ "उणोदरी तप" आहार उपाधी कमी करे सो उणोदरी तप. उणोदरी के दो भेदः--(१) द्रव्य उणोदरी और [२] भाव उणोदरी. द्रव्यउणोदरीकेदो भेद [१] उपगरण उणोदरी सो वस्त्र पात्र कमी रक्खे, जीससे ज्ञानध्यानकी वृधी होती है, विहार सुखसे होता है इत्यादिक बहुत गुण है. (२) आहार उणोदरी; पुरुष के बत्तीस कवल का आहार है उसमेंसे आठही खाके रहे तो पाव उणोदरी, सोले खावे तो आधी ऊणोदरी, चोवीस खावे तो पोणी ऊणोदरी और एकतीस खावे तो किंचित् ऊणोदरी. कमी खानेसे निरोगता, बुद्धीकी प्रबलता, अप्रमादीपणा इत्यादि बहुत गुण प्राप्त होता है.

'भाव ऊणोदरी' सो क्रोधमान माया लोभ

कमी करना, थोडा बोलना, चपलता कमी करना.

२ "भिक्षाचारी"—सामूदाणी (बकात घरों-की) भिक्षा लेके अपना निर्वाह करे, इसे गौचरी भी कहते हैं. जैसे गाय जंगलमें चरणेको जाती है वो बहुत ठिकानेसे थोडा २ घास उपरसे खाके पेट भरती है; पीछा उगणे जैसा रखती है. तैसेही मुनी बहुत घरसे थोडा २ आहार लेके अपनी आत्माका निर्वाह करते है, सो गोचरी.

गाथा.

वयंचविती लप्तामो नय कोइ उवाहामइ ।
आहागडे सूरयंते पुफे सू भमरो जाहा ॥

जैसे गृहस्थ अपने शोख [आराम] निमित्ते वाडी लगाता है. और उसमें भ्रमर पक्षी आके फूल-कों किंचित् ही किलामणा नही देता अपनी आत्मा तृप्त करता है, तैसेही गृहस्थने अपने खानेकों या कुटूंब निमित्ते जो आहार नीपजाया है, उसमें-से साधू थोडा २ ग्रहणकर अपने शरीरको भाडा देवे.

भीक्षाचारी तपके ४ भेद. १ द्रव्यसे, २ क्षेत्रसे, ३ कालसे, ४ भावसे.

(१) द्रव्यसे भिक्षाचारीके छब्बीसभेद १ 'उखित चरिये' (वर्तनमेंसे वस्तू निकालके देवे तो लेवुंगा). २ 'निखितचरिए' (बर्तनमें वस्तू डालता हुवा मुजे देवे तो लेवूंगा). ३ 'उखितानिखित चरिए' (वर्तनमेंसे वस्तू निकाल पीछी उसमें डालता होवे सो लेवूंगा). ४ 'निखित उखित चरिए'. [वर्तनमें वस्तू डाली पीछी निकालता होवे सो लेवूंगा.]५ 'वट्टीज माण चरिए'.(दूसरेको पुरसता होय उस्मेंसे लेवूंगा). ६ 'साहारिजमाण चरिए'(किसीको देनेको लेजाता होय सो लेवूंगा) ८ 'अवणिजमाण' चरिए. (दुसरेकों दे पीछा आता होवे सो लेवूंगा) ९ 'उवणिज अवणिज चरिए'[दूसरेकों देके पीछी ले मेरेकों देवे सो लेवूंगा) १० 'अवणिज उवणिज चरिए'[दूसरेके पाससे लेकेमेरेको देवे सो लेवूंगा] ११ 'संसठचरिए'[भरे हाथसे देवे तो लेवूंगा)१२ 'असंसठचरिए'. [विनभरे हाथसे देवे सो लेवुं]. १३ 'तज्जाए संसठ चरिए' (जिस वस्तूसे हाथ भरे सोही वस्तु देवे तो लेवूं.]१४ अन्नाए चरिए.[जांहा मुजे पेछाणे नहीं वांहासे लेवु.] १५ 'मोणचरिए' (विना बोले देवे तो लेवुंगा). १६ . (वस्तु मुजे देखाके देवे सो लेवुं). १७

'अदिठ लाभए.'(बिन देखाए देवे सो लेवू). १८ 'पुठ-लाभए'(अमुक वस्तु लेंगे यों पूछके देवे तो लेवुं).१९ 'अपुठ लाभए' (विनपुछे देवे सो लेवुं).२० 'भिखला भए.'(मेरी निंदा करके देवे तो लेवुं].२१'अभिखलाभ-ए' [मेरी स्तुतीकरके देवे तो लेवुं]. २२ 'अन्नगिलाए.' (सरीरको दुःख होवे ऐसा आहार लेवुं).२३ 'उवणि-हिए' (गृहस्थ खावे उसमेंसे लेवुं).२४ 'परिमितापिंड व-तिये' (सरस [अच्छा] आहार लेवू). २५ 'शुद्ध स-णीए'(चोकस करके लेवु). २६'संखादतीए'(कुडछीकी तथा वस्तुकी गिणती करके देवे सो लेवुगा). यह २६ प्रकारे साधू अभिग्रह धारण करतेहै.

(२) क्षेत्रसे भिक्षाचारीके ८ भेदः—१ संपूर्ण पेटीकी जैसे गोचरी करे (चार खूणेके चार घरसे). २ अर्ध पेटीकी तरह गोचरी करे (दो खूणेके दो घरसे) ३ गोमुत्रकी तरह गोचरी करे (एक घर इधरका दुसरा उधरका तीसरा इधरका यों) ४ पतं-गीया गोचरी छुटे २ घरसे आहार ले. ५ अभिंत्र संखावृत गोचरी–पहली नीचेका फिर उपरका फिर नीचेका यों घरका आहार ले) ६ बाह्य संखावृत गोचरी (पहली उपरका फिर नीचेका घरका आ-

हार ले) ७ जाते हुए आहार ले पीछे आते हुए न ले. ८ आते हुये आहार ले जाते हुए न ले; यह भी अभिग्रह साधु धारण करते है.

(३) कालसे भिक्षाचारीके अनेक भेदः— १ पहले पहेरका लाया तीसरे पहेरमें खाय. २ दुसरे पहेरका लाया चौथे पेहेरमें खाय. ३ दुसरे पेहेरका तीसरेमें ४ पहले पेहेरका दुसरे पेहेर, यों आहार भोगवनेका अभिग्रह करे.

(४) भावसे भिक्षाचारीके अनेक भेदः—सर्व वस्तु जुदी खाय, भेली करके खाय, इच्छित वस्तुका त्याग करे, इत्यादि.

(५) " रसपरित्याग, " जभानको स्वाद लगे, बल वढे ऐसी वस्तुका त्याग करे [छोडे], सो ' रसपरित्याग ' तप. [रसाणी सो रोगाणी] रसपरित्यागके १४ भेदः—१ निव्वितिए (दूध दही घी तेल मीठाइ ये पांच विगयको छोडे) २ ' पणिए रस परिच्चए ' (धार विगय तथा उपरसे विगय लेना छोडे.) ३ ' आयमसित्थभोए ' (चावलादिकका ओसावणमें कण लेवे.) ४ 'अरस आहारे'

(रस रहित मसाले रहित आहार लेवे.) ५ ' वीरसं आहारे. ' [जुना धान सीजा हुवा लेवे.] ६ 'अंत-आहारे'.[बटला चीणे प्रमुख ऊबाले (बाकले) लेवे.] ७ ' पंत आहारे ' [ठंडा वासी आहार लेवे.] ८ ' लुह आहारे ' लूखा आहार ले.) ९ ' तुच्छ आहारे ' (नीसार तुच्छ आहार लेवे.) १० ' अरस ' ११ ' वीरस ' १२ ' अंत ' १३ ' प्रांत ' १४ 'लुख' आहार करके संयमका निभाव करे.

५ " काया क्लेष तप " स्ववसमें होके ज्ञान तप करके अपनी आत्माकों क्लेश [दुःख] देवे. सो काय क्लेश तप. काय क्लेश तप के अनेक भेदः— १ ' ठाणठितिय ' कायोत्सर्ग करके ऊभा रहे. २ ' ठाणाइये ' काऊसग बिन ऊभा रहे. ३ ' ऊकडा-सणिये. ' दोइ गोडेके बीचमें सिर [माथा] रखके काऊसग करे. ४ 'पडिमा ठाइये ' बारे प्रतिमा साधूकी धारण करे सो. १ एक मास तक एक * दात आहा-रकी ओर एक दात पाणीकी. २ दो मास तक दो

* आहार साधूको देती वखत पातरेमें एक वखत पडे (एक चावलका दाणा या जास्ती) इसको एक दात आहार, दो वखत पडे सो दो दात कहते हैं और पाणीकी धार खंडीत नहीं हो वांहा तक एक दात.

दात आहारकी और दो दात पाणीकी; यों बडते२ सातमी प्रतिमामें सात महीने तक सात२ दात आ-हार पाणीकी लेवे. ८ मी सात दीन चोविहार एकांतर ऊपवास करे. दिनको सूर्यकी आतापना * लेवे. रातको कपडे रहित रहे. तीन प्रकारके आसन करे १ चारही पहेर रात्रीमें चित्ता (सुलटा) सोवे. २ या एक पसवाडे सोवे. ३ या काऊसग करके बेठा रहे. दवता मनुष्य तिर्यंचके ऊपसर्ग सहै. ९ मी सात अहो रात्री चौवीहार एकांतर ऊपवास करे, दिनको सूर्यकी आतापना ले, रातको वस्त्र रहि-त तीन प्रकारके आसन करे. १ दंडासन (ऊभा रहे) २ लगडासन (पगकी एडी और चोटी धरतीको लगा कबानकी तराह नमा हुवा रहे). ३ ऊकडु आसन [दोइ गोंडे बिच्च सिर धरके रहे.] तीन प्रकारके उपसर्ग सहे. १० मी सात दिन एकांतर चोवीहार उपवास करे, दिनको सुर्यकी आतापना वे रात्री-को वस्त्र राहित तीन आसन करे. गोदू आसन [गाय दोणेको बैठे वैसे बैठे रहे.] विरासन (वेत्रास-नपे बेठे वैत्रासन [खुरसी] निकाल लेवे वैसाही

* सूर्यका आताप सहन करे सो आतापना.

बैठ रहे.) अंबरखुजासण. सिर नीचे पग उपर रक्खे ११ मी बेला करके बेलेके दिन ग्रामके बाहिर आठ पहरका काउसग करे. तीन उपसर्ग सहै. १२ पडिमा अठम (तेला) करके तेलेके दिन महाकाल स्मसानमें काउसग करे. एक पुदगलपे द्रष्टी रक्खे देवता मनुष्य तिर्यंच के परिसह होवे जो चलायमान होवे तो उन्माद पामे (वावला होवे) दीर्घ कालका रोग ऊपजे, केवलीपरुप्या धर्मसे भ्रष्ट होवे. और निश्चल रहे तो अवधी, मनः पर्यव, केवल ज्ञानकी प्राप्ति होवे.

और भी लोच करना, ग्रामानुग्राम फिरना, जाणके ठंड ताप सहना, खाज नही खणे, इत्यादि कष्ट सहन करे सो काय क्लेश तप.

६ " पडिसलिहणा, " सरीरको आश्रवके काम से रोके सो प्रतिसलिनता. प्रतिसलिनता तपके ४ भेद १ इंद्री सलिहणाके पांच भेद (१) श्रोतेंद्री पडिसलिहणा—कानसे राग द्वेष पेदा होवे; ऐसा शब्द सुणना नही, और जो सुणाजाय तो राग द्वेष न करे (२) चक्षुइंद्री पडि०—आंखसे रागद्वेष पेदा होवे ऐसा रुप देखना नही, जो देखा जाय तो रागद्वेष करना

नही. (३) घ्राणेंद्री प०—नाकसे रागद्वेष पेदा होवे ऐसी गंध लेना नही, जो आ जाय तो रागद्वेष करना नहीं. (४) रसेंद्री प०—जभानसे रागद्वेष पेदा होय ऐसा खाना नहीं, रागद्वेष पेदा होय तो निषेधना. (५) स्पर्शेन्द्री प०—रागद्वेष पेदा हाए ऐसी वस्तु भोगमें लेना नही, जो आ जाय तो रागद्वेष करना नही.

२ कषाय पडिसलेहणाके ४ भेदः—(१) क्रोधको क्षमा से (२) मानको विनयसे. [३] कपटको सरलतासे और (४) लोभको संतोषसे जीते—पराजय करे. इस उपायसे चार ही 'कषाय'को जीते उस्का नाम "कषाय प्रती संलेहणा."

३ योग प्रतिसलेहणा—दुसरेसे जुडे सो जोग. जोग तीन प्रकारके १ मन योग. २ वचन योग. ३ काया योग.

(१) मन चार प्रकारकाः—१ सत्य मन योग (सच्चा वीचार) २ असत्य मन योग [खोटा वीचार] ३ मिश्र मन योग. (सच्चा खोटा दोनु भेली) ४ व्यवहार मन योग. ('सच्चा भी नही झूटा भी नही.)

१ 'दीवा जले गाम आया' इत्यादी वचन झूटे भी नही सच्चे भी नही.

[२] ऐसे ही बचनके ४ प्रकार समझना. इनमें असत्य और मिश्र बर्जके सत्य और व्यवहार प्रयोजन पडे प्रवर्तावे, उसे मन और बचन योग प्रती सलेहणा कहना.

(३) काया योग प्रति संलेहणा–काया योगके सात भेद. (१) उदारिक[1] (हाड मांसका बना हुवा सरीर) (२) उदारिक मिश्र (उदारिक सरीर पुरा नही बांधा वांहा तक दूसरे सरीरका मिश्र पणा रहै) [३] वैक्रिय[2] [एक रुपके अनेक रुप बनावे] (४) वैक्रिय मिश्र (वैक्रिय पुरा नही बंधा वांहातक) [५] आहारिक[3] १४ पुर्वके धारी मुनीको लब्धीसे होवे. (६) आहारिक मिश्र [आ-

१ मनुष्य तिर्यंचका. २ नर्क देवता तथा चक्रवर्ती आदि उत्तम पुरुष लब्धीवंत मुनी तथा वायू कायके होता है. ३ चवदे पूर्वके पढे हुये मुनीको तपके प्रभावसे आहारिक लब्धी उत्पन्न होती है जिससे मुनी किसी प्रकारका संदेह उत्पन्न हुये सरीरमेंसे आत्म प्रदेशका एक हाथ भरका पूतला नीकालके जिहां केवल ज्ञानी होवे वांहासे तुर्त छिण मात्रमें उत्तर मगा लेते है. देखीये आगेके मुनीकी शक्ती !

हारिक निपजाती बखतपावे](७) कारमाण [एक गती छोड दूसरी गतीमें जीव जाय तब बलाउ मुजब साथ रहे] इनमेंसे जित्ना जोग अपनको मिले होय उसे अधर्म मार्गसे रोक धर्म कार्यमें प्रवर्तावे, काछबेकी तरह इंद्री वस करके रक्खे.

४ " विचित सयणा सण सेवणय " १ वाडीमें [वेला उत्पन्न होवे सो] २ बगीचेमें [चारही तर्फ कोट होवे सो] ३ उद्यान [एक जातके वृक्ष होय उस] में ४ देव स्थान [यक्षादिकके मंदिर] में. ५ पाणीकी परब [पोह] में. ६ सराय [धर्मशाळा] में. ७ लोहार प्रमुखकी शालामें. ८ बनीयेकी दुकानमें. ९ साहुकारकी हवेलीमें. १० उपाश्रय [धर्म स्थान] में. ११ श्रावककी पोषधशालामें, १२ धानादिकके कोठारमें. १३ मनुष्योंकी सभामें. १४ पर्वतकी गुफामें. १५ राज सभामें. १६ छत्रीमें १७ स्मशानमें. १८ वृक्षके नीचे. ये ठिकाने साधूको रात्री निर्गमन करनेकी है परंतू वहां जो स्त्री, परंतू [गायादि], पडंग (नपुशक) रहता होय तो मुनी रह सके नहीं. यह ६ प्रकारके बाह्य तप हुये.

अभ्यंतर तप के ६ भेद.

पायछित्तं विणउ, वयावच्चं तहव सझाउ ।
झाणं च विउसग्गो, एसो अभ्यंतरो तवो ॥

७ "पायछित" (प्रायश्चित) पापसे नीवारे सो प्रायश्चित.

दोष (पाप) दश प्रकारसे लगता है. १ कंदर्प (काम) के वस. २ प्रमाद के वस. ३ अजाणपणे. ४ क्षुधा के वस. ५ आपदा* (वीपत) पडे. ६ किसी प्रकारकी संका पडे. ७ उन्मत्त (मद—नसे) से. ८ भय (डर) के वस. ९ द्वेषके वस. १० किसी-की परीक्षा करनेकु दोष लगावे.

अवनीत दश प्रकारसे आलोवे (गुरु के आगे पाप प्रकासे) १ क्रोध उपजाके. २ प्रायच्छित के भेद पूछके. ३ दूसरेने देखे उत्ने ही दोष कहे. ४ छोटे दोष प्रकासे, बडे २ छीपावे. (निंदा के डरसे) ५ मोटे २ कहे, छोटे न कहे (निर्माल्य समझ कर) ६ कुछ समजे कुछ न समजे ऐसा बोले. ७ लोकोंको

* आपदा चार प्रकार. द्रव्यसे—आहार प्रमुख न मीले तो, क्षेत्रसे—अटवीमें पडे तो, कालसे—दुष्काला-दिकमें, भावसे—कोइक रोग उत्पन्न हुये.

सुणा के कहे (प्रशंसा अर्थे). ८ बहोत मनुष्य के सामे कहे. ९ जो प्रायश्चित देनेकी विधी न जाणे उन्के आगे कहे. १० सदोषी की आगे कहे, ऐसा हेतुसे कि वो दोषी होनेसे कमी प्रायछित देवेंगे.

विनीत (अच्छा) दश गुणका धणी होय सोइ आलोयणा करे. १ पोते शुद्ध आत्माका खटका-वाला. २ जातवंत. ३ कुलवंत. ४ विनयवंत. ५ ज्ञान-वंत. ६ दंशणवंत. ७ चारित्रवंत. ८ क्षमावंत वैराग्य-वंत. ९ जितेंद्री. १० जिस्को पापका पस्तावा होय सो.

दश गुणका धणी प्रायछित दे सके. १ शुद्ध आचारी. २ व्यवहार शुद्ध. ३ प्रायच्छित की विधी के जाण. ४ शुद्ध श्रद्धावंत. ५ लज्जा दूर कराके पूछे. ६ शुद्ध करने समर्थ होए. ७ गंभीर (किसीके आगे पाप प्रकासे नही ऐसे) होवे. ८ दोषी के मुखसे दोष कबूल कराके प्रायच्छित देवे. ९ व्रिचक्षण (नीघामें समजे) १० प्रायच्छित लेनेवालेकी शक्ती के जाण होवे.

दश प्रकारका प्रायच्छित. १ 'आलोयणा' स्वतः के लिये या आचार्य उपाध्याय स्थिवर बाल-ग्लानी (रोगी) शिष्यादिकके लिये वस्त्र पात्र औ-

षध आहार पाणी प्रमुख लेनेको स्थानकके बाहिर जाय और ले के पीछा आवे बिचमें जो समाचार हुये होय सो गुरुके आगे प्रकासे. उससे अजाणमें पाप लगा होय जिससे निवर्ते. २ प्रतिक्रमण बोलनेमें आहारमें विहारमें पडिलेहणामें परिठेवणेमें जो कोइ अजाणपणे दोष लगा होय, तो वो प्रतिक्रमण कर मिच्छामी दुष्कृत्यं देनेसे कमी होवे. ३ 'तदुभये' दूसरा प्रायश्चितका काम उपयोग सहित करे तो वो पाप गुरु आगे प्रकाश के 'मिच्छामी दुष्कृत्यं' देनेसे कमी होवे. ४ विवेगे. अशुद्ध वस्तू आ गइ तथा तीन प्रहर उप्रांत रह गइ ऐसे अकल्पनीक वस्तू को परठोवणे (न्हाख देने) से पाप कमी होवे. ५ 'विउसग्गे' दूस्वपन प्रमुख पापका उत्सर्ग करनेसे कमी होवे. ६ 'तवे' पृथव्यादिक सचित पदार्थका संघटा करे तो अंबिल उपवासादिक तपसे शुद्धी होवे. ७ 'छेद' अपवाद सेवन करे उसे पांच दिनादिकका छेद (चारित्रमेंसे दिन कमी कीये जावे) ८ 'मूल' जो आकूटी (जाणके) हिंसा करे झूट बोले चौरी करे मैथून सेवे धातू पास रक्खे रात्री भोजन करे

उस्को दूसरी बखत दिक्षा दे के छोटे साधूको वंदना कराइ जाय. ९ 'अपावठपः' जो क्रूर भावसे स्व आत्माकों तथा पर आत्माको लकडी मुष्टीयादिक प्रहार करे मूठादिक कर घात करे, गर्भ गाळे उस्के पास एसा कठिण तप करावे की उस्को उठने की सक्ती न रहै. फिर दिक्षा दे के शुद्ध करे. १० 'पारंचिय' प्रवचन उत्थापक. साध्वीका व्रत भंग करनेवाला. उसे जिनकल्पी आदी की तरह भेष प्रवर्तीके जघन्य ६ मास मध्यम बारे मास उत्कृष्ट १२ वर्ष संभोग बाहिर रहे ग्रामादिकमें गुप्तपणे वीचरे अनेक दुक्कर तप करे फिर नवी दिक्षा दे के संभोगमें लेवे. इन दश प्रायच्छितमें से आठ तो अबी दीये जाते है; दोका अवसर नहीं.

८ "विनय तप" अपनेसे बडे ज्ञानादिक गुणमें अधिक होवे उन्का सत्कार सन्मान करे सो विनय. विनयके सात भेद. १ ज्ञान विनय. २ दंशण विनय. ३ चारित्र विनय. ४ मन विनय. ५ बचन विनय. ६ काया विनय. ७ लोग व्यवहार विनय. १ ज्ञान विनयके पांच भेद. १ मती ज्ञान उत्पातीयादिक

*चार बुद्धिके धणीका. २ श्रुती ज्ञान. निर्मल उप्योग वंत शास्त्रके जाणका ३ अवधी ज्ञान. मर्यादा प्रमाणे क्षेत्रके रुपी पदार्थकों देखे उनका. ४ मनः पर्यव ज्ञान. सन्नीके मनकी बात जाणे उन्का. ५ केवल ज्ञान. सर्व द्रव्यक्षेत्रकालभावकी बात जाणे उन्का; इन ५ जणेका विनय करे.

२ दंशण विनयकें दो भेद. १ शुद्ध श्रद्धावंतकी शुश्रुषा करे, वो पधारे तब सत्कार दे, आसन आमंत्रे, वंदना (गुणग्राम) नमस्कार करे, अपने पास उत्तम वस्तू होवे सो उन्को समर्पण करे, यथा शक्त यथा योग्य सेवा करे. २ दूसरी अनासातना (असातना नहीं करणी) उस विनयके ४५ भेद. (१) "अरिहंताणं अणच्चासादणया" श्री अरिहंत भगवंतकी असातना टाल. अर्थात् अमुक अरिहंतके नाम जपनेसे शांती होती है और अमुकके नामसें उपद्रब दुश्मन द्रव्यका नाश होता है, इत्यादि शब्दसे अरिहंतकी अशा-

*१ उत्पातीया (नवी वात बनावे) २ विनीया (विनय करते बुद्धी बडे) ३ कम्मीया (ज्यों ज्यों काम करता जाय त्यों त्यों सुधरता जाय.) ४ प्रणामीया [ज्यों ज्यों वय उम्मर प्रणमे त्यों त्यों बुद्धी प्रणमें]

तना होती हैं, उससे बचे. २ "अरिहंत पणत्तस धम्मस अणच्चासादणया" श्री अरिहंतके परुपे हुये निर्दोष धर्मकी भी आशातना नही करनी, अर्थात् जैन धर्म तो श्रेष्ट है परंतू इसमें स्नान तिलक इत्यादिक कुच्छ अवलंवन नही सो ठीक नही है; इत्यादि शब्द कहनेसे अरिहंतके धर्मकी आशातना होती है. ३ आयरियाणे अ० "श्री आचार्य (गुरु) जी पंचाचारके पालनेवाले अर्थात् गुरुजी वय बुद्धीमें कमी होवे तो भी वो तो सदा पुजनीक है. ४ 'उवझायाणे अणा.' द्वादशांगी पाठी तथा बहुत शास्त्रके जाण संयमके गुण युक्त उपाध्यायजीकी, ५ थेवराणं अ. दिक्षा वय और सूत्र इन ३ स्थैवर * साधूकी, ६ 'कुलस अ.' एक गुरुके बहुत शिष्य होवे उसे कुल कहते है उन्की ७ 'गणस' एक समुदायके साधूको गण कहते है ८ 'संघस अ.' साधू साध्वी श्रावक श्राविका इन चारही संघकी. ९ 'किरायाणं.' जिनकी

* स्थैवर तीन प्रकारके १ वीस वर्षके उपर दिक्षा हुइ होवे सो दिक्षा स्थैवर. २ साठ वर्षके उपर उम्मर हुइ होवे सो वय स्थैवर. ३ ठाणायं समायंगके जाण होवे सो सुत्र स्थैवर.

जिनोक्त शुद्ध क्रिया होवे उन्की. १० 'संभोगीयस' जो एक मंडलपे बेठके आहार पाणी करनेवाले साधू है उन्की. ११ मति ज्ञानीकी, १२ श्रुत ज्ञानीकी, १३ अवधि ज्ञानीकी, १४ मनः पर्यव ज्ञानीकी, १५ केवल ज्ञानकिी; इन १५ की आशातना नही करना.

यह पनरेकी बहुत प्रेमसे भक्ति करनी सो महा नफाका कारण जाण भक्ति करनी. ये ३० और इन पन्नरे ही के गुण ग्राम करने यह ४५

३ चारित्र विनय. चार गतीसे तारे सो चारित्र. जिस्के ५ भेदः—(१) 'सामायिक चारित्र' (सम—आय—इक) सम भावका लाभ होवे उसे सामायिक चारित्र कहना. सामायिक चारित्रवंत मुनी त्रिविध २ सर्वथा प्रकारे सावद्य (जिससे दुसरेको दुःख होवै ऐसे) जोग (मन बचन काया प्रवर्तानेके) के त्याग करे, जाव जीव तक. (२) 'छेदोपस्थापनी चारित्र' (छेद, दोष, स्थापन) सामायिक चारित्र लिये पीछे जघन्य ७ मे दिन मध्यम ४ मास उत्कृष्ट ६ मासमें छेद (पंच महाव्रत) स्थापन कीये जावे. [ये रीवाज पहले छेले तिर्थंकर के बारेमें होता हैं.] (३) 'परिहार विशुद्ध चारित्र'. नव वरसकी वय

(उम्मर) वाले नव जणे साथ दिक्षा ले, नव पूर्व संपूर्ण और दशमे पूर्वकी तीसरी आयर वत्थू पडे, फिर गुरुकी आज्ञासे परिहार विशुद्ध चारित्र ग्रहण कर चार जणे तप करे, चार जणे व्यावच्च करे, एक व्याख्यान बांचे, यों छे महीने पूरे होवे तब तपस्या करनेवाले वयावच करे, वयावच्चवाले तप करे और व्याख्यानवाले व्याख्यान बांचे. यों छे महीने पूरे होवे तब. व्याख्यान बांचनेवाले § तप करे और आठ जणे मिलके वयावच करे. यों अठारे महीनेका परिहार विशुद्ध चारित्र कहा. (तीन शुभ लेश्या तेजू, पद्म, सुक्ल रखे.) (४) 'सुक्ष्म संपराय.' सुक्ष्म (थोडासा) संपराय (संज्वलके लोभ रुप संप्रायिक क्रिया रहे) यह चारित्र फक्त दशमे गुण स्थानकवर्ती जीवको अंतर मुहुर्त मात्र रहता है. (५) 'यथाख्यात चारित्र' जैसा श्री वीतरागदेवने शास्त्रमें साधूका आचार कहा है वैसाही मूल गुण उत्तर गुणमें दोष रहित शुद्ध पाले. इस चारित्रके धणीको अंतर

§ परिहार विशुद्ध चारित्रवाले उष्णकालमें उपास, बेला, तेला, करे; सीतकालमें बेला तेला, चोला; चौमासेमें, तेला, चोला, पचोला करे.

मुहुर्तमें केवल ज्ञान प्राप्त होता है. इन पांचही चारित्र-वालेका विनय करे सो चारित्र विनय.

४ मन विनय. मनसे नम्रता कोमलता रक्खे. इस्के दो भेदः–(१) प्रशस्त (अच्छा) (२) अ-प्रशस्त (खोटा). सावद्य, कर्कश, कठोर, छेद भेद परितापकारी मनको बर्जके, निर्दोष मन प्रवर्तावे.

५ बचन विनय–मनकी तरह अप्रशस्त (खोटा) वचन बर्जके, प्रशस्त (अच्छा) बचन बोले.

६ काया विनयके दो भेद (१) प्रशस्त (२) अप्रशस्त. इन एकेक के सात २ भेद. १ गमना गमन २ खडा रहना. ३ बैठना. ४ सोना. ५ उलंघना. ६ पलंघना (पीछा फिरना) ७ और सर्व इंद्रीयों के काम अयत्नासे नीवार के यत्ना युक्त प्रवर्तावे. यों ७×२=१४ भेद काया विनयके.

७ लोक व्यवहार विनय के सात भेदः–(१) गुरुकी आज्ञामें चले. २ गुणाधिक स्वधर्मीकी आज्ञामें चले. ३ स्वधर्मीका कार्य करे. ४ उपकारीका उपकार माने. ५ आर्त (चिंता) उपसमावे. (मिटावे). ६ देशकाल उचित प्रवर्ते. ७ सर्व कार्यमें सदा विच-

क्षणपणे निष्कपटपणे, सर्वको सुहाता, प्रवर्ते. इति विनय तप.

९ "वैयावच तप" अर्थात् सेवा भक्ती करना उस्के १० भेदः–§ (१) आचार्य (२) उपाध्याय. (३) नवि दिक्षित शिष्य. (४) गिल्याणी (रोगी) (५) तपस्वी. (६) थेवर (७) स्वधर्मी [८] कुल (गुरु भाइ) (९) गण (संप्रदायके साधू) (१०) सिंघ (४ तीर्थ) इन दश जणेको आहार वस्त्र औषध जो वस्तू चाहिये सो ला देवे, हाथ पांव चांपे, इत्यादि वैयावच करे.

१० "सझाय तप"–शास्त्राभ्यास करे सो सझाय. इस्के ५ भेद १ 'वायणा' गीतार्थ (बहु सूत्री) के पास शास्त्रकी वाचना लेवे (सूत्र पढे) जो सुत्र बांचे उस्में शंका पडे तो तथा विशेष अर्थके लिये (२) 'पडि पूछणा' विनय युक्त पूछके संदेह टाले. परंतू पूछते किसी प्रकारकी सर्म (लज्जा) न रखते जांहा तक बुद्धी पोहोंचे वाहां तक भिन्न २ खुलासा

§ इसकालमे अरिहंत नही है इस लिये वयावच्च (सेवा भक्तीमें) अरिहंतजीका नाम नही. और पहली विनय (गुणग्राम) में नाम लिया है.

करे. जो पूछके संदेह रहित ज्ञान हुवा हैं उसे (३) 'परियट्टणा' वारंवार फेरता रहै, जिससे वो पक्का होवे, तर्क उपजे, और वखतपे तुर्त याद आवे. फेरना तो पोपट विद्याकी तरह उस्को न फेरे परंतु (४) 'अणुपेहा' उपयोग सहित जो कहे उस्के अर्थपे उपयोग लगाता रहे. ज्ञानमें उपयोग लानेसे महा निर्जरा होती है और बुद्धीकी वृद्धि होती है. इन चार कामसे जो ज्ञान पक्का निसंदेह हो गया है उसे (५) 'धम्म कहा' बहुत मनुष्योंकी प्रषदामें सर्वके हृदयमें ठसे, अवस्य गुण पैदा होवे ऐसा उपदेश देवे. मिथ्यात्वका उत्थापन करे सत्य सनातन दया धर्मको स्थापे.

११ ज्ञाण. अंतःकरणमें बिचारणा होती है उसे ध्यान कहते है. ध्यान ४ है, जिस्में दो अशुभ और दो शुभ. १ आर्त ध्यान. २ रौद्रध्यान (ये अशुभ). ३ धर्म ध्यान. ४ शुक्ल ध्यान. [ये शुभ]

१ आर्त ध्यानवालेके चार बिचार. १–२ मनोज्ञ [अच्छे] शब्द रुप गंध रस स्पर्श इनका संयोग और खराब शब्दादिकका वियोग चिंतवे. ३ ज्वरादिक रोगका नाश और [४] काम भोग सदा बने

रहो ऐसा चिंतवे. इस आर्त ध्यानवाले के चार लक्षण. १ आक्रंद (अरडाट) करे. २ सोग [चिंता] करे ३ अश्रूपात करे. ४ विलापात (त्राही त्राही) करे. इन चार लक्षणोंसे आर्त ध्यानवंत जाणा जाता है.

२ ' रुद्रध्यान ' वाले के चार विचार. १ हिंसा २ झूट ३ चौरी. ४ दुसेरको दुःख देनेका चिंतवे. २ इस्के चार लक्षणः—१ हिंसादिक चिंतवे. २ इन्का वारंवार वि-चार करे. ३ अज्ञान पणेसे अकृत्यमें धर्म संज्ञा स्थापे, काम शास्त्र सीखे. ४ मरे वांहातक पापका पश्चा-ताप न करे.

३ धर्म ध्यानवालेके चार विचारः—१ आणा-विजय—श्री वीतरागकी आज्ञाका चिंतवन करे के प्रभूने आरंभ परिग्रह खोटा कहा और तू तो इ-स्में लुब्ध हो रहा है, तो तेरी गती कैसी होगी? अब तो इस्का त्यागन कर. २ ' आवाय वीजय ' यह प्राणी अनादि कालसे रागद्वेष रुप बंधसे बंधा रहा है, जिससे चतुर्गतिमें अनंत परिताप सहन किया, अब तो इस फासको तोडके सुखी हो. ३ ' विवाग विजय '—मैंने शुभाशुभ कर्म कीये, जिससे सुख दुःखरुप कडूवा और मीठा दो तरहका पाव

तैयार हुवा है. सो अब भोगवते हर्ष सोग क्यों कर-ता है? संपूर्ण भुगतेगा तब मोक्ष मिलेगा. ४ 'संठा-ण विजय'. वीतराग देवने तीन दीवे उपराउपरी रखे होवे ऐसा संपूर्ण लोकका संठाण कहा है. उस्में नीचेके उलटे दीवेमें सात नर्क, इस्की संदीमें त्रीछा लोक, बीचके दीवे तक पांचमा देवलोक, उपरके दीवेमें २२ देवलोक मुक्तसीला और उपर सिद्ध है.

"धर्म ध्यानी के चार लक्षण":—१ 'आणा रुई', वीतरागने शास्त्रमें जो शुभ क्रिया फुरमाइ उसे अं-गिकार करनेकी रुची (इच्छा) पैदा होवे. २ 'निसग रुइ' जीव अजीव पुन्य पाप आश्रव संवर निर्जरा बंध मोक्ष इन पदार्थोंको सत्य जाणे. ३ 'उपदेश रुइ' गुरु आदिक सत्य उपदेश करे उसे सूणनेकी रुची जगे. ४ 'सुत्तरुइ' द्वादशांगी वाणी बांचने सुणनेकी इच्छा जगे.

इस "धर्मध्यानी" के ४ आलंबन (आधार):— १ वायणा. २ पूछणा. ३ परियट्टणा. ४ अणुपेहा. (ईन्का अर्थ पहले कहे है.)

धर्म ध्यानकी चार अनुप्रेक्षा (वीचारना):—१ 'अणीचाणु पेहा' इस जगतके पुद्गलीक (पूरे—

गले–नाशे) पदार्थ पे तूं प्रीती रखता है. परंतू ये ही संपत्ति तेरेको विपत्तिरुप होगी; क्योंकी तेरे पुन्य खुट गये तो तेरे देखते इस्का विनाश हो जागा. और जो तेरे आयुष्य खुट गया तो तेरे बापदादे छोड गये तैसे तूं बी महमदगीजनीकी तरह रोता हुवा चला जायगा. इस सुखके लिये मेली करी सो प्रत्यक्ष दुःखरुप हो जायगी. इसलिये जो पुन्यसे संपत पाइ है उस्में ममत्व नही करे तो पर्म सुखकी प्राप्ती होगी.

२ "असरणाणू पेहा" हे प्राणी! इस जगतमें तेरेको सरण (आधार) भूत कोइ नही है. तू स्वजनकों आधार भूत जाणता है परंतू वो तो तेरे पास धन है और तेरा सरीर ससक्त है तब तक तेरी साहाय करेगे. पुन्य खुटनेसे तेरे स्वजन ही तेरे दुश्मन बन जायगें और अनेक कटू वचनसे शारीरीक मानसीक पीडासे तूझे सतायगें ऐसा जाण एक श्री जिनेश्वर भगवानका सरण ग्रहण कर के वो तेरेको भवोभवमें आधार भूत हो सुखी बनावे.

३ "एगताणु पेहा" हे प्राणी! तूं अकीला आया, अकीला हैं और अकीला ही जायगा. यह

सरीर ही तेरा नही, तेरे साथ आया नही और ले जायगा भी नही, तो दूसरेका तो क्या कहना? देख तूं तो नित्य अक्षय अविनासी है और तेरा संबंध अनित्य क्षणभंगूर है. इस क्षणभंगूर पदार्थों के संगसे ही तेने अनंत बीटंबना भूगती तो भी तेरी इनके उपरसे हाल तक ममत उतरी नही. धिकार है रे मूर्ख के गुरु तेरेको मकरीकी तरह जाल पसार के तूं अपने हाथसे फसता है और फिर रोता है. और उन्कोइ मेरा २ कहता है. वाहारे अकलमंद! अरे अब तो जरा आंख उघाड मोहाधुंद उतार. और तेरा ज्ञान दर्शन चारित्ररुप त्री रत्न है जिन्कों पेछाण और उन्के साथमें प्रीतीकर. ४ "संसाराणू पेहा"—हे प्राणी! यह चतुर्गतीरुप संसारमें तेने अनेक घोर दुःख सहे, नर्कमें क्षेत्र वेदना और यमों-की मार, तिर्यंचमें छेदन भेदन तर्जन ताडन, मनु-ष्यमें दुःख दारिद्रता और देवतामें अभोगीपणा बज्र प्रहार. अब इन दुःखसे मुक्त होनेका मोका (अवसर) मिला है सो हे प्यारे प्राणी! तूं ताहा मन तहा चित्तसे सर्व आरंभ परिग्रहका त्याग कर. आंतरिक प्रकृतीयोंका दमन कर और भगवंतकी आज्ञाका यथा

तथ्य आराधन कर की जिससे तुजे शिघ्र परम पद प्राप्त होय. यह धर्मध्यानके ४×४ सोल भेद हुये.

४ सुक्कध्यानके—चार प्रकार. १ " पुहत्त वीयके सवीयारी " अनंत द्रव्य रुप यह जगत है इसमेंसे एक ही द्रव्यका स्वरुप ग्रहणकर उस्की उत्पत्ति क्षय और ध्रुवताके जुदे २ पर्यायोंका अर्थसे शब्दमें और शब्दसे अर्थमें वीचार करे. २ ' एगत्तवीयकेअवीयारी ' उत्पति आदि पर्यायके जित्ने द्रव्य है उन्का एकत्र पणा, अभेद पणा, आकाशादी प्रदेशका अवलंब पणेका बीचार करे. ३ ' सुहुमाक्रिए अपडवाइ ' सर्व क्रीयामें सुक्षम क्रीया इरिया वही है की जो फक्त समय मात्र रहती है. वोही उन्के रही हैं ऐसे तेरमे गुणस्थाना वलंबी श्री केवली तिर्थंकर भगवान उनके समय २ शुभ प्रणामकी वृद्धि होती है. ४ " समुच्छिन्न क्रिया अनीयट्टी " सर्व क्रीयाका क्षय कर सेलेसी (पर्वतकी पेरे स्थिरी भूत प्रणामके धणी) अयोगी केवली पांच लघु अक्षर [अ इ उ ऋ ल] के उच्चार प्रमाणे कालान्तरे निराबाध अचल अक्षय मोक्ष स्थानकों प्राप्त होवे.

" सुक्लध्यानके चार लक्षण " १ ' विवेगा '

जैसे तिलसे तेल, दूधसे घी, मट्टीसे धातू जुदी है तैसे ही सरीरसे जीव जुदा है. तिलादिकमें रह्या पदार्थ घाणीयादिक द्रव्यके जोगसे निज रुपको प्राप्त होता है. तैसे जीव भी ज्ञानादिकके संजोगसे मोक्षको प्राप्त होता है. २ 'विउसग्ग' इस जगतमें दो प्रकारके संयोग है १ बाह्य, जिस्के भी दो भेद है, एक पुर्वात सो माता पितादि स्वजन. और दूसरा पश्चात् सो श्वसुर सासु पत्नी प्रमुख. २ अभ्यंतर (अंतरिक) क्रोधादि कषायकी प्रणती. इन दोनु संयोगका त्याग कर सदा रागद्वेष रहित रहैं. ३ 'अवहे' अनुकुल (मन गमता स्त्रीयादिकके हाव भाव कुटाक्षका) और प्रतिकुल (देव दानव मानवकी करी हुइ वेदना उपसर्ग) इन दोनु प्रकारके परिसहकों समभाव सहै. इंद्रकी अप्पछरा या विक्राल दैत्य भी इन्को ध्यानसे चलाने समर्थ नहीं. 'असमोह' शब्द रुप रस गंध स्पर्शादिक मनोज्ञ या अमनोज्ञ किसी भी पदार्थसे रागद्वेष पेदा न करे.

सुक्लध्यानीके चार अवलंबनः—'खंती' क्षमामें सदा मग्न रहे, कोइ कुच्छ भी कहो सार पदार्थकों ग्रहण कर असारका त्याग न करदे. २ 'मुत्ती'

किसी वस्तू पर ममत्व भाव नहीं करे. ३ 'अज्जव' आर्य सरल बाह्य अभ्यंतर एकसी वृत्ति रखे. ४ 'मद्दव' निरभिमानी सदा नम्र रहै.

सुक्लध्यानीकी चार 'अनुप्रेक्षाः—' (बीचारना) १ "अवायाणुपेहा" हिंसा झुट चोरी मैथून परिग्रह यह पांच ही आश्रव अनर्थके मूल जीवको दुःख दाता है इन्के त्यागसे ही सुखी होते है. "असुभाणुपेहा" इस जगतमें जित्ने पुद्गल मय द्रव्य पदार्थ है वे सर्व अशुभ इन्का संग छूटनेसे ही सुखी होते है. ३ 'अनंत वित्तीयाणुपेहा' इस जीव अनंत कालसे अनंत पुद्गल परावर्तन कर अनंत भवोंकी श्रेणीके पुंज कर आया है इस्के छुटते सुखी होते है 'विपरिणामाणुपेहा' जैसे सन्ध्या (फूली हुइ संज्या) इंद्र धनुष्य, पत्रपे मेघ बिंदू अति सुन्दर दिखते २ क्षिणमें नहीसे हो जाते है, तेसे है इस जगतमें स्त्री पुरुषका जोडा वस्त्र भूषणका चमत्कार संपत्ति संततीका संयोग देखते २ क्षिण भरमें नष्ट हो जाता है, फिर इस्की क्या इच्छा करना ? ऐसे बीचार सुखी होवे. यह सुक्लध्यानके १६ भेद हुये.

यह चार ध्यानके ४८ भेद जिस्मेंसे १६

हेय (तजने योग) ३२ उपादेय (आदरने योग.)

१२ "वीउसग्ग" त्यागने योग वस्तूका त्याग करे सो विउसग्ग. विउसग्गके दो भेदः—१ द्रव्य विउसग्ग. और २ भाव विउसग्ग. १ द्रव्य विउसग्गके ४ भेद. (१) 'सरीर विउसग्ग' अर्थात सरीरसे ममत्व त्यागे, विभूषा सार संभाल नही करे. (२) 'गण विउसग्ग' जो साधू ज्ञानवंत क्षमावंत जितेंद्रीय अवसरका जाण, धीरवीर द्रढ श्रद्धावंत इत्यादि गुणका धणी होय सो गुरुकी आज्ञासे संभोग [संप्रदाय] का त्याग करके एकल विहारी होवे. ३ "उपही विउसग्ग" वस्त्र पात्र कमी करे. ४ 'भत्तपाण विउसग्ग' नौकारसी. पोरसी. पुरिमल (दोपोरसी) इत्यादि कालतक या द्रव्यादिकका प्रमाण करे सो भत्तपाण विउसग्ग.

२ 'भाव विउसग्ग' के ३ भेद (१) "कषाय विउसग" सो क्रोधादि चार ही कषायका स्वरुप कहा है उसे कमी करे. २ 'संसार विउसग्ग' सो चार गतीमें जानेके सोले कारणकों छोडे. "नर्कमें जानेके ४ कारण":—१ महा आरंभ (सदा छे ही कायका अती घमशान) २ 'महा परिग्रह' (अत्यंत

लोभ) ३ मद्य (दारु) और मांसका भक्षण. ४ पचेंद्री प्राणीकी घात. "तिर्यंचगती के ४ कारण":– (१) दगा कपट. २. विश्वासघात. ३ झूट बोलना और ४ खोटे तोले मापे रखणा. "मनुष्य गतीमें जाणे के ४ कारण":–(१) विनयवंत. (२) भद्रिक प्रणामी. (३) दयालू. (४) गुणानुरागी. देवगतीमें जाणे के चार कारणः–(१) सराग संयम (साधू हो के शिष्य शरीरपे प्रेम रक्खे). २ संयमा संयम [श्रावक पणा]. ३ बाल तपस्वी [पंचाग्नी आदिक तापनेवाले]. ४ अकाम निर्जरा (परवस शुभ भावसे दुःख सहन करनेवाले). इन १६ कर्मके त्याग करे, मोक्ष जानेके ४ काम–ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तपको अंगिकार करके बिचरे सो 'संसार विउसग्ग'

'कम्म विउसग्ग' के ८ भेद हैं. (१) ज्ञानावरणीय, (२) दर्शनावरणीय, (३) वेदनीय, (४) मोहनीय, (५) आयुष्यकर्म, (६) नाम कर्म, (७) गोत्रकर्म, (८) अंतराय कर्म.

इस्का सविस्तर बयान आगे किया जायगा.

इस मुजब छे प्रकारे बाह्य (प्रगट) और छे प्रकारे अभ्यंतर (गुप्त) यों बारे प्रकारे तपका अधि-

कार पूर्ण हुवा. यह निर्जरा के ३५४ भेद हुये.
॥ इति तपाचार* ॥

(५) वीर्याचार.

सूमार्गमें बल वीर्य पुरुषाकार पराक्रमका व्यय करे सो वीर्याचार श्री आचार्य भगवंत क्षिण निकम्मे रहे नही, सद् ज्ञान ध्यान तप संयम सदुपदेश इन्की वृद्धि करे, उस्में आत्माको रमावे. और दूसरेको उपदेश करे की अहो भव्य जीवो! तुमने परवस अनेक कष्ट भूख प्यास सीत ताप मारताड सहन करी परंतू तुमारी कुछ गर्ज सरी नही, उलटा इस भवमें और पर भवमें महा दुःखी हुवा; जैसा तेने अनंत भव भ्रमणमें कष्ट सहन कीया है उस्के अनंतमे भाग जो तू धर्म मार्गमें सहे, स्ववसे काम भोगसे निवर्ते, संयम तपमें साहासिक पणा धारण करे, अनेक प्रकारकी दुक्कर तपस्या करे, ग्रामानुग्राम उग्र विहार करे, अनेक आर्यानार्यके परिसह कीये हुये समभाव सहन करे, निरंतर धर्माराममें मन रमावे,

* ज्ञानके ८, दर्शन के ८, चारित्र के ८ और तपके १२, यह आचार्यजी के ३६ गुण भी गिने जाते है. इन ३६ कामोमें ५ वीर्याचार फोडे सो आचार्य भगवंत.

आंतरिक प्रकृतीयोंका दमन करे तो तेरा कल्याण हो जाय, भव भ्रमण मिट जाय, शिघ्र शाश्वत सुखकी प्राप्ती, सदा आत्मानंद परमानंदमें आत्मा रमाणे वाला होवे. इत्यादि उपदेश करके अन्य जनोंका धर्म मार्गमें बल वीर्य पुरुषाकार पराक्रम फोडावे. सो पांचमा वीर्याचार जाणना. इति.

पंच समइत्ति गुत्तो. पांच सुमती और तीन गुप्तीका बयान चारित्राचारमें है.

" पचिंदीय समरणो " आचार्य भगवंत पांच इंद्री वसमें रक्खे.

१ श्रोतेंद्री–(कान) की तीन विषय (१) जीव शब्द (जीव बोले सो) (२) अजीव शब्द (भींतादि पडने से होवे सो) (३) मिश्र शब्द (वाजींत्र अजीव बजानेवाला जीव दोनु मिलके शब्द होवे सो मिश्र शब्द.) इस्के बारे वीकार. पहले तीन कहे उस्को दो गुणा करना. शुभ सो जैसे पुनवान प्राणी बोले तो अच्छा लगे और पापी बोले तो खोटा लगे. यह जीव, रुपये पडे तो उस्का शब्द अच्छा लगे भींत पडनेका शब्द खोटा लगे. ये अजीव. ओत्सवका बाजिंत्र अच्छा लगे और मृत्यूका और संग्रामका

बाजिंत्र खराब लगे. ए मिश्र. यों तीनके दो भेद करने से छे हुये. इन छे पे कबी राग (प्रेम) और कबी द्वेष उत्पन्न होता है. अच्छे शब्द पे भी किसी समय द्वेष आजाता है; जैसे लग्न होता है तब कहे की 'राम नाम सत्य है!!' तो खोटा लगे. और कदी खोटा शब्द अच्छा लगता है; जैसे सासरेमें गालीयों. यों छे के दो गुणे करनेसे श्रोतेंद्रीके बारे बीकार हुये. इस इंद्रीके वसमें पडके मृग सर्प इत्यादि पसू मारे जाते हैं. ऐसा जाण कभी राग द्वेष उत्पन्न होवे ऐसा शब्द सुणना नही और कभी कानमें आजाय तो उस्पे राग द्वेष करना नहीं. क्यों की राग द्वेष कर्मोंका बंध है. इस भवमें या आगे के जन्ममें बधीर पणा या कानके अनेक रोग प्राप्त होते हैं. और वसमें करता है वो इंद्री निरोगता पाता है, अनुक्रमे मोक्षमें जाता है.

२ चक्षू इंद्री (आंख) की पांच विषयः—१ काला २ नीला (हरा) ३ लाल ४ पीला. ५ श्वेत.* इस्के साठ वीकार. पांच वर्णकी वस्तूमें कित्नीक सचित

* मूलमें तो वर्ण ५ है परंतू इन्की मिलावटसे अनके रंग हो जाते है.

(सजीव) कित्नीक अचित (निर्जीव) कित्नीक मिश्र (सचित अचित दोनु भेली) होती है. ५×३=१५. यहां १५ कभी शुभ होती है और कभी अशुभ भी होती है. यों १५×२=३०. इन तीसपे कभी राग और कभी द्वेष पेदा होता है यों ३०×२=६० चक्षू इंद्री के वीकार हुये. इस इंद्री के वसमें पडके पतंगीया दीवेमें झंपापात ले मरण पामता है. ऐसा जाण राग द्वेष उत्पन्न होवे ऐसा रुप देखना नही और जो देखनेमें आवे तो राग द्वेष करना नही. जो राग द्वेष करता है वो इस भव परभवमें चक्षू इंद्रीकी हीणता पाता है, और वसमें करता है सो चक्षू इंद्री नीरोगी पाके अनुक्रमे मोक्ष पाता है.

३ घ्राणेंद्री (नाक) इस्की दो विषय (१) सुर्भीगंध. (सुगंध) (२) दुर्भीगंध. (दुर्गंध) इस्के वारे बीकार. यह दो सचित, दो अचित, दो मिश्र इन छेपे राग और छेपे द्वेष, यों १२ बीकार हुये. इस इंद्रीके बसमें पडके भ्रमर फुलमें मारा जाता है. ऐसा जाण रागद्वेष पेदा होवे ऐसा शब्द सुणना नही और भी आ जावे तो रागद्वेष करना नही; क्योंकी रागद्वेष घ्राणेंद्रीकी हीणता पाता है और

बसमें करनेसे घ्राणेंद्री निरोगी पाके अनुक्रमे मोक्ष मिले.

४ रसेंद्री (जीभ) की पांच विषय. १ खट्टा २ मीठा. ३ तीखा. ४ कडुवा. ५ कसायला. और साठ वीकार यह पांच सचित अचित्त मिश्र. योंतीन गुणे करनेसे १५ हुये ये १५ शुभ और १५ अशुभ यों ३० हुये. यह तीसपे राग और ३० पे द्वेष ६० वी-कार हुये. इस्के वसमें पडके मच्छी मारी जाती है. ऐसा जाण किसी रसपे रागद्वेष करना नही. क्योंके रागद्वेषसे रसेंद्रीकी हीणता प्राप्त होती है वसमें कर-नेसे निरोगीपणा पाके अनुक्रमे मोक्ष प्राप्त होती है. यह रसना इंद्री वसमें करनेसे पांच ही इंद्री सहजमें वस होती है. कहा है, " एक धापो तो चार भूखी और एक भूखीको चार धापी " जो रसना इंद्री (पेट) भरी होवे तो कानकों रागरागणी सुणनेकी, आंखोसे रुप देखनेकी, नाकसे सुगंध लेनेकी, और सरीरसे भोग भोगवनेकी इच्छा उत्पन्न होती है. और जो रसनेंद्री भूखी होवे तो कुछ भी इच्छा होती नही है. उलटा चार ही कामोंका तिरस्कार होते है. शांत आत्मा रहती हैं. इस लिये आत्म वस करनेका

एक ये ही उपाय है की वस्तु खानेका नियम रखना.

५ स्पर्शेन्द्री (सरीर) इस्की आठ विषय. १ हलका. २ भारी. ३ ठंडा. ४ ऊष्ण (गरम). ५ लूखा. ६ चोपडा. ७ सुहाला. ८ खरखरा. इस्के ९६ विषय आठ सचित अचित मिश्र ८×३=२४ शुभ अशुभ २४×२=४८ रागद्वेष ४८×२=९६ विषय हुये. इस इंद्रीके वसमें पडके हाथी कागजकी हथणीके लिये खड्डेमें पड मारा जाता है. इस लिये रागद्वेष उत्पन्न होवे तो रागद्वेष करना नहीं. क्योंकी रागद्वेषसे अनेक कष्ट भोगवने पडते है. और वसमें करनेसे शाश्वते मोक्ष सुखे मिलते है.

कुरंग मतंग पतंग भृंग मीन हता पंचभीरेव पंच ।
एकः प्रमादीश्च कथं न हन्यते सेवते पंच भीरेव पंच ॥

नाशकेत पुराण. अध्या. ६ श्लोक. ३६

मृग, पतंग्या, भ्रमर, मच्छी, और हाथी, यह पांच ही एकेक इंद्रीके वसमें पडके मारे गये तो पांचों इंद्रीके वसमें पडे है उन्के क्या हाल ?

ऐसा जाण आचार्य पांच इंद्री वसमें करे.

"नव विह बंभचेर गुत्तीधरो" जैसे कृषीकार लोग खेतीके स्वरक्षण के लिये खेतके चार ही तर्फ

कांटे की वाड लगाते हैं. ऐसे ही ब्रह्मचारी अपने ब्रह्मचर्यव्रत रुप फलित क्षेत्रकी रक्षा के लिये नवव्रत रुप वाड और दशमा विरागरुप पक्का कोट बनाते हैं..

आलउत्थी जणाइन्नो, थीकाहा मणोरमा,
'संथवो चेव नारीणं', 'तासिं दिय दरिसणं' ११
कुइयं रुइयं गीयं, हसियं भुत्तासिणाणिय,
पाणीयं भत्त पाणं च, अइसायं पाण भोयणं. १२
गत्त भूसण मिठंच, काम भोगय दुजयं,
नरसत्त गये सिस्स, त्रिसंताल · उडं जहा. १३

श्री उत्तराध्ययन सूत्र—अध्याय. १६

१ 'आलोउ इत्थी जणाइनो' जिस मकानमें देवता मनुष्य तिर्यंच की स्त्री या नपुसक रहता होवे वांहा रहना नहीं. जो रहे तो जैसे जिस मकानमें बिल्ली रहती होय वांहा ऊंदर रहे तो उस्का विनास होनेका संभव है, तैसे ही ब्रह्मचर्य भंग होनेका संभव रहता है. श्री दश वैकालिकमें कहा है किः—

हत्थं पायं पडि छिन्नं, कानं नास विकप्पियं ।
अवि वास सयं नारी, बंभयारि वीवज्जए. ॥

सो वर्षकी वृद्धा स्त्री भी जिस्के हाथ पांव कान नाक काटे होय ऐसी स्त्री भी जिस मकानमें रहती होय वांहा रहना नही. तो दूसरी स्त्री रहती होय वांहा रहना तो कैसे कल्पे ?

२ " त्थी काहा मणोरमा " स्त्रीके शृंगार चातूर्य, रुप लावण्य, हाव भाव इत्यादिककी कथा करनी नही. जो करे तो जैसे लिम्बू आदी खट्टे पदार्थका नाम लेनेसे मुह्में पाणी छुटता है तैसे स्त्रीके सौंदर्यादिका वर्णन करनेसे विकार उत्पन्न होता है.

३ " संथवो चेव नारिणं " स्त्रीकी संगत करनी नही. स्त्री पुरुष एक आसनपे बेठे नही, जिस जगेह स्त्री बैठी होय वांहा दो घडी तक बैठना नही जो बैठे तो जैसे भूरे कोलेका स्पर्श कणिक (गहुंके) आटे कों होनेसे बंधे नही तथा चावलोके पास कच्चे नारीयल रहनेसे नारियलमें कीडे पड जाते हैं तैसे ब्रह्मचर्यका विनास होवे.

४ " तासिंदिय दरिसीणं " स्त्रीके अंगोपांग बीकार द्रष्टीसे देखना नही. दशवैकालिकमें कहा है की " भक्खर पवदठूणं " जैसे सूर्यके सन्मुख बहुत देखनेसे नेत्रका विनास होता है तैसे ब्रह्मचर्यका नाश करे.

५ " कुइये रुइयं गीयं हसियं " टट्टी भीत पणच (चिक) पडदे के अंतरमें स्त्री पूरुष के क्रीडा के गीत (गान) हास्य, विरह रुदन इत्यादिकको

सुणे नही. जो सुणाता होए तो वाहां रहे नही, जो सूणे तो जैसे घन गर्जारवसे मयूरको हर्ष होता है. तथा "अग्नी कुंडं समा नारी घृत कुंभं समं नरं, स्त्री स्थान संस्थितानां कस्य निश्चलितः मनः" जैसे अग्नी कुंड समीप घृतका घडा रहनेसे पीगलता है तैसे ब्रह्मचारीका मन चलित होवे.

६ "भुत्तासिणाणिय" पूर्व संसारमें स्त्री के साथ काम क्रीडा करी होय उसे याद करे नहीं. जो याद करे तो जैसे* कठीयारे विष मिश्रित छाछ पीके मर गये वैसे ब्रह्मचर्यका विनास होय.

७ "पाणीयं भत्त पाणं च" नित्य (हमेशा) सरस कामोत्तेजक आहार करे नही. जो करे तो

*एक बुढ्ढी स्त्रीने मही (छाछ) रातको बीलोइ (बणाइ) उस्के ह्यां कोइ परदेशी उतरे थे वो छाछ पीके विदेश गये. छे महीनेकें बाद पछि वो आये तब बुढ्ढी खुसी हो केणे लगी भाइ में तुमको जीते देख खुशी हुइ. परदेशी बोले, क्यों माजी? बुढ्ढी बोली, तुमारे गये पीछे छाछमें मरा सर्प निकला था. इत्ना सुणाते ही उन्को जेहर चडा और परदेशी मर गये. विषय याद करने से ब्रह्मचर्यव्रत भंग होता है.

जैसे सनीपात के रोगीको दूध सक्कर मृत्यू देनेवाली होती है तैसे उस्का ब्रह्मचर्य विणसे.

८ " आइ सायं पाण भोयणं " मर्यादा उप्रांत (अणभावता) आहार नही करे; विशेष खाने से अजीर्णादी रोग उत्पन्न होता है. प्रमाद बडता है, बीचार शक्ति नष्ट होती है. इत्यादि बहुत दुर्गण है इसलिये मिताहारी होणा चाहिये. सेर भर पावे ऐसी हंडीमें सवासेर खीचडी पकाने से वो फूट जाय तैसे ब्रह्मचर्य नष्ट होवे.

९ " गत्त भुषण मिठं च " सरीरकी सोभा विभूषा नही करे. स्नान नही करे. नख केश नही संभारे. इत्यादि स्त्रीके चित्तकों आकर्षण करनेवाला रुप नही बनावे. जो शृंगार करे तो जैसे रंकके हाथ चिंतामणी रत्न नही टिकता है तैसे उस्का ब्रह्मचर्य न रहैं. कहा है:—

विभूसा वतियं भिखू, कम्म बंधइ चीकणं,
संसार सायरे घोर जेणं पडइ दुरुत्तरे. *

---

* सुख सेज्या सुक्ष्म वस्त्रं तांबुलं स्नान मंजनं, दंत कष्ट सुगंधं च, ब्रह्मचर्यस्य दुषणां. " सुखासन, सुक्ष्म वस्त्र, तंबोल, स्नान, शृंगार, दांतण काष्टसे, सुगंध लेपन, यह ब्रह्मचारीको ७ दुषण कहे है.

सरीरकी विभूषा करनेवाला साधू वज्र कर्म बांध संसारमें ऐसा पडता है की पीछा निकलना मुशकल होय. और भी कहा हैः—

'सील स्नानं सदा शुची' सीलवंत (ब्रह्मचारी) स्नान विन कीये ही सदा पवित्र है. जैसा ब्रह्मचर्यसे यह सरीर पवित्र होता हे तैसा कुछ स्नान करनेसे नही होता है. क्योंकी हाड मांस रक्त वीर्यसे नीपजा हुवा सरीर पाणीसे कैसे पवित्र होवे? 'सदा पायः कायः' सदा काया अपवित्र है. तथा "संकते ग्रहं नराणं वपुरपां स्नानं कथं शुद्धाति" मनुष्यका सरीर अपवित्रताका घर है, स्नानसे कैसे शुद्ध (पवित्र) होवे? जो होता होय तो 'अपानं सत दाधोतं' सो बक्त मुख अंदरसे धोके एक कुरला दूसरे पे थूको तो वो नाराज क्यों होवे? उसे झुटा क्यों कहेवे? और भी देखो, मनुस्मृती पंचमाध्यायका श्लोकः—

मृदो भार सहस्रेणं जल कुंभ शतानि च.
न शुद्धंति दुराचारे, स्नानं तीर्थ शतैरपि;

हजारो भार मट्टी बदनको लगाके सेकडों घडे से पखालो या सेंकडो वार तिर्थ स्नान करो तो भी दुराचारी शुद्ध (पवित्र) न होवे. और जास्ती क्या

कहै ? ऐसा जाण ब्रह्मचारी स्नान न करे.* स्नान करने से कर्मोंकी वृद्धी होती है. और तेल कंग्गा दर्पण मिष्ट भोजन इत्यादि अनुक्रमे बहुत उपाधी लगके आखीर ब्रह्मचर्यव्रत नष्ट होता है. यह नव वाड विशुद्ध ब्रह्मचर्य जो नही पालते, बाडका भंग करते है, 'संकावा' उन्के मनमें संकल्प विकल्प होगा, कि ब्रह्मचर्य पालू की नही ? दूसरेको संका होगी की यह साधू अमुक २ काम करता है सो ब्रह्मचर्य पालता है या नही ? 'कंखवावो' विषय सेवने की वांछा करेगा. 'वितिगिच्छावा' मनमें ऐसा भाव आवे की इत्ने दिन ब्रह्मचर्य पालते हुये कुछ फल तो द्रष्टी नही आया तो वृथा कोण दुःख सहे ?

* जैसे किसी मकानमें बालक भिष्टा कर दे तो उस मकानका मालिक कुछ सब मकान नहीं धोता है, फक्त जित्नी जमीन खराब हुइ होय उसे लीप के साफ करता हैं. तैसे साधूजी भी अशुची करके जित्ना सरीर मलीन हुवा होए उसे धोके साफ करे.

यहां सर्व अंग पखालने की मना हैं. असझाइ (अशुची) पास होवे, वांहां तक तो साधू शास्त्रके शब्दोच्चार भी नहीं कर सकते है.

'भयंवा लभिज्जा' यों बीचारते २ कभी व्रत भंग कर देगा. 'उमायंवा पाउणीज्ज' उन्माद (मस्ती) पेदा होयगी. और बहुत अभिलाषा करनेसे 'दिहकालीयवा रोगायं कहाविज्जा' दीर्ध (बहुत) काल रहे ऐसा धातु क्षय सुलादिक रोग प्राप्त होय "केवली पन्नंताउ धम्माउ भंसेज्जा" आखीर, केवली परुपे ब्रह्मचर्य—संयम धर्मसे भ्रष्ट होके अनंत दुःख सागरका दुःखका भोगी होवे. ऐसा जाण आचार्य भगवंत नव बाड विशुद्ध † ब्रह्मचर्य व्रत पालते हैं.

"चउविहे कसाय मुक्को" संसारका कस आके कर्मोका रस जमे सो कषाय. इस कषायके ४ भेद क्रोध मान माया लोभ.

१ क्रोध—क्रोधका स्थान कपाल. यह प्रकृतियोंको क्रुर बनाता है. इसे शास्त्रमें चंडाल कहा है. जैसे चंडाल निर्दय होता है तैसे क्रोधीके हृदयसे भी

† दसमा कोट सो मनोज्ञ (अच्छे) शब्द (गायन वाजित्र) रुप (स्त्रीयादिका नाटक) गंध (अतर फूलादि) रस मिष्ट भोजन. स्पर्श्य (सुख सेजा) इन पांच बातोंसे सदा अलग रहै. यह नव बाडमें नहीं है, इसलिये टीपमें लिया है.

दया नष्ट हो जाती हैं. क्रोधी क्रोधके आवेसमें आके मात पिता स्त्री पुत्र स्वामी सेवक इत्यादिको मारता हैं. जो जास्ती प्रजले तो आपघात भी करता हैं. इस क्रोधको शास्त्रमें 'ज्वाला' भी कहते हैं यह प्रगट होते क्षमा सील संतोष तप संयमका नाश कर बची हुइ मिथ्यारुप काली भस्म चेतनपे लगा देता है. पहली पोते जल फिर दूसरेकों जलाती है. क्रोधी अपनी प्राणसे प्यारी वस्तुको नाश करते देर लगाता नही हैं. जहर खानेसे प्राणी एक वखत मरता है और क्रोधसे अनंत जन्म मरण करने पडते हैं. क्रोधमें प्राणी अंधा हो जाता है, अच्छा बुरा कुछ नही दिखता है. क्रोधी कृतघ्नी होता है, अथाग उपगारको क्षिण मात्रमें भूल जाता है. क्रोधसे कुरुप सत्वहीन अपयशी होता है. किसके साथ मित्रता नही निभा सकता हैं. जमी हुइ बातको क्षिणमें बीगाड देता हैं. इत्यादि क्रोधके बहुत दुर्गुण जाणके कित्ने लोक इसे गुस्सा (गु—विष्ठा+सा—जैसा) कहते हैं. क्रोधको खराब जाण आचार्य महाराज कदापी संतप्त नही होते है, सदा शांत स्वरुपी बने रहते हैं.

२ मान—मानका स्थान गला (गरदन) हैं.

यह प्रकृतियोंको करडी बनाता है. इससे विनय नष्ट होता है, विनय बिन ज्ञान नही, ज्ञान बिन जीवाजीवकी पहचान नही, पहचान विन कर्मसे बचना नही, और कर्मसे बचे विन मोक्ष नही हैं. इसलिये मोक्षकू अटकानेवाला अभिमान ही है. मान के आवेसमें चडा हुवा प्राणी धन कुटुंबकों तृणवत् गिणता है. मानीका सदा दुर्ध्यान रहता हैं. मानके ठीकाणे क्रोध अवश्य पाता है. मानी पाप प्रगट नही कर सकता है, इसलिये संयमी होके भी गती बिगाड देता है. मान आठ तराह से उत्पन्न होता है. "जाती लाभ कुलैश्वर्यं, बल रुप तप श्रुती" (१) जात (माताका पक्ष) का अभीमान करे की मेरे नानेरे बाले ऐसे उत्तम हुये या मेरी माता महा सती हुइ है. (२) कुल (पिताका पक्ष) का अभामीन के मेरे पिता दादा ऐसे नामांकित हुये या मेरे गुरु धर्म पुज्य विद्वान हुये है. (३) बल (पराक्रम) का अभीमान में ऐसा महाबली हूं. (४) लाभ—कमाइका या गोचरीयादिक में इच्छित वस्तू प्राप्त होनेका अभीमान मैं चाहाता हुं सो लियाता हुं. (५) 'रुव' रुपका अभीमान में कैसा मनोहर—तेजस्वी रुपका

धरनेवाला हुं. (६) 'तप' तपका अभीमान मैंने बडी २ तपस्या की है उपास वेला तो मेरे गिणती में भी नही हैं (७) 'श्रुती' बुद्धीका अभीमान करे, मैं इत्ने वादीका पराजय कीया, ऐसे २ ग्रंथ बनाये, इत्ने सुत्र मेरे मुखाग्र हैं. (८) "ऐश्वर्य" मालकीका, मेरे हुकममें इत्ने मनुष्य पसु है या मेरे इत्ने शिष्य है, मैं संप्रदायका पुज्य (मालक) हुं. इत्यादि आठ प्रकारका अभीमान करना उत्तमको अयोग्य हैं, ऐसा जाण आचार्य भगवंत सदा नम्र हो रहते है.

३ माया—इस्का स्थान पेटमें है. यह प्रकृतियोंको निर्दय वक्र बनाती है. कपटसे तप जप संयम यथा तथ्य फल देनेवाला नही होता हैं. मायावी सदा दूसरेकों फसानेके वीचारमें रहता हैं. सदा दूसरेके छिद्र ताकता ही रहता हैं. मयावीके मनमें सदा डर बना रहता है. रखे मेरा कपट प्रगट हो जाय. दगाबाज पुरुष मरके स्त्री, स्त्री मरके नपुसक, और नपुसक मरके एकेंद्री होता हैं. तीस प्रकारे सदा मोहनी कर्म बंधका कारण बताया है. उसमें कहा है की, ब्रह्मचारी नही ब्रह्मचारी नाम धरावे, बाल ब्रह्मचारी नहीं

बाल ब्रह्मचारी नाम धरावे, तपस्वी नही तपस्वी नाम धरावे, बहु सुत्री (पंडित) नही पंडित कहलावे, नोकर सेठका धन चुरावे, राजांकी गुरुकी सेठकी घात (मृत्यु) चिंतवे, साधू साध्वी श्रावक श्राविकामें फुट पाडे, देवता नही आवे और देवता आया कहे, स्त्री भरतार आपसमें दगा करे, इत्यादि दगाबाजी करनेसे ७० क्रोडा क्रोड सागरोपम तक बोध बीज सम्यक्त्वकी प्राप्ती नही होती हैं. और भी दश वैकालिकमें कहा हैः—" तव तेणे वय तेणे, रुव तेणे यजे नरा, आयार भाव तेणेयं कुव्वइ देवकिब्बिसं" दुर्बल सरीर देख कोइ पूछे आप तपस्वी हो, तब कहे साधू सदा तपस्वी होते हैं. श्वेत केश देखके पुछे आप स्थैवर हो तो कहे साधू सदा स्थैवर होते है. रुपवंत तेजस्वी देख कोइ पूछे अमुक राजाने दिक्षा ली सुणी आप ही हो, तब कहे साधू सब रिद्धी छोड दिक्षा लेते है. भीतर अनाचर सेवन करे उपर मलीन वस्त्रादि उत्कृष्ट क्रीया करे सो आचारका चोर. नीच होके उत्तम जैसा रहे सो भावका चोर. इत्यादि दगाबाजी करनेवाले साधु मरके किल्मीषी देवता (देवतामें चंडाल जैसे) होते है. वांहासे मरके बकरे होके

ब्या ब्या करके गला गटाके मरते है. अनंत नर्क तीर्यंच योनीमें परिभ्रमण करते हैं. ऐसा मायाका फल जाण आचार्य भगवंत सदा सरल रहते है.

४ "लोभ" इसका स्थान रोम २ में है. यह सर्व सद्गुणोंका नाश करता है. लोभ फासमें बंधे हुये प्राणी संसारमें शीत ताप भूख प्यास ठंड ताप मारताड अनेक दुःख भोगवते गुलामी करते है, गरीबोंकों फसाते हैं, स्वजन कुटुंबके विरोधी होते हैं. पचेंद्रीयोंकों मारडालते है, जाति विरुद्ध धर्म विरुद्ध काम करते है. दगाबाजी करते हैं. इत्यादि अनेक अनर्थोंसे धन भेला करते हैं, तो भी पेट नही भराता है. प्रभूने कहा है की "जाहा लाभो ताहा लोभो" ज्यों ज्यों लाभ होवे त्यों त्यों तृष्णा जास्ती बढे. तृष्णाकी खाड किसीने पूरी नही और कोइ पुरे भी नही ऐसा जाण आचार्य भगवंत लोभ करे नही.

इन कषाय के ५२०० भांगे. सो १ अनंतान (अंत नही) बंधीका चोक. क्रोधका स्वभाव पत्थर की तराड (कभी मिले नही) २ मानका स्वभाव पत्थरका स्थंभ (कभी नमे नही) माया बांसकी जड (गांठमें गांठ) लोभ किरमज रेसमका रंग (जला-

डाले तो भी न जाय). इस्की स्थिति जावजीवकी. इस कषायवालेको सम्यक्त्वकी प्राप्ती नही होती है. और इस कषायमें मरे तो नर्कमें जावे. २ अप्रत्याख्यानी (पच्चखान नहीं) चोक (१) क्रोध. धरती की तराड (पाणी पडने से मिले) २ मान लकडका स्थंभ. (बहुत महीनतसे नमे) (३) माया मीढाका सींग (भीतर आंटे) (४) लोभ गाडीका खंजर (खारसे जाय) यह बारे महीने रहे. इस्को श्रावक के व्रत आवे नही (जो पाले तो निरजरारुप न प्रगमे, पुन्य फल लगे) और इस कषायमें मरे तो तिर्यंच गतीमें जाय. ३ प्रत्याख्यानी (पच्चखाण है). (१) क्रोध. वेळू (रेती) की लकीर (हवासे मिले) (२) मान. बेतका स्थंभ (थोडे प्रयत्नसे नमे) (३) माया. चलते बेलका मात्रा (हवासे सूख जाय) (४) लोभ. कीचडका रंग (सूखने से उतर जाय) इन्की स्थिति चौमासी (चार महीने) की. इन्को संयम नही आवे. और इस कषायमें मरके मनुष्य गतीमें जावे. ४ संज्वल (थोडासा) का चोक. (१) क्रोध. पाणीकी लकीर (समुद्रमें भरती आनेसे अंतमें चिन्ह पडता है सो पीछी पनरमे दिनमें दूसरी भरती

आवे तब मिट जाय) (३) मान. तृणका स्थंभ (हवासे नम जाय) माया. वांसकी छूती (तुर्त सीधी होवे) (४) लोभ. हल्दीका रंग (धूपमें उड जाय.) इन्की स्थिती पक्खी (पन्नरे दिनकी) इस्को केवल ज्ञान नही उपजे. और इस कषायमें मरे तो देवता होए. यह चार कषायके सोले भेद हुये. सो इन सोले कामोंको १ जाणके करे की यह काम खोटे है तो भी करे, २ अजाणमें [अज्ञानतासे] करे. ३ कुछ जाण कुछ अजाण दोइसे करे. ४ और मतलब तो न समजे परंतू देखादेखी करे, तथा ५ अपने लिये करे, ६ दूसरे [कुटुंबादिक] के लिये करे. ७ अपने और परके दोनु के लिये करे, ८ विना कारण [स्वभावसें ही] करे, ९ उप्योग सहित्त करे, १० उप्योग रहित (देवादिकके योगसे) करे ११ उप्योग सहित और रहित दोनु तराह करे. १२ ओघ संज्ञासे [देखादेखी] करे, पूर्वोक्त १६ कषायको इन बारे बोलसे गुणे तो १६×१२=१९२. इन एकसो बाणवेको चोवीस* दंडक ओर पचीसमा समुच्चये जीव यों

* चोवीस दंडक. सात नर्कका १, दश भवनपती के १०, पांच स्थावर के ५, ये १९, २० वीसमा तिर्यंच

पच्चीस गुणे करने से १९२×२५=४८०० भांगे हुये.

इन कषायके पुद्गलोंको जीव ३ प्रकारे बांधता और खपाता है. १ (चूणे) कषायके दलिये भेले करे. २ 'अवच्चूणे' भेले किये दलीयेको जमावे. ३ बांधे, जमे हुवे दलियेका बंध करे. ४ 'वेदे' बांधे हुवे पुद्गलोंको आत्म प्रदेश और कर्म प्रदेश कर वेदे. ५ 'उदेरे' ज्यों ज्यों कर्म बेदे त्यों त्यों उदेरणा होवे. और. ६ 'निर्जरे' कित्नेक भव्य जीव तप और पश्चातापसे कषाय करके कर्म बांधे उस्की निरजरा कर दे. (खपा देवे). यह छे बोल अतीत (गये) काल आश्री ६ वर्तमान आश्री और ६ अनागत (आवते) काल आश्री ६×३=१८ भेद हुये. यह अठारा नीजके जीव आश्री और १८ परके जीव आश्री ३६ हुये. यह छत्तीस चोवीस डंडकपे और पच्चीसमे समुच्चये जीवपे. ३६×२५=९०० और पहलीके ४८०० दोनु मिल चार ही कषायके ५७०० भांगे हुये. क्रोध मान, माया, लोभ, यह चंडाल चोकडी बडी खराब हैं.

पचेंद्रीका, २१ मा मनुष्यका, २२ बाण व्यंतरका, २३ मा ज्योतिषीका, २४ मा वीमानीकका, ये २४ दंडकका विस्तार पहले दूसरे प्रकरणमें हुवा है.

चार कषायके गुण.

कोहं पियं पणा सइ, माण विणयनासेणं,
माया मित्ताणी नासेइ, लोहे सहु विणासणो;
श्री दश वैकालिक सूत्र, अ० ८

क्रोधसे प्रीतीका, मानसे विनयका, मायासे मित्रताका, और लोभसे सब सद्गुणोंका नाश होता है. इन चार हीके प्रतिकार (दवा):—

उवसमेण हणे कोहं, माणं मदव जीणे,
माया उज्जू भावेणं, लोहं संतोष उ जीणे.
श्री दश वैकालिक सूत्र, अ० ८

उपसम (क्षमा) से क्रोध, मद्दव (विनय) से मान, अज्जू (सरलता) से माया और संतोषसे लोभको जीते.

यह पांच महाव्रत पांच आचार पांच इंद्रीका निग्रह पांच सुमती तीन गुप्ति नव वाड विशुद्ध ब्रह्मचर्य चार कषाय निग्रह ये ३६ गुण आचार्य भगवंतके हुये.

छत्तीस गुणधारीको आचार्य पद प्राप्त होता है.

१ 'जाइ संपन्ने' जाती (माताका पक्ष) निर्मळ (कलंक रहित) २ 'कुल संपन्ने' पिताका पक्ष ३ 'बल संपन्ने' काल प्रमाणे उत्तम संघेण

(पराक्रम) के धणी. ४ 'रुव संपन्ने' सम चतुर्सादी उत्तम संस्थान (सरीरका आकार) के धणी. ५ 'विणय संपन्ने' अती कोमलता—नम्रता वंत. ६ 'नाण संपन्ने' मती श्रुती आदि निर्मल ज्ञानवंत. षटमतके जाण. ७ 'दंशण संपन्ने' शुद्ध श्रद्धावंत ८ 'चारित्र संपन्ने' निर्मल चारित्रवंत ९ 'लज्जा संपन्ने' अपवाद (निंदा) से डरे. १० 'लाघव संपन्ने' लाघव (हलका पणा) दो प्रकारका (१) द्रव्ये तो उपधी (भंड उपगरण) अल्प (थौडी) रक्खे. (२) भावे कषाय कम करे. आचार्य भगवंत यह १० गुण सहित होते है. ११ 'उयंसी' उपसर्ग उत्पन्न हुये धैर्य धरे १२ 'तेयंसी' महा तेजस्वी. १३ 'वच्चंसी' चतुराइसे बोले. किसीके छलमें आवे नही. १४ 'जसंसी' यशवंत. (आचार्य भगवंतमें यह चार बोल स्वाभाविक पाते हैं.) १५ जीये कोहे १६ जिये माणे. १७ जीये माये. १८ जीये लोभे. १९ जियेइंदीय. अर्थात् क्रोध मान माया लोभ और श्रोतादिक पांच इंद्रीको जीते हैं; अपने ताबे कीये है. २० जियेनिंदा. दूसरेकी निंदा करने से निवृत है. "पापको निंदे परंतु पापीको नही." तथा निद्रा

अल्प. २१ 'जिये परिसह' क्षुधादि परिसह उत्पन्न हुवे चलायमान न होवे. २२ "जीवीय आस मरण भय विप्प मुक्का" चिर (बहुत) काल जीने की आस नही और मरनेका डर नही. २३ 'वय पहाणे' महाव्रतादि वृत करके प्रधान [श्रेष्ट] है. २४ 'गुण पहाणे' क्षांतिआदि गुण करके प्रधान है. २५ 'करण पहाणे' क्रियावंत के ७० गुण करके प्रधान. २६ 'चरण पहाणे' चारित्र के ७० गुण करके प्रधान. २७ 'निग्गह पहाणे' अनाचारका निषेध करनेमें प्रधान. २८ 'नित्थय पहाणे' षट द्रव्यादिकका निश्चय करनेमें प्रधान. २९ 'विज्जा पहाणे' रोहिणी प्रज्ञप्ती प्रमुख विद्यामें प्रधान. ३० 'मंत पहाणे' विष परिहार, व्याधीनीवार, व्यंत्रोपसर्ग नाशक, इत्यादिक मंत्रमें प्रधान.* ३१ 'वेय पहाणे' यजुरादिक चार ही वेदके जाण. ३२ 'बंभ पहाणे' ब्रह्मचर्यमें प्रधान. ३३ 'णय पहाणे' नैगमादि सात नय स्थापनेमें प्रधान. ३४ 'नियम पहाणे' अभिग्रहादि नियम तथा प्रायछित वीधी जाणनेमें प्रधान. ३५ 'सच्च पहाणे' महा सत्यवंत. ३६ 'सोय पहाणे' शुची दो

* मंत्रादिक जाणते है. परंतू करते नही है.

प्रकारकी [१] द्रव्ये तो लोकमें अपवाद होय ऐसे मलीन वस्त्रादि धारण न करे और [२] भावे पाप मेलसे न खरडाय. आचार्य भगवंत यह १४ गुणमें प्रधान होते है. यह छत्तीस गुणके धरनेवालेको आचार्य पदपे स्थापन कीये जाते हैं.

आचार्यजीकी ८ संपदा.

आचार्य भगवंतकी आठ संपदा है. और एकेक संपदा के चार २ गुण, यों आठ के बत्तीस गुण और चार विनय मिल के छत्तीस गुण होते है. जैसे गृहस्थ धन कुटुंबादि ऋद्धि से सोभता है तैसे आचार्य भगवंतजी आठ संपदा से सोभते है.

१ "आचार संपदा" आचार (आदरने योग्य गुणको) देखावे सो आचार संपदा; इस के ४ भेद (१) "चरण गुण धुव जोग जुत्ते" चारित्र के गुण (महाव्रतादिक) में ध्रुव (निश्चल–स्थिर–अडोल) गुण युक्त सदा रहैं. (२) "महव गुण संपन्न" जातियादि आठ मद (अभिमान) रहित. सदा नम्रतावंत. (३) 'अनीयतवृत्ति' अप्रतिबंध विहारी अर्थात्. "गामे एगेराइ नगरे पंचराइया" ग्राममें

एक रात्री और नगर (सेहर) में पांच रात्री* से जास्ती न रहे. यों आठ महीने के आठ विहार और चौमासेमें चार महीना एक ठीकाणे ऐसे नवकल्पी विहार करते हैं. बृद्धपणा या व्याधी के कारण से विशेष रहे तो हरकत नही. [४] "अचंचले" दिव्यरुप से कामिनी के मनको हरण करने समर्थ हो के भी निर्विकारी सौम्य मुद्रावंत रहे. यह पहली संपदा.

२ "श्रुत संपदा" शास्त्र के परमार्थकों जाणे सो सुत्र संपदा. इस्के ४ भेद [१] 'युग प्रधान' सर्व विद्यावंतों से श्रेष्ट होय (२) 'आगम परिचित' शास्त्रकों वारंवार संभारे, जिससे उन्का ज्ञान निश्चल हो रहे. [३] उत्सर्गअपवाद मार्ग—साधूका मार्ग दो प्रकारका है. (१) 'उत्सर्ग' सो किंचित् मात्र दोष

* एक दिनका आहार मिले सो ग्राम. उस्में एक रात्री रहे अर्थात् आदीत्यवारको आये तो बाद पीछा दूसरे आदीत्यवारको विहार कर जाय. बहुत घरोंकी वस्ती होवे सो सेहर उस्में पांच रात्री रहे अर्थात् आदीतवारकों आये तो पीछे पांचमे आदीतवार विहार करे. एकवारसे दूसरे १. तककों एक रात्री कहते है.

नही लगावे. और [२] 'अपवाद' सो कोइ गाढ (मोटा) कारण उत्पन्न हुये पश्चाताप युक्त किंचित मात्र दोष सेवन कर प्रायछित ले के शुद्ध होवे. इन दोनु मार्ग की रीत के जाण. [३] 'स्वसमय परसमय दखे' स्वमत और परमत के सुत्रार्थ के पारंगामी. [४] 'बहुसुय' बहुत सुत्र कंठाग्र किये होय.

३ "सरीर संपदा" सुन्दराकार तेजस्वी सरीर होवे सो सरीर संपदा. इस्के ४ भेद (१) 'पम्माणु पेत' प्रमाणो पेत—समचउरस अपने धनुष्यसे एक धनुष्यका लंबा चौडा जिनका सरीर. (२) अकुटाइ पूर्ण अंगके धरण हार १९—२१ अंगुलीया लंगडे इत्यादि अपंग दोष रहित. (३) 'पूर्णेंदी' बधीर अंधादि दोष रहित (४) 'दढ संहन' मजबूत संघेणा (पराक्रम) के धरणहार. तप बिहार इत्यादि में थके नहीं.

४ 'बचन संपदा' वाक्य चातूर्य. इस्के ४ भेद (१) प्रसस्तवादी सदा उत्तम बचन बोले, सर्वको द्धि बचनसे बुलावे. प्रवादी संका पावे ऐसे बोले; कोइ वचन खंडन कर सके नही. (२) 'मधूरता' कोमल मीट्टा सुस्वरसे गंभीरता युक्त बोले. (३) 'अनाश्रित' रागद्धेष पक्षपात कलुषता इत्यादि दुर्गुण रहित बचन बोले. (४) 'स्फुटता' मणमणाटादि

दोष रहित खुले २ शब्द उचरे की बाल भी समज जाय.

५ 'वाचना संपदा' शास्त्रादिक वाचनेकी कुशलताको 'वाचना संपदा' कहते है, इस्के ४ भेद [१] 'जोगो' शिष्यका गुण जाणके जो जित्ना ज्ञान ग्रहण करने समर्थ होवे उत्नी वाचना देवे. तथा अयोग्यको वाचना न देवे; क्योंकी सर्पको दुध पिलानेसे विष पेदा होता है. (२) 'परिणित' पहली वाचना दी है उस्को सम्यक प्रकारे उस्की मतीमें प्रगमाके (रुचाके—जचाके) फिर आगे वाचना देवे. क्यों कि अनसमजी और अनप्रगमी वस्तू बहुत काल नही टिक सकती है. (३) 'निरया पयिता' जो विशेष प्रज्ञा [बुद्धी] वंत शिष्य समुदाय नीभानेमें धर्म दीपानेमें समर्थ होए उसे आहार वस्त्रादिक्की साता उपजाके अन्य काममें कमी लगाके मधुरतासे उत्साह जगाके रुची प्रमाणे शिघ्रतासे ग्रंथ पुर्ण करावे. (४) निर्वाहण, वाचना देती वखत ऐसी सरलतासे प्रकासे की थोडे शब्दमें बहोत अर्थ समजे. जैसे पाणीमें तेलकी बुंद पसरे.

६ 'मती संपदा' स्वतःकी वुद्धी प्रबल होय सो माति संपदा. इस्के ४ भेद (१) 'अवग्रह' जो 'सुणी' देखी सूघी स्वादी स्पर्सी इत्यादि वस्तूके

गुणकों एक समयमें ग्रहण करने समर्थ होय (शता व्रधानीवत्) (२) 'इहा' पुर्वोक्त पांच ही वस्तूका यथा तथ्य निर्णय हृदयमें कर रक्खे. (३) 'अवाय' पांच हीका निश्चय करे की यह अमुक ही है. दूसरा नही. [४] 'धारणा' जिस्का निश्चय कीया उस्को बहुत काल तक भूले नही. वखतपे तुर्त याद आ जाय. अचूक हाजर जवाबी होवे.

७ 'प्रयोग संपदा' अन्यवादीयोंका जय करे सो प्रयोग संपदा. इस्के ४ भेद (१) 'सक्तीज्ञान' वादीकी और अपनी शक्तीका बीचार करे की इस से वाक्य चातुर्यमें या प्रश्नोत्तरमें जीत सकूंगा की नही. (२) 'पुरुष ज्ञान' वादीका धर्मका बीचार करे की ये वैष्णवादिक किस महजबका है ? क्योंकी उस्के महजबके शास्त्रसे उसे उत्तर दीया जाय. (३) "क्षेत्र ज्ञान" इस क्षेत्रके लोग कैसे है ? अमर्यादा वंत तो नही है. की आगे अपमान करे. कपटी तो नही है, की अव्बी तो मिठे २ बोलते आगे छल करे. वादीसे मिल जाय. धर्मानुरागी तो है की आगे मिथ्यात्वीके आडंबरसे चलायमान नही होय. धर्म नही तजे इत्यादि बीचार करे. (४) 'वस्तू ज्ञान' विवादकी बखत राजा दिक लोक आयगें वो

न्यायी है या अन्यायी, नम्र है या कठिण, सरल है या कपटी; क्योंकी आगे वो किसी प्रकारसे अपमान्न नही करे. इत्यादि वीचारके योग्य होवे सो करे.

८ 'संग्रह संपदा' उप्योगी वस्तुका यथा योग्य पहलेसे ही संग्रह कर रक्खे, सो संग्रह संपदा. इस्के ४ भेद. (१) 'गणयोग' बालक दुर्बल गीतार्थ तपस्वी रोगी नवदिक्षित इत्यादिकका निर्वाह होवे ऐसा क्षेत्र ध्यानमें रक्खे. [२] 'संसक्त' उतरे है उस सिवाय दूसरा मकान तथा पाट पाटला संथारा (पराल) इत्यादिकका संग्रह कर रक्खे, क्योंकी वखतपे कोइ नये साधू आ जाय तो काम आवे.

(३) 'क्रिया विधी' जिस २ कालमें जो जो क्रीया करनी है उस विधी प्रमाणे वर्ते-वर्तावें. [४] 'शिष्योपसंग्रह' व्याख्यानी, वादी, पराजयी, भिक्षावृत्ति, कुशल, व्यावची इत्यादि शिष्योंका संग्रह करे.

यह आचार्य भगवंतकी आठ संपदाके ३२ भेद पूरे हुये.

चार विनय.

१ 'आचार विनय' साधूके जो आचरने (आदरने) लायक वस्तू सो आचार, उस्को ग्रहण करे सो आचार विनय. इस्के ४ भेदः—

[१]' संयम समायरी 'आप संजम पाले, दूसरेको पलावे, संजमसे डिगेकों स्थिर करे. [२] 'तप समायीरे ' पक्षीकादिक पर्वका आप तप करे, दूसरेके पास करावे. तथा भिक्षाको आप जाय और दूसरेकों भेजें. [३] 'गण समायरी ' तपस्वी ज्ञानी रोगी नव दिक्षीत इन्की प्रति लेखना [पलेवण] आदिकाम आप करे, दूसरेके पास करावे. [४] 'एकाकी विहारी 'अवसरपे आप अकीले वीचरे तथा दूसरेकों योग्य देख अकीले बीचरनेकी आज्ञा देवे.

२ ' श्रुत विनय ' [१] सूत्रका अभ्यास अवश्य शिष्यादिककों करावे. [२] सूत्रका अर्थ यथातथ्य धरावें. [३] जिस ज्ञानके योग्य शिष्य हो वो उस्को वैसा ही ज्ञान सीखावे. (४) एक सूत्र पूर्ण सीखा के दूसरा प्रारंभ करावे.

३ ' विक्षेपना विनय ' अंतःकरणमें धर्म की स्थापना करे सो विक्षेपना विनय. इस्के ४ भेद [१] मिथ्यात्वीको सम्यक्त्वी बनावे. [२] सम्यक्त्वीको चारित्री बनावे. [३] सम्यक्त्वी या चारित्री सम्यक्त्व या चारित्र से डिग गया होय तो उसे पीछा स्थिर करे. [४] चारित्र धर्म की वृद्धी हावे वैसे प्रवर्त्ते.

४ 'दोष परिघात विनय" कषायादिक दोषका नाश करे सो दोष परिघात विनय [१] 'कोहो परिघाए' जो क्रोधी होवे उसे क्रोध के दुर्गुण और क्षमाके सद्गुण बताके शांत करे. [२] 'विषय परिघाए' जो विषयमें उन्मत्त होवे उन्कों विषय के दुर्गुण बताके निर्विकारी करे. [३] 'असन्न परिघाए' जो आहार के विषय विशेष लुब्ध होवे उसे तपका गुन बताके तपस्वी बनावे. [४] 'आत्म दोष परिघाए' जो दुर्गुणी होवे उसे सद्गुण के गुण बता के निर्दोषी बनावे.

यह आठ संपदा के बत्तीस और चार विनय मिलके आचार्यजी के ३६ गुंण हुये.

ऐसे आचार्य भगवंत ज्ञान प्रधान, दर्शन प्रधान, चारित्र प्रधान, तपप्रधान, सूर-वीर-धीर, साहासिक, शम दम उपसमवंत, चार तीर्थके वालेश्वर, जिनेश्वर की गादी पे बीराजनेवाले, ऐसे आचार्य भगवंतको मेरा त्रिकरण शुद्ध नमस्कार हो!

॥ इति परमपूज्य श्री कहानजी ऋषिजी के संप्रदाय के बालब्रह्मचारी मुनी श्री अमोलख ऋषीजी विरचित श्री "जैन तत्वप्रकाश" ग्रंथका 'आचार्य' नामक तृतीय प्रकरण समाप्तम्.॥

प्रकरण ४ था.

उपाध्याय.

उपाध्याय उन्को कहे जाते है कि जो गुरुवादिक गीतार्थके पास संपूर्ण शास्त्रका अभ्यास कर पारंगामी हुवे हैं और जिन्के पास बहुत साधुओं और गृहस्थों ज्ञानका अभ्यास करते हैं.

उपाध्यायजीके २५ गुण.

वार संग विउबुद्धा, करण चरण जुउ ।
पभ्भावणा जोग निग्गो, सुवझाय गुणं वंदे ॥

(१–१२) बार अंगके पाठक (पढे हुवे), (१३–१४) करण सित्तरी–चरण सित्तरीके गुण युक्त, (१५–२२) आठ प्रभावनासे जैन मतको दीपावे, और (२३–२५) तीन योग वसमें करेः ये २५ गुणके धारी उपाध्यायको नमस्कार हो !

ये पचीस गुणमेंसे प्रथम १२ अंगका बयान किया जाता है.

१२ अंग.

(१) "आचारांगजी," जिस्के २ श्रुतस्कंध हैं. प्रथम श्रुतस्कंधका आठमा महाप्रज्ञा नामक अध्ययनका तो साफ विच्छेद हो गया है. और बाकीके ८ अध्यायमें छे कायकी हिंसाके कारण और फल, लोकका स्वरुप, सम्यक्त्वका स्वरुप, साधुको परिसह सहन करनेका साहसः वगैरा बहुत ही बातोंका बयान विस्तारसे किया गया है.

दुसरे श्रुतस्कंधमें साधुको आहार—वस्त्र—पात्र—मकान इत्यादि लेनेकी विधि—बोलनेकी चलनेकी विधि इत्यादिक साधुका आचार तथा श्रीमन् महावीर स्वामीका जीवन चरित्र है. आचारांगजीके पहले तो १८००० पद § थे, अबतो मूलके २५०० श्लोक ही रह गये हैं.

(२) "सूयगडांगजी," जिस्के २ श्रुतस्कंध हैं. पहले श्रुतस्कंधके १६ अध्ययन हैं. इस्में ३६३ पाखंडीयों (कुवादीयों) का स्वरुप बताके समाधान किया गया है. श्री ऋषभ देव स्वामीके ९८ पुत्रको

§ ३२ अक्षरका १ श्लोक. ५१,०८,८६,८४,० श्लोकका १ पद गीना जाता है.

उपदेश, साधुका आचार, नर्कके दुख, प्रभुके गुण वगैरा बहुत बातोंका वर्णव है.

दुसरे श्रुतस्कंधके ७ अध्ययन हैं, जिस्में पुष्क-रणीके कमल पुष्पके द्रष्टांतसे मोक्ष ग्रहण करनेकी व्याख्या, साधुको आहार लेनेकी-बोलनेकी रीति, आर्द्र कुमार और गौशाले की चर्चा, गौत्तम स्वामी और पेढाल पुत्रका संवाद इत्यादि बाबतो हैं. सूयग-डांगजीके पहले तो ३६००० पद थे, अब तो २१०० श्लोक ही रह गये हैं.

(३) "ठाणांगजी," जिस्में १ ही श्रुत्स्कंध और १० ठाणे [अध्याय] हैं. पहलेमें एकेक बोल श्रेष्टीमें कोन २ से है और दुसरेमें दो दो यावत् द-शमे ठाणेमें दश २ बोलकी व्याख्या करी है. इस्की चौभंगीयोंको विद्वान जमाते हैं तब बहुत ही ज्ञान-रस पैदा होता है. ठाणांगजीके पहले तो ४२००० पद थे, जिस्मेंसे अब शीर्फ ३७७० श्लोक रह गये हैं.

[४] "समवायांगजी," जिस्में एक ही श्रु-त्स्कंध है, अध्याय नहीं है. इस्में सलंग बंध अनुक्रमे एक दो यावत् संख्याते असंख्याते अनंते बोलकी व्याख्या है और ५४ उत्तम पुरुषों इत्यादिका अधिकार

है. ६४००० पदमेंसे अधुना शीर्फ १६६७ श्लोक विद्यमान हैं.

[५] " विवहापन्नती (भगवती)जी, " जिस्में १४० शतकके १००० उद्देशे हैं. इस्में विविध प्रकारके श्री गौत्तम स्वामीके पूछे हुवे ३६००० प्रश्न हैं. श्री गौत्तम स्वामी, स्कंधक सन्यासी, ऋषभदत्त मुनी, सुदर्शन शेठ, शीवराज ऋषि, गंगीयाजी, गंगदत्तजी, आनंदजी, कुशलजी, रोहाजी, सुनक्षत्रजी, सर्वानुभूतिजी, सिंहामुनी इत्यादि साधुका, और देवानंदाजी, जयवतीजी, सुदर्शनाजी इत्यादि साध्वीयोंका, संखजी, पोखलजी, कार्त्तिक शेठ इत्यादि श्रावकोंका, रेवतीजी, सुलसाजी इत्यादि श्राविकाओंका, तामली, गोशाला प्रमुख अन्यमतियोंका और सूक्ष्म भंगजाल –जीव विचार–लब्धी विचार इत्यादि बहुत बावतोंका विवेचन है. २८८००० पदमेंसे अब शीर्फ १५७५२ श्लोक विद्यमान हैं.

(६) ज्ञाताजी, जिस्के दो श्रुतस्कंध हैं. पहले श्रुतस्कंधके १९ अध्ययन हैं, जिस्में मेघकुमारका, मोरके इंडेका, धना सार्थवाहका, काछबेका, तुंबडीका, ..., रोहिणीका, वृक्षका, द्रौपद्रीका, वगैरा द्रष्टां-

तोंसे दया–सत्य–शीलकी पुष्टी की गइ है.

दुसरे श्रुतस्कंधके २१६ अध्यायमें पुरुषादाणी श्री पार्श्वनाथजीकी २१६ पासत्थी (ढीली) साध्वीयोंकी कथा है. ५०१५००० पदमें साढीतीन क्रोड धर्म कथाओं ये सूत्रमें पहले थी, जिस्मेंसे अब तो ५५०० श्लोक विद्यमान् हैं.

(७) "उपासक दशांगजी," जिस्का १ श्रुतस्कंध और १० अध्ययन हैं. इस सूत्रमें १० श्रावकोंका अधिकार हैः–

श्रावकके नाम.	गांव.	भार्या.	धन संख्या.	गाकी संख्या.
१ आनंदजी	वनारसी	शीवानंदा	१२ क्रोड सोनैया	४००००
२ कामदेवजी	चंपानगरी	भद्रा	१८ क्रोड ,,	६००००
३ चुलणीपीयाजी	वनारसी	सोमा	२४ क्रोड ,,	८००००
४ सूदेवजी	,,	धन्ना	१८ क्रोड ,,	६००००
५ चूलशतकजी	आलंभीया	बहुला	,, ,, ,,	,,
६ कुंडकोलीयाजी	कपोलपुर	पुसा	,, ,, ,,	१००००
७ सकडाल पुत्र	पोलासपुर	अग्गीमित्ता	३ क्रोड ,,	८००००
८ महाशतकजी	राजग्रही	रेवतीआदि १३	२४ क्रोड ,,	४००००
९ नंदन पीया	सावत्थी	असना	१२ क्रोड ,,	,,
१० तेतली पीया	,,	फाल्गुनी	,, ,, ,,	,,

ये १० ही श्रावक श्री महावीर स्वामीके हैं.

२० बर्ष श्रावक धर्म पालके ११ पडिमा वहके प्रथम देवलोक अरुण विमानमें ४ पल्योपमका आयुष्य भोगवके एक भव कर मोक्ष पधारेंगे.

(८) "अंतगडदशाजी," जिस्का एक श्रुतस्कंध ९ वर्गके ९० अध्ययन हैं. पहले वर्गके १० अध्ययनमें अंधक विष्णुजीके १० पुत्रोंका अधिकार है. दुसरे वर्गके ८ अध्ययनमें वासूदेवजी, अक्षोभादिक ८ का अधिकार है. तीसरे वर्गके १३ अध्ययन हैं वासूदेवजीके गजसुकुमारजी प्रमुख ८ पुत्र पांच वसूदेवजीके पुत्रका यों १३ का अधिकार है. चौथे वर्गके १० अध्ययन, जिस्में वासूदेवजीके मयालीआदिक ५ पुत्रोंका, ६ सांब ७ प्रद्युन कृष्णजीके पुत्रोंका ८ प्रद्युम्नजीके अनुरुद्ध कुमारका. और समुद्र विजयजीके ९ सत्यनेमी। १० द्रढनेमी पुत्रका अधिकार है. पांचमें वर्गके १० अध्ययनमें सत्यभामा रुक्मिणी प्रमुख ८ पट्टराणीयोंका अधिकार है. और जंबूकुमारकी मूलश्री, मूलदत्ता राणीका अधिकार है. छट्टे वर्गके १६ अध्ययन मकाइ प्रमुख १३ गाथापतीयोंका तथा अर्जुनमाली अतिमुक्त (एवंता) कुमारने गुणरत्न संवत्सर तप किया उन्का और अलख राजाका

अधिकार है. सातमे वर्गके १३ अध्ययन हैं, जिस्में श्रेणिक राजाकी नंदा राणी प्रमुख तेरे पट्टराणीयोंका अधिकार है. आठमे वर्गके दश अध्ययन हैं, जिस्में श्रेणिकराजाकी कालीराणीने रत्नावली तप किया, सुकालीराणीने कन्कावली तप किया, महाकाली राणीने लघूसिंहक्रिडित तप किया, कृष्णाराणीने वृद्धसिंह क्रिडित तप किया, सुकृष्ण इत्यादिक दश राणीयोंकी तपस्याका अधिकार है. यों अंतगड सूत्रमें सर्व ९० मोक्षगामी जीवोंका अधिकार है इस्के पहले तो तेवीस लाख अठावीस हजार पद थे, जिस्मेंसे शीर्फ ९०० श्लोक रह गये हैं.

(९) “अनुत्तरोववाइ,” जिस्के तीन वर्ग हैं. पहले वर्गके दश अध्ययनमें और दूसरे वर्गके १३ अध्ययनमें श्रेणिक राजाके जालीयादिक तेवीस पुत्रोंका अधिकार है. तीसरे वर्गके १० अध्ययन हैं. जिस्में काकंदीनगरीके धनाजी सेठने ३२ स्त्री और ३२ क्रोड सोनैयेका धन छोड अति दुक्कर तपस्या कर सरीरका दमन किया ऐसे दश जीवोंका अधिकार है. ये ३३ जणे अनुत्तर विमानमें गये, एक भव करके मोक्ष पधारेंगे. इस सूत्रके पहले तो वाणू-

लाख चार हजार पद थे, जिसमेंसे अब २९२ श्लोक रहे हैं.

(१०) "प्रश्न व्याकरणजी," जिस्के दो श्रुतस्कंध हैं. प्रथम श्रुतस्कंध आश्रव द्वारके पांच अध्ययनमें हिंसा–झूट–चोरी–मैथून–परिग्रह ये पांच आश्रव निपजनेके कारण और उनके फलका अधिकार है. दूसरा श्रुतस्कंध संवर द्वारके ५ अध्ययनमें दया (६० नाम)–सत्य–अदत्त–ब्रह्मचर्य–अममत्व इन पांचोंके भेद और गुण बताये हैं. इस्के पहले तो तेराणूलाख सोलेहजार पद थे, जिस्मेंसे १२५० श्लोक रह गये हैं.

(११) "विपाकजी," जिस्के दो श्रुतस्कंध हैं. पहले श्रुतस्कंध 'दुःख विपाक.' जिस्में मृगालोढा प्रमुख दश महापापी जीव पापकर घोर दुःख पाये जिस्का अधिकार है. और दूसरा 'सुख विपाक' जिस्में सूबाहू प्रमुख दश जीव दान–पुन्य–तप–संयम कर आगे अत्यंत सुख पाये, जिस्का अधिकार है. इस्के पहले तो एकक्रोड चौरासीलाख पद थे, और एकसोदश अध्ययन थे, अब तो १२१६ श्लोकही हैं.

[ये ११ सूत्र तो यत्किंचित् भी विद्यमान हैं.]*

१२ "द्रष्टीवादजी," जिसमें पांच वत्थू (वस्तू) थी. पहली वत्थूके ८८ लाख पद थे, दूसरीके एक-क्रोड ८१ लाख ५ हजार पद थे, तीसरी वत्थूमें चउदे पूर्वका समावेस होता था. सो

चउदे पूर्वका ज्ञान.

१ 'उत्पाद पूर्व' इसमें षट्द्रव्यका† ज्ञान था; इ-

---

* कित्नेक ऐसा कहते हैं की, इग्यारे अंग पहले थे जित्ने ही अब हैं; जिस २ ठिकाणे 'जाव' शब्दसें अन्यशास्त्रोंकी भलामण दी है, वो सम्मास सब मीलावो तो बराबर हो जाय.

† षट्द्रव्यः—१ धर्मास्ती (चलन शक्ति दे) २ अधर्मास्ती (स्थिर करे) ३ आकास्ती. (अवकाश दे) ४ कालास्ति (आयुष्य घटावे) ५ जीवास्ती [चैतन्यता] ६ पुदगलास्ती (द्रष्य नाशवंत पदार्थ) इन्का विशेष स्वरुप गाथासे:—

" प्रणाम जीव मुत्ता सपएसी एगे खेते क्रिया निचं करण कर्ता, सव्वगए मदरंपवेसा " अर्थः—छेमेंसे जीव पुदगल प्रेणामी, ४ अप्रणामी. जीव जीव. ५ अजीव, पुद्गल मूर्ती, ५ अमर्ती, काल सप्रदेशी. [अढाइ द्वीपमें

स्की दश 'वत्थू' और इग्यारे लाख पद थें. २ 'अ-गणीय पूर्व' इस्में द्रव्य गुण पर्यायका वर्णव था; इस्की ४ 'वत्थू' और २२ लाख पद थे, ३ "वीर्य प्रवाद" इस्में सर्व जीवके बल वीर्य पुरुषाकार पराक्रमका व-र्णव था, इस्की आठ 'वत्थू' और ४४ लाख पद थें. ४ "आस्ती नास्ती प्रवाद पूर्व" इस्में शाश्वती अ-शाश्वती वस्तुका स्वरुप था, इस्की सोले 'वत्थू' और ८८ लाख पद थे. ५ "ज्ञान प्रवाद पूर्व" इस्में पांच ज्ञानका वर्णव था; इस्की १२ 'वत्थू' और १ क्रोड ७६ लाख पद थें. ६ "सत्य प्रवाद पूर्व" इस्में दश प्रकारके सत्यका* वर्णव था; इस्की १२ 'वत्थू' और २ क्रोड ५२ लाख पद थे.

ही है] ५ अप्रदेशी. धर्मास्ती, अधर्मास्ती, आकास्ती ये ३ का एक द्रव्य; काल जीव पुद्गल इन तीनके अ-नंत द्रव्य. पुद्गल अनित्य; ५ नित्य. जीव पुद्गल कारणी (काममें आवे) पांच अकारणी. कर्ता जीव पुद्गल साथ क्रिया करे. ४ अकर्ता. और सर्व लोकमें आकाश व्यापी है. पांच ही तो फक्त लोकमें हैं ॥

* १ जणवयसच्चं, बहुत लोक माने सो सत्य. २ समय सच्चं, एक कामसे बहुत काम होय, जैसे वृष्टीसे

७ "आत्मप्रवाद पूर्व" इस्में आठ आत्माका वर्णव था; इस्की १६ 'वत्थू' और तीनक्रोड चारलाख पद थे. ८ "कर्मप्रवाद पूर्व" इस्में आठ कर्मोंका वर्णव था; इस्की १६ 'वत्थू' और छे क्रोड आठलाख पद थें. ९ "प्रत्याख्यान प्रवाद पूर्व" इस्में दश पच्च-खाणके नवक्रोड भेदका वर्णव था; इस्की ३० 'वत्थू' और १२ क्रोड १६ लाख पद थे. १० "विद्याप्रवाद पूर्व," इस्में स्वरोहिणी आदि विद्या–मंत्र–जंत्र–तंत्रादिक विधि युक्त थे, इस्की १४ 'वत्थू' और २५ क्रोड २० लाख पद थे. ११ "कल्याण प्रवाद पूर्व" इस्में आत्माके कल्याण होनेकी [तप–संयमकी]

सर्व वस्तू पेदा होवे. ३ ठवणा सच्चं–स्थापनासत्य, जैसे टांक सेर मण. ४ नाम सच्चं, लोक रक्खा नाम सत्य जैसे लक्ष्मी. ५ 'रुवसच्चं' भेष बणायसो साधूवामाणादी ६ पडुच्च (प्रतीत) सच्चं. एककी अपेक्षा दूसरा जैसे श्रीमंतसे दारिद्री. ७ व्यवहार सच्चं, कुछका कुछ कहे, जले तेल और कहै की दीवा जले. ८ भावसच्चं. विशेष्य सत्य माने, जैसे बुगला धोला. ९ योग सच्चं, एकसे दूसरा नाम पडे जैसे लिखने लहीया. १० ओपमासच्चं, अच्छी की खोटी, खोटीको अच्छी कहे जैसेकि जुवार मोती जैसी.

बातों थी. इस्की १० 'वत्थू' ४८ क्रोड ६४ लाख पद थे. १२ "प्राण प्रवाद पूर्व" इस्में चार प्राणसे लगाके दश प्राणके धरणहार प्राणीयोंका वर्णव है; इस्की १० 'वत्थू', ९७ क्रोड २८ लाख पद थे. १३ "क्रिया विशाल पूर्व" इस्में साधू श्रावकका आचार तथा पच्चीस क्रियाका वर्णव है. इस्की १० 'वत्थू' और एक क्रोडा क्रोडी और एक क्रोड पद थे. १४ "लोक बिंदूसार पूर्व" इस्में सर्व अक्षरोंका सन्नीपात (उत्पत्ति) और सर्व लोकके सार २ पदार्थों-का वर्णव था.

ऐसा कहा जाता है कि, पहला पूर्व एक हाथी डूबे जित्नी स्याइसे, दूसरा दो हाथी डूबे जित्नी स्याइसे, तीसरा चार हाथी डूबे जित्नी स्याइसे, यों दूणे करते २ चौदहवा पूर्व ८१९२ हाथी डूबे जित्नी स्याइसे लिखा जाताथा. चौद पूर्वका ज्ञान लिखनेमें १६३८३ हाथी डूबे जित्नी स्याइ लगती है. द्रष्टि-वादांगकी चौथी 'वत्थू' में छे बातों हैं. पहली बात के पांच हजार पद, और दूसरी तीसरी चौथी पांच-मी और छट्ठीके जुदे २ वीस क्रोड ९८ लाख नव-हजार दोसे पद थे. द्रष्टि वादांगकी पांचमी 'वत्थू' को

'चूलका' कहते है. जिस्के दश क्रोड उगणसठलाख छीयालीस हजार पद हैं. इत्ना बडा द्रष्टिवाद अंगका विच्छेद होनेसे जैनधर्ममें ज्ञानका जबरा धक्का लगा है. जिस बक्त ये बारे अंग पूर्ण थे, उस बक्त उपाध्यायजी इन्के पूर्ण जाण होतेथे. अब इग्यारे अंग जित्ने रहे हैं उन्के जाण होवे उन्को उपाध्यायजी कहना.

द्रष्टिवादांग छोडके बाकीके इग्यारे अंगके बारे उपांग गणधरजी आचार्यजीके रचे हुये हैं. अंग सरीर, और उपांग हाथ पग अंगुलीयादिकको जानो.

१ आचारांगजीका उपांग "उववाइजी" इस्में चंपानगरी, कोणिक राजा, श्री महावीरस्वामी, साधूके गुण, बारे प्रकारका तप, समोसरणकी रचना, चारगतिमें जानेके कारण, दश हजार वर्षके आयुष्यसे लगाके मोक्ष प्राप्त होवे वांहां तककी करणी, अमंड श्रावक तथा इन्के सातसे शिष्य, केवल समुद्घात और मोक्षके सुखः इत्यादि बाबतोंका बहुत विस्तारसे वर्णव है. इस्के मूल श्लोक ११६७ हैं.

२ सुयगडांगजीका उपांग 'रायपसेणी', इस्में श्री पार्श्वनाथस्वामीके संतानीया (चेलेके चेले)

श्री केशीस्वामीसे सेतंबिका नगरीके नास्तिकमती परदेशी राजाका संवाद* है. इस्के मूल श्लोक २०७८ हैं.

* सेतंबीका नगरीके परदेशी राजाका चित्त नामे प्रधान भेट ले सावत्थी नगरीके जितशत्रु राजाके पास गया, वांहा श्री केशी स्वामी मुनीराजका उपदेश सुण श्रावक व्रत अंगिकार किया और परदेशी राजाको उपदेश देकर समझानेके लिये महाराजश्रीसे विनंति कीथी. उपकारका कारण समझ महाराज भी सेतंबीका नगरीमें पधारे. अश्व रथ फिरानेके मिशसे प्रधान राजाको वगीचेके पास लाया, कि जहां श्री केशी स्वामी उतरे थे. साधुको देखकर राजा प्रधानको पूछने लगा कि, ये कोन है? प्रधानने कहा, ये जीव–काया अलग माननेवाले उपदेशक बडे विद्वान सूने जाते हैं. राजा तुरंत ही मुनी पास आकर सवाल जवाब करने लगा.

राजा–क्या जी! आप जीव–काया दो मानते हो?

मुनी–हे राजन्! तूं मेरा चोर है.

राजा (चोंक कर) क्या मैं? मेंने कभी चोरी नहीं कीइ है.

मुनी– तो क्या तेरा दाण चोरे उस्को तू चोर नहीं कहता है?

३ ठाणांगजीका उपांग "जीवाभिगमजी," जिसमें अठाइ द्वीपका, चोवीस दंडकका, विजय

चतुर राजा समझ गया कि मैंने मुनीको विधि पूर्वक बंदना नहीं की, सो दाण चोरने जैसा दोष किया, अैसा मुनी कहते है.

राजा—महाराज ! मैं इहां बैठुं ?

मुनी—तेरी ही जगा है !

अैसे विचित्र प्रत्युत्तर सुन राजाको विश्वास बैंठा कि ये है तो बडा चालाक; मेरी शंकाका निवारण कर सके भी सही.

राजा—आप जीव काया दो मानते हो ?

मुनी—हा; काया तो द्यां रहती है और जीव अन्य जन्म लेकर दुसरे शरीरमें प्रवेश कर पुण्य—पापका फल भुगते है.

राजा—मेरा दादा पापी था, वो तो आपके कहने मुजब नरकमें ही गया होगा. अब जो वो वहांसे आकर मुझको चेतावे कि हे पुत्र ! तूं पाप न कर; पाप न कर; पाप करनेसे मेरे जैसे दुःख भुक्तना पडेगा. यदि मेरा दादा ऐसा कहनेकु आवे तो मैं जीव—काया अलग मानुं.

पोलीयेका इत्यादि वर्णव हैं. इस्के मूल श्लोक ४७०० हैं.

४ समवायांगजीका उपांग " पन्नवणाजी."

मुनी—तेरी सूरीकंता राणीके साथ कोइ दुष्टको जार रमता देखे तो तूं क्या करे ?

राजा—ठार मार डालू.

मुनी—वो कभी कहेवे के महाराज ! मेरेकु पाव घंटा छोडो, मेरे पुत्रको चेतानेके लिये मुजको जाने दो; फिर तुरंत ही शिक्षा भुक्तनेके लिये आ जाउंगा. तो क्या तूं उस्को छोडेगा ?

राजा—औसा कोन मूरख होवे कि अपराधीका विश्वास करे ?

मुनी—जब तूं एक पापके करनेवालेको तेरे राज्यमें ही जानेकी पाव घंटाकी छूटी नहीं दे सक्ता तो तेरा दादाने अनेक पाप किये थे उन्को नरकावाससे इतने दूर तक कैसे छोडे जावे ?

राजा—अच्छा, तो मेरी दादीने बहुत धर्म किया था. वो तो जरुर मेरेको धर्मके मिष्ट फल कह बतानेकु स्वर्ग छोड इधर आनी ही चाहिये.

मुनी—भला राजन् ! कोइ भंगी तुजको उस्की झूपडीमें बुलावे तो तूं जावे क्या ?

जिस्के छत्तीस पदमें, सर्व लोकमें जीव अजीव मंथ
जो पदार्थ हैं उन्का स्वरुप वासटीया अल्पाबहुत

राजा—ए कैसा सवाल ! क्या में दुर्गंधी भरी हुइ अपवित्र झूपडीमें कबी भी जा सक्ता हूं ?

मुनी—तो क्या अनेक सुखोंमें पडे हुवे देव ये दुगंध युक्त मनुष्य लोकमें आ सक्ता है ? मनुष्य लोककी दुर्गंध ५००० योजन तक उंची जाती है.

राजा—ये बात छोड दो; मैं और सवाल करता हूं. एकदा मैंने एक अपराधीको लोहेकी कोठीमें भर चौतर्फसे मजबुत बंद करलीया. पीछे उस्को खोलके देखा तो वो तो मृत्युंगत था, परंतु जीव कीधर भी देखा नहीं गया ! तो जीव गया किधरसे ?

मुनी—किसी गुफाके मजबुत द्वार बंद करके भीतरमें कोइ जोरसे ढोल बजावे तो अवाज बाहीर आता है की नहीं ?

राजा—आता ही है.

मुनी—ऐसे ही जीव भी नीकल सकता है परंतु द्रष्टिगोचर नहीं है.

राजा—वैसे ही एक चोरको कोठीमें बंद कर बहुत दीनसे निकाले तो उस्में असंख्य कीडे पड गये; वो कीडे कीधरसे आये ?

भांगे इत्यादिकसे भिन्न स्वरुप बताया है. इस्मेंसे सेंकडों थोकडे निकलते हैं. इस्के मूल श्लोक ७७८७ हैं.

मुनी—लोहेके निबड गोलेको अग्निमें तपाते है तब उस्के अंदर अग्नि भरा जाती है तैसे ही कीडे भरा गये.

राजा—जीव सदा एकसा रहता है कि कमी ज्यादा होता है?

मुनी—सदा एकसा ही रहता है.

राजा—तो फिर जैसा युवानके हाथसे शर (बाण) जाता है तैसा ही वृद्धके हाथसे क्यों नहीं जाता?

मुनी—जैसे नवे धनुष्यसे बाण लंबा जाय तैसे जूनेसे नहीं जाय; इसी तराह समझना.

राजा—युवानसे जितना बोझा उठता है उत्ना वृद्धसे क्यों नहीं उठता?

मुनी—नवा छीका बहुत और जूना छीका थोडा वजन उठा सकता है तैसे ही जाणना.

राजा—मेंने जीते चोरको तोलके उस्के श्वासोश्वास रुंधके मारा, फिर तोला तो वजन बरोबर हुआ. यदि जीव—काया अलग है तो जीव नीकल जानेसे कायाका वजन कमी होना ही चाहीये.

मुनी—चमडेकी मशकको खाली तोलो और फीर

५ समवायांगजीका उपांग "जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति," जिस्में जंबूद्वीपके क्षेत्र, पर्वत, द्रह, नदी आदिकका

हवासे भरके तोलो तो बजन एकसा ही होगा, इसी तराह समझना.

राजा–मैंने एक चोरके टुकडे २ कर देखा परन्तु 'जीव' कीधर भी नहीं देखा गया !

मुनी–राजन् ! तूं कठीआरा जैसा मूर्ख है. कितनेक कठीआरे वनमें लकडी लेनेकु गये. एक कठीआरेको एक जगा बैठा कर और सब कहने लगे कि, भाइ तूं इधर ठहरके अरणीकी लकडीसे अग्नि निकाल कर भोजन तैयार कर, हम सब लोग लकडी लावेंगे उस्मेंसे तुजको भी भाग मिलेगा. कठीआरे सब गये और वो रसोइ करनेवाले कठीआरेने अरणीके लकडीके टुकडे २ कर अग्नि ढुंढा परन्तु अग्नि उस्को द्रष्टिगोचर नहीं हुवा. आखीर सब कठीआरे लकडी लेकर आ पहुंचे और उस्को अरणीके टुकडेमें अग्नि ढुंढते देख कर हँश पडे और अपने हाथसे ही अरणीसे अरणी घीस कर अग्नि उत्पन्न की और रसोइ बनाइ. हे राजन् ! तूं भी ऐसे ही मूर्ख है !

राजा–महाराज ! मुझे तो प्रत्यक्ष द्रष्टांतसे जीव

विस्तारसे वर्णव है. तथा श्री ऋषभदेवजी भगवानका चारित्र, भरत चक्रवर्तीके छे खंड साधनेकी रीत, नव

साबीत करो तो मैं मानुं.

मुनी–भला ये वृक्षके पर्ण (पत्ते) किससे हलते हैं?

राजा–हवासे.

मुनी–हवा कित्नी बडी और उस्का रंग कैसा है?

राजा–वो तो दिखती ही नहीं है.

मुनी–तब कैसे जाना कि हवा है?

राजा–पत्ता हलता है इससे.

मुनी–तो बस; असे ही शरीरके हलने चलनेसे जीवका होना मालुम होता है.

राजा–महाराज! आपने कहा की सब जीव एक सारीखे हैं तो कीडी छोटी और हत्थी बडा क्युं होता है?

मुनी–कटोरीके अंदरका दीपक (दीवा) कटोरी जितनी जगामें ही प्रकाश करता है,/महेलके अंदरका दिवा महेल जितनी जगामें प्रकाश करता है; कुच्छ दीवा छोटा वडा नहीं है. असे ही जीवके लिये भी समझना.

राजा–आपकी बात तो न्याय पक्षकी है परन्तु मेरे बापदादासे जो मजहब हम पालते है उस्को कैसे छोडा जाय?

निधान, १४ रत्न, मोक्ष जानेका ज्योतिषी चक्र

मुनी–न छोडे तो 'लोह बनीये'की तराह तूजको ये लोह मुबारक हो !

राजा–महाराज ! 'लोह बनीये'ने क्या किया था ?

मुनी–सुन; चार बनीये विदेशकु द्रव्योपार्जन करनेके लिये चले. रास्तेमें लोहकी खान आइ; चारोंने उस्मेंसे लोहकी गठडी बांध ली और आगे चलना शुरु रक्खा. आगे तांबेकी खान आइ, जिस्को देख तीनोंने लोह फेंक दीया और तांबा बांध लीया. चौथेने तो कहाः– 'मैं तो लीया सो लीया' आगे सोना रुपाकी खान आइ. तीनोंने तांबा छोडके रुपा और रुपा छोडके सुवर्णकी गठडी बांध ली. आखीर हीरे–माणिक्यकी खानमेंसे गठडी बांध ली और सुखी हुए. परंतु 'लोह बनीये'ने लोह छोडा नहीं और बोझा उठाके दुःखी हुवा.

ये सून कर राजाने जैनधर्म अंगिकार किया. समकित सहित व्रत धारण किये. अपनी लक्ष्मीके ४ भाग कर एक भाग धर्मार्थ व्यय करनेकु रक्खा. बेले २ पारणा शुरु किया. फिर मुनीराज विहार कर गये. सुरीकंता राणीने अपने पतिको धर्मचुस्त देखके और रागरंगसे विरक्त देखके निकम्मा समझ कर तेरमे बेलेके

वगैरा बहुत विस्तार है. इस्के मूल श्लोक[१] ४१४६.

६ ज्ञाताजीका पहला उपांग "चंद्र प्रज्ञप्ति," जिस्में चंद्रमाके विमान, मांडले, गति, क्षेत्रयोग, ग्रहण, राहु, चंद्रके पांच संवत्सर इत्यादि अधिकार है. इस्के मूल श्लोक[२] २२०० हैं.

७ ज्ञाताजीका दूसरा उपांग "सूर्य प्रज्ञप्ति," जिस्में सूर्यके विमान १८४ मंडलका दक्षिणायन उत्तरायन पर्वराहू गणितांक दिनमान सूर्य संवत्सर इत्यादि ज्योतिषी चक्र है. इस्के मूल श्लोक[३] २२०० हैं.

८ उपाशकदशाका उपांग "निरियावलिकाजी," जिस्में कुणीक पुत्रके हाथसे श्रेणिक राजा पिताका मृत्यू, वेहल कुमारके हार-हाथीके[४] लिये महाभारत

पारणेमें विष मिलाया, वो जानते पर भी राजाने सम-भावसे पारणा किया, मरके पहले देवलोकमें सूर्याभ विमानके देव हुए; वहांसे महा विदेहमें संयम ले मोक्ष पधारेंगे.

१ इस्के, पहले तो ३०५००० पद थे. २ इस्के, ५५०००० पद थे. ३ इस्के ३५०००० पद थे. ४ चेडा राजाके धर्ममित्र नवमल्ली नवलच्छी देशके राजाने अपने मित्रपे धर्म-संकट पडा जाण स्हायता करी थी. हार

१८०००००० मनुष्यका घमशाण इत्यादि वर्णव है.

९ अंतगड दशाका उपांग "कप्पवडिंसीया" जिस्के दश अध्ययन हैं. इस्में श्रेणिके राजाके पोते कालीयादिक दश कुमार पद्म, महापद्म प्रमुख दिक्षा ले देवलोकमें गये उन्का अधिकार है

१० अनुत्तरोववाइका उपांग 'पुप्फीयाजी," जिस्के दश अध्ययन हैं. इस्में चंद्र सूर्य सुत्र माणभद्र पूर्णभद्र इत्यादिककी पूर्व करणीका अधिकार है. सोमल ब्राह्मण और श्री पार्श्वनाथ स्वामीका संवाद, बहुपुत्तीया देवी इत्यादिका अधिकार है.

११ प्रश्न व्याकरणका उपांग "पुप्फ चुलीयाजी," जिस्के दश अध्ययनमें श्री, ह्रीँ, धृती, कीर्ती इत्यादिककी पूर्व करणीका अधिकार है.

१२ विपाकजीका उपांग "वन्हि दशाजी," जिस्के १० अध्ययन हैं, इस्में बलभद्रजीके पुत्र निषढ कुमारादिक दशका अधिकार हैं. यह निरावलिका आदि पांच ही शास्त्रोंका एक जुथ है, जो नि-

---

देवता ले गया, हत्थी अग्निखाइमें जलके मर गया. चेडा राजाको भवनपति देव भवनमें ले गया. वेहल कुमारने दिक्षा ले आत्मकार्य किया.

रीयावलीकाजीके नामसे ओलखाता है. मूल श्लोक ११०९ है. यह अंगके उपांग है, इसलिये इन्का समावेस भी द्वादशांगमें कीया जाता है. *

* इन उप्रांत आठ सूत्र और माननीय हैं.

१ 'व्यवहार' इस्में साधूका आचार व्यवहार है. इस्के मूल श्लोक ६०० हैं.

२ 'वेद कल्प' इस्में साधूके लिये वस्त्र पात्र मकानका प्रमान है. इस्के मूल श्लोक. ४७३ हैं.

३ 'नशीत' साधूको प्रायश्चित देनेकी रीती है. इस्के मूल श्लोक ८१५ हैं.

४ 'अनुयोग द्वार' इसमें असमाधी सबल दोषों इत्यादिक है. इस्के श्लोक १८३०

ये चार छेद सूत्र हुये.

(कित्नेक पंच कल्प और जीन कल्प मिलाके ६ छेद सूत्र कहते हैं. परंतु इन दोनुका नाम नंदी सूत्रमें नहीं है)

१ 'दश वैकालिक,' इस्में साधूका आचार दर्शाया है. इस्के १० अध्ययन और ७०० श्लोक हैं.

२ 'उत्तराध्ययन,' इस्में ३६ अध्ययनमें अनेक सद्बोधका समावेश है. श्लोक २१००

उपाध्यायजी ये बारे अंगके संपूर्ण ज्ञाण होकर दूसरेको पढाते हैं. "करण चरण जुउ" करण (क्रीयाके) सित्तरी (७० गुण करके) तथा चरण (चारित्रके) सित्तरी (७० गुण करके) युक्त श्रेष्ट.

३ 'नंदी सूत्र' इस्में ५ ज्ञान चार बुद्धिकी कथा तथा शास्त्रों की टीप है: श्लोक ७००

४ 'अनुयोग द्वार,' इस्में ४ योग, ४ प्रमाण, ७ नय निक्षेप इत्यादि है. श्लोक १८९९

ये ११ अंग, १२ उपांग, ४ छेद और ४ मूल और ३२ आवश्यक मूल श्लोक १०० बत्तीस सूत्र माने जाते हैं.

नंदीजी सूत्रमें ७२ सूत्रके नाम कहे हैं, जिस्मेंसे ४१ सूत्र कालिक हैं:–१ आचारांग, २ सुयगडांग, ३ ठाणांग, ४ समवायांग, ५ भगवती, ६ ज्ञाता, ७ उपाशकदशांग, ८ अंतगढदशांग, ९ अनुत्तरोववाई, १० प्रश्नव्याकरण, ११ विपाक, १२ उत्तराध्ययन, १३ दशाकल्प, १४ व्यवहार, १५ निशिथ, १६ महानिशिथ, १७ ऋषिभाषित, १८ जंबूद्विप प्रज्ञप्ति, १९ द्विपसागर प्रज्ञप्ति, २० चंद्र प्रज्ञप्ति, २१ खुडिया विमाण विभत्ती, २२ महालिया विमाण विभत्ती, २३ अंग-

करण सित्तरीके ७० बोल.

गाथा–पिंड विसोही समिइ, भावणा पडिमाय इंदिय निरोहो ।
पडि लेहणा गुत्तीउ, अभीग्गह चेव करणंतु ॥ १ ॥

पिंड विशुद्धिके ४ भेदः–(१) आहार–पाणी सूखडी–सूपारी आदिक फासुक निर्जीव निर्दोष

चूलीया, २४ वंगचूलीया, २५ विवाह चूलीया, २६ अरुणोववाइ, २७ वरुणोववाइ, २८ गरुडोववाइ, २९ धरणोववाइ, ३० वेसमणोववाइ, ३१ वेलंधरोववाइ, ३२ देविंदोववाइ, ३३ उठाणसुए, ३४ समुठाणसुए, ३५ नागपरियावलियाउ, ३६ निरियावलियाउ, ३७ कप्पियाउ, ३८ कप्पवडंसियाउ, ३९ पुप्फियाउ, ४० पुप्फचूलीयाउ, ४१ विण्हिदशाउ. ये ४१ सूत्र दिनके और रात्रीके पहले और चौथे प्रहरमें पढे जाते हैं, फिर नहीं.

३० उत्कालिक सूत्रः–१ दशवैकालिक, २ कप्पियाकप्पियं, ३ चूलकप्पसूयं, ४ उववाइ, ५ रायपसेणी, ६ जीवाभिगम, ७ पनवणा, ८ महापनवणा, ९ पम्मायपमायं, १० नंदी, ११ अनुयोगद्वार, १२ देवेन्द्रस्तव, १३ तंडुल वेयालिय, १४ चंदगविझयं, १५ सूर प्रज्ञप्ति, १६ पोरसीमंडल, १७ मंडलप्रवेश, १८ विद्या-

शास्त्रोक्त विधियुक्त ग्रहण करे. (२) सूत ऊन प्रमुखके वस्त्र एक सपेत रंगके मानोपेत (साधूको ७२ हाथ और आर्याको ९६ हाथ) निर्दोष ग्रहण करे. (३) काष्ट तुम्बे प्रमुखका पात्र यथाविधि ग्रहण करे. (४) अठारे प्रकारके निर्दोष स्थानक मालककी तथा मालकके अनुचरों (नोकरों) की रजासे ग्रहण करे.

चरण विणिछिउ, १९ गणिविद्या, २० झाण विभत्ती, २१ मरण विभत्ती, २२ आयविसोही, २३ वियरायसूयं, २४ सलेहणासूयं, २५ विहार कप्पो. २७ चरण विसोही, २८ आउरपच्चखाण, २९ महापच्चखाण, ३० द्रष्टिवाद, ये ३०, बत्तीस असझाइ टाल हर बक्त पढे जाते हैं. और ७२ मा आवश्यक, इस्में असझाइ टालनेका कुच्छ कारण नहीं.

ये ७२ सूत्र शास्त्रानुसार कहैं, जिस्मेंसे अबी कितनेक सूत्र नहीं हैं इस्का खुलासा पच्ची सूत्र की वृत्तिमें इस तराह है. इस कालमें १ खुडिया विमाण विभत्ती २ महल्लिय विमाण विभत्ती, ३ अंगचूलिया, ४ वंग चूलीया, ५ वित्रहा चूलीया ६ अरुणोववाइ, ७ वरुणोववाइ, ८ गरुडोववाइ, ९ धरणोववाइ १० वेसमणोववाइ, ११ वेलंधरोववाइ, १२ देविंदोववाइ, १३

यह चार शुद्धि सदा यथा विधि सांचवे. 'समिइ' पांच समिति युक्त सदा रहे इस्का विस्तार चारित्राचारमें हुवा.

" बारे भावना. "

१ " अनित्य भावना "—ऐसा विचारे कि, इस जगतमें ग्राम—कोट—खाइ—बगीचे—नीवाण—मेहेल—

उठाण सूए, १४ समुठाण सुए, १५ नाग—परियावलियाणं, १६ कप्पिया कप्पियाणं १७ असिविष भावणाणं, १८ दिठि विष भावणाणं, १९ चरण भावणाणं, २० महासुमिण भावणाणं, २१ तेयग्गिनिसगाणं. ये २१ कालिक नास्ती और १ कप्पिया कप्पियं, २ चूलकाय सुयं, ३ महाकप्प सूयं, ४ महापनवणा, ५ पम्माय पमायं, ६ पोरसी मंडलं, ७ मंडलं पवेसो, ८ विद्या चरण विणिछिउ, ९ झाण विभत्ती, १० मरण विभत्ती, ११ आय वीसोही, १२ सलेहणा सूयं, १३ वियराय सूयं, १४ विहार कप्पो, १५ चरणविह. ये १५ उत्कालिक सूत्र नहीं है. परन्तु इन्के नाम जैसे दुसरे सूत्र अभी दिखते हैं सो अर्वीके आचार्यके बनाये होगे अैसा भास होता है. जैसे महानिसिथजी आठ आचार्योंने बनाइ है अैसा कहा जाता है:—हरिभद्रजी, सिद्धसेनजी, वुद्धवादीजी, यक्षसेनजी, देव गुप्तीजी,

हवेली—दुकान—मनुष्य—पसु—पक्षी—धन—आभूषण—धान इत्यादि सर्व वस्तू अनित्य—अशाश्वती हैं. परंतू तूं मुढपणेसे इसे शाश्वती मान बैठा है. पर पुद्गलोंसे शरीरकी—घरकी सोभा बनाके खुशी मानता है. सो यह सोभा कभी एकसी रहनेवाली नहीं, ऐसी भावना श्री भरतेश्वर चक्रवर्तीने भाइथी. वनीता नगरीके श्री ऋषभदेवजीके पुत्र सूमंगलाजीके अंगजात भरतजी एक दिन सोले सिणगार सजके आरीसे भवन (काचके मेहेल) में अपना सरीरका प्रतिबिंब देखते हाथकी चिट्टी अंगुलीकी मुद्रिका (बींटी)

यशोधरजी, रविगुप्तजी, खंदीलाचार्यजी. कितनेक सूत्र बारे दुष्कालमें भंडारमें रह गये, जहां उन्को रुणी (जीवात) खागइ. जिस्में कितनेक आचार्यने पूर्वापर समास मिलाकर बीचमें मनमाना नवीन लिख दीया. कितनेक जैन सूत्र शंकराचार्यने और कितनेक मुसलमानोंने नाश कर दिये, जिससे अबी जैन ज्ञान बहुत थोडा रह गया है. ज्ञानका जिर्णोद्धार करनेकी बहुत जरुर है. १० पूर्व तक पढे हुवे को श्रुत केवली कहे जाते है. उनके बचन सर्वमान्य है और आचार्योंके किये हुवे ग्रंथ जो द्वादशांगी वाणीसे मिलते है वो भी अवश्य मानने योग्य है.

निकल पडी तब वो अंगुली खराब दिखने लगी. यह देख भरतजी आश्चर्य पाये और एकेक भूषण उतारते २ नग्नरूप हो खडे रहे और अपने मनसे कहने लगे कि, देख तेरा तो रूप ये हैं; फक्त पराये पुद्गलसेही तेरी सोभा हैं. और पर पुद्गल तो तेरे नही हैं; यह विनाशिक, तूं अविनाशिक है; तब तेरे इस्के प्रिति कैसी नीभेगी? जो तू इससे जास्ती प्रीती करेगा तो तुझेही रोना पडेगा. तेरे देखते वस्तूका नाश होयगा तो तूं पश्चाताप करेगा, कि हायरे! मेरी अमुक प्यारी वस्तू कांहा गइ? और जो तूं इन्कों छोडके जायगा तो भी तूही रोयगा कि, हायरे! सब संपत्ती छोड चला! इस लिये स्ववससे त्याग कर सुखी हो. ऐसा विचारते २ तूर्त केवल ज्ञान प्राप्त हुवा. शासनके रक्षक देवने साधूका भेष ओगा मुहपति समर्पण करी. तुरत दिक्षा ले सभामें प्रतिबोध कर दशहजार बडे २ राजाको दिक्षा दे जनपद देशमें विचरे. कर्म खपाके मोक्ष पधारे.

२ "असरण भावना"—ऐसा विचार करे कि, रे जीव! इस जगतमें तेरेको सरण (आधार)का देनेवाला कोइ नहीं है. सब स्वजन स्वार्थके मगे हैं.

जब तेरे कर्म उदय होंगे—तेरेपे दुःख आके पडेगा तब तुजको साहाय कर्त्ता कोइ भी नहीं होगा. यह भावना अनाथी निग्रंथने भाइ थी. एक दिन राजग्रही नगरीका श्रेणिक राजा हवा खाने मंडिकुक्ष बगीचेमें गये. वांहा एक झाडके नीचे अति मनोहर रुपके धरणहार शांत दांत ध्यानस्थ मुनीका रुप देख अति आश्चर्यके साथ वंदना कर पूछने लगा कि हे महानुभाव ! आप तरुण अवस्थामें साधू क्यों हुवे ? मुनी बोले कि मैं अनाथ हूं ! ऐसा सुण राजाको दया आइ, और कहने लगा कि मैं आपका नाथ बनूंगा; चलो मेरे राजमें; मैं मेरी कन्या परणाउ और राज देके सुखी करुं. मुनीने कहाः—राजा ! तूं आप ही अनाथ है तो दूसरेका नाथ कैसे हो सकता है ? यों सुन राजा खिन्न हुवा और कहने लगा कि जिस्की आज्ञामें तेंतीस २ हजार हाथी घोडे रथ और तेंतीस क्रोड पाचदल पांचसो राणी और एक क्रोड इकोतर लाख गाम हैं उस्को 'अनाथ' कहनेसे मृषावादका दोष क्या नहीं लगेगा ? मुनी बोले, राजा ! तू नाथ अनाथके भेदमें समझता नहीं. सुण; मैं कोसंबी नगरीके प्रभूत धन सेठका पुत्र हूं. एक दिन मेरे अं-

गमें इंद्रके बज्रके प्रहार जैसी महावेदना उत्पन्न हुइ. वो किसीसें भी न शांत हुइ. बहुत वैद्य मंत्रवादी अपने २ शास्त्रमें अति कुशल आये और औषध उपचार पथ्य यत्न सब कीये, परंतू रोग नहीं मिटा. मेरेको प्राणसे भी ज्यादा प्यारे जाणनेवाले मेरे सर्व सज्जन थे, वो सब तन और धनसे महीनत करके थक गये परंतू दुःख नहीं मिटा सके. पतिव्रता अनुरक्त मेरी स्त्रीने मेरे दुःखसे दुःखी हो आहार और स्नानका त्याग करदीया, सदा चिंतातुर मेरा सुख इच्छती रही परंतु वो भी मेरा दुःख नहीं मिटा सकी. सबको थके देख मेने मेरे मनमें बिचार किया कि, जो मेरा दुःख दूर होगा तो में आरंभ परिग्रहका त्यागी शांत दांत मुनी पदका स्विकार करुं. इत्ना विचारते में ही तुरंत मेरी वेदना अदृश्य हो गइ, फिर कुटुंबकी आज्ञासे दिक्षा ग्रहण कर फिरता २ इधर आया. यों सुण श्रेणिक राजाको अनाथ पणेका रहस्य विदित हुआ.

३ "संसार भावना"—ऐसा बिचार करे कि, रे जीव! तू अनंत जन्म मरण कर सर्व संसार फिरा, बालाग्र जित्ना भी ठिकाना खाली नहीं रक्खा, सर्व जीवोंके साथ सर्व सगपण करे, माता मरके स्त्री

और स्त्री मरके माता, पीता—पुत्र, पुत्र—पिता ऐसे आपसमें अनंत वक्त हो आया. सर्व जगतवासी जीव स्वजन है ऐसी भावना मल्लीनाथजीके छे मंत्रीयोंने भाइ. मिथिला नगरीके कुंभ राजा और प्रभावती राणीकी पुत्री मल्ली कुंवरी तीन ज्ञान सहित थे, जिनोने एक मोहनघर (बंगला) बनाया जिस्के मध्य बीचमें एक सोनेकी अपने जित्नी मोटी और रुपवंत एक पोली पूतली बनाइ. आप भोजन करे तब उस्के शिर उपरका द्वार खोल एक ग्रास (कवा) नित्य डालके द्वार लगा देवे. एक वक्त छे देशके छे राजा मल्ली कुमरीके महारुपकी महिमा सुण लश्कर लेके वांहा आये और याचना करी के तुमारी पुत्री हमको परणावो. कुंभ राजा चिंतामें पडे कि एक कन्या किस २ को परणावूं ? तब मल्ली कुमारीने कहा, आप चिंता मत करो, मैं छेइकों समजा देवूंगी. जुदे २ छेही राजाको बुलाके मोहन घरकी छेही कोटडीयोंमें जुदे २ बंद करदीया. जालीमेंसे उस पूतलीका रुप देख छेही राजा अत्यंत मोहित हुवे, की कुमरीने तुर्त उस्का द्वार खोल दिया. उस्मेंसे सडे हुये धानकी अति दुर्गन्ध निकली. उससे छेही राजा घबराने

लगे. तब कुंवरीने कहा कि, अहो नरेन्द्रो! जिस्को देख मोहाये थे उस्को ही देख घबराते क्यों? सोने की पूतलीमें ऐसी दुर्गन्ध निकली तो हड्डी मांसकी पूतलीके क्या हाल? इस्को देख क्या मोहित होते हो? अपने पूर्व भवकों याद करो. तीसरे भवमें मैं राजा था और तुम छेही मेरे मंत्री थे, अपन छेहीने दिक्षा लीथी, मेंने धर्म कार्यमें कपट कीया उससें मैं स्त्री हुइ. देखीये संसारका स्वरुप! तुम मेरेको व्याने तैयार हुये! धिकार है इस संसारको! ऐसा सुण छेही राजाकों जाति स्मरण (पूर्व भव दिखाने वाला) ज्ञान उत्पन्न हुवा. छेही प्रतिबोध पाके मल्लीनाथजीके साथ दिक्षा ले केवलज्ञान पाके मोक्ष पधारे.

(४) "एकांत भावना" ऐसा बिचारे कि रे जीव! इस जगतमें कोइ किसीका सोबती नहीं है. अकीला आया और अकीला ही जायगा. जो पाप करके तेने धन कुटुंबका संग्रह किया है सो मरेगा जब धन धरतीमें, पसू घरमें रह जायगा. स्त्री दरवज्जे तक और कुटुंब स्मशान तक ही आयगा. अत्यंत प्रिय ऐसा ये सरीर चितामें जलके भस्म (राख) हो जायगा. ऐसा जाण एकांतपणा धारण करे. ऐसी

भावना मृगापुत्रने भाइ. सुग्रीव नगरके बलभद्र राजा और मृगा राणीके मृगा पुत्र सुन्दर स्त्रीयोंके बीचमें रत्नजडित मेहेलमें बैठकर बजारका तमासा देखताथा. एक दुर्बल तपोधन साधूकों देख उन्को जाति स्मरण ज्ञान उत्पन्न हुवा. पूर्व भवमें संयम पाला हुवा देखके संयमकी इच्छा हो गइ, संयम ले मृगकी तराह अकिले वनवासी हो करणी कर मोक्ष प्राप्त करी.

(५) "पर पंख भावना"—ऐसा विचारे कि रे जीव ! इस जगतमें सर्व स्वार्थी (मतलबी) हैं. उन्का मतलब पुगता है वांहा तक सब जी जी करते हैं, हुमक उठाते हैं; मतलब पूरा हुये कोइ भी किसीका नहीं है. ऐसी भावना नमीराज ऋषीने भाइ. मिथीला नगरीके नमीराजके बदनमें एकदा दाहज्वरका रोग पैदा हुवा. उस्की शांतीके लिये उन्की १००८ राणी बावना चंदन घीसके प्रिय पतिके सरीरको लगातीथी तब उन्के हाथोंके कंकण [चूडीयों] का अवाज कानमें पडनेसे ज्यादे दर्द हुवा.

विचक्षण स्त्रीयों समझ गइ और शीर्फ एकेक कंकण मंगल निमित्ते हाथमें रक्खा. कंकणका अवाज बंद होते ही नमीराजने पूछा कि, पहले

इत्ना अवाज होताथा सो अब क्यों नहीं होता ? राणीने सच्च बात कह दी, जिस्को सोचनेमें राजा लग गया. नमीरायजीकों बिचार पैदा हुवा कि बहुत थे तब गडबड होतीथी, एक होनेसे सब गडबड बंद हो गइ. वाहा, वाहा; में सबके संजोगमें हुं तब तक ही दुःखी हुं. इत्ना बीचारते रोग गया. निद्रा आइ. स्वप्नमें सातमा देवलोक देख जागृत हुये. बिचार करते तुर्त जाति स्मरण ज्ञान पैदा हुवा. पुत्रको राज दे चारित्र ले वनवास स्विकारा. उत्तम राजाके वियोग के दुःखसे घबराइ हुइ प्रजा आक्रंद करने लगी, किजो सुण सक्रेंद्रको दया आइ. ऋषिकी द्रढताकी परीक्षा करनेके लिये इंद्र वृद्ध ब्राह्मणका रुप बनाके आये और कहने लगे कि, अहो ऋषी ! इत्ने लोग क्यों विलाप करते हैं ? मुनी बोले, इस नगरके बाहिर एक अति सुंदर वृक्ष फल फूल पत्रसे भरा हुवा था, उस्पे बहुत पक्षी आराम पातेथे. एक दिन वायूके योगसे वो वृक्ष टुट पडा, ठूंठा रहगया. तब सर्व पक्षी अपने मतलब याद कर रोने लगे. हे इन्द्र ! तैसे ही यह नगरजन अपने स्व मतलबका वियोग देख रोते हैं. ऐसे इग्यारे प्रश्नका समाधान कर इन्द्र मुनीको वं-

दना कर स्वर्गमें चला गया. और नमीराज करणी कर मोक्ष पधारे.

(६) 'अशुची भावना'—ऐसा विचारे कि रे जीव! तूं तेरे सरीरको स्नान मंजनादिकसे शुद्ध करनेकु चाहता है, परंतु यह कभी शुद्ध नही होगा. क्यों की इस्की उत्पात्ति और अंतरिक भेदका जरा विचार कर. अव्वल माताका रक्त और पिताका शुक्र (वीर्य)का आहार कर यह सरीर बना था; अशुची (भिष्टाके) स्थानमें वृद्धी पाके रक्तके नालेमें बाहिर पडा. और माताका दूध पी के बडा हुवा, सो दूध भी जैसे रक्तमांस सरीरमें रहते है तैसाही हैं. और अबी अनाज खाता हैं सो भी अशुचीके खातसे पैदा होता हैं.

अब तेरे सरीरके अंदरके पदार्थोंका जरा बिचार कर. इस सरीरमें ७ कला हैः—१ मांस, २ लोही, ३ मेद. इन तीनोंके वीचमें तीन झिल्ली है सो ४ कृतफिये के बीच एक झिल्ली. ५ आंतोके बीच एक झिल्ली. ६ पेटमें जठराग्नीको धरनेवाली एक झिल्ली. ७ और वीर्यको धरनेवाली एक झिल्ली. इस सरीरमें सात आसय (स्थान) हैं. १ हृदयमें कफका

स्थान, २ हृदयके नीचे आमका स्थान, ३ नाभी उपर डाबी बाजू जठराग्निका स्थान (अग्नि पे तिल हैं), ४ नाभीके नीचे पवनका स्थान, ५ पवनके स्थानके नीचे पेडूमें मल (विष्टा) का स्थान, ६ पेडू पास जरासा नीचे मुत्रका स्थान (इसे बस्ती कहते हैं), ७ हृदयके कुछ उपर जीवका और रक्त (लोही) का स्थान. स्त्रीको ३ जास्ती हैः—१ गर्भस्थान और (२–३) दूधस्थान (स्तन). यों स्त्रीके १० स्थान हुये.

इस सरीरमें ७ धातु हे. १ रस, २ लोही, ३ मांस, ४ मेद, ५ हाड, ६ मींजी, ७ शुक्र. जो आहार करता हैं सो पित्तके तेजसे पकके पहले चार दिनमें उस्का रस होता है, फिर चार दिनमें उस रसका लोही होता है; यों चार २ दिनके अंतरे से एकेक धातूपणे प्रगमता प्रगमता एक महीनेके अंदर शुक्र होता है.

सात उपधातूः—(१–२–३) जीभका, नेत्रका, और गलेका मेल रस की उपधातू है. ४ कानका मेल मांसकी उपधातू. ५ बीस ही नख हाडकी उपधातू. ६ आंखका गीड मीज्जीकी उपधातू. ७ मुख उपरकी चिकणाइ शुक्रकी उपधातू.

मांस रुप जो धातु हैं उसे 'वसा' तथा 'औज' कहते हैं. यह घृत जैसा चीकणा होता है. सर्व सरीरमें रम रहता हैं. यह शीतल और पुष्टीका कर्ता बलवान है.

७ त्वचा (चमडी) १ भामनी नामे उपरकी त्वचा चीकणी है सो सरीरकी विभूती (शोभा) करनेवाली है. २ लालरंगकी त्वचा उस्में तिल आर्य पैदा होता है. ३ श्वेत त्वचा उस्में चर्म दल रोग पैदा होता है. ४ तांबेके रंग जैसी त्वचा इस्में कोड रोग पैदा होता हैं. ५ छेदनी त्वचा इस्में अठारे प्रकारके कोड पैदा होते हैं. ६ रोहणी नामे त्वचा इस्में गुमडे गंडमाल प्रमुख रोग पैदा होता है. ७ स्थुल त्वचा, इस्में वीद्रधी रहते हैं.

तीन दोषका स्वरुप—१ वात (वायू), २ पित्त, ३ कफ. इन तीनोंको कोइ तीन दोष और कोइ तीन मेल कहते हैं.

१ वायू सरीरमें सर्व ठीकाणे वस्तूओंका विभाग करता रहता हैं. यह सुक्ष्म शीतल हलका और चंचल होता हैं. यह नसे रुप नल करके जो वस्तू खानेमें आती है उस्को ठिकाने पहोंचाता है. इस्के

पांच स्थान हैं:—१ मलका स्थान २ कोटा (पेट) ३ अग्नी स्थान ४ हृदय और ५ कंठ. इन पांच ठिकानें रहता हैं. १ गुदामें रहता है उसे अपान वायू कहते है. २ नाभीमें रहता है उसे सामान्य वायू कहते हैं. ३ हृदयमें रहता है उसे प्रानवायू कहता है. ४ कंठमें रहता है उसे उदान वायु कहते हैं और ५ सर्व सरीरमें रमता है उसे व्यान वायू कहते हैं. इस प्रकृति वालेके लक्षण:—केश छोटे, सरीर दुर्बल लुखास लिये होता है. इस्का मन चंचल रहता है, वाचाल होता हैं. इस्को आकाशमें उडनेके स्वप्न आते हैं. इसे रजोगुणी कहते हैं.

२ पित्त गर्म पतला पीला कडवा तीखा दग्ध होनेसे खट्टा हो जाता है. यह पांच ठिकाने रहके पांच गुण करता हैं. १ आसयमें तिल जित्ना अग्नी रुप होके रहता है. यह अग्नी पांच प्रकारकी (१) मंदाग्नीसे कफ. (२) तिक्षणाग्नीसे पित्त. (३) विषमाग्नीसे वात. (४) समाग्नी श्रेष्ठ (५) विषमाग्नी नेष्ट. २ त्वचामें रहके कांती करता हैं. ३ नेत्रमें रहके वस्तूकों देखाता है. ४ प्रकृतीमें रहके वस्तूकों पाचन कर खाये हुयेका रस लोही बनाता है. ५ हृदयमें रह

बुद्धी उत्पन्न करता है. इस्के ५ नाम हैं:—१ पाचक, २ भ्रंजक, ३ रंजक, ४ आलोचक, ५ साधक. इसकी प्रकृतिवालेके लक्षण:—जवानीमें श्वेत बाल होवे, बुद्धिवान होवे, पसीना बहुत आके क्रोधी होए, स्वप्नमें तेज देखे. इसे तमो गुण कहते हैं.

३. कफ चीकणा भारी श्वेत शीतल मीठा होता है. दग्ध हुए खारा हो जाता है. इस्के पांच स्थान:—१ आसयमें, २ मस्तकमें, ३ कंठमें, ४ हृदयमें, ५ सन्धीमें. यह पांच ठिकाने रह स्थिरता कोमलता करता है. इस्के पांच नाम:—१ क्लेदन, २ स्नेहन, ३ एसन, ४ अवलंबन, ५ गुरुत्व. कफकी प्रकृतिवालेके लक्षण:—गंभीर, मंद बुद्धि होता है. सरीर चीकणा,केस बलवान, स्वप्नमें पाणी देखे. इसे तमो गुण कहते हैं.

और भी इस सरीरमें मांस हाड मेद इन्को बांधनेवाली जो नसें हैं उन्को स्नायु कहते हैं. यह सरीर हड्डीयोंके आधारसे खडा है, जिस्को आधार इन्काही है. इस देहमें सबसे बडी सोले नसों हैं. उन्को करंड कहते हैं, यह सरीरको संकोचन पसारन शक्ती देते हैं.

सरंध्राका स्वरुप—कानके दो, नाकके दो, आं-

खके दो, यह ६, ७ जननेन्द्रि, ८ गुदा, ९ मुख; यों ९ छिद्र पुरुषके और स्त्रीके १ गर्भासय और दो स्तन यह ३ जास्ती, ११ छिद्र हैं. और छोटे छिद्र तो अनेक हैं. नाभीके डाबी तर्फ जो आसयके उपर तिल है सो पाणीको ग्रहण करनेवाली नसका मूल है. इससे ही प्यास (तृषा) शांत होती है. और कूख (पेट) में जो दो गोले हैं वो जठरके मेदेको तेज करते हैं. इस सरीरमें सर्व कोठे ७२ हैं. जिसें छे कोठे बडे हैं. जिस्मेंसे शीतकाल (सीयाले) में तीन कोठे आहारके, दो कोठे पाणीके, और एक कोठा खाली श्वासोश्वासको रहता है. ऐसेही ग्रीष्म ऋतुमें दो आहारके, तीन पाणीके, एक श्वासोश्वासका खाली रहता है. ऐसेही चौमासे (वर्षाऋतु) में अढाइ कोठे आहारके, अढाइ पाणीके, एक खाली रहता है.

इस सरीरमें सन्धी साठ हैं. पच्चीस पल प्रमाणे कालजा हैं. दो पल प्रमाणे आंख है. तीस टांक प्रमाणे शुक्र है. एक आढा लोही है. आधा आढा चरबी है. सिर (मस्तक) की भेजी एक पाथा मुत्र एक आढा भिष्टा पक पाथा पित्त एक कलब श्लेष्म

एक कलब. इस प्रमाणे सरीरमें है * जो इससे ज्यादा हो जाय तो रोग पैदा होवे और कमी हो जाय तो मृत्यू निपजे.

एक सो साठ नाडी नाभीके उपर (यह रसको धरनेवाली हैं) एकसो साठ नाडी नाभीके नीचे. एकसो साठ त्रीछी हाथ प्रमुखमें लपटी. एकसो साठ नाडी नाभीके नीचे गुदेको बीट रही हैं. पच्चीस नाडी श्लेष्मको, पच्चीस पित्तको, दश शुक्रको धरनेवाली हैं. यों सर्व नाडी ७०० हैं.

इस सरीरके दो हाथ, दो पग, यों चार शाखा. एकेक शाखामें तीस २ हड्डी. यह १२० हुइ. ५ जीमणी कम्मरमें और ५ डावी कम्मरमें, चार भग (योनी) में और चार गुदामें, एक त्रीकनमें, बहुतर दोइ पसवाडेमें, तीस पीठमें, आठ हृदयमें, दो आंखमें, नव ग्रीवामें चार गलेमें, दो हडबचीमें, ३२ दांत एक नाकमें, एक तालूमें, सर्व ३०० हड्डी हुइ.

* ८ सरसवका १ जव. ४ जवकी १ रती. ६ रतीका १ मासा. ४ मासाकी १ टांक. ८ टांकका १ पइसा. २ पइसेकी १ पल. ४ पलका १ पाव. ४ पावका १ सेर, ४ सेरकी १ अढक. ४ अढक की १ द्रोण.

इस सरीरमें साढी तीन क्रोड रोम हैं, जिस्मेंसे दो क्रोड एकावन लाख गले नीचे और निन्याणु लाख गलेके उपर.

इत्यादि अशुची अपवित्रतासे और आधी (चिंता) व्याधी (रोग) उपाधी (काम–कार्य) करके यह सरीर पूर्ण भरा है. जांहा लग पूर्ण पुन्य है वांहा लग सर्व अपवित्रता छिपी है. इसे गोरी काली चमडी ढांक रही है. जब पाप प्रगटे तो बीगडते किंचित् ही डेर न लगेगी. यह भावना सन्तु कुमार चक्रवर्तीने भाइ. अयोध्या नगरीका महा रुपवंत सनत्कुमार नामे चक्रवर्ती राजाकी पहले स्वर्गके इद्रने देवसभामें प्रशंसा कियी, सो एक देवताने मानी नहीं; तूर्त वृद्ध ब्राह्मणका रुप बनाकर चक्रवर्तीके पास आया, रुप देख आश्चर्य पाया. स्नान करते हुए चक्रवर्तीने पूछा, हे देव ! कांहासे आना हुवा ? देव बोला, मैंने बच्चपनमें आपके रुपकी प्रशंसा सुण चलना सुरु किया, चलते २ इत्ने वर्षका हो गया. आज मेरे मनोरथ पूर्ण हुये. चक्रवर्ती अभिमान लाके बोले, अबी क्या देखता है; जब सोले शृंगार सज राजसभामें सब परिवारसे बैठूं तब देखेगा तो तूं और

भी आश्चर्य पायगा. इत्ने कहनेमें ही चक्रवर्तीका सरीर सडे हुये काचरेकी तरह फट गया, कीडे पड गये! यह देख चक्रवर्तीको तुर्त वैराग्य दशा प्राप्त हुइ, कि जिस सरीरको मेंने अत्युत्तम माल खिलाये, श्रृंगार सजाये, अनेक सुख बतावे इसीने मेरेकों दगा दीया, तो दूसरेका क्या कहना? धिक्कार २ इस संसारकों! तुरंत ही सर्व रिद्धिका त्याग कर साधू पद ग्रहण कीया; ७०० वर्ष तक वो रोग सरीरमें रहा फिर निरोगी हो केवलज्ञान पाके मोक्ष पधारे.

(७) " आश्रव भावना ":–ऐसा बिचारे कि रे जीव! तेने अनंत संसार परिभ्रमण किया, इस्का मुख्य हेतु आश्रव ही है. क्यों कि पाप तो इस जीवने अनंत वक्त छोडा, परंतू आश्रव रोके बिन धर्म पूर्ण फल नहीं दे सकता हैं. आश्रव बीस प्रकारके होते हैं, परंतू ह्यां मुख्यमें अव्रतका अर्थात् उपभोग (जो एक बखत भोगवनेमें आवे आहार प्रमुख), परिभोग (एक वस्तू वारंवार भोगवनेमें आवे वस्त्र–भूषण प्रमुख) और भी धन भूमी इत्यादिककी मर्यादा नहीं करना, इच्छाका निरुंधन नही करना सोही इस भवमें महा तृष्णारुप सागरमें गोते

खीलाते हैं और आगे भी दुर्गतमें अनंतकाल विटंबना देनेवाला होता है. ऐसा जाण रे जीव! अब तो आश्रव छोड, व्रत जरुर कर. ऐसी भावना समुद्रपालजीने भाइ. चंपानगरीके पालित श्रावकके पुत्र समुद्रपालजी एकदा स्त्री सहित हवेलीके गोखमें बैठे हुए बाजारकी रचना देखते एक बंधनसे बंधा हुवा चोर वधस्थान ले जाता हुवा द्रष्टि आया. बिचारने लगा कि देखो अशुभ कर्मोदय! यह मेरे जैसा ही मनुष्य है, परंतू कर्मके वसमें पडा हुवा परवस हो गया; ऐसे ही जो मेरे कर्मउदय आवेगे तो कोन छुडावेगा? इसलिये आश्रव उदय हुये पहले ही इन्का क्षय कर सुखी होवूं. यों बिचार दिक्षा ले दुक्कर करणीकर केवलज्ञान पाके मोक्ष पधारे.

(८) "संवर भावना"—ऐसा विचारे कि रे जीव! संसारमें रुलानेवाले आश्रवको रोकनेका उपाय एक संवर ही है. इसलिये अब तो कायिक—वाचिक—मानसिक इच्छाकों रुंधके, एकांत समतारुप धर्ममें लीन हो. ऐसी भावना हरकेसी ऋषिने भाइ. पूर्वभवमें जाति मद कर चंडालके कुलमें पैदा हुये, कुरुपा वदन देख हरकेशी नाम दीया. वो अपमानसे

घबराये, मरनेको झंपापात ले पडते थे, इत्नेमें एक साधूजीने इस्को देख उपदेश किया कि, मनुष्य जन्म चिंतामणी क्यों गमाता है? वैराग पाके दिक्षा ले गुरुको नमस्कार कर मास २ तप ग्रहण कर फिरते २ बनारसीके बाहिर यक्षके देवलमें ध्यान धर खडे हुये. राजाकी पुत्री कूरुपे साधूको देख थूकी, की तुर्त उस्का मुख टेडा हो गया. राजाने ऋषिके सापसे डर कर ध्यानस्त मुनीको वो कन्या परणादी. मुनी ध्यान पाड बोले; हे नृप ! हम ब्रह्मचारी साधू स्त्रीको मन करके भी नहीं चाहते हैं. राजा घबराया, अब इस कन्याका क्या करुं? पुरोहितजी बोले, ऋषि-पत्नी ब्राह्मणकों देदो ! भोले राजाने पुरोहितको वो कन्या दी. उस्के पाणी ग्रहणके लिये यज्ञ प्रारंभ किया. योगानयोग मुनी वांही भिक्षाके लिये पधार गये. बाहिर बालक कूरुपे साधूको देख लकडी पत्थरसें मार्ने लगे; तब वो राजाकी कन्या बोली कि हे मूर्खों ! क्या मृत्यू आइ है? इत्नेमें तो वो छोकरे अचेत होके पड गये. सर्व ब्राह्मण घबराके दोडके आये, अपराध खमाने लगे. मुनीने कहा कि, हम तो मनसे किसीका बुरा नहीं चाहाते है. ये काम तिंदुक

यक्षसे हुवा होय तो ज्ञानी जाणे. सर्वने बहुत भावसे पारणा कराया. फिर महाराजने उपदेश किया कि हे विप्रों! यह आत्मा अनादि कालसे हिंसा धर्ममें फसा है. जन्म गमाया; अब अधर्म यज्ञका त्यागन करो. जीव रुप कुंडमें अशुभ कर्म रुप इन्धनको तपरुप अग्नीसे जला पवित्र होवो. यह संवर यज्ञ ही आत्माको तरण सरण है. ब्राह्मणोंको ये उपदेश अच्छा लगा. मुनी विहार कर करणी कर कर्म खपा मोक्ष पधारे.

(९) "निर्जरा भावना"—ऐसा विचारे कि रे जीव! संवरसे तो आते पापको रोक (बंदकर) दीया, परंतू पहले कीये हुवे पापको खपानेवाले तो एक निर्जरा (तपस्या) ही है. बाह्य अभ्यंतर १२ प्रकार तप इस लोक परलोकके सुखकी या कीर्तिकी वांछा रहित एकांत मोक्षार्थी होके करो, तो तुमारा कल्याण होवे. ऐसी भावना अर्जुन मालीने भाइ. राजग्रही नगरीके बाहिरके एक बगीचेका अर्जुनमालीकी बंधूमती नामे स्त्री महारुपवती थी. उस्को छे लंपटी देख मोहित हुये, और उस बगीचेके मोगरपाणी यक्षको नमस्कार करते हुवे मालीको मजबूत बांध उस स्त्रीसे व्यभिचार किया. यह अन्याय देख यक्ष

उस मालीके सरीरमें भराके छे पुरुष और सातमी स्त्रीको मार डाले. और नित्य छे पुरुष सातमी स्त्री-कों मारना सुरु रख्खा. यों पांच मास तेरे दिनमें इग्यारेसे इकतालीस मनुष्य मारे. सर्व ग्रामके लोग घबराये. रस्ता बंध पड गया. तब पुन्योदयसे श्री महावीरस्वामी चउदे हजार साधूके परिवारसे पधारे बगीचेमें उतरे. उन्के दर्शनके लिये द्रढ धर्मी सुदर्शन सेठ मरणसे भी निडर हो चले. गाम बाहिर अर्जुन माली मुद्गल उछालता आया, परंतू सुदर्शन सेठके धर्म तेजसे यक्ष भग गया, अर्जुन मूर्छा खाके पड गया. उसे उठा महावीरस्वामी पास लाये, उपदेश सुण मालीने दिक्षा ली, बेले २ पारणा सुरु कीया. पारणेके दिन ग्राममें भिक्षाके लिये जावे तब जिन्के कुटंबको मारे थे वो लोग मुनीको घरमें ले जा ताडन तर्जन करे. आप सम भाव सहन करे. और कहे कि, मेंने तो तुमारे कुटुंबको प्राण रहित किया और तुम मुजे जीता छोडते हो यह वडा उपकार है. ऐसी क्षमा और तपस्या कर छे महीनेमें कर्मोंके वृंद तोडके मोक्ष पधारे.

(१०) "लोक संठाण भावना"-ऐसा बिचारे कि इस लोकका क्या संठाण (आकार) है? इस्का संठाण तीन दीवेके जैसा है (इस्का संपूर्ण स्वरुप

दूसरे प्रकरणसें जाणना) यह भावना शिवराज ऋषिने भाइ. बनारसी नगरीके बाहिर बहुत तापसोंमें एक जबर तप करनेवाला शिवराज तापसको विभंग अज्ञान उत्पन्न हुआ, जिस्में सात द्वीप और सात समुद्र जित्नी पृथ्वी देख लोकोंसे कहने लगा, मुजे ब्रह्मज्ञान पेदा हुवा है, जिस्से संपूर्ण पृथ्वी सात द्वीप समुद्र रुप देखता हूं. बस इत्नी ही पृथ्वी है आगे अन्धकार है. फिर भिक्षा लेने गाममें आया तब सब लोक कहने लगे कि श्री महावीरस्वामी तो असंख्याते द्वीप समुद्र फुरमाते हैं और शिवराज ऋषी सात द्वीप सात समुद्र कहते हैं. यह केसे मिले ? यों सुण शिवराज ऋषीने विचारा कि में महावीरस्वामीसे चर्चा करुं, मेरी प्रत्यक्ष वात झूंटी कैसी होवे ? जो ज्यादा होवे तो वो मुजे बतावे. यों विचारता भगवंतके पास आया. प्रभूके दर्शनसे विभंग अज्ञानका अवधज्ञान हुवा और आगे देखने लगा. यों असंख्य द्विप समुद्र दिखे. तूर्त प्रभूको नमस्कार कर शिष्य हुवा. कर्म खपा मोक्ष पधारे.*

* विष्णु लोक इस कारणसे ही सात द्विप सात समुद्र मानते होवे तो किसे मालुम ?

(११) "बोध बीज भावना"—ऐसा बिचारें कि, रे जीव! तेरा निस्तारा किस करणीसे होवेगा? इस जीवकों मोक्ष देनेका मुख्य हेतू सम्यक्त्व है. सम्यक्त्व बिन उत्कृष्ट करणी कर नवग्रीवेग तक जा आया परंतू कुछ कल्याण न हुवा. अब सम्यक्त्व फरसनेका अवसर आया है. सो प्रकृतियोंको मोड सम्यक्त्व रत्न प्राप्त कर. सम्यक्त्व है सो जैसे डोरे वाली सूइ कचरेमें खोवती नहीं है तैसे समकिती जीव बहुत संसारमें परिभ्रमण नहीं करते हैं. ज्यादेमें ज्यादे अर्ध पुद्गल परावर्तनके अंदर मोक्ष अवश्य प्राप्त होवे. यह भावना ऋषभ देवजीके ९८ पुत्रोंने भाइ. ऋषभ देवजीके बडे पुत्र भरतेश्वरजी छे खंड साधके पीछे आये परंतू चक्र रत्न अवधशालामें प्रवेश नही करे तब पुरोहितने कहा कि, आपके ९९ भाइयोंने आज्ञा नहीं मानी. भरतजीने झट दूत भेजा कि तुम सुखे २ राज करों, फक्त मेरी आज्ञा मानलो. ९९ मेंसे ९८ भाइ बोले कि, हमारे पिता हमारेको राज दे गये हैं, हम उन्को पूछें फिर वो फुरमायगे सो करेंगे. यों कह कर श्री ऋषभ देवजी की पास आके कहने लगे कि भरत बहुत रिद्धीके अभिमानमें आके हमको

सताता है, अब हम क्या करे? श्री ऋषभ देव स्वामीने फुरमाया कि हे राजपुत्रों! "संबुझ किं न बुझह संबोही खलु पेच दुलहा" प्रतिबोध पावो. ऐसा राज तो इस प्राणीकों अनंत वक्त मिल गया परंतू बोध बीज सम्यक्त्वकी प्राप्ती होनी बहुत दुर्लभ है. इस लिये सम्यक्त्व युक्त चारित्र अंगीकार कर मोक्ष स्थानका राज संपादन करों, की जांहा भरतका जोर ही नही चले. यों सुण प्रतिबोध पाके ९८ भाइ दिक्षा लेके करणी कर कर्म खपा मोक्ष पाये.

(१२) "धर्म भावना"—ऐसा विचारे कि रे जीव! यह नरभव है सो निर्वाण (मोक्ष) का कारण है. और मोक्ष धर्म करणीसे प्राप्त होती है. यह जन्म धर्म करनेकों ही पाया है. कहा है कि "धर्मं विशेषो खलु मनुष्याणां, धर्मेण हीना पशुभिः समाना" मनुष्य जन्ममें विशेष धर्म ही है; धर्म बिन नर पसू समान है. इस लिये धर्म अवस्य करना. जिनेश्वरने धर्मका मूल दया फुरमाइ है. "दया धर्मका मूल है." धर्मका लक्षण ही "अनुकंपा" है. यह भावना धर्म-रुची अणगारने भाइ. चंपानगरीमें धर्म ऋषीजी महाराज मास खमणके पारणेके लिये नगश्री ब्रा-

ह्मणीके घर पधारे. उसदिन उसने कडवे तूंबेका शाख भूलसे बनाया था उस्का मुनीको दान दिया. मुनीने गुरुजीको लाके बताया. गुरुजीने हुकम दिया कि तपस्यासे तुमारा कोठा निर्बल हो रहा है, यह विषमय चीज खावोंगे तो अकाल मृत्यू प्राप्त होगा ! इस लिये निर्वद्य ठीकाणे पठो आवो. मुनी इंट पचाणेकी जगाको जाके बिंदू उस्का डाला, जिस्पे बहु कीडीयों आइ और मरगइ. मुनीने बिचारा कि, गुरुजीने फुरमाया है कि निरवद्य (जांहा कोइ जीव न मरे ऐसे) ठिकाने पठो आवो. तो एक बिंदूसे इत्ना अनर्थ निपजा तो सर्वसे क्या जुलम होगा ? निर्बद्य ठिकाना तो मेरा पेट है और यह सरीर तो विनाशीक है. इत्ना उपगार होय तो बडा नफाका कारण है. यों बीचार तुर्त सर्व खा गये. थोडी देरमें दाह प्रगटी, समभाव आयुष्य पूर्ण कर सर्वार्थ सिद्ध विमानमें पधारे; भवांतरे मोक्ष पधारे.

इन बारे भावनामेंसे जिनोंने एकेक भावना भाइ उन्की आत्माका कल्याण हुवा तो जो बारे ही भावेगा सो अवश्य मोक्ष पावेगा. ऐसा जाण सदा उपाध्याय भगवंत बारे भावना भाते हैं.

" पडिमा ":—साधू की बारे प्रतिमा वहे. इस्का अधिकार कायक्लेश तपमें.

" इदिय निरोहो ":—पांच इंद्री वसमें करे. इस्का अधिकार तीसरा प्रकरणमें.

"पडीलेहणा":—पच्चीस पडीलेहणाका अधिकार चौथी सुमतीमें है.

" गुत्तीउ ":—तीन गुप्तीका अधिकार चारित्राचारमें हैं.

" अभिग्रह ":—अभिग्रह चार प्रकारके:—द्रव्यसे, क्षेत्रसे, कालसे, भावसे. इसें श्री महावीरस्वामीका द्रष्टांत. छदमस्तपणे विचरते हुवे श्री वीर प्रभूने एकदा १२ बोलका ऐसा अभिग्रह धारन किया के, १ 'द्रव्यसे' उडदके बाकले, सूपडके खुणेमें होए; २ 'क्षेत्रसे' दान देनेवाली घरके दरबज्जेमें बैठी होए; दरबज्जेके भीतर एक पग होए और एक पग बाहिर होए; ३ 'कालसे' दिनके तीसरे पहरमें; ४ 'भावसे' दान देनेवाली राजाकी कन्या, पगमें बेडी सहीत, हाथमें कडी सहीत, मस्तक मूडा हुवा, काछ सहीत, चक्षुमें अश्रु सहीत और तेलेकी तपस्यावाली होए ऐसी मुजे आहार देवे तो लेना.

चंपा नगरीके दधीवाहन राजाका राज परचक्रीने लीया तब धारणी राणी सील रक्षाके लिये जीभ काटके एक पुत्री चंदनबालाको छोड मर गइ. एक सीपाइने उस चंदनबालाकों कसूंबी नगरीके सेठके वहां बेची. सेठकी गेरहाजरीमें सेठकी स्त्री मूलाने चंदनबालाका सिर मुंडाया, काछ पहराया, हाथ पगमें बेडी डाली, और भूवारेमें रख कर अपने पिताके घरकु चल गइ. सेठजीने तीन दिनमें उस भूवारेमेंसे निकाली. उस बखत दूसरा जोग न होनेसे उडदके बाकले सूपडेमें दीये. इत्नेमें श्री महावीरस्वामी वांहा पधारे. प्रभूको देख हर्ष अश्रू टपकाती सती चंदनबालाने बाकले पांच मास पचीस दिनके पारणेमें दीये. परत संसार किया. बारे क्रोड सोनैये (मोहोरों) की वृष्टि हुइ. बेडीयों टूट गइ, शिरपे बाल आ गये, आखीर प्रभू केवल ज्ञान पाके मोक्ष पधारे और सती भी संयम ले मोक्ष गइ. ऐसे ही चार प्रकारे अभिग्रह उपाध्यायजी धारण करे. यः ४ पिंड विशुद्धि ५ समिति १२ भावना १२ पडिमा. ५ इंद्री निग्रह. २५ पडिलेहणा. ३ गुप्ती ४ अभिग्रह ये ७० गुण करण सित्तरीके हुये.

" चरण सित्तरीके ७० गुण "

गाथा ॥ वय समण धम्म संजम वेयावच्चं च बंभ गुत्तीओ।
नाणाइ नीयं तव, कोहो निग्गहाइं चरणमेयं ॥

'वय':—महाव्रत पांचका अधिकार तीसरे प्रकरणकी आदिमें है.

" समण धम्म ":—दश प्रकारके समण (साधु) का धर्म.

गाथा ॥ खंती मुत्तीय अजव मद्दव लाघव सच्चं ।
संजम तवे चेइय बंभचेर वासीयं ॥ *

१ " खंती ":—क्रोधरुप महा शत्रुको मारना उस्का नाम क्षमा है. कोइ अपनेको कठोर बचन कहे तो ज्ञानी ऐसा विचारे कि मेंने इस्का अपराध किया है या नहीं ? जो किया होवे तो ऐसा विचारे कि बराबर मेंने इस्का अपराध किया है तब ये मुजे गालीप्रदान कर अपराधका बदला लेता हैं. बहुत अच्छा ! गये जन्ममें व्याज सहित चुकाना पडता सो इसने ह्यांइ ले लीया; ऐसा विचार कर उसको खमाके शांत करे

* धृतिः क्षमा दमोस्तेयं, शौचमिन्द्रीनिग्रहः ।
धीर्य विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्म लक्षणाम् ॥
मनुस्मृति, अध्याय ६, श्लोक २३.

और अपराध नहीं कीया होवे तो बिचारे कि, यह इस्के अपराधीको गाली देता है; मैंने अपराध किया ही नहीं तो मुझे गाली कैसे लगे? आप ही थकके रह जायगा. तथा ऐसा बिचारे कि, यह जो मुझे चोर, दुराचारि, ठग, कपटी, चंडालादि कहता है सो मेरे पूर्वभवका स्मरण कराता है. मैं अनंत वक्त ऐसे भव कर आया, तो भी अकल ठिकाने नहीं आइ, अब तो लाना चाहिये. कित्नीक गालीयों आशीर्वाद जैसी होती है; जैसे 'तेरा खोज जावे' ऐसा कहे तब चिंतवे कि मैं मोक्ष जावूंगा तब मेरा खोज जावेगा! 'कर्म हीन'—हलके कर्म तो भगवानके होते हैं! अ-कर्मी तो सिद्ध भगवान हैं. और 'साला' कहे तो बिचारे कि उत्तम जन तो सर्व स्रीयोंसे भगिनी भाव ही रखते हैं. तथा ऐसा बिचारे कि जैसी जिस्के पास वस्तू होवेगा वैसी देवेगा; हलवाइके पास मीठाइ और चमारके पास जूते मिलते हैं! जो तुझे गाली खराब मालम पडती है तो तूं ये मलिन चीजको तेरे पवित्र हृदयमें ग्रहण कर क्यों मलीन करता है? कोइ सुज्ञ सुवर्ण थालमें भिष्टा नहीं भरेगा. जो ग्रहण न करे उसे क्रोध ही पेदा न होए. और भी ऐसा बिचारे कि

यह गाली देनेवाला तो बडा उपगारी हैं क्योंकि अपना पुन्य खजाना खुटाके मेरे कर्मोंकी निर्जरा करता है. ऐसा वक्त वारंवार आना मुश्कील है. इसलिये तू समभावसे सहन कर. जो इस्के बरोबरी करेगा तो फिर ज्ञानी अज्ञानीमें क्या फरक पडा? दोनु सरीखे ही हुये!

और भी जो वो क्रोधित होके बचन कहता है उसके एकेक शब्दका अपने हृदयमें विचार करे कि ये कहता हे सो दुर्गुण मेरी आत्मामें है या नहीं? जो वो दुर्गुण अपनी आत्मामें निकल जाय तो बडा खुशी होय कि हकीम तो नाडी देखके अंतसका रोग बताते है और इसने तो नाडी बिन देखे ही मेरा दुर्गुण—रोग बताया! इसलिये यह बडा उपगारी है. अब इस दुर्गुणको इलाज करके निकालके पवित्र होवे. और जो वो कहे वैसे दुर्गुण अपनी आत्मामें न होवे तो बिचारे कि क्या इस्के कहनेसेमें खोटा हो जावूंगा? हीरेको कोइ कांच कहे तो क्या वो कांच होता है? कबी नही. यह बचन आश्री कहा. अब कोइ प्रहार करे (मारे) तो ज्ञानी ऐसा विचारे कि इस्के मेरे पूर्व जन्मका कोइ वेर बदला देना होगा.

सो यह लेनेकु आया है. बदला दिया बिन तो कबी छुटका नहीं. जो मैं अबी नही देउंगा तो दुसरे—तीसरे जन्ममें भी देना पडेगा. इस लिये अबी समभावसे देउ तो थोडेमें छुटका हो जायगा. जैसे गरीब करज-दार सो रुपे देनेकी शक्ति न होय और नरमाइसे ७५ देके फारकती मांगे तो भी साहुकार दे देता है.

तथा यह जो मारता है तो पुद्गलपिंड—सरीरको मारता है, सरीर तो एक वक्त मरेगा ही. और मेरी आत्मा तो अजरामर है, इस्को मारनेको समर्थ त्रिलो-कमें कोइ नहीं है. तथा यह घातक तेरी परीक्षा लेनेकु आया है, कि इसने खंती (क्षमा) धर्म अं-गिकार किया सो बराबर किया है की नहीं? इस-लिये तूं हटे मत, पूरी परीक्षा दे. नर्कमें यमोंकी मार सहन करी, तिर्यंचमें ताडन तर्जन सहन करी, वैसी तो यह कुछ नही है. तो फिर क्यों भगता है? जो इसे समभाव सहेगा तो पीछा नर्कादिकका दुःख नही सहना पडेगा. तथा ऐसा पुरुष नही होता तो क्या मालम पडती की तू क्षमावंत है? यह तो तेरी प्र-ख्याती करता है. देख तेरे पिता तीर्थंकरभगवान श्री महावीरस्वामी अनंत शक्तीके धरणहार द्रष्टी मा-

त्रसे दूसरेको भस्म कर सके ऐसे थे; उन्को गवालीयोंने मारा तो भी आप जरा क्रोध नही लाये और गो-सालेनें तेजो लेश्या डाली तो उसे शीतल लेस्यासे सीतल किया! ये पिताका अनुकरण तेरेकों अवस्य ही करना चाहिये.

ऐसा बिचार कर क्षमावान पृथ्वी, चंदन, और पुष्प जैसे सदा रहे. दुःख देनेवालेंको भी सुखी करे. यह क्षमा ही धर्मको रहनेके स्थान है और इस जन्ममें आत्माकी रक्षा कर आगले जन्ममें अवश्य मोक्ष देनेवाली है.

२ 'मुत्ती' (निर्लोभता):—जो कदी तृष्णा-की वृद्धि होय तो ऐसा विचार करे कि, जित्नी २ वस्तूका तेरे संजोग मिलना है उत्नाही मिलेगा. जास्ती इच्छा करेगा तो कर्मबंध होगा, और हाथमें तो कुछ नहीं आयगा. और जास्ती संपत्ति जास्ती दुःखकी देनेवाली होती है. कहा है "सपंत जित्नी विपत्" चक्रवर्ती जित्नी या देवलोककी रिद्धी मिली तो भी पेट नहीं भराया तो अब मिट्टीके झूपडेंसे क्या तृष्णा मिटनेवाली है? साधूको जास्ती उपग-रणोंकी वृद्धी होनेसे विहारादिकमें महा कष्ट उठाना

पडता है. प्रति लेखनादिक क्रियामें बहुत काल जानेसे ज्ञान ध्यानकी खामी होती है. और गृहस्थीके घर रखनेसे प्रतिबंध होता है. तथा अनेक आरंभ निपजते हैं. ऐसा जाण जित्ने कमी उपगरण होवे उत्ना जास्ती सुखका कारण है. जो साधू लालची हो गये हैं उन्की कोडीकी कीमत हो गइ है. कोडी २ के लिये मारे फिरते है. और जो संतोषी है, संग्रह नही करते हैं, उस्को किसी बातकी कमी नहीं है. उन्के हुकमसे अनेक धर्मकार्य निपजते है. " संतोषं नंदनं वनं " संतोषी प्राणी नंदन वनमें रमण करनेवालेसे भी जास्ती सुखी है. ' संतोषं परमं सुखं " ऐसा बिचारे कि, जो वस्तू अपनको प्राप्त हुइ है उस्पे विशेष ममत्व न रक्खे, जो सरीखे साधर्मी साधूका जोग मिले तो उन्को आमंत्रणा करे, हे कृपासिंधो! मेरेपे कृपा कर यह वस्त्र पात्र आहार इस्मेंसे आपकी इच्छा होय सो ग्रहण कर मुजे पावन करो! जो वो ग्रहण करे तो समजे कि आज मैं कृतार्थ हुवा. इत्नी वस्तू मेरी लेखे लगी. आज मेरे धन्यभाग्य! ऐसा निर्ममत्वपणा धारन करनेसे इस भवमें सर्व इच्छित वस्तू प्राप्त कर सर्वमान्य हो के परभवमें मोक्ष गामी होगा.

३ " अज्जव "—सरल—निष्कपटीपणा धारण करे. कहा है कि ' अज्जू धम्मं गइतच्चं ' जो सरल होगा सो धर्म धारण कर सकेगा. ऐसा जाण जैसा उपर वैसा ही अंतससे रहे. यथाशक्ति शुद्ध क्रिया करे. जो शक्ति न होय तो पूछे उसे साफ कह दे कि मेरी आत्माकी खामी, में बराबर संयम व्रत नहीं पाल सकता हूं. जिसदिन वीतरागकी आज्ञाका यथा तथ्य आराधन करुंगा वोही दिन परम कल्याणकारी होगा. और यथा शक्ति शुद्ध क्रियाकी वृद्धि करे. कुछ लिंग (भेष) धारण करनेसे आत्मसिद्धि नहीं होती है. लिंग तो फक्त लोकोंको प्रतीत उपजानेके लिये है. भेषसे फक्त पहचान होती है, कि यह गृहस्थ है और यह साधू है. जो साधूका लिंग धारण कर गृहस्थके कर्म करते हैं वो अनंत संसारकी वृद्धि करते है. यों जाण पहलेसे ही साधूका लिंग विचारके ही ग्रहण करना और ग्रहण करलीया तो फिर किंचित् दोष नही लाना; शुद्ध प्रवृत्तिं रख जैन शासन खूब दीपाना. जो बाह्य अभ्यंतर वृत्ति शुद्ध रखते हैं उन्को थोडी ही क्रियासे शीघ्र मोक्ष मिलती है. सरल स्वभावी सदा निडर रहे, जगतपूज्य हो मोक्ष पाता है.

४ 'मद्दव '—नम्रता रक्खे. विनय जिन शासनका मूल, मोक्षका दाता है. विनीत सबको प्यारा लगता हैं. विनीत सर्वोत्तम गुण संपादन कर सकता है. जो कदी अभिमान आवे तो नीम्न लिखित बिचारोंसे अभिमानसे मुक्त हो जावेः—(१) जातीका अभिमान आवे तो विचारे कि रे जीव ! तू अनंत बक्त चंडाल बुकसादि नीच कुलमें जन्म धारण कर आया अनेक नीच कर्म कर आया, सो भूलके क्या मान करते है ? (२) कूलका क्या अभिमान क्या है ? कइ बक्त अनाचार सेवन कर तू जगत निंद्य हो आया है. (३) बलका अभिमान आवे तो बिचारे कि, तिर्थंकर चक्रवर्तीयोंके बलके आगे तेरा बल क्या गिनतीमें है ? (४) लाभका अभिमान आवे तो बिचारे कि, लब्धीधारी मुनीके आगे तेरा लाभ तृण मात्र है; तूं क्या ला सकता है ? (५) रुपका अभिमान आनेसे विचार करे कि, इस उदारिक सरीरमें अनेक रोग भरे हैं तो रुपका विनास होते क्या डेर लगे ? तथा तीर्थंकर कि जो एक हजार आठ उत्तम लक्षणके धणी है उन्की पास इंद्रका तेज भी सूर्य आगे दीपक जैसा हो जाता है तो तेरा रुप कोनसी गिनतीमें है ? (६)

तपका अभिमान होनेसे ऐसा विचार करे कि, देख श्री वीरभगवानको, कि जिनोने कुल साढेबारे बर्षमें १ छे मासी, पांच दिन कमी छे महीनेमें अभीग्रह फला, ९ चौमासी, २ तीनमासी, ६ दोमासी, २॥ मासकी दो, १५ दिनके ७२ बखत, भद्र महाभद्र शिवभद्र प्रतिमा १६—१५ दिनकी, और १२ भी भिक्षु प्रतिमा तेलाकरके १२ बखत, २२९ बेले सब मिलके साढे बार बर्ष और पन्नर दिनमें शीर्फ इग्यारे मास और उगणीस दिन छुटक २ आहार कीया. अब कहे तेरेसे कित्नी तपस्या होती हें सो. (७) श्रुतिका अभिमान होनेसे बिचार करे कि, बुद्धिका क्या मद करता है? देख गणधर महाराज उपन्नेवा (उत्पन होनेवाले पदार्थ) विगने वा (नाश होनेवाले पदार्थ) धुवे वा (शाश्वते पदार्थ) इन तीन पदमें चउदे पूर्वका ज्ञान कंठाग्र करलेते थे. तेरेसे ये कुच्छ हो सक्ता है? (८) ऐश्वर्यका मद होनेसे बिचार करे कि, देख तीर्थंकरोंका परिवार, अब तेरा कित्नाक परिवार है? सो तू अभिमान करता है. ऐसा बिचार कर आठ ही मदसे अपनी आत्मा वसमें लावे. किंचित् मात्र अभिमान नहीं करे सो सर्वगुणसंपन्न

हो सर्वका प्रेम प्राप्त कर थोडे कालमें मोक्ष प्राप्त कर सकेंगे.

(५) 'लाघव'—हलकापणा धारण करना सो दो प्रकारका, द्रव्यसे और भावसे. द्रव्यसे तो उपगरण कमी करे, और भावसे प्रकृतियोंको मारे, कषाय घटावे. जड चैतन्यकों भिन्न २ समज जड पदार्थोंसे प्रीती घटावे. देखो जडके प्रसंगसे चैतन्यने अनंत विटंबना भुक्तनी पडी, तो भी हाल तक प्रीति कमी नहीं हुइ. अब कमी करनेका अवसर आया, ऐसा विचार कर किसी भी पदार्थ पे मोह ममत्व न रखे. ज्यों ज्यों जीव हलका होता जायगा त्यों त्यों ऊंचा आता जायगा. शास्त्रमें कहा है, जैसे तुंबडीको सण और मट्टीके आठ लेप लगाके पाणीमें डालनेसे वो डूब जाती है और ज्यों ज्यों वो लेप गलते जाय त्यों त्यों उपर आती जाय. ऐसे होते २ आखीर तूंबडी तीरको प्राप्त होती है. ऐसे ही यह जीव मोह ममत्वकों कमी करेगा त्यों मोक्षके नजीक जायगा. और भी 'लाघव धर्म' वाला ऐसा विचारे कि, दुनीयामें बडा दुःख मेरेपणाका है. प्रत्यक्ष द्रष्टांतसे देखीये! जो समुद्रमें स्नान करता हैं, उसके

सिरपे क्रोडो मण पाणी फिरनेसे उसे किंचित् ही बजन नही लगता हैं; और उस्मेंसे एक घडा भरके लेता है उस्को भार लगता है ! इस्का मतलब येही है कि समुद्रके पाणी पे मेरापणा (मालकी) नही थी सो वो भारभूत नही हुवा, और घडेके पाणी पे मेरापणा होनेसे भारभूत हो गया. बस मेरापणा है सो ही दुःखदाता है. रे प्राणी ! तूं जरा बिचार के तेरा इस जगतमें कोन है ? अपना उस्कों कहा जाता है जो अपने हुकममें चले. तो तेरा सरीर ही तेरे हुकममें नही है. देख, तू रोग वृद्धपणा और मृत्यूको नहीं चाहाता हैं तो भी तेरा शरीर उन्की सोबत करता है. और भी देख; इस तनकों तू कह-ता है मेरा सरीर, तेरे पिता माता कहते हैं मेरा पुत्र; भाइ भगिनी कहते हैं-मेरा भाइ, इत्यादि सब स्वजन मेरा २ करते हैं. सरीर एक और मालक बहुत ! अब कहे यह किस्का है ? कहा है "ना घर तेरा, ना घर मेरा, चीडीया रेण वसेरा है" यह शरीर ही तेरा नही है तो धन कुटुंब तो कहांसे तेरा होवे ? ऐसा जान सदा अममत्वपणे रहे, लाघवपणा ग्रहण करे.

(६) सच्चे (सत्य)–सच्चापणा सबकों प्रिय ल-

गता है. किसीको झूठा कहो तो उसे बूरा लगेगा. फिर ऐसी बुरी चीजको दुनीया क्यों स्विकारती है? धर्मका मूल सत्य ही है. सत्य के लिये बंदोबस्त भी बहुत है; देखीये—

वचन रत्न मुख कोटडी, होट कपाट जडाय;
पेरायत वत्तीस है, रखे परवश पड जाय!

और भी देखीये, 'झूटा' तो ऐंठवडा (खाके बचे हुवे) को कहते है! उसे कोइ उत्तम पुरुष स्विकार नहीं करते हैं. सत्य है सो मनुष्य जन्मका भूषण है, ऐसा जाण निरर्थक बातोंमें—विकथामें अनुरक्त मत रहो. किसीकों दुःख लगे, नुकशान होवे या पाप निपजे ऐसा सत्व वचन भी झूट जैसा कहा है. सत्य, तथ्य, पथ्य, प्रिय, अवसर उचित, निर्दोष ऐसी भाषा उच्चारनी चाहिये.† सत्यवंत प्राणी इस लोकमें नि-

† सत्यं ब्रृयात प्रियं ब्रूयान्न ब्रूयात सत्यमप्रियम्।
प्रियं च नानृतं ब्रुयादेषः धर्म सनातनम्॥ १३४॥
भद्रं भद्र मिति ब्रूयादभद्रमित्यव्रवावदेत्।
शुष्क वैर विवादं च न कुर्यात्केनचित्सहः॥१३५॥

सदा सत्य प्रियंकर बोलो, सत्य होके अप्रिय होय तो मत बोलो, दुसरेको प्रसन्न करनेको भी झूट मत

डर साहासिक रह उज्वल यश संपादन कर आगेकों मोक्ष प्राप्त करता है.

(७) 'संयम'—आत्माको यममें—काबुमें लेना उस्को संयम कहता है. संयम प्राप्त होना मुशकल है. शास्त्रमें ३९ तराहके मनुष्यको दिक्षा देनेकी मना है. १—२ आठ बर्षसे कमी और सित्तर वर्षके उपरकी वय (उम्मर) वालेको. ३ स्त्रीको देख कामातुर होवे उसे. ४ पुरुष वेदका उदय जास्ती होवे उसे. ५ तीन प्रकारके जडकों (१) देह जड (बहुत जाडा सरीर) [२] बचन जड (पूरा बोल न सके) [३] स्वभाव जड (हट्टग्रही—कदाग्रही) इन तीनोंको. ६ कुष्ट भगंदर अतीसार इत्यादि बडे रोगवालेको. ७ राजाके अपराधीको. ८ देव तथा शीतादिकके जोगसे बावला होय उसे. ९ चोरकों. १० अंधेको. ११ गोला (दासीपुत्र)को. १२ महा कषायी [बहुत क्रोधी]को. १३ मूर्ख—भोलेको. १४ हिणांगी [नकटा—काणा—लंगडाको] तथा हीण जाती [भं-

बोलो; सदा हितकर बोलो, किसीके साथ विवाद भी मत करो, वैर विरोध मत करो, हे भद्र! येही वाक्यका भद्रपणा है.—मनुस्मृति, अध्याय ४.

गी–भील]को. १५ बहुत करजे वालेको. १६ §मतलबीकों. १७ आगे पीछे किसी प्रकारका डर होवे उसे. १८ स्वजनकी आज्ञा विना. यह १८ तरहके पुरुषको और २० तरेहकी स्त्रीयोंको दिक्षा नहीं दी जावे. १८ तो पुरुषके जैसी स्त्री होय उसे और १९ गर्भवतीको. २० बालकको दुध पिलाती स्त्री होय उसे. यह २० स्त्रीयोंको. और नपुंसक.* इन ३९ को वर्जके और सब अभिलाषी जनोंको दिक्षा दी जावे.

संयम महासुखका स्थान है. संयम बिन मोक्ष मिलती नहीं. सर्व प्रकारकी चिंता–उपाधीसे अलग हो जिन्होने संयम ग्रहण कीया है, उस्को लाभालाभ, सुकाल–दुष्काल–जन्म–मृत्यू इत्यादि किसी प्रकारसे हर्ष सोक नहीं हैं. यह संयमसे तुच्छ प्राणी भी इंद्र और नरेन्द्रके भी पूज्य हो जाते है. संयम महा

§मतलब पुरा होनेसे पाछा संसारमें चला जाय.

* १ राजाने अंतेउरमें रखनेकु अंग छेदन कीया होए उसे. २ नुकशानका धक्का लगनेसे अंग सिथिल पडा होय उसे. ३ मंत्रसे. ४ औषधसे. ५ ऋषीके सरापसे. ६ देवयोगसे. यह ६ कारणसे नपुंसक होवे उन्को दिक्षा देनेमें कुछ हरकत नहीं है.

लाभका कारण है. कहा है;

मासे २ उज्जुबाले, कुसंग्गेणं तु भुज्जइ।
नसे सुयखाय धम्मस, फला आघइ सोलेसिं॥

मिथ्यात्वी–हिंसाधर्मी क्रोड पूर्व (७० लाख ५६ वर्षका १ पूर्व) लग मास २ तपके पारणे करे, पारणे के दिन कुशाग्र (त्रणेपे) आवे जित्ना अन्न खावे और अंजलीमें आवे जित्ना पाणी पीवे उन्का सर्व जन्मका तप एक तर्फ, और सम्यक्त्वी की एक नोकारसी (दो घडीके पच्चखाण)के तुल नही. देश विरतीका सब जन्म संयमी की एक घडी तुल्य नही, ऐसा महा लाभका ठिकाणा संयम है. ऐसे चिंतामणी रत्न तुल्य संयमको कंकर जैसा फेंक देते है वो बडे अधम प्राणी हैं. और जो इस्की त्रीकरणयोग शुद्ध आराधना पालना फरसना करते हैं वो इस भवमें परम पूज्य परम सुखी हो मोक्ष लक्ष्मी प्राप्त करते है.

(८) तवे (तप):–जैसे मट्टी युक्त सोनेकों ताप देनेसे सोनेका निज रुप प्रगट होता है, तैसे ही कर्म युक्त प्राणी तपस्या करनेसे निजरुप [सिद्ध स्वरुप] को प्राप्त होता है. आत्म दमन करने को तपही बडा उपाय है. रे प्राणी! तेने इस जगतमें जित्ने उत्तम

पदार्थ हैं उन सबका अनंत वक्त भक्षण कीया. अनंत मेरु जित्नी मिश्री और अनंत स्वयंभू रमण समुद्र जित्ना दूध पी आया, तो भी तेरा पेट नहीं भराया, अब इन तुच्छ वस्तूओंसे क्या इच्छा तृप्त होनेवाली है ? ऐसा जाण अनेक प्रकार की तपस्या करे.

कित्नेक कहते हैं कि दयाधर्मी होके भूखादि कष्ट सहन कर क्यों आत्माको दुःख देते हों? उन्से कहना कि, तुम कडवी औषध लेके पथ्य पालते हो उस औषधको दुःख जानते हो वा सुख? हा, औषध कटुक लगती है और पथ्य पालना भी दुष्कर होता है परंतू आगामिक सुखदायी होता हैं. तैसे ही तप करती बक्त दूःख लगता है, परंतू आगामिक महा सुखका देनेवाला होता है.

कित्नेक कहते है कि, पाप तो कायाने किया और तुम तप करके जीवकों क्या दुःख देते हो ? उनसे कहना कि, तुम घृतमें रहा हुआ मेल निकालनेके लिये बरतनकों क्यों जलाते हो ? जैसे बरतन को तपाया बिन घृत शुद्ध नंही होता है तैसे देहको तपाये बिन आत्मा शुद्ध नहीं होती है. जैसे काला

कोयला द्रव्य अग्नीमें जलके श्वेत राख हो जाती है तैसे घोर पापसे काला हुवा प्राणी तपमें आत्माको जलाके पवित्र हो जाता है. ऐसा 'तप' नाम धर्म महा प्रभाविक है. तपस्वी बडे २ देवादिकके पुज्य होते है. तपसे अनेक लब्धी अनेक सिद्धीयों प्राप्त होती है. कर्म वनको जलानेके लिये तो तप साक्षात ही दावानल है. माहा नीबड कर्मका निकंदन कर अल्प समयमें मोक्ष स्थान दे सकता है.

(९) 'चेइए' ज्ञानाभ्यासः—"तदुष्टं ज्ञानम्" यथार्थ वस्तूका समजना उसे ज्ञान कहते हैं. वीर परमात्माने ही फरमाया है की 'पढमं नाणं तउ दया' पहले ज्ञान होगा तब ही दया पाल सकेगा. मोक्ष जानेके ४ साधनमें प्रथम ज्ञानको लिया है. ज्ञान ही मनुष्यका रुप है. भर्तृहरीने कहा है "विद्या विहीनो पशुः" ज्ञान विन नर पशू तुल्य है. श्री भगवतीजीमें कहा है, ज्ञानी सर्वसे आराधिक. श्री उत्तराध्ययनजीमें कहा है–"नाण विण न हुती दंशण गुणो" ज्ञान विन सम्यक्त्वकी प्राप्ती ही नहीं होती हैं. यजुर्वेद कहता है–"विद्ययाऽमृत मश्नुते" जिसे पर्म सुखकी प्राप्ती होती है उसे विद्या कहते है.

इत्यादि बहुत दाखले विद्या विषयमें है. सबमें अव्वल दरज्जेमें विद्या ज्ञान ही; लीया है. इस लिये सुखार्थी प्राणीयोंकों ज्ञानाभ्यास अवस्य करना ही चाहीये. संसारिक विद्यासे धर्म ज्ञान बहुत फायदे दायक होता है. धर्म ज्ञान जाणनेवाला पाप अकृतसे डरता है. वो हर तराह निंद्य कर्मोंसे आत्माको बचा सकता है. इस वक्तमें धनके सोकीन तो बहुत हैं, परंतु विद्याके सोकीन बहुत थोडे रहे हैं. वो ऐसा नही समजते है कि, विद्याकी तो लक्ष्मी दासी हैं. और धर्म ज्ञान—आत्मज्ञानका अभ्यास तो बहुत कम हो गया. जग जंजाल छोडके जों साधू पदको प्राप्त हुये वो भी इस बक्तमें आत्मज्ञान छोड कर्म काहणीमें पड गये तो दूसरेकी तो बात ही क्या कहेना ?

बहुत शास्त्रका अभ्यास करनेसे ही ज्ञानी नही कहा जाता है. ज्ञानी १० लक्षण युक्त होते हैः—

श्लोक.

अक्रोध वैराग्य जितेन्द्रि येषाम्, क्षमा दया सर्व जन प्रियाः ।
निर्लोभ दाता भयशोकमुक्ता, ज्ञानी नराणां दश लक्षणानि ॥

१ क्रोध रहित, २ वैरागी, ३ जितेंद्री, ४ क्षमावंत, ५ दयावंत, ६ सर्व को प्रियकारी, ७ निर्लोभी,

८–९ भय और शोक चिंता रहित, १० दाता, ये दश लक्षण युक्त होवे उन्हे 'ज्ञानी' कहे जाते है.

ज्ञानी इस भवमें सर्वमान्य हो परम सुख शांतीसे आयुष्य गुजार परभवमें अक्षय सुख भोगवे.

१० " बंभचेर वासीयं"–ब्रह्मचर्य (शील) व्रत धारन करना. ब्रह्मचारीको खुद परमेश्वर 'तंबीवीए' अपने जैसा कहते है. अर्थात् ब्रह्मचारी भगवानही है. भारत शांती पर्वके २४३ मे अध्यायमें 'ब्रह्मचर्येण वै लोकान् जनयन्ति परमर्षयः' महाऋषीने ब्रह्मचर्यके प्रतापसे ही लोकालोकका विजय कियाथा. 'ब्रह्मचर्यमायुष्य कारणम्' आयुष्यको हित कर्त्ता ब्रह्मचर्य ही है.

आयुस्ते जो बलं वीर्य, प्रज्ञा श्रीश्च महाशयः ।
पुण्यंचमत्प्रियत्वं च, हन्यतेऽब्रह्मचर्यया ॥

गौत्तम स्मृति–अध्याय ४

जो ब्रह्मचर्य नहीं पालते है उन्का बल–वीर्य–बुद्धि–आयुष्य –तेज–सोभा – सौर्य –सौंदर्य –धन–यश–पुण्य और प्रीतीका नाश होता है. इत्यादि ठीकाणे २ बहुत शास्त्रोंमें ब्रह्मचर्यकी प्रशंसा अब्रह्मचर्यके दुर्गुण बताये हैं. ऐसा जाण काम:

रुप महा शत्रुका नाश कर अखंडित ब्रह्मचर्य व्रत धारण करना. जो कदी स्त्रीयादि भोग पदार्थ देख मन चलित होय तो उस्के दुर्गुणों पे ध्यान लगाना रे जीव ! तू क्या देख मोहित होता है ? देख, स्त्री-के सरीरके अंदर क्या क्या वस्तू है सो. कानमें मेल, आंखमें गीड, नासीकामें श्लेष्म, मुखमें थूक, पेटमें भिष्ठा, और सर्व सरीर हाड मांस रक्त आदि सर्व अशुचीमय पदार्थ करके प्रतीपूर्ण भरा हुवा है.

जाहा गुणी पूइकन्नी, निकस जाइ सबसो ।
एवं दुशील पडीणिय, मुहरी निकसी जाइ ॥
श्री उत्तराध्ययन सूत्र

जैसे क्षुधातुर श्वान सूखे हाडके टुकडेको प्राप्त हो, आनंदसे उसे चिगलता (चाबता) है, उस्की तिक्षण नोखसे उस्का तालू (तालवा) में छिद्र पड-नेसे रक्त उस हड्डी उपर हो के आता है. उस्के स्वादमें लुब्ध हो उसे ज्यादा २ चीगलता है. आ-खीर तालूमें छिद्र पड दुःख होता है तब उसे डाल मू चाटता आनंद मानता है. उस तालूमें छिद्र पड-नेसे रोग उत्पन्न हो कीडे पड जाते हैं. तब वो महा दुखित हो सब स्थानसे निकाला जाता है. आखिर सिर पटक मर जाता है. तैसे ही विषय ग्रधी जन

स्त्री रुप हड्डीमें ग्रध हो अपना वीर्य क्षय कर आप ही खुशी मानता है ! वीर्य क्षय होनेसे या अति ग्रधीपणसे गरमीके रोगसे पश्चाताप युक्त मर्ण पा दुर्गतमें जाता हैं. यों बिचार विषय इच्छासे निवृत होना.

और ब्रह्मचारी ऐसा विचारे कि, जिस ठिकाणे में असह्य वेदना सहन कर पैदा हुवा, पीछा उसी ही ठिकाणे जानेका काम करनेमें तुझे शर्म नहीं आती है ? तथा जैसी तेरी माता भगिनीका आकार है वैसा ही सर्व स्त्रीका आकार है, फिर उस्के सन्मुख कुद्रष्टीसे कैसे देखा जाय ? इत्यादि बिचारसे काम इच्छाको मार मन शांत करे.

जैसे गुमडेमें आराम होने आता है तब उस्में खाज चलती है. जो उस बखत कुचर डाले तो रोग ज्यादे हो जाय और जो किंचित् आत्मा वसमें रक्खे तो थोडे कालमें आराम हो सुखी होय. ऐसे ही यह मनुष्य जन्ममें काम-विकाररुप गुमडा पकके आराम होनेकी बखत आइ है. तब ही और गतिसे मनुष्य+

+ नर्कके जीवको भय संज्ञा ज्यादा. तिर्यंचके जीवको आहार संज्ञा ज्यादा. देवताके जीवको लोभ संज्ञा ज्यादा. तैसे मनुष्यमें मैथून संज्ञाका उदय होता है.

भवमें वेदका उदय जास्ती होता है. अबी जो आत्मा वसमें कर विषयसेवन न करे तो थोडे ही कालमें २०—२५ वर्षमें जन्म जरादि सर्व रोगका क्षय हो शांत स्वरुप होय. इत्यादि विचारसे आत्मा शांत कर अखंड ब्रह्मचर्य पाले.

ब्रह्मचर्ये यस्य गुणं शृणुत्वं वसुधाधिप ।
आजन्ममरणाद्यस्तु ब्रह्मचारी भवेदिह ॥ १ ॥
न तस्य किञ्चिदप्राप्यमिति विद्धी नराधिप ।
वह्व्यः कोटयस्त्वृषीणांच ब्रह्मलोक वसन्त्युत ॥२ ॥
सत्वे रतानां सततं दान्तानामूर्ध्व रेतसाम् ।
ब्रह्मचर्यं दहेद्राजन् सर्व पापानुपासितम् ॥ ३ ॥

भीष्म युधिष्ठिरसें कहते हैं कि, ब्रह्मचर्यके गुण सुणो, जिसने जन्मसे मरण पर्यंत ब्रह्मचर्य पाला है उस्को किसी शुभ गुण की खामी नही. है परमात्मा और सर्व ऋषी उसके गुण गाते है. वो ह्यां अनेक सुख भोगके आखिर सिद्ध पदको प्राप्त होता है. ब्रह्मचारी निरंतर सत्यवादी, जितेंद्री, शांतात्मा, शुभ भाव युक्त, रोग रहित, पराक्रमी, शास्त्रका जाण, प्रभूका भक्त, उत्तम अध्यापक होके सर्व पापका क्षय करके सिद्ध गतीको प्राप्त होता है.*

* विशेष इन १० धर्म अधिकारको जाणनेके

'संयम' के सत्तरे प्रकार, हिंसा, झूट, चौरी, मैथुन, परिग्रह, इन पांच आश्रवसे निवर्ते, श्रुत चक्षु घ्राण रस स्पर्श इंद्री वस करे क्रोध मान माया लोभ इन चार कषायसे निवर्ते, मनसे किसीका भी बुरा चिंतवण, वचन खोटा बोलना, काया अयत्नासे प्रवर्त्तानाः इन तीन दंडसे निवर्ते, यह १७ प्रकारे संयम हुया.

दूसरी तराह १७ प्रकारका संयम.

१ "पृथ्वी काय संयम"–पृथ्वी (मट्टी) के एक जुवार जित्नेसे कंकरमें असंख्यात जीव हैं, उस्मेंका एक २ जीव निकलके कबूतर जित्ना सरीर बनावे तो लक्ष योजनके जंबूद्वीपमें नही मावे. ऐसा जीवोंका पिंड जान मुनी किंचित् मात्र दुःख नहीं देवे. संग्घट्टा नहीं करे, तो मकान बंधानेका वगैरा जिन २ कामोंसे पृथ्वी कायकी हिंसा होती होवे ऐसा उपदेश करना तो कांहा रहा?

२ "अप काय संयम"–अप (पाणी) के एक

लिये मेरी बनाइ हुइ 'धर्म तत्व संग्रह' नामकी पुस्तकका अवस्य अवलोकन करीयेजी, कि जो सरल हिंदी भाषामें है.

बुंदमें असंख्याते जीव हैं. एक जीव निकलके भ्रमर जित्नी काय करे तो जंबूद्वीपमें नही मावे. ऐसा जीवोंका पिंड जान मुनी पाणि संग्घट्टा भी नहीं करे, तो स्नानादिकका उपदेश करना कांहा रहा? पृथ्वीसे पाणीके जीव सुक्ष्म हैं.

३ " तेउ काय संयम "–तेउ (अग्नी) के एक तिणंगीयेमें असंख्याते जीव हैं. एकेक जीव निकल के राइ जित्नी काया करे तो जंबूद्वीपमें नही मावे. ऐसा जीवोंका पिंड जान मुनी अग्नीका संग्घट्टा भी नहीं करे तो अग्नी प्रजालना, धूप खेवना, इत्यादि उपदेश करना कांहा रहा?

४ " वाउ काय संयम "–वायू (हवा) के एक झपटमें असंख्याते जीव हैं, एकेक जीव निकलके बडके बीज जित्नी काया करे तो जंबूद्वीपमें नहीं माय. इत्ने जीवोंका पिंड जान मुनी हवाकी घात होए ऐसा काम नहीं करे तो पंखा लगाना, वगेरा उपदेश करना कांहा रहा?

५ " वनस्पति काय संयम "–वनस्पति (हरी लीलोतरी) कित्नीकके एक सरीरमें एक जीव (अनाज, बीज प्रमुख), कित्नीकके एक सरीरमें संख्याते–असंख्याते जीव (हरी, पत्र, शाक प्रमुख),

कित्नीकके एक सरीरमें अनंत जीव (कंद या कोमल वनस्पति प्रमुख) ऐसा जीवोंका पिंड जाण मुनी संग्घट्टा भी नहीं करते तो फल फूलका छेदन भेदन करनेका उपदेश देना कांहा रहा?

कोइ कहे कि पृथव्यादिक पांच स्थावरोंके जीवोंमें हलन चलनादि सक्ती नहीं है तो उन्को दुःख भी कहांसे होता होय? उन्को उन्का समाधान श्री आचारांगजी शास्त्रके पहले अध्ययनके दूसरे उद्देशेमें कहा हैं कि, किसी जन्मसे अन्धा, बहिर, गुंगा असमर्थ पुरुषको कोइ उस्का अंग पगसे लगाके मस्तक तक शस्त्रसे छेदन भेदन करे तो उस्को पीडा (दुःख) कैसी होती है? सो उस्का मन या ज्ञानी जाणते है; परंतू वो कोइ भी तराह अपना दुःख दूसरेको कह शकता नही. तैसे ही पांच स्थावरोंके संग्घट्टेसे उन्को असह्य वेदना होती हैं; परंतू उन्के दरसानेकी सत्ता नहीं है. क्या करे बेचारे? कर्मोदयसें परवस पडे हैं. ऐसे इन्को अनाथ असरण जाण मुनी निजात्मकी तराह रक्षा करते हैं.

६ "बेंद्री संयम"–बे (दो) इंद्री (काया और मुख वाले कीडे प्रमुख)

७ " तेंद्री संयम "-तीन इंद्री (काया मुख और नाकवाले, कीडी षटमल प्रमुख)

८ "चौरिंद्री संयम"-चार इंद्रीवाले (काया मुख नाक और आंख वाले, मक्खी मछर प्रमुख) इन विक्लेन्द्री जीवोंकी रक्षा करे.

९ " पचेंद्री संयम "-काया मुख नाक आंख और कानवाले जीवोंके मुख्य चार भेदः-नारकीके जीव, तिर्यंच (पसुपक्षी जानवर सांप विंच्छु आदि) के जीव, मनुष्य और देवता; इन्की रक्षा करे.

यह ४ त्रस प्राणी, इन सबको त्रीकरण त्रिजोग कर किंचित् मात्र दुःख न उपजावे, यथा शक्त रक्षा करे.

कित्नेक लोग (१) आयुष्य निभाणे [सरीरके निर्वाह अर्थे](२)यश कीर्ती मिलाने [उत्सवादिकार्यमें] (३) मानके मरोडे [पूजाके अर्थे](४) जन्म मरणसे छूटने [धर्म-मोक्षकी इच्छासे] (५) दुःखसे छुटनेः इत्ने कारण इन छेइ कायकी हिंसा आप करते है, दूसरे पास कराते हैं, और जो कर रहे है उसे भला जानते है. वो प्राणी महा मूढ (मूर्ख) है. यह हिंसा सुख निमित्त करते है परंतू अगमिक

दुःख रुप होयगी. ऐसा श्री वीर प्रभूने आचारांग सुत्रके पहले अध्यायमें फुरमाया है.

१० " अजीव काय संयम "—अजीव [निर्जीव] वस्तू वस्त्र पात्र पुस्तक प्रमुखको भी अयत्नासे नहीं वापरना, कि जिस्की मुदत पके पहली उस्का विनास हो जाय. क्योंकी कोइ वस्तु विना आरंभसे नही निपजती है और गृहस्थको मुफत नहीं मिलती है. प्राणप्यारी वस्तूको गृहस्थ धर्मार्थ साधूको दे देवे तो साधूने दूसरी अच्छी वस्तूके लालचसे उस्का विनास नहीं करना चाहिये.

११ 'पेहा संयम'—कोइ वस्तू बिना देखे वापरना [उपयोगमें लेना] नहीं. इससे अपनी देहकी भी रक्षा होती है, विषयुक्त प्राणीसे बचाव होता है.

१२ "उपेहा संयम "—मिथ्यात्वी और भृष्टाचारीयोंका समागम (हमेशाका परिचय) बर्जे. और मिथ्यात्वीयोंको जैनी बनावे. जैनी गृहस्थको साधूपना समझावे. धर्मसे डिगेकों द्रढ करे.

१३ " पूजणा संयम "—अप्रकाशिक भूमीमें तथा रात्रीको रजोहरणसे पृथ्वी पूजे (झाडे) बिन चले नहीं. तथा वस्त्र पात्रमें तथा सरीरपे कोइ जीव

द्रष्टी आया तो गोछा [पूजणी] से पूजके दूर करे.

१४ "परिठवणीया संयम"—मलमूत्र आदि पठोवणेकी वस्तूको जांहा हरी दाणे, या कीडी प्रमुख जंतू न होवे वांहा यत्नासे पठोवे.

१५–१६–१७ मन वसमें रक्खे, वचन खोटा नहीं बोले, काया यत्नासे प्रवर्त्तावे. यह १७ प्रकारके संयम हुवे.

"वैयावच्चं"—वयावच्चके १० प्रकार:—१ आचार्य, २ उपाध्याय, ३ तपस्वी ४ नवी दिक्षित, ५ गिल्याणी (रोगी), ६ स्थीवर, ७ स्वधर्मी, ८ कुल, ९ गण, १० सिंघ, इन १० की यथायोग्य सेवा भक्ति करना उसे वयावच्च कहते है.

"बंभ गुत्तीओ"—९ बाड विशुद्ध ब्रह्मचर्य पाले (तीसरे प्रकरणमें देखो).

'नाणाइ नियं" १ ज्ञानसे वस्तूका यथा तथ्य स्वरुप जाणे. २ दर्शनसे यथातथ्य सद्दहे. ३ चारित्रसे ग्रहण करने योग्य ग्रहण करे. यह रत्नत्रयी [तीन रत्न] की सम्यक प्रकारे आराधना करे.

'तव'—१२ प्रकारका तप करे [३ रा. प्रकरणमें तपाचारमें देखो.]

'कोहं'–क्रोधादि ४ कषायका निग्रह करे [तीसरा प्रकरण देखो]

ये ५ महाव्रत १० यति धर्म १७, संयम, १० वयावच, ९ वाड ब्रह्मचर्य, ३ गुप्ती, ३ रत्न, १२ तप, ४ कषाय निग्रह, सर्व ७० गुण चरणसित्तरीके हुये. इन करण सितरी और चरण सित्तरी गुण युक्त उपाध्यायजी होते है.

प्रभावना.

"पभ्भावणा"–धर्मको दीपावे–फैलावे–प्रगट करे सो प्रभावना. धर्मका उदय आठ तरहसे होता हैं.

१ "प्रवचनी"–जैनागम तथा अन्यमतके जिसकालमें जित्ने सूत्र होवे उन्का जाण होवे. क्यों की सर्व शास्त्रका जाण होयगा सो सर्वके योग्य ज्ञान देके धर्म दीपावेगा.

२ "धर्मकथक"–श्री ठाणायांगजी सूत्रमें चार प्रकारकी कथा करणी कही है. सो

"चउविहाकहापन्नतं तंजहा"–अखेवणी, विखेवणी, संवेगणी, निव्वेगणी.

(१) 'अखेवणी' (अक्षेपनी)–सो श्रोताके हृदयमें हुब हुब ठस जाय. इस्के ४ भेद (१)

ज्ञानादिक पांच आचार साधू श्रावककी क्रिया इत्यादी उपदेशे. (२) व्यवहारमें किस्तराह प्रवर्त्तना, सभामें किस्तराह उपदेश करना. तथा प्रायश्चित दे आत्मा शुद्ध करनेकी रीत बतावे (३) मनमें प्रश्न-धारके आये हो उन्का संसय दूर हो जाय ऐसा उपदेश करे तथा कोइ प्रश्नादिक पूछे तो उसे ऐसा मार्मिक शब्दसे उत्तर देवे कि जिससे पृच्छकके रोम २ में वो बात ठस जाय. (४) वाख्यानमें सात ही नयानुसार सर्वको सुहाता परस्पर विरोध रहित, दुसरेके दुर्गुण नहीं प्रकाशता अपने महजबके गुण दूसरेके हृदयमें ठसानेवाले शब्दयुक्त वाणी फुरमावे.

(२) 'विखेवणी' (विक्षेपनी)—सन्मार्ग छोड उन्मार्ग जाता होय उसे पीछा सन्मार्गमें स्थिर करे—स्थापे, सो विक्षेपनी. इस्के ४ भेद. (१) स्वमत प्रकास करता बिच २ में अन्यमतके भी चुटकले छोडे, कि जिससे श्रोताको विश्वास आवे कि अपने महजब जैसी इन्में भी बातों हैं. (२) बहुत अन्यमतीकी प्रषदा देखे तब उन्के महजबकी बात करता बिच २ में अपने महजबका भी थोडा २ स्वरुप दर्शाता जाय, जिससे वो समजे की जैनमत ऐसा चमत्कारी है.

(३) सम्यक्त्वादिकका स्वरुप प्रकाशता बिच २ में मिथ्यात्वका भी स्वरुप दर्शाता जाय कि जिससे सुननेवाले मिथ्यात्वसे अपनी आत्मा बचा सके. (४) मिथ्यात्वका स्वरुप प्रकाशता बिच २में सम्यक्त्वका भी स्वरुप कहता जाय कि जिससे श्रोतागणकी सम्यक्त्व ग्रहण करनेकी इच्छा होवे.

(३) "संवेगणी" कथा उसे कहते है कि जिस्के सुणनेवालेके अंतःकरणमें वैराग्य स्फुरे. इस्के ४ भेद (१) इस लोकका अनित्यपणा और मनुष्य जन्म प्राप्तीकी सम्यक्त्वादि धर्म प्राप्तीकी दुर्लभता बतावे, जिससे सुननेवालेका चित्त संसारके पदार्थोंसे उतरके धर्म ग्रहण करनेका होवे. (२) परलोक-देवादिककी ऋद्धि मोक्षका सुख पापके फल नर्कके दुःखका वर्णन विस्तारसे दर्शावे, कि सुननेवाले पाप के फल दुःखसे डरे; देवलोक तथा मोक्ष सुख लेनेकी इच्छा करे. (३) स्वजन मित्रादिकका स्वार्थीपणा बताके उन्के उपरसे ममत्व कमी करावे; सत्संग करने उत्सुकता होवे (४) पर पुद्गलोंकी रमणतासे आत्म प्रदेश मलीन हुवे जिससे सत्यासत्य वस्तूका भान न होवे इसे ज्ञानादि रत्नत्रयीसे

पवित्र बनावे, जिससे निज स्वरुप प्रगट हो अनंत सुखकी प्राप्ती होवे. इस्का विशेष विवेचन कर श्रोता के हृदयमें ठसावे.

(४) "निव्वेगणी." जिस्के श्रवण करनेसे संसारसें निवृत संयम लेनेकी इच्छा होवे सो निव्वेगणी कथा. इस्के ४ भेद (१) ऐसा दर्शावे कि कित्नेक ऐसे कर्म हैं कि जिस्को करनेसे वो इसी भवमें दुःखदायी हो जाते है, जैसे चौरीसे बेडी प्राप्त होती है, व्यभिचारसे गरमी आदी रोग—मृत्यू आदि होता हैं. ऐसा ठसाके संसारसे उद्वेग उपजावे. [२]. इस लोकमें कीये हुये कित्नेक शुभ कर्मके फल इस लोकमें प्राप्त हुये ऐसा बतावे. जैसे तप संयमके पसायसे सर्व चिंता रहित सर्वपुज्य हुये हैं (३) इस लोकमें कीये हुये अशुभ कर्म नर्कादिक गतीमें जीव भोगवे उस्का स्वरुप बतावे. [४] परलोकमें कीये हुये शुभ कर्मसे इस लोकमें ऋद्धि सुखकी प्राप्ती हुइ सो बतावे. इन ४ तराह संसारसें उद्वेग उपजावे. यह चार देशना सोले प्रकारसे फुरमाके धर्म कथा करके जैन मत दीपावे. सो कथक प्रभावक.

३. "निरोपवाद"—जैसे किसी स्थानमें जैन

मतीयोंको धर्म भ्रष्ट करने शुरु किये तथा साधूकी महीमा सुण इर्षावंत होकर साधूसे चर्चा करनेकु आवे तब विवेकी साधू दक्षपणेसे अनेक स्वमत परमतके शास्त्रोंके प्रमाणसे सुपक्ष कुपक्षका स्वरुप बताके स्वमत स्थापे.

४ "त्रीकालज्ञ"—जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति चंद्र प्रज्ञप्ति इत्यादि शास्त्रमें जो खगोल भूगोल निमित ज्योतिष आदि जो विद्या है उस्का संपुर्ण जाण होवे, जिससे भूत भविष्य वर्तमान त्रीकालके शुभाशुभ वर्तमानका ज्ञान होए, लाभालाभ सुख दुःखको जाने, जीवीतव्यमर्णको जाणे, इत्यादिक जाण होके उपकारिक ठीकाने प्रकाशे पण निमित्त भाखे नही, आपदा वक्तपे सावधान होके लोकोंको चमत्कार उपजावे.

५ "तपस्वी"—यथा शक्ति दुकर तपस्या करे, की जिसे देखके लोकोंको चमत्कार उपजे. क्योंकि अन्य मतीयोंकी तपस्या तो फक्त नाम रुप हैं एक उपवासमें ही अनेक मिष्टान भक्षण कर तप जाणते है. और जैनकी तपस्या सो निराधार है इससे लोकोंको चमत्कार उपजे.

६ 'वृत'—विगय त्याग, अल्पउपाधी, मौन,

दुःकर अभीग्रह, काउसग्ग, तरुणपणे इंद्रीय निग्रह दुक्कर क्रिया इत्यादि २ व्रत धारण कर लोकोंको चमत्कार उपजावे.

७ "सर्व विद्याका ज्ञाता"–रोहिणी, प्रज्ञप्ति, अदृष्टी, पर शरीर प्रवेशिनी, गगनगामिनी. इत्यादि विद्या मंत्र शक्ती अंजन सिद्धी, गुटीका, रससिद्धि. इत्यादि अनेक विद्याका जाण होय परंतू परज्यूंजे नही. कोइ मोटे कारणसे प्रज्यूंजके लोकोंको चमत्कार उपजावे तो प्रायच्छित लेके शुद्ध होवे.

८ "कवी"–अनेक प्रकारके छंद कविता उत्तम २ स्तवन अनुभव रससे भरपूर गुढार्थ आत्म ज्ञानकी शक्ती संयुक्त जोड बनाके जैन धर्मको दीपावे.

ये आठ ही प्रभावना करके जैन मत दीपावे. परंतू अभिमान नही लावे, की में ऐसा विद्वान–हुस्यार–धर्मका दीपानेवाला हु. क्योंकी अभिमानसे विद्या फलित होती नही है. और लोकोंमें अपमान होनेका संभव है. इसलिये गुणी होके सदा नम्र भाव रक्खे.

"जोग निग्गो" मन बचन काय यह तीनी

जोग बसमें करे. यह १२ अंगके जाण १३–१४ करण सित्तरी चरण सित्तरीके गुण युक्त १५–२२ आठ प्रभावना कर जैन धर्म दीपावे. २३–२५ तीन योग वसमें करे यह २५ गुण उपाध्याय भगवंतके हुये.

उपाध्यायजीकी १६ उपमा.

१ "संख" की जैसे संखमें दूध भरा शोभा देवे और विणसे नही तैसे उपाध्याय भगवंतमें ज्ञान सोभा देवे और ज्ञानका विनास होवे नही. तथा जैसे वासूदेवके पंचायण संखके अवाजसे महा शैन्य भगजाय तैसे उपाध्यायजीके उपदेशसे पाखंडी भगजाय.

२ "अश्व" की जैसे कंबोज देशका घोडा दोइ तर्फ बाजिंत्रों करके सोभा देता है तैसे उपाध्याय भगवंत सझाय रुप बाजिंत्रों करके सोभते है.

३ "सूभट्ट" की–जैसे सुर सुभट्ट (क्षत्री-राजा) अनेक बंदीजनोंकी बिरुदावलीसे परवरा हुवा सत्रुका पराजय करता हैं तैसे उपाध्याय भगवंत चतुर्विध सिंघसे परवरे हुये मिथ्यात्वीयोंका पराजय करते है.

४ "हाथी" की–जैसे साठ बर्षका जुवान हाथी

हथणीयोंके परिवारमें सोभता हैं तैसे उपाध्यायजी ज्ञानीयोंके परिवारसे सोभते है. और हाथीकी तराह किसी भी वीतंडवादीयोंसे हटते नही हैं.

५ बेल (बलद) की जैसे धोरी बेल दोनो तिक्षण शृंग करके गायोंके युथमें सोभता हैं, तैसे उपाध्याय निश्चय व्यवहाररुप शृंग कर पर मतको हटाके मुनी मंडलमें शोभते हैं.

६ " सिंह " की–जैसे केसरीसिंह तिक्षण दाढों करके बनचरोंको क्षोभ उपजाता हैं, तैसे उपाध्यायजी सातनय करके कदाग्रहीकों हराते हैं.

७ " वासुदेव " की–जैसे नारायण सात रत्नकर वैरीयोंको हठाके त्रीखंड पति होते हैं, तैसे उपाध्यायजी तप संयमादि शास्त्रोंसे कर्म वैरीयोंका पराजय कर ज्ञानादि त्रीरत्नके आराधिक होते हैं.

८ " चक्रवर्ति " की–जैसे षट खंडपति चक्रवर्ती महाराज १४ रत्नकर नरेंद्र सुरेंद्रके पुज्य होते हैं तैसे उपाध्यायजी १४ पूर्वकी विद्याकर जगतपुज्य होते हैं.

९ " इंद्र " की–जैसे सक्रेंद्र हजार आंखों करके*

---

* पूर्व भवमें सक्रेन्द्र कार्तिक सेठ था जिन्ने पाचसो गुमास्ते के साथ दिक्षा ली. कार्तिक सेठ इंद्र हुये और

देवताकी प्रषदाकों मोहित करता हैं, तैसे उपाध्यायजी अनेकांत स्यादवाद मार्ग प्रकाशके भव्यगणोंकों मोहित करते है.

१० "सूर्य" की—जैसे सूर्य जाज्वल्यमान प्रभा करके अन्धकारका नाश करता हैं, तैसे उपाध्यायजी निर्मल ज्ञानसे भ्रमरुप अंधकारका नाश करते हैं.

१२ "चंद्रमा" की—जैसे पूर्ण कलाकर चंद्रमा ग्रह नक्षत्र तारागणोंके परिवारसे रात्रींको मनोहर बनाता हैं, तैसे उपाध्यायजी चार तीर्थके परिवार कर ज्ञानरुप पूर्ण कलाकर, सभाका मन हरण करते हैं.

१३ "जंबूसुदंशण वृक्ष" की—जैसे उत्तर कुरुमें रहा हुआ जंबूनंद रत्नका जंबूवृक्ष अणादीय देव करके सोभता है, तैसे उपाध्यायजी आर्य क्षेत्रमें ज्ञानरुप देवके अनेक गुण गणरुप पत्र पुष्प फल करके सोभते हैं.

१४ "सीतानदी" की—जैसे महाविदेह क्षेत्रकी सीता नामे मोटी नदी पांचलाख बत्तीस हजार

---

५०० गुमास्ते सामानीक (बरोबरीके) देव हुये. वो सदा इंद्रकी साथ रहे. इसलिये उन्की आंख मिलाके इंद्रकी हजार आंख हैं.

नदीयोंके परिवारसे सोभती है, तैसे उपाध्यायजी हजारों श्रोतागणोंके परिवारसे सोभते हैं.

१५ "मेरुपर्वत" की—जैसे सर्व पर्वतोंका राजा मेरु पर्वत अनेक औषधीयों और चार बन करके सोभता हैं, तैसे उपाध्यायजी अनेक लब्धीयों कर चार संघके परिवारसे सोभते हैं.

१६ "स्वयंभू रमण समुद्र" की—सबसे बडा स्वयंभू रमण महा समुद्र अक्षय और स्वादिष्ठ पाणी करके सोभता है, तैसे उपाध्यायजी अक्षय ज्ञान कर भव्य जीवोंको रुचता ज्ञान प्रकाश कर सोभते हैं.

इत्यादि अनेक शुभ उपमायुक्त उपाध्यायजी होते हैं. और भी उपाध्यायजी गुरु महाराजके भक्तिवंत, अचपल, कौतक रहीत, माया कपट रहीत, किसीका तिरस्कार नहीं करनेवाले, सर्वसे मित्रभाव रखनेवाले, ज्ञानका भंडार होकर भी अभिमान रहीत, अन्यको दोष नहीं देनेवाले, शत्रुका भी अवर्णवाद नहीं बोलनेवाले, क्लेष रहीत, इन्द्रियोंको दमनेवाले लज्जावंत इत्यादि विशेषणोंसे युक्त होते हैं. ऐसे जिन केवली तो नहीं परन्तु "अजीणा जिण सं-

कासा " जिनकेवली जैसे साक्षात् ज्ञानके प्रकाशने-वाले श्री उपाध्यायजी भगवानको त्रिकाल वंदना !

गाथा.

समुद् गंभीर समा दुरासया अचक्किया केणइ दुप्प हंसया
सुयस्स पुन्नं विउलस्स ताइणो खविहुकम्मंगती मुत्तमं गया.

श्री उत्तराध्ययन सूत्र–अध्ययन ११ गाथा ३१

समुद्र जैसे गंभीर (कभी झलके नहीं), कोइ पराभव न कर सके ऐसे, किसीसे हटे नहीं ऐसे, सूत्र करके पूर्ण भरे हुये, छेइ कायके रक्षपाल, ऐसे उपाध्यायजी कर्म खपाके अवस्य मोक्ष पधारें.

इति परमपूज्य श्री कहानजी ऋषिजीके संप्रदायके बालब्रह्मचारी मुनी श्री अमोलख ऋषिजी विरचित् श्री " जैन तत्वप्रकाश " ग्रंथका 'उपाध्याय' नामक चतुर्थ प्रकरण समाप्तम्. ||
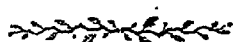
प्रकरण ५ वा.
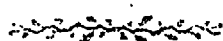
साधूजी.

जैसे मंत्रवादी इच्छितार्थ सिद्ध करनेकी तर्फ लक्ष रखकर अनेक उपसर्ग अडगपनसे सहन करते है तैसे ही जो पुरुष अपनी आत्माकी सिद्धि करनेकी तर्फ लक्ष रखकर एकांत मोक्षकी तर्फ द्रष्टि रखकर आत्मसाधना करे उन्को 'साधू' कहे जाते हैं.

साधूको श्री सूयगडांगजी सूत्रके प्रथम श्रुत स्कंधके १६ वे अध्यायमें ४ नामसे बुलाये हैं:—

"आहाह भगवं एवं से दंत दवीए वोसठ कासतिवच्यो १ माहणे तिवा. २ समणे तिवा. ३ भिख्खू तिवा. ४ णिग्रंथोतिवा."

अर्थः—श्री तीर्थंकर भगवान दमितइन्द्रि मुक्तियोग जिन्ने अशुभ योग त्यागन किये हैं औसे साधूको ४ नामसे बुलाते हैं:—(१) माहण, (२) समण, (३) भिख्खु, (४) निग्रंथ.

(१) "तन्ने बुहीमहामुणी णोति किरिए सव्व-

पावं कम्मेहि पेज्ज दोस कलह अब्भखाण पेसुन्न पर-परिवाए अरति रति मायामोस मिथ्यादंसण सल्ल विरए समिए सहिए सदाजतेणो कुझे णोमाणी माहणेतिवच्च"

शिष्य पूछता है:-"अहो भगवन्! मुक्तिके जोग कौन हैं?"

गुरुजीने जवाब दिया:-"हे शिष्य! जो कायिकादिक सर्व क्रियासे निवर्ते है, सर्व पाप कर्म-राग, द्वेष, क्लेष, चुगली, अवर्णवाद, हर्ष-शोक, कपट-युक्त झूंठ, खोटे मतकी श्रद्धा इत्यादिसे निवर्ते है, पंच सुमति सहित है, सदाकाल छे कायकी और संयमकी यत्ना वंत है, किसी गुणका गर्व रहित है, उन्को 'माहण' अर्थात् महात्मा कहना.

(२) "एत्थे वीसमणे=अणिस्सित अणियाण अदाणंच अतिवायंच मुसावायं च बहिद्धंच कोहंच माणंच मायंच लोहंच पेक्ष दोषंच इचेवं जउजउ अदाणाउ अप्पणोपदेशहेउ तत्तो २ अदाणातो पुव्वं पडि विरिए पाणाइ वायाऊ दंत दविए वो सठ काए समणेतिवच्चे"

अब समण (साधू) के लक्षण कहते हैं. कि-

सीके भी प्रतिबंध (नेश्राय–आश्रय) रहित, करणीके फलकी वांछा रहित, कषाय रहित (शांत), प्राणातिपात अर्थात् हिंसा–मृषावाद अर्थात् झूंठ–चौरी–मैथून–क्रोध– मान– माया–लोभ–राग–द्वेष इत्यादिसे सर्वथा निवर्ते हैं, इन्द्रियको दमन करे आत्माकी ममताको वोसरावे (छोडे) उन्को 'समण' अर्थात् साधू कहना.

(३) "एत्थेव भिखू अणून्नए विणीए नामए दंत दविए वोसठकाए सविधूणिय विरुवरुवे परिसो उवसग्गे सझपजोग सुधादाणे उवठिए ठिअप्पा संखाए परदत्त भोइ भिखूति वच्चे"

'भिख' अर्थात् भिक्षुक उन्को कहते हैं कि जो निर्वद्य भिक्षासे शरीरका निर्वाह करते है, और जो अभिमान रहित और विनय–नमृता आदि सहित होते है, इन्द्रियोंका दमन करते है, देव–दानव–मानवके किये उपसर्ग समभावसे सहन करके निरतिचार व्रत पालते है, अध्यात्मयोगी हैं, मोक्षस्थान प्राप्त करनेके लिये सावधान हो कर संयम–तपमें स्थिरीभूत है, और अन्य किसीके निमित्तसे बनाये हुवे आहार लेते है.

(४) एत्थेवीणिग्गंथे एगेएग विउबुद्धे संछिन्न-सोए सुसंजए सुसमिए सुसमाइय आयप्पवाय पत्ते विउदुहहउ विसोयपलिछिन्ने णोपूया सक्कार लाभठी धम्मठी धम्म विउ णियाग पडिवणे समियंचरे दंत्त दविए वोसठ काय निग्गंत्थेतिवच्चे "

अब निग्रंथके लक्षण कहते हैं. सदा रागद्वेष रहित अकीले, तत्वज्ञ, सर्वथा आश्रवका निरुधन किया, अच्छी तराहसे आत्मा वसमें करी, सुमति-वंत, समाधि (चित्तकी निश्चलता सहित), महि-मा–पूजा–सत्कार–सन्मानकी इच्छा रहित, एकांत धर्मके ही अर्थी, क्षमा आदि दशविधि धर्मके भिन्न २ भेदके जाण, मोक्षमार्ग अंगिकार करके उसें स-म्यग् प्रकारे प्रवर्त्तें, दमेन्द्रिय, और कायाकी ममता रहित; इतने गुनवालेको "निग्रंथ" कहना.

भगवंतने फुरमाया है कि–" से एवमेव जाणह जंमहंभतारो तिबेमी " अर्थात् ये ही महाभयसे निवारनेको समर्थ है.

साधूजीके २७ गुण.

पंच महव्वय जुत्तो पंचिंदिए समरणो
चउविह कषाय मुक्को तउसमाधारीणीया
तिउसच्च संपन्न तिउ खंती संवेगरउ
वेयणामच्चू भयगयं साहूगुण सत्तवीसं ॥

५ महाव्रत (पच्चीस भावना युक्त) शुद्ध नि-निर्दोष पाले; इन्का अधिकार तीसरे प्रकरणकी आदिमें हुवा.

५ इन्द्रियोंके २३ विषयसे निवर्तें (देखो प्रक-रण ३ रा.)

४ क्रोधादि कषायसे निवर्तें.

ये १४ बोल विस्तारसे ३ रे प्रकरणमें समझाये गये हैं.

(१५) "मन समाधारणीया" पापसे मन नि-वर्तीके धर्म मार्गमें प्रवर्तावे. [१६] "वय समाधार-णीया"—निर्दोष कार्य उपने बोले, [१७] "काय समाधारणी"—कायाकी चपलता रुंधे [१८] "भाव सच्चे"—अंतःकरणके प्रणामकी धारा सदा निर्मळ

शुभ वर्धमान धर्मध्यान शुक्ल ध्यान युक्त रहैं. [१९] "करण सच्चे" करण सित्तरीके ७० गुण युक्त तथा साधूको क्रिया करनेकी विधि शास्त्रमें फुरमाइ है वैसी सदा योग्य वखतमें करें. पिछली प्रहर रात बाकी रहै तब जागृत होके आकाश दिशा प्रतिलेखे कि किसी प्रकारकी असझाइ तो नहीं है? जो निर्मल दिशा होय तो शास्त्रकी सज्झाय करे. फिर असझाइकी (लाल दिशा) हो तब प्रतिक्रमण करें. सूर्योदय पीछे प्रतिलेहना करे अर्थात् वस्त्रादिक सर्व उपगरण-को देखें. फिर प्रहर दिन आवे वहां तक स्वाध्याय करे तथा श्रोतागणका योग होय तो धर्मोपदेश करे—व्याख्यान बांचे. फिर ध्यान करे, शास्त्रके अर्थकी चिंतवना करे और जो भिक्षाका काल होय तो गौ-चरी निमित्ते जाके शुद्ध आहार विधियुक्त लाके आत्माको भाडा देवे. चौथे आरेमें तीसरे प्रहर भिक्षा के लिये जाते थे, क्योंकि उस बक्त सब लोग एक* ही बक्त भोजन करते थे और एक घरमें ३२ स्त्री

*पहले आरेमें ३ दिनके अंतरे, दूसरेमें २ दिनके अंतरे, तीसरेमें एक दिनके अंतरे, चौथेमें दिनमें एक बक्त भोजनकी इच्छा होती थी.

और २८ पुरुष होते सो घर गिणतीमें था, इस लिये ६० मनुष्यका भोजन निपजाते सहज दो प्रहर दिन आ जाता था. शास्त्रमें कहा है कि, "काल़ं काल समायरे" अर्थात् जिस क्षेत्रमें जो भिक्षाका काल होय उस वक्त गौचरी जाय. जो जल्दी जाय अथवा देरसें जाय तो बहुत घुमना पडे, इच्छीत आहार न मिले, शरीरको किलामना उपजे, लोकोमें निंदा होवे कि वक्त बे वक्त साधू क्यों फिरता है? तथा स्वाध्याय—ध्यानकी अंतराय पडे. इत्यादि दोष जाण कालोकाल भिक्षाके लिये जाय. फिर शास्त्रोक्त विधिसे आहार करे. फिर ध्यान करे. फिर चौथे प्रहर प्रतिलेखन कर स्वाध्याय करे. असझाइकी वक्त देवसी प्रतिक्रमण करे. असझाइ निवर्तनेसे सझाय करे. दूसरे प्रहर ध्यान करे, तिसरे प्रहर निद्रामुक्त होवे. ये दिनरात्रीकी साधूकी क्रिया श्री उत्तराध्ययन सूत्र के २६ वे अध्ययनमें कही है. और भी अंतर विधि बहुत है सो गुरु आमनासे धारे.)

(२०) "जोग सच्चे"—मन—वचन—कायाके योगकी सत्यता—सरळता रक्खे. योगाभ्यास—आत्मसाधन—सम-दम—उपसम इत्यादि साधना कर प्रति दिन वृद्धि करे.

(२१-२२-२३) "संपन्नतिउ"- साधू तीन वस्तू संपन्न है. नाणसंपन्न, दंशण संपन्न, चारित्र संपन्न.

(अ) नाण संपन्नः-मति, श्रुत, अंग उपांग पूर्वादिक जिस कालमें जितना ज्ञान हाजर होवे उतना उमंग सहित अभ्यास करे, बाचना-पृच्छना-पर्यटना आदि करके दृढ करे, अन्यको यथायोग्य ज्ञान दे वृद्धि करे.

(ब) "दंशण संपन्न":-(१) कषाय, १ नोकषाय, ३ मोहनीयः इत्यादि दोष रहित शुद्ध सम्यक्त्ववंत होवे, देवादिक भी चला शके नहीं, शंकादि दोष रहित निर्मळ सम्यक्त्व पाले.

(क) "चारित्र संपन्न":-सामायिक-छेदोपस्थापनी-परिहार विशुद्ध-शूक्ष्म संपराय-यथाख्यात ये पांच चारित्र युक्त. (इस कालमें पहले २ चारित्र हैं.) इस्का खुलासा विनय तपमें-चारित्र विनयमें किया गया है.

(२४) "खंती"-क्षमावंत.

(२५) "संवेग"- सदा वैराग्यवंत रहैं.

"सरीर मनसीगन्तु वेदना प्रभवाद्भवात्
स्वप्नेन्द्र जाल सङ्कल्पाद्भीतिः संवेग उच्यते"

इस संसारमें शारीरिक और मानसिक वेदनासे अति ही पीडा हो रही है, जिस्को देखकर और सर्व संयोग इंद्रजाल और स्वप्नवत् जानकर संसारसे डरना उस्का नाम 'संवेग' है.

(२६) "वेदनीं सम अहीया सणीयाए"–क्षुधादिक २२ *परिसह उत्पन्न होवे तो सम प्रणामसे सहन करे.

---

२२ *परिसहः–(१) "खुहा परिसह" क्षुधा उत्पन्न होनेसे मुनीश्वर भिक्षावृत्तिसे अपना निर्वाह करे, परंतु जो कभी आहारका जोग न बने और मरणांत कष्ट आ पडे तो भी अन्न, हरी, प्रमुख सजीव पदार्थ लेवे नहीं और पचनादिक क्रिया करके किंवा करवा के ऐसा सदोष आहार भोगवनेकी इच्छा भी करे नहीं. (२) "पीवासा परिसह"–प्यास लगे तो अचित जलकी याचना करे परंतु जोग न मीलनेसे सचेत जलकी इच्छा भी करे नहीं. (३) "सीय परिसह"–शीत निवर्तन करनेके लिये अग्निसे शरीर तपानेकी या मर्यादा उपरांत वस्त्र भोगवनेकी या मर्यादा के अंदर भी सदोष–अकल्पनीय वस्त्र ग्रहण करनेकी इच्छा करे नहीं. (४) "उसिन परिसह"–उष्णता–तापसे आकूलव्याकूल"

(२७) "मरणातिय सम-अहीया सणीयाए" मरणांतिक कष्ट तथा मरणसे डरे नहीं परन्तु समाधि मरण करे.

इसी तराह साधूजीके २७ गुण है.

होने पर भी साधू स्नान करे नहीं और पंखा आदिसे हवा लेवे नहीं. (५) "दंश मंस परिसह"-वर्षा ऋतुमें डास-मच्छर-खटमल इत्यादि जीवकी पीडा होनेसे उन्को समभावसे सहन करे. (६) "अचेल परिसह"-वस्त्र फट जानेसे और जीर्ण होनेसे भी मुनी दीन-पणे वस्त्रकी याचना करे नहीं तथा सदोष वस्त्र भोगवनेकी इच्छा करे नहीं (७) "अरइ परिसह"-अन्नवस्त्रादिकका जोग नहीं बननेसे भी साधुकी अरति (चिंता) उत्पन्न नहीं होनी चाहिये. नरक तिर्यंचादि गतिमें जो दुःख परवश्य पणे सहे हैं उन्को याद करके परिसह समभावसे सहन करे. [८] "इत्थी परिसह" कोइ दुष्टा साधुको विषयकी आमंत्रणा करे, किंवा हाव-भाव-कटाक्षसे मन खैंचनेकी युक्ति करे तो भी साधु अपना मनकी लगाम बराबर पकड रक्खे और इस तराह विचार करे कि:—

५२ अनाचीर्ण.

(१) साधू निमित्ते नीपजाया हुवा आहार प्रमुख लेवे नहीं. (२) मोलकी वस्तू लेवे नहीं. (३)

समाइ पेहाए परिव्वयंतो। सियामणो निसरइ बहिद्धा।
न सा महं नोवि अहंपि तीसे। इच्चेवताउ विणइय रागं॥

अर्थात्, श्री दशवैकालीक सूत्रमें ऐसा कहा है कि यदि स्त्री यादिकको देखनेसे साधुका मन संयमसे भ्रमीत हो जावे तो ऐसा चिंतवन करना कि ये स्त्री मेरी नहीं है और में उनका नहीं हुं. ऐसा बिचारके स्नेह राग निवारना ऐसा करने पर भी जो मन शांत न होवे तोः—

आया वया ही चय सोगमल्लं।
कामेक माही कामि यंखू दुखं॥
छिंदाहिं दोसं विणइय रागं।
एवं सुही होहिसि संपराए॥

अर्थात्—शरीरका सुकुमालपणा छोडकर सूर्यकी आतापना लेना, उणोदरी प्रमुख बारह प्रकारके तप करना, आहार कमी करता जाना, क्षुधा सहन करनाः ऐसा करनेसे शब्दादिक काम भोग और उन्से उत्पन्न होनेवाले रागद्वेष दुर रहेगा और जीवको सुख मिलेगा.

सामे लाके देवे तो लेवे नहीं. (४) एक घरसे नित्य लेवे नहीं. (५) रात्रीको चार ही आहार भोगवे नहीं. (६) स्नान करे नहीं. (७) सुगन्धी द्रव्य सूंघे नहीं. (८) फूलमाला पहेरे नहीं. (८) पंखे प्रमुखसे हवा करे नहीं (१०) चारही आहार रात्रीको पास रक्खे नहीं. (११) धातू पात्रमें भोजन करे नहीं. (१२)

---

(९) "चरिया परिसह"—प्रेमपासमें नहीं फसानेके लिये साधूको ग्रामानुग्राम बीचरना पडता है. नवकल्पी (८ महीनेके ८ और चौमासाका १ असे ९ कल्पी) विहार करना पडता है. वृद्ध—रोगी—तपस्वी या उन्होंकी सेवा करनेवालेको तथा ज्ञाननिमित्त रहनेमें हरकत नहीं.

(१०) "निसीया परिसह"—चलते २ साधूको रास्तेमें विश्रामके लिये एक ठिकाने बैठना पडे और वहां समाविषम भूमिका मिले तो रागद्वेष नहीं करे.

(११) "सिजा परिसह"—कहीं एक रात्री और कहीं चातुर्मासादिक अधिक काल रहना पडे ओर वहां मनोज्ञ सेजा (शय्या)—स्थानक (रहनेका मकान) नहीं मीले—टूटाफूटा शीततापादि उपद्रवकारी मकानका संयोग बने तो मनमें किलामना नहीं पावे.

राजपिंड (बहोत पराक्रमी) आहार भोगवे नहीं. (१३) सत्रकार (दानशाला)का आहार लेवे नहीं. (१४) बिना कारण शरीरको तेल प्रमुखका मर्दन करे नहीं. (१५) किसी भी वाहन पे बैठे नहीं. (१६) गृहस्थकी सुखसाता पूछे नहीं. (१७) काच–तेल–प्र-

---

(१२) "अक्रोस परिसह"–ग्रामादिकमें रहते साधूका भेष–क्रिया प्रमुख देख कर कोइ इर्षावंत या मताभिमानी मनुष्य अक्रोस (कठोर) वचन कहे–निंदा करे–अछूते आल देवे–ठग पाखंडी बनावे तो भी साधु समभावको सहे.

(१३) "बध परिसह"–कोइ मनुष्य कोपातुर होकर ताडन कर बैठे तो भी मुनी समभावसे सहे.

(१४) "याचना परिसह"–औषधादिक जरुर पडनेसे याचना करनी पडे तो "मैं मोटे घरका होकर कैसे मांगू?" ऐसा अभिमान न लावें, साधुका तो निर्वाह ही याचनापर है.

(१५) "अलाभ परिसह"–याचना करते पर भी इच्छित वस्तु न मीले तो खेद नहीं लाना.

(१६) "रोग परिसह"–शरीरमें कोइ प्रकारका रोग उत्पन्न "होनेसे हाय हाय! त्राही त्राही!" ऐसा न करे.

मुखमें अपना मुख देखे नहीं. (१८) चौपट—पत्ते—गंजीफे इत्यादि खेले नहीं. (१९) ज्योतिष निमित्त प्रकाशे नहीं. (२०) छत्र धारण करे नहीं. (२१) वैद्यगी (औषधका काम) करे नहीं. (२२) पगरखी

---

(१७) "तण फास परिसह"—रोगसे दुर्बल हुवा शरीरको पृथ्वीका कठण स्पर्श सहन न होवे तब कुच्छ गादी तकीएं तो साधूके काम आवेही नही. शाल (चावल) इत्यादिकका नरम पराल (घास)का बीछाना उपर शयन करे तब उस्का कठीन स्पर्श शरीरको लगे तो गृहस्थावासको न संभारे.

(१८) "जलमेल परिसह"—मेल और परस्वेहसे घबराया हुवा साधू स्नानकी अभिलाषा न करे.

(१९) "सक्कार परिसह"—साधुका सत्कार—वंदना नमस्कार न होवे तो इससे साधुको बूरा न लगना चाहीए.

(२०) "पन्ना परिसह"—साधूकी पास ज्ञान ज्यादे होनेसे बहोत जनों सूत्रकी बांचना लेनेकु आवे, कितनेक प्रश्न पूछनेके लिये आवे तब कोचवाके—घबराके असा न चिंतवे कि में मूर्ख रहता तो असी तकलीफ नहीं पडती.

(२१) "अन्नाण परिसह"—बहुत परिश्रम उ-

आदि कुछ भी पांवमें पहने नहीं. (२३) अग्निका संघट्टा करे नहीं. (२४) सेजांतर आहार भोगवे नहीं. अर्थात् जिनकी आज्ञासे मकानमां उतारा किया उन्के घरका आहार भोगवे नहीं. (२५) पिलंग, खाट खुरसी इत्यादिपे बैठे नहीं. [२६] वृद्धावस्था, तपस्या, और दर्द इन सबबोंके सिवाय गृहस्थके घरमें बैठे नहीं. [२७] उगटणा–पीठी–मेंदी लगावे नहीं. [२८] गृहस्थीकी वयावच्च [चाकरी]करे नहीं. (२९) जात संबंध मीलाके आहार प्रमुख लेवे नहीं. (३०) पृथ्वी–पाणी–हरी बीन शास्त्र प्रगमे (अचेत हुए बिना) भोगवे नहीं. [३१] दुःख उत्पन्न हुवे गृहस्थका शरणा वांच्छे नहीं. [३२–४०] मूलो–आदो (अद्रक) इक्षू–(सेलडीका सांठा)–चचित फल–संचल लुण–आगरका लुण

ठाने पर भी ज्ञान न मिले तो खेदीत नहीं होना चाहिये. अकीले ज्ञानसे मोक्ष नहीं है. ज्ञान और क्रिया दोनुकी जरुरत है.

(२२) "दंशण परिसह"–ज्ञान थोडा होनेसे जीन वचनमें शंका आदि उत्पन्न हुवे तो समकितको दुषण लगावे नहीं परन्तु शास्त्रवचनपर पूर्ण श्रद्धा रख्खे.

समुद्रका लूण–सिंधा लूण–खारीका† लूण ये ९ अचित हुये विन, अग्नि प्रमुख दुसरा शस्त्र लगमे बिन भोगवे नहीं. [४१] वस्त्र प्रमुखको धूप खेवे नहीं. [४२] शीर, दाढी और मूछ इतने ठिकाणे छोड अन्य ठिकाणेका लोच करे नहीं. (४३) गुह्य स्थानक समाले नहीं. (४४) बिन कारण रेच [दस्त लगनेकी औषधि] लेवे नहीं. (४५) बिन कारण शोभा निमित्ते आंखमें अंजन करे नहीं. (४६) दातण करे नहीं. [४७] गात्र भंग [कसरत–मल्कुस्ती] करे नहीं. (४८) सूरण आदिका भक्षण करे नहीं. [४९] सचित बीज–कच्चा अनाजका भक्षण करे नहीं. [५०] औषध लेके या मुखमें अंगुली प्रमुख डालके उलटी (वमन) करे नहीं. [५१] शरीरकी शोभा–विभूषा करे नहीं. [५२] दांत रंगे नहीं. ये ५२ अनाचीर्णका त्याग कर शुद्ध संयम साधूजी पालते है.

---

† सेलडीके गांठमें जीव रहता है. इसलिये गांठ बिनकी, कारखासर ले सके. और लूण जो किसी अर्कमें या अग्निसे पचा होय तो लेवे.

२० "असमाधी दोष."

(१) जल्दी २ चले तो. (२) पूंजेविन चले तो. (३) पूंजे कांहा और पग कांहा रखे तो. (४) जास्ती पाट बाजोट भोगवे तो. (५) बडेके सामे बोले तो. (६) थैवरकी घात (मृत्यू) इच्छे तो. (७) सर्व प्राण भूत जीव सत्वकी घात चिंतवे तो. (८) क्षण २ में क्रोध करे तो. (९) निंदा करे तो. (१०) वारंवार निश्चयकी भाषा बोले तो (असुक काम करूंगा, जाउंगा इत्या-दि.) (११) नया क्लेश पैदा करे तो. (१२) जूना क्लेश उदेरे (गुजरी बात पीछी याद करे) तो. या खमत– खामणा करके पीछी लडाइ करे तो. (१३) बत्रीस असझाइमें सझाय करे तो (१४) सचेत रज (रस्तेकी धूळसे) पग भरे होवे और पूंजे (झाडे) बिन आ-सनपे बैठे तो. (१५) पहर रात गये पीछे दिन उगे वांहां तक जोरसे बोले तो. (१६) घात हो जाय ऐसा क्लेष करे तो. (१७) कटूक वचन बोले तो. (१८) अपनी और दुसरेकी आत्माको असमाधी (चिंता) पैदा होवे ऐसा वचन बोले तो (१९)फ-जरसे स्याम तक ला ला के खाय तो (नोकारसी आदि तप न करे तो) (२०) चोकस करे बिन आ-

हार प्रमुख वस्तू लावे तो. (असमाधी दोष लगता है. असमाधी दोष उसे कहते है की जैसे मांदगीसे मनुष्यका सरीर निर्बल हो जाता है तैसे यह काम करनेसे संयम शिथिल हो जाता है).

आत्म सुखार्थी साधू इन २० दोषको वर्जके प्रवर्तें.

२१ सबले (बडे) दोष.

(१) हस्तकर्म करे तो. [२] मैथून सेवे तो. (३) रात्रीको चार आहार भोगवे तो [४] आधाकर्मी [साधू निमित्त नीपजाया] आहार भोगवे तो (५) राजपिंड (दारु मांस) आहार भोगवे तो. (६) कीयगंड [मोलका लीया] पामीचं [उधार लीया] अछेजं (नीर्बलके हाथमेंसे छीन के लिया) अणिसिठं [मालककी रजाविना लिया] अभीहडं (सामे लाया). यह ५ दोप लगाके आहार भोगवे तो. (७) वारंवार पच्चखाण [नियम] लेके तोडे तो [८] विना कारण छे महीना पहली संप्रदाय बदले तो. (९) एक महीनेमें तीन बडी नदी उतरे तो (१०) एक महीनेमें तीनवार कपट करे तो (११) संज्जांतर [मकान की आज्ञा देनेवाला] के घरका आहार भोगवे तो (१२-१४) आकुटी (जाणके) हिंसा करे, झूट-

बोले, चोरि करे तो. (१५) सचित पृथ्वीपे बैठे तो. (१६) सचित रजसे भरे हुये पाट पाटले भोगवे तो (१७) सडे पाट की जिस्में जनावरोंके अण्डे उत्पन्न हुये हैं, उन्को भोगवे तो. (१८) कंद (जड) खंध (उ-परकी लकडी) त्वचा (छाल), प्रवाल (कूंपल) पत्रे फूल, बीज, हरी, यह १० कच्ची वनस्पति भोगवे तो (१९) एक वर्षमें दश वक्त नदी उतरे तो. (२०) एक वर्षमें दश वक्त दगा करे तो (२१) सचित पाणीसे, हरीसे या किसी भी सचित पदार्थसे भरे हुये भोजनसे आहार पाणी प्रमुख लेवे तो 'सबला दोष' लगे. 'सबला दोष' उसे कहते हैं, जैसे नि-र्बल मनुष्य पे बहुत बोजा पडनेसे वो मरजाता है, तैसे ये २१ काम करनेसे संयमका नाश होता है. यह २० असमाधि और २१ सबल दोष दशा श्रुत स्कंध सूत्रके १–२ अध्यायमें हैं.

३२ बत्तीसयोग संग्रह.

(१) जो दोष लगा होय सो तुर्त गुरुके आगे कहदे. (२) शिष्यका दोष गुरु दूसरेके आगे प्रकाशे नहीं. (३) कष्ट पडे धर्ममें द्रढ रहे. [४] तपस्या करके इसलोकके [यश महिमादिक] और

परलोकके [देवपद राज्यपदादिक] सुखकी वांच्छा करे नहीं. [५] असेवन [ज्ञानाभ्यास संबंधी] ग्रहना [आचार गोचार संबंधी] शिक्षा (शिखामण) कोइ देवे तो हितकारी माने. [६] सरीरकी सोभा विभूषा नहीं करे. (७) गुप्त तप करे (गृहस्थको मालम न पडने देवे) तथा लोभ नहीं करे. (८) जिन २ कुलमें भिक्षा लेनेकी भगवंतकी आज्ञा है उन सब कुलोंमें गोचरी [भिक्षा लेने] जावे. (९) परिसह उत्पन्न हुये चडते प्रणामसे सहन करे; क्रोध न करे. [१०] सदा सरळ–निष्कपटपणे प्रवर्तें. [११] संयम [आत्मदमन] करता रहै. (१२) समकित (शुद्ध श्रद्धा) युक्त रहै. [१३] चित्तको स्थिर रक्खे. (१४) ज्ञानाचार–दर्शनाचार–चारित्राचार–तपाचार–विर्याचार, इन पंचाचार युक्त प्रवर्तें. (१५) विनय (नम्रता) सहित प्रवर्तें. (१६) तप–जप–क्रियानुष्ठानमें सदा वीर्य–पराक्रम फोरता रहे. (१७) सदा वैराग्य सहित रहैं. [१८] आत्मगुण (ज्ञान दर्शन चारित्र) को निध्यान (द्रव्यके खजाना) जैसा बंदोवस्त करके रक्खे. (१९) पासथ्था [दिला–सिथिल] के परिणाम न लावे; सदा वर्ध-

मान परिणामी रहैं. (२०) उपदेशद्वारा या प्रवृत्ति-द्वारा सदा सम्बरकी पुष्टी करे. (२१) अपनी आत्माके जो जो दुर्गुण द्रष्टी आवे उन्को टालने (निकालने)का उपाय करता रहै. (२२) काम (शब्द—रुप) भोग (गंध—रस—स्पर्श) का संजोग मिले लुब्ध न होवे. (२३) नित्य यथाशक्ति नियम अभिग्रह त्याग वैराग्यकी वृद्धि करते रहैं. (२४) उपधी [वस्त्र—पात्र—सूत्र—शिष्य इत्यादिकका] अहंकार—अभिमान नहीं करे. [२५] पांच प्रमाद (१) मद [जातिमदादि आठमद] (२) विषय (पांच इंद्रीका २३ विषय २४० या २५२ विकार) [३] कषाय (क्रोधादि कषायके ५२०० भांगे) [४] निंद्रा—नींद कमी लेवे. (५) विकथा (स्त्रीकी—राजाकी—देशकी—भोजनकी ए ४ प्रकारकी कथा नहीं करे.) यह पांचही प्रमादको सदा बर्जे. [२६] थोडा बोले और कालोकाल क्रिया करे. (२७) आर्त और रौद्र ध्यान वर्जके धर्म और शुक्लध्यान ध्यावे. (२८) मन—वचन—काया सदा शुभ काममें प्रवर्तावे. [२९] मरणांतिक वेदना प्राप्त हुये भी प्रणाम स्थिर रक्खे. (३०) सर्व संगका त्याग करे. [३१]

सदा आलोयणा—निंदणा [गुरु आगे गुप्त पाप प्रकाशके अपनी आत्माकी निंदा करे. (३२) अंत अवसर जाण संथारो करे, आहार और शरीरका त्याग कर समाधि भावसे देहोत्सर्ग करे.

यह ३२ बातोंको योगी (साधू) को संग्रह (हृदयमें संग्रह कर रखनेका) और यथा शक्ति इस्में प्रवृत्ति करनेका उद्यम करना. (श्री समवायांग सूत्र इत्यादिक अनेक साधूके गुण और क्रियाका शास्त्रमें वर्णव हैं, सो संपूर्ण गुण जिन्की आत्मामें पावे उसे यथाख्यात् चारित्र कहा जाता है. इस कालमें संपूर्ण गुण मिलने मूशकल है, तो यों नहीं जाणना कि पांचमे आरेमें साधू है ही नहीं. इस्का समाधान करनेको शास्त्रमें छे प्रकारके नियंटे (निग्रंथ) कहे हैं. निग्रंथ उन्को कहे जाते हैं जो द्रव्ये तो द्रव्य (परिग्रह) की गांठ बांधनेसे निवर्तें और भावे आठ कर्म रागद्वेष मोह मिथ्यात्वका नाश करे, सो निग्रंथ.

१ पोलाक नियंठा—जैसे साल गहु प्रमुखका खेत काटके उस्के पूलेका ढग कीया, उस्में दाणे थोडे और कचरा बहुत तैसे पुलाक निग्रंथमें गुण थोडे और दुर्गण बहुत. इस्के दो भेद (१) लब्धी पोलाक

सो किसीने जबर अपराध कीया तब क्रोधातुर होके पोलाक लब्धिसे चक्रवर्तीकी सैन्यको जला डाले. उस वक्त पोलाक निग्रंथ कहना (२) असेवना पोलाक, सो ज्ञान—दर्शन—चारित्रकी विराधना करे यह इस वखत नहीं है.

(२) " बुकस नियंठा "—जैसे उस धानके पूले मेंसे घास निकालके दुर डाल दीया और ऊबीयोंका ढगला कीया. उस्मेंसे बहुत कचरा कम हुवा तो भी दाणे थोडे और कचरा बहुत. तैसे ' बुकस निग्रंथ. ' इस्के दो भेद (१) ' उपगरण बुकस ' वस्त्रपात्र जास्ती रखे, खारादिकसे धोवे. (२) ' सरीर बुकस ' हाथ पग धोवे, केश नख सभारे, सरीरकी विभूषा करे, परं कर्म खपाणेका उद्यम करे.

(३) " कषाय कुशील नियंठा "—जैसे ऊंबीके ढगलेमेंसे मट्टी कचरा निकालके खलेमें बेलके पगोंसे खुंदा कर दाणे छूटे कीये, तब दाणे और कचरा बरोबरीके अंदाजसे रहें; तैसे कषाय कुशील निग्रंथ संयमपाले, ज्ञानका अभ्यास करे, तपस्या यथा शक्ति करे, और भी क्रियाकी वृद्धि करे. परंतू कभी २ किंचित् कषायका उदय होय. ज्ञान करके दबावे तो भी

अंतसमें प्रजले. किसीका कटुक वाक्य या निंदा श्रवणकर क्रोध आवे, ऐसे ही ज्ञान क्रिया तपादिककी महीमा सुण अभिमान भी आजावे. ऐसेही क्रिया करनेमें या वादीयोंका पराजय करनेमें माया कपट भी करे. ऐसेही शिष्य सूत्रकी वृद्धिका लोभ भी करे. यह ४ ही कषाय थोडीसी आती है, तो भी आत्माकी निंदा कर तुर्त निःशल्य हो जावे.

४ " प्रति सेवना नियंठा "—जैसे उस खलेमें डाले हुये ढगको वायूसे उडाके, कचरा निकाल शुद्ध किया उस्में दाणे बहुत और कचरा थोडा, ऐसे ही प्रती सेवना निर्ग्रंथ मूल गुण पांच महाव्रत रात्रीभोजन इन्में किंचित् ही दोष न लगावे. परंतु दश पच्चखाणादिक उत्तर गुणमें सून्य उपयोगसे किंचित् दोष लगे, उस्की खबर पडे प्रायच्छित ले शुद्ध होवे.

५ " निर्ग्रंथ नियंठा "—शुद्ध किये दाणेको बीछाके हाथसे उस्मेका सर्व कंकर कचरा निकाल विशेष शुद्ध किये, तैसे निर्ग्रंथके दो भेद [१] ' उपसम कषायी ' जैसे अग्नीको राखके नीचे छीपाते है, तैसे क्रोधादि कषायको ज्ञानादि गुण में छीपा देवे. परंतु उस्का पीछा प्रगटनेका स्वभाव है. (२)

"क्षिणकषायी"—जैसे अग्नीको पाणीसे सींचके शीतल कर देते है, तैसे कषाय रहित शांत आत्मा जिन्की हुइ, इन्के मूल गुण उत्तर गुणमें किंचित् दोष नही लगे, फक्त किसीको अंतसमें संज्वलका लोभ किंचित् मात्र रहता है, और सर्व शुद्ध है.

६ "स्नातक नियंठा"—जैसे वो दाणे पाणीसे धोके शुद्ध वस्त्रसे पूछके साफ कीये रज मेल करके रहित अति शुद्ध पवित्र निर्मल हुये, तैसे ही स्नातक निग्रंथ चार घनघातिक कर्म रहित शुक्ल ध्यानके तीसरे चोथे पाये अवलंबी यथाख्यात चारित्री तिर्थंकर भगवान तथा तिर्थंकर भगवान जैसे ही केवली भगवान जाणना.

इन छे नियंठेमेंसे इस पंचम कालमें १—४—५—६ इन चार नियंठेका तो निषेध है, फक्त दुसरा बुकस और तीसरा कषायकुशीलीये दोही नीयंठे पाते हैं. ऐसा जाण साधूकी हीणाधिक ज्ञान क्रिया देख पक्षपात राग द्वेषकी वृद्धि नही करना. यथातथ्य गुणकी पेछाण करनी. जो एक रुपेकी कीमतका भी हीरा होता है और लाख रुपेकी कीमतका भी होता है. एक रुपे वालेको कांच नही

काहा जाता है. कांच तो वोही है की जिस्में संयमके गुण किंचित् मात्र नहीं है. सो पंच प्रकारके साधू अवंदनीय है.

" पांच प्रकारके साधू अवंदनिय. "

१ 'पासत्था' २ 'उसन्ना' ३ 'कुशीलीया' ४ 'संसत्ता' ५ "अहच्छंदा".

१ पासत्थेके दो भेद (१) 'सर्वव्रत पासत्था.' सो ज्ञान—दर्शन—चारित्रसे भृष्ट, फक्त भेष मात्र; बहुरुपी जैसा. (२) 'देशव्रत पासत्था' छिन्नू दोष युक्त आहार ले, लोच नहीं करे.

२ 'उसन्ना' के दो भेद (१) 'सर्व उसन्ना' साधू के निमित्त निपजाये हुये स्थानक—पाट भोगवे. [२] "देश उसन्ना" दो वक्त प्रतिक्रमणा—पडिलेहणा—भिक्षाचारी न करे तथा स्थानक छोड घरोघर फिरता फिरे, अयोग्य ठीकाणे गृहस्थके घरमें बिना कारण बैठे.

३ 'कुशीलीया' के ३ भेद. (१) 'नाण कुशीलीया,' ज्ञानके आठ अतिचार (२) 'दंशण कुशीलीया,' सम्यक्त्व के ८ अतिचार. (३) 'चारित्र कुशीलीया' चारित्र के ८ अतिचारः यों २४

अतिचार लगावे. (इन्का अधिकार तीसरे प्रकरणमें पंचाचारमें लीखा है.) तथा ७ कर्म करे. १ 'कौतुक कर्म,' औषध उपचार करे, सौभाग्य नीमित्ते स्त्रीको स्नानादिक करावे. २ 'भूत कर्म' भूत पलितके ज्वरादिकके मंत्र करे–डोरे बांधे. ३ 'प्रश्नकर्म' रमल–शकुनावली इत्यादिकके योगसे प्रश्नका उत्तर देवे, लाभालाभ बतावे. ४ 'निमित्तकर्म' ज्योतिष निमित्त भूत भविष्य वर्तमानका वृत्तांत कहे. ५ 'आजीविका कर्म'–इस्के ७ भेद [१] जात जणाके, (२) कुल जणाके, (३) शिल्प (कला) जणाके. (४) कर्म जणाके, [५] वेपार जणाके, [६] गुण जणाके, (७) सूत्र जणाके, यह ७ गुण बताके आजीविका करे. ६ 'कल्क कुरुकर्म' माया–कपट करे, दंभ करे, ढोंग करे, लोकोंको डरावे. ७ 'लक्षण कर्म' स्त्री पुरुषके हस्त पादादिकके लक्षण, तिल, मस प्रमुखके गुण बतावे. ये ७ कर्म करे सो कुशीलीये.

४ "संसत्ता" जैसे गायके बाटेमें अच्छा बूरा सब भेला करदेवे तैसे उस्की आत्मामें गुण अवगुण सडबड हुये. उसे अपने गुण अवगुणकी कुच्छ खबर नहीं. देखादेखी भेष लेलीया, पेट भराइ करे, तथा सर्व मतसे–पासत्थादिकसे मिला रहे. भिन्न

भेद कुच्छ नहीं जाने इस्के दो भेद (१) संक्लीष्ट (क्लेशयुक्त), (२) असंक्लीष्ट (क्लेश रहित.)

५ "अहच्छंदा" (अपच्छंदा) गुरुकी-तिर्थंकरकी-शास्त्रकी आज्ञाका भंगकर फक्त अपने इच्छानुसार चले; ऋद्धिका, रसका, साताका यह तीनही गर्व करे; उत्सूत्र मनमाना परुपे, सो अपच्छंदा. *

* इस कालमें इत्नी फाट फूट होनेका कारण, संवत्सरी जैसे मोटे धर्म पर्वमें भंग पडनेका कारण और अपने धर्मको लजावे ऐसे होनेका कारण मेरेकुतो, यह अपच्छंदेको वंदना व्यवहार करना, गुरुआदिककी निंदा करे जिन्के हुकममें चलना, थोडासा ज्ञान या क्रियाका गुण देख उस्में लुब्ध होना, इत्यादिक ही दिखते है. जिसने गुरुकी आज्ञाका भंग कीया, स्व इच्छाचारी हुवे, उन्को कोइ सत्कार न देवे तो वो जो भली आत्माके धणी होवे जो आपसे ही ठीकाणे आ-जावे. और नही आवे तो उन्की आत्मासे जावे. परंतू धर्मकी तो फूट फजीती निंदा न होवे. इस लिये पाठक गणोंको संपके लिये यह एक बात जरुर ध्यानमें लेनी चाहिये.

इन पांच ही प्रकारके साधूका सत्कार सन्मान करना योग्य नहीं अपने सनातन सत्य धर्ममें गुण की पूजा है, इस लिये गुरुकी परीक्षा जरुर करना चाहिये.

॥ दुहा ॥ ईर्या, भाषा, एषणा, ओलखजो आचार;
गुण वंत साधू देखके, वंदो वारंवार.

....

" साधूजीकी ३२ उपमा "

१ " कांसी पत्र इव "—जैसे कांसीके कटोरमें पाणी भेदाय नहीं, तैसे मुनी मोह मायासे भेदाय नहीं. २ ' संख इव ' जैसे संख रंगाय नही, त्यों मुनी स्नेहसे रंगाय नही. ३ " जीव गइ इव " जैसे जीव परभवमें जावे उस्की गतिका कोइ भंग कर सके नहीं, तैसे मुनी अप्रतीबंध विहारी होते हैं. ४ " सुवण इव " जैसे सोनेकों काट (कीट) लगे नहीं, तैसे साधूकों पाप रुप काट लगे नहीं. ५ " भिंग इव " जैसे आरीसे (कांच) में रुप देखाय, तैसे साधू ज्ञान करके निज आत्मरुप देखे. ६ " कुम्मो इव " जैसे किसी वनके सरोवरमें बहुत काछबे रहते थें, वो आहार करनेकु बाहिर आते तब वनवासी बहुत जंबुक (सीयाल) उन्को भक्ष करने

आतेथे, तब कित्नेक काछबे तो ढाल नीचे अपने पांच ही अंग (चार पग, पांचमा सिर) दबा लेतेथे, जो हुस्यार थे वो तो सर्व रात्री अपनी ढालके नीचे स्थिर रहतेथे, और कित्नेक पांच अंगमेंका एक बाहिर नि- कालके देखते की जंबुक गये क्या ? उत्नेमें ही वो छीपे हुये पापी सीयालें उस्का अंग तोड उसे मार खा जातेथे. और जो स्थिर रहते वो दिन उदय भये सीयाले गये पीछे अपने ठिकाणे—सरोवरमें जाकर सुखी होतेथे. इसी तराह साधू पांच इंद्रीको ज्ञान ढाल नीचे, जीवे वांहा तक, दाब रख्खे; स्त्रीयादि भोगरुप सीयालेके तावेमें नहीं पडे, और आयुष्य पूर्ण करके मोक्षरुप सरोवर प्राप्त करे. ७ " पद्म कमल इव "

गाथाः—जहा पउमे जलो जायं। नोव लिप्पइ वारीणं ॥
एवं अलिप्प कामेयं । तं बूय बुम माहाणं ॥

जैसे पद्म कमल कीचडमें उत्पन्न हो जलमें वृद्धि पाके पीछा पाणीसे लेपाय नहीं, तैसे साधू संसारमें पैदा हो पीछे संसारके भोगमें लिपाय नहीं. ८ ' गगणइव ' जैसे आकाशको स्थंभ नहीं, निरा- धार ठेहरा है, तैसे साधू किसीका आश्रय इच्छे नहीं. ९ " वायूइव " हवा एक ठीकाणे रहे नहीं, तैसे साधू

भी सदा फिरते रहैं. १० 'चंद इव' चंद्रमा जैसे सदा नीर्मल हृदयके धरणहार. ११ "आइच्च इव" जैसे सूर्य अन्धकारका नाश करे तैसे साधू मिथ्यांधकारका नाश करे. १२ 'समुद्‌इव' जैसे समुद्रमें अनेक नदीयोंका पाणी जाता है तो भी झलकता नही है तैसे साधू, सबके शुभाशुभ वचन सहे, परंतु कोप न करे. १३ 'भारंड इव' भारंड पक्षीके दो मुख और तीन पग होते हैं, वो सदा आकाशमें रहता है, फक्त आहार निमित्त पृथ्वीपे आता है तब पांखों फेलाके बैठता है, और एक मुखसे चारही तर्फ देखता है कि रखे मुजे किसी तर्फसे उपसर्ग हो! और दुसरे मुखसे आहार करते है. थोडी भी संका पडनेसे तुर्त उड जाते है. तैसेही साधू सदा संयममें रहै. फक्त आहार प्रमुख निमित्ते गृहस्थके घरको जावे तब द्रव्य द्रष्टि तो आहारके सन्मुख और अंतर्द्रष्टिसे अवलोकन करता रहे कि, रखे मुझे किसी प्रकारका दोष लग जाय. जो किंचित् ही दोष लगने जैसा देखे तो तुर्त वांहासे चल जावे. १४ "मंदर इव" जैसे मेरु हवासे कंपाय मान न होवे तैसे साधू परिसह उपसर्गसे चलायमान न होवे. १५ "तोषइव" जैसे

सरद् ऋतूका पाणी निर्मल रहे तैसे साधूका हृदय सदा निर्मल रहै. १६ "खड्गीहत्थी इव" जैसे गेंठा हात्थाके एकही दांत रहता है उससे वो सबका पराजय करता है, तैसे साधू एक निश्चय नयमें स्थिर हो कर सर्व शत्रुओंका पराजय करते हैं. १७ "गंधत्थीइव" जैसे गंध हस्थीको संग्राममें ज्यों ज्यों भालेका प्रहार लगता है त्यों त्यों जास्ती २ सूरा होके शत्रूका पराजय करता है तैसे साधूपे ज्यों ज्यों परिसह पडे त्यों त्यों सूरा होके कर्म शत्रूका पराजय करे. १८ "वृषभ इव" जैसे मारवाडका धोरी बेल लीया हुवा प्राण जाते भी भार बीचमें डाले नही तैसे साधू पांच महाव्रत रुप महा भार प्राण जाते भी जींवे वांहा तक फेंक डाले नहीं. १९ "सिंह इव" जैसे केसरी सिंह किसी पशूका डराया डरे नहीं, तैसे साधू किसी पाखंडीयोंसे चलायमान होवे नहीं. २० "पुढवी इव" जैसे पृथ्वी शीत उष्ण अच्छा बूरा समभाव सहन करे तथा पूजनेवाले और खोदनेवालेकी तर्फ समभाव रक्खे, तैसे साधू शत्रु मित्रपे समभाव रक्खे, निंदक वंदकको एकसा उपदेश करके तारे २१. "वन्ही इव" घृतके सीं-

चनेसे अग्नी जैसी दिप्य होती है तैसे साधू ज्ञानादि गुण करके दिप्त होवे. २२ " गौशीष चंदणे इव " जैसे चंदण काटे तथा जलावे उसे जास्ती सुगंध देवे, तैसे साधू परिसह उपसर्ग उपजाणेवालेको अपना कर्म काटनेवाला जाण समभाव उपसर्ग सहन करे, फिर उसेही उपदेश देकर तारे. २३ " द्रह इव " द्रह चार प्रकारके [१] केसरी प्रमुख वर्षधर पर्वतकी द्रहमेंसे पाणी निकलता है परंतू बाहिरका पाणी उस्में आता नहीं है; तैसे कोइ साधू दूसरेको ज्ञान सिखाते हैं, परंतू आप दूसरेके पास सीखते नहीं है. (२) समुद्रमें पाणी आता है परंतू निकलता नहीं है; तैसे कित्नेक साधू दूसरेके पास ज्ञान सीखते हैं, परंतू सीखाते नहीं हैं. (३) गंगा प्रापात कुंड प्रमुखमें पाणी आता भी है और जाता भी है; तैसे कित्नेक साधू ज्ञान पढते हैं और पढाते भी हैं (४) अढाइ द्विपके बाहिरके समुद्रमें पाणी आता भी नहीं है और निकलता भी नहीं है; तैसे कित्नेक साधू पढते भी नहीं है और पढाते भी नही हैं. तथा जैसे द्रहका पाणी अखूट होता है, तैसे साधू भी अखूट ज्ञानके धरणहार होते हैं. २४ 'खिल्लीइव' जैसे खूंटा

ठोकते एकही दिशामें प्रवेस करे, तैसे साधू एकांत मोक्ष मार्गके सन्मुख होके प्रवर्ते. २५ "सुन्यगेहइव" जैसे गृहस्थ सूने घरकी संभाल नहीं करे, तैसे साधू सरीरकी संभाल नही करे. २६ "दीवेइव" जैसे समुद्रमें पडे हुये प्राणीको द्वीप (बेट)का आधार होता हैं, तैसेही संसार समुद्रमें पडे हुये प्राणीकों त्रसस्थावर सब जीवोंको साधू आधारभूत अनाथोंके नाथ है. २७ "शस्त्रधारइव" जैसे पासणे शस्त्रकी धार एकही दिशा विघ्न निवारके आगे बढती है तैसे साधू कर्म शत्रूका निकंदन करते एकांत आत्म-कल्याणके मार्गमें चलते हैं. २८ 'सप्पइव' जैसे सर्प कांटेसे डरे तैसे साधू कर्मबंधके कारणसे डरे. २९ "सकुणइव" जैसे पक्षी रातको वासी न रक्खे तैसे साधू चारही आहार रातकों पास न रक्खे. ३० "मिग्गइव" जैसे मृग नित्य नवेस्थान भोगवे, शंकाके ठिकाणे विश्वास न करे, तैसे साधू अनित्य विहारी रहे, और शंकाके ठीकाणे किंचित् ही विश्वास नहीं करे. ३१ 'कठइव' जैसे लकड, काटनेवाले और पूजनेवाले दोनोको सम जाने तैसे साधू शत्रु मित्रको सम जाणे. ३२ 'स्फटिक रयणइव' जैसे

स्फाटिक रत्न बाहिर भीतर एकसा निर्मल तैसे साधू बाह्य अभ्यंतर सरीखी वृत्ति रक्खे, कपट क्रिया न करे. ऐसी और भी अनेक उत्तम पदार्थोंकी उपमा साधूको दी जाती हैं; जैसे पारसमणी, चिंतामणी, काम कूंभ, कल्पवृक्ष, चित्रवेली, इत्यादि पदार्थ जिस्के पास होय उस्का मनोर्थ पूर्ण करे तैसे साधूजी भी भव्यजीवोंको ज्ञानादि गुण देके उन्के मनोर्थ सिद्ध करे. जैसे बिन छिद्रकी झाझमें जो बैठे उस्को वो पार पोंहोंचाती है, तैसे जो साधू कनक कान्ता रुप छीद्र करके रहित हैं वो उन्के आश्रीतोंको संसार समुद्रके पार करते हैं. जैसे फलित झाडको पत्थर मारनेसे वो फल देता है तैसे साधू अपकारियोंपे ही उपकार करते हैं. इ-त्यादि अनेक उपमा दी जाती है. इत्यादि अनेक शुभ उपमा युक्त, आत्मार्थी, लुखवर्ती, महापंडित, धर्म मंडित, सूर—वीर—धीर, सम—दम—यम—उपसम-वंत, अनेक तपके करनहार, अनेक आसनके सा-धणहार, संसारको पीठ देकर मोक्षके सन्मुख हुये, सर्व जीवोंके हितार्थी, अनेकानेक गुणके धारी, सा-धूजी महाराजको मेरा नमस्कार हो !

नमो अरिहंताणं। नमो सिद्धाणं। नमो आय-

रियाणं । नमो उवज्झायाणं । नमो लोए* सव्व साहूणं ॥ इति नमस्कार महामंत्र ॥

ये पंच परमेष्ठीके सर्व मिलकर १०८ गुण हैं, इस लिये मालाके मणके भी १०८ होते हैं.

श्लोक (शार्दूलविक्रिडित वृतम्.)

अर्हंतो भगवन्त इंद्र महिताः सिद्धाश्च सिद्धिस्थिताः
आचार्या जिनशासनोन्नतिकराः पूज्या उपाध्यायकाः।
श्री सिद्धान्त सुपाठका मुनीवरा रत्नत्रयाराधकाः
पंचैते परमेष्टीनः प्रतिदिनं कुर्वन्तु वो मंगलम् ॥

॥ इति परमपूज्य न्यायांभोनिधि स्याद्वादप्रदर्शक श्री श्री १००८ श्री कहानजी ऋषिजीके संप्रदायके क्रियापात्र ज्ञाननिधि श्री श्री १००८ श्री खुवा ऋषिजीके शिष्य आर्य मुनी श्री श्री १००८ श्री चेना ऋषिजीके शिष्य बाल ब्रह्मचारी पंडीत मुनीवर श्री अमोलख ऋषिजी विरचीत " जैनतत्वप्रकाश " नामक ग्रंथका " साधुजी " नामक पंचम प्रकरण और—

प्रथम खण्ड समाप्तम्.

---

*इस पांचमे पदमें 'लोए' शब्द कहा है, इस्का हेतुः—१ जंघा चारण, विद्या चारण ऋषि लब्धीके प्रभावसे बाहीर जाते हैं. तथा साधुका देवता सहारण (उठाके) अढाइ द्विपके बाहीर रख देवे. तथा साधु शब्दमें केवली भगवंत और साध्वी भी आजाती है.

द्वितीय खंडम्.

प्रवेशिका.

इस "जैनतत्व प्रकाश" नामक ग्रंथके पहले खंडमें श्री पंचपरमेष्ठीका कथन और बिच २ में बहोत ही विवेचन और उपदेश संपूर्ण करके अब दुसरे खंडका आरंभ किया जाता है. दुसरे खंडमें धर्मकी प्राप्ति, साधु धर्म, श्रावक धर्म, मिथ्यात्व, इत्यादिका विवेचन किया जायगा. पहले खंडको लक्ष पूर्वक पढने वाले सभ्यों को मेरी अरज है कि दुसरा खंड भी दत्तचित्त होकर पढना, जिससे अकथ्य आत्मिक लाभ अवश्य मिलेगा. मैने जो शुद्ध धर्म गुरुकृपासे प्राप्त किया है उसका उपदेश अन्य भव्यों-को करके मेरा दान धर्म बराबर बजाना ये मेरा कर्त्तव्य है, इसमें जो कुच्छ दोष सरतचूकसे होजावे तो में ज्ञानी समक्ष क्षमा चाहता हूं.
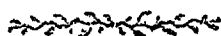
प्रकरण १ ला.

धर्मकी प्राप्ति.

लभ्भंती विउला भोए, लभ्भंती सुर संपया ।
लभ्भंती पुत्त मित्तं च, एगो धम्मो दुलभ्भइ ॥

इस जगतमें रहे हुये तमाम (सर्व) जीवोंको एकांत सुखकी अभिलाषा हैं. सो यह अभिलाष पूर्ण करनेवाला इस विश्वमें एक धर्म ही हैं. दूसरा कोइ नही हैं. क्योंकी जो कोइ दूसरा होय तो यह प्राणी इत्ने काल दुःखी नही रहता. देखीये, इस्को पहली अनंती वक्त विपुल-विस्तीर्ण देवता या मनुष्य संबंधी उत्तमोत्तम पंच इन्द्रीके विलास भोग मिलगये. तथा सुर (देवता) जैसी संपदा (रिद्धी) रत्नोंके महलात वस्त्राभूषण भी मिलगये; मित्र जो पुत्र तथा स्वजन स्नेहीसें सुख होता होय तो वो भी अनंती वक्त मिलगये. शास्त्रमें कहा है कि—

नसा जाइ नसा जोणी, न तं कुलं न तं ठाणं ।
न जाया न मूवा जत्थ सव्वे जीवा अणंत सो ॥

ऐसी कोइ इस जगतमें जाती जोणी. कुल स्थान नही है की जिस जगह यह जीव जन्मा और मरा न होय अर्थात् सर्व जाती जोणी कुल स्थानमें ये अपना जीव अनंती वक्त उपज आया. इस जगतमें जित्ने जीव हैं उन सबके साथ जित्ने जगतमें संबंध (माता पिता भाइ भगिनी स्त्री पुत्र इत्यादिके) हैं सो एकेक नाता अनंत २ वक्त कर आया; कोइ+ भी जीव बाकी रहा नही. परंतू कोइ भी इस्की इच्छा पूर्ण कर सके नही. इस जीवकों इच्छित अखंड सुख दे सके नही. यह सबको छोड आया; कित्नीक वक्त अपने लिये उन स्वजनोंको रोना हुआ था और कित्नीक वक्त उनके वियोगसे अपनेको रोना हुवा था. जो यह वस्तू अखंड सुख देती तो दुःखी होनेका सबब ही क्या? श्री उत्तराध्ययनजीमें कहा है किः—

माया पिया न्हुसा भाया, भज्जा पुत्ताय उरसा ।
नाल ते तव ताणाये, लुप्पंती सस कम्मुणा ॥

+यह व्यवहारिक बचन है. जैसे "मैं सर्व मुम्बाइ देख आया" परंतू सब नही देखी तैसे ही अव्यहार रासीमें से तुर्त निकले हुये जीवोंसे ये संबंध नहीं मिलता है.

माता, पिता, पुत्रकी स्त्री, भाई, भार्या पुत्र इत्यादि संबंधी नही निश्चे तुझको तारण—सरण (सुखके दाता) हैं. क्यों कि वो बेचारे अपने कर्मोसे आप ही पीडा (दुःख) पा (भोगवे) रह हैं. तो तेरेकों कांहांसे सुखी करे? ऐसा जाण हे भव्यो! सत्य समजो कि इस विश्वमें तुमारा हित—सुखका कर्त्ता एक धर्म ही है. परं "ऐगो धम्मो दुल्भ्भइ" ऐसा सुखदाता धर्म मिलना बहुत ही मुशकील हैं. क्यों कि प्रत्यक्ष ही दिखा जाता है कि इस जगतमें उत्तम गिनी जाती वस्तू (सुवर्ण रत्न आदि) बहुत कमी द्रष्टी आती हैं. तो परम सुखका दाता 'धर्म' तो सहज हाथ कहांसे लगे? अब सुणीये, धर्म कित्नी मुशीबतसे प्राप्त होता है सो.

"अदुवा अणंत खुत्तो"× अथवा अनंती वक्त सब जीव संसारमें खुते (रुले—भमे) इस अदुवा (अथवा) शब्द उपरसे ऐसा निश्चय होता है की यह जीव इतर निगोद—अव्यवहार रासी (जिस्मेंसे अबी-तक बहुत जीव एकेंद्रीपणा छोड बेंद्री ही नही हुये)

× यह पाठ भगवतीजीमें तथा जंबूद्वीप प्रज्ञप्तीकें छेल्ले पत्रमें है.

में अव्वल था, वांहा इसने अनंत काल गमा दिया. अकाम (मन बिन) निर्जरा (सीत ताप क्षुधादि सहे) से कुच्छ कर्म पतले हुये, तब यह जीव व्यवहार रासीमें आया " अणंत खुत्तो " अनंत पुदगल परावर्तन कीये.

पुद्गल परावर्तन.

यह जीव आठ प्रकारसे पुद्गल परावर्त्तन करता है. द्रव्यसे, क्षेत्रसे कालसे, और भावसें; इन एकेक के दो भेदः—बादर और सूक्ष्म; ऐसे ८ भेद.

१ द्रव्यसे बादर पुद्गल परावर्तन करती बक्त (१)जीव उदारिक सरीर की जो हाडमांस चर्मका पूतला मनुष्य तिर्यंचका हैं, (२) वैक्रिय सरीर की जो अन्य श्रेष्ट नष्ट पुद्गलोंका पूतला, नर्क देवताके हैं, ‡

‡ ह्यां तीसरा आहारिक सरीर नहीं लीया. क्योंकी वो तो फक्त चौदे पूर्वधारी मुनीराजको निर्मल तपके प्रभावसे आहारिक लब्धी प्राप्त होती है. उन्के मनमें किसी प्रकारका संसय उपजे तब आहारिक समुद्घात कर सरीरमेंसे आत्मप्रदेशका पूतला निकाल जांहा केवल ज्ञानी होवे वहां भेजे (ये ४५ लाख योजन जा सक्ता हैं) वो पूतला उत्तर ले के क्षणमें

(३) तेजस सरीर जो अंदर रहके कीये आहारको प-चावे, (४) कारमण सरीरकी जो सरीरमें यथा योग्य ठिकाणे किया हुवा आहार प्रगमावे (पहोंचावे) यह चार सरीर लेना और वचनका कायाका जोग और ७ मा श्वासोश्वास यह सात बोलके जित्ने पु-द्गल इस लोकमें हैं उन सर्वको यह जीव फरसे सो द्रव्यसे बादर पुद्गल परावर्तन.

२ द्रव्यसे सुक्ष्म पुद्गल परावर्तन सो—पूर्वोक्त सात ही वस्तूके पुद्गलोंको अनुक्रमे फरसे, जैसे पहली उदारिक सरीरके पुद्गल इस जगतमें जित्ने है उन सर्वको फरसके फिर वैक्रियके फिर तेजसके यों सातूके अनुक्रमे फरसे और जो उदारिक के पुद्गल फरसता २ संपूर्ण बिन फरसे दूसरे वैक्रियादिक के पुद्गल फरस लेवे तो वो पहलेके फरसे हुये उदारि-कके पुद्गल गिनतीमें नही आवे. पीछा पहलेसे आखीर तक अनुक्रमे फरसके पूरा करेगा. ऐसे ही

आके सरीरमें समावे. मनका संसय मीटे. मुनी लब्धी फोडी उस्का प्रायश्चित ले शुद्ध होवे. फक्त इसी काममें आता हैं. जिससे नही लीया. तथा आहारिक सरीरवाले अनंत संसार नही भमे इससे नही लीया.

सातही एकेक पीछे एकेक फरसके पूरे करे उसे द्रव्यसे सुक्ष्म पुद्गल परावर्त्तन कहना.

३ क्षेत्रसे बादर पुद्गल परावर्त्तन, सो मेरु पर्वतसे सर्व दिशी वीदिशीयोंमें असंख्याते आकाश प्रदेशकी श्रेणी अलोक तक बन्धी हुइ हैं. उन सब श्रेणियोंके ठीकाणेको यह जीव उपजके भर आया, एक बालाग्र जित्नी जगा खाली न रखी. सो क्षेत्रसे बादर पुद्गल परावर्तन.

४ क्षेत्रसे सुक्ष्म पुद्गल परावर्तन सो, उन आकाश श्रेणीयोंमें की एक ही आकाश श्रेणि मेरु पर्वतके पाससे अनुक्रमे (बीचमें किंचित् ही छेटी नही छोडता) अलोक तक जन्म मर्ण करके भरे, फिर दूसरी आकाश प्रदेशकी श्रेणी, फिर तीसरी, यों अनुक्रमे असंख्याती आकाश श्रेणी फरसे, जो फरसता २ एक पूरी नही फरसी और उस ही प्रदेश पे तथा दूसरा प्रदेश पे जो भव कर लेवे तो वो गिणतीमें नही. पहली की फरसी हुइ सब व्यर्थ गइ पीछे अनुक्रमे पेहली दूसरी यों सब असंती श्रेणी जन्म मर्ण कर भरे सो क्षेत्रसें सूक्ष्म पुद्गल परावर्तन जानना.

५ कालसे बादर पुद्गल परावर्तन–१ समय (आंख मीच तुर्त उघाडले उस्में असंख्यात समय होते है. यह सबसे बारीक काल है) २ आवलि (अंगुलीकों शिघ्रतासे डोरा लपेटते एक आंट आवे सो एक आवलिका). ३ स्तोक (७ श्वाशोश्वासका १ स्तोक). ४ लव (शिघ्रतासे घांस काटे उस्की एक वक्त पिंडी लेवे सो एक लव) ५ मूहूर्त [दो कच्ची घडी]. ६ अहो रात्री (दिनरात). ७ पक्ष (पखवाडा). ८ मास (महिना). ९ ऋतू (वसंतादि). १० अयन (दक्षिणायन उत्तरायन). ११ संवत्सर (वर्ष). १२ युग (५ वर्षका १ युग). १३ पूर्व (७० लख ५६ हजार क्रोड वर्षका १ पूर्व). १४ पल्य (कूवे बालाग्र भरे उस द्रष्टांतसे १ पल्य). १५ सागर (दश क्रोडा क्रोड कूवे खाली होवे सो एक सागर) १६ सर्पिणी [सूलटे छे आरे १० क्रोडा क्रोड सागरके [१७ उत्सर्पिणी उलटे छे आरे उत्नेही] १८ कालचक्र (सर्पिणी उत्सर्पिणी मिलके वीस क्रोडा क्रोड सागरका) इन सर्वकालको जन्म मर्ण कर फरसे सो कालसे बादर पुद्गल परावर्तन.

६ कालसे सुक्ष्म पुद्गल परावर्तन –सो सम-

यसे लगा जावत् कालचक्र तप अनुक्रमे जन्म मरण कर फरसे, जैसे पहली सर्पिणी काल बेठा उस्के पहले समे जन्मके मरा पीछा दूसरी वक्त सर्पिणी बेठे, उस्के दूसरे समय जन्मके मरे, यों आवलिकाका काळ पूरा न होवे वांहा तक फिर सर्पिणी बेठे उसकी पहली आवलिकामें जन्म के मरे, यों स्तोक तक जाणना. ऐसे ही सर्व कालको अनुक्रमे जन्म मरण कर फरसे. सो कालसे सुक्ष्म पुद्गल परावर्तन.

७ भावसे बादर पुद्गल परावर्तन—सो काला, हरा, लाल, पीला, श्वेत, यह पांच वर्ण, सुगन्ध, दुर्गन्ध ये दो गंध, खट्टा, मीठा, तीखा, कडवा, खारा, ये पांच रस; हलका, भारी, ठंडा, ऊन्हा, लूखा, चोपडा, सुवाला, खरखरा, यह आठ फरसः इन बीसही बोल के पुद्गलों को सर्व फरसे सो भावसे बादर पुग्दल परावर्तन.

८ भावसे सुक्ष्म पुद्गल परावर्तन—पहले काले वर्ण के जित्ने पुद्गल है उन्को अनुक्रमे फरसे, जैसे पहले एक गुण काला जावत् अनंत गुण काला, ये फरस के फिर हरा, ऐसे ही, यों पंच वर्ण दो गंध फरस ८ फरस बीसही बोल अनुक्रमे फरसे;

काला वर्ण फरसता २ बिचमें दूसरे वर्ग गंधादिक के पुद्गल फरस ले तो वो गिणतीमें नहीं. सर्व पहले से छेले बीसमा बोलतक अनुक्रमे फरसे, उसे भावसे बादर पुद्गल परावर्त्तन कहना ॥

यह आठही बोल मिल के एक पुद्गलपरावर्तन हुवा. ऐसे अनंत पुद्गल परावर्तन इस जिवने इस संसारमें कीये हैं.

इस पुद्गल परावर्तनके सूक्ष्म ज्ञानमें दीर्घ द्रष्टि करके विचारीये कि, अपने इस जीवने इस संसारमें कित्ने परिभ्रमण जन्म मरण कीये हैं ! इत्ना परिभ्रमण करते जो अनंत भेद अनंत पुन्य का उदय होय तब सर्व परिभ्रमणका मिटाने वाला यह नरसरीर प्राप्त होता है. *

---

* सर्वसे सूक्ष्म 'काल' है. द्रष्टांतः—जैसे कोइ बहुत पानके ढगमें महापराक्रमी पुरुष जोरसे सूई गडावे वो एक पानको भेद दूसरेमें जावे. इत्नेमें असंख्यात समय वीत जावे. इससे क्षेत्र असंख्यात गुणा सूक्ष्म. एक अंगुल जित्ने क्षेत्रमें असंख्यात श्रेणी है. उस्मेंसे एक श्रेणी ग्रहण करनी सो एक अंगुलकी लंबी और एक आकाशप्रदेश जित्नी चौडी. उस्मेंसे एकेक समयमें

अब देखीये ! कित्ने पुन्यकी वृद्धि होवे तब मनुष्य जन्म मिलता है. प्रथम तो अवकाही निगोदमें अनंतकाल गमाया, वांहासे अनंत पुन्यकी वृद्धि हुइ तब व्यवहार रासीमें बादर एकेंद्रीपणे आया. इस बादर एकेंद्रीके पांच भेद हैं. (१) पृथ्वी

एकएक आकाशप्रदेश निकालते असंख्यात कालचक्र चला जाय तो भी वो आकाशप्रदेश खुटे नहीं. इससे द्रव्य अनंत गुणा सूक्ष्म. सो पहले कहे हुये एक ही आकाश प्रदेशपे अनंत परमाणु द्रव्य है. सो एकएक समयमें एक एक द्रव्य निकालते अनंत कालचक्रके समय वीत जाय, तो भीं एक आकाश प्रदेशके द्रव्य खुटे नहीं. इत्ने एक ही प्रदेश उपर द्रव्य है. ऐसे ही सर्व प्रदेश पे द्रव्य जानना. इससे अनंत गुणा भाव सूक्ष्म है. इस आकाश प्रदेशपे के अनंत द्रव्यमेंसे एक द्रव्य ग्रहण करना. उस द्रव्यकी अनंत पर्यव हैं. जैसें एक परमाणुमें एक वर्ण एक गंध एक रस और दो फरस हैं उस्मेंके एक वर्णके अनंत भेद होते हैं. जैसे एक गुण काला द्विगुण काला जावत् अनंत गुण काला. ऐसे ही पांच ही बोल जानना. ऐसे ही द्वीप्रदेशी खंधे पुद्गलोंमें दो वर्ण दो गंध दो रस चार स्पर्श ईन १०

काय (मट्टी) इस्की सात लाख जात और बारे लाख क्रोड कुल हैं. एकेक पृथ्वीके जिवोंका उत्कृष्ट बावीस हजार वर्षका आयुष्य है. (२) अपकाय (पाणी) की सात लाख जात और सात लाख क्रोड कुल हैं. अपकायका उत्कृष्ठ आयुष्य सात हजार वर्षका. (३)

ही बोलके अनंत भेद होते हैं. यों सर्व द्रव्य पर्यत्रके भेद करनेसे अनंत २ भेद होते हैं. उन एक पर्यव (पर्याय) का हरण करते अनंत कालचक्र वीत जाय, तब एक परमाणुके पर्यव पूरे होवे. ऐसे ही द्वीप्रदेशी, त्री प्रदेशी यावत् अनंत अनंत प्रदेशी स्कंधके अनंत पर्यव हैं. ये एक प्रदेशकी व्याख्या कही, ऐसे ही सर्व लोकके आकाश प्रदेशके वर्णादिकके पर्याय जाणना. ये एकेककी एकेकसे सूक्ष्मता बताई. द्रष्टांत:–काल चणे जैसा, क्षेत्र जवार जैसा, द्रव्य बाजरे जैसा, और भाव खसखसके दाणे जैसा. जात इसतराह कहते हैं. पृथ्वीकायकी ७ लाख जात सो इसतराह. पृथ्वीकी मूल प्रकार ३५० इस्को पांच वर्णसे पांचगुणे करते ३५०×५=१७५० ईनको दो गंधसे दो गुणे करते १७५०×२=३५०० ईन्को पांच रससे पांच गुणे करते ३५००×५=१७५०० ईन्को आठ स्पर्शसे ८ गुणे करते

तेउ काय (अग्नी) की सात लाख जात और तीन लाख क्रोड कुल. इस्का उत्कृष्ट आयुष्य तीन अहो रात्री (दिन रात्री) का. वाउ काय (हवा) की सात लाख जात और सात लाख क्रोड कुल उस्का उत्कृष्ट

१७५००×८=१४०००० इन्को पांच संठाणसे ५ गुणे करते १४००००×५=७०००००० यों ७ लाख जाती पृथ्वीकायकी जानना. ऐसे ही जिस्की जित्नी लाख जात होवे उस्का आधा सो मूल लेके उस्को पूर्वोक्त रीतसे गुणा करना. तो ८४ लाख जातका हिसाब जम जायगा. जिस्का वर्ण गंध रस स्पर्ष संठाण एक होवे उसे एक जात कहना. जाति माताका पक्ष जानना. (२) अब कुलकी रीती इस तराह कहते है कि जैसे भमरेकी जाती तो एक और एक भमरा पुष्पका, एक भमरा लक्कडका, एक गोबरका यों तीन कुल हो गये. ऐसे सब कुलकी संख्या ज्ञानीने फुरमाइ है सो सत्य जानना. (३) वनस्पतिकी. १० लाख जात तो प्रत्येक (एक कायामें एक जीव) वनस्पतिकी हैं. और १४ लाख सूक्ष्म–साधारण (एक शरीरमें असंख्याते व अनंते जीववाले) की है. यों दो मिलके २८ लाख जात होती हैं.

आयुष्य ३००० वर्षका. इन चार ही स्थावरोंमें अपने जीवने असंख्याती काल गमा दीया. ५ वनस्पति कायकी अठाइस लाख जात और अठाइस लाख क्रोड कुल, इस्का दश हजार वर्षका उत्कृष्ट आयुष्य, इसमें निगोद आश्री अनंत काल गमा दीया. ह्यांसे अनंत पुन्यकी वृद्धि हुइ तब एकेंद्रीका बेंद्री (काया और मुखवाले जीव कीडे प्रमुख) हुवा इस्की दो लाख जात और सात लाख क्रोड कुल हैं. इस्का उत्कृष्ट आयुष्य १२ वर्षका; ह्यांसे अनंत पुन्यकी वृद्धि हुइ तब तेंद्री (काया मुख और नाक वाला जीव कीडी षटमल) हुवा; इस्की दो लाख जात और आठ लाख क्रोड कुल; इस्का उत्कृष्ट आयुष्य ४९ दिनका; ह्यांसे अनंत पुन्यकी वृद्धि हुइ तब चौरिन्द्री (काय मुख नाक और आंखवाले जीव मक्खी बिच्छू प्रमुख) हुवा; इसकी दो लाख जात और नव लाख क्रोड कुल; इसका आयु ६ महिनेका. इन तीन विगलेन्द्रिसें संख्याता काल गमादीया.

ह्यांसे अनंत पुन्यकी वृद्धि हुइ तब असन्नी तिर्यंच पचेंद्री हुवा और ह्यांसे अनंत पुन्य वधे तब सन्नी तिर्यंच पचेंद्री हुवा. इन्की चार लाख जात और

इनके ५ भेदः—१ जलचर (पाणीमें रहनेवाले जीव, मच्छ कच्छ प्रमुख) इस्के १२॥ साडीबार लाख क्रोड कुल. इन दोनुका क्रोड २ पूर्वका आयुष्य. २ स्थल चर [पृथवीपे चलनेवाले गाय घोडे प्रमुख] इसके दश लाख क्रोड कुल और असन्नीका चौरासी हजार बर्षका, सन्नीका तीन पल्पोपमका आयुष्य. ३ खेचर (आकाशमें उडनेवाले जीव पक्षी) इसकी बारे लाख क्रोड कुल और असन्नीका बहोत्तर हजार बर्षका स-न्नीका पलके असंख्यातमे भाग आयुष्य. ४ उरपर (पेट गडके चलनेवाले जीव साप अजगर प्रमुख) इसके दश लाख क्रोड कुल और असन्नीका त्रेपन हजार बर्पका सन्नीका क्रोड पूर्वका आयुष्य. ५ भुज-पर (भुजोंके जोरसे चलनेवाले जीव ऊंदर प्रमुख) इनके नव लाख क्रोड कुल और असन्नीका ४२ हजार बर्षका सन्नीका क्रोड पूर्वका आयुष्य. इन्के उत्कृष्टे सातभव संख्याते आयुष्य वालेका और एक भव असंख्यात आयुष्य वालेका उत्कृष्ट ८ भव कहे है.

अब नर्कमें गया तो नरककी ४ लाख जात और पच्चीस लाख क्रोड कुल, उत्कृष्ट तेतीस सागर का आयुष्य, ह्यांका एकही भव * होता हैं. और देव-

* नर्क और स्वर्ग का एक ही भव है. नर्क का जी-

तामें गया तो चार लाख जात और छव्वीस लाख क्रोड कुल, उत्कृष्ट तेतीस सागरका आयुष्य; ह्यांभी एकही भव होताहै. इत्ने भव मनुष्य गती छोडके करने पडते हैं. अब जो कदी अनंत पुन्योदयसे मनुष्य गतीमें आया तो मनुष्य के चउदे लाख जात और बारे लाख क्रोड कुल होते हैं. मनुष्य का उत्कृष्ट आयुष्य तीन पल्योपम का होता है. असंख्यात वर्षका आयुष्य वाले युगलीये मनुष्य का

व मर के नर्क में न उपजे तैसे ही स्वर्ग (देवता) के जीव मर के देवता में न उपजे तथा नर्क का जीव स्वर्ग में न जाय और स्वर्ग का जीव नर्क में न जाय क्यों की शुभाशुभ कर्म करने का विशेष कर के ठीकाणे मृत्यू (मध्य) लोक ही है; ह्यांके कीये हुये अशुभ कर्म का बदला नर्क में देता हैं और शुभ कर्म का फल स्वर्ग में पाता है. जैसे दुकानपे प्रमाद और सुख का त्यागन करके कमाइ करेगा तो घरमें जाके आराम पायगा और दुकानमें मोजमजा उडा के धनमें बत्ती लगायगा तो घर में एकादशी करेगा–दुःख पायगा. दुकान मध्य लोक और घर नर्क स्वर्ग जानना.

एक भव होता है. और संख्याते आयुष्य वाले कर्म भूमी भद्रिक प्रणामी लगोलग सात भव मनुष्यका कर देता है. §

इत्नी मुशकीली से मनुष्य अवतार प्राप्त होता है. श्री पनवणाजी में कहा है की सर्व जीवों से थोडे गर्भज मनुष्य हैं, क्यों की ३४३ राजू घनाकार लोक में कुल ४५ लाख योजन के अठाइ द्विप के अंदर ही मनुष्य हैं. उस्में भी एक दो लाख योजन का और एकआठ लाख योजन का बडे २ दो समुद्र पडे हैं. तथा नदी पहाड उजाड इत्यादि बहुत सी जगा मनुष्य रहित हैं. इस लिये मनुष्य देह मिलनी बहुत दुर्लभ हैं.

परंतू फक्त मनुष्य अवतारसे ही कुच्छ धर्मकी प्राप्ती नही होती हैं. मनुष्यपणा मिल गया तो दूसरा साधन आर्य क्षेत्र मिलना दुर्लभ है. देखीये, इस अढाइ द्विपमें बडे २ तीस क्षेत्र तो अकर्म भुमिके और छप्पन्न अंतर द्विपा हैं; उन्में जो मनुष्य हैं वो बिलकुल धर्म कर्ममें नही सम-

§ यह सर्व चौरासी लाख जीवायोनी हुइ और एक क्रोड साडी ९७॥ लाख क्रोड कुल हुये.

जते हैं; वो भी पूर्व जन्मके उपराजे पुन्य फल देवता की तरह सुख भोग भोगवते हैं. अब धर्मकरणी करनेके कुल पन्नरे कर्म भूमीके क्षेत्र हैं. उनमेंसे पांच महाविदेह क्षेत्रमें तो सदा–शाश्वता धर्म है, और पंच भरत पंच एरावत क्षेत्रमें तो दश क्रोडाक्रोड सागरमेंसे फक्त एक क्रोडा क्रोड सागर कुच्छ झाझेरा (जादा) धर्म कर्म करनेका रहता है. इन दश क्षेत्रमेंसे एकेक क्षेत्रमें बत्तीस २ हजार देश है. उनमेंसे धर्म कर्म करनेके तो कुल साडे पच्चीस [२५॥] आर्य देश हैं.

×२५॥ आर्य देश के नाम और मुख्य शहेर

\+ आ समुद्रा तु वै पुर्वाद् समुद्रा तु पश्चिमात् ॥
तयोरेवान्तरं गिर्योरार्य्यावर्तविदुर्बुधा ॥ २२ पर्व

उत्तरमें हैमालय, दक्षिणमें विंध्याचल, पूर्वपश्चिममें समुद्र, यह आर्यकी हद.

सरस्वती दृषद्वत्योर्देवनद्योर्यदंन्तरम् ॥
तंदेव निर्मितं देश मार्यावर्तं प्रवक्षतं ॥ १७ ॥

सरस्वतीनदीसे पश्चिममें, अटकनदीसे पुर्वमें, हेमालयसें दक्षिणमें और रामेश्वरसे उत्तरमें जित्ने देश हैं उस्को आर्यवृत देश कहते है. मनुस्मृतीके दूसरे व्यायमें हैं.

तथा ग्राम संख्याः—१ मगध देश, राजग्रही नग्री, एक क्रोड ६६ छयासठ लाख ग्राम. २ अंगदेश, चंपा नगरी, पच्चास लाख ग्राम. ३ वंगदेश तामलिता नगरी, अस्सी हजार ग्राम, ४ कनक देश, कंचनपुर नगर, अठारे हजार ग्राम. ५ काशी देश, बणारसी नगरी, एक लाख पच्चाणू हजार ग्राम. ६ कुशल देश, शाकेत पुर नगर, नव हजार ग्राम. ९ पंचाल देश, कंपिल पुर नगर, तीनलाख त्रीयासी हजार ग्राम. १० जंगाल देश, आइछत्ता नगरी, अठाइस हजार ग्राम. ११ विदेह देश, मथुरा नगरी, आठ हजार ग्राम. १२ सोरठ देश, द्वारिका नगरी, छेलाख अस्सी हजार ग्राम, १३ कच्छ देश, कसूंबी नगरी, अठावीस हजार ग्राम. १४ साडील देश, सानन्द पुर नगर, इकवीस हजार ग्राम. १५ दशारण देश, सुक्रातम नगर, ४३ हजार ग्राम. १६ मेहल देश, भद्दलपुरनगर, सीत्तर हजार ग्राम. १७ वराड देश, वेराड पुरनगर, अठावीस हजार ग्राम. १८ वरण देश, सक्रीमती नगरी, बेतालीस हजार ग्राम. १९ साखात देश, वीदरभी नगरी, चार हजार ग्राम. २० सिंधू देश वेवार पाटण, छे लाख पिच्चासी हजार ग्राम. २१ सो-

वीर देश, वितभय पाटण, आठ हजार ग्राम. २२ शोर देश, पावापुरनगर, छत्तीस हजार ग्राम, २३ भंग देश मिश्रपुर नगर, एक हजार चारसो वीस ग्राम. २४ कुगाल देश, सावत्थी नगरी, त्रेसट हजार ग्राम. २५ लाड देश, क्रोडी बर्ष नगरी, दो लाख बेतालीस हजार ग्राम. और अर्ध ‡ केकै देश, सेतंबिका नगरी, दो हजार पांचसे ग्राम. यह कुल साडी पचीस आर्य धर्म कर्मके देश हैं; इन्में मनुष्य अवतार ग्रहण करना बहुत दुर्लभ है.

इन आर्य क्षेत्रमें जन्म मिल गया तो भी कुच्छ धर्म कार्य नही हो सक्ता है. क्योंकी तीसरा साधन उत्तम कुलका जोग मिलना बहुत मुशकल हैं; क्यों की जो जबर पुन्यका धणी होयगा सोही उत्तम कुलमें पेदा होता है. बहुत कुलीन जन पुत्रके लिये तरसते हैं परतू उन्को पुत्र होना ही मुशीवत दिखता है, क्योंकी पुन्यवंत जगतमें बहुत थोडे हैं; और नीच कुल पापी जनोंके पेदास्ती बहुत देखनेमें

‡ अनार्य परदेशी राजाको श्री केसीश्रमण आचार्यजीने समजाया और वो जित्ने क्षेत्रमें फिरे उत्ना देश आर्य हुवा, बाकीका अनार्य रहा.

आते है. क्योंकी पापी जीव जगतमें बहुत हैं नीच जातके लक्षणः—

जपो नास्ती तपो नास्ती, नास्ती चेन्द्रीनिग्रहः ।
दया दानं दमं नास्ती, इति चंडाललक्षणं ॥

जो कदी परमेश्वरका जाप (स्मरण—ध्यान) नही करे, दिनरात घर धंदेमें ही पच रहे, कदी उपवासादिक व्रत भी न करे सदा खा—पीके सरीरको पुष्ट बनानेमें खुसी जिसे खाद्य अखाद्यका कुच्छ बिचार नही, अग्नीकी तरह सर्व वस्तू खावे, कुछ छोडे नही, पंच इंद्रीयोंको कूचालेसे निवारे नही, सदा गान तान नाटक चेटक विषय भोगमें आनंद माने, पर स्त्रीयोंसे गमन करे. निर्दयी किसी भी दुःखी जीवकी जिस्के घटमें अनुकंपा (दया) नही. सदा पृथव्यादिक छे ही कायका धमशान करनेवाला, मद्य मांस भक्षी, कदी किसीको किंचित् मात्र दान देवे नही, महा परिग्रही, कंज्जूस मूजी, दूसरा कोइ धर्मदान कर्ता होय उसे अंत्राय दे—ना कहे, कदी आत्मदमन नियम व्रत प्रत्याख्यान (पचखाण) करे नही. इत्ने लक्षण जिसमें होवे उसे नीच कहना, चंडाल जातीका कहेना. इन दुर्गुणों रहित यथा सक्त जप तप इंद्री निग्रह

दया दान व्रत करे उसे उत्तम कहना. सो ऐसे उत्तम कुल–जैन कुलमें जन्म लेना बहुत ही मुशकील है.

जो उत्तम कुल ही मिलगया तो क्या हुवा ? क्योंकी चौथा साधन दीर्घ (लम्बा) आयुष्य मिलना बहुत मुशकल है. पहले तीसरे चोथे आरे के धर्मात्मा मनुष्य का आयुष्य पूर्वोका जित्ने जिनके वर्षके सेंकडे थे उत्ने अपने श्वासोश्वासही न रहै. सो वर्षके कुल चार अजब सात क्रोड अडतालीस लाख और चालीस हजार श्वाशो श्वास होते हैं. सोइ सो वर्ष सुख से पूर्ण करने वाले तो कोइक होयगें. कहा है–

आयूर्वर्ष सतेद्राणां परमितं रात्रौ तदर्धंगतं ।
तस्यार्धस्यर्ध मर्ध मपर्म वालत्वं वृधत्वयो ॥
सेषं व्याधी वीयोग दुःख सहितंसे वधीर्भीयनियतं ।
जेवः वारीतरंग बुद २ समे सौख्यं कुतं प्राणीनां ॥

इस सो वर्ष जिंदगानी में मनुष्य को कित्ना सुख प्राप्त होता है सो जरा बनीयें के हिसाब से वीचारीये. एक वर्ष के ३६० दिन तो सोवर्ष के ३६००० दिन हुये. इस्में से अठारे हजार तो निंद में गये ! क्योंकि "निद्रा गुरुजी बिन मोत मूवा" बिना मृत्यू से मृत्यू रुप निद्राही है. इस्में सुख दुःख

का कुछ ज्ञान रहता नहीं है. बाकी १८ हजार रहे उस्के तीन भाग छे छे हजार के हुये, सो छे हजार बाल वय के गये, वोही अज्ञान दशामें, क्योंकि बालकको कुछ सत्यासत्य का ज्ञान नही हैं. और छे हजार जरा (वृद्ध) पणे के, सो वृद्ध पणा भी शास्त्रमें बहुत जगे महा दुःख का कारण बताया है, "जम्म दुःखं जरा दुःखं" और हैभी महा दुःख का ही कारण. क्यों की मन तो अनेक मोज मजा भूक्तने की इच्छा करता है. और इन्द्रीयों हीण पडजाती है, जिससे पूरा सुना देखा नही जाय. दंत पडने से खाने की वस्तू पूरी चबे नही और पाचन नही होने से अनेक व्याधि उत्पन्न होवे, अशक्त–निकम्मा सरीर होने से स्वजनोंसे भी अपमान होवे. इत्यादि अनेक दुःख हैं. यों बाल और बृद्ध अवस्था के १२ हजार दिन तो दुःख में गये, शेष रहे जोबन वय के छे हजार, उस्में भी कदी सरीर में अनेक तरह के रोग पैदा होवे, कदी रोगसे बचे तो स्वजनों का वियोग होवे, उनके दुःख से झुरते २ दिन जावे, उस से कभी आराम मिले तो लेने देने का इज्जत नफा टोटा मंदी तेजी इत्यादि अनेक दुःख हैं. अब की-

जीये हिसावी सुज्ञ बंधूओं ? जो सो वर्ष का आयुष्य पाये तो उस्में कित्ने दिन का सुख भोगव सकते हो ? औरभी विचारीये की इस वक्त सो वर्ष कोण पूर्ण कर्ता है ?

गभ्भ मजंती बुयाबुयाणं, नरा परा पंचसिहा कुमारा ।
जो वणगा मझिमा थेरगायं, चयंति आयुखयं पलाणं ॥

श्री सूयगडांग सूत्र.

भोग की वक्त नवलाख सन्नी पचेंद्री मनुष्य गर्भ में पैदा होते हैं. उस्में से एक दो उत्कृष्ट चार बचते हैं. और सब वीर्य फर्स से मरजाते हैं. कित्नेक बुद २ में, कित्नेक थोडे महीने गये पीछे, अन्य असह्य संयोग से, कित्नेक जन्मती वक्त आडे आ के कटके निकलते हैं. जन्म के बादभी कित्नेक अ-समजपणमें, कुमार अवस्थामें, कित्नेक भर युवा-नीमें और कित्नेक इन सब विघ्नों से बचे तो वृद्धावस्था तक टिक के मृत्यूके ग्रास (कवल) होते हैं.

जैसे फिरती घंटी के दोनो पडों के बीचमें पडे हुये दाने का भरोसा नहीं लगता है की इस्का कित्ने चक्र फिरे पीछे आटा होयगा, तैसे काल घंटी का एक भूत काल रुप निचेका स्थिर पट, और दूसरा भविष्य काल रुप उपर का फिरता चक्र

इस्के बीचमें पडा हुवा यह प्राणी इस्का क्या भरोसा के इत्ने दिन पीछे इस कायाकी भस्म होयगी ? परंतु इत्ना तो जरुर है की उस्का अंत एक वक्त जरुर आयगा. क्रोड उपाय से न छूटे. और भी काल को रात दिन शुभा शुभ वार तीथी नक्षत्र सुख दुःख राजा रंक बाल युवान वृद्ध इत्यादिक का बिलकूल ही बीचार नही हैं. ऐसे दीर्घ आयुष्य प्राप्त होना बहुत मुशकील है.

दीर्घ आयुष्य मिलगया तो भी कुछ आत्म कार्य सिद्ध न होता हैं; क्योंकी पांचमा साधन पंच इंद्री निरोगी मिलनी मुशकील हैं. और पंच इंद्री निरोगी मिले बिन धर्म कर्म हो शकता नही हैं. शास्त्रमें कहा हैंः–" जाव इंदिया न हाणंति ताव धम्मं समायरे " जहां लग इंद्री (श्रुत चक्षु घ्राण रस स्पर्श) की हीणता (निर्बलता–कमीपणा) न होवे वहां लग धर्म कर ले. क्योंकी कानसे बहीरा हुवा तो वो धर्म श्रवण ही नही कर सकेगा, तो फिर जाणेगा किस्तराह ? आंखोंसे अन्धा हो गया तो फिर जीवोंकी यत्ना किस्तराह करेगा ? इत्यादि रीतीसे इंद्रीयों निरोगी मिलना बहुत मुशकील हैं.

इंद्रीयों निरोगी मिल गइ तो भी कुल कार्य सिद्ध न हुवा. क्योंकी छट्टा साधन सरीर निरोगी मिलना बहुत मुशकल हैं. निरोगी शरीर बिन धर्म क्रीया होनी मुशकील है. शास्त्रमें कहा हैं "वही जावन वढइ ताव धम्म समाचरे" जहां लग व्याधी (रोग) की वृद्धी न होवे वहां लग धर्म कर लो; अर्थात् अपना सरीर तो पांच क्रोड अडसठ लाख निन्याणु हजार पांचसे चौरासी (५६८९९५८४) रोग करके प्रतिपूर्ण भरा है. जहां लग पुन्यका उदय है वहां लग सब रोग ढके हुये हैं. जब पापका उदय हुवा तो इस सरीरका विनास होते कुच्छ देर नही लगती हैं. ताप सिर पेटका दुःख इत्यादि रोग जो हमेशा लगा रहे तो धर्म करणी कांहासे कर सके? कहा है की "पहला सुख निरोगी काया" जो सरीर निरोगी होवे तो सब काम अच्छा लगता है. धर्म करणी भी बन सकती हैं. इसलिये सरीर निरोगी मिलना मुशकल है.

तथा इस छट्टा साधन को कोइ धनकी जोगवाइ भी कहता है. मराठीमें कहते हैं "पहली पोटोबा, मग विठोबा" पहले पेट भरा होय तो फिर पर-

मेश्वर का नाम याद आता है ! लक्ष्मी का योग होय और संतोषवंत होय तो निश्चिंत से धर्म ध्यान करता है. इसलिये लक्ष्मीकी जोगवाइ मिलनी मुशकील है.

ये छ बोल तो इस जीवको अनंती वक्त मिल गया तो भी कुच्छ कार्य सिद्ध न हुवा क्योंकी सातमा साधन सद्‌गुरुकी संगत मिलनी बहुत ही मुशकील है. क्योंकि इस जगतमें पाखंडी, दुराचारी, ढोंगी ऐसे गुरु बहोत हैं. और उन्को मानने वाले भी बहोत हैं. कहा हैः—

" पाखंडी पूजा करे, पंडित नही पेछाण ।
" गोरस तो घर २ बिके, दारु बिके दुकान " ॥

देखीये ! दूध जैसा उत्तम पदार्थ घर २ बेचते फिरते हैं तो भी उसको लेनेवाले थोडे हैं, और दारु जैसे अपवित्र पदार्थको ग्रहण करनेको मीठे पे कित्नी गीरदी जमती है ? ऐसे ही उत्तम गुरुको माननेवाले जगतमें थोडे हैं और पाखंडीयोंको सत्कार देनेवाले —उन्के हुकम अनुसार चलनेवाले—उनपे तन धन कुटुंब कुरबान करनेवाले—अरे अपनी प्यारी पत्नीको भी उन्की प्रेमदा बनानेवाले भी इस जगतमें बहुतसे

हैं. इससे जास्ती और क्या अज्ञानपणा होता हैं?

"गुरु लोभी चेला लालची, दोनू खेले दाव;
"दोनू डूबा बापडा, बेठ पत्थरकी नाव."

ऐसे पाखंडीयोंसे क्या आत्मकल्याण होगा? जरा बीचारके तो देखो, अरे जिन्का अपनी ही मतलब करनेका चित्त हैं, वो दूसरेको कैसे तारेंगे? "कान्या मान्या कुर, तूं चेलो हूं गुर; रुप्पा नारेल धर, भावे डुब के तर" जो कनक कान्ताके धारी, छेही कायकी आ-रंभके करनेवाले, संसारीयोंसे भी पातकी, लोभी, लंपटी ऐसे गुरु आप तो डूबते हैं व अपने चेलेकों पातालमें ले जाते हैं. क्योंकी जो लोभी होगे वो दूसरेकी प्रभा रखेंगे की रखें मैं कुच्छ ज्यादे कहुंगा तो श्रोताको बुरा लगेगा और मेरी पट्टीमें रुपे कमीं भरेंगे! इसलिये इनके मन प्रमाणे जल्दी २ सुणाके मेरा मतलब साधू! ये डूबो चाय तीरो अपनको क्या? अपने तो रुपे हाथ लगते है!

सवैया.

छांडके संसार छार, छारसे विवहार करे, मायाको निवारी फिर माया दिल धारी हैं, पीछला तो धोया कीच, फेर कीच बीच रहे, दोनू पंथ खोये, बात बणीसो बीगाडी हैं. साधू कहलाय नारी निरखत लोभाय, और कंचनकी करे चाय; प्रभूता पसारी हैं.

लीनी है फकीरी, फेर अमीरीकी आस करे, कायको धिक्कार, सिरकी पघडी उतारी हैं.

इसलिये हे सुज्ञों! जो सुख देनेवाला सत्य धर्मकी अभीलाषा होवे तो सद्गुरु कनक कान्ताके त्यागी, निर्लोलची ऐसे गुरुको अंगीकार करो, जो तुमारेको सदुपदेश देके सत्य धर्मकी प्राप्ती करावे, मिथ्यात्व अन्धकारका* नाश करे, क्योंकी इत्ने गुण युक्त होवे–वोही सदुपदेश कर सकते हैं.

वक्ता (उपदेशक) के गुण.

१ द्रढ श्रद्धावंत होय–क्योंकी जो आप पक्का श्रद्धावंत होगा वोही श्रोताकी श्रद्धाको निःसंकित-से द्रढ कर सकेगें. २ वाचन कलावंत होय–किसी भी प्रकारके शास्त्रको पढते हुये जरा भी अटके नही, शुद्धता और सरलतासे शास्त्र सुणावे. ३ निश्चय व्यवहारका जाण होय–जिस वक्त जैसी प्रषदा और जैसा अवसर देखे वैसाही सद्बोध करे, की जो श्रोता-गण धारण करे उन्की आत्मामें रुचे. ४ जिनाज्ञा

---

* गुकारस्त्वन्धकारः, स्याद्रुकारस्तन्निरोधकः ।
अन्धकार विनाशित्वाद्गुरुरित्यभी धीयते ॥
अन्धकारका नाश करे सो गुरु.

भंगका डर होए-अर्थात् एक देशके राजाकी आज्ञा भंग करनेसे शिक्षा मिलती है तो त्रिलोकीनाथ श्री तीर्थंकर भगवानकी आज्ञाका भंग करेगा उस्का क्या हाल होगा? ऐसा जाण आज्ञा विरुद्ध-विपरित परुपणा न करे. ५ क्षमावंत होए. क्योंकि जो क्रोधी होगा वो अपने दुर्गुणसे डरता क्षमादि धर्मकी यथातथ्य परुपणा नहीं कर सकेगा. और वक्त पे क्रोध उत्पन्न हुये, रंगमें भंग कर देवेगा. इसलिये वक्ता क्षमावंत चाहिये. ६ निराभिमानी-अर्थात् विनयवानकी बुद्धी प्रबल रहती है. वो यथातथ्य उपदेश कर सकते है. और जो अभिमानी होते हैं वो सत्यासत्यका बिचार नहीं करते. अपने खोटी बातको भी अनेक कूहेतू करके सिद्ध करेगें. और दूसरेकी सत्य बातकी उत्थापना करेंगे. ७ निष्कपटी होए-जो सरल होगा सो ही यथातथ्य बात प्रकाशेगा. कपटी तो अपने दुर्गुण ढकनेके लिये बातको पलटावेंगा. ८ निर्लोभी होए-निर्लोभी बेपरवाइ रहते हैं. वो राजा रंक सबको एकसा सत्य उपदेश कर सकते है और लोभी §खुशामदे होते है वो श्रोताका मन

§ द्रष्टांत-कोइ लालची पंडित म्लेच्छ राजाकी

दुःखा जान बातकों फिरादेते हैं. ९ श्रोताके अभीप्रायका जाण होवे—अर्थात् जो जो प्रश्न श्रोताके मनमें उठे उन्की मुख मुद्रासे जाण उन्का आपही समाधान करदेवे १० धैर्यवंत होए—कोइ भी बात धीरजसे श्रोताके समजमें आवे वैसी कहे तथा प्रश्नका उत्तर मधूरतासे उसे ठसे ऐसा थोडेमें देवे ११ हट ग्राही नही होए—अर्थात किसी भी प्रश्नका उत्तर आपको न आवे तो उस्की झुटी स्थापना न करे, नम्रतासे कहे कि, मेरेको इस्का उत्तर नही आता है. मैं किसी ज्ञानीसे पूछके निश्चय करुंगा. १२ निंद्य

सभामें अजाणसे बोल उठा की

तिल सरसव मात्रं तू ये नरा मांसं भक्षान्ति ।
ते नरा नर्क गच्छान्ति यावर्चंद्रदिवाकरा ॥ १ ॥

अर्थात् जो तिल सरसव बरोबर मांस खायगा वो चंद्रमा सूर्य रहेगे वाहांतक नर्कमें पहोंचेगा. राजा बोले, हम तो पेटभर खाते है. तब पंडीतजी बोले की आप वैकुंठमें पधारोगे ! इसमें तो तिल बरोबर खानेवालेको नर्क कही है. पेटभर खायगा वो आत्मदेवको संतोषेगा उसे स्वर्ग मिलेगा. इस तर्फ नर्ककुंड और उस तर्फ स्वर्ग कुंड है. पेटभर खानेवाला जोरसे फलंग मारेगा सो स्वर्गमें जा पडेगा ! देखीये लोभीयोंका उपदेश !

कर्मसे बचा हुवा होए–अर्थात् चोरी जारी विश्वास-घात इत्यादि कर्म जिसने नही कीये होए. क्योंकि सद्गुणी किसीसे दबता नहीं हैं. १३ कुल हीण न होए–क्योंकी हीण कुलीकी श्रोता मर्यादा नही रख सक्के हैं. १४ अंग हीण न होए–क्योंकि अंगहीण सोभता नही हैं. १५ कुस्वरी न होए–क्योंकि खोटे-स्वर वालेका वचन श्रोताको सुहाता नही हैं. १६ बुद्धीवंत होए, १७ मिष्ट वचनी होए, १८ कांतीवंत होए, १९ समर्थ होए, उपदेश करता थके नही. २० बहुत ग्रंथ अवलोकन किये (देखे) हुवे होय. २१ अध्यात्म अर्थका जाण होए. २२ शब्दका रहस्यका जाण होए. २३ अर्थ संकोचन बिस्तार कर जाणे. २४ अनेक युक्तीयों तर्कोंका जाण होए. २५ सर्व शुभ गुण युक्त होए. ये २५ गुण युक्त होवे सो ही असर-कारक सदुपदेश कर सकेगा. ऐसे गुण युक्त सद्वक्ता साधूका जोग मिलना मुशकील है.

साधूके संगसे १० गुणकी प्राप्ती होती हैं. ऐसा भगवतीजी सूत्रमें कहा हैं.

सवणे नाणे विन्नाणे, पच्चखाणे य संजमे ।
अहे नाए तवे चेव, वोदाणं अकिरिया सिद्धि. ॥ १ ॥

अर्थ-साधूके दर्शनसे प्रथम तो ज्ञान सुणनेका योग बणे, २ जो सुणेगा उस्को अवस्य ही ज्ञान प्राप्त होगा. ३ और ज्ञानसे विज्ञान (विशेष ज्ञान) बढनेका स्वभाव ही हैं. ४ विज्ञानसे सुकृत दुकृतके फलके जाण होय. उससे दुकृतका त्यागन करेगे. ५ और जो दुकृतके पचखाण कीये सो ही संयम (आश्रवका रुंधन) हुवा. ६ और आश्रवका रुंधन किया वोही तीर्थंकरकी आज्ञाका आराधन किया. ७ आश्रवका रुंधन और वितरागकी आज्ञाका आराधन है सोही तप है ८ और तपसे कर्म कटते है. ९ कर्म कटनेसे अक्रिया-स्थिरजोगी-सर्व पाप रहित हुवा. १० और जो सर्व पाप रहित हुवा उसे मोक्ष प्राप्त होती है.

देखीये साधूके दर्शनसे केसे २ मोटे लाभ होते है?

सद्गुरु-सद्वक्ताका जोग बणा तो भी आत्माका कुच्छ कल्याण न होवे; क्योंकि आठमा साधन शास्त्र सुणना मुशकील हैं. इस जगतमें धर्म शास्त्र सुणनेके उपर रुचीवाले बहुत थोडे हैं. कोइ कहे की साधूजी महाराज पधारे है, व्याख्यान बांचते हैं, चलो सुणनेके लिये; तो आप उत्तर देवकी साधूजी तो नि-

वरे हो गये हैं! उन्को क्या काम है? अपने पीछे तो संसार लगा हैं. क्या अपनेको बाबाजी होणा है सो व्याख्यान सुणे! और इत्नेमें कोइ कहे की आज नवीन नाटक आया है; तूर्त आप पूछेंगे, किसका नाटक होगा? टीकिटका क्या लगेगा? हमारेको भी साथ ले चलना! ऐसा कहे टेमपर माबापकी आज्ञाका भंगकर पुत्र पुत्रीको रोते हुये छोड, भूख प्यास ठंड तापकी बिलकुल दरकार नही रखता वहां जाय. महा पापसे कमाये पइसे खरचके टीकिट ले नीच जातीयोंके धक्के खाता भीतर जाय, बेठनेकी जगा न मिले तो उभा रहै, पिशावकी हाजत होय तो रोक रखे, निंद आय तो आंख मसलके उडावे की कुछ बापोती डूब जायगी! पेशाब रोकनेसे और टेमपर निद्राका भंग करनेसे अनेक बीमारी (रोग) भोगवे. और भी देखीये, उस नाटकमें कृष्णजी रुक्मिणी इत्यादि उत्तम पुरुष और सतीयोंके सामे कुद्रष्टि कर देखे, कूचेष्टा करे. जो कोइ आपकी मा बहेनका रुप बनाके नाटक शालामें नाचे तो आपको कैसा खराब लगे? अरे अज्ञानीयों! जरा बीचारो की जिनको परमेश्वर संत सती करके मानते हो उन्को नचाके आप त-

मासा देखते हो? कुछ लज्जा भी आती हैं? जिन्की वहा दोलतसे आप दुनियामें मजा उडाते हो उन्को ही उंचे आसनपे बेठ दान पुन्य करते हो? कुच्छ बीचार भी हैं? ऐसे अधर्म–महा पातकी काममें तो दोड २ जाते है, और धर्म श्रवण करनेमें सर्म (लज्जा) लाते हे! एसें पातकीके हाथ धर्म कैसे लगे?

और भी कित्नेक कहते हैं की, हमारेसे धर्म नही बने तो सुणनेसे क्या फायदा? उन्को उत्तर दीया जाता है की, जो सुणेगा वो तो अवस्य ही करेगा. जैसे किसीने सुणा की अमुक मकानमें भूत है. तो फिर उस मकानमें उसका वस पगेगा वांहा तक वो नहीं जायगा; कदी जानेका काम पडे तो भी मनमें डरेगा की ह्यां भूत है, रखे मुजे कुछ उपसर्ग करे एसा वीचारके जो एक पहरका काम होवे तो वो जल्दीसे एक घडीमें ही उस कामसे निवर्त्त हो झट निकल जायगा. और भीतर रहगा वांहांतक डर बना रहगा. ऐसे ही जो सुणेगा की अमुक काममें पाप है और कदापि वो काम करने भी लगा तो उस पापके डरसे थोडेमें ही पूरा करेगा. पापसे डरता रहेगा. और अखीर पापको कभी छोड

भी देवेगा. कित्नेक कहते हैं की हमारेको पूरी समज नही पडती है हम सुणके क्या करे? उन्को उत्तर दीया जाता है की, कभी किसीको सर्प या विंच्छू काटता है, उसको उतारने मंत्रवादी मंत्रका उच्चारण करता है उस्में उस जेहरीको कुच्छ समज तो नही पडती है तो भी उसका जेहर उतरता हैं. ऐसे ही सूत्र सुननेसे आपका पाप भी कमी होगा. सुणते २ समज भी पडने लगेगी; सुणनेमें तो अवस्य फायदा है. दश वैकालिकके चौथे अध्यायमें कहा है कीः–

सुच्चा जाणे ही कल्लाणं, सुच्चा जाणे हि पावगं।
उभयं पी जाणे ही सुच्चा, जे सेयंते समायरे ॥

सुणेगा तो जानेगा की अमुक कामसें पाप होता हैं, अमुकसे पुन्य होता है. पुन्य पापके सुख दुःख दोनु फल जाण जो श्रेयकारी मालम पडे उसे स्विकारेगा, अंगिकार करेगा. इसलिये अवश्य सुणना

श्रोता (सुणनेवाले) के गुण.

१ उसे धर्मकी खास चाय होय; जैसे अच्छी वस्तूका ग्राहक अच्छी वस्तूकी चाहाके लिये हरेक वस्तूकी कित्नी परीक्षा करता है. एक दमडीकी मट्टीकी हंड्डी चहीये तो भी उसे बजाके ऊंचे नीचे

देखके बहुत तपासके लेता है. ऐसे ही ग्रहनेको तपाके, कपडेका पोत देखके, सबकी परिक्षा करके लेता हैं, तो भी उस विनाशिक वस्तूका तो बहुत हजापत (संभाल) करते ही विनास हो जाता है. तथा वो वस्तू सुखकी दुःख देनेवाली भी हो जाती हैं. और अवीनासी धर्म सदा सुख देनेवाला इस्की परीक्षा करनेवाले बहुत थोडे द्रष्टी आते हैं. एक शेहरमें कहा हैं:—

एक एकके पीछे चले, रस्ता न कोइ बूजता;
अन्धे फसे सब घोरमें, कहांतक पूकारे सूजता ?

तथा—

बडा उंट आगे हुवा, पीछे हुइ कत्तार;
सब ही डूबे बापडे, बडे उंटकी लार !

ऐसे ही दुनियामें रचना बन रही है. कित्नेक कहते हैं, हमारे बाप दादेका धर्म परंपरासे हमारे घरमें चला आता है, हम कैसे छोडे ? परं उनसे इत्नाही पूछते हैं की आपके बाप दादे गरीब थे और आपके पास धन हुवा, क्या फेंक देते हो ? आपके बाप दादे अन्धे काणे लंगडे होवे तो आप भी अंग भंगकर उन्के जैसे हो जावोगें क्या ? तब तो बुरा मानते हैं और ना कहेते है. तब क्या धर्म मार्गमें ही आपके

बाप दादे आडे (अंत्राय देणे) आते है क्यों ? परं श्रोताको इस वातका बिलकुल पक्षपात नहीं चहीये जो कुदरती बुद्धीसे और शास्त्रोंके न्यायसे मिलता आवे उस्को ही ग्रहण करनेकी उत्कंठा रक्खे.

२ दुःखसे डरनेवाला होए; क्योंकि जो नर्का-दिकके दुःखसे डरेगा वोही धर्मकथा श्रवण कर पापसे डरेगा. निडरको उपदेश लगता ही नही हैं †

† द्रष्टांतः—एक जमीकंद खानेवाले जैनीसे एक साधूजीने कहा के वहुत पाप करोगे तो नर्कमें जाणा प-डेगा. जैनीने पूछा, म्हाराज नर्क कित्नी हैं ? साधूजीने कहा के सात नर्क है. जैनी--अजी म्हाराज ! में तो प-न्नरे तक कम्मर बांद कर वेठाथा, आपने तो आधीही नही बताइ! कीजीये, ऐसे निडरको क्या उपदेश लगे!

३ सुखका अभिलाषी होए; स्वर्ग मोक्षके सुख-की इच्छा होगी वो ही धर्म श्रवण कर धर्म मार्गमें जोर लगायगा.

४ बुद्धीवंत होय. जो बुद्धीवंत होगा सो ही धर्मकी रेसमें समजेगा और छानकर सत्य धर्मको ग्रहण करेगा.

५ मनन करनेवाला होए. क्योंकि सुणके वां-

हाका वांही छोड जाय तो उससे क्या फायदा होवे? इसलिये जो बात सुणे उसे हृदयमें रखके मनन कर वीचारनेवाला–सत्यासत्यका निर्णय करनेवाला होगा.

६ धारनेवाला होए, अर्थात् बहुत काल उसे हृदयमें धार रक्खे ऐसा होय.

७ हेय ज्ञेय उपदेयका जाण होय. अर्थात् हेय (छोडने योग्य) छोडे, ज्ञेय (जाणने योग्य) जाणे, उपादेय (आदरने योग्य) यथा शक्त आदरे ऐसा होए.

८ निश्चय व्यवहारका जाण होय. सुणनेमें अनेक बात निकलती हैं उसमेंसे निश्चयकी बात निश्चयमें और व्यवहारकी बात व्यवहारमें समजे. विषवाद न वेदे. जैसे निश्चयमें तो अधूरे आयुष्ये जीव न मरे और व्यवहारमें सात कारणसे आयूष्य टूटे, इत्यादि जाणनेवाला होए.

९ विनयवंत होए, सुणते २ जो संसय पेदा होवे तो अती नम्रता युक्त उस्का निर्णय करे.

१० अवसरका जाण होए. जिस वक्त जैसा उपदेश चलानेका मोका होए. वैसा आप नम्रतासे प्रश्न पूछ उपदेश चलानेकी समक्षा करे.

११ द्रढ श्रद्धावंत होय. शास्त्रके अनेक सुगम

भाव सुणके चित्तमें डामाडोल न करे. वचन सत्य श्रधे. जो समजमें न आवे तो अपनी बुद्धीका कमीपणा जाणे.

१२ फलका निश्चयवंत होए—अर्थात् व्याख्यान सुननेसे मेरेको अवस्य कुच्छ फायदा होगा ऐसा जिसको निश्चय होए.

१३ उत्कंठावंत होए—अर्थात् जैसे क्षुधातुरको भोजन, तृषातुरको जल, रोगीको औषध, लोभीको लाभ, भूलेको साथकी जित्नी उत्कंठा होए उत्नी ही श्रोताके मनमें जिनवाणी श्रवण करनेकी इच्छा होए.

१४ रस ग्राही होए—जैसे उपर भूखे प्रमुख कहे उन्को इच्छित वस्तूका संजोग बने जैसे प्रेमसे वो वस्तू भोगवे, तैसे ही जिनेश्वरकी वाणी सुणती वक्त आप रस ग्रहण करे.*

---

* छपय, श्रोताके गुणः—प्रथम श्रोता गुण एह नेहभर नेणा निरखे,
हस्त वदन हुंकार सार पंडित गुण परखे;
श्रवण दे गुरु वयण सुणता राखे सरखे,
भाव भेद रस भीछ रींज मन माहे हरखे.
वेधक विनय वीचार, सार चतुराइ आगला,
कहे कृपा एहवी सभा, तब दाखे पंडित कला. १

१५ इस लोकके सुख या मानकीर्तीकी वांच्छा रहित सुणे.

१६ परलोकमें एकांत मोक्षकी अभिलाषा रक्खे.

१७ वक्ताको तन धनसे यथा योग्य साह्य देवे.

१८ वक्ताका मन प्रसन्न रक्खे.

१९ सुणी बातकी चोयणा कर निश्चय करे.

२० सुणे पीछे मित्रादिकके आगे प्रकाश उन्को प्रेम उसन्न करावे.

२१ सब शुभ गुणका ग्राहक होवें.

इत्ने गुणका धरण हार जो होवे सो यथा तथ्य ज्ञान ग्रहण कर अपनी आत्माको तार्नेवाला धर्म ग्रहण कर सके इसलिये. ऐसी रीतसे शास्त्र सुणना भी मुशकील है.

कू श्रोताके लक्षणः—केइ वेठा ऊंघाए, केइ जाय अदविच ऊठी,
रहस करे केइ ठोल, केइ करे निंद्या आपूठी;
केइ रमावे बाल, धर्म मत माने झूठी,
केइ न धारे रहस्य, अधविच पाडे त्रूठी.
केइ गले हाथ देइ करी, गोडा विच घाले गला,
कहे कृपा एहवी सभा, तो पंडित किम दाखे कला. २

कृपारामजी साधूजी.

ऐसी तरह शास्त्र सुणना मिल गया तो भी आत्माका कुच्छ कल्याण न हुवा; क्योंकी नवमा साधन शास्त्र सुणके सत्य श्रधना मुशकील हैं. सुणा तो केइ वक्त होगा, परंतू प्रभूने फुरमाया है की "श्रद्धा परम दुलहा" सुणेके उपर श्रद्धा बेठनी बहुत ही मुशकिल हैं. कित्ने कुलकी रुढी करके की हमारे बापदादे सुणते आये तो हमारेको भी सुणना चाहीये; कित्नेक जैन कुलमें जन्म लिया है तो व्याख्यान तो जरुर ही सुणना चाहिये; कित्नेक में मोटे नामांकित गृहस्थ हूं–आगे बेठता हुं–मुजे सब धर्मी कहते हैं तो मुजे जरुर सुणना चाहीये, कित्नेक अपने ग्राममें साधूजी आये है–जो अपन ५–१० मनुष्य नही जायगे तो अपने ग्रामकी अच्छी नही लगेगी इसलिये, कित्नेक लोभके लिये "करुंगा समाइ तो होवेगा कमाइ" तथा महाराजका मन खुशी होवेगा तो कदी अपनको कुच्छ चुटकला बता देवेंगे, कित्नेक मानके मरोडे–जो हम व्याख्यानमें जायगे तो लोक हमारेको धर्मी कहेंगे, कित्नेक देखा देखी–अपणे अमुक जाते है तो अपनको भी जाना चाहीये, कित्ने वडे आदमीकी शर्ममें आके, ऐसे अनेक हेतूसे श्रद्धा

बिना.जो वाणी श्रवण करते हैं उन्को धर्म ज्ञान प्राप्त होना बहुत कठिण है.

दीवी पण लागी नही, रीते चूले फूंक;
गुरु वीचारा क्या करे, चेला माहे चूक.
और भी
पत्रं नैव यदा करीर विटपे दोषो वसंतस्य किं
नो लुको न विलोक्यते यदि दिवा सूर्यस्य किं दुषणं ।
वर्षा नैव पतंति चातक मुखे मेघस्य किं दुषणं
यद्भाग्यं विधिना ललाट लिखितं कर्णस्य किं दुषणं ॥

वसंत रुतू प्राप्त हुये जो वृक्षको कूपल नही फूटे तो वसंत रुतूका क्या दोष? जाज्वल्यमान सूर्यका प्रकाश होनेसे जो उल्लू उसे न देखें तो सूर्यका क्या दोष? अतिवृष्टी होके भी चातकके मुखमें बिंदु न पडे तो वर्षाका क्या दोष? ऐसे ही जो भारी कर्मी जीव हैं उन्को उपदेश न लगे तो गुरुजीका क्या दोष? जो भारी कर्मी जीव हैं उन्को कितना ही उपदेश दीया जावे तो भी कदी भी नही सुधरनेके. जैसे कोरडू मूंगको हजारो मण अग्नी और पाणीमें सीजाने (पकाने) से वो सीजता नही हैं. ऐसे ही जो अभव्य होते है उन्को ज्ञान लगता ही नही हैं.

" चार कोशका मांडलां, वे वाणींके धोरे,
" भारी कर्मे जीवडे, वहां भी रह गये कोरे. "

प्रत्यक्ष देखीये गायके स्तनकों जो वग लगी होती हैं एक ही चमडेके अंतरमें दूधको छोडके रक्तको ही ग्रहण करती हैं; तैसे ही भारी कर्मी जीव सद्गुरुका सद्बोध श्रवण कर उसमेंका सारका त्याग कर असारकों ग्रहण कर आगे निंदा करते हैं, की क्या सुणे? वो तो अपना ही अपना सुणाते है ऐसे अब्बी चलनेवाले कोण हैं? ऐसे निंदकको जानना चाहिये किः–

पादे पादे निधानानि, योजनं रस कूपिका;
भाग्यहीनं नैव पश्यन्ति, वहु रत्ना वसुंधरा.

अबी भी छती रिद्धी के त्यागी, महावैरागी, पंडित, तपश्वी, क्रिया पात्र, ऐसे २ अनेक २ गुणके धरणहार साधू साध्वी तथा दयावंत दानवंत द्रढ धर्मी अल्पारंभी अल्प परिग्रही संसारमें रहके ही आत्माका सुधारा करनेवाले बहोत श्रावक श्राविका बीराजमान है. और पंचमे आरेके अंत तक चार ही तीर्थ कायम बने रहेंगे. परंतू उत्तम वस्तू थोडी ही मिलती. सो श्रद्धाहीन जनोंकों द्रष्टीमें कहांसे

ऐसा कोनसा कर्म है की जिससे मुजे दुर्गती और दुःख प्राप्त न होवे? और उन कर्मोको भी जाण गया है की, शुभ कर्मके शुभफल हैं और अशुभके अशुभ फल हैं, ऐसा जाणके भी जो अशुभका त्यागन, और शुभकों ग्रहण नही करे तो उस्का आत्म कार्य कैसे सिद्धी होवे? इसलिये यथा तथ्य फरसना होना बहुत ही मुशकील है.

देखीये भव्यगणों! इन दश साधनों उपरसे ही आप आपके अंतःकरणमें दीर्घ द्रष्टीसे विचार करीये की धर्म प्राप्ति होनी कित्नी मुशकील है?

सो हे भव्यों! अपने महान पुन्योदयसे अबके यह दश ही सामग्री प्राप्त हुइ अपनको द्रष्टी आती है. इस्का लाभ जरुर ही लेना चाहीये, ये ही मेरी अति नम्र विनंती है.

मनहर.

मानव जनम लेय, आरज खेतर छेय,
उत्तम कुले जन्मेय, आयू पूरो पामीया ॥
इन्द्री पूरी निरोगी,–काया लक्ष्मीके भोगी.
साधूकी संगत जोगी, मिली इण ठामीया ॥

मुणीने सूतर, धारी सरधा थें भली पर ।
यथा शक्त करणी कर, न कीजे नीकामीया ॥
' अमोल ' ए जोगवाइ, मिली पुन्य उदे भाइ,
लावो लेवो उमाइ, शिव सुख हामीया ॥ १ ॥

इति परमपूज्य श्री कहानजी ऋषिजीके संप्रदायके बाल ब्रह्मचारी मुनीश्री अमोलख ऋषिजी विरचित् श्री " जैन तत्वप्रकाश " ग्रंथका द्वितीय खंडका प्रथम प्रकरण

समाप्तम्

प्रकरण २ रा.

सूत्र धर्म.

पढमं नाणं तउ दया; एवं चिठइ सव्व संज्जए ।
अन्नाणी किं काही, किंवा, नाही सेय पावगं ॥
दश वैकालिक अ. ४, गाथा. १०.

'प्रथम ज्ञान और फिर दया' अर्थात् ज्ञानसे जीवाजीवको जाणेगा तब उन्की रक्षा करेगा. इसलिये सर्वें धर्मात्माओंको पहली ज्ञानका अभ्यास अवश्य ही करना चाहीये. जिन्को ज्ञानका अभ्यास नही हैं, वो अपनी (पोतेकी) आत्माका कल्याण—सुख किस कामोंसे होता हैं और दुःख कोनसे कामोंसे होता है, उसे नही जाण सकेंगे. और जो सुख दुःखके कर्मोंको नही जाणेगे वो क्या कर सकेंगे? अर्थात् कुच्छ नही.

नाणस्स सव्वस्स पगा सणाए अन्नाण मोहस्स विवज्जणाए ।
रागस्स दोसस्स यसंखणणं एगंत सोख्वं समुवेइ मोख्वं ॥
उत्तराध्ययन, अ. ३२ गा. २

ज्ञान रुप हृदयमें दिव्य प्रकाश होनेसे अज्ञान

और मोहका नाश होता हैं तथा अज्ञान और मोहका नाश होनेसे हृदयमें ज्ञानमय महादिव्य प्रकाश होता है, जिनसे सर्व जगतके चराचर पदार्थोंका और रागद्वेष करके कर्म बंधके फलका ज्ञान होता हैं. जो ज्ञान करके कर्मबंध (दुःख) का कारण रागद्वेषको जाण त्यागेगा वो एकांत शाश्वत अंखड अविनासी मोक्षके सुखका सदैव भुक्ता होगा.

इसलिये सुखार्थी प्राणीयोंको प्रथम सद् ज्ञानका अभ्यास करनेकी बहुत हीं जरुर हैं. सो ज्ञान तो अपार है, सर्वज्ञ तो फक्त कैवल्यज्ञानी ही होते हैं; तो भी अपनी २ शक्ती प्रमाणे सबको ज्ञानाभ्यास थोडा बहुत जरुर करना चाहीये, जिससे अनुक्रमे सर्वज्ञ पदकी प्राप्ती होवे.

अब ह्यां सिंधूमेंसे बिंदु जैसे जिस २ बाबतोंके ज्ञानकी सुखार्थीयोंको आवश्यकता है उस्का भेद संक्षेपमें यथामती दरसाता हुं.

नवतत्व, सात नय, चार निक्षेप, चार प्रमाण, इत्यादि वस्तुओंका ज्ञान होनेसे यह प्राणी आत्माके सुख ढुंढ सकेगा.

" नवतत्व. "

जीवा जीवाय बंधोय, पुन्न पावासवे तहा ।
संवरो निज्जरा मोरक्खो, संते एहिया नव ॥

श्री उत्तराध्ययन—अ, १८ गा. १४

१ जीवतत्व. २ अजीव तत्व. ३ * बंधतत्व. ४ पुन्यतत्व. ५ पापतत्व. ६ आश्रवतत्व ७ संवरतत्व. ८ निर्जरातत्व. ९ मोक्षतत्व.

१ जीवतत्व—जीवके लक्षण—सदा जीवे (मारा मरे नहि) सो जीव सदा उप्योगवंत (५ ज्ञान ३ अज्ञान. ४ दर्शन. इन्मेंसे जघन्य (थोडे ही थोडे) तो दो उप्योग तो जीवके साथ अवश्य ही पावे; उप्योग बिन कोइ जीव नही हैं, चेतना युक्त, असंख्यात प्रदेशका धरण हार, सुख दुःखका वेदक या जाण, अनंत शक्ती वंत, सदासे है (किसीने बणाया भी नही और कोइ विनास करी सके भी

---

* इस गाथामें तो बंधतत्व तीसरा लीया है. और तीसारा ही चाहीये. परंतू अबी रुढीसे आठमा बोलते हैं सो ठीकाणे २ आठमा ही लिया जायगा.

नही अनंत शक्तीवंत (कित्नेककी प्रगट है और कित्नेककी सूर्यके तेजको बादल ढकते हैं तैसे कर्मों करके ढकी हुइ हैं परंतू सत्ता रुप तो सर्व अनंत शक्ती वंत ही हैं.) सदा शाश्वता.

श्रीठाणायांगजीके दूसरे ठाणेमें जीव दो प्रकारके फुरमाये हैं " रुवी जीवा चेव अरुवी जीवा चेव " १ अरुपी जीव (कर्म रहित) तो सिद्ध भगवंत हैं, कि जो निज रुपमें सदा एकसे संस्थित हैं. और अरुपीके कारणसे ही उन्को रुपी कर्म स्पर्श-कर सकते नही हैं.

(२) दूसरा रुपी जीव सो संसारीयोंका है. जैसे मट्टी और सोना अनादिसे भेला हैं; तैसे जीव और कर्म अनादिसे ही साथ है. वे कर्म ही लोह चमक वत् जगतके कर्मोंको संचके जीवको गुरु (भारी) बनाके अनेक रुप धारण कराके संसार चक्रमें पर्यटना करा रहे हैं.

इन कर्मोंके संयोगसे जीवके अनेक रुप होते है और जित्ने रुप होते हैं उत्नेही इस्के भेद कीये जाते है. जघन्यमें जीवके १४ भेद कीये हैं सोः—

१ सुक्ष्म एकेंद्री–यह सर्व लोकमें ठसोठस भरे हैं. किसीके मारनेसे मरे नही, कटे भिदे नही. चर्म चक्षुसे द्रष्टी आवे नही. अंगुलके असंख्यमें भागकी अवघेणा (सरीर) हैं. और अंतर मुहुर्त (३ समयसे कची दो घडी) का आयुष्य हैं.

२ बादर एकेंद्री (पृथ्व्यादि ५ स्थावर) ३ बेंद्री ४ तेंद्री ५ चौरिन्द्री ६ असन्नी पचेंद्री (जो समुच्छिम उपजे; जिन्को मन नही होवे सो) ७ सन्नी पचेंद्री माता पिताके संयोगसे देवताकी शय्यामें नर्ककी कुंभीमें उपजे सो. इन सातके अपर्यासा (आहार सरीर इंद्री श्वासोश्वास मन भाषा इन ६ प्रजामेंसे जिस्में जित्नी प्रजा हैं उत्नी पूरी नही बांधे सो) और इन सातहीके पर्यासा (पूरी प्रजा बांधे सो) ऐसे ७×२ =१४ जीवके भेद हुये. और भी जीवके ५६३ भेद हैं.

नारकीके १४ भेदः–गम्मा, वंशा, सीला, अंजना, रिठा, मग्घा, मग्गवइ, यह सात नारकीका अपर्यासा और पर्यासा यों. ७×२=१४ नर्कके भेद हुये. तिर्यंचके ४८ अडतालीस भेद.

१ इंद्री स्थावर (पृथवी काय) के दो भेद (१) सुक्ष्म (सर्व लोकमें ठसोठसे भरे हैं सो) इस्के

दो भेद अपर्याप्ता—पर्याप्ता. अब बादर पृथवी काय सो लोकके देशमें (विभागमें) हैं इस्के दो भेद. १ सुवाली. २ खरखरी. सुवालीके ७ भेद १ काली २ हरी. ३ लाल. ४ पीली. ५ श्वेत. ६ पांडू. ७ गोपीचंदन. खरखरीके २२ भेद १ वखदानकी. २ मुरड—कंकर. ३ रेत (वालू) ४ पाषाण—पत्थर. ५ शिला. ६ लूण. ७ समुद्रका लूण. ८ लोहा. ९ तांबा. १० तरुवा. ११ सीसा. १२ रुपा (चांदी) १३ सोना. १४ बज्र-हीरा. १५ हरताल. १६ हिंगलू. १७ मणसिल. १८ रत्न. १९ सुरमो. २० प्रवाल. २१ अबरख (भोडल) २२ पारा.

अढारे जातके रत्न—१ गोमीरत्न. २ रुचकरत्न. ३ अंकरत्न. ४ फटकरत्न. ५ लोहीताक्षरत्न. ६ मरकतरत्न. ७ मसालगलरत्न. ८ भुजमोचकरत्न. ९ इंद्रनीलरत्न. १० चंद्रनीलरत्न. ११ गेरुकरत्न. १२ हंसगर्भरत्न. १३ पोलाकरत्न. १४ चंद्रप्रभरत्न. १५ वेरुठीरत्न. १६ जलकांतरत्न. १७ सूरकांतरत्न. १८ सोगंधीरत्न. इत्यादि अनेक पृथ्वीके भेद जाणना. इस बादर पृथ्वीके दो भेदः—पर्याप्ता और अपर्याप्ता. यों पृथ्वीके सर्व ४ भेद हुवे.

२ बंभी स्थावर (अपकाय) के दो भेद (१) सूक्ष्म सर्व लोकमें भरे. इस्के दो भेद अपर्यासा प-र्यासा. (२) बादर अपकाय के १५ भेद. १ वर्षादका २ ठार (रातको सद बर्षे जो) का. ३ मेघरवेका पाणी. ४ धूवरका पाणी. ५ गडेका पाणी. ६ औसका पाणी. ७ ठंडा पाणी. ८ ऊना पाणी (बहुत ठीकाणे पृथ्वीमेंसे गंधरफादिककी खानके योगसे स्वाभा-वीक गरमपाणी निक़लता हैं. उसे भी सचेत (स-जीव) जाणना. ९ खारा पाणी (लवण समुद्रका तथा और भी बहुत ठीकाणे कुवेमेंसे निकलता हैं) १० खट्टापाणी। ११ दूध जैसा पाणी (क्षीर समुद्रका) १२ मदिरा (दारु) जैसा पाणी (वारुणी समुद्रका) १३ घी जैसा पाणी (घृत समुद्रका) १४ मीठा पाणी [कालोदधी समुद्रका] १५ इक्षु (सांटे) का रस जैसा पाणी [असंख्याते समुद्रोंका] इत्यादि अनेक तराहका पाणी है. इस्के दो भेद, पर्यासा—अपर्यासा सर्व ४ भेद.

३ "संप्पी स्थावर" (तेउ काय) के दो भेद [१] सुक्ष्म सर्व लोकमें भरे हैं इस्के दो भेदः—पर्यासा , (२) बादर तेउ कायके भेद १ भोभरकी

अग्नी. २ कुम्भारके नीवाडेकी अग्नी. ३ टुटती झाल. ४ अखंड झाल. ५ चकमककी ७ विद्युत् [बीजली] की. ८ तारा टुटे उस्की. ९ अरणीकी लकडीमेंसे नि-कले सो. १० बांसमेंसे निकले सो ११ काष्टकी. १२ सूर्यकांत काच (आइ ग्लास) की. १३ दावानलकी. १४ उलकापाती (आकाशमेंसे विनाश कालमें बर्षे सो अग्नी.) इत्यादि बादर अग्नीके दो भेद पर्याप्ता अपर्याप्ता. ये तेउ कायके सर्व ४ भेद हुये.

४ " सुमती स्थावर " (वाउ काय) के दो भेद (१) सुक्ष्म सो संपूर्ण लोकमें भरे है. इस्के दो भेद अपर्याप्ता—पर्याप्ता. [२] बादर वायूके १६ भेदः—१—८ पूर्व पश्चिम उत्तर दक्षिण उंची नीची त्रीछी तथा वीदिश (इशाणादि कुण) की हवा. ९ भमल वाय. (चक्र पडे सो) १० मंडलवाय (चार खुणे फिरे सो) ११ गुडलवाय. [ऊंची चडे सो] १२ गुंजवाय. (वांजित्र जैसा अवाज होवे सो) १३ झंजवाय. (झाड उ-खाड डाले सो) १४ सुद्धवाय (मधुर २ चले सो) १५ घनवाय. १६ तनवाय (ये दोइ नर्क स्वर्गके नीचे हैं) इत्यादिक अनेक भेद है. इस्के दो भेद प-र्याप्ता—अपर्याप्ता सर्व वाउके ४ भेद.

५ "पयावच स्थावर" (वनस्पति काय) के दो भेद (१) सुक्ष्म सो सर्व लोकमें भरे है. इस्के दो भेद पर्याप्ता–अपर्याप्ता. (२) बादरके दो भेद. (१) प्रत्येक. (२) साधारण. (१) प्रत्येक उसे कहते है की जिस्के एकेक सरीरमें एक जीव. इसके १२ भेद. १ रुखा. २ गुच्छा. ३ गम्मा. ४ लया. ५ वेली. ६ तणा. ७ वलया. ८ पव्वया. ९ ऊहणा. १० जलरुहा. ११ ओसेही. १२ हरीकाय.

१ रुखाके दो भेदः–१ 'एकठीया' एकेक बीजवाले, जैसे हरडे–बहेडा–अमला–अरीठा–भीलामा–आसोपालव–आंब–जांबू–बोर–लींबू–मउडा–रायण (खिरणी) इत्यादि बहोत भेद है. और 'बहुठिया' (बहोत बीजवाले) जैसे जामफल, सीताफल, दाडम (अनार), बीलफल, कवीठ, केर, लिम्बू इत्यादि बहोत भेद हैं.

२ 'गुच्छा' उसे कहते है की छोटे २ झाड जैसे रींगणी, भूरींगणी, जवासा, तुलसी, पूंवाडया इत्यादि बहोत भेद हैं.

३ 'गम्मा फूलके झाडोंको कहते हैं, जैसे जाइ जूइ, केतकी, केवडा, इत्यादि.

४ 'लया' (लता) उसे कहते हैं जो धरतीपे प्रसरके ऊंची रहे. जैसे नागलता, आशोकलता, पद्म-लता; इत्यादि बहुत भेद है.

५ 'वल्ली' वेलडीयो चले सो. जैसे तोरु, काकडी, कारेले, कंकोडा, तूबडा, खरबूजे, तरबूजे, बालोर, इत्यादि बहोत भेद हैं.

६ 'तणा' (त्रणा) जैसे घांस, द्रोह, डाभ, इ-त्यादि बहोत भेद हैं.

७ 'वलया' उसे कहते है जो झाड उंचे (उपर) जाके गोलाकार होए; जैसे सूपारी, खारक, खजूर, दालचीनी, तमाल, नालेर, इलायची, लोंग, ताड, केले इत्यादि बहुत भेद हैं.

८ 'पव्वया'—उसे कहते हैं जिसमें गांठ होवे; जैसे सांठा, ऐरंड, बेत, वांस, इत्यादि.

९ 'कुहाणा' उसे कहते है जो धरती फोडके जोससे निकले; जैसे, बीलीके वेले, कुत्तेके टोप इत्यादि.

१० 'जल रुहा' उसे कहते हैं कि जो पाणीमें पैदा होए; जैसे कमल, सींघोडा, कमल काकडी, शेवाल इत्यादि.

११ 'ओसही' चोवीस प्रकारके अनाजको कहते है. इसमेंसे लाह (दाल न होए ऐसे) के १२ भेदः—१ गहु. २ जव. ३ जुवार. ४ बाजरी. ५ शाल. ६ वरी. ७ बरटी. ८ राल. ९ कांगणी. १० कोदरा. ११ मणची १२ मकी १३ कुरी. १४ अलसी. कठोल (दाल होवे ऐसे) अनाजके १० भेदः—१ तूवर. २ मोढ. ३ उडद. ४ मूग. ५ चवला. ६ बटला. ७ तिवडा. ८ कुलत्थ. ९ मसूर. १० चिणा. यह सर्व २४ प्रकारके अनाज हुये.

१२ 'हरीकाय' भाजी पानको कहते हैं; जैसे मूलीकी भाजी, मेथीकी, वथवाकी, चंदलाइकी, सुवाकी इत्यादि अनेक प्रकारकी भाजी हैं.

यह प्रत्येक वनस्पति उगती वक्त अनंते जीव. हरी रहे वाहांतक असंख्याते जीव. पाके पीछे बीज जित्नी या एक दो संख्यात जीव होते हैं. इस्के दो भेद, अपर्याप्ता—पर्याप्ता.

(२) साधारण वनस्पति जमीकंद [कंद मुल] को कहते हैं. इस्के बहुत भेद हैं; जैसे मुला, अद्रक, पिंडालू, लशण, कांदा, सुरण कंद, बज्रकंद, गाजर, आलु, मूसली, खुरसाणी, अमरवेल, थूअर,

हलदी, सिंह करगी, सकरकंद इत्यादि बहोत प्रकार हैं. यह एक सुइकी अग्र उपर आवे इत्नेमें असंख्याती श्रेणी (घरकी सतर) एकेक श्रेणीमें असंयाती प्रतर [घरकी मजलो] एकेक प्रतरमें असंख्याते गोले (जैसे अफीमकी वट्टीयो जमाइ) एकेक गोलेमें असंख्याते सरीर, जैसे प्रमाणुअें. एकेक सरीरमें अनंत जीव. इत्ने जीवोंका पिंड हैं. इसका आहार करना सो महा पापका कारण जैन और वैष्णवोंके शास्त्रमें बताया हैं. क्योंकी जैसे स्त्रीका कच्चा गर्भ निकालते हैं तैसे ही जमीनमें रहा कंद कभी पकता नही हैं, कच्चा ही निकालता हैं. यह अभक्ष्य कहा है. इस्के जीव एक श्वासोश्वासमें १७॥ जन्म मरण करते हैं. और एक मुहुर्तमें ६५५३६ जन्म मरण करते हैं. इस्के दो भेदः—पर्याप्ता अपर्याप्ता. इन चार स्थावरमें असंख्याते और वनस्पतिमें संख्याते असंख्याते तथा अनंते जीव होते हैं. † यह

† किसीका कहना होता है की एक सइकी अग्र भाग जित्नी थोडी जायगामें अनंत जीवका समाव किस्तराह होता हैं? उत्तरः—जैसे क्रोड औषधीका अर्क नीकालके तेल बणाया. या बाटके चूर्ण बणाया. वो सूइके अग्रह उपर आवे जित्नेमें क्रोड औषध होती है

स्थावर तिर्यंचके २२ भेद हुये.

६ जंगम काय (त्रस जीव). यह जीव ८ तरहसे उपजते है. १ 'अंडया' (अंडेसे पक्षी प्रमुख) २ 'पोयया' [कोथलीसे हाथी प्रमुख] ३ 'जराउया' [जडसे गाय मनुष्य प्रमुख] ४ 'रसया' [रससें कीडे प्रमुख] ५ 'संसेयया' [पसीनेसे ज्यूं पटमल प्रमुख] ६ 'समुच्छिमा' [समुछिम कीडी मक्खी प्रमुख] ७ 'उब्भीया' (पृथवी फोडके निकले तीड प्रमुख) ८ 'उववातिया' [उपजे देवता नारकी]. त्रसके लक्षणः—संकोचीयं (सरीरको संकोचे) पसारीये, (पसारे.) रोयं (रुदन करे). भत्तं [भय भीत होवे]. तसीयं [त्रास पावे]. पलाइयं [भग जावे] इत्यादि त्रसके ४ भेद. (१) बेंद्री=काया और मुखवाले जीव जैसे संख, सीप, कोडी, गीडोले, जलोक, लट, अलसीये, पोरे, क्रीम, इत्यादि. इस्के दो भेद

तैसे ही अनंत जीव जाणना. अब भी एक अंगूठी (वीटी) देखी हैं उसमें एक बाज़र जित्ने कांचमें आट फोटोग्राफ वडे २ मनुष्यके देखे है. जो कृत्रीम पदार्थोमें इत्नी सत्ता हे तो फिर कूदरती पदार्थोंका क्या कहेना? इसलिये जिन वचनमें संदेह नही लाना.

पर्याप्ता अपर्याप्ता. [२] तेंद्री—काया मुख और नाकवाले जीव, जैसे ज्यूं लीख कीडी, षटमल, कंथूवे, घनेरे, इल्लि, उदाइ, (दीमक) मकोडे, गधइयं, इत्यादि. इस्के दो भेद पर्याप्ता अपर्याप्ता, (३) चौरिंद्री—काया मुख नाक और आंखवाले जीव, डांस, मच्छर, मक्खी, तीड, पतंग, भमरे, विच्छू, खेकडे, फुद्दी, मकडी, बग्ग, कंसारी, इत्यादी बहुत है. इस्के दो भेदः—पर्याप्ता, अपर्याप्ता. ये विगलेंद्री के ६ भेद हुये.

[२] तिर्यंच पचेंद्री, काया मुख नाक आंख और कानवाले जीव. उन्के भेद [१] गर्भज (गर्भसे पैदा होवे) २ समुच्छिम आपसे ही पैदा होवे. इन ऐकेकके पांच २ भेद. १ जलचर—पाणीमें रहनेवाले जीव जैसे, मच्छ, कच्छ, मगर, सुसमा, काछबे, मेंडक, इत्यादि. (२) थलचर—पृथवी पे चलनेवालेके ४ भेद १ एक खुरा, एक खुरवाले घोडा गद्धा. (२) दो खुरा, फटे खुरवाले, गाय भैंस बकरे. ३ गंडीपया—गोल पगवाले, हाथी ऊंट गेंडा प्रमुख. ४ सणपया—पंजवाले सिंह चीत्ते कुत्ते बिल्ली बंदर प्रमुख (३) खेचर—आकाशमें उडनेवाले पक्षीके ४ भेद १ रोम पक्षी—रूम (केश-

की पांख)वाले जीव जैसे मयूर, चीडी, कबूतर, मेना, तोता, जलकुकडी, चील, बगले, कोयल, तीतर, सीकरा [बाज] होल, चंडूल इत्यादि बहुत हैं. २ चाम पक्षी—चमडेकी पांखवाले जैसे चामचीडी, वटवा-गल, प्रमुख बहुत हैं. ३ सामंत पक्षी, सो डब्बे जैसी गोल पांखवाले और ४ वीतत पक्षी, विचित्र तराहकी लम्बी पांखवाले. यह दोनु जातके पक्षी, आढाइद्वीप के बाहीर होते हैं. ४ उरपर—पेटके जोरसे चलनेवाले जीवके ४ भेद. १ अही (सर्प) एक फण करते है और दूसरे फण नही करते हैं. यह पांच ही रंगके होते हैं. २ अजगर मनुष्य प्रमुखको गल जाय सो. ३ अलसीय, मोटी शन्याके§ नीचे पैदा होवे. ४ मोहोर्ग—बडी अवघेणा [सरीर] वाले* उत्कृष्ट एक हजार योजनका सरीर होता है. ५ भुजपर—भूजोंके

§ चक्रवर्ती तथा वासूदेवके पुन्य खुट जाते हैं तब उनके घोडेकी लीदमें १२ योजन [४८ कोस] की कायावाले अलसीये उपजके मरते है. उस्के तड-फडनेसे पृथवीमें खडा पडता है उस्से सब शैन्या कु-टुंब ग्राम दब—दट मरता हैं.

* अठाइद्विपके बाहिर होता है.

जोरसे चलनेवाले जीव, जैसे, ऊंदर, नवल, घूंस, काकीडा, बिस्मरा, गिलोरी, गोयरा, गो, इत्यादिक बहुत प्रकार हैं. यह पांच भेद सन्नीके और पांच असन्नीके ये १० के पर्याप्ते और अपर्याप्ते ऐसे २० स्थावरके २२ और त्रसके २६ मिलके तिर्यंच के ४८ भेद हुये.

मनुष्यके ३०३ भेद.

मनुष्यके दो भेद. गर्भज और समुच्छिम. इस्मेंसे गर्भज मनुष्यके २७२ भेद होते हैं. १५ कर्म भूमी ३० अकर्म भूमी और ५६ अंतर द्वीपा. १०१ कर्म भूमी उसे कहते हैं की जाहां अस्सी हथीयार बांधके, मस्सी वेपार वणज करके और कस्सी कृषी कर्म खेतीवाडी करके जो आजीविका [उदरपूर्णा] करते हैं इनके रहनेके १५ क्षेत्रः—१ भर्त. १ ऐरावत. १ महाविदेह ये ३ क्षेत्र जंबूद्वीपमें; दो दो भर्त एरावत महा विदेह ये ६ क्षेत्र धातकीखंड द्विपमें; दो भरत, दो एरावत, दो महाविदेह ये ६ क्षेत्र पुष्करार्ध द्विपमें [१५ हुये.] अकर्म भूमी उनको कहते है; की जांहां पूर्वोक्त तीनही प्रकारके कर्म नही है; दश प्रकारके कल्प वृक्ष इच्छा पुरे; इनके रहणेके ३० क्षेत्रः—१ देवकुरु १ उत्तर कुरु १ हरीवास. १२ रमकवास. १ हेमवय. १ एराणवय यह

६ जंबूद्वीपमें. और येही दो दो यों १२ धातकी खंड तथा पुष्करार्ध द्वीपमें [ए ३० हुये.] अंतरद्विपे लवण समुद्रमें पाणी पर अधर रहते है इन्के ५६ क्षेत्र. चूल हेमतवंत और शीखरी पर्वत एकेकमें दो दो दाढा निकलके लवण समुद्रमें ४० दाढे गइ. ये एकेक दाढा पे सात २ द्वीपे. यों ५६ अंतरद्वीपे हुये. यह १०१ क्षेत्रके मनुष्यके पर्याप्ते और अपर्याप्ते. यों २०२ हुये. इन एकसो एक क्षेत्रके मनुष्यकी चउदे वस्तूमें समुर्च्छिम§

§ १ ऊचारे सूवा (दिशा—फराकतमें) २ पासवणे सुवा (पेशाबमें) ३ खेले सुवा [खेंकारमें] ४ संघेणा सुवा (नाकके सेडेमें)५ उत्ते सुवा [उलटीमें] ६ पित्ते सुवा [पित्तमें] ७ सुए सुवा (पीरु—रस्सीमें) ८ पूए सुवा [लोहीमें] ९ सुक्के सुवा [शुक्र—वीर्यमें] १० " सुक्के पुद्गले पडिसारे सुवा " [सुक्रके पुद्गल सुखके पीछे आले हुये उस्में] ११ विन जीव कलेवर सुवा (मरे मनुष्यके सरीरमें) १२ इत्थी पुरुष संजोग सुवा [स्त्री पुरुषके संयोगमें] १३ नगर निधमणे सुवा. (नगरकी नालीयोंमें) १४ " सव्वेषुचेव असुइ ठाणे सुवा " सर्व अशुची स्थानकमें. यह १४ वस्तू सरीरसे दूर हुये पीछे अंतर मुहुर्तमें उस मनुष्य जैसे असंख्यात सुमार्छिम मनुष्य पेदा होते हैं और मरते हैं. इनके स्पर्शसे असंख्य जीव मर जाते हैं.

जीव पेदा होते हैं. ये सब समुर्छिमके १०१ भेद मिलानेसे ३०३ भेद मनुष्यके हुये.

देवताके १९८ भेद.

१० भवनपती. १५ परमाधामी. १६ बाणव्यंतर. १० तीर्यंझमक. १० ज्योतिषी. ३ किल्भीषी. १२ देवलोक. ९ लोकांतिक. ९ ग्रीवेक. ५ अनुत्तरविमान. यह सर्व ९९ इनके अपर्यासे और पर्यासे. ये १९८ देवताके भेद हुये.

१८ नर्क ४८ तिर्यंच ३०३ मनुष्य और १९८ देवके ये सर्व मिल ५६३ जीवके भेद हुये और उत्कृष्ट जीवके अनंते भेद होते हैं. यह तत्व ज्ञेय -जाणने योग्य हैं. इति जीव तत्वं.*

अजीवतत्व.

अजीवके लक्षणः-जीवका प्रति पक्षी सो अजीव. जड चेतना रहित अकर्ता अभोक्ता; इसके दो भेद १ रुपी और २ अरुपी. जघनसे अरुपीके १० भेद. धर्मास्तीके तीन भेद १ खंध सर्व लोकमें व्यापा सो २ देश उसमेंका थोडा विभाग. ३ प्रदेश

* इनका विशेष विस्तार दूसरे प्रकरणमें देखो.

देशमेंसे ही थोडा विभाग. ऐसे ही अधर्मास्तीके भी तीन भेद आकास्तीका खंध सर्व लोक व्यापी. २ देश थोडा ३ प्रदेश बहुत ही थोडा. ये तीनीके ९ भेद हुये और दशमा कालका एकही भेद. ये अरुपी अजीवके १० भेद संक्षेप. रुपी अजीवके ४ भेद. वर्ण गंध रस स्पर्शका सर्व लोक व्यापी पिंड सो १ खंध २ देश (थोडा) ३ प्रदेश (बहुत थोडा) ४ परमाणु सो अति सुक्ष्म जिस्के एकके दो नही होवे ऐसे.

अजीवके ५६० भेद जिस्मेंसे अरुपी अजीवके ३० भेद. १० दश तो पहले कहैं. और धर्मास्ती कायको पांच तरहसे पेछाणना १ द्रव्यसे धर्मास्तीका एक ही द्रव्य हैं २ क्षेत्रसे संपूर्ण लोकमें व्याप रहा हैं. ३ कालसे आदि और अंत रहित हैं. ४ भावसे अरुपीं वर्ण गंध रस स्पर्श रहित हैं. ५ इसका गुण सकर्मी जीवोंको चलण साह्य देणेका हैं. २ ऐसे ही अधर्मास्तीको ५ तराहसे पेछाणना, विशेष इत्नाही के इसका गुण चलती वस्तूको स्थिर करनेका. ३ ऐसे ही आकास्ती काय ५ तरहसे पेछाणना. १ द्रव्यसे एक द्रव्य २ क्षेत्रसे लोक अलोकमें संपूर्ण व्याप रहा हैं. यह पोलाड रुप हैं. लोकाकाशमें तो अनेक पदार्थ हैं.

है, और अलोकमें कुछ नही, एक सुन्यकार पोलाड हैं. ३ कालसे आदी अंत रहित. ४ भावसे अरुपी वर्णादि रहित ५ गुण इस्का गुण आकाशमें वीकाशका वस्तूको अवकाश देनेका हैं. ४ कालास्ती ५ तराहसे पेछाणना द्रव्यसे काल अनंत तो बीत (चला) गया और अनंत बाकी रहा है. अर्थात् अनंत हैं. २ क्षेत्रसे व्यवहार काल अढाइद्धिपके अन्दर है. अर्थात् अढाइद्धीपके अंदरके चंद्र सूर्य चलते है. जिससे समय घडी पहर रात दिन पक्ष मास बर्ष जावत सागरोपम तककी गिणती होती हैं. और अढाइद्धिपके बाहिरके चंद्र सूर्य स्थिर है. उससे रात्री दिन कुछ नही है. तथा नर्क स्वर्गमें रात्री दिन नही है, इसलिये व्यवहारिक काल तो अढाइद्धिपके अंदर है. और मृत्यूकाल तो फक्त सिद्ध भगवंतके जीव छोडके सर्व जीवोंका आयुष्य पूर्ण हुये भक्ष कर रहा है. कालसे, काल आदि और अंत रहित है. हमेशासे हैं और हमेशा रहेगा. भावसे काल अरुपी वर्णादि रहित हैं. ५ इसका गुण पर्यायका परावर्तन करनेका हैं. नवेको जूना बनावे और जूनेको खपावे. यह च्यारही अजीव शाश्वते है. एकेकके ५ भेद

होनेसे ५×४=२० भेद हुये. और दश पहलेके सर्व अजीव अरुपीके ३० भेद हुये.

अजीव रुपीके ५३० भेद. काले वर्ण में दो गंध स्पर्श ८ फर्स ओर ५ संठाण इन २० बोलकी भजना. ऐसेही हरेमें. लालमें पीलेमें और श्वेतमें पूर्वोक्त २० बोलकी भजना. सर्व पंचवर्णके १०० भेद. सुगंधमें ५ वर्ण ५ रस ८ स्पर्श ५ संठाण ए २३ बोलकी भजना. ऐसेही दूर्गंधमें भी २३ बोल जाणना. ये दो गंधके ४६ भेद हुवे. खट्टे रसमें ५ वर्ण २ गंध ८ स्पर्श और ५ संठाण ए २० बोलकी भजना. ऐसे ही मीठे तीखे कडवे कसायलेमें २०–२० बोल. ये रस १०० हुये. हलके फरसे का भारी प्रतिपक्षी, बोल पावे, २३, ५ वर्ण, २ गंध ५ रस ६ स्पर्श (हलका भारी छूटा) ५ संठाण. ऐसे ही भारी का हलका प्रतिपक्षी. और पूर्वोक्त २३ बोल पावे. ठंडे स्पर्शका गर्म प्रतिपक्षी बोल तेवीस. ५ वर्ण २ गंध ५ रस ६ स्पर्श (ह्यां ठंडा ऊन्हा छूटा). ५ संठाण. ऐसे ही गर्मका ठंडा प्रतिपक्षी. और २३ बोल पूर्वोक्त. लूखाका प्रतिपक्षी चोपडा (चीकणा) इसमें ५ वर्ण २ गंध ५ रस ६ (ह्यां लूखा चीकणा छूटा) ५ संठाण. ऐसे ही

चीकणे के प्रतिपक्षी लूखेमें भी २३ बोल. सुवाला-नर्म का प्रतिपक्षी खरखरा-कठण. इसमें ५ वर्ण २ गंध ५ रस ६ स्पर्श ५ संठाण. ऐसे ही खरखरेका प्रतीपक्षी सुवाला इसमें बोल २३ पूर्वोक्त. यह आठ स्पर्श के १८४ बोल हुवे.

वट्टे (गोल-लाड्डू जैसा) में ५ वर्ण २ गंध ५ रस ८ यह स्पर्श २० बोलकी भजना. ऐसे ही २ तंसे (तीन खूणा) ३ चौरंसे (चौखूणा) ४ मंडल (चूडी जैसा गोल) ५ आइतंस (लंबा) इन ५ में २०-२० बोल, सर्व १०० हुवे. यह अजीव रुपीके सर्व ५३० भेद. रुपी अरुपी दोइके ५६० हुये.

३ पुन्यतत्व.

पुन्यके फल मीठे. पुन्य फल उपराजने मुशकल. पुन्यके फल भोगवने सुलभ. यह पुन्य ९ प्रकारसे बंधता हैं. १ आण पुन्ने (अन्नदान देनेसे), २ पाण पुन्ने (पाणीका दान देनेसे), ३ लेण पुन्ने (पात्र-वरतन-भाजन देनेसे), ४ सेण पुन्ने (सेज्जा-मकान देनेसे), ५ वत्थ पुन्ने (वस्त्र देनेसे), ६ मन पुन्ने (मनसे दूसरेका भला चिंतवनेसे), ७ वचन पुन्ने (बचनसे दुसरेका गुणानुवाद करनेसे और उपकारी

सुखदाता बचन ऊच्चारनेसे), ८ काय पुन्ने (सरीरसे दूसरेकी व्यावच करनेसे, अच्छे मनुष्यको साता उपजानेसे) ९ नमस्कार पुन्ने (योग्य ठीकाणे नमस्कार करनेसे तथा सर्व के साथ नम्रतासे प्रवर्तनेसे) ये नव प्रकारके पुन्य करती वक्तमें तो पुद्गलों परसे ममता उतारनी पडती है. महीनत करनी पडती है. भोगवती वक्त आराम–सुख देता है. ये नवप्रकारे बन्धा हुवा ४२ प्रकारे भोगवते हैं. १ साता वेदनी. २ उंचगोत्र. ३ मनुष्यगती. ४ मनुष्यानूपूर्व्वी. * ५ देवगती. ६ देवानुपुर्वी. ७ पचेंद्रीकी जात ८ उदारिक सरीर. ९ वैक्रिय सरीर. १० आहारिक सरीर. ११ तेजस सरीर. १२ कारमाण सरीर. १३ उदारिक अंगो§पाग. १४ वैक्रिय अंगोपांग. १५ आहारिक अंगोपांग. १६ वज्रऋषभ नारच संघेण. १७ समचउरस संठाण. १८ शुभवर्ण. १९ शुभगंध. २० शुभरस. २१ शुभ स्पर्श. २२ अगुरु लघू नाम. (लोह पिंड जैसा हो के भी हलका फूल जैसा.) २३ पराघात नाम.

---

* इस भवसे बांधके दूसरे भवमें ले जाय सो आनापूर्वी. § अंग सरीर और उपांग हाथ पाव अंगुली आदि.

२४ उश्वास नाम. २५ आताप नाम. (प्रतापी) २६ उद्योत नाम. (तेजस्वी) २७ शुभ चलनेकी गती. २८ निर्माण नाम. (मोक्षगामी) २९ अत्रसनाम. ३० बादर नाम. ३१ पर्यासा नाम. ३२ प्रत्येक नाम. (एक सरीरमें एक जीव.) ३३ स्थिर नाम. ३४ शुभ नाम. ३५ सौभाग्य नाम. ३६ सुस्वर नाम. ३७ आदेय नाम. (बहु याद करे ऐसा) ३८ जसो कीर्तिनाम. ३९ देवताका आयुष्य. ४० मनुष्यका आयुष्य. ४१ तिर्यंचका आयुष्य. ४२ तिर्थंकर नाम कर्म. ये ४२ प्रकारसे पुन्य फल भोगवते हैं. यह पुन्यका जाणपणा अवश्य करना. और आदरने ठीकाणे आदरे तथा छोडनेके ठीकाणे छोडे. इस्का विवेकवंतको बीचार करना चाहिये. क्योंकी एकांत छोडने योग्य कहे तो तिर्थंकर गोत्र उपराजने जैसी वस्तुका उत्थापन होवे. और एकांत आदरने योग्य कहे तो पुन्य फल भोगवे विन मोक्ष नही मिले, इसलिये मोक्षका अटकाने वाला हुवा. इस लिये जांहा लग मोक्षके नजीक नही होवे वहां तक आदरने योग्य हैं. शास्त्रमें पुन्यकी प्रशंसा बहुत ठीकाणे करी है ठेट तेरमे गुणस्थान तक पुन्य

प्रकृती लगी हैं. इस लिये एकांत उत्थापन नही करना चाहिये.

४ पाप तत्व.

पापके पल कडुवे, बांधणे सहज, और भोगवणे मुशकील. यह पाप अठारे प्रकारे बंधता [होता हैं] १ 'प्राणातिपात'–जीवकी हिंसा. २ 'मृषावाद'– झुट बोले ३ अदत्तादान–चोरी. ४ मैथून (स्त्री यादि संग) ५ परिग्रह–धन संग्रह. ६ क्रोध गुस्सा. ७ मान अहंकार. ८ माया–कपट–दगा, ९ लोभ–तृष्णा १० राग–प्रेम. ११ द्वेष–अप्रेम. १२ कलह–क्लेश–झगडा. १३ अभ्याख्यान–खोटी आल. १४ पैशून्य–चुगली. १५ परपरिवाद–निंदा. १६ रति अरति–हर्ष सोग १७ माया मोषो–कपट युक्त झुट, १८ मिथ्या दंशण सल–असत्य (खोटे) दर्शन (मत) की शल्ल (श्रद्धा आस्ता). यह १८ काम करनेसे पाप अशुभ कर्मका बंध होता हैं.

इस्को ८२ प्रकारे भोगवते हैं. १ मतिज्ञानावरणी. २ श्रुती ज्ञानावरणी. ३ अवधी ज्ञानावरणी. ४ मनः पर्यव ज्ञानावरणी. ५ केवल ज्ञानावरणी. (इन ५ ज्ञानकी प्राप्ती न होवे) ६ निद्रा (सुखसे

आवे सुखसे जगे) ७ निद्रा निद्रा (दुःखसे आवे दुःख से जगे) ८ प्रचला (बेठे २ आवे) प्रचला २ (च-लते आवे) थिणाद्धि निद्रा (इस निंदमें आधा वासूदेवका पराक्रम आवे) १० चक्षू दर्शनावरणी. (अन्धा होवे) ११ अ चक्षु दर्शनावरणी (आंख विन चार इंद्रीकी हीणता प्राप्त होवे) १२ अवधी दर्शनावरणी. १३ केवल दर्शनावरणी (ये दोइ द-र्शन न होवे) १४ असाता वेदनी. १५ दानांतराय (दान न दीया जाय) १६ लाभांतराय [कमाइ लाभ न होवे] १७ भोगांतराय (खानपान न मिले) १८ उप भोगांतराय (स्त्री वस्त्र भुषण न मिले) विर्यांतराय (तप–संयम–धर्म न कर सके) २० नीच गौत्र. २१ 'मिथ्यात्व मोह' [जैसे कोइ न-सेमें बेशुद्ध होके उलटा समजे तैसे मिथ्यात्व मोह वाला धर्मको धर्म और अधर्मको धर्म श्रधे] २२ स्थावर पणा. २३ सुक्ष्म पणा २४ अपर्याप्ता पणा. २५ साधारण पणा. २६ अस्थिर नाम. २७ अशुभ नाम. २८ दौर्भाग्य नामः २९ दुस्वर नाम. ३० अ नादेय नाम. ३१ अयशो कीर्त्ति नाम. ३२ नरक गती ३३ नर्कका आयुष्य. ३४ नर्कानुपूर्वी ३५–३८ अ-

नंतानु बंधीका क्रोध–मान–माया–लोभ. ३९–४२ अप्रत्याख्यानी क्रोध–मान–माया लोभ. ४३–४७ प्रत्याख्यानीका–क्रोध–मान–माया लोभ. ४८–५२ संज्वलका क्रोध–मान–माया–लोभ ५२ हास्य (हशना) ५३ रती ५४ अरती. ५५ भय. ५६ शोक (चिंता) ५७ दुगंछा. ५८ स्त्री वेद. ५९ पुरुष वेद. ६० नपुशक वेद. ६१ तिर्यंच गती ६२ तिर्यंचानुपूर्वी. ६३ एकेंद्री पणा. ६४ बेंद्री पणा. ६५ तेंद्री पणा. ६६ चौरिंद्री पणा ६७ अशुभ चलनेकी गती ६८ उपघात नाम. (अपने सरीरसे आपकी मृत्यू होए) ६९–७२–अशुभ वर्ण–गंध–रस–स्पर्श. .७३ ऋषभ नारच संघेण. ७५ अर्धनाराच संघेण. ७६ केलिक संघेण. ७७ छेवट संघेण, ७८ निगोह परि मंडल संठाण ७८ सादी संठाण. ७९ वामन संठाण. ८० कुब्ज संठाण. ८१ हुंडक संठाण. यह बयाली प्रकारसे पाप भुगतना पडता है. ये हेय अर्थात् छोडने योग्य हैं.

५ आश्रव तत्व.

जैसे नावमें छिद्र कर पाणी आनेसे वो भरा जाती है तैसे जीवरुप तलावमें आश्रवरुप छिद्र करके

पापरुप पाणी आनेसे जीव पाप करके भराता है. और संसार समुद्रमें डुब जाता है. ये आश्रव (पाप आनेके नाले) २० हैं.

१ मिथ्यात्व आश्रव. (कू देव–गुरु–धर्मकी श्रद्धा से तथा २५ मिथ्यात्व सेवनेसे आश्रव लगता है) २ अव्रत आश्रव (पंच इंद्री मन और ६ कायसे १२ अव्रत लगती है.) ३ कषायाश्रव. [क्रोधादिक २५ कषाय सो] ४ प्रमाद आश्रव (मद विषय कषाय निंदा विकथा ए ५ प्रमाद) ५ योग आश्रव [मन वचन कायाकी प्रवृत्ति सो) ६ हिंसा. ७ झूट. ८ चोरी. ९ मैथून. १० परिग्रह संग्रह इन पांच कामसे आश्रव लगे). ११ श्रोत. १२ चक्षु. १३ घ्राण. १४ रस. १५ स्पर्श ये ५ इंद्रीको कुकाममें लगावे तो) १६ मन. १७ वचन. १८ काया (ये तीन योग पापमें प्रवर्तानेसे). १९ भंड उपगरण (वस्त्र पात्र) अयत्नासे लेवे और रक्खे तो. २० सूइ कुश [त्रण] मात्र भी अयत्नासे ग्रहे और रक्खे तो आश्रव.

विशेषसे इन आश्रवके ४२ भेद होते हैं. सो पहली २० बोल कहे उसमेंसे १७ बोल तो वोही ह्यां ग्रहण करना. और पच्चीस क्रिया.

२५ क्रिया.

जिससे पाप आवे उसे क्रिया कहते है. इस क्रियाके दो भेद है. (१) जीवसे लगे सो (२) दूसरी अजीवसे लगे सो. जीवसे लगे उस्के भी दो भेद. (१) सम्यक्त्वी जीवको लगे (२) मिथ्यात्वीको लगे. और अजीव क्रिया दो प्रकारकी है (१) इरियावही क्रिया [रस्तेमें चलते लगे] (२) संपराइ (कषायादिक उत्पन्न होनेसे लगे)

शंका–चलन कार्य तो जीवकी सत्ताका है फिर क्रियाको अजीव क्यों कही ?

समाधान–कर्म आनेके कारणको क्रिया कही जाती हैं, सो कर्म तो अजीव चौफरसी पुद्गल है. इस लिये क्रिया भी अजीव कही जाती हैं.

संपराइ क्रियाके चोवीस भेद. १ 'काइया क्रिया' अयत्नाके काममें काया प्रवर्तानेसे लगे. इसके दो भेद (१) अव्रतीकी काइया क्रिया अर्थात् जिनोने पापके त्यागन नही कीये हैं उन्को गत भव श्रेणिमें जो पाप करके आये हैं उस्की तथा ह्यां व्रत नही किये उसकी क्रिया आ रही हैं. [२] वृतीकी अर्थात् साधू श्रावक अन उप्योगसे अयत्नासे का-

याको हलन चलनादि कार्यमें प्रवर्तावे उससे लगे. २ 'आहीगरणीया क्रिया' जो शस्त्रसे लगे, जैसे सूइ कतरणी चक्कु, छूरी, तलवार, भाला, बरछी, तीर तमंचा, बंदूक, तोप, कुदाली, पावडा, पहार, हल, बखर, घट्टी, मूसल, खल, बत्ता, इत्यादिक शस्त्रोंको संग्रहना सो. इस्के दो भेद [१] शस्त्र पूरे करना जैसे तलवारको मूठ, घट्टीको खूटा, चकुको हाथा इत्यादि बैठाना तथा तिक्ष्ण धार करनी जिससे वो उप्योगमें आवे और आरंभमें लगे. (२) पूर्वोक्त शस्त्र नवीन बनवाके संग्रह करे तथा बेचे, जिन शस्त्रोंसे जित्ना जगतमें पाप होगा उत्ना पाप उस करनेवालेको लगेगा. ३ "पाउसिया" द्वेष प्रणामसे लगे अर्थात् दूसरेको धनवान बलवान सुखी देखके द्वेष भाव लावे इर्षा करे ऐसा चिंतवे की ये कब दुःखी होगा? तथा कृपण पापी इत्यादि दुष्टोंका नुकशान देख हर्ष लावे की बहुत अच्छा हुवा, ए दुष्ट पर दुःख पडा. इस्के दो भेद (१) जीवपे द्वेष लाना अर्थात् अमुक मनुष्य व पसुको दुःख होवे तो अच्छा. [२] अजीवपे द्वेष लावे अर्थात् वस्त्राभुषण मकान इनका विनास कब होगा. यह दोनु कर्म बंधका हेतु है.

४ "परितावणिया" परिताप उपजाना. अर्थात् कठोर वचनसे या ताडन तर्जनसे दूसरेको परिताप (दुःख) उपजाना. सरीरके अवयवके छेदनेसे ये क्रिया लगती है. इस्के दो भेद. (१) 'सहथ' अपने हाथसे बचनसे दूसरेको दुःख देवे सो. (२) परहथ, दूसरेके हाथसे दूसरेको दुःख दिलानेसे यह क्रिया लगती है.

५ "पाणाइवाइया क्रिया" प्राणातिपाती क्रिया अर्थात् विषसे शस्त्रसे इत्यादि जोगसे जीवोंका बध करे सो प्राणातिपातकी (प्राण—जीवसे, अती—दुसरी, तर्फ पात—पाडना) क्रिया लगे इस्के दो भेद (१) आपके हाथसे जीवको मारे, सीकार खेले. (२) दूसरेके पास जीवको मरावे अर्थात् सीकारी कुत्ते छोडके वगेरा तथा मारतेके हिम्मत देवे हां मार, देखता क्या है? इत्यादि कहके हिंसा करावे उसे लगे.

६ "आरंभीया क्रिया" पृथ्वी पाणी अग्नी हवा हरी या हलते चलते प्राणीयोंकी हिंसाका त्याग नही किया है, उन्को जित्ना जगतमें आरंभ हो रहा हैं उन सबका पाप आ रहा है. इस्के दो भेद [१] जीवका आरंभ होए उस्की और (२) अ-

जीव [निर्जीव] का आरंभ होय उसकी ये दो तराह लगती हैं.

७ 'परिग्रहीया' धन धान दौपद चौपदादिक परिग्रह रखनेके त्याग न होय तो जित्ना जगतमें परिग्रह है उसका पाप उसे लगता हैं. इस्के दो भेद (परिग्रह दो तरहका होता हैं) [१] जीव परिग्रह सो दास दासी पसु पक्षी अनाज इत्यादिककी क्रिया आवे [२] अजीव परिग्रह सो वस्त्र पात्र भूषण मकान इत्यादिककी क्रिया हमेशा आती है.

८ 'मायावत्तीया' कपट करनेसे क्रिया लगे. इस्के दो भेद (१) आप पोते कपट—दगा बाजी करे वैपारादिक अनेक कार्यमें कपट करे सो (२) दूसरेको ठगनेकी कला सिखावे छल विद्याके इंद्रजालादिक शास्त्र पढावे इत्यादि अनेक रीतसे भोले जीवोंको ठगनेकी कला सिखावे सो क्रिया.

९ "अपच्चखाणीया" इस जगतमें उपभोग [जो एक वक्त भोगवनेमें आवे भोजनादि] परिदिभोग [वारंवार भोगवनेमें आवे सो वस्त्रादिक] यह जित्ना जगतमें है वो अपने भोगमें आवो या न आवो तो भी उस्की क्रिया अपनको लगती है. इ-

स्के दो भेद (१) जीव वस्तू मनुष्य पसू धान इ-नके पच्चखाण नही होवे तो. [२] अजीव सोना चांदी रत्न जवेरात इन्के पच्चखाण न होवे तो.

प्रश्नः–जो वस्तू हमने कबी सुणी नही और उस्पे हमारा मन भी नही तो उसकी क्रिया हमारे को कैसे लगेगी ?

उत्तरः–बिनसुने देखे और मन बिना भी अवृत लगनेका स्वभाव हैं, जैसे घरमें कचरा भरनेका तो किसीका भी मन नही है परंतु जो दरवज्जा खुला रहेगा तो कचरा जरुर आता है ! और जो दरवज्जा बंद करदीया तो घरमें कचरा जाना बंद हो जाता हैं. तैसे ही जिस वस्तूके पच्चखाण नही है तो उस्के आत्म रुप घरमें पाप रुप कचरा सदा आता है और पच्चखाण रुप कमाड लगा देनेसे पाप आना बंद हो जाता है तथा जिस वस्तूके त्यागन नही और वो कभी हाथ आइ तो उसे भोगव लेगा. सुणी तो देखनेका मन होवेगा. जिनके त्यागन उस्की इच्छा उस अंदर रहनेसे बाहिरका अव्रत आना बंद हो जाता है. इस लिये पच्चखाण अवश्य ही करना चाहीये.

१० "मिच्छा दंसण वतिया" खोटे मतकी

श्रद्धा रखे सो. इस्के दो भेद. (१) ओच्छी रीत मिथ्यात्व अर्थात् श्री जिनेश्वरके ज्ञानसे कमी परुपणा करे (२) विप्रीत मिथ्यात्व अर्थात् श्री जिनेश्वरके मार्गसे विप्रीत परुपणा करे. जैसे कित्नेक मिथ्यात्व के जोरसे कहते हैं की यह आत्मा पांच भूतसे उत्पन्न हुइ हैं, मरे पीछे पांच भूतमें पांच भूत मिल जायगे, फिर कुच्छ नहीं रहगा. ऐसे नास्तिक मतोंको पूछा जाता है की, फिर तो परलोककी (पुनर्जन्मकी) नास्ती हुइ, पुन्य पापके फलकी नास्ती हुइ; ऐसा तो इस दुनियामें प्रत्यक्ष देखनेमें नही आता हैं; पूर्व जन्म न होवे तो ह्यां एक दुःखी एक सुखी क्यों होवे? सब एकसे ही होने चाहीये. तब कोइ कहते है की हमको उसकी मालम क्यों नही पडती है? हम कैसे भूल गये? उनसे कहते है की पूर्व जन्म तो दूर रहा परंतु तुम माताके पेटसे निकले हो ये बात तो सच्च है तो किजीये माताके पेटमें किस्तरहसे थे? इत्नी भी बात याद नही हैं तो परभव तो याद कांहा रहे? ऐसा जाण मिथ्यात्वीयोंके कूतर्कसे भर्माणा नही. जो ऐसे कूमतमें राचे सो मिथ्या दंशण क्रिया.

११ "दिठिया क्रिया" कोइ भी वस्तूको देखने

से क्रिया लगे. इसके दो भेद (१) 'जीव दिठिया' स्त्री पुरुष हाथी घोडा बाग बगीचे नाटक—चेटक इत्यादि देखेगे सो (२) 'अजीव दिठीया' निर्जीव वस्त्र भूषण मकान इनको देखनेसे लगे.

१२ "पुठिया क्रिया" सो किसी भी वस्तूका स्पर्श करनेसे (छीनेसे) लगे. इसके दो भेद (१) जीव वस्तू स्त्री पुरुषके अंगोपांगके स्पर्शसे तथा पृथवी पाणी अग्नी हरी इत्यादिके स्पर्शसे. कित्ने भोले बिना काम धान्की वांदगी देखने या कोइ बी वस्तू देखनेमें आवे तो सहज उस्का स्पर्श कर लेते हैं परंतू ज्ञानीने कहा है की कोइ अति वृद्ध रोग सोग-से जिस्का सरीर अती ही जीर्ण हो रहा है उस्को कोइ बत्तीस वर्षका योद्धा जुवान खूब पराक्रमसे मुष्टी प्रहार करनेसे उसे कैसी तकलीफ दुःख होता हैं तैसे ही दाणे प्रमुख एकेंद्रीका स्पर्श करनेसे उन्को दुःख होता है और कित्नेक सु कोमल जीव तो प्राणमुक्त ही हो जाते हैं. ऐसे अनर्थका कारण जाण, विना वाजबी किसी सजीव वस्तूका स्पर्श नहीं करना. (२) अजीव वस्तू वस्त्र भुषणादि उन्का स्पर्श करनेसें भी क्रिया लगती है. इसलिये परीक्षा निमित्त

विना कारण अजीवका भी स्पर्श नहीं करना.

१३ "पाडुचीया क्रिया"—किस्पे स्नेह भाव लानेसे भी क्रिया लगती हैं. इसके दो भेद (१) जीव माता पिता स्त्री पुत्र मित्र शिष्य गुरु गाय भैंस घोडा कुत्ता इत्यादि सजीव वस्तू पे प्रेम लानेसे (२) अजीव वस्त्राभुषण मकान इत्यादि पे ममत्व रखनेसे भी क्रिया लगती हैं. स्नेह भावका मारा प्राणी इस जन्ममें भी नाना प्रकारके पापारंभ करता है. और परभवमें भी गती बिगाड देता है. जो धर्मी होय तो भी स्नेह भावसे व्यंतर योनीमें प्राप्त हो जाते है.

१४ "सामंतो वणीया क्रिया" बहुत वस्तूका समुदाय मिलाना (एकठा करना सो) इसके दो भेद (१) सजीव वस्तूको एकठी करनी सो दासी दास घोडे हाथी बेल बकरे कुत्ते बिल्ली तोते इत्यादिकका संग्रह करके रखना और बेचना वेपार करना. (२) निर्जीव. धातू कीरणा वस्त्र इत्यादि वस्तूका बहुत काल संग्रह कर रखना और फिर बेचना सो. तथा इस्का ये भी अर्थ करते है की, पतले पदार्थ घी तेलादि पदार्थके वर्तन उघाडे रखना उसमें जीव पडके क्रिया लगती है.

१५ " साहत्थीया "—आपसमें लढाइ करावे सो सत्थीया क्रिया, इस्के दो भेद (१) जीवको आपसमें लडावे, मेंढे मुर्गे (कुकडे) सर्प सांड (वेल) इत्यादिको तथा मनुष्योंको आपसमें लडावे. चुगली करके या कोइ भी तरह संग्राम करावे (२) अजीवको; लकडीसे लकडी तोडे इत्यादि कोइ भी दो अजीव वस्तूकों आपसमें भीडाके तोडे सो क्रिया.

१६ " नेसथीया क्रिया " किसी वस्तूको अयत्नासे डाल देनेसे लगे. इसके दो भेद (१) जीव ज्यूं लीख षटमल विगरे छोटे जीव या मोटे जीवोंको उपरसे डाल देवे तकलीक इत्यादि उपजावे. (२) अजीव वस्तू अयत्नासे डाल देवे उससे लगे.

१७ " अणवणिया क्रिया ' किसी वस्तू मंगानेसे क्रिया लगे. इस्के दो भेद (१) सजीव वस्तू मंगानेसे. (२) निर्जीव वस्तू मंगानेसे. इस्का दूसरा अर्थ ऐसा भी करते है की मालिकके हुकमसे कोइ काम करे तो क्रिया लगे.

१८ " वेयारणीया " किसी वस्तूको वीदारणेसे (टुकडे करनेसे) कीया लगे. इसके दो भेद (१) स-

जीव वस्तूके टुकडे करनेसे. भाजी फल फुलको वी-
दारनेसे (२) निर्जीव वस्त्र धातु मकान लकडी प-
त्थर इंट इत्यादिके टुकडे करनेसे क्रिया लगे, सहज
तोड डाले तो भी क्रिया लगे.

१९ 'अणा भोगवत्तीया' उपयोग रहित काम
करनेसे क्रिया लगे. इस्के दो भेद (१) वस्त्र पात्र
अयत्नासे विना देखे ग्रहण करे जंहा तहां रख दे तो
[२] अयत्नासे प्रतिलेहणा (पलेवण) करे.
[शास्त्रमें कहा हैं की अयत्नासे साधू क्रिया करता
है उस्में किसी जीवकी हिंसा नही हुइ तो भी उसे
हिंसक कहना और यत्नासे क्रीया करता है, अजा-
णमें कोइ हिंसा हो गइ तो भी उनको दयाल कहना.]

२० "अणव कंख वत्तीया" जिस काम करने-
की तो अभीलाषा नही हैं परंतू वो स्वभावसे ही
आके लगे; जैसे वस्त्र मलीन करनेकी तो किसीकी
इच्छा नही है परंतू पडा २ सहज ही मलीन जीर्ण
हो जाय. इसके दो भेद [१] अपणा सरीरका
हलन चलनादि कार्य करनेसे. तथा क्लेशके वस हो
अपने हाथसे अपना ही परिहार (मार) करनेसे.

२१ "पाउग वत्तीया क्रिया" अर्थात् दूसरी वस्तूके

संजोग मिलानेको आप बीचमें दलाली करे. (१) जीवका; स्त्री पुरुषका गाय बेलका इन्के संयोग मिलानेसे. [२] अजीव; वेपार करीआणा भुषण वस्त्रकी दलाली करनेसे क्रिया लगे. (पाप दलालीसे बचणा चाहीये.)

२२ "समुदाणीया क्रिया" एक काम बहुत जणे मिलके करे सो समुदाणीया क्रिया. जैसे कंपनीका वैपारसे, नाटकका देखनेसे, फांसी देखनेसे, कोइ वस्तू बजारमें बेचाने आइ उसे बहुत जणे भेले होके सीर (पांती) में खरीदनेसे यह क्रिया लगती है. इन कर्मोंमें सब जीवके एकदम एक रारीखे प्रणाम होते है. जिससे बहुत लोकोके एकसे कर्म बंधते हैं. फिर वो सब आग लगनेसे, जहाज डुबनेसे या हेजा प्लेगादि बिमारी चलनेसे एकदम बहुत जणे मरजाते हैं. इस्के तीन भेद. सयंतर उपरके समुदाणी काम. कितनेक तो अंतरयुक्त करते है. अर्थात् (१) एक वक्त काम कर बीचमें छोड देते है. फिर बहुत दिनके अंतरसे करे [२] एक निरंतर अंतर रहित सदा करे [३] एक तदुभय कित्नेक अंतर सहित कित्नेक अंतर रहित काम करे. यह तीन तरेहसे लगे.

२३ "पेजवतीया" प्रेम भावके उदेसे क्रिया लगे. इस्के दो भेद (१) माया कपट करनेसे. (२) लोभ करनेसे (ये माया और लोभ रागकी प्रकृतीयों हैं) इन दोनोंको राग कषायमें ली है.

२४ "दोपवतीया क्रिया" किसी वस्तू पे द्वेष भाव लानेसे लगे. इसके दो भेद (१) क्रोध करनेसे (२) मान करनेसे. (ये दो द्वेष प्रकृती हैं.)

२५ "इरियावही क्रिया" हलन चलन करने से लगे. इसके दो भेद (१) छद्मस्तकी; सकषायी साधूको लगे सो. (२) केवलीकी; सो केवली भगवानको हलन चलनादि करते लगे, परंतू वो पहले समय लगे, दूसरे समय वेदे, तीसरे समय निरजरे (उस पापसे दूर होवे) ये तीन समय ही रहती हैं.

यह पचीस ही क्रीया कर्मबंधका कारण जाण समद्रष्टीको छोडना चाहिये.

आश्रव तत्वके ४२ भेद. ये छोडने योग्य जानना.

६ संवर तत्व.

पापरुप पाणी करके जीवरुप नाव भरा रही हैं. उस्के आश्रवरुप छिद्रको आडे संवररुप पाटीये

लगा देवे तो पापरूप पाणी आना बंद हो जाय.

इस संबर के २० भेद हैं:—

१ सम्यक्त्व २ व्रत प्रत्याख्यान (पच्चखाण) करे. ३ प्रमाद छोडे. ४ कषाय छोडे. ५ योगको स्थिर करे. ६ दया पाले. ७ झूट छोडे. ८ चोरी छोडे. ९ ब्रह्मचर्य पाले. १० परिग्रह छोडे. ११—१५ पांच इंद्री वस करे. १६—१८ तीन योग वस करे. १९ भंडोपगार यत्नासे लेवे—धरे. २० सूइ कुस यत्नासे लेवे—रक्खे. ये २० तराह संवर होता है. विशेष रीतीसे संबरके ५७ भेद होते है. १ इर्या. २ भाषा. ३ एषणा. ४ आदान निक्षेप. ५ परिठावणी. (ए ५ समिति). ६ मन. ७ बचन. ८ काया. (ये ३ गुप्ती) ये ८ प्रवचन माताको पाले. ९ क्षुधा. १० तृषा. ११ शीत. १२ उष्ण. १३ दंशमंस. १४ अचेल. १५ रति—अरति. १६ स्त्री. १७ चरीया. १८ निसिहिया. १९ सेजा. २० अक्रोश. २१ बध. २२ जाचना. २३ अलाभ. २४ रोग. २५ त्रण फास. २६ मेल. २७ सत्कार. २८ प्रज्ञा. २९ अज्ञान. ३० दंशण. (ये २२ परिसह जीते). ३१ खंती ३२ मुत्ती ३३ अजव. ३४ मदव. ३५ लाघव. ३६ सच्चे. ३७ संयम. ३८ तप. ३९ चेइय. ४० ब्रह्मचर्य. [ये

१० यती धर्म आराधे] ४१ अनित्य. ४२ असरण. ४३ संसार. ४४ एकत्व. ४५ अन्यत्व. ४६ अशुची ४७ आश्रव. ४८ संवर. ४९ निरजरा. ५० लोक. ५१ बोध बीज. ५२ धर्म (ये १२ भावना भावे). ५३ सामयिक. ५४ छेदोपस्थापनी. ५५ परिहार विशुद्ध ५६ सुक्ष्म संपराय. ५७ यथाख्यात. ये ५७ * संवर ग्रहण करनेसे उस नावाके छिद्रमेंसे पाणी आना बंद होता हैं. और नावा समुद्र पार होती है. तैसे संवर करनेवाला प्राणी संसार समुद्र तीर पार होते हैं. इति संवर.

७ निर्जरा तत्व.

सरीररुप नावमें पापरुप पाणी आता था उसे तो संवररुप पाटीयेसे रोक दीया. और पहलेका आया हुवा पाणीको उली (निकालके) नावको खाली करे तब वो पार पावे. तैसे ही संबर ग्रहण कीये पहले जो कर्म कीये हैं उसे खपावे, जीवको मोक्ष जाने जोग हलका बनावे सो निर्जरा. यह निर्जरा बारे तराहसे होती हैं. १ अणसण—अन्नप्रमुख चार आहारके थोडे कालके तथा जाव जीवके त्याग

* इन ५७ बोलका विस्तार ३—४—५ प्रकरणमें है.

करे. २ उणोदरी—आहार उपगरण कम करे. ३ वृत्ति संक्षेप—भिक्षाचारी—गोचरी करे. ४ रस परित्याग—षट रस त्यागे. ५ काय क्लेश—कायाको ज्ञानसे कष्ट दे. ६ पडि संलिणया—आत्मा वसमें करे. (ये ६ बाह्य [प्रगट] तप) ७ प्रायश्चित—पापसे निवर्तें. ८ विनय—नम्रता रक्खे. ९ वयावच—गुरुवादिककी भक्ती करे. १० सझाय—शास्त्र पढे. ११ ध्यान—शास्त्रका अर्थ बीचारे. १२ काउसग्ग (कार्योत्सर्ग) अयोग्य वस्तू त्यागे. ये ६ अभ्यंतर (गुप्त) तप. इस निर्जराके विशेष खुलासे के लिये तीसरे प्रकरणके तपाचारके ३५४ भेद पढीयें.

८ बंध तत्व.

आत्मप्रदेश और कर्म प्रदेशका आपसमे बंधाना; खीर नीर, धातू मट्टी, पुष्प अत्तर, तिल तेलकी तरह, उसे बंध तत्व कहीए. यह बंध चार तरहसे होता है. १ प्रकृति बंध—कर्मका स्वभाव. सो १ ज्ञानावरणी कर्म ६ प्रकारे बांधे (१) नाण पडिणियाए—ज्ञानीकी निंदा करे. (२) "नाण निन्हवणयाए"—ज्ञानीका उपकार छिपावे. ३ "नाण आसायणाए" ज्ञाननीकी अशातना (अपमान) करे. ४ " नाण

अंतराए"—ज्ञानीको सुखकी तथा ज्ञान पढनेवालेको अंतराय देवे. ५ "नाण पउलेणं"—ज्ञानीसे द्वेष करे. ६ "नाण विसंवायणा जोगेणं" ज्ञानीसे झूटे झगडे करे. ये ६ प्रकारसे बांधा १० प्रकारसे भोगवे. (१) मति ज्ञानावरणी—बुद्धी निर्मल नही पावे. (२) श्रुति ज्ञानावरणी—उप्योग निर्मल नही पावे. (३) अवधी ज्ञानावरणी—अवध ज्ञान नही पावे. (४) मनःपर्यव ज्ञानावरणी—मनःपर्यव ज्ञान नही पावे. (५) केवल ज्ञानावरणी—केवल ज्ञान नही पावे. (६) सोयावरणे—बधीर होवे. (७) नेतावरणे—अन्धा होवे. (८) घणावरणे—गुंगा होवे. (९) रसावरणे—बोबडा होवे, स्वाद न ले सके. (१०) फासावरणे—काया सुन्य पावे.

२ "दर्शनावरणीय कर्म" ६ प्रकारसे बांधे. ज्ञानावरणीयकी तराह छेइ बोल ह्यां लेना, सम्यक्त्वी उपर उतारना. ९ प्रकारे भोगवेः—१ चक्षु दर्शनावरणीय. २ अचक्षु दर्शनावरणीय. ३ अवधी दर्शनावरणीय. ४ केवल दर्शनावरणीय. ५ निद्रा. ६ निद्रा निद्रा. ७ प्रचला. ८ प्रचला प्रचला. ९ थणुदधी निद्रा. ये ९ प्रकारे भोगवे.

३ "वेदनी कर्म" इस्के दो भेद (१) साता

वेदनी. (२) असाता वेदनी.

साता वेदनी १० प्रकारे बांधे. १ पाणाणूकं पयाण-प्राणी (बेंद्री तेंद्री चौरिंद्री) की अनूकंपा (दया) करे. २ भूयाणू कंपयाए-वनस्पतिकी दया लावे. ३ जीवाणू कंपयाए- पचेंद्रीकी दया करे. ४ सत्ताणु कंपयाए-पृथवी पाणी अग्नी हवाकी दया पाले और इन चारेको ५ अ दुःखणयाए-दुःख नही देवे. ६ असोयणयाए-सोग (चिंता) न उपजावे. ७ अझुरणयाए-झरावे (त्रसावे) नहीं. ८ अतिपणयाए. रुदन न करावे. ९ अपिट्टणयाए-मारे नही १० अपरियावणयाए-परिताप न उपजावे.

ए १० काम करनेवाला आठ प्रकारके सुख पाता हैं. १ मणुणा सदा-मनोज्ञ [अच्छे] शब्द राग रागणी. २ मणुणा रुवा-मनोज्ञ रुप नाटकादि ३ मणुणा गंधा-मनोज्ञ गंध अत्तरादिक. ४ मणुणा रसा-मनोज्ञ रस षटरस भोजन. ५ मणुणा फासा-मनोज्ञ स्पर्श सयन-आसनादि. ६ मन सुहाय -मन निर्मल रहे. ७ वय सुहाय-वचन मधुर होवे. ८ काय सुहाय-काया निरोगी रुपवती होय. ए ८ पावे.

असाता वेदनी १२ प्रकारे बांधे. प्राण भूत जीव सत्वको १ दुःख. २ सोग. ३ झूरणा. ४ रुदन. ५ मार. ६ परीताप. ये सामान्य प्रकारे और ये विशेष प्रकारे. यों १२ काम करनेसे असाता वेदनी कर्म बांधे. ओर ८ प्रकारे भोगवेः—अमनोज्ञ शब्द, रुप, गंध, रस, स्पर्श, पावे, मन सोगवंत रहे, वचन कठण, काया रोगवंत पावे.

४ "मोहनीय कर्म" छे प्रकारे बांधे. तिव्र क्रोध, तिव्र मान, तिव्र माया, तिव्र लोभ, तिव्र दंशण मोहनी (धर्मके नाम अधर्म करनेसे) तिव्र चारित्र मोहनी (चारित्र धारी हो अचारीत्र धारी जैसा रहेनेसे) और पांच प्रकारे भोगवे. १ सम्मत वेयणी—सम्यक्त्व वेदनी (मलीनता) पावे. २ मिच्छा वेयणी—मिथ्यात्व मोहनी—मिथ्यात्वकी तिव्रता. ३ सम्म मिथ्या वेयणी—मिश्र श्रद्धावंत होवे. ४ कषाय वेयणी. क्रोधादि ४ कषाय तथा अनंतानुबंधी आदि १६ कषाय वंत. ५ नो कषाय—हांसादिक ९ नो कषाय. ये ५ तथा २५ कषाय ३ वेयणी, यों २८ पेरे भोगवे.

५ "आयुष्य कर्म." १६ प्रकारे बांधे नरकायुष्य चार प्रकारे बांधे १ महा आरंभी—सदा छेही कायकी

हिंसा होवे ऐसा काम करे. २ महा परिग्रही-महा लोभी. ३ कुणिमाहार-मद्य मांस खाय. ४ पंचदियवहेणं-पचेंद्रीका घात करे.

तिर्यचका आयुष्य चार प्रकारे बांधे. १ माइलयाए-कपटी होए. २ नियडिलयाए महा दगाबाज होए. ३ अलियवयणेणं-झुट बोले. ४ कुड तोले कुड माणे-खोटे तोले मापे रखे.

मनुष्यका आयुष्य चार प्रकारे बांधे. १ पगइ भदायाए-स्वभावसे ही भद्रिक (निष्कपटी) २ पगइ विणियाए-स्वभावसे ही विनीत. ३ साणुकोसाये-सरल. ४ अमछरीयाए-इर्षा रहित.

देवताका आयुष्य ४ प्रकारे बांधे. १ सराग संजम-संजम पाळे परंतु शिष्य सरीरपे ममत्व रक्खे. २ सजमा संयम-श्रावक. ३ बालतवो कम्मेणं-ज्ञान रहित तप करनेवाले. ४ अकाम निरजराए-परवस दुःख सहे परंतु समभाव रक्खे.

ये ४ गतिका आयुष्य १६ प्रकारे बांधे और ४ प्रकारे भोगवे. १ नर्क २ देवताका आयुष्य जघन्य दश हजार वर्ष उत्कृष्ठ ३३ सागर. ३ मनुष्य ४ तिर्यंचका आयुष्य. जघन्य अंतर मुहूर्त उत्कृष्ट तीन

पल्योपमका. ये ४ प्रकारे भोगवे.

६ " नाम कर्म " के दो भेदः—१ शुभ नाम. २ अशुभ नाम.

शुभ नाम ४ प्रकारसे बांधे. १ कायु जुयाए—कायाका सरल २ भासु जुयाए—भाषाका सरल. ३ भावु जुयाए—मनका निर्मल ४ अविसंवायणा जोगेणं—विखवाद् झगडे रहित. और १४ प्रकारे भोगवे. १ इठा सद्दा—मनोज्ञ शब्द २ इठा रुवा—मनोज्ञ रुप. ३ इठागंधा—मनोज्ञ गंध. ४ इठारसा—मनोज्ञ रस. ५ इठा फास—मनोज्ञ स्पर्श. ६ इठा गइ—मनोज्ञ चाल. ७ इठा ठिइ—सुखकारी आयुष्य ८ इठा लवण—मनोज्ञ सरीर. ९ इठा जसोकित्ती—यश कीर्तीवंत. १० इठा उठाण कम्मबल विरिय पुरिसाकार परकम्मे—कोइ वस्तु पडी उस्को उठाणेकी इच्छा होवे सो उठाण. उस्को लेने जावे सो कर्म. उसे उठावे सो बल. योग ठिकाणे उठा लेवे सो विर्य. ले चले सो पुरुसाकार. इच्छित ठीकाणे जाके रक्ख देवे सो पराक्रम. ये सब अच्छा मिले. ११ इठा सरया—मधुर स्वर. १२ कंत सरया—वल्लभ स्वर. १३ पिय सरया—प्यारा शब्द. १४ मणुणा सरया—मनोज्ञ स्वर.

अशुभ नाम कर्म ४ प्रकार बांधेः—१ काया अणु जुयाए. काया वक्र. २ भासाणु जुयाए—कठोर वचनी. ३ भावाणु जुवा—मनका मेला. ४ विसंवाय जोगेणं—कदाग्रही. ये चार काम करके १४ प्रकारे भोगवे. अणीठा सद्दा. २ अणीठा रुवा. ३ अणीठा गंधा. ४ अणिठा रसा. ५ अणिठा फासा. ६ अणिठा गइ. ७ अणिठा ठिइ. ८ अणिठा लवण. ९ अणिठा जसो कीर्ती. १० अणिठा उठाण कम्म वलवीर्य पुरसाकार पराक्रम. ११ हीण-सरया. १२ दीण सरया. १३ अणिठा सराय. १४ अकंत सराय. ये १४ प्रकारे भोगवे.

नाम कर्मकी ९३ प्रक्रति होती हैंः—४ गती. ५ जाती. ५ सरीर. ३ सरीरके अंगोपांग. ५ सरीरका बंधन. ५ सरीरके संघातन. ६ संघेण. ६ संठाण. ५ वर्ण. २ गंध. ५ रस. ८ स्पर्श. ४ गतीकी अनापूर्वी. १ शुभ विहाय गती. २ अशुभ विहाय गती. ये ६५ पिंड प्रक्रति हुइ. और ६६ पराघात नाम—अपने सरीरसे दूसरेकी घात होवे (सर्प वत्). ६७ उस्वास नाम. ६८ अगुरु लघू नाम. (लोह पिंड जैसा भारी होके भी फूल जैसा हलका लगे). ६९ आताप नाम. ७० [illegible]त नाम. ७१ उपघात नाम. (अपने सरीरसे आप

ही मरे, रोझ पसुवत्). ७२ तिर्थंकर नाम. ७३ निर्माण नाम. ७४ त्रस नाम. ७५ बादर नाम. ७६ प्रत्येक नाम. ७७ पर्याप्ता नाम. ७८ स्थिर नाम. ७९ शुभ नाम. ८० सौभाग्य नाम. ८१ सुस्वर नाम. ८२ आदेय नाम. ८३ जशो कीर्ती नाम. ८४ स्थावर नाम. ८५ सुक्ष्म नाम. ८६ साधारण नाम. ८७ अपर्याप्ता नाम. ८८ अशुभ नाम. ८९ अस्थिर नाम. ९० दौर्भाग्य नाम. ९१ दुस्वर नाम. ९२ अनादेय नाम. ९३ अजसोकीर्ती नाम. ये ९३ तथा इसें दश बंधनकी प्रकृति मिलानेसे १०३ नाम कर्मकी प्रकृती होती हैं.

७ गोत्र कर्मके दो भेद. १ उंच गोत्र. २ नीच गोत्र. उंच गोत्र ८ प्रकारे बांधे १ जाइ अमयेणं—जात (माताका पक्ष) का मद (अभीमान) नहीं करे. २ कुल अमयेणं—कुल (पिताका पक्ष) का मद नही करे. ३ बल अमयेणं—बल (पराक्रम) का मद नहीं करे. ४ रुव अमयेणं—रुपका मद नही करे. ५ तव अमयेणं—तपस्याका मद नही करे ६ सुय अमयेणं—सुत्र (बुद्धी) का मद नही करे. ७ लाभ अमयेणं—लाभ (प्राप्ती) का मद नही करे. ८ इस्सरी मयेणं—इश्वरी (मालकी) का मद नही करे.

ये ८ अभीमान नही करे तो ८ गुणकी प्राप्ती होवे. १ जाइ विसिठि-जात उत्तम पावे. २ कुल विसिठि. कुल उत्तम पावे. ३ बल विसिठि-बलवंत होए. ४ रुव विसिठि-रुपवंत होवे ५ तव विसिठि-तपस्वी होए. ६ सुय विसिठी-विद्वान होए. ७ लाभ विसिठि-चाहिये सो मिले. ८ इस्सरि विसिठी-बहुत समुदाय (परिवार) का मालक होय. ये ८ लाभ होए. २ असाता वेदनी कर्म ८ प्रकारे बांधे. उपर कही सो ८ ही वस्तूका अभीमान करे तो नीच गोत्र उपराजे पीछे ८ प्रकारे भोगवे. आठ बातकी हीनता-नीचता पावे.

८ अंतराय कर्म ५ प्रकारे बांधे. १ दानांतराय-किसीको दान नही देवे तो † २ लाभांतराय-कि-

---

† अबी भी कित्नेक हीणाचारी साधूको दान देनेकी मना करते है. और कित्नके साधू छोड दूसरेको दान देनेकी मना करते है. वो दानांतराय कर्म बांधते हैं. सुयगडांजीमें तो हिंसकको भी दान देना निषेध करेगा उसे अंत्रायका देनेवाला और प्रशंसा करनेवालेको हिंसक कहे है.

गाथा-जेय दाण पसंसन्ती, वय मिच्छन्ती पाणिणो;
जेय दाण पडिसेयंनी, अंतराय करंती ते,

सीकी आवकमें हरकत करे तो. ३ भोगांतराय. किसीको वस्त्रा भूषणकी अंतराय देवे तो ४ उपभोगान्तराय—किसीकों खान पानकी अंतराय करे.* ५ वीर्यांतर—धर्म ध्यान न करने दे, संयम नही लेने दे तो. ये ५ प्रकारके काम करनेसे ५ दुर्गुण होते है. वो १ दान नही दे सकता है २ लाभ नही कमा सकता हैं. ३—४ भोग (एक वक्त भोगवनेमें आवे सो) उप भोग वार २ भोगवनेमें आवे सो नहीं भोगव सकता है. ५ धर्म ध्यान तप संयम प्राप्त नही होता है. ये ८ कर्म बांधने और भोगवनेकी रीत जाणना. ये सर्व ज्ञानावरणीकी ६, दर्शनावरणीकी ६, वेदनीकी २२, मोहनीकी ६, आयुष्यकी १६, नामकी ८, गोत्रकी १६, अंतरायकी ५, ये ८५ प्रकृती बंधकी हुइ और ज्ञानावरणीकी १०. दर्शना वरणीकी ९, वेदनीकी १६, मोहनीकी ५, आयुष्यकी ४, नामकी २८, गोत्रकी १६, अंतरायकी ५, ये ९३ भोगवनेकी सर्व १७८ तथा नाम कर्मकी १०३ मिलानेसे २८१ प्रकृती हुइ. ऐसे

* उपदेश दे के वैराग्य भावसे किसे भोग उपभोग छुडावे तो तथा दया नीमित छोडावे तो अंतराय नहीं समजना.

आठ कर्मका बंध बांधे सो "प्रकृती बंध." २ स्थिती बंध सो १ ज्ञानावरणी २ दर्शनावरणी और अंतराय कर्मकी स्थिती जघन्य अंतर मुहुर्तकी उत्कृष्टी तीस कोडा कोड सागरकी. आबाध * काल तीन हजार वर्षका. ३ साता वेदनी कर्मकी जघन्य २ समयकी इरीयावही क्रीया आश्री) उत्कृष्ट १५ क्रोडा क्रोड सागरकी. अबाध काल जघन्य अंतर मुहुर्त उत्कृष्ट १॥ हजार वर्षका. और असाता वेदनीकी जघन्य अंतर मुहुर्त उत्कृष्ट तीस क्रोडा क्रोड सागरोपमकी. अवाध काल तीन हजार वर्षका. ४ मोहनी कर्मकी जघन्य अंतर मुहुर्त उत्कृष्ट ७० क्रोडा क्रोडा सागरोपमकी. अबाधकाल जघन्य अंतर मुहुर्त उत्कृष्ट सातहजार वर्षका. ५ आयुष कर्मकी गती प्रमाणे जाणना. नाम और गोत्र कर्मकी जघन्य आठ मुहुर्तकी उत्कृष्ट बीस क्रोडा क्रोड सागर अबाधकाल दो हजार वर्षका. ये आठ कर्मकी स्थिती बांधे सो "स्थिती बंध" ३ अनुभाग बंध सो. ज्ञानावरणीने अनंत ज्ञान गुण. दर्शना वरणीने अनंत

---

* कर्म बंधे पीछे उदय आनेके पहले बीचमें जितना काल जावे उसे अबाधा काल कहते हैं.

दर्शन गुण. वेदनीने अनंत अव्याबाध आत्मिक सुख. मोहनीने अनंत क्षायक सम्यक्त्व गुण. आयुष्यने अक्षय स्थिती गुण. नाम कर्मने अमूर्ती गुण. गोत्रकर्म अगुरु लघू गुण और अंतराय कर्मने अनंत आत्म शक्ती गुणको ढांक रहे है. किसी तिव्र रससे किसीके मंद रससे. तिव्र रसवाले तो एकेंद्रीयादि तथा अभव्य जीव परवसपणे पडे है. और मंद रसवाले सम्यक द्रष्टी कुच्छ ऊंचे आ रहे. जैसे ३ जिसने कर्म के दलियेका अनुभाग बांधा है सो "अनुभाग बंध" ४ प्रदेश बंध कर्म पुद्गल के दल चैतनीक प्रदेश पे छवा रहे है जैसे ज्ञानावरणी तो सूर्यके आगे बादलकी घटा जैसा. दर्शनावरणी आंखके पाटे जैसा. वेदनी सो साता वेदनी तो मधू खरडे खड्ग जैसा और असाता वेदनी अफीम खरडे खड्ग जैसा. मोहनी मद्य (दारु) पान जैसा. आयुष्य कर्म खड्डा जैसा. नाम कर्म चित्रकार जैसे. गोत्र कर्म कुंभकार जैसा और अंतराय कर्म सो राजाके भंडारि जैसा आडे आ रहे हैं. इन चार बंध के उपर द्रष्टांतः—जैसे मोदक (लाड्डू) सूठ मेथी प्रमुख द्रव्यसे बनाया हुवा. १ वायू तथा पित्तका नाश करे उसे प्रकृती (स्वभाव

कहना २ वो मोदक महीने दो महीने रहे उसे स्थित (उम्मर) कहना. ३ वो मोदक कडूवा तिक्ष्ण होवे उसे अनुभाग (रस) कहना. और वो मोदक कोइ थोडे द्रव्यके संयोग से कोइ विशेष द्रव्यके संयोगसे बनाया उसे प्रदेश (प्रमाण) कहना. इस द्रष्टांतसे चार हि बंधका स्वरुप जाणना. ९ मोक्षतत्व ए पुर्वोक्त चार बंधसे बंधा हुवा जीव बंध तोडके मुक्त (छुटा) होवे उसे मोक्ष कहना. यह मोक्ष चार कारणसे मिलती हैं.

"नाणेणं जाणेइ भावे, दंशणेणं सद्दह,
चारीत्र परिगिन्हए, तवेणं परि शुझहैं."

१ ज्ञान करके नित्या नित्य, शाश्वती अशाश्वती, शुद्धाशुद्ध, हिताहित लोकालोक, आत्मानात्मा, इत्यादि सर्व वस्तुका स्वरुप जाणे. २ दर्शन करके ज्ञान करके जाणा हुवा स्वरुप दंशण (श्रधा) करके सच्चा (तह मेव) श्रधे. शंकादि दोष रहित रहैं. ३ चारीत्र करके, दर्शन करके श्रधा हुवा स्वरुपको जाणने योग्य जाणे, आदरने योग्य आदरे, छोडने योग्य छोडे. तथा चौ गतिसे तिरके पांचमी मोक्ष गति जानेका उपाय आदरे. ४ तप करके, चारित्र

करके आदरा हुवा उपाय शुद्ध वर्धमान परिणाम करके नीभावे—पार पुगावे, इन चार कारणसे मोक्ष मिले; इसका विशेष विस्तार तीसरे प्रकरणसे जाणना.

नवतत्वकी चर्चा.

ये नवही तत्वका 'द्रव्यार्थी' नयसे दो तत्वमें समावेश होता हैं. यथा जीव तो जीव ही हैं. और अजीव अजीव ही हैं. बाकी के सात तत्व हैं सो 'पर्यायार्थिक' नय से इन दोनु से उत्पन्न हुये हैं. इसमें मुख्यता और गौणताका दोइ पक्ष धारण कीया जायगा. जैसे पुन्य पाप आश्रव और बंध ये चार ही तत्व मुख्यता से अजीव से उत्पन्न हुये हैं. क्यों कि ये ४ कर्म तत्व हैं. कर्म से उत्पन्न होते हैं. कर्मरुपी चौफरसी प्रयोगसा (जीवके ग्रहे हुये) पुद्गल (चर्म चक्षूको दिखे ऐसे) हैं. और व्यवहार नयकी अपेक्षा—गौणतासे जीव पर्यायमें भी मिलते है. परंतू इन चार ही तत्वोंका निज स्वरुप बीचारते ये 'हेय' पदार्थ (छोडने योग्य) हैं, केसे ही होवो तो भी ये चार ही कर्मोंका बंध करते हैं. और कर्म ग्रहित—जीव ही इन चारको निपजा सकते हैं. तथा संवर निर्जरा और मोक्ष ये तीन धर्म तत्व हैं. ये जीव के

निज गुणसे निपजते हैं. इसलिये इनको जीव ही कहना. तथा इन तीन ही का आत्मासे कर्मरुप पुद्गलोंको दूर करनेका स्वभाव है. इसलिये ये 'संग्रह नयसे' अजीव (पुद्गल)में भी मिलते हैं. परंतू मुख्यता से धर्म तत्व है सो जीवका गुण है. अरुपी हैं इसलिये निश्चय नयकी अपेक्षा से इनको जीव ही कहना. ये ९ तत्वका २ तत्वमें समावेश हुवा.

प्रश्नः—जीव के अशुभ भावको आश्रव कहते हैं इसलिये आश्रवको भी जीव कहे तो क्या हरकत है?

समाधानः—जीव के अशुभ भाव सो आश्रव ये बात सत्य हैं. परंतू अशुभ भाव के कर्त्ता कर्म ही हैं. क्यों कि कर्म बिन अशुभ भाव होता नहीं हैं. जो होता होवे तो सिद्ध भगवंतको भी आश्रव लगना चाहीये. सो सिद्ध भगवंतको तो नहीं हैं. इस बिचारसे निश्चय होता हैं की जीव कर्मका जोग अनादि कालका है. सकर्मी जीव रुपी हो के रुपी आश्रवको ग्रहण करता हैं. द्रष्टांत जैसे पाणी तो ठंडा है परंतु अग्नी के योगसे उष्ण होता हैं. उस उष्णता की कर्त्ता अग्नी हैं. तैसे आश्रव के कर्त्ता कर्म हैं. कर्म अजीव है तो आश्रव भी अजीव हुवा.

प्रश्न—तो संवर भी अजीव हुवा; क्योंकी 'शुभ-योग संवर' कहा हैं. योग की प्रवृत्ति कर्मोंसे होती हैं. इसलिये संवरको भी अजीव कहना.

समाधानः—आश्रव अजीव है, इसमें तो कुच्छ संसय ही नहीं. और पच्चीस क्रिया भी आश्रवमें ली है सो पच्चीसमी इरीया वही क्रिया शुभ जोगसे होती हैं. तथा पहले गुण ठाणेमें शुभ जोग तो हैं परंतू संवर नही हैं इसलिये शुभ योगको संवर कहना नहीं. संवर तो योगके निरुधन—स्थिरताको कहते हैं. और योगका निरुधन—स्थिरता करनेवाला जीव हैं इसलिये संवरकों जीव श्रधना. इति संक्षेपमें तत्व बिचार.

सात नय.

समुच्चयमें नय दो हैं (१) निश्चय और (२) व्यवहार. व्यवहार उसे कहते हैं जिससे बाह्यसे वस्तूका स्वरुप पेछाणा जाय तथा जो अपवाद मार्गमें लागू होती है. और (२) निश्चय नय सो वस्तू के अंतरिक (निज) गुणको पेछाणे तथा जो उत्सर्ग मार्गमें लागू होवे. विशेषमें नय सात होती हैं:—

१ नैगम, २ संग्रह, ३ व्यवहार, ४ ऋजूसूत्र, ५ शब्द, ६ समभीरुढ और ७ एवं भूत. अब इनका वि-

स्तार कहते है.

१ 'नैगम नय' उसे कहते हैं कि जिसकी एक गम नही, अनेक गम अनेक प्रमाण अनेक रीत अनेक मार्ग करके एक वस्तूको माने सामान्य माने अर्थात् कोइ वस्तूमें उसके नामका अंश [लेस] मात्र गुण होय तो भी उसे पुर्ण वस्तु माने. विशेष माने अर्थात जैसा जिस्का नाम वैसा ही उसमें पूर्ण गुण होवे उसे भी वस्तू माने. गये कालमें कार्य हुवा उसे, वर्तमान कालमें हो रहा उसे, आवते कालमें कार्य होवेगा उसे, ये तीन कालके कार्यको सत्य माने निक्षेपे, ४ माने.

२ 'संग्रह नय' उसे कहते है जो वस्तूकी सत्ताको ग्रहण करे; जैसे एक नाम लेनेसे सर्व गुण पर्याय परिवार सहित ग्रहण करे, थोडेमें बहोत समजे. द्रष्टांत जैसे किसी साहुकारने नोकरसे कहा के दांतण लावो. तब वो नोकर एक शब्दके अनुसारसे दांतण, झारी, कांच, कंगा, मिस्सो, सलाइ, सुरमा, इत्यादि वस्तू ला धरी. फिर सेठने कहा पान लावो; तब वो पान सुपारी कथा चूना मशाला इत्यादि लाके धरा. ऐसे ही किसीने बगीचेका नाम लिया

उसे सुण संग्रह नय वाला झाड फल फुल विगेरे सब समज गए. इस नय वाला सामान्य मानता है, विशेष नही माने; क्योंकि थोडेमें समजे तो विशेषकी क्या जरुर? ये तीनी कालकी बात और निक्षेपे चार ही मानता है.

३ ' व्यवहार नय ' वस्तूका बाह्य (प्रत्यक्ष) स्वरुप देखे उसी गुणमय उस वस्तूको माने. देखते हुये गुणको माने परंतू अंतरके प्रणामोंकी इसे कुच्छ जरुर नही. इस्को तो आचार और क्रियाका ही विशेषत्व हैं. जैसे नैगम नय वालेको अंतर शुद्धी विनके अंश की और संग्रह नयवालेको वस्तूके सत्ताकी जरुर है, तैसे इसे भी क्रिया और आचारकी जरुर है. द्रष्टांतः—जैसे व्यवहारमें कोकिला काली, तोता हरा, हंस श्वेत दीखते है. उसे व्यवहारवाला फक्त एक रंगी ही मानेगा. और निश्चयमें उनमें रंग पांच ही पाते है. इस नयवाला सामान्य नही माने, विशेष माने. निक्षेपे ४ और तीन ही कालकी वात माने.

४ ' ऋजु सुत्र नय ' उसे कहते है, ऋजू—सरल सुत्र—सुचना—चिंतवन अर्थात् इस्का सदा सरल वीचार रहता है. ये भी सामान्य नही माने विशेषको

मानता हैं. अतीत [गये] अनागत (आते) काल की बातको नही माने, उसे निसार जाणे. फक्त वर्तमान कालकी बातको ग्रहण करता हैं. जैसे किसीने कहा की सो वर्ष पहले सोनैये की वृष्टी हुइथी. तथा सो वर्ष पीछे सोनैयेकी वृष्टी होगी. इन दोनु बातको इस नयवाला निसार निकम्मी समजता है; क्योंकि इससे अपना कोनसा मतलब हुवा? ये आकाशके फुल जैसी बात हैं. ये एक भाव निक्षेपेको माने. द्रष्टांत जैसे कोइ सेठ सामायिकमें बैठे थे. उन्को कोइ बुलाने आया तब उस्के बेटेकी बहुबडी जाणकार विचक्षण थी, उसने उसको जवाब दीया की, सेठजी चमारके वहां जूते खरीदने गये हैं. वो चमारके वहां देख आया और कहने लगा बाइ सेठ चमारकी दुकानपे तो नही हैं. तब बहुने कहा पसारी की दुकान पे सूंठ लेनेकु गये हैं. वो वहां भी देख आया, सेठ नही मिले, तब घभडा के कहने लगा, बाइ मुजे नाहक क्यों चक्कर देती है? सेठ कहां हे? सच्च कहे. इत्नेमें तो सेठ भी सामायिक ठीकाणे कर बाहिर आये और बहु पे खफा (नाराज) होकर कहने लगे, तूं इत्नी शाणी हो के गपोडे क्यों

मारती है? वो विनय सहित बोली की आपका सामायिकमें बैठे २ चमार और पसारी की दुकान पे मन नही गया था क्या? यों सुण सेठजी चमक के कहने लगे, हा! मन तो गया था, तेरेकों केसे मालम पडी? वो बोली, आपकी अंगचेष्टासे.* इस द्रष्टांतसे ऋजू सुत्र नयवाला भावको ही श्रेष्ट मानता हैं.

गाथा—वत्थ गंध मलंकारं, इत्थी उसयणाणी य।
अह च्छंदा जे न भुजंती, न से चाइति वुच्चइ ॥

अर्थ—जो सर्व त्यागी होके श्रेष्ट वस्त्र गंध अलंकार (भुषण) स्त्री सेज्या इत्यादि भोगवते तो नही है परंतू अभिलाषा करते हैं. उन्को त्यागी नही कहना.

गाथा—जे य कंते पिय भोय, लद्धे वी पीठ वुवइ।
से इणो चयइ भोए सेउ चाइती वुच्चइ ॥

जो गृहस्थावासमें रहके कंत (बल्लभ) कारि प्रियकारी इच्छित भोगका संजोग मिलते ही भोगवते नही है उनको त्यागी कहना. (श्री दश वैकालीक अ० २) ये ऋजू सुत्र नयका वचन जानना. ये एक भावको श्रेष्ट माने.

* कोइ जाती स्मरण ज्ञान उत्पन्न हुवा कहते हैं.

५ 'शब्द नय' उसे कहते है की जैसा शब्द (नाम) होवे वैसा ही उस्का अर्थ ग्रहण करे. एक वस्तू के अनेक नाम होवे तो भी वो तो उस वस्तू के शब्द पे ही निघा रखता है, उस वस्तूमें उस्के नाम के गुण होवे वा न होवे. जैसे सक्रेंद्र पुरेंद्र सुचीपति देवेंद्र इत्यादि शब्दका एक ही इन्द्र अर्थ ग्रहण करता हैं. ये लिंग शब्दमें भेद नही माने. चोथी नय की तरह ये भी सामान्य नही माने, विशेष माने. फक्त वर्तमान कालकी बात माने, निक्षेपा एक 'भाव' माने. इसमें फक्त शब्दका विशेषत्व लीया हैं.

६ 'समभीरुढ नय' शब्दमें आरुढ हो के उसका अर्थ करे. उस्के पूर्ण गुण नही प्रगटे होय तो भी कमी न कमी तो प्रगटेंगे. मतलब एक अंस वस्तूका कमी पणे को भी वस्तू माने. जैसे अरिहंतको भी पहले प्रकरणमें सिद्ध कहके बुलाये हैं, वो इस नयका बचन है. पांचमी नय से इसमें इत्ना विशेष है की ये शब्दका अर्थ कायम करे. जैसे सक्रेंद्र कहता जो सक्र सिंहासन पे बैठके अपनी शक्ती से न्याय करे, सर्व देवको अपनी अनुज्ञामें चलावे, तब सक्रेंद्र कहना. पुरेंद्र कहता हाथमें बज्र-

धर देवता के बंडको विदारे सो पुरंद्र. सुचीपती कहता इंद्राणीयों की सभामें बैठ के ३२ विधि के नाटक देखे उस वक्त सुचीपति कहना. देवेंद्र-सामानिक आत्मरक्षक तीन प्रषदा इत्यादी देवताओंकी सभामें बैठे उसवक्त देवेंद्र कहना. ये लिंग शब्दमें भेद मानते हैं. सामान्य नही माने, विशेष माने. फक्त वर्तमानकालकी बात और निक्षेपा एक 'भाव' माने.

७ ' 'एवं भूत नय ' वाले जैसा जिस्का नाम वैसा ही जिस्का काम और प्रमाण ये तीन ही संपूर्ण होय तथा वस्तु अपने गुणमें पूर्ण होए और उस गुण मुजब ही क्रिया करे उस वस्तूके द्रव्य गुण पर्याय तथा वस्तु धर्म सर्व प्रत्यक्षमें दिखते होय, उस्को वो वस्तू कहेगा. और एक अंश भी कमी हुवा तो वो वस्तु नही कहेगा. इस नयवाले सामान्य नही माने, विशेष माने. वर्तमान कालकी वात और निक्षेपा एक 'भाव ' माने. द्रष्टांत-जैसे सक्रेंद्र सिंहासन पे बेठके न्याय तो करते हैं परंतु उनका मन देवीयोंकी तर्फ है तो उन्को सक्रेंद्र नही कहना, ऐसे ही सर्व ठीकाणे जाणना. जैसा उप्योग होवे वैसा ही कहना. जैसे धर्मास्तीकाय असंख्यात प्रदेश युक्त

होय उसे ही धर्मास्ती काय माने. दो चार प्रदेशको धर्मास्ती नही माने. इस नयवालेकी द्रष्टी एक उप्योग तर्फ रहती हैं (कोइ सामायिक वाले सेठकी बहुका द्रष्टांत ह्यां कहते हैं.)

अब सात ही नयके उपर समुच्चये द्रष्टांत कहते हैः—किसीने किसीकों पुछा की, तुम कहां रहते हो ? तब उसने कहा कि, में लोकमें रहता हुं. तब अशुद्ध नैगम नयवाला बोला की लोक तीन है, तुम किस लोकमें रहते हो ? तब शुद्ध नैगम नय वालेने जवाब दिया की त्रीछे लोकमें रहता हुं. फिर पुछा की द्विप समुद्र तो असंख्याते हैं तुम किस द्विपमें रहते हो? उसने कहा में जंबू द्वीपमें रहता हुं. फिर उसने कहा की जंबू द्वीपमें तो क्षेत्र बहोत हैं, तुम किस क्षेत्रमें रहते हो ? तब विशुद्ध नैगम नय वाला बोला में भरतक्षेत्रमें रहता हुं. फिर उसने पूछा की भरत क्षेत्रमें खंड छे है, तुम किस खंडमें रहते हो ? तब अती शुद्ध नैगम नयवाला बोला, में दक्षिण भरतके मध्य खंडमें रहता हुं. फिर पूछा, मध्य खंडमें देश बहुत है, तुम किस देशमें रहते हो ? जबाब ..., में मगधदेशमें रहता हुं. फिर पूछा, मगध-

देशमें ग्राम बहोत है, तुम किस ग्राममें रहते हो? उसने कहा, में राजग्रही नगरीमें रहता हुं. फिर पूछा, राजग्रहीमें तो १३ पाडे है तुम किस पाडे (पुरे) में रहते हो? उसने कहा, में नालंदी पाडेमें रहता हुं. फिर पुछा, नालंदी पाडेमें साढी तीनक्रोड घर हैं, तुम किस घरमें रहते हो? जवाब दिया में बीचके घरमें रहता हुं. इत्ना सुन नैगम नयवाला चुप रहा. तब संग्रह नयवाला बोला, बीचके घरमें तो चसमे (खंड) वहोत हैं. इसलिये ऐसा कहो मेरे बीछोणे जित्नी जगा है उसमें रहता हुं. तब व्यवहार नयवाला बोला के क्या सब बीछोणेमें रहते हो? इसलिये ऐसा कहो के में मेरे सरीर के जित्ने आकाश प्रदेश ग्रहण कीये है उसमें रहता हुं. तब ऋजू सुत्र नयवाला बोला, सरीरमें तो हाड मांस चर्म केस तथा असंख्य सुक्ष्म स्थावर बादर वायू तथा बेंद्री [क्रिम] प्रमुख बहुत रहते हैं. इसलिये ऐसा कहो के मेरी आत्माने जित्ने प्रदेश अवगाहे (ग्रहण कीये) उसमें रहता हुं. तब शब्द नयवाला बोला के आत्म प्रदेशमें तो धर्मास्तीआदिक पंचास्ती के असंख्य प्रदेश है इसलिये ऐसा कहो के में मेरे

स्वभावमें रहता हुं. तब समभीरुढ नयवाला बोला कीं, स्वभाव की तो क्षिण २ में प्रवृत्ति होती है. तथा योग उप्योग लेश्या, इत्यादि केइ वस्तू हैं. इसलिये ऐसा कहो की में मेरे निजात्म गुणमें रहता हुं. तब एवंभूत नयवाला बोला कि, गुण तो ज्ञान दर्शन चारित्र तीन है, और भगवंतने तो फुरमाया है के एक समय दो ठीकाणे न रह सके, इसलिये ऐसा कहो के में मेरे शुद्ध निजात्म गुणका जिस वक्त जो उप्योग प्रवर्ते उसमें रहता हुं. ये द्रष्टांत अनुयोग द्वार सूत्रमें हैं.

द्रष्टांत २ रा–कोइ नैगम नयवाला वडाइ (सुथार) काष्ट लेनेको जाताथा, तब व्यवहार नयवालेने प्रश्न करा, कहां जाते हो ? उसने कहा पायली (अनाज माःपनेका माप) लेनेकु जाता हुं. फिर लकड काटती वक्त, लकड ले घर आती वक्त और पायली घडती [बनाती] वक्त जिस २ वक्त पूछा उस २ वक्त उसने पायली बनाता हुं, ये ही जवाब दीया, की पायली बणाइ है इत्ना सुण व्यवहार नयवाला चुप रहा. तब संग्रह नयवाला बोला की अनाजका संग्रह करो तब पायली कहना. ऋजु सुत्र नयवाला

बोला की धानका संग्रह करनेसे पायली नही कही जाती है, परंतु धानका माप करोगे तब पायली कही जायगी. शब्द नयवाला कहता है के धान मापके एक दो गिणोगे तब पावली कहना. तब समभी-रुढ नयवाला बोला की किसी कार्यसे माप होयगा तब पायली कही जायगी. तब एवंभूत नयवालेने कहा की वो मापती वक्त उस मापमें उप्योग होयगा तब ही पायली कही जायगी. ऐसे अनेक द्रष्टांतोंसे सात ही नयका स्वरुप जाणना.

इन सात नयसे सर्व वस्तूओंको माने सो सच्चा जैन मती और जो एक नय ताणे उस्को अन्यमती जाणना. क्यों की एक वस्तूसे पुर्ण कार्य नहीं होता हैं. हरेक कार्य, निपजानेमें जित्ने उसमें संयोग की जरुर है उत्ने संयोग मिले तब वो कार्य पुर्ण निप-जता है. जैसे किसीने पूछा अनाज किससे निप जता हैं? तब एकने कहा, पाणीसे. दूसरेने कहा पृथवीसे' तीसरेने कहा हलसे, चौथेने कहा बादलसे, पांचमेने कहा बीजसे, छट्टेने कहा ऋतूसे, और सा-तमेने कहा कि नशीबसे निपजता हैं. अब कहोजी सात ही में कोन सच्चा और कोण झुटा ? जो सात

अलग २ रहे तो कोइ भी कार्य नहीं निपजे. इसलिये सात ही झूटे; और सात ही एकत्र होवे तो कार्य वक्त-सिर सिद्ध होवे, इसलिये सात ही सच्चे. ऐसे ही हरेक कार्य सात नयके समागमसे होता हैं. ऐसा जाण सात ही नय की अपेक्षासे निरापक्ष बचन होवे सो ही सच्चा.

इन सात नयमें १ नैगम. २ संग्रह. ३ व्यवहार और ऋजू सुत्र ए ४ व्यवहारमें हैं. ५ शब्द. ६ समी-भीरुढ ७ एवंभुत ये तीन निश्चयमें हैं. और कोइ वक्त ऋजू सुत्र नयको निश्चयमें भी ग्रहण की जाती हैं. जिससे वस्तुको मुख्यता पणा प्रति भास होवे सो व्यवहार नय और जिससे निज स्वभाव भाष होवे सो निश्चय नय.

॥ ७ नय ९ तत्व पर उतारते हैं. ॥

(१) जीव तत्व.

(१) नैगम नयसे–प्रजा प्राणादि सहित श-रीर प्रयोगसे (जीवने ग्रहासो) पुद्गलोंके संयोगसे दिखता है; जैसे वृषभ, गाय, मनुष्य इत्यादि वस्तु-ओंमें जो गमनादि क्रिया दिखती है उस्को जक्त

बोलता हैं कि ये "जीव" है. इस नयने एक अंसको पुर्ण वस्तु मानी और कारणको कार्य माना. [२] संग्रह नयसे असंख्यात प्रदेशी अवगाहनावंतको जीव कहते हैं. [३] व्यवहार नयसे—इंद्रीयोंकी इच्छासे द्रव्य योग द्रव्य लेश्याको जीव कहे, क्यों कि जीव निकले पीछे इंद्रीयों की सत्ता रहती नहीं है. [४] ऋजु सूत्र नयसे उपयोगवंतको जीव कहे. † (५) शब्द नयसे—जहां जीवका अर्थ मिले उसे जीव माने; जैसे गये कालमें जीव था, वर्तमान कालमें जीव हैं, आवते कालमें जीव रहेगा. इस नयवालेने द्रव्य आत्माको जीव माना; क्यों कि तेजस कारमणके प्रयोगसे पुद्गल जीवके साथ अनादि कालसे लगे है और रहेगें, इस लिये जीव गीणे. (६) समभीरुढ नयसे—शुद्ध सत्ता धारक निज गुण [ज्ञानादि] में रमण करनेवाला क्षायिक सम्यक्त्वीको जीव माने. (७) एवंभूत नयसे सिद्ध भगवंतके जीवको ही जीव श्रधे.

---

† उपयोग दो प्रकारके हैं; शुभ और अशुभ. अशुभ उपयोग मिथ्यात्व मोहनी कर्मके उदे है. अजीव है परंतु नयके हिसाबसे जीव गिना है.

अजीव तत्वके मुख्यमें पांच प्रकार होते हैं:—१ धर्मास्ती. २ अधर्मास्ती. ३ आकास्ती. ४ कालास्ती. ५ पुद्गलास्ती.

प्रथम धर्मास्ती पे सात नय:—(१) नैगम नय से—धर्मास्ती के एक प्रदेशको अजीव माने, क्यों कि उसमें चलण शक्ती देने की सत्ता है. (२) संग्रह नय से—धर्मास्ती के प्रयोग से पुद्गल सो जड (अजीव) चेत्नादि सर्वको चलनेका धर्म भेला है. उसे अजीव माने. इसने प्रदेशादि ग्रहण नही कीये. (३) व्यवहार नय से—जीव तथा पुद्गलोंको चलने की साहाय्य धर्मास्ती के द्रव्य की हैं. परंतू उसमें षड* गुण हाणी वृद्धी है सो ही धर्मास्तीका व्यवहार

* षड गुण हाणी वृद्धि—१ संख्यात गुणे अधिक. २ असंख्यात गुणे अधिक. ३ और अनंत गुण अधिक. ये ३ बोल गुण आश्री जाणना. तैसे ही संख्यात भाग अधिक २ असंख्यात भाग अधिक. और ३ अनंत भाग अधिक ये ३ बोल वस्तू के भाग आश्री जाणना. जैसे ये ६ बोल अधिक के कहे तैसे ही हीण (कमी) पणे के जाणने. जैसे १ संख्यात गुण हीण. २ असंख्यात गुण हीण. ३ अनंत गुण हीण. ४ संख्यात

हैं. (४) ऋजु सुत्र नय से-जीव या पुद्गल जो वर्तमानकालमें गती गुण करे उसे धर्मास्ती कहै. परंतु अतीत कालका गुण विणस्या और आगमिक कालका नहीं उपज्या उसे ये नहीं माने. (५) शब्द नय से-धर्मास्ती के गुणका जो स्वभाव है उसे धर्मास्ती कहैं. इसे देश प्रदेश की कुछ जरुर नही फक्त स्वभाव की मुख्यता है. (६) समभीरुढ नय से-ज्ञानादिक के उप्योग से जाणे जो ये धर्मास्तीका गुण है उसे धर्मास्ती कहे. (७) एवंभूत नय से-धर्मास्ती की सप्तभंगी सप्तनय चार प्रमाण से इत्यादि से धर्मास्ती के संपूर्ण गुण सिद्ध होवे उसे धर्मास्ती माने.

दूसरा, अधर्मास्तीमें भी धर्मास्ती की तराह

भाग हीण. ५ असंख्यात भाग हीण. और ६ अनंत भाग हीण. ये छे बोल हीण के. यों १२ बोल हाणी वृद्धी के जाणना. ये जीव और अजीव दोइ मिलाते हैं. ये १२ कहे इसमें से जिस जगे ८ बोल पावे सो चौठाण बलीया. ६ बोल पावें सो तीठाण बलीया. ४ बोल पावे सो दो ठाण बलीया. २ बोल पावे सो एक ठाण बलीया जाणना.

व्याख्या करनी, विशेष इत्ना ही कि धर्मास्तीमें चलण गुण कहा वैसा ह्यां सर्व ठीकाणे स्थिर गुण कहेना.

३ आकास्तीको (१) नैगम नयसे–एक आकाश प्रदेशको आकास्ती कहे [२] संग्रह नयसे ‘ एगे लोए ’ (एकलोक) एगा लोए [एक अलोक] इनको आकास्ती कहै. खंध देश नही माने. (३) व्यवहार नयसे–ऊंचे नीचे त्रीछे लोकके आकाशको आकास्ती कहै (४) ऋजूसुत्र नयसे आकाश प्रदेशमें जो जीव पुद्गल रहे हैं उसमें जो षडगुण हाणी बृद्धी प्रणाम रुप क्रिया करे उसे आकास्ती कहैं (५) शब्द नयसे अवगाह लक्षण पोलाडको आकास्ती कहैं (६) समभीरुढ नयसे वीकाश गुणको आकास्ती कहे (७) एवंभुत नयसे–आकाशके द्रव्य गुण पर्याय व्यय ध्रुव उत्पात इनके ज्ञायक (जाण) को आकास्ती कहै.

४ कालास्ती. (१) नैगम नयसे–समयको काल कहैं; क्यों कि तीनकालके समयका गुण एक ही हैं. (२) संग्रह नयसे–एक समयसे लगाके यावत् काल चक्रको काल कहै [३] व्यवहार नयसे दिन रात पक्ष मास वर्षादिकको काल कहै. इस

नयवाला अढाइ द्विप बाहिर काल नही मानें, क्यों कि बाहिर घडीयादिक नही हैं. (४) ऋजू सुत्र नय से–वर्तमान समयको काल कहै; अतीत अनागत न माने. शब्द नय से जीव अजीव उपर पर्यायको पलटाता प्रवर्तें उसे काल कहै. (६) समभीरुढ नय से–जीव पुद्गल की स्थिती पूरी कर के सन्मुख होवे उसे काल कहैं. (७) एवं भूत नयसे–कालके द्रव्य गुण पर्यायके ज्ञायकके काल कहे.

५ पुद्गलास्तीकाय. (१) नैगम नयसे पुद्लक खंध की एक गुण की मुख्यता ले के काले पुद्गलके वर्ण गंध रस स्पर्श इन्के एक अंस ग्रहण करे उसे पुद्गल कहै (२) संग्रह नयसे–अनंत पुद्गलके समुह रुप पिंडको पुद्गल कहै. (३) व्यवहार नयसे–विससा (नाम नही ऐसे पुद्गल) मिससा (जीवने ग्रहण करके छोडे सो पुद्गल), पउगसा (जीव ग्रहण कर रक्खे सो पुदगल) इनका व्यवहार देखे वैसा कहैं. [४] ऋजूसुत्र नय–वर्तमान कालमें पुद्गलोंका पूरन–गलन होवे उसे पुद्गल कहैं. (५) शब्दनयसे पुद्गलकी पूरण गलण रुप जो क्रिया है उसे पुद्गलास्ती कहै. (६) सम-

भीरुढ नयसे—पुद्गल की षड्गुण हाणी वृद्धी व उत्पात व्यय ध्रूवता उसे पुद्गल कहैं. (७) एवंभूत नयसे—पुद्गलोंके द्रव्य क्षेत्र काल भाव इन्के द्रव्य§ गुण पर्यायके ज्ञायकका उस्में उप्योग है उस वक्त पुद्गलास्ती कहैं. ये अजीव तत्वके सात नय हुइ.

[३] पुन्य तत्व.

[१] नैगम नयसे पुन्य रुप कार्यका कारण शुभ पुद्गलोंका संयोग जैसे किसीके ह्यां धन दुपद चौपदादि बहुत रिद्धी देखके कहे की ये पुन्यवंत, इनको पुन्यके योगसे इस्ना संयोग बना हैं. इनने कार्यको कारण मानके शुभ पुद्गलोंको पुन्य माना. (२) संग्रह नयसे ऊंच कुल जात सुन्दर रुप साता वेदनी इत्यादि पुद्गलों की वर्गणाको देखके पुन्य माने. इसने जीव पुद्गलको भेले गिने. (३) व्यवहार नयसे शारीरिक मानासिक सुख आरोग्यता इत्यादि अवस्था देख पुन्यवंत कहै. क्यों कि ये पुन्य

§ द्रव्यों दो १ जीव द्रव्य. २ अजीव द्रव्य. गुण सो जीवके ज्ञानादि, अजीवके चलनादि. पर्याय दो, आत्मभाव और कर्म भाव. अजीवके द्रव्य गुण पर्यायमें अजीव और जीवमें जीव ग्रहण करना.

प्रकृतिका व्यवहार इंद्रीयोंके विषयसे दिखते हैं. [४] ऋजूसुत्र नयसे शुभ कर्मके उदयसे संपूर्ण मनोज्ञ वस्तु प्राप्त हुइ जहां जाय वहां आदर पाय इच्छित वस्तुका संयोग बने, इत्यादि देखके कहे कि ये पुन्य वंत हैं. (५) शब्द नयवसे वर्तमान कालमें सुख भोग रहा है उसे पुन्यवंत कहे. ['प्रश्न':— ऋजू सुत्रमें और इस्में क्या फरक पडा? 'समाधान':—ऋजू सुत्र नयवाला तीन ही कालमें सुख भोगवनेवालेको पुन्यवंत मानता है. और शब्द नयवाला तो जिस वक्त सुख भोगेगा उसी वक्त पुन्यवंत कहेगा. जैसे कोइ चक्रवर्ती नींदमें सूते हैं उसी वक्त ऋजूसुत्र नयवाला तो उनको पुन्यवंत कहेगा. क्यों कि उनने गये कालमें सुख भोगे है और आवते कालमें भोगवेगा. परंतू शब्द नयवाला तो उने पुन्यवंत नही कहेगा. क्योंकि निद्रा पापका उदय है. जिसवक्त उनकी आत्मा सातावेदनी भोग के साता मानेगी उसवक्त पुन्यवंत कहेगा.] (६) "समभीरुढ नय" पुन्य प्रकृति के पुद्गल प्रयोगसे प्रगमे. आनंदमें लीन हुवा उसे पुन्यवंत कहेगा. (७) एवंभूत नय पुन्य प्रकृती के गुण के ज्ञायकको पुन्यवंत कहेगा.

(४) पापतत्व.

पुण्यतत्वकी तराह पाप तत्वका समझ लेना.

(५) आश्रवतत्व.

(१) नैगम नयसे कर्मरुप प्रगमने योग्य पुद्गल को आश्रव कहे. (२) संग्रह नयसे मिथ्यात्वादिक पुद्गल प्रयोग पणे प्रगमणे रुप दलको आश्रव कहे. (३) व्यवहार नयसे अपच्चखाणीको आश्रव कहें. इसमें अशुभ जोगका वेपार सो अशुभ आश्रव. और शुभ जोगका वेपार सो शुभ आश्रव. यों दोनुको मिलके प्रवर्ते सो मिश्र आश्रव. (४) ऋजुसुत्र नयसे वर्तमानकालमें शुभाशुभ योग वर्ते सो आश्रव.

प्रश्नः—फक्त योगको ही आश्रव कहा तो फिर मिथ्यात्व अव्रत, कषाय, प्रमाद. इन चारको क्यों नही लिये? समाधानः—मिथ्यात्वा दिक चार आश्रव तो निमित कारण है. और मनादि त्रियोग उपादान* कारण हैं. क्योंकि मिथ्यात्वादि चारहीको उत्पन्न

---

* उपादान और निमितका खुलासाः—द्रष्टांत, उपादान मिला गायका और निमित मिला दूणेवालेका तब दूध हुवा. ऐसे ही, उपादान दूध और निमित जावंणाका तब दही हुवा, उपादान दही और निमित रवैका. तब मही व मक्खन हुवा. ऐसेही, उपादान माताका और निमित पिताका, तब पुत्र हुवा. ऐसे ही सब जानना.

करनेवाले तीन योगही है. जैसा योग वर्ते वैसा आश्रव होवे. इस लिये ह्यां योगको ग्रहण कीये है. मिथ्यात्वादि चारहीमें योगको ग्रहण करनेकी सत्ता नहीं है. और इन चारहीमें जो जोगका संयोग होय तो कर्म पुद्गलको आकर्षण (खैंच) सकते है.

प्रश्नः–आत्माके योगसे कर्म पुद्गलको आकर्षण करे है सो आत्मासें अंतराल वर्ती (दूरके) पुद्गलोंको खेंच सके की नहीं?

उत्तरः–दूरके पुद्गल खेंचनेकी सत्ता तो नहीं है. परंतु आत्म अवगाही पुद्गलको ही ग्रहण करे हैं.

सूचनाः–शुभाशुभ योगमें षड्गुण हाणि वृद्धि होती है. वहां एकांतपणेका संभव नही हैं. क्योंकी एक शुभ योग और एकांत अशुभ योग मिलना मुशकील है. केवलीके और सकषायीके शुभ योगमें कित्ना अंतर होता है सो दिर्घ द्रष्टिसें विचारिये.

प्रश्नः–एक समयमें दो कार्यका ना कही है तो फिर शुभाशुभ आश्रव कैसे कहा ?

समाधानः–एक समयमें दो जोग तो नही मिले, इस लिये मुख्यतामें* तो एकही योग मीलता है. और गौणतासे* कुछ दूसरें जोगका अंश मिलता है. जैसे शास्त्रमें धम्मीवासा अधम्मीवासा और धम्माधम्मी वासा कहा है. तथा मिश्रयोग मिश्रगुण ठाणा बहुत ठीकाणे कहा है.

(तत्व केवली गम्यं)

(५) शब्द नयसे–जिस स्थानसे आश्रव आता

---

* मुख्यतामें हंस धोला और गौणतामें वर्ण पांच ही पावे. ऐसे अनेक रीते मुख्यता गौणता जानना.

है उस प्रणामको आश्रव माने.

(६) समभीरुढ नयसे—जो कर्म ग्रहण करने के गुण है उसे आश्रव कहै. (७) एवंभूत नयसे—आत्मा के सकंपपणेको आश्रव कहै.

[६] संवरतत्व.

(१) नैगम नयवाला कारणको कार्य मानता है, इसलिये सुभयोगको संवर कहैं. (२) संग्रह नय से सम्यक्त्वादिक प्रणामको संवर कहे. (३) व्यवहार नय से चारित्री पंचमहाव्रत रुप उसे संवर कहे. (४) ऋजूसुत्र नयसे वर्तमानकालमें नये कर्मकों रोके उसे संवर कहे. (५) शब्द नयसे समकितादिक पांच (सम्यक्त्व, व्रत, अप्रमाद, अकषाय, स्थिर योग) को संवर कहे. इस नयवाला चोथे गुणस्थान व्रतिको संवरी माने. क्योंकि उसने मिथ्यात्वका अनाश्रव कहा हैं. (६) समभीरुढ नयसे मिथ्यात्वादिक पंच ही आश्रव की कर्म वर्गणासे अलिप्त रहे इनकी स्नीग्धता मंद करे तथा ऋक्षप्रणाम कर कर्म प्रकृती से नही लेपाय उसे संवर कहैं. (७) एवंभूत नयसे सलेसी (पर्वत जैसे स्थिरीभूत) अवस्था अवस्थावालेको संवरी कहे. ये १४ वे गुण

स्थानवाले जाणना. ह्यां आत्माको संवर कहा सो श्री भगवती के नवमे उदेशेमें "काल सव्वेसिय आया संवरे, आया संवरस अठे" ये पाठमें आत्माको ही संवर कहा है.

(७) निर्जरातत्व.

(१) नैगम नयसे, शुभ योगको निर्जरा कहैं. (२) संग्रह नयसे, कर्म वर्गणा के पुद्गलको झाडे (दूर करे) उसे निर्जरा कहे. (३) व्यवहार नयसे, बारे प्रकार के तपको निर्जरा कहे; क्योंकि तप है सो ही कर्म निर्जराका व्यवहार हैं. (४) ऋजुसुत्र नयसे, जो वर्तमानकालमें शुभ ध्यान युक्त होवे उसे निर्जरा कहे. (५) शब्द नयसे ध्यानाग्नी के प्रयोग से कर्म इंधण जलावे उसे निर्जरा कहे, क्योंकि शुभ ध्यानसे सकाम निर्जरा होती है. (६) समभीरुढ नयसे, आत्मा के उज्वलपणे के सन्मुख हो सुक्ल-ध्यानारुढ हुया उसे निर्जरा कहै. ये क्षिण मोह १२ वे गुण स्थानवर्ती जाणना. (७) एवंभुत नयसे, सर्व कर्म कलंक रहित शुद्धात्माको निर्जरा कहै.

[८] बंध तत्व.

(१) नैगम नयसे, बंधके कारणको बंध कहै. (२) संग्रह नयसे, अष्ट कर्म बंध की प्रकृतीयों तथा रागद्वेषको बंध कहै. (३) व्यवहार नयसे, क्षीर नीर जैसा चैतन्य पुद्गलोंके बंधको तथा रागद्वेषके बंधमें बंध हुवे संसारी जीव दिख रहे हैं उसे बंध कहे (४) ऋजुसुत्र नयसे मांस भक्षणादि अशुभ कार्यमें प्रवर्ते उसे बंध कहै. कहा जाता है की जीव कर्म बंधानुसार सुख दुःख पाते है. [५] शब्द नयसे, अज्ञानतासे ग्रथिल हो व्यामोह पणासे कार्या-कार्यको न वीचारे ये कर्म गुणको बंध कहे हां जीव विपाक की प्रकृतिको बंध गिणते हैं. (७) एवंभूत नयसे, आत्माके अशुद्ध अध्यवसायसे जो भाव कर्मका संचय होता है बंध कहै.

[९] मोक्ष तत्व.

सर्व नयसे निश्चयमें मोक्षका व्यवहार नहीं है. परंतु पर्यायार्थी नयसे भेद प्रकाश रुप कहते है. (१) नैगम नयसे जो गतीयोंके बंधसे छुटा उसे मोक्ष कहै. (२) पूर्व कृत कर्मसे छुटके देशसे उज्वल हुवे उसे मोक्ष कहे. (३) व्यवहार नयसे, परित संसारी तथा

सम्यक्त्वीको मोक्ष कहे. (४) ऋजुसुत्र नयसे, क्षपक श्रेणी चडनेवालेको मोक्ष कहे. (५) शब्द नयसे, सयोगी केवलीको मोक्ष कहे. (६) समभीरुढ नयसे, सेलेसी करण गुणवालेको मोक्ष कहें. (७) एवंभूत नयसे, जो सिद्ध क्षेत्रमें बीराजे उसे मोक्ष कहे.

च्यार निक्षेपे.

कोइ भी वस्तुमें गुण या औगुणका आरोपण [स्थापन] करना सो निक्षेपे कहे जाते हैं. ये निक्षेपे चार हैं. १ नाम निक्षेपा, २ स्थापना निक्षेपा, २ द्रव्य निक्षेपा; ४ भाव निक्षेपा.

१ नाम निक्षेपेके ३ भेद (१) यथार्थ नाम. (२) अयथार्थ नाम. (३) अर्थशून्य नाम. (१) यथार्थ नाम उसे कहते है की जैसा जिसका नाम वैसा उसमें गुण होय, जैसे जीवका नाम हंस, चैतन्य, प्राणी, भूत, इत्यादि जो नाम हैं वैसा उसमें गुण है. (२) अयथार्थ नाम उसे कहते है, जिसमें वैसा गुण न होए. जैसे, जीवका नाम धूला, कचरा, हीरा, मोती इत्यादि रखते हैं. [३] अर्थ शुन्य नाम उसे कहते है जिस्का कुछ अर्थ नहीं होय, जैसे,

हांसी, खांसी, छींक, वगासी, वाजित्रका अवाज वगैरा. इनका कुच्छ अर्थ नही होता है.

२ स्थापना निक्षेपेके ४० भेद. १ कठ कम्मेवा काष्टकी. २ चित्त कमेवा–चित्र की. ३ पोत कम्मेवा पोत [चीड] की. ४ लेप कम्मेवा–मांडणे की. ५ गंठिमेवा–डोर प्रमुखको गांठो लगाके. ६ पुरी मेवा भरत (कसीदे) के. ७ वेरी मेवा–छेद (कोर) के (करणी करे.) ८ संघाइ मेवा–कोइ वस्तुका संयोग मिलाके. ९ अखेवा–अकस्मात् कोइ वस्तु पडनेसे आकार मंड जाय. तथा चावल जमाके. १० वराडेवा–वस्त्रका. ये १० के एकंवा–एक आकार करे. तथा अनेकंवा–बहोत चित्र करे. ये २० हुये. ये चित्र की स्थापना दो प्रकार की होती हैं. (१) सद्भाव स्थापना–जैसी वो वस्तु वा मनुष्यादि प्राणी होवे उस्का ताद्रश्य हुबेहु लक्षण, व्यजंन युक्त ऊंचाइ चोडाइ बरोबर. उस्को देखके यथा तथ्य उस वस्तुका भास होवे. जैसे अब्बी फोटोग्राफ होता है तैसा उसे "सद्भाव स्थापना" कहना. (२) असद्भाव स्थापना, सद्भावके उलट अर्थात् यथातथ्य नहीः यों ही उपर कही हुइ वस्तुका संयोग मिला मनकल्पित रुप

बनावे. जैसे गोल पत्थरको तेल सिंदुर लगाके भैरवादिक स्थापे. यों उन वीसको दुणे करनेसे ४० भेद स्थापना निक्षेपेके हुये.

३ द्रव्य निक्षेपे के दो भेद (१) आगमसे (२) नो आगम से. (१) आगमसे उसे कहते हैं जैसे शास्त्र तो पढता है. परंतु उसका अर्थ कुछ समजता नही हैं तथा उप्योग रहित सुन्य चित्तसे विग्रह प्रणाम से पढे सो. (२) नो आगमसे के तीन भेद—१ जाणग सरीर. २ भविय सरीर. और ३ जाणग भविय सरीर. (१) जाणग सरीर उसे कहते हैं, जैसे कोइ श्रावक आवस्यक (प्रतिक्रमण) का जाण आयुष्य पूर्णकर [मर] गया. उस्का सरीर पडा है. उसे कहे ये आवस्यकका जाण था. द्रष्टांतः— खाली घडेको देख के कहे की ये घीका घडा था. (२) भविय सरीर—किसी श्रावक के घर पुत्र हुवा उसे कहे की ये आवस्यकका जाण होयगा. द्रष्टांत- कोरे घडेको देख के कहा ये घीका घडा होयगा. (३) जाणग भविये वितिरिक्त सरीर के तीन भेद १ लौकीक. २ कुप्राबचन. ३ लोकोत्तर.

[१] लौकीक—राजा सेठ सेनापति नित्य सभामें

जाके अवस्य करने योग्य काम करे सो लौकीक द्रव्य आवश्यक. [२] कूप्रावचनीक-उसे कहते हैं, 'जे-चक्कचिरीया,-वल्कल के वस्त्र पहरनेवाले, चर्मखंडा-मृगादिकका चर्म [चमडा] रखनेवाले, पांडूरंगा-भगवा वस्त्र पेहरनेवाले, पासत्थे-फक्त नाम तापस. इत्यादिक नित्य नियम प्रमाणे ॐकारादिकका ध्यान करे क्रिया करे सो कुप्रावचनीक द्रव्य आवश्यक कहना. [३] लोकोत्तर-'जे इम्मे समण गुण मुक्का' (जे साधूके गुण रहीत) 'जोग छकाय निरणु कंपा' (छे काय की दया रहित), 'हय इव उदमा' (घोडे जैसे उन्मत्त) 'गया इवा निरांकुसा' (हाथी जैसा अंकुस रहित) 'घट्टा' सुश्रुषा करे, 'मठा' (मठालंबी) 'तिपुठ' (तप रहित) 'पडुर पट पउरणा' (स्वच्छ वस्त्रके धारी), 'जिणाणं आणा अणाय' (भगवान की आज्ञा बाहिर) 'उभय कालं आवसग ठवंती' [दोइ वक्त प्रतिक्रमण करे] उस्को लोकोत्तर द्रव्य आवश्यक कहना.

४ भाव निक्षेपेके दो भेदः-१ आगमसे. २ नोआगमसे. १ आगमसे भाव उसे कहते हैं जो शुद्ध उप्योग सहित. भावार्थ पे उप्योग लगाके अंतःकरण

की रुची युक्त शास्त्र पढे. (२) नो आगमके तीन भेद. १ लौकीक कुप्रावचनीक और २ लोकोत्तर. १ लौकीक—राजा सेठ प्रमुख नित्य शुद्ध उप्योगसे फजरको भारत, स्यामको रामायणादि श्रवण करे. * कूप्रावचनी—जे चक चीरीया पाडूरंगा चर्मखंडा पासत्था अर्थ युक्त उसमें शुद्ध उप्योग सहित उँकारादिक मंत्र जपे सो कूप्रावचनी भावावश्यक.

३'लोकोत्तर.' समण—साधू. समणी—साध्वी. माहाणं—श्रावक. महाणी—श्राविका. उभय कालं—दोइ वक्त [श्याम शुबे] "आवश्यक ठवंती" शुद्ध उप्योग सहित आवश्यक [प्रतिक्रमण] करे सो लोकोत्तर भाव आवश्यक. इन चार ही निक्षेपेका स्वरुप अनुयोगद्वार शास्त्र प्रमाणे लिखा है. इन निक्षेपेमें से पहली के तीन निक्षेपे 'अवस्तु' निकम्मे—बिना काम के है और चौथा भाव निक्षेपा उप्योगी—कामका हैं.

ये ४ निक्षेपे नव तत्व पे उतारते हैं.

१ जीवतत्त्व—(१) नाम निक्षेपे जीव ऐसा

* ये भारत रामायाण तो कुप्रावचनमें है, परंतु अपने अच्छेके लिये सुणाते है, इस लिये लौकीक में ली है.

नाम सो. अजीवका नाम जीव रक्खे तो भी नाम निक्षेपे के अनुसारसे उसे जीव ही माना जाय. [२] स्थापना निक्षेपे–चित्राम प्रमुख की स्थापना करे सो. [३] द्रव्य निक्षेपेसे षट द्रव्यमें से जो जीव द्रव्य असंख्यात प्रदेशवंत है सो. [४] भाव निक्षेपे. 'उदय, उपसम, क्षायक, क्षयोपसम, प्रणामिक' इन ५ † भावमें प्रवर्ते सो.

---

† इन पांच भाव की ५३ प्रकृती–१ उदय भाव की २१, गति ४, लेस्या ६, कषाय ४, वेद ३, १ असिद्ध. १ अज्ञानी, १ अवृती, १ मिथ्यात्वी, ये २१. उपसम भाव की २. उपसम सम्यक्त्व. उपसम चारित्र. ये २. क्षायिक की ९ दानांतराय आदि पांच अंतरायका क्षय. ६ केवल ज्ञान. ७ केवल दर्शन. ८ क्षायिक सम्यक्त्व ९ क्षायिक चारित्र. ये ९. क्षयोपसम की १८, ज्ञान ४ पहले, अज्ञान ३, दर्शन ३ पहले, अंतराय ५ ये १५ और क्षयोपसम चारित्र. १७ उपसम समकित. १८ क्षायिक समकित ये १८. प्रणामिक की तीन. १ भव्य प्रणामी. २ अभव्य प्रणामी. ३ जाव प्रणामी. ये पांच भाव की ५३ प्रकृती. अब पांच भावके भेद. उदय भावके २ भेद. १ उदय और उदय निप्पन्ने. प्रथम

२ अजीव तत्व. (१) नाम निक्षेपेसे. अजीव ऐसा नाम सो. २ स्थापना निक्षेपेसे; अजीव की

उदय सो तो आठ कर्मोंका जाणना. और दूसरा उ-उदय निप्पनके दो भेद, जीव उदय, अजीव उदय. जीव उदयके. ३१ भेद. गती ४, लेश्या ६. कषाय ४. काया ६. वेद ३, १ मिथ्यात्व, १ अवृत, १ अज्ञाणी, १ असन्नी, १ आहारथा, १ संसारथा, १ असिद्धा, १ अ केवली, ये ३१. दूसरे अजीव उदयके ३०. सरीर ५ और सरीरके प्रणामे पुद्गल ५ और वर्ण ५ गंध २, रस ५ स्पर्श ८. ये ३०. २ उपसम भावके २ भेद. उपसम और उपसम निप्पन्ने. उपसम सो ८ कर्मको ढके हुये को जाणना और उपसम निपन्ने के ११ भेद कषाय ४. राग, द्वेष, दर्शन मोह, चारित्र मोह. दर्शन लब्धी, चारित्रलब्धी, छद्मस्त और वीतरागी ये ११. चायिक भावके दो भेद, चय. चयनिपन्ने. चय सो तो ८ कर्मोंका. और चय निपन्नके ३७ भेद. ५ ज्ञानावर्णी, ९ दर्शनावर्णी. २ वेदनी. ८ मोहनीय. (क्रोध, मान, माया, लोभ, राग, द्वेष, दर्शन मोह, चारित्रमोह.) ४ गतीका आयुष्य. २ गोत्र. ५ अंतराय. ये ३७ प्रकृतीकों चिण करे सो. चायिक चयोपसमके दो भेद. चय—चयनिपन्न. चय ८ कर्मका,

स्थापना कर अजीवका स्वरुप बतावे सो. ३ द्रव्य निक्षेपेसे, धर्मास्तिका चलण, अधर्मास्तिका स्थिर, आकाशका अवकाश, कालका वर्तमान, पुद्गलका

क्षयोपसम निपन्ने के ३० भेद ४ ज्ञान ३ अज्ञान, दर्शन ३ द्रष्टी ३ चारित्र ५ लब्धी ५ पूर्वधर आचार्य. द्वादशांगी जाण. ये ३० ॥ प्रणामिक भावके दो भेद सादीय और अणादीय. सादीय के अनेक भेद जैसे जूना सुरा, जूना घीया, जना तंदुला, अब्भो, अब्भरुखा, गर्धव, नागराय, उलकापात, दिशीदाहा, गर्जारव, विजली, निघाय, बालचंद्र, यक्षचिन, धूंवर, ओस, रजघात, चंद्रग्रहण, सूर्यग्रहण, चंद्रप्रतीवेस, प्रतीचंद्र, प्रतीसूर्य, इंद्र धनुष्य, उदकमच्छ, अमोह, बर्षाद, बर्षाकी धारा, ग्राम, नगर, पर्वत, पाताल कलसा, नरकावासा, सातनर्क, भवन, सुधर्मा देवलोक जावत इस्सीपभारा (मुक्तसीला) प्रमाणु पुद्गल, जावत अनंत प्रदेशीखंधा. इन सबको सेंदी प्रणामीक केणा. अब अणाइंदी प्रणामिक के अनेक भेद. जैसे धर्मास्ती, अधर्मास्ती, जाव अधा समय, लोक, अलोक भवसिद्धीए, अभवसिद्धीए, इत्यादि. इति पभाव, इन भावोमें प्रणाम प्रवर्ते तब भाव निक्षेपा जीवतत्व पे लागू होता है.

वर्णादि इत्यादि द्रव्यका स्वभाव सो. ४ भाव निक्षेपेसे, पूर्वोक्त पांच ही द्रव्यके सद्भाव रुप गुण है उसे कहना.

३ पुन्यतत्व. [१] पुन्य ऐसा नाम. (२) स्थापना अक्षरादि स्थापे सो. [३] द्रव्य निक्षेपे शुभ प्रकृति की वर्गणा जीव प्रदेशके साथ प्रणमे सो. [४] भाव निक्षेपेसे पुन्य प्रकृतीके उदयसे जीव हर्ष आल्हाद साता वेदे सो.

४ पाप तत्व [१] पाप ऐसा नाम. (२) स्थापना निक्षेपेसे, अक्षरादि स्थापके बतावे सो, [३] द्रव्य निक्षेपेसे, अशुभ कर्म की वर्गणा द्रव्य पणे प्रगमे सो. [४] भाव निक्षेपेसे, पापके उदयसे जीव दुःख वेदे सो.

५ आश्रव तत्व. [१] आश्रव ऐसा नाम. [२] अक्षरादि स्थापे. [३] द्रव्य निक्षेपेसे मिथ्यात्वादि प्रकृति तथा नाम और मोह कर्मकी प्रकृति आत्माके साथ लोलू भूत होय कर्म पुद्गल ग्रहण करने की सक्ती सहित उन प्रयोगसे पुद्गलको द्रव्याश्रव. (४) भाव निक्षेपेसे मिथ्यात्वादिक प्रकृतिका उदय हो जीवके भाव पणे प्रणमे सो.

६ 'संवर तत्व' [१] नाम निक्षेपे संवर ऐसा

नाम. (२) स्थापना निक्षेपे अक्षरादि स्थापे सो. (३) द्रव्य निक्षेपे सम्यक्त्वादि व्रत धारके आश्रव रोके सो. (४) भाव निक्षेपेसे आत्माका अकंप पणा देशसे तथा सर्वसे होय सो.

७ 'निर्जरा तत्व' नाम स्थापना पूर्व वत्. ३ द्रव्य निक्षेपेसे जीवके प्रदेशसे कर्म पुद्गल खीरे सो. (४) भावनिक्षेपसे आत्मा निर्मल होके ज्ञान लब्धी क्षयोपसम लब्धी क्षायक लब्धी इत्यादि लब्धी प्रगटे सो.

८ 'बंध तत्व' नाम स्थापना पूर्व वत्. (३) द्रव्य निक्षेपसे कर्म वर्गणाके पुद्गल आत्म प्रदेशसे बंधे सो. (४) भाव निक्षेपसे मद्यपान जैसी बंधकी छाक चडे सो.

९ 'मोक्ष तत्व' नाम स्थापना पूर्व वत्. (३) द्रव्य निक्षेपेसे जीवका निर्मल पणा. (४) भाव निक्षेपसे आत्माके निज गुण क्षायिक सम्यक्त्व केवल ज्ञान सो.

चार प्रमाण.

जिस करके वस्तुकी वस्तूता सिद्धीं होवे सो प्रमाण. प्रमाण चारः—१ प्रत्यक्ष प्रमाण, २ अनुमान

प्रमाण, ३ आगम प्रमाण, ४ उपमा प्रमाण.

१ प्रत्यक्ष प्रमाणके दो भेद. (१) इंद्री प्रत्यक्ष [२] नो इंद्री प्रत्यक्ष. इंद्री प्रत्यक्षके ५ पांच भेद १ श्रोतेंद्री (कानसे) २ चक्षु इंद्री (आंखसे), ३ घाणेंद्री (नाकसे) ४ रसेंद्री (जीभसे) ५ स्पर्शेंद्री (सरीरसे) जो वस्तुका प्रत्यक्ष ज्ञान होवे सो इंद्री प्रत्यक्ष प्रमाण. (२) नो इंद्री प्रत्यक्षके दो भेद (१) देशसे, (२) सर्वसे. देशसेके ४ भेद. १ मतिज्ञान. २ श्रुती ज्ञान. ३ अवधी ज्ञान. ४ मनः पर्यव ज्ञान. १ मतीज्ञानके २८ भेद. १ उत्पातीया बुद्धी—तत्काल बात उपजे. २ विनया बुद्धी—विनयसे आवे. ३ कम्मीया बुद्धी—काम करता सुधरे. ४ प्रणामीया बुद्धी वय प्रमाणे बुद्धी होए. ये चार बुद्धी. और श्रोतेंद्री की अवग्रह सो शब्दको ग्रहण करना. श्रोतेंद्री की 'इहा' सो सुणे हुये शब्दका बीचार. ३ श्रोतेंद्री की 'अवाय' सो सुणे शब्दका निश्चय करना. ४ श्रोतेंद्री की 'धारणा' सो बहोत काल लग धार (याद) रखना. जैसे श्रोतेंद्रीपे ४ बोल कहे ऐसे ही २ चक्षु इंद्रीसे देखनेका. ३ घाणेंद्रीसे सूंघणेका. ४ रसेंद्रीसे स्वाद नेका. ५ स्पर्ष इन्द्रिसे स्पर्शका. ६ मनसे बीचारका यों ६

पे चार बोल कहनेसे ६×४=२४ बोल हुये और ४ बुद्धी मिलके श्रुत ज्ञानके अठावीस भेद हुये.

२ श्रुती ज्ञानके १४ भेद. १ अक्षर श्रुत–क ख प्रमुख अक्षर तथा संस्कृत प्राकृत हिंदी इंग्लिश फारसी आदिकसे जाणे सो. २ अनक्षर श्रुत, अक्षर उच्चार विन खांसी छीं‍क प्रमुख चेष्टासे ज्ञान होवे सो. ३ सन्नी श्रुत–वीचारना, निश्चय करना, समुच्चय अर्थ करना, विशेष अर्थ करना, चिंतवना और निश्चय करना ये छे बोल सन्नीमें मिलते हैं. इन छे बोलसे सुत्र धार रक्खे सो सन्नी श्रुत. ४ असन्नी श्रुत–ये छे बोल रहित होवे तथा भावार्थ विचार सुन्य उप्योग सुन्य पूर्वा पर आलोच (निर्णय) रहित पढे पढावे सुणे सो असन्नी श्रुत. ५ सम्यक्त्व श्रुत–अरिहंत देवके परुपे गणधर देवके गूंथे तथा कमसे कम तो दश पूर्व धारीके फुरमाये सुत्र सो सम्यक्त्व श्रुत. दश पूर्वसे कमी ज्ञान वालेका निश्चय नही. उन्के रचे ग्रंथ समश्रुत भी होवे और मिथ्या श्रुत भी होवे. इस लिये दश पुर्व धारीके किये हुये ग्रंथ ही सम्यक्त्व श्रुत है. ६ मिथ्या श्रुत–अपनी इच्छासे कल्पित रचे हुये ग्रंथ जिसमें हिंसादिक पंचा-

श्रवका उपदेश होए; वैदिक, ज्योतिष, काम शास्त्र इत्यादि मिथ्या श्रुत. ७ सादि श्रुत—आदि सहित* ८ अनादि श्रुत—आदि रहित. * ९ सपज्जव श्रुत—अंत सहित* १० अपज्जव श्रुत—अंतरहित. * ११

---

* १ सआदी २ अनादी. ३ सपजव. ४ अपजव. इन ४ खुलाशा. द्रव्यसे एक जीव आश्री आदी अंत-सहित. पढने बेठा सो पूरा करे. बहोत जीव आश्री आदी अंत रहित. बहुत पढे है और पढेगे. २ क्षेत्रसे भरत ऐरावत आश्री आदि अंत सहित. और महाविदेह आश्री आदी अंत रहित. ३ कालसे उत्सर्पिणी अव-सर्पिणी आश्री आदी अंत सहित और नो उत्सर्पिणी अवसर्पिणी आश्री आदी अंतरहित. ४ भावसे तिर्थंकरने भाव प्रकाश्या सो आदी अंत सहित और क्षयोपसम भाव आश्री आदी अंतरहित, ज्ञान पे एक द्रष्टांत. आका-श के अनंत प्रदेश हैं. एक प्रदेश के अनंत पर्याय हैं. सर्व पर्यायसे अनंत गुण अधिक एक अगुरु लघु पर्याय होय. उस्का अक्षर (अ=नही+क्षर=खीरे) होवे. सर्व जीव के अक्षर के अनंतमे भाग ज्ञान प्रदेश सदा उघाडे रहते हैं. जिससे ही जीव के चेतना लक्षण कहे जाते है. जैसे घोर घटामें सूर्य दब गया तो भी रात्री दिन

गमिक श्रुत—द्रष्टी वाद. १२ मा अंग. † १२ अगमिक श्रुत—आचारंगादिक कालिक सुत्र. १३ अंग पविठ श्रुत—जिन भाषित द्वादशांगी वाणी. १४ अंग बाहिर—बार अंगके बाहिरके श्रुतके दो भेद १ आवश्यक—सामायिकादिक छे. २ आवश्यक वितिरिक्त सो कालिक उत्कालिकादिक जाणना.

ये मति और श्रुती ज्ञानका आपसमें खीर नीर जैसा संजोग है. इन दोनु ज्ञान विन कोइ जीव नही है. सम्यक द्रष्टीके ज्ञानको ज्ञान कहते है. और मिथ्यात्व द्रष्टीके ज्ञानको अज्ञान कहते हैं. उत्कृष्ट मती श्रुत ज्ञानवाला केवली की तरह सर्व द्रव्य क्षेत्रकाल भाव की बात जाण सकते है. इस लिये श्रुत केवली कहे है.

२ अवधी ज्ञान के ८ भेद. १ भेद, दो तरह के भव (जन्म) से नारकी देवता और तीर्थंकरको होवे. क्षयोपसम. (करणी करने) से मनुष्य तिर्यंचको होवे.

की अवश्य खबर पडती हैं. ऐसे ही नीगोदीये जीवके भी प्रदेश खुल्ले हैं तो दूसरे की क्या कहना ?

† द्रष्टी वाद अंग उपांगका स्वरुप चौथे प्रकरणमें देखो.

२ विषय–सातमी नर्कवाले जघन्य आधाकोस उत्कृष्ट एककोस. छटीवाले जघन्य एककोश उत्कृष्ट देढ (१॥) कोश, पंचमीवाले जघन्य देढ (१॥) कोस उत्कृष्ट दो कोस, चोथीवाले जघन्य दो कोस उत्कृष्ट २॥ कोश, तीसरीवाले जघन्य २॥ कोश उत्कृष्ट ३ कोश, दूसरीवाले जघन्य ३ कोश उत्कृष्ट ३॥ कोस, पहलीवाले जघन्य ३॥ कोस उत्कृष्ट ४ कोस, अवधी ज्ञानसे देखे. असुकुमारदेव जघन्य २५ योजन उत्कृष्ट असंख्याते द्वीपसमुद्र. बाकी के नवनीकाय देव ओर वाण व्यंतरदेव जघन्य २५ योजन उत्कृष्ट संख्यातें द्विपसमुद्र. ज्योतिषी देव जघन्य उत्कृष्ट संख्याते द्विपसमुद्र. उपरके सर्व देव ऊंचा अपने २ देवलोककी ध्वजा तक और तिरछा §असंख्याता द्विप समुद्र देखे. नीचे १–२ देवलोकवाले पहलीनर्क, ३–४ वाले दूसरी नर्क. ५–६ वाले तीसरी नर्क. ७–८ वाले चोथी नर्क. ९–१०–११–१२ वाला पांचमी नर्क. नवग्रीवेक वाला ‡छटी नर्क. चार अनुत्तर

§ पहले दूसरे देवलोकमें पलके आयुष्यवाले देव हैं वो तीछा संख्याते द्विप समुद्र देखे.

‡ कित्नेक पहलीसे छठी ग्रीवेकके देवता छटी-

विमानवासी देव सातमी नर्क. सर्वार्थसिद्ध विमानवासी संपूर्ण लोकमें कुछ कमी. संज्ञी तिर्यंच पचेंद्रि जघन्य अंगुल के असंख्यातमे भाग उत्कृष्ट असंख्यात द्वीप समुद्र, सन्नी मनुष्य जघन्य अंगुल के असंख्यातमे भाग. उत्कृष्ट संपूर्ण लोक और लोक जैसे अलोकमें असंख्याते खंड देखे. § ३ संठाण—अवधी

नर्क और उपरकी ३ ग्रीवेकके देव ७ मी नर्क देखे यों कहते हैं.

§ जो अवधी ज्ञानी अंगुलके असंख्यातमे भाग क्षेत्र देखेगा सो कालसे आवलिकाके असंख्यातमे भाग की वात देखेगा. जो अंगुलके संख्यातमे भाग क्षेत्र देखे सो. आवलिकाके संख्यातमे भाग की वात जाणे. जो एक अंगुल क्षेत्र देखे सो एक आवलीकामें कमीकी वात देखे. जो प्रत्येक (९) अंगुलकी बात जाणे, सो पूर्ण आवलिकाकी बात जाणे. जो एक हाथ क्षेत्र देखे सो अंतर मुहुर्तकी बात जाणे. जो १ धनुष्य देखे सो प्रत्येक (९) मुहुर्तकी वात जाणे. जो कोस की बात देखे सो एक दिनकी वात देखे. जो १ योजनकी बात देखे सो प्रत्येक (९) दिनकी बात देखे. जो २५ योजनकी बात देखे सो १ पक्ष कमी

ज्ञानसे. नर्कके जीव त्रीपाइ के आकार देखे. भवन-पती पाला (टोपले) के आकार. व्यंतर पडहा (ढफ) के आकार. ज्योतिषी झालर (घंटा) के आकार. बारे देवलोकके देव मृदंगके आकार. ग्रैवेकके देव फूल चंगेरी के आकार. अनुत्तर वीमान के देवकुमारी के कंचुवे (कांचली) के आकार देखे. मनुष्य जालीके आकारसे अनेक प्रकारसे देखे. ४ बाह्याभ्यंतर. नर्क के और देवताके जीवको अभ्यंतर (अंतरिक) ज्ञान. तिर्यंक बाह्य (प्रगटी) ज्ञान.

की बात देखे. जो पूर्ण भर्त क्षेत्र देखे सो पूर्ण पक्षकी बात जाणे. जो जंबूद्वीप देखे सो १ महीने की बात जाणे. जो आढाइ द्वीप देखे सो १ वर्ष की बात जाणे. जो १५ मा रुचक द्विप देखे सो प्रत्येक ९ वर्ष की बात जाणे. जो संख्याता द्विप समुद्र की बात देखे सो संख्यात कालकी बात जाणे. जो असंख्यात द्विप समुद्रकी बात जाणे सो कालसे असंख्यात कालकी बात जाणे. यों ऊंचा नीचा त्रीछा यों संपूर्ण लोक और पर्म अवधी उपजे तो लोक जैसे असंख्याते खंड अलोकमें देखे. पर्म अवधी उपजे पीछे अंतर मुहुर्तमें केवल ज्ञान पेदा हो जावे.

और मनुष्य बाह्य अभ्यंतर दोनू देखे. ५ अणुगामी आणाणु गामीः अणुगामी उसे कहते है एक वस्तू-से दूसरी तीसरी यों सर्व अनुक्रमे और सर्व ठीका-णे साथ रहे, देख सके. अणाणुगामी, जिहां उपज्या वांही देखे. दूसरे ठीकाणे न देख सके. ६ देशसे सर्व से. नारकी देवता तिर्यंचको देशसे (थोडा) ज्ञान होय. और मनूष्यको सर्व संपूर्ण अवधी ज्ञान होए. ७ हायमान व्रधमान अवुठीए—हायमान उपजे पीछे कमी होता जाय. व्रधमान वृध्दि (ज्यादा) होता जाय. अवुस्थित उपना उत्ना ही बना रहे. नारकी देवको अवस्थित. और मनुष्य तिर्यंचको तीन ही तराह होवे. ८ पडवाइ अपडवाइ आकर चला जाय सो पडवाइ ज्ञान और आकरके नही जाय सो अ-पडवाइ ज्ञान. नर्क देवको अपडवाइ और मनुष्य तिर्यंचको पडवाइ अवधी ज्ञान होता हैं.

४ मनःपर्यव ज्ञान के दो भेद १ ऋजूमती, २ वीपूलमती. मनःपर्यव ज्ञानी द्रव्यसे रुपी पदार्थ देखे. क्षेत्रसे नीचे १ हजार योजन. ऊंचा नवसे योजन. त्रीछो अढाइद्वीप. (ऋजुमतीवाला अढाइ अंगुल कमी देखे. तथा खुल्ला खुल्ला नही देखे) कालसे,

पलके असंख्यातमे भाग गये कालकी और आवते कालकी बात देखे. भावसे सर्व सन्नीके मनकी बात जाणे देखे. ये मनःपर्यव ज्ञान मनुष्य–सन्नी–कर्मभूमी–संख्याते वर्ष के आयुष्यवाले–पर्यासा–समद्रष्टी–संजती–अप्रमादी–लब्धीवंत–इत्ने गुण युक्त होवे उन मनुष्यको उपजता हैं. ये देशसे नो इंद्री प्रत्यक्ष के भेद हुये.

५ केवलज्ञान. सर्व द्रव्य क्षेत्रकाल भावको जाणे. अपडवाइ संपूर्ण होता है. यें उपर के गुण युत्त मनुष्य, अवेदी, अकषाइ, तेरमे गुणस्थानवर्तीको होता हैं. ये आये पीछे निश्चय मोक्ष जावे. ये पहला प्रमाण हुवा.

२ अनुमान प्रमाण–इसके ३ भेद १ पुव्वं. २ सेसव्वं. ३ दिठीश्याम. (१) पुव्वं उसे कहते है, यथा द्रष्टांते किसी माताका पुत्र बाल अवस्थामें परदेश गया सो युवान होके पीछा घर आया तब माता अपने पुत्रको कैसे पेछाणे के उस पुत्रके पुर्व अनुमान प्रमाण करके, जैसे वर्ण तिल मस संठाण इत्यादिसे पेछाणे सो पूर्व अनुमान प्रमाण [२] सेसव्वंके ५ भेद [१] 'कज्जेणं' मोरको कोकाटसे, हात्थीको गुल गुलाटसे, घोडेको हंकारसे, रथको झणणाटसे, इत्यादी पेछाणको

कजेणं कहना. [२] कारणेणं. कपडेका कारण तंतू परंतु तंतूका कारण कपडा नही, कडा (गंजी) का कारण कडब पण कडब (घांस) का कारण कडा (गंजी) नही. रोटीका कारण आटा परंतु आटेका कारण रोटी नही. घडेका कारण मट्टी परंतु मट्टीका कारण घडा नही. ऐसे ही मुक्तीका कारण ज्ञान दर्शन चारित्र. पण ज्ञान दर्शन चारित्रका कारण मुक्ती नही. ये कारण. (३) गुणेणं–निमक (लूण) में रसका गुण, फुलमें वासका गुण, सोनेमें कसोटीका गुण, कपडेमें स्पर्श का गुण, इत्यादी गुणेणं. [४] अवेवेणं व्यवहारमें शृंग करके भेंसको, पांख करके मोरको, किलगी करके मुरगे (कुकडे) को, दंत सूलसे सूरको. खुर करके घोडेको, नख करके व्याघ्रको, केसर करके केसरी सिंहको, दांत करके सूंड करके हाथीको, पुंछ करके चमरी गायको, दोपद करके मनुष्यको, चौपद करके पसुको, बहोत पग करके गजइको, कंकण [चूडी] करके कुवारीकाको, कंचुकी करके पराणित स्त्रीको, शस्त्र करके सुभटको, काव्यालंकार करके पंडितको, एक कणसे सब सीजे (पके) अनाजको, इत्यादी व्यवहारके भेद.

[५] आसरेणं—धुवेके आसरेसे अग्नी, बादलके आसरेसे मेघ, बुगलेके आसरेसे सरोवर, उत्तम आचार करके सूसीलको पेछाणा जाता हैं.

२ दिठी श्याम विथं. के दो भेद. १ सामान्य, और २ विशेष. सामान्य जैसे एक रुपैया देखके उस जैसे बहुत रुपैये जाणे. एक मारवाडका धोरी बेलको देख बहोत धोरी जाणे. किसी देशका एक मनुष्य देख उस देशके बहुत मनुष्य वैसे जाणे. ऐसे हीं एक सम द्रष्टी देख बहुत समजे. (२) विशेष जैसे कोइ विचक्षण मुनीराज विहार करते रस्ते बहोत घांस ऊगा देखे, नीवाण [सरोवर] पाणीसे भरे देखे, बागबगीचे हरी भरे देखे, इस अनुमानसे समजे की गये कालमें ह्यां वृष्टी बहोत हुइ हैं. फिर आगे ग्राममें गये तो गाम तो छोटा, श्रावक के घर थोडे, घरमें संपदा थोडी परंतु श्रावक बडे भक्तीवंत उलट प्रणामसे दान देनेवाले देखे. तब समजे के वर्तमान कालमें इन्का कुछ अच्छा होता दिखता हैं. फिर आगे चले, देखते है तो पहाड पर्वत मनोहर बहोत अगडबगड (खराब) हवा नही चले, बहोत तारे नही टुटे, गाममें तथा बाहिर जगा रम-

णिक लगे, तब समजे के आवते कालमें ह्यां कुछ शुभ [अच्छा] होता दिखता है. ये शुभ हाल जाणनेका कहा. इत्तराहसे ही कोइ मुनीराज विहार करते रस्तेमें घांस रहित भूमी देखी, वगीचे सुखे देखे, कुवादिक निवाण खाली देखे, जब समजे की गये कालमें ह्यां वृष्टी थोडी हुइ थी, फिर ग्राममें गये तो ग्राम मोटा बडा, श्रावकके घर बहोत, घरमें संपत्ती बहुत, परंतु श्रावक विनय रहित–अभीमानी, कंज्जूस, दान देणेके भाव नही, तब समजे की वर्तमान कालमें ह्यां कुछ अशुभ होता दिखता हैं. आगे चले. पहाड पर्वत अमनोज्ञ लगे. खराब हवा बहोत चले. ग्रामके बाहिर वा भीतर अमनोज्ञ लगे. धरती बहुत धूजे. तारे बहुत टुटे. बीजली बहुत चमके. तब ऐसा समजे की आवते कालमें ह्यां कुछ अशुभ होना दिखता है. यों तीन ही कालके ज्ञाता होय. इति–

३ आगम प्रमाण के तीन भेद. १ सुत्तागमे. २ अत्थागमे. ३ तदुभयागमे. [१] सुत्तागमे–द्वादशांग जिनेश्वरकीवाणी. तथा दश पूर्वतकके पढे हुये मुनीश्वरके कीये हुये ग्रंथ हैं सो सुत्तागम. (२) पूर्वोक्त सुत्र के अनुसार सबको समज पडे ऐसी

भाषामें जो तदनुसार आचार्यादिकने अर्थ बनाये सो अर्थागमे. (३) सुत्र और अर्थ दोनुसे मिलता जो सम्मास है सो तदुभया गमे. इत्यादि आगम प्रमाण जाणना.

४ " उपमा प्रमाण " की चौभंगी. छती वस्तूको छती उपमा, छती वस्तूको अछती उपमा, अछती वस्तूको छती उपमा, और अछती वस्तूको अछती उपमा.

(१) छतीको छती उपमा सो जैसे आवते कालमें प्रथम पद्मनाभ नामे तिर्थंकर वर्तमानकाल के चौवीसमे तीर्थंकर श्री महावीरस्वामी जैसे होयगे. (२) छतीको अछती उपमा सो जैसे नर्क और देवताको आयुष्य पल्योपमका तथा सागरोपमका सो सच्चा परंतू जो चार कोशके पालेके या कूवे के द्रष्टांत से जो प्रमाण बताया सो अछती उपमा. क्यों कि ये कूवा किसीने भरा नही, भरे नही और भरेगा नही. (३) अछतीको छती उपमा सो जैसे द्वारकाजी कैसी ? के देवलोक जैसी; ज़ुवार मोती जैसी; आगीया सूर्य जैसा; इत्यादि. (४) अछतीको अछती उपमा सो जैसे घोडे के शृंग कैसे ? के गधे जैसे.

और गधेको सींग कैसे ? के घोडे जैसे. ए अछती के अछती उपमा.

नवतत्व पे चार प्रमाण.

१ 'जीवतत्व' (१) प्रत्यक्ष प्रमाणसे चेतना लक्षण युक्त. (२) अनुमान प्रमाणसे बाल युवान वृद्ध. तथा शास्त्रमें त्रसके लक्षण संकोचीयं पसारीयं इत्यादि लक्षण चले सो. और स्थावर के प्रमाण के लिये अंकूरेसे लगा मनुष्यकी तरह वृद्धि पावे सो. (३) उपमा प्रमाण से जीव अरुपी आकाशवत् पकडाय नही जीव अनादि अनंत धर्मास्तीयावत्. तथा "तिलेषु यथातैलं. पयेषु यथाघृतं. वन्हीषु यथा-तेजं. तनेषु यथा जीवं" (४) आगम प्रमाण से "यथा कम्म कत्ता अयंजीवो, कम्म छित्ता जीव वुणायवो अरुवीणिच अणाइ एयं जीवस लखणं अर्थात शुभा शुभ कर्मका कर्त्ता और उन्का भोक्ता (भोगवणे वाला) ये जीव हैं और ज्ञान संयम तपसे इन क-र्मोंको छेदनेवाला भी ये ही जीव है. जीव अरुपी किसीके द्रष्टीमें नही आवे ऐसा. नित्य, इसका क-दापि विनास नही होता है. अर्थात् जीवका अजीव हुआ नही और होवेगा भी नहीं. अणाइयो अनादि

हैं अर्थात् इसको किसीने बनाया नही. इसलिये इस्की आदि नही अनादि सिद्ध हैं. तथा एक सरीरमें एक संख्याते असंख्याते अनंते जीव है इत्यादि अनेक द्रष्टांतसे सास्त्रमें जीव सिद्ध कीया है.

२ 'अजीव तत्व' (१) प्रत्यक्ष प्रमाणसे अजीवका जड लक्षण, जीवका प्रतीपक्ष वर्णादी पर्याय देखाय मिलनेका वीखरनेका स्वभाव सो.

(२) अनुमान प्रमाणसे नवा जूना पणा पर्यायका पलटण स्वभाव. ते जीवको गती स्थिर विकाशादि साह्य करनेवाला. जैसे जीवको सकंप देखके अनुमानसे जाणे की ये धर्मास्तीका स्वभाव है, ऐसे ही अकंपसे अधर्मास्ती, पुद्गल मिलनेसे आकास्ती. जैसे संपूर्ण कटोरा दूधसे भरा हैं उस्में एक बिंदू भी न समावे उस्में कित्नी ही सक्कर समाजाय. ए आकास्तीका लक्षण, इत्यादि अनुमानसे अजीवको पेछाणे. (३) उपमा प्रमाणसे जैसे इंद्र धनुष्य, संध्याराग, इनका पलटा होवे तैसे पुद्गलोंका स्वभाव पलटे. पीपलका पान, कुंजर कान, संध्याका भान, तैसे पुद्गलोंका स्वभाव चंचल जान. इत्यादि अनेक उपमासे अजीव पेछाणे. (४) आगम प्रमा-

णसे जैसे अजीवके खंध देश प्रदेश चार द्रव्यके व-
र्णवे. और पांचमें पुद्गल द्रव्यमें परमाणु आदि खं-
धका प्रवर्तन द्रव्य गुण पर्यायका कथन. और भी
एक परमाणुकी अपेक्षासे एक वर्ण १ गंध १ रस
दो स्पर्श. अनेक परमाणुओंकी रासीमें पांच वर्ण
२ गंध ५ रस ४ स्पर्श ये १६ पर्यायसे लगाके जाव
अनंत गुण पर्यायका वाख्या करनी. पुद्गलके वर्णा-
दिककी पर्याय पुद्गलसे भिन्न नही हैं, जैसे मिश्री
मीठी परंतु मीठास कुछ मिश्रीसे अलग नही हैं.
इसी तराह आगम प्रमाणसे पर्याय पुद्गल एक ही
जाणना, फक्त बोलनेमें अलग २ बोले जाते हैं.
इसका विस्तार श्री भगवतीजी अंगके बीसमें शतकमें
देखीये. और भी द्रव्य उपर आगम प्रमाण इस मु-
जब लगता है. धर्मास्ती कायके खन्ध देश प्रदेशके
द्रव्य गुण पर्याय जैसे धर्मास्ती द्रव्यसे एक द्रव्य के
एक प्रदेशमें अनंत पर्याय हैं, क्यों कि, अनंते
जीव और पुद्गलों को गतीका सहाय करता हैं.
जिस्में भी षड गुण हाणी वृद्धी बनी हुइये तथा उ-
त्पात व्यय और ध्रुव पर्याय करके संयुक्त हैं. ये ही
धर्मास्तीका आगम जाणना. ऐसे ही अधर्मास्तीका

स्थित सहाय और सर्व व्याख्या धर्म द्रव्य जैसी. ऐसे ही आकाश सदा अवकाश देणेवाला, अरुपी अचेतन अनंत अप्रदेशी वस्तूको नवीन जीर्ण करनेका सहाय. इससे एक समयमें पुद्गल परावर्त हो जाता हैं, क्योंकि अनंत जीव एक समयमें पुद्गल परावर्त करते हैं. इत्यादि अनेक बोल अजीव द्रव्यपे आगम प्रमाणसे लागू होते हैं.

२ ' पुन्यतत्व ' (१) प्रत्यक्ष प्रमाणसे मनोज्ञ (अच्छे) वर्ण गंध रस स्पर्श मन बचन काया पुनवंत के साता वेदनी द्रष्टीमें आवे सो (२) अनुमान प्रमाणसे ऋद्धी संपदा बल रुप जाती ऐश्वर्य की उत्तमता देख अनुमान से जाणे की ये पुन्यवंत है. जैसे सूबहु कुमरकी संपद देख गौतमस्वामी प्रमुख साधूजीने जाणा की ये पुन्यवंत जीव है. (३) उपमा प्रमाणसे, पुन्यवंतको पुन्यवंतकी उपमा देवे. जैसे " देवो दुगंदगो जहा " पुन्यवंत जीव दुगंधक (इंद्र के गुरुस्थानीय) देव के जैसा सुख भोगवता हैं. तथा चंदो इव ताराणं, भरहो इव मणुयाणं " जैसे तारा के समुहमें चंद्रमा सोभता हैं, तैसे मनुष्यों के वृंदमें भरत नामे महाराजा सोभते

हैं. इत्यादि उपमा प्रमाण जाणना. (४) आगम प्रमाण से शुभ प्रकृती और शुभ योगसे पुन्यका बंध होता है. शास्त्रमें कहा हैं " सुचिन्न कम्मा सुचिन्न फला भवंती " अच्छे कर्म के अच्छे फल होते हैं. देवायुः मनुष्यायुः शुभानुभाग इत्यादि पुन्य फल जाणना. जित्नी सकर डाले उत्ना मीठा होयगा. ऐसे ही पुन्य के रसमें षड गुण हाणी वृद्धी होती है. पुन्य की अनंत पर्याय और अनंत वर्गणा. जैसे पुन्य के उदय से देवताका आयुष्य बांधा. परंतू कालके अपेक्षा से चउठाण* वलीया है. इसलिये जैसे २ शुभ योग की वृद्धी तैसे २ पुन्य की वृद्धी समजना. और भी पुन्याणुवंधी पुन्य सो तिर्थंकर महाराजवत्. पुन्याणुवंधी पाप सो हरकेसी ऋषीवत्. पापानुवंधी पुन्य सो गोसालावत् तथा अनार्य राजावत्. और पापानुवंधी पाप सो नाग श्री वत्. इत्यादि आगम प्रमाण से पुन्य के अनेक रुप होते हैं.

४ पापतत्व. पुन्य से उलटा पाप समजना. जैसे (१) पांच वर्ण तीन जोग अमनोज्ञ मिले सो प-

* एकसेर भर पाणीको अग्नी पे उकालने से पाव पाणी रहै. ऐसे कर्म के रसमें चउठाण वली जाणो.

त्यक्ष पाप. (२) कीसीको दुःखी देख के कहे की इसके पूर्व पापका उदय हुवा हैं सो पापका अनुमान. (३) ये बिचारा नर्क जैसे दुःख भोगवता है ये पापकी उपमा. (४) और पापकी प्रकृती तिथी अनुभाग प्रदेश इनका असुभ बंध सो आगम प्रमाण.

५ आश्रवतत्व. (१) योग के वेपारका प्रत्यक्षपणा सो प्रत्यक्ष प्रमाण (२) अवृतीपणा सो अनुमान प्रमाण. (३) तालाव के नालेका, सूइके नाकेका, घर के दरवज्जेका, इत्यादि द्रष्टांतों से आश्रवका स्वरुप बतावे सो उपमा प्रमाण. (४) और अप्रत्याख्यानी क्रोध मान माया लोभ इन कषाय के प्रमाणु मिल के दलरुप स्कन्ध आत्मा के प्रदेशको वर्गणा चोंटे. सो आगम प्रमाण जाणो.

६ संबर तत्व. (१) प्रत्यक्ष प्रमाण. देश (थोडे) से जोगका निरुंधन करे सो देश संबर और सर्व से निरुंधन करे सो सर्व संबर. (२) अनुमान प्रमाण से सावद्य जोग के त्यागीकों संबर कहना. (३) उपमा प्रमाण—जैसे घरका दरवज्जा लगाने से मनुष्यका आगम बंध पडता है और नावाका छिद्र रोकनेसे पाणीका आना बंध होता है. तैसे योगको

निरुंध त्याग प्रत्याख्यान करने से संवर होता है (४) आगम प्रमाण से, आत्माका स्थिरपणा अकंपपणा जोगका निरुधन—देश से और सर्व से. आत्मा का निश्चलपणा. आत्मा निजगुण से संयुक्त होवे सो आगम प्रमाण जाणना.

७ निर्जरातत्व—(१) प्रत्यक्ष प्रमाण से बारे प्रकारका तप कर्मका उच्छेदन करता है सो. (२) अनुमान प्रमाणसे ज्ञान दर्शन चारित्र की तथा क्षयोपसम सम्यक्त्व की वृद्धी होती देखें और देवायुः प्रमुख की प्राप्ती देख के निर्जराका अनुमान होवे. (३) उपमा प्रमाण. जैसे खार से धोने से तथा स्वागी टंकणखार प्रमुख के संयोगसे. सूर्यको ढके हुये बादल वायू के संयोग से दूर होवे तैसे ही चेतन पे कर्मरुप मेल छवाया हुवा तपस्या से दूर होवे. तब निजगुण प्रगटे. ये निर्जरा की उपमा. (४) आगम प्रमाण से. आसा—वांछा रहित तप. आत्माका उज्वलपणा सम्यक्त्व युक्त सकाम निर्जरा होय सो आगम प्रमाण.

८ बंधतत्व [१] प्रत्यक्ष प्रमाणसे जीव और पुद्गल खीर नीरके जैसे लोली भूत हो रहे हैं. जिससे सरीरका संयोग प्रयोगसे पुद्गल पणे प्रगमा

हुवा दिखता हैं. (२) अनुमान प्रमाणसे, तिर्थंकर भगवानका केवली भगवानका गणधरजीका छद्मस्थ मुनीका उपदेश श्रवण करे तो भी संसय व्यामोह अज्ञान भ्रम इत्यादि जावे नही इस अनुमानसे जाणा जायके इसका कर्म प्रकृतियोंका कठिण बंध हैं, जैसे चित ऋषीजीने ब्रह्मदत चक्रवर्तीको कहा है की "नियाणंम सुहं कडं" पूर्वके कीये हुये नियाणेके जोगसे हे राजा ! तेरेको सुखदाता उपदेश केसे लगे ? तथा महा आरंभादिक १६ कारणसे चार गतीका आयुष्यका बंध होता है सो भी अनुमानसे जाणा जावे और बावीस* [२२] लक्षणसे पेछाणे

---

* जिस गति आया उसके लक्षण—१ दीर्घकषाय. २ सदा अभिलापी, ३ मूर्खसे प्रीती. ४ महाकोपवंत. ५ सदा रोगी. ६ सरीरमें खाज (खुजली) बहुत चले. इन ६ लक्षणसें मालम पडे की ए नर्कसे आया है १ महा लोभी. २ महा लालची. (दूसरेके धनकी अभीलाषावंत) ३ महा कपटी. ४ मूर्ख. ५ भुख बहुत लगे. ६ महा आलसी. ए ६ लक्षणसे तिर्यंचगातिसे आया हुवा विदित होता है ॥ १ थोडा लोभी. २ विनयवंत. ३ दयावंत. ४ पापसें

की ये अमुक गतिसे आया हैं ये उपमा प्रमाण. उपमा प्रमाणसे प्रकृती बंध सो स्वभाव रस जैसा. स्थिती बंध सो काल मर्यादाके न्याय. अनुभाग बंध सो सुख दुःख विपाक पणे की पट गुण हाणी वृद्धी जैसे पाणीमें थोडी सक्करसे थोडा मीठास और बहुत सक्करसे बहुत मीठास. ऐसे शुभ कर्म, और पाणीमें थोडा निमक (लूण) डाले तो थोडा खारा और बहुत लूण डाले तो बहुत खारा होवे. ऐसे अशुभ कर्म यों तिव्र मंद रसपणे प्रगमे. इत्यादि अनेक उपमा प्रमाणसे अनुभाग बंध जाणना. और (४) प्रदेश बंध एकेक जीवके प्रदेश उपर कर्मों की वर्गणा रही हैं. जैसे अबरख [भोडल] के पडल (पुड) दिखनेमें एक दिखता है और निकालनेसे बहुत निकलते है. वैसे ही कर्म वर्गणा जीवके प्रदेशके साथ बंधे है किसीको थोडा और किसीको

डरे. ५ अभीमान रहित. ये ५ लक्षणसे जाने की मनुष्यगतीसे आया हुवा दिखता है ॥ १ दातार. २ मीठा बोला. ३ मातपिताका और गुरुका भक्त. ४ धर्म के अनुरागी. ५ बुद्धिवंत. इन पांच लक्षणसे जाना जावे की ये देवगतीसे आया दिखता है.

बहुत. (४) आगम प्रमाणसे जीवके शुभा शुभ योग ध्यान लेश्या § प्रणाम इत्यादी होवे उसे आ-

§ छेलेश्याके लच्चण—१ पांच आश्रव आप सेवे और दुसरेके पास सेवावे. तीन योग और पांच इंद्री छुटी रक्खे. तिव्र प्रणामसे छे कायका आरंभ करे. हिंसा करतां अचकाय नहीं. चुद्र प्रणामी, दोनु लोकके दुःखसे डरे नहीं. उसे कृष्ण लेशी कहेना. इर्षावंत दुसरेके गुण सहन न होवे. तपस्या करे नही करने दे नही. ज्ञानका उद्यम करे नही करने देवे नही. निवड करे नही. लज्जा रहित. रस ग्रधी; महा आलसी, आपका सुख चावे सो 'नीललेश्यावंत.' ३ बांका बोले वांका चले. आपके अवगुण ढके. दुसरेके प्रगट करे. कठोर बचन बोले. चोरी करे. दूसरेकी संपदा देख झुरे. सो "कापूत लेसी" ४ न्यायवंत, स्थिर स्वभावी, सरल, कुतुहल राहित, विनीत, ज्ञानी दमीत इंद्री. द्रढधर्मी, प्रिय धर्मी. पाप करतां डरे. सो 'तेजूलेशी.' ५ चार कषाय पतला करी सदा उपशांतचित, त्रीजोग वस काये, थोडा बोले. दमित इंद्री, सो 'पद्मलेशी'. ६ आर्तध्यान रुद्रध्यान बर्जे, धर्मध्यान सुकल ध्यान ध्यावे. रागद्वेषसे विरम्या. दमितइंद्री, समिति गुप्तिवंत. सराग संयमी, तथा वीतरागी, सो 'सुक्लेशी.' ये ६ लेशाके लच्चण जाणना.

गम प्रमाण केणा.

९ 'मोक्ष तत्व' [१] प्रतक्ष प्रमणसे देशसे उज्व होके सम्यक ज्ञान सम्यक दर्शन सम्यक चारित्र इत्यादि गुण प्रगट और शुभ प्रक्रातियोंके उदयसे अशुभ प्रक्रातियोंका क्षय होनेसे शुभ गुण प्रगटे, जिससे तिर्थंकरादिक उत्तम पद की प्राप्ती होवे. सो प्रत्यक्ष मोक्ष तथा चार घन घातिक कर्मके नाश होनेसे, केवल ज्ञान प्रगटे सो प्रत्यक्ष मोक्ष कहना.'

[२] अनुमान प्रमाणसे दर्शन मोहनी चारित्र मोहनीके क्षय होनेसे मोक्ष.

८ उपमा प्रमाण से, दग्ध (जला) हुवा बीज के अंकूर नही प्रगटे तैसे मोक्ष के जीवको कर्म अंकूर नहीं प्रगटे. तथा जैसे घृत सींचणे से अग्नी तेज होवे तैसे वितराग—राग द्वेष के क्षय करने से हायमान प्रणाम न होवे इत्यादि अनेक उपमा जाणना. ४ 'आगम प्रमाण' मोक्ष के जीवोंको अनंत चतुष्टय (अनंत ज्ञान—दर्शन—चारित्र—तप) ज्यों २ सुत्रोक्त प्रकृती क्षपावे त्यों त्यों जीवके निज गुणरुप लब्धी प्रगटे. जैसे पहली मिथ्यात्व गुणस्थानमें प्रवर्तता जीव वितरागकी वाणीको अधिक कमी और

विप्रीत श्रधे परुपे फरसे, ये जीव चार गत २४ दंडक चौरासी लक्ष जीवा योनीमें अनंत पुद्गल परावर्तन करे. (२) सहसादान गुणस्थानमें आवे तब जैसे किसीने खीरका भोजन कीया और उसे वानती (वमन) हो गइ पीछे गुलचट्टा स्वाद रहै. तैसे उसकी आत्मामें स्वल्प धर्म रेस आवे. तथा वृक्ष से फल टूट पृथ्वी पे पडते बीचमें जित्ना काल रहे उत्ना धर्म फरसे, ये जीव अनंत संसारका अंत कर एक पुद्गल परावर्त देश उणा (कुछ कमी) भोगवणा बाकी रक्खे. कृष्णपक्षीका सुक्लपक्षी होवे. (३) मिश्र गुणस्थानमें प्रवर्तता जीव जैसे सीखरणी (दही सक्कर भेला कर) खाने से कुछ खट्टा कुछ मीठा स्वाद लगे तैसे खट्टे समान मिथ्यात्व और मिठे समान सम्यक्त्व यों मिश्र पणा होवे ये जीव अर्ध पुद्गल परावर्तमें संसारका अंत करे. (४) अवृती सम्यक द्रष्टी गुण स्थान वर्ती जीव अनंतानुबंधी चोक और तीन मोहनी ये, प्रकृती खपावे. सूगुरु सूदेव सुधर्म पे श्रद्धा प्रतीत आस्ता रक्खे वितरागका धर्म सच्चा श्रधे. चार तीर्थकी भक्ति करे. इस जीवको जो पहली आयुष्य बंध न पडा होय तो नर्क, तिर्यंच, भवन-

पाति, बाणव्यंतर, ज्योतषी, स्त्री; नपुशक ये सात ठीकाणे न जाय. (५) देशव्रती गुणस्थान. सात पहलेकी और प्रत्याख्यानीका चोक खपावे ये श्रावकके व्रत यथा शक्त धारण करे नवकारसी आदि छे मासी तप करे. ये जीव जघन्य तीन उत्कृष्ट पन्नरे भव कर मोक्ष जावे (६) प्रमादी गुण स्थान आया हुवा जीव, इग्यार पहले की और प्रत्याख्यानीका चोक यों १५ प्रकृति खपावे. साधु होवे परंतु द्रष्टीका भावका बचनका कषायका चपलाइ पणा रहे. कभी २ कषाय प्रजलित हो तुर्त शांत पड जाय. ये जीव जघन्य उस भव उत्कृष्ट तीन तथा १५ भवमें मोक्ष जाय. [७] अप्रमादी गुणस्थानमें आया जीव पंच प्रमाद [मद विषय कषाय निंदा विकथा] दूर करे. और १५ तो पहली कही सोल्मी संजलका क्रोध दुर करे ये जीव जघन्य उस भवमें उत्कृष्ट तीन भवमें मोक्ष जाय. [८] † नियट बादर गुणस्थान आया जीव सोल पहली कही सो और सतरमा संजलका मान खपावे. तब अपुर्व करण (पहली नही आया ऐसा) आवे. इस गुण

† बाद कषायसे निवृते. फक्त अंतसमें कषाय रही.

स्थानसे दो श्रेणी होवें. [१] उपसम श्रेणीमें मोहकी प्रकाति उपसमावे [ढांके] सो· इग्यारमे गुण स्थान तक जाके पीछा पडे. और (२) क्षपक श्रेणी प्रवर्ताते मोह प्रकती खपावे (नाश करे) सो अग्यारहवा गुणस्थान छोड ९—१०—१२—१३—में जावे. ये जघन्य उस भवमें उत्कृष्ट तीसरे भवे मोक्ष जाय. (२) अनियट वादर गुणस्थान आया जीव सतरे पहले कही, और अठारहवी संयलकी माया तथा तीन वेद यों २१ प्रकृती खपावे. तब अवेदी निष्कपटी होवे, ये जघन्य उस भवमें उत्कृष्ट तीसरे भव मोक्ष जाय. [१०] सुक्ष्म संपराय आया जीव २१ तो पहली कही ओरं हास्य, रति, अराति, भय, शोक, दुगंच्छा, ये ६ यों २७ प्रकृति खपावे. ये शांत स्वरुप अव्यामोह अविभ्रम होवे. ये जघन्य उस भवे उत्कृष्ट तीन भव कर मोक्ष जावे· [११] उपशांत मोह गुण स्थान. २७ पहले की और २८ मी संजलका लोभ यों २८ प्रकति उपसमावे. (राखमें अग्नी दाबे तैसे दाटे) सो यथाख्यात चारित्र पणे प्रवृत. पडे तो नीचे जावे और मरे तो अनुत्तर विमानमें जावे. (१२) क्षिण मोह गुणस्थान. पुर्वोक्त अठाइस प्रकृती सर्वथा प्रकारे खपावे· तब २१ गुण प्रगटे· क्षपक

श्रेणी. क्षायक भाव. क्षायिक सम्यक्त्व. क्षायिक यथाख्यात चारित्र. करण सत्य. भाव सत्य. अमायी. अकषायी. वीतरागी, भाव निग्रंथ संपूर्ण संबुड. संपूर्ण भवितात्मा. महा तपस्वी. महा सूसील, अ मोही. अविकारी. महा ज्ञानी. महा ध्यानी. वर्धमान प्रणामी. अपडीवाइ होके अंतर मुहुर्त रहके. तेरमे गुणस्थान जाय. इस गुणस्थानमें मरे नही. इस गुण स्थानके छेले समय ५ ज्ञानावरणी. ९ दर्शनावरणीय ५ अंतराय ये तीन कर्मोंका क्षय होते हैं. (१२) गुण सयोगी केवली गुणस्थान आवे तब दश बोल सहित रहे. संयोगी, ससरीर, सलेशी, शुक्कलेशी, यथाख्यात चारित्री, क्षायिक सम्यक्त्व, पंडितवीर्य, शुक्कध्यानी, केवलज्ञान-केवलदर्शन ये दश गुण होय. ये गुणस्थानवृती जघन्य अंतर मुहुर्त उत्कृष्ट क्रोड पूर्व देश उणा (९ वर्ष कमी) प्रवर्त के चउदहवे गुण स्थानक पधारें. (१४) अयोगी केवली गुणस्थान आये हुये भगवान शुक्कध्यान के चोथे पाये युक्त. समुछिन्न क्रिया, अनंतर, अप्रातिपाती (पीछे पडे नही) अनिवृती ध्याता. पहली मन फिर वचन फिर काया यों तीन ही जोगका निरुंधन कर फिर आण पाण (श्वासोश्वास) का निरुंधन कर

रुपातीत (सिद्ध) ध्याता. पहले दश बोल कहे उस्मेसे सेलेशी, सुक्कलेशी, संयोगी ये तीन बोल रहित. शेष सात बोल सहित मेरु के जैसे अडोल अचल स्थिर अवस्थाको प्राप्त होवे. वेदनी, आयुष्य, नाम, गोत्र, इन चार कर्मका क्षय कर, उदारिक, तेजस, कारमण सरीरको त्याग, समश्रेणी ऋजूगती अन्य आकाश प्रदेशका अवलंबन नहीं करते एक समयमें विग्रह गती रहित सिद्धस्थान मोक्षस्थानको प्राप्त होवे. यों अनुक्रमे गुण प्रगट होवे. यावत् मोक्षपदको प्राप्त होवे. सो आगम प्रमाण. ये सात नय, चार निक्षेपे, चार प्रमाण, इत्यादि अनेक रीती करके नवतत्व के स्वरुपका संपूर्ण जाण होय सो—सूत्र धर्म. ओर भी इस श्रुत धर्म के पेटमें द्वादशांगी वाणी प्रमुख सर्व ज्ञानका समावेश होता हैं. इसका कोइ पार न ले सके. परंतू अपनी यथा सक्त ज्ञान ग्रहण करे.

गाथा—जिणवयण अणुरत्ता, जिणवयण जे करंती भावेणं, अमला असंकिलिठा. तेहुंती परित संसार, १ ॥—श्री उतराध्ययन.

श्री जिनेश्वर के वचनमें रक्त होके निर्मल और क्लिष्ट (खराब) प्रणाम रहित जो जिनवाणीका आराधन करते हैं वो संसारका पार पाते हैं.

॥ ईति परमपूज्य श्री कहानजी ऋषिजी के संप्रदाय के
वालब्रह्मचारी मुनी श्री अमोलख ऋषीजी विरचित्
श्री "जैन तत्वप्रकाश" ग्रंथका 'सम्यक्त्व'
नामक द्वितीय प्रकरण समाप्तम्. ॥

प्रकरण ३ रा.

मिथ्यात्व.

बुझज्जाति उट्टिज्जा, वंधणं परियाणिया,
किं माह वंधणं वीरे, किंवा जाणंति उट्टइ;

श्री सुयगडांग सूत्र.

तीर्थंकर भगवान केवली या सामान्य साधू आदिकके उपदेशसे, कर्म वंधके कारण मिथ्यात्वादिकका जाण होना की श्री वीर महा पुरुषने कर्म वंधके कोण २ से कारण फुरमाये तथा उनका आगे क्या परिणाम [फल] होता हैं और कर्म बंधको कोनसी २ क्रिया कर तोड सकता है ? इस बातका जाण जरुर ही होना चाहीये. क्यों कि बंध और मुक्तके कारणको जो जाणेगा सो ही कर्म बंधसे बचेगा और पहले बांधे हुये कर्मको तोड सकेगा, शाश्वत सुख प्राप्त कर सकेगा.

सम्यक्त्वका स्वरुप तो बताया अब सम्यक्त्वका प्रतिपक्षी मिथ्यात्वका स्वरुप बताते हैं. क्यों की

मिथ्यात्वका स्वरुप जाणनेसे मिथ्यात्वसे बचनेका प्रयत्न और सम्यक्त्व अंगीकार करनेका प्रयत्न कर सकेगा. ये मिथ्यात्व पच्चीस प्रकारसे होता हैं.

१ 'अभीग्रहिक मिथ्यात्व':–कित्नेक मनुष्य ऐसे हैं की अपने ध्यानमें जचे सो सच्चा, और सर्व झूट्टा. ये सत्यासत्यका निर्णय नही करे रुढी मार्गमें मग्न रहैं. कोइ पुछे तो कहे की हमारे बापदादे करते आये सो हम करेंगे; हमारे बापदादेका धर्म हम कैसे छोडे ? परंतु वे जैसा धर्म बाबतमें बीचार करता है तैसा ही जो संसार बाबतमें द्रष्टी लगावे तो यों नही बोले. देखीये, बाप दादे जो अन्धे, बधीर, लूले, लंगडे होवे तो क्या वो भी आंख कान फोड हाथ पाव तोड अंधा बंधीर लंगडा लूला हो जावेगा क्यों? बाप दादे निर्धन होवे और उस्को द्रव्य प्राप्त हुवा होवे तो द्रव्यको फेंक धनहीन बनेगा क्या? जो बाप दादे की परंपरा नही छोडे तो उसे ये भी काम करना पडेगा. सो ये तो नही करते है और धर्म बाबतमें बाप दादेको बिचमें लाते हैं और मिथ्या हटका त्यागन नही करते है. और भी कित्नेक कहते हैं की बडे २ विद्वान धनवान लोग इस मजहबमें हैं

सो क्या वो मूर्ख हैं ? परंतु ऐसा वीचार नही करते हैं की बडे २ विद्वान धनवान लोक जाणके पागल (उल्लु) होने इज्जत गमाने मदिरा (सराव) क्यों पीते हैं ? क्या वो मूर्ख हैं ? अहो भाइ ! मोह कर्म की सत्ता (शक्ती) बडी जबर हैं. इसके योगसे ही ये चेतन पापके काममें बहुत खुश रहता हैं. पाप से अनादि से पेछाण है. पापकी बात विन सीखाइ (पढाइ) आजाती हैं. देखीये गर्भ से बाहिर पडते ही रोना—दूध पीना—और बडे हुये पीछे स्त्री के साथ क्रीडा करना कोन सिखाता हैं ? अनादिकालसे ये काम कर आया है, इस लिये बिन सीखाये ये बातों याद आजाती हैं. ऐसा जाण हटग्राही नही होना. धनवान विद्वान के सन्मुख क्या देखना ? अपनी आत्माका हित देखो.

२ ' अनाभिग्रहीक मिथ्यात्व '—कित्नेक भोले प्राणी इस जगतमें ऐसे है की अपनको पक्षपातमें पडके क्या करना हैं ? कोन किसी के महजब बुरा कहे ? न जाने कोन सच्चा और कोन झूटा. और ऊंडे बीचार से देखते हैं तो सर्व धर्म सरीखे (एकसे) हैं. कोइ भी खोटा नही है. क्यों कि सर्व महजबमें

बडे २ विद्वान महात्मा पंडित धर्मोपदेशक बैठे हैं. वो सब खोटे है क्या ? अपन बेचारे सबसे ज्यादा काहांसे आये ? इसलिये अपनको किसी झगडेमें नही पडनाः अपने तो सर्व सच्चे हैं. सर्वको भजेगे पूजेगें. सर्व गुरूको नमेगे, इस से ही अपना उद्धार होयगा. ऐसे जो बीचारवंत हैं वो बीचारे बीचमें ही डूब जायगे. न इस तीर के न उस तीर के. इन भोले जीवोंको इत्ना तो जरूर सोचना चाहीये की, जो सर्व महजब एकसे होते तो इतने भेदांतर ही क्यों पडतें. और अपना पक्ष ही क्यों ताणे ? इत्ने बीचार से ये तो सिद्ध हुवा की सब महजबमें से एक महजब सच्चा हैं. अब सच्चा महजब कोनसा उसको जाणने की जरुर पडी. सो इसे जरा आत्मानुभवसे— दीर्घ द्रष्टी से, निरापक्ष होके, न्याय द्रष्टि से बीचारीये कि, जिसके आधार से सर्व मत चल रहे हैं, जो बातको सर्व महजबवालेने मुख्य गिण रक्खी है, वो वस्तू सर्वांशः करके जांहां रही होवे वोही मत सच्चा है. सो ऐसा सर्व मान्य पदार्थ कोनसा हैं ? उस्का क्या नाम हैं ? उस्का नाम 'दया'* है. (अहिं-

* अद्रोहः सर्वभूतेषु, कर्मणा मनसा गिरा; अनुग्रहश्च दानंच, सतां धर्मः सनातनः

सा परमोधर्मः) जहां भगवती दया सर्वांशः बीराजती होवे सो सच्चा महजब और सर्व कपोल कल्पित जाणना.

शंका-एक दयाका ही नाम लिया तो फिर सत्य सील संतोष क्षमा वगैरा गुण कहां गये ?

समाधान-अहो बन्धू ! सर्व गुणका इस दयामें ही समावेस होता हैं. देखीये ये दया दो प्रकारकी होती हैं:-(१) स्व दया सो अपनी आत्मा की दया पालनी. आत्मा की दया पालनी इसका अर्थ ये नही करताहुं की खूब खानपान भोग विलास कर आत्माको पुद्गलानंदमें गरक कर सुखी होना; क्यों कि ये कुछ सुख नही हैं. ये तो केवल माननेरुप ही सुख है, परंतू इस किंचित् सुखका परिणाम महादुःखद हो जायगा. शास्त्रमें कहा है "क्षिणमित सुखा बहुकाल दुःखा, खाणी अन्नत्थाण हु काम भोगा" अर्थात् काम (शब्दरुप) भोग (गंध-रस-स्पर्श) ये अपथ्य आहार की तरह क्षिण मात्र सुख दे के अनंतकालके दुःख देनेवाले हो जाते हैं, इसलिये ये काम भोग महा अनर्थ की खाणी हैं, जो किंचित् सुख दे के बहुत काल दुःख देवे तथा जिस्के

अंतसमें दुःखका निवास होवे उसे सुख कबी भी नही कहा जायगा. वो दुःख ही समजना. इसलिये आत्मा की दया उसे कही जाती हैं की अपनी आत्मा के साथ ज्ञान—मन से बीचार करना की रे आत्मन्! जो तूं हिंसा, झूट, चोरी, अब्रह्म, इत्यादि अठारे पाप सेवन करेगा तो, इस भवमें शारीरिक—मानसिक पीडा (दुःख) से पीडायगा, और आगे नर्क तिर्यंचादिककी अनंत वेदना पायगा. ऐसा समज इन कामों से बचेगा तो तूं थोडे कालमें परम सुखी होवेगा. इन बीचारों से अकार्य से आत्माको बचानी सो अपनी आत्मा की दया हुइ. और (२) पर दया सो पृथव्यादिक छेइ कायका रक्षण करना. देखीये भाइ! एक ही दयामें सर्व सद्गुणोंका समावेस हो गया. ऐसा जो दया मय सत्य धर्म है सो ही सच्चा धर्म है, इसें ग्रहण करो.

प्रश्नः—ऐसी सर्वथा प्रकारे दया इस जगतमें कोन पाल सकता हैं? हमारेको तो ऐसी दया पालनेवाला द्रष्टी [निजर] नही आता है.

समाधानः—अहो भाइ! ऐसा मत जाणो की ऐसा कोइ नही हैं. कहा हैं "बहु रत्ना वसुंधरा."

अबी भी इस सृष्टिमें बहुत रत्न हाजर हैं. बडे २ महात्मा मुनी पंचमहावृत धारी निज आत्मा की और पर आत्मा की सर्वथा दया पालने समर्थ बीराजते हैं. और वैसी ही दया पालते है.

प्रश्नः—साधूजी भी आहार विहारादि नाना कर्त्तव्य करते हैं उसमें हिंसा नही होती हैं क्या?

समाधानः—आहार विहारादि कर्त्तव्यमें जो अजाणमें किंचित् हिंसा होती हैं सो हिंसा नहीं गिणी जाती हैं. परमेश्वरने फुरमाया है कीः—

जयं चरे जयं चिठे, जयं मासे जयं सये ।
जयं भूजंतो भाषंतो, पाव कम्मं न बंदइ ॥

यत्ना इर्या समिति युक्त चलनेसे, यत्नासे खडे रहनेसे, यत्नासे बेठनेसे, यत्नासे सयन करनेसे, यत्नासे भोजन करनेसे, और यत्नासे (भाषा समीती युक्त—ढके मुखसे) बोलनेसे पाप कर्मका बंध नही होता हैं. इस हुकम प्रमाणे मुनी सर्व काम यत्ना पूर्वक करते हैं सो हिंसा नही लगती हैं. और कभी छद्मस्थ पणेसे योगसे चूकके हिंसा हो जावे तो आप पश्चाताप युक्त प्रायश्चित लेके शुद्ध होते हैं. ऐसे मुनी महाराज सर्वथा अहिंसा वृत धारी हैं.

प्रश्नः-साधुजी तो सर्वथा दया पाल सकते हैं परंतू हम तो गृहस्थ हैं हमारेसे ऐसी संपूर्ण दया कैसे पले?

समाधानः-अहो भव्य! तुमारा सत्य कहना हैं. क्यों कि गृहस्थ पणेमें संपुर्ण दया पलनी मुश्कील हैं. तो भी अपनेसे पले इत्नी तो जरुर पालना और जो हिंसा होती होवे उसे हिंसा समज उस्का पश्चाताप करना. बने वहां तक हिंसाको प्रति दिन कमी करना. सर्वथा त्यागनेके अभीलाषी रहना और अवसरपे सर्वथा हिंसा छोड मुनी पद धारन करना. श्रधना और परुपणा तो शुद्ध रखनी; फरसना अवसरपे करनी, ये ही सब मतमें सार है. ऐसा समज अनाभिग्रह मिथ्यात्व छोडना.

३ "अभीनीवेसिक मिथ्यात्व"-कितनेक मतग्राही मनुष्य अपने मनमें अपनी मते कल्पनाको झुटी समज जाते हैं. तो भी मानके मरोड अपनी ग्रही हुइ हटका त्यागन नही करते हैं. उनको कोइ गीतार्थ समजावे तो वे अनेक प्रकारके कु हेतु कर कु कल्पना कर अपने कुमतको सिद्ध करते हैं. और जो उत्तर न आवे तो तत्क्षण क्रोधके वसमें हो उस शुद्ध सिक्षा देनेवालेको तिरस्कार करे

और गुस्सेमें भराया हुवा अनेक मति कल्पनासे खोटे २ ग्रंथ कथा चरित्र रचकर तथा जो जो शास्त्रार्थ उन्के मनको हरकत करते होवे उनको उलटा कर झुटा कर अनंत संसारकी वृधीसे न डरता भोले लोकोकों भरमाके सू साधू की संगत दान मान देना वंद कर फुटी नावके जैसे आप तो डूबे और अपने अनुयायीयोंको लेके पातालमें बैठ ये उत्सूत्र की परुपना करें उनकी संगत नही करना, उन्का उपदेश नही सुणना. और अपनी आत्माको सुखी करनेकी अभिलाषा होवे तो जहां लग खबर नही पडे वहां तक की तो अलग वात हैं, परंतु जब अपने मनमें समज जाय के ये अपनी कल्पना खोटी हैं तो उसी वक्त उसका त्यागन कर, जो सत्य पंथ मालम पडे उसे स्विकार करे.

४ 'संसयिक मिथ्यात्व' कित्नेक ऐसे जैन भाइ हैं की सुत्रों की कित्नीक गहन बाते समजमें न आनेसे, या जैन की और और मतकी बाते विरुध मालुम पडनेसे, जैन शास्त्रमें संका लाते हैं की ये बात सच्ची किस्तराह होवे ? ये भगवानने झूट फुरमाइ के आचार्योंने झूट लिखा, ऐसा डामाडोल

चित्त करते हैं. परंतू यों नही बीचारते हैं की भगवान झूटा उपदेश क्यों करेगे? क्या वीतरागको अपना महजब चलानेका अभिमान था या मत पक्ष था की झूटी परुपना करे? जो बात अपनी समजमें न आवे तो अपनी बुद्धीका फरक समजना. परंतू तिर्थंकर या आचार्यका किंचित् दोष नहीं निकालना. यदि शंका लगे तो गीतार्थका संजोग मिले खुलासा करना और जो संशय नही जाय तो अपनी बुद्धीका फरक जाणना.

५ 'अनाभोग मिथ्यात्व' ये अन समज से अज्ञानपणे से भोलेपणे से लगता हैं. ये एकेंद्री, बेंद्री, तेंद्री, चौरिंद्री, असन्नी पचेंद्रीमें लगता हैं.

६ 'लौकीक मिथ्यात्व' के तीन भेद. (१) देवगत. (२) गुरुगत. (३) धर्मगत. (१) लौकीक देवगत मिथ्यात्व उसें कहते हैं, देवका नाम तो धारण कीया परंतु जिनमें देवका गुण नहीं. ऐसे चित्र के, कपडे के, कागद के, मिट्टी के, पत्थर के, काष्ट के, इत्यादिक अनेक प्रकार के अपणे हाथ से बनाये हुये जिनोंमें ज्ञान दर्शन चारित्रका बिलकुल गुण नही, जिनके पास स्त्री हैं काम शत्रुसे परा-

भव पाये, विषय वृद्धी हैं, जिनके पास शस्त्र है; जो शत्रु की हत्याके करनेवाले है; जिनोके पास वाजिंत्र है वे अपने तथा दूसरे के उदास मनको वाजिंत्र की साहाय से प्रसन्न करा चाहाते है. जिनों के पास माला हैं वो पूर्ण ज्ञानी नही हैं, क्यों कि गिनती ध्यानमें नही रहती हैं, इसलिये माला रक्खी हैं. जिन्के पास दूसरे देवकी मूर्ती है वो निर्बल है दूसरे की सहाय चाहाते हैं. जो स्नानादि करते हैं सो मलीन हैं. मांस भक्षण करते हैं सो अनार्य हैं. अन्न फल आदि सचित वस्तुका सेवन करते हैं सो अ-वृती हैं. फूल प्रमुख सूंघत हैं सो अतृप्त हैं. जो पुजाकी इच्छा करते हैं सो असमर्थ हैं. जो रुष्ट हुये दुःख और तुष्ट हुये सुख देते हैं सो रागद्वेष युक्त हैं. जो प्रतिष्ठा चाहावे सो अभिमानी हैं. इत्यादि अनेक दुर्गुणके भरे हैं. ऐसे को देव तरीके कैसे माने जाय ? और देव है, मनुष्य है, या कोइ वस्तू है, ऐसा उन्के शास्त्रोंसे भी निश्चय नही होता हैं. कहते हैं की, ब्रह्मासे माया उत्पन्न हुइ और मायासे सत्व, रजस, तमस, ये तीन गुण पैदा हुये और इन तीन गुणसे ब्रह्मा, विष्णु, महेश ये तीन

देव पैदा हुये. अब जरा वीचारीये ब्रह्म चैतन्य और माया जड तो चैतन्य से जड कैसे पैदा होवे? तथा माया से तीन गुण और उनसे तीन देव हुये सो ये भी कैसे बणे? क्योंकि गुणी से गुण होता हैं परंतु गुण से गुणी कैसे होवे? मिट्टी से घडा बनता है; परंतु घडे से मिट्टी कैसे बने? हम किसी देव की निंदा के लिये ये शब्द नहीं कहते हैं, फक्त विचार चेताया हैं.

और भी २४ अवतारमें से कित्नेकको पूर्ण अवतार और कित्नेकको अंस अवतार बताते हैं सो ये भी बात वीचारने जैसी हैं; जो पूर्ण अवतार है तो सर्व ब्रह्म उन्हीमें व्यापे. उसवक्त दूसरे ठिकाणे ब्रह्मका अभाव हुवा, तब उसे छोड सब जक्त शुन्य हुवा. और अंस अवतार कहते हो तो इश्वर तो सर्व जक्तमें व्यापक बताते हो, तब अन्य जीवोंमें और उन्हमें क्या फरक पडा?

इत्यादी लौकीक शास्त्रमें ही देव के विषयमें कित्नी बातों लिखी हैं सो जैनी भाइको दरसाइ हैं कि ऐसे देव कैसे माने जाय?

तथा कित्नेक जैनी भाइ पर्म पुज्य अरिहंत सुरेंद्र न-रेंद्र के वंदनीकको छोड के जो देव नृत्य गायन कुतुहल छल—कपट परस्त्रीगमन पुत्रीगमन करनेवाले सात दुर्व्यसन के सेवन करनेवाले जिनके मकानमें बेचारे भेंसे बकरे मुरगे (कुकडे) इत्यादी अनाथ जीव कटते हैं, रक्तका खाल वहता है, मांस के ढग लगते हैं, जो मदीरा पसंद करते हैं. इत्यादी अनेक अनर्थ निप-जते हैं, वहां जैनी भाइ जाते हैं वहां अनेक भोजन निपजाके आप खाते हैं और धन पुत्र निरोगता शत्रुक्षय इत्यादि की अभीलाषा कर देवको भोग लगाते हैं, साष्टांग नमस्कार करते है परंतु यों नहीं समजते हैं कि देवता की मानता करने से ही जो पुत्र होता होय तो फिर स्त्रीको भरतार करने की क्या जरुर है? विधवा वांझ सब ही पुत्रवती क्यों नही हो जावे? और वो तुमारे पास की वस्तु मिलने से ही त्रप्त होते हैं तो तुमारेको क्या देवेगें? जो दूसरे की इच्छा पूर्ण करे इत्नी शक्ति उनमें होवे तो

आप ही क्यों दुःखी हो रहे? हे भोले भाइयों! ऐसा जाण इस लौकीक देवगत मिथ्यात्वका त्यागन करो और निःस्वार्थी—निर्लोलची देवको शुद्ध चित्त से भजो. (२) लौकीक गुरुगत मिथ्यात्व. गुरु (साधू) का नाम तो धराया परंतू जिनोंमें साधू के गुण नही ऐसे बावा जोगी संन्यासी फकीर अनेक नाम धारी, जो हिंसा करते है, झूट बोलते हैं, चौरी करते हैं, कान्ता (स्त्री) आदि सेवन करते हैं, धन परिग्रह रखते हैं, रात्री भोजन करते हैं, मद्य—मांस—कंद—मूलका भक्षण करते हैं, गांजा, भांग, चडस, तमाखू पीते हैं, छापा, तिलक, तेल, अतर, माला, वस्त्र, भूषणादि करके सरीरको शृंगारते हैं, रंगी बेरंगी कपडे धारण करते हैं, जटा बढाना, भभूत लगाना, नग्न रहना, इत्यादि अनेक रुप धारण कर पेट भराइ करते फिरते हैं. उनको माने पूजे सो लौकीक गुरुगत मिथ्यात्व.

जैन शास्त्रमें पाखंड मत के ३६३ भेद बताये हैं. उनका स्वरुपः—

प्रथम पंच समवायका स्वरुप कहते हैं.

१ कालवादी. २ स्वभाववादी. ३ नियत (भ-

वितव्य) वादी. ४ कर्मवादी. ५ उद्यमवादी.

१ कालवादी कहता है की इस जगत के सर्व पदार्थ कालके वसमें हैं. अर्थात् सर्व पदार्थका कर्त्ता काल ही हैं. देखीये, प्रथम सृष्टीमें जो अवतार लेता है बच्चा होता हैं तो उस्में भी यथायोग्य उम्मर के स्त्री पुरुषका संयोग होनेसे योग्य उम्मरको प्राप्त हुये ही स्त्री गर्भ धारण करती हैं. तैसे ही वृद्ध हुये पीछे पुरुष के संजोग हुये भी गर्भ धारण करना बंध हो जाता हैं. ऐसे ही प्राप्त हुवा लडका योग्य उमरको प्राप्त होयगा तब चलने लगेगा, बोलने लगेगा, समजने लगेगा, विद्याभ्यास करेगा; युवानी प्राप्त होगी, इंद्रीयों की विषय की समज होगी, वृद्ध होगा, केस श्वेत होवे-दांत पडे-इत्यादि रीतसे कालपूर्ण हुये मृत्यू प्राप्त होगी. जैसे मनुष्योमें काल की सत्ता हैं तैसे ही अन्य स्थावर पदार्थों पे भी जाणीये. देखीये वनस्पतीको उस्का काल परिपक्क हुये ही अंकूरे फूटेगे, पत्र आवेगे, फूल फल लगेगे, बीज रस प्रगमेगा और काल पूर्ण हुये सडके बिगड जाता हैं. ये सृष्टि ही काल के आधार से चलती है, सीतकालमें शीत (ठंड), उष्णकालमें ताप, बर्षादमें

वर्षा (वृष्टी), इनमें जो फरक पड जाय तो रोगादि होके अनेक उपद्रव होते हैं. और भी देखीये. सुखमा सुखम सुखम इत्यादि छेही आरे सरपणी उतसरपणीका प्रवर्ताए होता हैं, तिर्थंकर चक्रवृत बलदेव वासूदेव केवली साधू श्रावक ये भी योग्य कालमें उत्पन्न होते हैं और विछेद जाते हैं. विशेष क्या कहुं संसार परिभ्रमणका काल पूर्ण होयगा तब ही मोक्ष मिलेगा. इसलिये सबमें श्रेष्ट काल ही हैं. सर्वजन्य कालको ही कर्त्ता मानो.

२ स्वभाव वादी बोला की, काल से कुछ नही होता हैं. जो होता है सो सब स्वभाव से ही होता हैं. देखीये, जो काल पूर्ण हुये कार्य होता होय तो स्त्री की जुवान वय हुये दाढी मूछ क्यों नही आती हैं? वंध्या के पुत्र क्यों नही होता हैं? हथेलीमें केश (बाल) क्यों नही ऊगते हैं? जिव्हामें हाड क्यों नही हैं? ऐसे ही वनस्पति की अलग २ जात है उन्के स्वभाव प्रमाणे अलग २ रस प्रगमता हैं. ऐसे ही मच्छी प्रमुख जलचरोंका जलमें रहनेका, पक्षीयोंका आकाशमें उडनेका स्वभाव हैं. और भी देखीये, कांटे की तिक्षणता, हंसका सरल

पणा, बगलेमें कपटाइ, मोर की रंग रंगित पांख, कोकिलका मधुर स्वर, कागका कठोर स्वर, सरपके मुखमें विष और सरप की मणी विषका हरण करे, पृथ्वी कठिण, पाणी ठंडा, अग्नी उष्ण, हवामें चलनता, सिंहका साहासिक पणा, स्यालका कपट, अफीम कडवी. इक्षु मधूर, पत्थर पाणीमें डूबे, लकड तीरे, कानसे सुणे, आंखसे देखे, नाकसे सूंघे, जीभसे आस्वाद ले, कायासे स्पर्श वेदे, मनकी चपलता, पगसे चलना, हाथसे काम करना, सुर्यका तेज, चंद्रकी शीतलता, नर्कमें दुःख, देवतामें सुख, सिद्धका अरुप पणा, धर्मास्तीमें चलण, अधर्मास्तीमें स्थिर, आकासमें विकास, कालका वर्तमान, जीवका उप्योग, पुदगलका पुरण—गलन, भवीका मोक्ष गमन; अभवीका संसारमें रुलन, इत्यादि वस्तू कोंण बणाते है? कोइ नहीं; सब स्वभावसे ही होती हैं. विन स्वभाव कुछ नहीं हैं. इसलिये मेरा मत सच्चा है. सबमें स्वभावको ही सच्चा मानो.

३ नीयत वादी बोला, तुम दोइ झूटे हैं. तुमारेसे कुछ नही होनेका. जैसी २ जिस्की होण हार होती वैसा ही सब काम होता हैं. देखीये वसंत रुतूमें

आम वृक्षको कित्ने मोर लगते हैं ? परंतू सब खीर जाते हैं और होणहार होती है उत्ने ही आंब आते हैं. कित्ने भी यत्न करो तो होणहार नही टलती हैं. देखीये, मंदोदरीने और भविष्यणने रावणको बहोत समजाया परंतू उसकी मृत्यू आ गइ तो अपने चक्रसे आप ही मारा गया. द्वारका जलेगी, ऐसा कृष्णजी जाणते थे, उनने बहोत ही प्रयत्न कीया तो भी वो जलगइ. फरसुरामनें फरसी से लाखो क्षत्रीयोंको मारे, और उस्की मृत्यू आइ तब सयंभू चक्रीके हाथसे आप ही मारा गया. और भी एक द्रष्टांत से मेरा मत सत्य मालूम होगा. एक समय एक झाड पे एक बटेर पक्षीयोंका जोडा बेठा था उसको मारने के लिये एक पारधीने उपर तो सिकरा (बाज) छोड दीया. और नीचे से आप नीशाण ताक मारने लगा. इतनेमें होणहारके योग से वांहा एक सर्प आके पारधी के पगमें डंक दीया. उसके हाथमें से बाण छूट उस उडते हुये सीकरेको जा लगा. उपर सीखरा मर गया और नीचे पारधी मर गया. वो दोनु पक्षी बच गये. देखीये होणहार कितनी जब्बर है. बडे संग्रामोमें अति विषम प्रहारसे

घायल हुये और बडी २ बीमारीयों से मृत्यू तुल्य हुये मनुष्य होणहार के योग से बच जाते हैं, इत्यादि अनेक बातों से मेरा मत सच्चा है.

४ कर्मवादी कहने लगा की, नीयत स्वभाव और काल तुम तीन ही साफ झूटे हो, क्यों की तुमारा करा कुछ नही होता हैं. जो होता हे सो सब कर्मोंसे ही होता हैं. जैसा कर्ममें लिखा होयगा वैसे ही फलकी प्राप्ती होयगी. देखीये जरा आंखो खोल के, पंडित, मूर्ख, श्रीमंत, दरिद्री, सूरुप, कूरुप, निरोगी, रोगी, क्रोधवंत, क्षमासील, ये सर्व कर्म से ही होते हैं. और भी देखीये मनुष्य २ सब एक से है परंतू कर्म से एक पालखीमें बैठता है और एक बोज़ा उठाते हैं. एक इच्छित भोजन खाता हे और एकको लूखी फीकी राबडी भी नही मिलती हैं. इत्यादी सब कर्मों की ही विचित्रता है. अरे इन कर्मोंने. आदीनाथ भगवानको बारे महीने तक अन्नजल नहीं मिलने दीया ! महावीरस्वामी के कानमें खीले ठोकाये ! पग पे खीर रंधाइ ! गुवालीयोंने मारे ! और अनेक कष्ट साडी बारे वर्ष, लग दीये. सागरनमे चक्रवर्ती के साठ हजार पुत्र एकदम मर गये. सनत

कुमार चक्रवृत के ७०० बर्ष लग सरीरमें कुष्ट रोग रहा. राम लक्ष्मण वनमें वसे, सीताजी पे कलंक आया, लंका अग्नीमें जली, कृष्ण के जन्म वक्त गीत गानेवाला और मरती वक्त रोनेवाला कोइ नही रहा. ऐसे २ उत्तम पुरुषोंमें वीटंबना पाडी है तो दूसरे की क्या कहु? इन कर्म से एकेंद्रीयादि नीच जातीमें और नर्कादि गतिमें जाते हैं. जास्ती क्या कहु, कर्म दूर होते हैं तब ही मोक्ष मिलती है. इसलिये कर्म महाबली है. इसलिये मेरे मत सबसे सच्चा हैं.

(इस कर्मवादी के ठीकाणे कित्नेक ईश्वरवादी भी कहते हैं. ईश्वरवादी मानता है की जो करता है सो ईश्वर ही करता हैं. ईश्वर के हुकम विन एक पत्ता भी नही हिलता हैं. इस सृष्टीका और सुख दुःखादि सर्व कार्यका कर्त्ता ईश्वर ही हैं.)

५ उद्यम वादी कहता है की हे कर्म ! तुं व्यर्थ गुमान मत कर; क्यों कि कर्म निर्बल है, कर्मसे कुछ नही होता हैं. सर्व कार्य उद्यमसे होता हैं. देख जरा पुरुष की ७२ कला, स्त्रीकी ६४ कला, उद्यमसे हो आती हैं. अश्व तोता पसू होने पर भी उद्यम क-रनेसे अनेक कला पढता हैं. मेहल, मकान, वस्त्रा-

भुषण, वरतन, पकवान सब तैयार होते है, और उद्यम से ही उनको भोगवते हैं. उद्यम करते हैं तो मिट्टीमेंसे सोना निकालते है. सीपमेंसे मोती निकालते है. और पत्थरमेंसे रत्न निकाले लेते हैं. उदर निर्वाह भी उद्यमसे ही होता हैं. जो बिल्ली उद्यम करती हैं तो दूध मलाइ खाती है, और मनुष्य निरुद्यमी होता हैं सो भूखे मरता हैं. उद्यमसे ही रामचंद्रजी सीताजी की खबर पाये और सीताजीको लेके आये, लक्षमणजीने रावणको मारा. उद्यमसे द्रुपदीको किसनजी लाये. केसी स्वामीने नरकमें जाते हुये परदेशी राजाको उद्यमसे स्वर्गमें पोंहोंचाया. जास्ती क्या कहु जो सच्चे मनसे उद्यम करे तो स्वल्प कालमें अजरामर अक्षय सुखका भोगी होवे.

ऐसे ही पंचवादीका विवाद अनादि कालसे चल रहा हैं. ये पांच ही एकेके बातको ग्रहण कर अपने पक्षको ताणते हैं. इसलिये इनको लौकीक गुरुगत मिथ्यात्व कहते हैं.

जो ये पांच ही एकत्र होवे एक पक्ष धारण नहीं करे तो सम द्रष्ट होते है. द्रष्टांत जैसे एक जगह पांच अंधे बेठे थे, उस वक्त हाथी निकला तब मा-

वतसे कहने लगे कि भाइ हमारेको हाथी बताव. मावतने हाथी खडा रक्खा. पांच ही अन्धे, हाथीके एकेक अंग पे हाथ फेर ठीकाणे जा बेठे. और एक बोला, हाथी थंभा जैसा हैं. दूसरा बोला, नही, हाथी अंगरखे की बांहा जैसा हैं. तीसरा बोला सूपडे जैसा हैं. चोथा बोला झाडू जैसा हैं. पांचमा बोला चबूतरे (झाडू) जैसा हैं. यों कहके आपसमें लडने लगे. वो कहे में सच्चा, तुम झूटे. तब मावत बोला भाइ क्यों लडते हैं ? तूम अलग होतो सब झूटे हो, और भेले होवो तो पांच ही सच्चे हो. जो थंभा जैसा कहता है सो हाथीका पांव है. अंगरखे की बांहा जैसी सूंड हैं, सुपडे जैसे कान है, झाडु जैसी पूछ और चबूतरे जैसी पीठ हैं. यो पांच हीके मिलनेसे हाथी होता हैं. ऐसे पक्ष ग्राहीको मिथ्यात्वी कहे जाते हैं. अब इनके संजोगसे ३६३ मत ऐसे होते हैंः–

१ क्रियावादीके १८० मत ऐसे होते हैं. उपरोक्त पांच समवाय कहे सो पांच स्व आत्मासे पांच पर आत्मासे दश हुये. ये दश शाश्वते और दश अशाश्वते वीस हुये. इन वीसको जीवादिके नव पदार्थसे नव गुणे करते २०×९=१८० हुये. ये क्रियावादि

कहता है की इस आत्माको पुन्य पाप रूप क्रिया लगती हैं ऐसा मानते हैं. इसलिये लोक पर-लोक की आसती करते है. सदा क्रियाका ही व-खाण करते हैं.

ये क्रियावादी एकांत क्रियामें मसगुल होके ज्ञानादि अन्य गुणका उत्थापन करते हैं. परंतु इन्को इत्ना ही बीचार करना चाहीये की ज्ञान विन क्रिया-का स्वरुप कैसे जानेगा? ज्ञान विन क्रिया सुन्य है. ज्ञान पांगला और क्रिया अन्धी हैं. दोनु के संयोग विन कोइ काम न होवे.

द्रष्टांतः—कितनेक मनुष्य ग्रामांतर जाते थे. रस्ते-में किसी जंगलमें रात रहे. फजर उठ और तो सब चल गये, फक्त एक अंधा और एक पांगला दो रह गये इत्नेमें तो उस जंगलमें दव (लाय) लगी. जिस्के ताप से दोनु जाग्रत हुये. और अन्धा तो जलने के डरसे इधर उधर दोडने लगा. तब पगूने उसे देख शब्दानुसार अपने पास बुला के कहने लगा के, अपन दोनु अलग रहे तो इस अग्निमें जल मरेंगे. इसलिये मुजे तूं खंधे पे बेठा ले और में कहु वैसे चल तो अपन बच जायगे. कोइ ग्रामको

प्राप्त कर सकेगे. अंधा उसके कहे मुजब चले दोनु सुखी हुये. ये द्रव्य द्रष्टांत हुवा.

भावार्थ. संसाररुप वनमें मृत्यूरुप लाय लगी है. उससे न अकीला ज्ञानी बचता है, और न क्रिया-वंत बचता है. जो ज्ञान युक्त क्रीया करता है सो ही मृत्यूरुप लाय से बचके शिवपुर नगरको प्राप्त होता है.

२ अक्रिया वादीके ८० मत होते हैं. पांच सम वाय तो पहले कहे सो और छटा इच्छासे उत्पन्न हुवा लोक; ये ६ स्वतः आश्री और छे पर आश्री, यों बारे हुये. इनको सात तत्वसे गिणना तो १२×७=८४ क्यों कि ये पुन्य पापको नही मानते है. ये कहता है की पुन्य पाप की क्रिया तो स्थिर वस्तू होवे उसे लगती हैं. इस जगतके सर्व पदार्थ चराचर (अ-स्थिर) है. इनको क्रीया कैसे लगे? इसे नास्तिक मती जाणना.

ऐसे नास्तीक मतीसे इत्ना ही पूछना है की जो पुन्य पापका फल नही लगता होय और पुन-र्जन्म नही होय तो फिर दुनियामें एक सुखी और एक दुःखी क्यों है? एक तो नित्य दिनमें चार २ वक्त इच्छित भोजन करता है, पांच पोशाकों बद-

लता हैं. और इच्छित सुख भोगवता है. और एक फजर चार घडी रात की उठ जंगलमेंसे लकडेकी भारी लाके दोपेहरको ग्राममें बेच उस पइसेका अनाज लें हाथसे पीस (दल) पेहर रातको लूखी फीकी राबडी पीके सो रहता है. नित्य ऐसा संकट सहन करता है तो भी उसे पेटभर अन्न इज्जत ढके जित्ना वस्त्र और रहनेको झुपडी भी नही मिलती है. इस्का कारण क्या होगा ?

३ अनाणवादी के ६७ मत सो ऐसे होते हैं. १ जीव छत्ता है. २ जीव छत्ता अछत्ता दोइ है. ३ जीव अछत्ता है. ४ जीव छत्ता है परंतु कहना नही. ५ जीव अछत्ता हैं परंतू कहना नही. ६ जीव छत्ता अछत्ता दोइ है परंतू कहना नही. ७ जीव छत्ता भी नही अछत्ता भी नही. ये सात तरह से अज्ञानी संकल्प विकल्प करते हैं. इन सातको नवतत्व से गीणते ७×९=६३ और इनमें शंखमती, शिवमती, वेदमती, विष्णुमती. ये चार मत किसी २ पक्षको ग्रहण करके मिलाने से ६७ भेद हुये. अज्ञानवादी कहता हैं की ज्ञान बडा खोटा होता हैं. क्यों कि ज्ञानी विवादी ेता हैं. और विवादमें प्रतिपक्षीका खोटा चिंतवना

पडता हैं. इससे उसे पाप लगता हैं. तथा ज्ञानीको पग २ पे पाप डर रहता हैं इसलिये उसे हरवक्त कर्म बंधते ही रहते हैं. हम अज्ञानी ही अच्छे हैं; न जाणते हैं और न ताणते हैं, न विवाद करते हैं, न किसीको खोटा खरा कहते हैं, न पाप पुन्यमें समजते हैं. इसलिये हमारेको किसी प्रकारका दोष नही लगता हैं. जो ऐसा अज्ञानका पक्ष करते हैं उनसे इत्ना ही पूछते है की तुम जो बोलते हो सो ज्ञानसे बोलते हो कि अज्ञान से बोलते हो? जो ज्ञानसे बोलते होवो तो तुमारा मत ही झूटा हुवा. और अज्ञान से तो उत्तर दीया ही नही जाता हैं. तथा अज्ञानपणेका उत्तर अप्रमाण होता हैं. और भी तुम कहते हो कि अज्ञानी अणसमजसे पाप करता हैं. इस लिये उसे नही लगता हैं. तब हम पूछते हैं की अजाण से जेहर खावे तो उसे वो जेहर प्रगमे की नही? जो जेहर प्रगमता है, तो पाप भी लगता है. देखीये ज्ञानी से तो अज्ञानीको पाप जास्ती लगता है. क्यों कि जो जाणेगा की ये जेहर है, इसे में खाउंगा तो मर जाउंगा और कभी औषधादि निमित्त से खाना पडा तो अनुपान प्रमाण युक्त खाके मृत्यू

से बच सकेगा और अजाण अप्रमाणसे भक्षण कर मर जायगा. ऐसे ही ज्ञानी जो पाप करेगे वो जाणेगे की ये पाप मेरेको दुःखदाइ है. परंतु कर्म रोग के जोग से करेगे तो ही डरते २ जित्ना करे बिन नही सरे उत्ना कर अनर्था दंड से आत्मा बचा लेवेंगे तथा वक्त पे प्रायछित ले शुद्ध हो जायगे. और अज्ञानी तो बीचारा अज्ञान सागरमें ही डूब जायगा.

४ 'विनय वादी' के ३२ मत, सो इस्तराह, १ सूर्यका विनय. २ राजाका विनय. ३ ज्ञानीका विनय. ४ वृद्धका विनय. ५ माताका विनय. ६ पिताका विनय. ७ गुरुका विनय. ८ धर्मका विनय. ये आठ ही को १ मनसे अच्छे जाणे. २ वचनसे गुण ग्राम करे. ३ कायासे नमस्कार करे. और बहु मान पुर्वक भक्ती करे. ये ८×४=३२ भेद हुये. विनयवादीका ये मत है की, सबमें विनय ही श्रेष्ट हैं, सर्व से नम के रहना, कोइ कैसे भी होवो अपने तो सब एकसे हैं, किसी के पक्षको नही निंदना; ये अनाभिग्रहीक मिथ्यात्व जैसा जाणना. ये चार वादी एकांत पक्षी के १८०+८४+६७+३२=३६३ सर्व

मत हुये. इनको माने उसे लौकीक गुरु गत मिथ्यात्व कहना.

(३) लौकीक धर्मगत मिथ्यात्व उसे कहते हैं की धर्मका नाम तो रक्खा परंतु धर्म के कृत्य बिलकुल नही, एकांत अधर्म के कार्य कर धर्म माने. जैसे पृथवी कायसे धर्मस्थान बनावे, नीवाण खोदावे, इत्यादि पृथ्वी हिंसा कर स्वर्गमें जाणे की अभिलाषा करे. ऐसे जो स्वर्ग मिलता तो चक्रवर्तीयोंने रत्नों के धर्मस्थान क्यों नही बनाये? क्यों संयम ले आत्माको कष्ट दीये? अब वीचारीये ह्यां के और तीर्थ के पाणीमें क्या फरक है? तथा तिर्थ स्नान से जो पापका नाश होता होय तो कडवा तूंबा पखालने से क्यों नही मीठा होय? तूंबे की कडवास नहीं गइ तो पाप कैसे जायगा? और तीर्थके पाणीमें स्नान करने से जो मोक्ष होती होय तो तिर्थस्थानमें रहनेवाले म्लेछादिक तथा पाणीमें रहनेवाले की भी मोक्ष होनी चाहिये. जो तिर्थस्नान से पापका नाश होय तो फिर बडे २ तपस्वीयोंने महा घोर तप कर क्यों तन तपाया? अरे भाइ! पापीको तो गंगा भी शुद्ध नही करती है. देखीये स्कंध पुराण

काशीखंड षष्टमाध्यायः—

जायंतेच म्रियंतेच, जलेष्वै जलौकसः ।
न च गच्छंति ते स्वर्ग मविशुद्धो मनोमलाः ॥

गंगाजीमें रहनेवाले जलचर प्राणीयों उसमें ही जन्मते है और मरते हैं. मनका मल गये विन उस्को भी स्वर्ग नही मिले तो दूसरेका क्या कहना? और भी,

चितं रागादिभिः क्लिष्टं, मलिक वचनैर्मूखं ।
जीवहिंसा दिभिःकायो, गंगा तस्यपराङ् मुखी ॥

रागादि दोष करके जिस्का मन, अशुद्ध वचन करके जिस्का मुख और हिंसादि पाप करके जिस्की काया अपवित्र हो रही है उससे गंगाजी उलटे मुख रहती है. अर्थात् नाराज रहती है, पवित्र नहि कर सक्ती हैं. अग्नीको सदा जागती रखनेमें धूप दीप करनेमें तप यज्ञ हवनादि करनेमें कित्नेक धर्म मानते हैं. ये भी जरा बीचारीये, की अग्नी जैसी राक्षसीको तृप्त करने दुनियामें कोण समर्थ है? ये जिस दिशामें जाती है उस दिशाके सर्व प्राणीयोंका भक्षण करती है. इस्के पोषणमें कैसे धर्म होय? कित्नेक कहते है की हवन की सुगंधसे रोगका नाश होता हैं. जो ऐसे होता होय तो प्लेगादि राक्षसी रोगसे सृष्टीको क्या नही बचा लेवे! कित्नेक कहते हैं की

हवनके धुम्र (धुवे) से बादल होते हैं और उससे पाणी की वृष्टी होके सृष्टी सुखी होती हैं. जो ऐसे होता होय तो अनेक देशोमें दुष्कालसे लखो मनुष्य कालके ग्रास हो रहे हैं तथा मरु स्थलमें भी महा दुःख हो रहा है. अरे भाइ ! जो धूवेसे वृष्टी होती होय तो सृष्टीमें तो नित्य पचन पचानादि क्रीयाका अपार धुम्र होता है फिर ये दुष्काल क्यों पडता है ? ये सर्व अज्ञान दशाका कारण हैं. और कित्नेक अनार्य तो कहते हैं की "यज्ञार्थं पश्वा श्रेष्टं" यज्ञमें पसुओंका हवन करना (जलाना) ये बहुत ही उत्तम हैं. अश्वमेघ घोडेको, गोमेघ गायको, अजामेघ बकरेको, और नरमेघ मनुष्यको जीवते अग्नीके कुंडमें जलानेसे स्वर्ग मिलता हैं. हा हा, कित्नी आश्चर्य की बात ! ऐसे २ उत्तम प्राणी कि जो ये न होए तो सर्व सृष्टी सुन्य हो जाए, इनसे ही सर्व सृष्टीका कार्य चल रहा है, इनको अग्नीमें जलानेसे जो धर्म होय तो फिर पाप किसमें ? बीचारे गरीबोंको होमनेका कहते हैं ऐसा कोइ बडेको बताते तो मालूम पडती. तब वो कहते हैं की हवनमें होमनेसे स्वर्ग प्राप्त होता हैं इसलिये हम सं-

सारके दुःखी जीवोंका हवन कर स्वर्गमें पोंहोंचा सुखी करते हैं. धनपाल पंडित कहता हैं कि होमाते हुवे पसू पूकार करते हैं.

नाहं स्वर्गफलोप भोग तृषितो नाभ्यार्थितस्त्वं मया
संतुष्ट त्रण भक्षणे न सततं साधोन युक्तं तव।
स्वर्गें यांति यदि त्वया विनिहता यज्ञे ध्रुवं प्राणीनो.
यज्ञं किं न करोषि मातृपितृ भिः पुत्रै स्तथा बांधवैः ॥१॥

मेरेको स्वर्ग सुख की किंचित् ही इच्छा नही है और न मेने तुमारे पास याचना करी हैं कि मुजे स्वर्ग दो. में तो त्रण खाके मेरे कुटुंबके साथमें स्वर्ग से जादा सुख मानता हुं. हे सुज्ञो ! मेरे जैसे निरपराधीको नाहक क्यों मारते हो ? अरे भाइ ! जो यज्ञमें होमनेसे स्वर्ग मिलती होय तो तुमारे पिता माता भाइ पुत्रादि प्यारे स्वजनका हवन करके उनको क्यों नही स्वर्ग पहोंचाते हो ? जो यज्ञ करके स्वर्ग चाहते हो तो यज्ञमें जलके ही स्वर्गको शिघ्र क्यों प्राप्त नही कर लेते हो ? और भी देखाये ! श्रीमद्भागवतका ४ था स्कंधके पचीसवा अध्यायके ७–८ श्लोक, प्राचीन बर्हीं राजाको नारद नामा रुषीने क्या उपदेश कीया है सोः–

भो भो प्रजापते राजेन्द्र पशून पश्य त्वयाध्वरे
संज्ञा पिताश् जीवसंघान् निर्घृणेन सहश्रशः ॥७॥
एते त्वां संप्रतिक्षंते स्मरंतो वैशसं तव
संपरे तमयः कूटै श्छिदंत्युतित्थ मन्यवः ॥८॥

अहो अहो प्रजाके मालिक प्राचीन वहीं, तेने बडा अन्याय कीया है. अरे बेचारे पशुओंकी पसुताके तर्फ न देखते कू गुरुओंके असत्य उपदेशको अनुसर या वेद की आज्ञाको न समज उस्का उलटा अर्थ ग्रहण कर बीचारे अरडाट पाडते हजारो पसुओंको तेने यज्ञमें† जला दीये. वो सब पसु तेरेसे बदला लेनेको राहा देख रहे है. तेरा आयुष्य खुटाके जैसे तेने उन्का वध करा है वेसे ही वो अलग २ तेरा बध करेगे–मारेगे. ऐसा सुनके राजाने हिंसा धर्मका त्याग कर दिया. देखीये हिंदू धर्मके मुख्य

† सत्यरुप यज्ञ स्थंभ, तपरुप अग्नी, समाधीरुप मंत्र, अहिंसारुप आहूती, येही सच यज्ञ है. तथा अश्वमेध सो मन रुप घोडेका, गोमेध सो असत्य बचनका, अजामेध सो इंद्रियोंका, और नरमेध सो कामदेवका, ए उपर कही हुइ अग्नी और कुंडमें यज्ञ (हवन) करनेसे स्वर्ग प्राप्त होवे. जो सच्चा यज्ञ करना होय तो ऐसा करो.

शास्त्रका क्या उपदेश है ? उनको न स्विकारते लोक अनर्थ कर रहे हैं. इसलिये भाइ जरुर समजो की यों अग्नी की तृप्ती नही होता हैं और यों अग्नी पोपणेसे धर्म भी नही होती हैं. ऐसा जाण अनर्थ से वचो. वाउ काय (हवा) झूले पे झूले पंखा करे वाजिंत्र बजावे इत्यादि कामोंसें वायू कायकी अयत्ना कर ढोंग सोंगमें ही कित्नेक लोग धर्मकी उन्नती समजते हैं ये भी एक वडी अज्ञानदशा हैं. वनस्पतिको शिवशास्त्रमें पुजने योग्य कही है. देखीये विष्णुपुराण.

मूलाच ब्रह्मा त्वचाविष्णु शाखा संकर मावच ।
पात्रे २ देवाणामं वृक्ष राय नमो स्तूते ॥

हरेक वृक्ष के मूलमें ब्रह्मा, छालमें विष्णु, डाली-येमें शंकर और पत्तोंमें देवोंका वासा है. इसलिये वृक्ष नमस्कार करने योग्य है. ऐसा कहते भी अज्ञानी जीव पत्र पुष्प फल मूल द्रोव इत्यादि वनस्पतिका विनास कर देवको समर्पण कर धर्म मानते हैं. तूलसी माता विष्णूकी स्त्री कहके चूटते हैं. ये भी भोलापण है. अहो जरा अपने मनमें वीचारीये, विष्णुभाइ कहते हैं की सृष्टी भगवानने बनाइ है. और सृष्टी पे के सर्व पदार्थ के मालक भगवान है.

फिर भगवानकी वस्तू भगवानको देनेसे वो कैसे प्रसन्न होयगे ? क्या भगवान पान फूल फलके भूखे हैं ? तुम चडावोगे तब ही उन्की तृप्ति होगी क्या ? बडे २ वृक्षोंको जडमेंसे उखाड डालते हैं, कच्ची कलीये और फूले फूलको तोड डालते हैं, कूपण और झलहलते पत्तेका नाश करते हैं और धर्म मानते है इससे भी ज्यादा अज्ञानता क्या होवे ? त्रस जीव कीडे कीडी षटमल डांस मच्छर जूं लीख विच्छु सांप खेंकडे इत्यादिको परलेके (मरनेवाले) जीव कहते हैं तथा कंटक (दुःख देनेवाले) कहके मारनेमें पाप नही गिणते हैं. उनसे पूछते हैं की वो कंटक क्यों हुवे ? तव कहते है की हमारेको दुःख देते हैं वो कंटक हुवे. तब जो मार डालते हैं वो महा कंटक हुये की नही ? तो फिर तुमारेको कोन छोडेगा ? और जो तुम इश्वरको कर्ता मानते हो तो जैसे ईश्वरने तुमको उत्पन्न कीये वैसे ही उनको भी जाणो. क्या इश्वर सत्ताको अनुपकारी मान उनका बधकर इश्वरके अपराधी न बनोगे ? कुभारका घडा हुवा मटका भी कोइ फोड डाले तो कुंभार नही छोडता है. तो इश्वर तुमको कैसे छोडेगा ?

क्या इश्वर तुमारा मित्र और उनका शत्रु है? इश्व-रने तो श्रीमद्भागवतके सातमे सत खंधके चउदमे अध्यायमें ऐसा कहा हैः—

यूमप खरमक्खा खुसरी सर्पःखगाःमक्षीका
आत्मानां पुत्रवत् पश्येत् तेषां मैत्री क्रियते

ज्यूं, ऊंट, गधा, वंदर, विसमरी, ताली, पक्षी, अजी, मक्षी, जैसा भी प्राणी अपनी आत्मा और अपने प्यारे पूत्र जैसा जाणना. परंतू किंचित् ही अंतर रखना नही. देखीये इससे ज्यादा और क्या कहे? तथा जिन पसूवोंको ये दुश्मन समजते हैं, उन ही को वक्त पे पूजते हैं. देखीये सर्पको दुश्मन गि-णते हे और नागपंचमी के दिन सर्पको दूध पीलाते है पूजते है और सच्चा नही मिले तो चित्रामणका आलेख पूजा करते है. और भी देखीये, कृष्णजी के सेज्या ही सर्प की, महादेवजीने अपने गले घाला है; ऐसे प्रभू के प्यारे प्राणीको वैरी जाणते हैं और मारते है वो प्रभूके कट्टे सत्रू है के नही? और भी कित्नेक अनार्य देवका नाम से धर्मार्थ बीचारे गरीब पसु बकरे, कुकडे, पाडे मारते हैं. और आप खा जाते हैं. वो मारनेका पाप देवके सिरपे रखते हैं.

देखीये *मतलबीपणा. अरे भोले! देव दयाल होते हैं की हिंसक? आप हत्यारे होके बीचारे देवोंको भी हत्यारे बणाते हैं. परंतू वो नही समजते हैं कि सतीके सिर कूलक्षणीका कलंक चढाने से जित्ना पाप होता है उत्ना ही दयाल देवको हिंसक बनाने से होता हैं.

ये छेही काय विष्णुरुप विष्णव पुराणमें कही हैं सो श्लोकः—

"जले विष्णु स्थलेविष्णु विष्णु पर्वत मसार्क।
ज्वाल माला कुले विष्णु विष्णु सर्व जगत् मयः॥

हे पार्थ! विष्णुभगवान कहते है की, में जल (पाणी) में, स्थल (मट्टी) में, पर्वत मस्तक (वनस्पतीमें), ज्वाला (अग्नी) में, माला (हवा) में, कुले (हलते चलते प्राणी) में, ये छे कायरुप सर्व जगतमें व्याप रहा हुं.

द्रष्टांत जैसे किसी राजा के छे पुत्र हैं. कोइ पुरुष राजाको प्रसन्न करने छे में से किसी पुत्रको

* पद–देवके आगे बेटा मांगे, तब तो नारेल फूटे,
गोटे सोतो आपही खावे, उनको चडावे नरोटे;
जग चले उफराटे झूटेको साहिब कैसे भेटे.–'कबीर'

मारके चडावे और कहे की संतूष्ट हो! तब राजा संतुष्ट होता है की नाराज? ऐसे ही छे कायकी हिंसा करके प्रभूको खुशी करे चाहाते परंतू हिंसासे प्रभु उलटे नाराज होते हैं. ऐसे जो हिंसामें धर्म मानते हैं उसे "लौकीक धर्मगत मिथ्यात्व" कहना.

और भी मिथ्या पर्वको माने सो भी मिथ्यात्व कहा है. जैसे होली, दीवाली, दशेरा, राखी, गुडी-पडवा, भाइबीज, काजलीतीज, अक्षय तृतीया, गणेशचोथ, नागपांचम, यात्र (ऊभ) छट, सील-सातम, जन्माष्ठमी, रामनवमी, धूपदशम, झूलनी-ग्यारस, भीमएकादशी, वछबारस, धनतेरस, रुपचउ-दस, सरदपूनम, हरीयाली अमावस्य, वगैरा तहे-वारोंको माने, व्रत करे तथा मिथ्यात्वी देवोंकी पूजा करे सो भी लौ० ध० मिथ्यात्व.

और भी धर्मगत प्रत्यक्ष मिथ्यात्व देखो. कित्ने-क एकादशी आदिको उपवास कहते हैं. नाम तो उपवासका और खाजावे रोजसे ज्यादा. सवैयाः—
गीरी और छूवार खाय, किसमिस और बिदाम चाय. साढे और सिंघाडेसे, होत दिल स्वादी है॥ गुंदगीरी कलाकंद, अरबी और सकरकंद, कुंदन के पेडखा,

लोटे बडी गादी है ॥ खरबूज तरबूज और. आंब जांब लिंबू जोर, सीगोडे के सीरसे, भूखको भगा दी है. कहत नाराण, करत दूणीहाण, कहणे की एकादशी, पण दुवादशी की दादी हैं ! ॥ १ ॥

और उन्ही के पुराणमें एकादशी महात्म्यमें इग्यार बोल त्यागे उसे एकादशी कही हैं.

"अन्न कंदं त्यागं निद्रा फल सेज च मैथूनं
व्योपार विक्रे खुरं कष्ट दंतं स्नानं वर्जनं"

अब्बी इत्ना कष्ट सहन नही होनेसे अनेक ढोंग चला दीये हैं कहते हैं. की नरकी देही है सो नारायण की देही हैं. इसे कष्ट नही देना. थोडा बहुत तो जरुर खाना चाहीये. जो मनको तरसावेगा सो नरकमें जावेगा. तब उनको पुछते हैं की, विश्वामित्र परासर आदि ऋषी जो ६० हजार वर्ष लग लोहो कीट भक्षन कर रहे है और सरीरको सुखाया हैं. नव नाथोने बारे २ वर्ष लग कांटे (सुल) पे खडे रहे तप कीया है, उन्को क्या नर्कमें गये समझते हो ! जो शास्त्रसे बात करे उनको तो जबाव दीया जाय परंतु गाल पुराण प्रकासे उनसे तो चुप ही भली हैं. पुद्गलानंद (विषया शक्त) प्राणीको ये

बात कब अच्छी लगे ? हे भव्य ! तुम ये तो निश्चय समजो की आत्म दमे विगर इस लोक और परलोकमें कदापि सुख नहीं होगा. कहा है की " दुःखाती सुखं " तथा दश वैकालिकमें कहा है. 'देह दुःखं महा फलं' देहको कष्ट देनेसे महा फल प्राप्त होता है. इस लोक भी विद्याभ्यासं, व्यापार या गृह कार्यमें अव्वल तो दुःख हीं देखते है तब फिर सुख होता है. परंतू उसे दुःख नही गिणा जाता हैं. जैसे औषध लेते और पथ्य पालते दुःख होता है. परं रोगी उसे दुःख नही गिणता हैं, उत्सकतासे औषध ग्रहण कर रोग मिटाना चाहाता हैं. तैसे ही धर्म कार्यमें संकट पडे उसे संकट नही कहा जाता है. वो थोडे से दुःख बहुत सुखका देणेवाला होता हैं. ऐसा जाण लौंकाक मिथ्यात्वका त्यागन कर सत्य देव गुरु धर्मका स्विकार कर सुखी होवो.

७ " लोकोत्तर मिथ्यात्व " इस्के भी लौकीक की तरह तीन भेद होते है. [१] लोकोत्तर देव गत मिथ्यात्व सो तिर्थंकरका नाम धारण किया पण जिन्नोंमे तिर्थंकरके किंचित् हीं गुण नही. जो १८ अठार दोष युक्त होवें, उनको देव जैसे माने. तथा

वीतराग देवके नामको इस लोकके सुख धन पुत्र निरोगता गृह दोष निवारण इत्यादिके लिये स्मरे सो लौकीक देवगत मिथ्यात्व (२) लौकीक गुरुगत मिथ्यात्व सो जैन लिंग धारण करा पण जिनमें गुरुका गुण नही, पासत्थादि पांच दुषण युक्त, पांच महाव्रत समिति गुप्ति रहित, छेकायका आरंभ करे, ऐसे गुरुको गुरु तरीके मानना सो लौकीक गुरु गत मिथ्यात्व. (३) लौकीक धर्म गत मिथ्यात्व सो निर्वद्य धर्म, की जिससें निराबाध अक्षय सुखकी प्राप्ती होवे, उसे इस लोकके सुखके लिये करे जैसे मेरे पुत्र की प्राप्ती हुइ तो में अमुक तप करुंगा. संकट टला तो तेला करुंगा. धन मिला तो उपास करुंगा. विद्या आइ तो आंबिल करुंगा. कमाइ हुइ तो समाइक करुंगा. ये रुढी इस बक्त चली है इसे मिटाणे जरुर प्रयत्न करना चाहीये. नियाणा [वांछा] करके अनंत जन्म मरणको मिटानेवाला धर्म इस लोकके क्षणीक अशुची अविश्वासी सुखके लिये नहीं गमाना चाहीये. अबी कोइ एक रुपेका माल पनरे आनेमें दे देवे तो उसे मूर्ख कहते है, तो अमुल्य धर्म क्षणीक सुखके लिये कोण सुज्ञ गमायगा ?

८ "कूथा वचनिक मिथ्यात्व". इसके तीन भेद (१) देवगत सो हरिहरादि अन्य देवको, (२) गुरुगत सो बाबा जोगी आदि कू गुरुको, (३) और धर्मगत सो संध्या स्नान जाप होम वगैरा क्रियाको, ये तीन ही को मोक्षकी इच्छासे अंगिकार करना सो. जो देव आप ही मोक्षको प्राप्त नही हुये तो अपनको क्या मोक्ष दे सकेगा? मिथ्या शास्त्रमें इनकी मिथ्या महिमा सुण के समदृष्टीको इसमें मोहित नही होना.

९ वितराग देवके सुत्रसे ओच्छी (कमी) श्रधना परुपना करे सो मिथ्यात्व. जैसे तीस गुप्ताचार्य. एक प्रदेशी आत्मा मानी. तथा अपनेपे रेला आता देखके शास्त्रका अर्थ फिरा देवे. मन चाहा बना देवे सो मिथ्यात्व.

१० वितराग के सूत्रसे अधिक (जादा) सरधना परुपना करे सो मिथ्यात्व. जैसे एक आत्मा सर्व ब्रह्मांड व्यापक हैं. तथा अंगूष्ट जित्नी आत्मा बतावे. तथा साधू के धर्मोपगरण परिग्रहमें बतावे. महावीरस्वामीं के ७०० केवलीं हुये सो जास्ती कहे. ७०० साफ नग्न रहने कहे वगैरा.

११ वितरागके सुत्रसे विपरीत श्रधना-परुपणा करे तो मिथ्यात्व. जैसे कित्नेक मतावलंबी कहते हैं की ये सृष्टी ब्रह्माने (ईश्वरने) बनाइ. एक वक्त ब्रह्माको ऐसी इच्छा हुइ के "एकोऽहं बहुस्यां" 'में एक हुं सो अब अनेक बन जाउं' अब प्रश्न उत्पन्न होता है की पहली अवस्थामें कुछ दुःख होय, तब दूसरी अवस्था धारण करने की इच्छा होती हैं. सो ब्रह्मा अकीले थे तब क्या दुःख था सो बहुत होनेकी इच्छा हुइ?

प्रतीपक्षीः-दुःख तो कुछ नहि था परंतु ऐसे ही कौतुक कीया.

पूर्वपक्षीः-कौतुक तो सुख के अभिलाषीको होता हैं. सो ब्रह्मा पहले थोडा सुखी था और पीछे से कौतुक कर जास्ती सुखी हुवा. जो प्रथम से ही संपूर्ण सुखी होय तो अवस्था क्यों पलटे? क्यों कि प्रयोजन विगर कोइ कार्य होता ही नही है. और इच्छा हुइ वो कार्य नही निपने वहां तक तो दुःख ही रहा.

प्रतीपक्षीः-ब्रह्मा की इच्छा हुइ के शिघ्र कार्य निपजता हैं.

पूर्वपक्षीः-ये बात तो बडे कालकी अपेक्षा से हे परंतु सुक्ष्म कालकी अपेक्षा से इच्छा और कार्य

एक समयमें न होवे. इच्छा और कार्य के कालमें अवस्य भिन्नता होती हैं. पहली इच्छा और फिर कार्य.

प्रतीपक्षीः—ब्रह्माको इच्छा होते माया उत्पन्न होती है. और वो कार्य निपजाती हैं.

पूर्वपक्षीः—ब्रह्माका और मायाका एक ही रुप हैं या अलग २?

प्रतीपक्षीः—अलग २ हैं. ब्रह्मा चिदानंद है और माया जड है.

पूर्वपक्षीः—तब चेतन से जड कैसे पेदा होवे? जडका और चेतनका कैसे संबंध जुडे? ये तो खंडन हुवा.

पूर्वपक्षीः—अच्छा; जीव ब्रह्मासे हुवा की मायासें?

प्रतीपक्षीः—ब्रह्मासे.

पूर्वपक्षीः—तो फिर मायासे क्या हुवा?

प्रतीपक्षीः—माया करके जीवको भर्ममें डाले है.

पूर्वपक्षीः—ब्रह्मा और जीव एक है या जुदा २ है? जो एक कहोगे तो ये बचन वावले के जैसा हुवा. क्यों की जीव के पीछे माया लगा के जीवको भर्ममें डाला और जीव ब्रह्म एक कहते हो तब तो ब्रह्मा भी भ्रममें पड गये. और जो अलग कहोगे तो

बेचारे जीवके पीछे माया लगाके, क्यों दुःखी किया? अब जो मायासे सरीरादि हुया कहते हो तो क्या माया हाड मांस रुधीर रुप होती हैं, के और कुछ? जो हाड मांस रुप होय तो उसके वर्ण गंध रस स्पर्स्यादी पुद्गल पहले थे के नवे हुये? जो पहले थे ऐसा कहोगे तो ईश्वरके पहले माया हुइ और पीछे हुये कहोगे तो अरुपी पदार्थ से रुपी कैसे होवे? और हुये ही कहोगे तो अरुपी ईश्वरमें ये कैसे टिके तथा अरुपी के रुपी कैसे हुये? इससे तो अरुपी की शाश्वतताका नाश होता है. आप तो ईश्वरको शाश्वत मानते हो तो इस हेतूसे ईश्वर सृष्टीका कर्ता कैसे होय?

और भी सृष्टी बनाइ तब सब अच्छी २ वस्तु बनाइ के अच्छी बुरी दोनो बनाइ? जो अच्छी २ बनाइ कहोगे तो बुरी किन्ने बनाइ? कोइ दूसरा भी कर्ता है क्या? और अच्छी बुरी दोइ बनाइ कहोगे तो बुरी वस्तु जेहर नर्क तथा दुःखदाइ प्राणी क्यों बनाये? ये अच्छे भी नही दिखते हैं और भक्ती भी नही करते हैं. तब कहते हैं कि अपने २ कर्मसे प्राणी नीचयोनीमें जन्म लेते हैं. यों तो हम भी कहते हैं कि सब प्राणी अच्छे कर्म से सुखी और बुरे

कर्म से दुःखी होते हैं. तब तो ईश्वर कर्ता कहां रहा? ऐसे ही श्रेष्टीके प्रलयके विषयमे भी वीचार होता हैं. कि, सृष्टी बनाके पीछा प्रलय क्यों किया? अच्छी लगी तब बनाइ और बुरी लगी तब नाश किया. तो फिर बुरी लगे ऐसी बनाइ क्यों. पहले से हि अच्छी और मजबूत बनाते तो बार २ बनाने की और विनाशने की महनत तो नही पडती! ईश्वर तो अनंत शक्ती वंत हैं; क्या नहीं कर सकता हैं?

अच्छा, जो ईश्वर संहार कर्ता है तो प्रलय काल आता है तब संहार करते है कि हमेशाही करते रहतें हैं? अपने हाथसे करते है या दूसरेके पास करातें हैं? जो अपने हाथसे हमेशा संहार करते कहोगे तो क्षिण २ में अनंत जीवोंका संहार होता हैं, अकेलें कैसे कर सके? और दूसरेके पास कराते कहोगे तो उनका नाम बताओ, और उन की इच्छासे संहार होता हैं ऐसा कहोगे तो क्या ईश्वर की हमेशा मार २ ऐसी ही इच्छा रहती हैं? और जो प्रलय काल की वक्त संहार करता कहोगे तो ईश्वरको एकदम ऐसा क्यों हुवा कि बेचारे सब जीवोंको एकदम मारडालं? जीवहिंसाका तो शास्त्रमें पाप फरमाते हैं.

और भी पूछते है कि प्रलय होगा तब सब जीव कहां जायेंगे? तब कहते हैं कि भक्त तो पर-ब्रह्ममें मिल जायेंगे और अन्य जीव मायामें मिल जायेंगे. अच्छा, प्रलय हुये पीछे माया ईश्वर से अलग रहगी के ईश्वर से मिल जायगी? जो अलग रही कहोगे तो माया भी ईश्वरवत् नित्य हुइ और मिल गइ कहोगे तो जो जीव मायामें मिले थे वो सब ईश्वरमें मिल गये! फिर मोक्षका उपाय यम–नियम किस लिये करना? क्योंकि प्रलय हुये पीछे तो सब ईश्वर रुप ही हो जायेंगे.

अच्छा; पीछी नवीन सृष्टी होयगी तब वोही जीव सृष्टीमें आयेंगे कि नवीन पैदा होयेंगे? जो वोही पीछे आनेकी कहोगे तो ईश्वरमें भी सब जीव अलग २ रहे थे. तो फिर ईश्वरमें मिले नहीं. और जो नये उपजे कहोगे तो जीवका अस्तीत्व नाश हुवा. तो फिर मोक्ष होनेका उपाय व्यर्थ हुवा. क्योंकि वहां भी गये पीछे कभी न कभी तो विनाश होयगाही.

और भी पूछते हैं, माया मूर्ती है कि अमूर्ती? जो मूर्ती कहोगे तो अमूर्ती ईश्वरमें कैसे मिली? और मूर्ती माया ईश्वरमें मिली तो ईश्वर मूर्ती हुवा या मूर्ती

मिश्र हुवा! और अमूर्ती कहोगे तो पृथव्यादि मूर्ती (द्रश्य–दिखते) पदार्थ मायासे कैसे हुये? इत्यादी बीचारसे ईश्वर सृष्टीका कर्त्ता हर्ता नही हैं. इसलिये अहो भव्यजनो! इस भ्रममें नही पडते पृथ्वी, पाणी, अग्नी, हवा, वनस्पति, पशु, पक्षी, मनुष्य, दिशा ये सर्व पदार्थोंको अनादि मानना. न इनका कोइ उत्पन्न कर्ता हैं और न कोइ विनाश कर्ता हैं. अंडा–पक्षी, बीज–वृक्ष, स्त्री–पुरुष, इनमें पहले कोन और पीछे कोन? सर्व एक एकसे पैदा होते हैं. इसलिये अनादि जाणना.

तब कोइ पूछेगें कि ये बिन बणाये कैसे हुये? तो हम उनसे पूछते हैं कि ईश्वर–या ब्रह्मको किन्ने बनाया? तब वो कहते हैं कि ईश्वर स्वयं सिद्ध हैं, अनादि हैं. तो हम भी कहते हैं जैसे आप ब्रह्मको स्वयंसिद्ध मानते हो तैसे हम भी पृथव्यादि पदार्थोंको स्वयंसिद्ध अनादि मानते हैं.

प्रश्न–जीवको सुखी दुःखी कौन करता हैं?

उत्तर–अपने २ कर्मसे होता हैं.

प्रश्न–कर्मका कर्ता कौन हैं?

उत्तर–जीव हैं.

प्रश्न–जीव कर्मका कर्ता हो के अशुभ कर्म कर जाण के दुःखी क्यों होता हैं?

उत्तर–अज्ञान करके. जैसे बहुत मनुष्य जानते हैं कि दारु पीने से मूर्ख बनना पडता हैं तो भी दारु पीते हैं. तैसे ही जीव अज्ञानपनेसे कर्म तो सुख के लिये करता हैं और दुःखी होता हैं ये सत्य श्रधना.

ऐसे ही प्राचीनकालमें इस पवित्र जैन धर्म के विषय विप्रीत परुपणा करनेवाले सात निन्हव हुये हैं, जिनका स्वरुप संक्षेपसे उववाइजी सूत्रमें कहा हैं. इन निन्हवोंमें से जो पहले निन्हव संपूर्ण काम हुये हुया कहना, इस श्रद्धा के धरणहार जम्मालीजी हुये हैं. खुद्द महावीर प्रभू के शिष्य जम्मालीजी बहुत शिष्यों के साथ अलग विचरते थे. एकदिन सरीरमें कुछ बीमारी होने से शिष्य से कहा कि मेरे लिये बीछोना करो. शिष्य बीछोना करने लगा तब उन्हने पूछा कि बीछोना हुवा ? शिष्यनें उत्तर दीया हां जी तैयार हैं. वो वहां आके देखे तो पूरा तैयार नहीं हुवा; तब जम्मालीजी बोले कि झूट क्यों बोलते हो ? अब्बी तो अधूरा ही है. पूरा होय तब हुवा कहना.

शिष्यने कहा—भगवानका फरमान है कि काम सुरु किया उसे किया कहना.‡ जम्मालीजी बोले. ये कहना झूटा है. बस इत्ना कहते ही उन्हने मिथ्यात्व उपार्जन करलिया और निन्हव ठेर गये. ये मर के किल्मीषी (नीच जात के) देव हुये.

श्री वसु आचार्य के शिष्य तिश्रगुप्त एक वक्त आत्म प्रवाद पूर्व की सझाय करते अधिकार आया—किसीने प्रश्न किया, हे भगवन् ! एक आत्म प्रदेश-को जीव कहना? भगवानने फरमाया कि नहीं; यावत् दो तीन संख्याते असंख्याते की पूछा करी तब भी भगवाने ना फरमाइ. तब फिर प्रश्न किया. तब भ-गवानने फरमाया—" जित्ने आत्म प्रदेश हैं उत्ने पूर्ण होवे तब ही जीव कहना " इस उपर से तिश्र गुप्तजी की श्रधना हुइ. " जो आत्माका छेला प्रदेश हैं वोही जीव हैं बाकी नही " ये उन्के प्रणाम जाण के उन्हको गुरुजीने बहुत समजाया परंतु उन्हने माना नही तब उन्हको गच्छ बाहिर किये. वो फिर-ते २ ' अमलकंपा ' नगर पधारे वहां ' सुमित्र '

‡ घरसे मुम्बाइ जाने निकला उसे मुम्बाइ गया ही कहते हैं.

श्रावक के घर गौचरी गये वो उन्हकी श्रद्धासे वाके-फ था. उस श्रावकने उन्ह साधूजीको एक चावल (भात) का दाना और एक दालका दाना वहरा (दे) के खडा हो गया. तब साधूजी बोले, क्यों भाइ हमारी मस्करी (ठठ्ठा) करता है? श्रावकने कहा, नहीजी, महाराज! मैंतो आपकी श्रद्धा मुजबही करता हुं. आप फरमाते हो एक प्रदेशी आत्मा तो एक प्रदेश की अवघेणा तो अंगुल के असंख्यातमे भाग है. तब ये आखा चावल और दाल कैसे खपे? रखे इसमें से भी परिठावणा (न्हाखना) पडे! इस लिये ये भी मेने डरते २ वहराया. इत्ना सुणते ही साधूजी की अकल ठिकाने आ गइ और बोले सच्च हैं "असंख्यात प्रदेशी आत्मा" तुमने हमारे पर गुरु जैसा उपकार किया. इत्ना सुण श्रावक नम-स्कार कर कहने लगा, धन्य है आप जैसे सीधी लेनेवालेको.

अषाडाचार्यजी अल्पज्ञ साधू की संपदा छोड मरके देवता हुये और ज्ञान लगा के देखा कि मेरी संप्रदायमें पाट चलानेवाला कोइ नही हैं उस वक्त

अपने मृत्युक सरीरमें प्रवेश कर शिष्यको पढाये, फिर आप सरीर छोड देवलोक गये. यह देख उन्ह के शिष्यों के मनमें वैम भरा गया कि जक्तमें साधू है कि नही, के सब के सरीरमें देवता ही आके रहते हैं! रखे अपन किसीको वंदना करेंगे तो अवृती देवताको वंदना हो जायगी. पाप लगेगा. इस विचार से साधूको वंदना करनी छोड दी.

गुप्ताचार्यजी के शिष्य रोहगुप्त साधू किसी वादी के साथ चर्चा करते उस वादीने जीव अजीव दो रासी की स्थापना करी. तब रोहगुप्तजीने एक सूतका डोरा पे बट चडा के रख दिया और उस से पूछा ये जीव के अजीव? जो जीव कहे तो सूत्र हैं और अजीव कहे तो हलता क्यों हैं? ये देख वादी चुप हुवा, तब रोहगुप्त बोले ये "जीवा जीव" की तीसरी रासी. यों उसें हरा के गुरुजी पास आये. उन्हको गुरुजीने बहुत ही समजाया की भगवानने दोइ रास फरमाइ हैं तेने तीसरी स्थापी सो मिथ्या है. इस लिये सभा समक्ष मिथ्या दुष्कृत दे. उन्हने मान के मरोडे अपना हट छोडा नही सो निन्हव हुये.

ऐसे ही धनगुप्ताचार्यके शिष्यने एक समयमें दो क्रिया लगे ऐसा स्थापन किया, जैसे नदी उतरते पेरमें शीत और शिरपे सूर्य ताप की उष्णता. परंतु यों नही जांना कि समय अति सुक्ष्म हैं. जिसमें दो क्रिया एकदम जीव कैसे वेद सके? भगवंतने तो जीव और कर्मका दूधमें घृत, तिलमें तेल, जैसा सम्बंध बताया हैं. और प्रजाप्त साधूने जीवको कर्म साप की काचली जैसे लगे ऐसी परुपणा करी और अश्वमित्रजीने नर्कादिक जीवोंका विपर्याय पणा (क्षिण २ में परावृत होते) बताये. ये गये कालमें हुये * सात ही निन्हवोंका स्वरुप जाणना.

अब प्रिय बान्धवों! जरा बीचारीये कि जिनोंने भगवंतके एकेक सामान्य वचनको ही विप्रीत (उलटी) रीतसे प्रगमाये वो नव ग्रीयवेगमें जाने जैसी जबर करनी करके निन्हव कहलाये; तो जो शास्त्रके पाठके पाठ उत्थाप देवे, शास्त्रको शस्त्र रुप प्रगमा देवे, अनंत भवोंका उद्धार होवे ऐसे बचनोंको

---

* किस्नेक ८ तथा ९ कहते हैं परंतु शास्त्रमें तो सात ही हैं.

अनंत भव वढानेवाले कर देवे, उन्हकी क्या गती होयगी इस्का ख्याल आप ही आपके हृदयमें करिये.

इस पञ्चम कालमें इस शुद्ध जैन धर्म की रचना देखके सखेदाश्चर्य पैदा होता है और किसी भी बातका निर्णय करनेमें बुद्धी चक्रा जाती हैं. देखीये एक 'चेइय' या 'चैत्य' शब्दने अब्बी जैनमें कित्ना गलबा उठाया हैं! कोइ कहते हैं चेइयका अर्थ ज्ञान है तो कोइ कहते है, नही, प्रतिमा हैं, और ठाणायंगजी सूत्रमें कहा है कि—"एएसीणं चउवीसाए तित्थयराणं चउवीसं चेइय रुंखा पन्नंता" यस्यार्थ —२४ तिर्थंकरके २४ 'चेइय' ज्ञान उत्पन्न होणेके २४ 'रुंखा' वृक्ष कहते हैं. इस पाठसे सिद्ध होता है कि चेइय शब्दका अर्थ ज्ञान ही होता है, और जो ज्ञान ही करते हैं वो "गुण सिला नाम चेइय" का अर्थ गुण सिला नामा ज्ञान करेंगे. क्यों कि ये तो बगीचेका नाम हैं. इसलिये जिस ठिकाणे जो अर्थ जुडता आवे सो हि किया जाय तो अच्छा लगे. परं एक पक्ष नही ताणना और भी कित्नेक कहते है "दयामें धर्म" तो दूसरे कहते हैं "आज्ञामें धर्म"

अब सोचीये, भगवान की आज्ञा और दया दो है क्या? भगवान कदापी हिंसा की आज्ञा देवेंगे क्या? तो फिर मत पक्ष क्यों ताणना?

कित्नेक रुषभ देवजीके वक्त की बनाइ हुइ वस्तु महावीरस्वामी तक रही बताते हैं और भगवतीजीके ८ शतक ९ मे उदेशेमें कृत्रीम वस्तुकी संख्याते कालकीही स्थिति कही हैं. ऋषभदेवजीको एक कोडा कोड सागर माठेरा हुवा. सो कैसे टीकी? भगवतीजीके ६ श. ७ उ. में भरत क्षेत्रमें बेताड पर्वत गंगा सिंधू नदी और ऋषभ कूटको ही शाश्वता बताया हैं और कित्नेक अन्य पर्वतको शाश्वता बताते हैं. और फिर कहते हैं कि ऋषभ देवजीके बारे में बडा था और छट्टे आरेमें छोटासा रह जायगा. तो क्या शाश्वती वस्तु भी कमी ज्यादा होती हैं?

शास्त्रमें तो १४ स्थानक समुछिम उपजने के बताये हे और कित्नेक मुखपे मुहपती बांधनेसे थूकमें समुछिम जीव मरते बताते हैं. तो ये १५मा स्थानक कहां से लाये?

भगवतीजी के १६ मे श० उदे० कहा हैं कि

हे गौतम सक्रेंद्र उघाडे मुखसे बोले सो सावद्य भाषा और ढके मुह से बोले सो निरवद्य भाषा. अब मुह-पर मुहपती न रहने से कित्नी वक्त उघाडे मुहसे बो-लाता होयगा सो बीचारीये.

गोमठ सारजीमें ४८ पूरुष ४० स्त्री और २० नपुशक यों उत्कृष्ट १०८ एक समयमें मोक्ष जाय ऐसा लिखा हैं. और इसी सूत्रको माननेवाले स्त्रीको मोक्ष की ना कहते हैं ! चरचा शतकमें मलीन वस्त्र-धारीको नग्न कहा है. और इसी सूत्रको माननेवाले वस्त्रधारी साधूको गृहस्थ जैसे कहते हैं !

कित्नेक स्थानकमें उतरनेवाले साधूको पासत्थे बताते हैं तो कित्नेक गृहस्थ रहे उस मकानमें रहने-वालेको जिनाज्ञासे विरुध बताते हैं. और न्याय देखो तो स्थानक क्या और मकान क्या निर्दोष शा-स्त्रोक्त मकानमें साधूको रहना चाहीये; स्थानक नाम मकानका ही हैं.

ऐसी २ अनेक विप्रीत परुपणाके जोगसे जै-नमत चालणीके छिद्र जैसा हो गया. एक ही पिताके पुत्र आपसमें मिथ्यात्वी बनते हैं. सच्च झूटका निर्णय

करना छोड आप की स्थापना और अन्य की कटतीमें ही धर्म मान रहे हैं. ये सब विप्रीत श्रधना परुपणाका ही कारण जाणना. सम्यक् द्रष्टी पुरुष इस झगडेमें नही पडते है.

१२ " धर्मको अधर्म श्रधे परुपे तो मिथ्यात्व "
श्री जिनेश्वर भगवानने तो दया मूल निर्वद्य सत्य धर्म फुरमाया हें.

सूत्रपाठः-से देमी जेय अतीता, जेय पडुप्पन्ना, जेय आगमिस्सा अरहंतो भगवंतो, ते सव्वेवि. एव-माइक्खंति, एवं भासंति, एवं पण्णवंति, एवं परुवेति-सव्व पाणा, सव्वे भूया सव्वे जीवा. सव्वेसत्रा, ण हंतव्वा, ण अज्जावेयव्वा ण परिघातव्वा, ण परिता वेयव्वा, ण उद्दवेयव्वा, एस धम्मे सुद्धे, णितिए, सासए, समेच्चलोयं खेयन्नोहिं पवेतिते, तंजहा उट्ठिएसु वा, अणुट्ठिए सु वा, उदरय दंडे सु वा, अणुवरयदंडे सुवा, सो वाहिएसु वा, अणोवहिए सुवा संजोगरए सुवा, असंजोग रए सुवा, तच्चंचेयं तहा चेयं अस्सिं चेयं पवुच्चइ.

आचारांगजी, प्रथम श्रुतस्कंध, अध्याय ४ उदेशो १

भावार्थः-सुधर्मा स्वामी जंबू स्वामीको फुरमाते हैं, जो तिर्थंकर भगवान गये कालमें हुये; वर्तमान कालमे हैं, भविष्य कालमें होयेंगे सो सर्व तिर्थंकरोंने ऐसा फुरमाया हैं, संदेह रहित कहा हैं, बारे प्रपंदामें परुपा हैं, फट. प्रगट. उपदेश दीया हैं कि " सर्व प्राणी

(बेंद्रीय तेंद्रीय चौरिंद्रीय) सर्व भूत (वनस्पति) सर्व जीव (पचेंद्री) सर्व सत्व (पृथवी, पाणी, अग्नी, वायू.) इन की हिंसा करनी नही, परिताप उपजाना नही, बंधनमें डालना नही, उपद्रव करना नही, दुःख देना नही, ये ही धर्म नित्य शाश्वता (सनातन) हैं" ये सर्व लोकके प्राणीयोंके खेद (दुःख) के जाणनेवाले, जिनेश्वरने फुरमाया हैं, किन्के लिये फुरमाया है सो कहते हैं, धर्मके सन्मुख हुये उनको, तथा नही हुये उनको, जो त्रिविध (मन वचन कायाके) दंडसे निवृते उनको, नही निवृते उनको, श्रावकको, साधूको, रागीयोंको, त्यागीयोंको, भोगीयोंको, और जोगीयोंको, एक सरिखा कहा है. ये हि अहिंसा धर्म यथातथ्य सत्य हैं.सुखदायी हैं.

ऐसे शुद्ध धर्मको कू गुरुके उपदेशसे तथा मिथ्यामोहके उदयसे अधर्म श्रधे और दूसरेको आराधने की मना करे सो मिथ्यात्व.

१३ "अधर्मको धर्म श्रधे परुपे तो मिथ्यात्व" उपर सूत्रानुसार धर्मके लक्षण कहे उससे विप्रीत, अर्थात् जहां छे ही कायका घमशाण हो रहा हैं, ख्याल तमासा ढोंग कन्यादान ऋतुदान प्रमुखमें धर्म माने तो मिथ्यात्व.

१४ "साधूको असाधू श्रधे परुपे तो मिथ्यात्व."

सतावीस गुण युक्त, ज्ञानी, ध्यानी, तपसी, क्षमावंत, वैराग्य वंत, जितेंद्री ऐसे उत्तमोत्तम गुणके धरण हार तिनको मत पक्ष करके द्वेष बुद्धी करके असाधू (संसारी वत्) या भगवानके चोर अपने जैनी भाइ कित्नेक कहते हैं. कित्नेक की ऐसी श्रद्धा है की अपने गच्छ या संप्रदायके जो साधू है सो ही सच्चे साधू और तो ढीले पासथ्थे या मेले कचोले है इन्को वंदणा नही करना आहार प्रमुख नही देना, अरे अलापसलप भी नहीं करना. ऐसी जो निंदा करते है, दान मान की अंतराय देते हैं वो मिथ्यात्व उपार्जन करते हैं. ये पुरुष जरा पांच चारित्र और छे नियंठेका ज्ञानपे उप्योग लगावे तो इत्ना पक्षपात न करे. जरा बीचारो; एक हीरा एक रुपे की कीमतका और एक क्रोड रुपे कीमतका परंतू है तो हीरा. उसको कांचके टुकडे कहेवे तो मिथ्यात्व. जिनोके मूल गुणका भंग न हुवा हैं, लौकीक व्यवहार शुद्ध अपने गुरु की आज्ञा अनुसार चलते है, वो किसी भी संप्रदायके हो उसका पक्ष न करते साधू मानना, यथा योग्य सेवा करना.

१५ "असाधूको साधू श्रधे तो मिथ्यात्व"– प्राणातीपातादिक अठारे पापको सेवे–सेवावे–अनुमोदनेवाले जिनाज्ञा विरुद्ध वर्तनेवाले मानो पत (लंबाइ चोडाइ के प्रमाण) उपांत या श्वेतरंग छोड लाल पीले काले इत्यादी अन्यरंग के कपडे रखनेवाले, आरंभ परिग्रह युक्त ऐसेको साधू श्रधे तो मिथ्यात्व. कित्नेक कहते हैं, पंचम काल हैं इसवक्तमें शुद्ध संजमी कोइ हेइ नही. कित्ना भी हुवा तो अपने से तो अच्छे. भगवानका भेष है. अपन तो भेषको वंदना करते हैं. परंतू भोले यों नही समजते हैं की जो बहूरुप्या–या–नाटकीया साधूका रुप बनालाया तो उसे भी साधू कहा जायगा क्या? कित्नेक कहते है की अब्बी शुद्ध मार्ग परुपे तो तीर्थका वीच्छेद हो जाय. वहा भाइ वहा! तुम जैसे कायर ही जैन सासन चला सक्के हो. अरे बन्धू! वीर प्रभूका हुकममें है की पंचम कालमें २१००० वर्ष लग मेरा सासन चलेगा; तो क्या ये आशीर्वाद कभी मिथ्या हो सकता है? कदापी नहीं. जिन सासनको चलानेकु अब्बी भी वडे २ गुणवंत मुनी [illegible] हैं, और होयगे, नास्ती कदापी नहीं

समजना. इसलिये असाधू—पाखंडीयोंको जो साधू श्रधे तो मिथ्यात्व समजना.

१६ "जीवको अजीव श्रधे तो मिथ्यात्व"—प्रजा प्राण जोग उप्योग हानी वृद्धी युक्त एकेंद्रीयादिक जीवको अजीव श्रधे, कहे की ये तो भगवानने मनुष्य के खाने के लिये पदार्थ उत्पन्न कीये, इसमें जीव कायका? जो मनुष्य इसका उपभोग नही लेते है वो बडे मूर्ख हैं, क्यों की ये सडके निरुपयोगी हो जायेंगे. उनसे पूछा जाता हैं की जो मनुष्य के भोगवनेको ही निपजाये है तो फिर कंटक कठिण कटूक बेस्वादी क्यों निपजाये? सर्व मनोज्ञ, निरोगी, सुखदाइ निपजाते तो यों भी समजा जाता की मनुष्य के लिये ही निपजाये हैं. क्या प्रभू सृष्टी के दुश्मन है की कंटक और जेहर निपजा के दुनियाको दुःखी करे? अच्छा, आपके लिये फलादि निपजाये है तो आपका भी भक्षण करने सिंह प्रमुखको निपजाये होयगे; क्योंकि जैसे आपको फलादिक प्यारे लगते है तैसे उनको भी मनुष्यका मांस प्रिय लगता हैं. वो आपको खाने आते है तब आप के बापको पूकारते हुवे क्यों जान छिपाते हो? अरे सिंह तो दूर रहा परंतू एक षटमल भी जो

चटका देवे तो तूर्त मार डालते हो. जैसा तुमारा प्राण तुमारेको प्रिय है वैसा उनका भी जाणना. भोले भाइ ! भगवानने किनको भी नहीं निपजाये, जैसे जैसे जिन्ने कर्म किये हैं वैसी २ उनको योनी प्राप्त हुइ है. वो हानी वृद्धि रुप चेतना लक्षण करके प्रत्यक्ष जीव है.

१७ " अजीवको जीव श्रधे तो मिथ्यात्व "– सूखा काष्ट निर्जीव पाषाण वस्त्र इनको जीवका आकार बनाया उसे जीव श्रधे. जैसे मूर्तीको साक्षात् तद्रुप मानना ये भी मिथ्यात्व हैं.

१८ " मार्गका उन्मार्ग श्रधे तो मिथ्यात्व "– जो शुद्ध निर्दोष सरल सत्य मोक्षका मार्ग ज्ञान दर्शन चारित्र तप दया दान सील संतोष क्षमा इत्यादिकको कर्मबंधका–संसारमें रुलानेका मार्ग बतावे, दया दान उत्थापे, डूबनेका खाता बतावे सो.

१९ " उन्मार्गको मार्ग श्रधे तो मिथ्यात्व "– सात दुर्व्यसनका सेवन, काम क्रिडाका करना, स्नान यज्ञादि संसारमें परिभ्रमण कराने के जो कामे उनको मोक्ष ले जाने के काम श्रधे तो मिथ्यात्व.

२० " रुपी पदार्थको अरुपी सर्दहे तो मिथ्यात्व" कित्नेक रुपी (साकारी–मूर्ती मंत) तो हैं परंतु

वायु कायादिक सुक्ष्म होनेसे द्रष्टी न आवे उनको तथा कर्म पुद्गल चौफरसी पुद्गलोंको अरुपी श्रधे तो.

२१ " अरुपीको रुपी श्रधे तो मिथ्यात्व "-धर्मास्ती कायादिक जो अरुपी है उन्को रुपी श्रधे तथा सिद्ध भगवंत अवर्न्ने अगंधे होके लाल वर्ण की स्थापना करे. तथा जो मोक्ष गये उनको पुनः संसारमें अवतार लेनेका कहें के ईश्वरने धर्म या भक्तका रक्षण करने दश तथा २४ अवतार लिये हैं. इत्यादि श्रधे तो मिथ्यात्व.

२२ " अविनय मिथ्यात्व "-जिनेश्वरके, गुरु महाराजके वचन उत्थापे, भगवानको चूक गये बतावे, साधू साधवी श्रावक श्राविका गुणवंत ज्ञानवंत तपस्वी वैरागी इत्यादि उत्तम पुरुषोंसे कृतघ्नी पणा करे, छिद्र देखता रहैं, निंदा करे, आविनय करे सो मिथ्यात्व.

२३ आशातना मिथ्यात्व-ये आशातना ३३ प्रकारसे होती है सो (१) अरिहंत भगवंत की. (२) सिद्ध भगवंत की. (३) आचार्यजी की [४] उपाध्यायजी की. [५] साधूजी की. (६) साध्वीजी की. [७] श्रावक की. (८) श्राविका की. (९) देवता की. [१०] देवी की. (११)

स्थीविर की. [१२] गुणधर की. १३ इस लोकमें ज्ञानादि गुणके धरनेवाले की, (१४) परलोकमें उत्तम गुणसे सुख पाये है उन की. [१५] सर्व प्राण भूत जीव सत्य की. [१६] काल की. (कालोकाल क्रिया नही समाचरे सो). (१७) सूत्र की. भगवानके बचन उत्थापे. (१८) सूत्र देव की अपनेको ज्ञानाभ्यास कराया उनकी. (१९) वाचना चार्य—अपनको शास्त्र की बाचना दी उनकी. इन १९ की अशातना करे, अवर्णवाद बोले, अपमान करे. या कोइ भी रीतीसे मन दुःखावे तो मिथ्यात्व लगे. और १४ ज्ञान की, सो. (२०) 'जंवाइद्धं' सुत्र आगे पीछे पढे. (२१) 'वच्चामेलियं' उप्योग रहित पढे. (२२) 'हिणखरं' कमी अक्षर कहैं. [२३] † 'अच्चक्षरं' जास्ती अक्षर कहैं. (२४) 'पयहीणं' पदको अपभ्रंस करे. (२५) 'विनय' [नम्रता] रहित पढे. (२६) 'जोगहीणं' पढती वक्त मनादि योग स्थिर न रखे. (२७) 'घोसहीणं' शुद्ध उच्चार नही करे. [२८] 'सुट्ठुदिन्नं' विनीतको ज्ञान न पढावे. २९ 'दुट्ठु पडीछियं' अविनीतको ज्ञान दीया होय. या अविनयसे ज्ञान

† एक अक्षर कमी जास्ती करनेसे भी मिथ्यात्व लगे.

ग्रहण कीया होय. (३०) अकालमें सझाय करी होए. (३१) काल की वक्त सझाय न करी होए. (३२) असझायमें सझाय करी होए. (३३) और सझाय (निर्मल वक्तमें) सझाय (शास्त्राभ्यास) नही कीया होए. ये तेंतीस काम करनेसे अशातना रुप मिथ्यात्व लगता है. मतलब ये है की, बने वहां तक गुणवंतके गुण ग्रहण करना. और किसीको दुःख नही देना.

२४. "अक्रिया मिथ्यात्व"—कित्नेक ऐसा कहते हैं की आत्मा है सो परमात्मा हैं. इसको पुन्य पाप रुप कुछ क्रिया लगती ही नही है. जो पाप पुन्यके भर्ममें पडके इस आत्माको ऋसाते है, अर्थात् इच्छित भोग नही देते है, भूख प्यास सहके दुःख देते हैं, वो आगेको नर्कमें जायगें इनको कहते है की वाहरे भाइ वाहा! तेने तो परमात्माको भी नर्कमें डाल दीया! परमात्माको ही भंगी भील नीच बनादीया! अच्छा आत्मा परमात्माको पोषते हैं वो तो दुःखी नही होते है. देखो भाइ परभव तो दूर रहा. परंतू इस भवमें भी जो आत्माको काबूमें नही रखते हैं, कूपथ्यका भक्ष कर्ता हैं, चोरी जारी इत्यादि कामों करते है सो

रोगी होके सड २ के मरता हैं, कैदमें पडते है, विना मोत मारे जाते हैं. इस भवमें नर्क जैसे दुःख भोगवते हैं. येइ आत्मा सो परमात्मा के लक्षण. और भी देखीये. आत्मा परमात्मा तो मुखसे कहते है और उनको काटके खा जाते है. अब ये गपोडी सब नर्कमें जायगे के आत्माको काबूमें रखनेवाले जायेंगे, इसका सुज्ञों वीचार कर मिथ्यात्व त्यागेगे.

२५ 'अज्ञान मिथ्यात्व'–सो मिथ्या मोहके उदय से उसे सब उलटा ही दिखे. अज्ञानवादी की तरह ज्ञान की उत्थापना करे. 'जाणें सो ताणे' ऐसे कू हेतू से अज्ञानको थापे सो मिथ्यात्व. इन पच्चीस मिथ्यात्वका त्यागन कर शुद्ध सत्य यथातथ्य जिनेश्वर के मार्गको स्विकारे सो सम्यक्त्वी होता हैं.

मिच्छा अणंत्त दोषा। मयडा दीसेइ नवी गुणलेशा। तहविय तंचेव जीवाही मोहंधंनी सेवंति ॥ १ ॥

अर्थः–मिथ्यात्वमें अनंत दोष प्रत्यक्ष द्रष्टी आते हैं तो भी मोहांध जीव इसे सेवन करत हैं इति आश्चर्य

॥ इति परमपूज्य श्री कहानजी ऋषीजीके संप्रदायके बाल ब्रह्मचारी मुनि श्री अमोलख ऋषिजी विरचित् श्री "जैन तत्व प्रकाश" ग्रंथका द्वितीय खंडका 'मिथ्यात्व' नामक तृतीय प्रकरण समाप्तम्॥

चारगतीसे तारे सो चारित्र. इस चारित्र के दो भेद (१) देशवृती और (२) सर्ववृती. इसमें से सर्व वृती जो साधूजी होते हैं उनका अधिकार तो १–२–३–४–५ प्रकरणमें हो गया, और देशवृती के दो भेदः–(१) सम्यक् द्रष्टी श्रावक. और (२) सम्यक्त्व युक्त वृत धारी श्रावक. इनमें से पहले सम्यक्त्वी श्रावकका बयान करते हैं.

प्रकरण ४ था.

सम्यक्त्व.

नत्थी चरित्त सम्मत्त विहूणा, दंसणेउ भइयव्वं ।
सम्मत्तं चरित्ता इं, जुगवं पुव्व च सम्मत्तं ॥
श्री उत्तराध्ययन सूत्र.

सम्यक्त्व विना चारित्र होता ही नही है. और सम्यक्त्वीमें चारित्र की भजना (हो या न हो). सम्यक्त्व और चारित्र इन

दोनुमें पहली सम्यक्त्व जाणना. अर्थात् सम्यक्त्व विन कुछ नही हैं. और सम्यक्त्व हुइ तो अनुक्रमे सर्व गुण की प्राप्ती होती है. देखीये–

ना हु दंसणिस्स नाणं, नाणे विणान होइ चरण गुणा ।
अगुणीस्स नत्थि मोक्खो, नत्थि अमोक्ख निव्वाणं ॥

सम्यक्त्व विन ज्ञान नही. ज्ञान विन चारित्र नही. चारित्र विन मोक्ष नही. मोक्ष विन कर्मसे (दुःख से) निवृते नही हैं. इसलिये सम्यक्त्व की आवश्यकता हैं. सम्यक्त्वी किसको कहना? जिस्का स्वरुप उत्तराध्ययनजी के २८ वे अध्ययन की १५ वी गाथामें इस मुजब कहा हैः–

तहियाणंतु भावाणं, सभावेण उवएसेणं ।
भावेणं सदहं तस्स, समत्तं तं वियाहियं ॥

सम्यक्त्व या समकित उसे कही जाती है की जो जाती स्मरणादि ज्ञान करके स्वतः–अपनी बुद्धीसे तथा तिर्थंकर या गुरु महाराजादिकके उपदेशसे चैतनीक तथा पुद्गलिक वस्तूका धर्म अधर्मका यथा तथ्य–सत्य तादृश्य स्वरुपको जाने और मोह कर्म की प्रकृतीयोका उपसम (छिपणा) होनेसे क्षायिक क्षयोपसमादिक भाव करके यथा तथ्य शुद्ध श्रधे,

परतीते, अंतःकरणमें रुचे, उसे सम्यक्त्व या सम-
कित कहीये.

सम्यक्त्व के प्रकार.

सम्यक्त्व ७ प्रकार की होती हैं. १ मिथ्यात्व. २ सेस्वादान. ३ मिश्र. ४ उपसम. ५ क्षयोपसम. ६ वेदक. ७ क्षायिक.

" मिथ्यात्व सम्यक्त्व. " § ये नाम पढके ही पाठक चौंक उठेगा कि मिथ्यात्वको सम्यक्त्व कैसे कही ? परंतू नयज्ञानसे बीचारनेसे सत्यता भाष होगी. नैगम नय वालेका बचन है. नैगम नय वाला एक अंसको पूर्ण वस्तू मानता हैं. तैसे कोइ कृत्य तो मिथ्यात्वके कर रहा हैं. और उस्के सत्तामें प्रकृतीयोंका उपसम हो गया जिससे उसने सम्यक्त्व को फरस ली, परंतू अबीतक मिथ्यात्वके लिंगका त्यागन किया नही, अंबडवत् तथा मरीयंच वत्. और एकेंद्रीमें भी केवलज्ञान पाणे वाले जीव बैठे

§ दिगंबर आम्नायके आचार्यका बनाया हुवा २४ ठाणोके थोकमें मिथ्यात्व और मिश्रको सम्यक्त्वमें गिणी है. अपणे साधमारगी भाइ उस थोकडेको प्रमाण भूत गिणते है.

हैं तथा अभवी साधूको भी ये ही गिणते है इत्यादी कारणके लिंये मिथ्यात्वको सम्यक्त्व चोइस ठाणेका थोकडा बणाने वाले आचार्यने गिणी हैं. *

२ "सेस्वादान सम्यक्त्व"—जैसे किसीने खीर सक्करका भोजन किया और उसको तूर्त वान्ती (उलटी) होनेसे पीछे उसे उस भोजनका गुलचट्टा (थोडासा) स्वाद रहता है. तैसे ये समकित पड-वाइ प्राणिको प्राप्त हो तूर्त चली जाती है. तब उसे उसका गुलचट्टा स्वाद रहजाता हैं. इस सम्यक्त्व पे दूसरा द्रष्टांत घडीयालका देते हैं. जैसे घडीयाल (झालर) वजे पीछे झणकार रहता हैं तैसे इस सम्यक्त्वी के झणकार के अवाजरुप किंचित धर्म पे प्रणाम रहते हैं. तीसरा द्रष्टांत जैसे आंब से फल टूटा और पृथ्वी पे आके नही पडा. ऐसे हि जीवरुप आंब, प्रणाम रुप डाल सम्यक्त्व रुप फल मोह रुप हवा चलने से टूटा और मिथ्यात्व रुप पृथवी पे नही पडा वांहा लग से स्वादान सम्यक्त्व जाणनी. इस्की स्थिती ६ आवलिका (अंगुली पे शिघ्रतासे डोरा

* और तब ही मिथ्यात्वको गुणस्थान (गुणका स्थानक) कहा हैं.

लपेटे उसका एक आंटा आवे सो एक आवलिका) और सात समय की होती हैं. इस सम्यक्त्वको एक जीव जघन्य एकवार और उत्कृष्ट पांचवार फरसता हैं.

३ "मिश्र सम्यक्त्व"—दो वस्तू के संयोगको मिश्र कहते हैं. जैसे दही और सकर के मिलाने से खटमिठा स्वाद हो जाता हैं. ऐसे ही मिश्र सम्यक्त्व-वालाका डामाडोल चित्त रहता हैं. जैसे कोइ ग्राम बाहिर मुनीराज पधारे ये सुन बहुत श्रावक नमस्कार करने जाने लगे, तब एक मिश्र सम्यक्त्वी ने उनसे पूछा, कहां पधारते हो? उनने कहा, महाराज के दर्शन करनेकु. वो बोला में भी चलता हुं. वो तैयार हुवा इत्नेमें कोइ कार्य प्रयोजन से वो अटक गया. सब लोक महाराज के दर्शन कर पीछे आये इत्नेमें वो भी फुरसत पाके दर्शन करने चला. रस्तेमें वो लोक मिले और कहने लगे, अब काहां जाते हो? महाराज तो विहार कर गये. यों सुण वो बोला, ठीक, गये तो जाने दो, जो मुजे वहां मिलेगे उनको ही नमस्कार कर आवूगा. साधूके भरोसे बाबा जोगी जो मिला उनको ही नमस्कार करके धर्म माना. ये मिश्र सम्यक्त्वका धणी जाणना. ये सम्यक्त्व एक जीवको जघन्य १ वक्त उत्कृष्ट ९ हजार वक्त आती

हैं. (इन तीनीको कित्नेक सम्यक्त्व की गिणतीमें नहीं लेते हैं. क्यों कि इनमें सम्यक्त्व की पूर्णता नही हैं. गुप्तता, रेसता, और मिश्रता के सबब से.)

४ " उपसम सम्यक्त्व "–सात प्रकृतीके उपसमाने (ढांकने) से होती हैं. सो ७ प्रकृति. अनंतानु बंधी [अंत नही आवे ऐसा निबड–कठिण बंध बांधे] चोक (क्रोध मान माया और लोभका) और तीन मोहनीय (१) मिथ्यात्व मोहनीय (२) मिश्र मोहनीय. (३) सम्यक्त्व मोहनीय. इन तीन मोहनीय की १. दृष्टांतसे समज देते है. जैसे किसीने चंद्रहास मदिरा (दारु) का सेवन किया उससे वो नशेमें बे शुद्ध होके माताको स्त्री और स्त्रीको माता कहने लगा. तैसे ही 'मिथ्यात्व मोह' वाला मोह कर्म की प्रबल छाकमें छकके दयामय धर्मको अधर्म जाणे और हिंसामय अधर्मको धर्म जाणे. * फिर

---

* दयावरं धर्म दुगंच्छ माणा वाहा वाहा धर्म पसंस माणा ।
एगंतपि सेवयंति असील. निघाण संजाती कहं सुराओ ॥

श्री सूयगडांग सूत्र.

दयामय प्रधान धर्म की दुगंछा (निंदा) करे. और जिहा छे कायका बध (हिंसा) होती है उस की प्रशंसा करके धर्म माने और स्वर्ग लोक की इच्छा करे परंतू उनके लिये स्वर्ग कहां ? नर्क तैयार है.

वो नशा कमी होनेसे कुछ शुद्धमें कुछ बे शुद्धमें होवे तब कभी स्त्रीको स्त्री कहता है और कभी माताको भी स्त्री कह देता है. ऐसे 'मिश्र मोह' वाला कभी अधर्मको अधर्म कहे और कभी धर्मको भी अधर्म कह दे. फिर वो नशा साफ उतर जाय, फक्त उस्की गुंगी (लेहर) रह जाय तब वो कितोलमें आके कभी स्त्रीको भी मा करके बोल देवें, किंचित् भुलसे. ऐसे 'सम्यक्त्व मोहनी' वाले अधर्मको अधर्म तो जाणे, परंतू देव गुरु धर्म नीमित जो हिंसा होती होए उसे अधर्म नहीं गिणे. फक्त अपणे निमिते हिंसा होवे उसे पाप गिणे. सो सम्यक्त्व मोहनी जाणनी. ये अनंतानुबंधी की चार प्रकृती और तीन मोहनीको सर्वथा उपसमावे. सत्तामें तो है परंतू उसे ज्ञान करके ढक देवे—दाब देवे, (जैसे अग्नी राखमें ढकते है तैसे) सो उपसम सम्यक्त्व. ये सम्यक्त्व एक जीव जघन्य १ उत्कृष्ट ५ वक्त फरसे.

५ 'क्षयोपसम सम्यक्त्व' पहली सात प्रकृती कही उनमें से चार (अनंतानुबंधी चोक) को तो खपावे (जैसे पाणी से अग्नीको बूजावे तैसे खपावे)

और तीन मोहनीको उपसमावे (ढांके) तथा पांच (४ पहली १ मिथ्यात्व मोह) खपावे. दो उपसमावे. तथा छे (५ पहली, छट्ठा मिश्र मोह) उपसमावे. उसे क्षयोपसम सम्यक्त्व कहीए. ये असंख्यात वक्त आवे.

६ 'वेदक सम्यक्त्व' पुर्वोक्त सात प्रकृतीयोंमें से चार खपावे दो उपसमावे एक वेदे (सत्तामें प्रकृतीका जो रस होवे उसे वेदे कहते हैं) तथा पांच खपावे एक उपसमावे और एक वेदे. उसे वेदक सम्यक्त्व कहीए. ये एकही वक्त आती है, क्योंकि जब जीव आगे कहेंगे उस क्षायिक सम्यक्त्वमें प्रवेश करता है तब उसके पहले समयमें ये समकित मिलती है और एक ही समय रहती हैं.

७ 'क्षायिक सम्यक्त्व,' पूर्वोक्त सात ही प्रकृतीयोंका साफ क्षय करने से जैसे अग्नी पाणी से बुजाणे से सीतल होती हैं तैसे वो शांत हुवे है. ये सम्यक्त्व आयें पीछे जावे नही. इस भव परभवमें साथ ही रही और जघन्य उसभवमें उत्कृष्ट पन्नरे भवमें तो जरुर मोक्ष प्राप्त करे.

इन सम्यक्त्वोंमें से मुख्यतामें तो तीन ही*

* और कित्नेक पांचही सम्यक्त्व मानते हैं जिन का स्वरूपः—

१ उपसम=इस संसार में अनादि कालसे परिभ्रमण करते हुये जीवको राग द्वेषके प्रणामसे उत्पन्न हुइ है उस ग्रंथी (गांठ) को भेदके अंत्तर मुहूर्त के काल प्रमाणे जो कर्मोंका उपसमपणा होता हैं उस वक्त होवे सो उपसम समकित, तथा—उपसम श्रेणीमें प्रवर्तता प्राणी जित्नी देर तक मोहको उपसमावे उत्नी देर उपसम सम्यक्त्व जाणना.

२ सास्वादान—उपसम सम्यक्त्व की प्राप्ती हुवे पीछे अनंतानु बंधीके चोकका उदय होनेसे उपसम सम्यक्त्वका वमन (उलटी) होवे फिर उसे उपसम्यक्त्व का किंचित स्वाद रह जाय सो सास्वादान सम्यक्त्व. यह सम्यक्त्व पडवाइ प्राणीको होती हैं.

३ चयोपसम—मोहका थोडा नाश किया और थोडा उपसमाया (ढांक्या) तब चयोपसम सम्यक्त्व होती हैं.

४ वेदक—चपक श्रेणी चडे हुये प्राणीको जो गुण प्रगट होवे सो वेदक सम्यक्त्व. यह मिथ्यात्व और

सम्यक्त्व ग्रहण करी जाती हैं १ उपसम सम्यक्त्व सो. (१) जैसे नदीमें पडा हुवा पत्थर पाणी के आवागमन से अथडा के गोल बन जाता है तैसे संसारी जीव अनंत संसारमें परिभ्रमण करते २ अनेक कष्ट छेदन भेदन ताडन तापन भूख प्यास इत्यादि परवस पणे सहन करते अकाम (निरर्थक) निर्जरा हुइ उस्के जोगसे उपसम समकित प्राप्त हुइ. (२) जैसे सूर्य बहुत बादलके समुहमें आनेसे तेज दब जाता हैं फिर वो किसी वक्त वायुके प्रयोगसे किंचित् उघाडा हो जाता हैं तैसे ही इस जीव रुप सूर्यके मिथ्यात्व रुप बादल कर ढका हुवा संसारके कष्ट रुप हवा लगनेसे कुछ दूर हुवे तब जरा किरण [ज्ञान रुप] प्रगटे तैसे उपसम समकित आवे, इसकी स्थिति अंतर मुहुर्त की हैं. [२] उपसमके उपर चडनेसे क्षयोपसम सम्यक्त्व की प्राप्ती होती हैं ये उपसमसे चडते और क्षपकसे उतरती बीचमें की समकित हैं (३) इस्के उपर चडते सात ही

मिश्र मोहके नाशसे होवे.

५ चायिक—तीन मोहनी और अनंतानु बंधीके सर्वथा नाश होनेसे चायक सम्यक्त्व प्रगटती हैं.

प्रकृतीका क्षय होते ही क्षायिक सम्यक्त्व की प्राप्ती होती हैं. ये आये पीछे मोक्षमें ही ले जाती हैं. और भी ३ प्रकार की सम्यक्त्व होती हैं. १ कारक. २ रोचक. ३ दीपक.

१ 'कारक सम्यक्त्व' वाला जीव अंतःकरण की शुद्ध श्रद्धा युक्त श्रावकके अणुवृत और साधूके महावृत निर्मल पाले यथा शक्त क्रिया आप करे और दूसरेके पास उपदेश आदेशसे करावे. ये सम्यक्त्व ५ मे ६ छटे ७ मे गुणस्थान वृती प्राणीमें पाती हैं.

२ 'रोचक सम्यक्त्व' श्री जिनेश्वरके बचनोंमें करणीपे रुची (अंतःकरणमें पुर्ण श्रद्धा) होवे. करणी करनेके मनोरथ भी सदा करे परंतू पूर्व जन्मके प्रत्याख्यानावरणी कर्मोंदयसे नवकारसी आदि पचखाण सामायिकादिक व्रत नही कर सके. तो भी श्रधना परुपणा शुद्ध रक्खे. चार तिर्थकी भक्ती करे. तन मन धन कर धर्म दीपावे और शक्ती तथा भक्तीसे दूसरेके पास धर्म करावे. कृष्ण महाराज, श्रेणिक राजा वत्.

(३) 'दीपक सम्यक्त्व' जैसे दीवा दूसरे पे

तो प्रकाश डालता हैं, परंतू उस्के नीचे तो अन्धारा ही रहता हैं. ऐसे कित्नेक दूसरेको शुद्ध सत्य सरल न्याय और रुचीकारक उपदेश देके धर्ममें लावे, मोक्ष पहोंचावे, परंतू आप—पोते कुछ भी नहीं करे. न उनको धर्म पे श्रधा वेठे. वो सदा निर्भय हुये चिंते की अव अपनको क्या डर? अपन तो साधू हो गये, अपनको कदी पाप लगता ही नही हैं. तथा किंचित् पाप लगा तो ही क्या हुवा? अपणे उपदेश से कित्ना उपकार होता हैं? इससे सव पाप दूर हो जाता हैं. ऐसे अभीमानी जीवको दीपक सम्यक्त्वी कहा जाता है. ये दुर्लभ वोधी तथा अ-भवी जीव जैसे हैः

अव मुख्यता से सम्यक्त्व के दो भेद कीये जाते है (१) निश्चय. और (२) व्यवहार.

१ "निश्चय सम्यक्त्व" अंतःकरणकी सम्यक्त्व के आभरणवाली प्रकृतीयोंका क्षय होने से जिनके अंतःकरण की शुद्ध श्रद्धा स्वाभाविक रीत से प्रगट हुइ वो निश्चयमें, देव तो अपनी आत्माको जाणे, क्योंकि भव्य आत्मा होगी तो ही ज्ञानादि त्रीरत्नका आराधन कर सकेगी. अभव्य आत्मा के धणीको

ज्ञानादि की आराधना कदापि न होती हैं. इसलिये देव आत्मा है. २ गुरु ज्ञानको जाणे क्योंकि ज्ञान के जोग से ही गुरुपद की प्राप्ती होती है. " विद्यागुरुणां गुरुः " सब गुरुका गुरु ज्ञान ही होता है. और ज्ञानी होगा सो ही रस्तेमें आयगा, शुद्ध बोध धारेगा. और ज्ञान से ही सम्यक्त्वादि गुण प्राप्त होता हैं. इसलिये गुरु ज्ञान. ३ धर्म सो शुद्ध उप्योगमें क्योंकि—जित्नी धर्म क्रिया—करणी जो करते हैं सो सब शुद्ध उप्योग के लिये ही करते हैं. और शुद्ध उप्योग से ही करी हुइ क्रिया धर्ममें गिणी जाती हैं. कर्म की निर्जरा करनेका मुख्य उपाय शुद्ध उप्योग ही हैं इसलिये शुद्ध उप्योग धर्म ये निश्चय नय से तीन तत्व जाणना, इनको अन्य की जरुर नही हैं. ये निजात्म गुण ही हैं. इसलिये कित्नेक निश्चयमें देव गुरु धर्म 'आत्मा' को ही कहते हैं. ये निश्चय सम्यक्त्ववाले की श्रधना जाणनी.

२ 'व्यवहार सम्यक्त्व' में तीन तत्व. देव अरिहंत अठारा दोष रहित. गुरु निग्रंथ, सतावीस गुण सहित और धर्म केवली भाषित निर्वद्य दया मय; तथा—

" व्यवहार सम्यक्त्व के ६७ बोल. "

(१) सर्दहणा चार (१) " परमथ संथोवा "

परम (उत्कृष्ट) अथ–अर्थ (जिससे आत्माका अर्थ सिद्ध होवे) ऐसे अर्थ–ज्ञानके जाण होवे उन्का संथोवा–संस्तव–परिचय–संगत करे. पर्मार्थका जाण होणा. [२] "सूदिठ परमत्थ सेवणा" सु (अच्छी) दिठ [द्रष्टी] परमत्थ [पर्मार्थके जाण होवे उनकी] सेवणा सेवा भक्ती करनी. अर्थात् एकांत पक्षी नही न्याय पक्षी स्याद्वादके माननेवाले. ज्ञान और क्रिया दोनुसे युक्त होवे ऐसे की संगत कर सेवा भक्ती करणी, क्योंकि जैसी संगत होती है, तैसें ही गुणो की असर अपणी आत्मामें होती हैं. देखीये, लींबके झाडके पास जो आंबका झाड होयगा तो उस लिंब की कडुवास उस आंबके फलमें भी आ जाती हैं. ए कूसंगती. और चंदनके झाडके पास बंबूलका झाड होता हैं. उसमें चंदन की संगसे चंदन की सुगंध आती हैं ऐसे ही सत संगतसे गुण और कु संगतसे दुर्गुण अवस्य ही हुवे रहते है. ये जाण सम्यक्त्वी पूरुष जो परमार्थके जाण होय उन सत पुरुषोंकी सदा संगत करे.(३)'वावणवज्जणा' अथवा सम्यक्त्वका वमन किया उनकी संगत नही करना. अर्थात् प्रथम वो जैन धर्मी थे और पीछेसे मिथ्यात्व मोहके उदयसे

पाखंडीयों की संगतसे जो धर्मभ्रष्ट हो गये—स्वमतको त्याग अन्य धर्मी बने उनकी भी संगत नही करनी. क्योंकि वो तो व्यभिचारिणी स्त्री की तरह सत्य धर्म की निंदा और मिथ्यात्व अधर्म की प्रशंसा ही करेगे. एकने दीवाला निकाला उसको पूछोगे तो वो हजारो दिवालीयोंको बतावेगा. ऐसे जो पडवाइ—‡सम्यक् भ्रष्ट हुवा हैं वो हजारो भ्रष्टको बताके उसको भी अपने जैसा बनाना चायगा. द्रष्टांत—जैसे एक अकलवंत मनुष्यको व्यभिचार करते राज पुरुषने पकड लीया और राजाके हुकमसे उसका 'नाक' काट देश निकाला दे दीया. उसने अपनी एब छिपानेको साधू नाम धरके लोगोंमें अनेक ढोंग कर कहने लगा की मुजे साक्षात् पर्मात्मा द्रष्टी आते हैं. लोगोंनें कहा कि हमारेको क्यों नही आते हैं? तब वो बोला की मेने अभीमानका बढानेवाला नाक काटडाला जैसे तुम भी करो तो पर्मात्माके दर्शन होवे. भोले गामडीयोंने उसकी बात कबूल

‡ इसलिये भगवतीजीमें कहा है की—चारित्र से भ्रष्ट हुवे सिद्ध हो जाय. परंतु सम्यक्त्व से भ्रष्ट हुवे कभी सिद्ध नही होवे.

कर नाक कटाया और पूछा की अब क्यों नही पर्मात्मा दिखते है? उसने कहा आवो गुरुमंत्र कानमें सुणाके प्रभू के दर्शन करावू. ऐसा कर उस्के कानमें कहा की मेरेको कुछ परमात्मा नही दिखते हैं. मैं तो मेरी एब छीपाने ऐसे करता हुं. तू जो मेरे जैसे नहीं करेगा ता सब लोक तूझे नकटा पापी कहके चिडावेगे. यों सूण वो बेचारा मनमें अती खेदित हो उसके तरह नाचने लगा और कहने लगा की मुजे साक्षात् परमात्मा के दर्शन होते हैं. ऐसे करके उसने ५०० नकटों की समुदाय जमा ली. एक शेहरका राजा इनका उपदेश सुण नकटा होणे लगा, तब जैनी प्रधान बोला भोले महाराजा! नाक काटने से कभी प्रभू दिखते हैं? राजा बोला की ये ५०० झूटे हैं क्यों? प्रधान बोला की झूटे हैं की सचे है, इसका निर्णय में कर देता हुं. ऐसा कह उन नकटे के महात्माको कुछ लोभ दे राजा और प्रधान एकंत मेहेलमें ले जाके जेरबंध (चाबुक) मारने सुरु किये. और बोले की सच्च बोल, परमात्मा दिखते है की नही? वो बोला "मारो मत, मैं सच्च कहता हुं. कोइ गुनेमें आने से मेरी नाक राजाने काट डाली तब मेरी

एब छिपाने मेने ये ढोंग चलाया हैं. हम सब झूटे हैं."

नकटे महात्मा समान कुगुरु भोले लोकोंको भरमाके कूमतमें डालते हैं. वो उस मतमें जाने के बाद इछित काम न होवे तब जगत की शर्म धर उदर निर्वाह करने उसमें ही पडे रहते है. कोइ प्रधान जैसा सुज्ञ मनुष्य पाखंडीयोंका पाखंड प्रगट कर आस्तिकोंको अधर्म से बचाते हैं. ऐसा जाण जो जैन मत की कठिण क्रियाका निर्वाह न होनेसे भृष्ट हो गये उनकी संगत नही करनी.

४ "कू दंशण वज्जणा" अन्य दर्शनीयों की संगत नही करना. अर्थात् जैंन छोड के अन्य मिथ्यात्व पाखंडी, एकांत पक्षी, हठग्रही, इत्यादिकसे विशेष सहवास (हमेशा सोबत) नही करना. क्यों कि ये जीव मिथ्यात्व से अनादि कालसे सेंदा हैं. इसलिये खोटी बात असर शिघ्र करती हैं. कित्नेक कू दर्शनीयों भोले जनको भरमाने उसके धर्म के ही बन जाते हैं. और कहते हैं की हमारा भी अहिंसा धर्म तुमारे जैसा ही हैं. तुमारे हमारे कुछ जास्ती फरक नही हैं. यों सुण भोलीये उनका सहवास स्विकारे. आसते २ उसको कहैं के अपने शोक

भोग निमित हिंसामें पाप हैं, परंतू धर्म निमित्त हिंसामें तो जरा ही पाप नही हैं. देखिये तुमारे साधू भी धर्मरक्षण निमित नदी उतरते है. यों सुण भोले भर्ममें फस जाते है और सुज्ञ होते हैं वो तो जबाब देते हैं की साधू कुछ नदी उतरनेमें धर्म थोडा ही समजते हैं. जो धर्म समजते होवे तो फिर प्रायछित किसके लिये ग्रहण करे? और भी वो तो अपणे संयमका निर्वाह करनेको अर्थात् हमेशा एक ही देशमें रहने से प्रतिबंध होके संयमका नाश होता हैं इससे अटके गाडेको चलाने के लिये अति पश्चाताप युक्त–यत्ना से नदी उतरते हैं. कुछ तुमारे जैसे हर्ष के धर्म जाण के थोडे ही उतरते हैं. और भी वो नदी उतर के भी आगे अनेक उपकार करते हैं. तुम इत्ना पाखंड बढाते हो इस से क्या उपगार होता हैं? अरे भोलीये! संसार निमित पाप करते हैं सो तो लगता ही हैं परंतू धर्म निमित पाप करने से ज्यादा पाप लगता है. देखीये.

अन्य स्थाने करोति पापं, धर्म स्थाने विमुच्यते ।
धर्म स्थाने करोति पापं, वज्र लेपं भविष्यति ॥

अन्यस्थान (संसार) में किये हुये पाप से मुक्त

होने (छूटणे) तो धर्मस्थानमें जाके धर्म क्रिया करते हैं और धर्मस्थानमें भी जो पाप करने लगे तो फिर उस्का छूटका कहां होय? अर्थात् कही नही. धर्मस्थानमें किया हुवा पाप बज्र लेप मुजब लगता हैं; "जैसे साधूका नाम स्थापन कर अनाचार सेवे तैसा". इत्यादि उत्तर दे अपनी आत्माको भर्म जालमें नही पटकते हैं. कू संग वर्जते हैं.

२ बोले 'लिंग तीन'. लिंग नाम व्यवहारिक प्रवृत्तिका हैं. ये व्यवहार प्रवृत्ति श्रवण करने से होती हैं. इसके दो भेद (१) अशुद्ध श्रवण से अशुद्ध और (२) शुद्ध श्रवण से शुद्ध. परंतु शुद्ध से अशुद्ध की असर जास्ती होती हैं. देखीये, अनेक वाद्य (वाजिंत्रों) के सहाय से हाव भाव कटाक्ष युक्त जब कोइ वैस्या या अन्य गायन करता हैं, उसका कामोत्तेजक शब्द श्रोताको कैसा आशक बना देता है? कि उस शब्दका रटण वो हर हमेश किया ही करता हैं. और परमार्थ के अंध बन जाते हैं. उस नृत्य के भावार्थमें जो निघा लगावे तो उसे कभी पीछा नही देखे. देखीये, मृदंग (तपले) में से क्या शब्द निकलता हैं? डुबक २ (डूबे २) तब सारंगीने प्रश्न

किया की कुण २ कुण २. (कोन २ डूबे) तब वैश्याने घ्रम के हातों से बताया की "ये जी भलाये" फिर डूबनेकु कोन सज्जन जावेगा? परंतु भोले प्राणी परमार्थ नही वीचारते. जैसे उसमें गरक होते हैं, ऐसे जो जिन वचनमें होवे तो कितना हित पहुंचे? भारे कर्मी क्या जाणे जिन वाणी के स्वादमें? लींब के कीडेको सक्करमें रखो तो वो मर जाता हैं एरो ही दुष्ट मती प्राणी जिन वाणीका नाम सुणते ही वल के भस्म हो जाते हैं. वो तो गाणा बजाणा नाचना कूदना इत्यादि ख्याल होवे वहां एक क्षिण के लिये सर्व रात्री पूर्ण कर देते हैं. इनसे उलट जो सम्यक द्रष्टी सत्य धर्म की रुचीवाले पुर्व जो श्रोता के गुण कहे उस गुण युक्त होवे वो तो (१) जैसे बत्तीस वर्षका योद्धा जुवान सोले वर्ष की रुप यौवन संपन्न कुमारिका हाव भाव कटाक्ष संगममें जैसा आशक होवे तैसे समकिती जीव जिनेश्वर की वाणीको श्रवण करते तथा सत धर्म अंगीकार करती वक्त उत्सुकता रक्खे. (२) जैसे जठराग्नी की प्रबलता वाला की जिससे क्षण मात्र क्षुधा सहन न होवे, और उसे कोइ अशुभोदयसे तीन या सातादिन भूखा रहनेका

काम पडे और फिर शुभोदयसे इच्छित रुचीवाला क्षीरादिक भोजन लाके उसके देवे वो उसे कैसा आदर पूर्वक ग्रहण कर भोगवे ? ऐसे सम्यक् दृष्टी जीव जिनवाणी श्रवण करती वक्त, व्रत ग्रहण करती वक्त, या आत्म कल्याणमें, उत्सुक होवे.

(३) जैसे कोइ योग्य वय बुद्धीका प्रबल विद्याभ्यास की अति उत्सुकता वंता उसे पढने की इच्छा होय और उसे शांत तेजस्वी उत्पातिक बुद्धीका धणी पंडितका योग मिलनेसे वो कैसे हर्ष उम्मेद की साथ विद्या ग्रहण करे ? तैसे सम्यक्त्वी जीव जिनेश्वर की वाणीको ग्रहण कर यथा तथ्य परगमावे. ऐसे श्रोता होते हैं तब ज्ञान प्रकासने की खूबी देखना चाहीये.

३ 'बोले' "विनय दश". विनय नाम नम्रता धारण करनेका है. ये नम्रता सब गुणमें अव्वल दरज्जेका गुण है. इस वक्तमें खुशामदे लोक राज वर्गीयोंके सामे, धनवंतके सामे, बलिष्टके सामे, नम्रता गरजके लिये करते हैं ये नम्रता कुछ नम्रता की गिणतीमें नही हैं. नम्रता तो उसे कही जाती है की जो गुणवंतके सामे निःस्वार्थ बुद्धीसे की जाय. ये

१० प्रकार की होती है.

१ अरिहंतका विनय. २ सिद्धका विनय. ३ आचार्यका विनय. ४ उपाध्यायका विनय. ५ स्थिवरका विनय. ६ तपस्वीका. ७ सामान्य साधूका. ८ गणका. ९ सिंघका और १० क्रियावंतका † विनय. ये दश जणेके विनयको विनय कहा.

४ बोले " शुद्धता तीन ":—अपना चैतन्य अनादिसे अशुद्ध वस्तुका प्रसंग तीन योगसे कर मलीन ही रहा हैं. परंतू अज्ञानी लोक उसेही शुचि मान रहे हैं. ये निश्चय समजो की रक्तसे भरा कपडा रक्तमें ही धोणेसे कभी पवित्र न होगा. उलटा जास्ती मलीन होता हैं. ऐसे ही आरंभके कामोंमें तीन ही योगको रमाके पवित्र होनेकी इच्छावाले जास्ती मलीन होते हैं. ऐसे ही अरंभीयोंको भले जाणनेसे गुण ग्राम करनेसे अभीवंदन करनेसे ही योग की

† इसमें महजब संप्रदाय पत्तका कुछ कारण नही हैं. जो अपणोसे ज्ञानादि गुणमें अधिक होए जिनका लोक व्यवहार शुद्ध होए जिनको बहुत लोग मान देते है ए तथा ज्ञान कमी होके क्रियाकी विशेषता मिलती होए तो उन्का भी विनय करना.

मलीनता होती हैं. और मलीन वस्त्र क्षारादिकसे धोनेसे शुद्ध होता है तैसे निरारंभी देवगुरु धर्मके (१) मनसे अच्छा जाणे [२] बचनसे अनुमोदन-गुण ग्राम करे. (३) कायसे नमस्कार करे, ये ३ शुद्धी.

५ बोले दुषण पांचः—पांच काम करनेसे सम्यक्त्वमें दोष लगता है. [१] संका, श्री जिनेश्वरके बचनमें संका लावे. अर्थात् ऐसा चिंतवे की, भगवानने एक बुंदमें एक घडेमें और समुद्रके पाणीमें अंसख्याते जीव कहै. ये बात कैसे मिले? सब असंख्याते कैसे होवे? परंतू यों नही विचारे की जैसे एकको भी संख्या कहते हैं, हजारको भी संख्या कहते है, और परार्धको भी संख्या कहते हैं. परंतू एकमें और परार्धमें कित्नी तफावत है? तैसे ही एक बुंदमें और समुद्रके पाणीमें तफावत समजणी. कित्नेक कहते एक बुंदमें असंख्याते जीवका समावेस कैसे हुवा? परंतु यों नही बीचारे के लाखक्रोड औषधीका अर्क निकालके तेल बनाया है! उस्की एक बुंदमें क्रोड औषधी है की नही? कृत्रीम पदार्थमें इत्ना समावेस होता है तो कूदरती पदार्थमें क्यों नही

होवे ? ऐसे पाणी की एक बुंदमें असंख्य जीव है. "संकाए नासे समत्त" जिन बचनमें संका लानेसे सम्यक्त्वका नाश होता हैं. ऐसा जाण कोइ जिन बचन अपने समजमें न आवे तथा अन्य मतीयोंके कू हेतू सुण मनमें शंका उत्पन्न होवे तो अपनी बुद्धी की खामी जाणना पण अनंत ज्ञानीके वचन सत्य जाणना. प्रभू कदापी असत्य न भाषे.

(२) 'कंखा' अर्थात अन्य मतके तापसादिकके ढोंग देख के भर्ममें न पडे की ये पंचधूणी तापते है, सरीर सुखाते हैं, नख बढाते हैं, उलटे लटकते है, अन्नका त्यागन करते हैं, फल कंद दूध इत्यादि खाके अपना गुजरान चलाते हैं, ये भी एक मोक्षका मार्ग हैं, ऐसा बीचार न करे. क्योंकी "मोक्ष कें रस्ते कुछ दो नही हैं". इन तापस का तपको भगवानने बाल (अज्ञान) तप किया हैं. क्यों कि इनको जीव अजीवका ज्ञान नही है. पुन्य पाप की क्रियामें नही समजते हैं. बंध मोक्षको नही जाणते है. देखा देखी ढोंग करते है. अनंत कायका भक्षण, और पंचाग्नी के विषे अनेक त्रस प्राणीयोंका मरण निपजाता है. उसपे इन्की निघा ही नही है,

इस अकाम कष्ट से कदापि किंचित लाभ होवे. अकाम निर्जरा होती हैं उस्के जोग से किंचित् अभोगीये (नोकर) देवता के सुख के भुक्ता होके पीछा जीवोंका वैर बदला देने अनंत संसार परिभ्रमण करते है. द्रष्टांत जैसे ऊंट हलवाइ की दुकान के पास लींडे कीये, उसमें से एक लीडे सकर की चासणीमें पड गया. उसे उठाके हलवाइने लडू के भाव बेच दीया, खानेवालेने मुखमें रक्खा, जहा तक सक्कर थी वहां तक स्वाद आया, अखीर तो लींडा ही. ऐसे ही बाल तापस तप प्रभाव से देवता के सुख भोगव लीया, परंतू रहे तो अनंत संसारी ही. तब ही नमीरायजीने फुरमाया है की अज्ञानी मास २ का तप निरंतर क्रोड पूर्व लग करे वो ज्ञानी के एक नोकारसी (कच्ची दो घडी के पचखाण) के तुल नही आवे. ऐसा जाण अन्यमत के ढोंग देख उस्को अंगीकार करने की सम्यक्त्वी किंचित ही अभीलाषा नहीं करे.

३ 'विति गिच्छा.' करणीका फलका संदेह नही लावे कि में संवर, सामायिक, त्याग प्रत्याख्यान, व्रत नियम करता हुं, अनेक उपभोगको

छोडता हुं, इस्का फल मुजे प्राप्त होगा की नही? के व्यर्थ काया क्लेश तो नही हैं? तथा अमुक धर्म क्रिया जास्ती करते हैं वो दुःखी दिखते हैं तो धर्म से तो दुःखी न हुवे है? तथा इत्ना धर्म ध्यान करते हैं तो भी उनको अब्बी तक धर्मका फल नही मिला तो मेरेको क्या मिलेगा? ऐसी शंका नही लावे. क्यों कि धर्म से कभी दुःख प्राप्त होता ही नही हैं. दुःख सुख तो पूर्वोपार्जित कर्मानुसार होता हैं. कदापि धर्म करने से प्राणी दुःखी निज़र आया तो यों जाणना कि इस्के पूर्व कर्म धर्म से डर उभरा कर बाहिर निकलने लगे. इस्की थोडे काल वेदना भोगव आगे अक्षय निरुप द्रव्य सुख की प्राप्ती होगी. जैसे औषध ग्रहण करते खराब लगती हैं आगे गुण कर्त्ता होती है ऐसे ही जाणना. पूर्व कर्म खपाके आगे निश्चे धर्म सुख रुप फल देगा. सर्व निष्फल हो जावो परंतु करणीका फल निष्फल कभी नही होगा. श्री उववाइ जी सूत्रमें श्री गौतमस्वामीने करणीके फल की पूछा करी है, तब श्री महावीर स्वामीने ऐसा प्रश्नोत्तर दीया है जो मनुष्य गाम—कोट सहित, आगर—सोने रुपे की खदान, नगर—जहां कर (हांसल) नही

लगे. णिगाम—बनीये बहोत रहै सो. राज्यधानी—राजा रहता होए. खेड—धूलका कोट होए. कवड—कसबा (बहोत बडा ही नहीं तैसे बहुत छोटा नहीं) मंडप—नजीक सेहर होए. द्रोणमुख—जलपंथ थलपंथ दोनु होए. पाटण—जहां सर्व वस्तू मिले. आश्रम—तापस रहते होए, संवाह—पहाड पे गाम होए. सन्नीवेस—गौपाल रहते होए. इत्यादि स्थानमें रहनेवाले मनुष्य अकाम—अभिलाषा विन—परवसपणे क्षुधा—तृषा सहे, स्त्रीका संयोग न मिलने से ब्रह्मचर्य पाले, पूर्ण पाणी न मिलने से स्नान न करे (मरुस्थल जैसे), सीत ताप मच्छर षटमल मेल परसीनादिकका उपद्रव सहे. परवस दुःख सहै. किंचित काल बहुत काल तक और इन के मरती वक्त सुभ प्रणाम आजावे तो मर के वाणव्यंतर देवमें दश-हजार वर्ष की उम्मरवाला देवता होवे. १

पूर्वोक्त ग्रामादिक के विषे रहनेवाले मनुष्य खोडा (लकडका) बेडी (लोहेकी) में केद कीये. गोडा लकडी दे गुडाये. रस्सी (नाडा) से जकड बंध बांधे. हाथ, पग, कान, नाक, जीभ, इंद्री तथा मस्तक काट डाले, आंख फोड डाले, दांत तोड डाले,

अंड फोड डाले, तथा तिल २ जित्ने सुक्ष्म सब सरीर के टुकडे २ कीये, खड्डेमें–भूवारेमें उतरे, झाड से बांधे, शिलापे चंदन जैसे घिसे, लकडी जैसे व सूलेसे छीले, सूलीमें भेदे, घाणीमें पीले, सरीरपे खार सींचे, अग्नीमें जलावे, कीचडमें गाडे, भूख प्यास से त्रसा के मारे. तथा इंद्रीयोंके वसमें मृग, पतंग, भ्रमर, मछी, हाथी, जैसे पडके मरे, पाप की आलोयणा (गुरुके आगे प्रकासे) विन मरे. खमाये विन मरे, पर्वतसे तथा झाडसे पडके मरे. पत्थर नीचे दबके मरे, हाथी आदिकके कलेवरमें प्रवेस कर मरे, जेहरसे मरे, शस्त्रसे मरे ये मरणसे मरते शुभ प्रणाम आजाय तो वाणव्यंतर देवमें १२ हजार बर्षका आयू पावे.

३ पूर्वोक्त ग्रामादिकके विषे मनुष्य स्वभावसे हि भद्रिक (निष्कपटी), स्वभावसे ही क्षमावंत–शीतल, स्वभावसे ही क्रोधादि कषाय पतली करी, विनीत, अहंकार रहित, ग्रुप्तेंद्री, गुरुकी आज्ञामें चले, मात पिता की सेवा भक्ती करे, मात पिताका हुकम न उलंघे, तृष्णा थोडी, आरंभ थोडा करे, निरवद्य कामसे आजीवीका चलावे. ये मरके वाण व्यंतरमें १४ हजार वर्ष आयू पावे.

४ पूर्वोक्त ग्रामादिकके विषे स्त्रीयों राजाके अंतेउरमें-पडदेमें रही हैं बहोत काल तक पतिका संयोग न मिले, परदेश पती गया होवे, पती मरे सील पावे, बाल विधवा हुइ, पतीकी अन मानेती हुइ, ऐसी स्त्रीयों माता की, पिताकी, भाइ की, पतीकी, कुलकी, घरकी, सासू की, ससरा की, इत्यादिक की लज्जा करके तथा इनके बंदोबस्त करके मनविन सील-ब्रह्मचर्य पाले, स्नान-मंजन-तेल मर्दन पूष्पमाल आभूषण इत्यादि सरीर की सोभा वरजी; सरीरपे मेल धारण कीये रहैं, दूध, दही, घी, तेल, गुड, मख्खन, दारु, मांस, इत्यादि स्वादीष्ट पदार्थ छोडे, अल्प आरंभ समारंभ कर अपनी आत्माको पाले, अपना पती सिवाय अन्य पुरुषोंको न सेवे, ये मरके वाण व्यंतर देवमें ६४ हजार बर्ष आयू पावे.

५ पूर्वोक्त ग्रामादिकके विषे मनुष्य अन्न और पाणी सिवाय कुछ नही खाय. कोइ तीन चार पांच जावत इग्यारे द्रव्य भोगवे. गायोंके पीछे फिरे, दान पुन्य करे, देवादिकका बृद्धका विनय करे, तप बृत धारे, श्रावक धर्म के शास्त्र सुणे, दूध, दही, घी, तेल, मख्खण गुड मदिरा मांस इनका त्याग करे, फक्त

सरसवका तेल भोगवे, ये मनुष्य मर के वाणव्यंतर देवमें ८४ चौरासी हजार वर्षका आयुष्य पावे.

६ पूर्वोक्त ग्रामादिक के विषे मनुष्य तापस, अग्नी होत्री, एक ही वस्त्र रखनेवाले, पृथवी सयन करनेवाले, शास्त्र पे श्रद्धावंत, कमी उपकरण रखनेवाले, कमंडल धारी, फळभक्षी, पाणीमें रहनेवाले, मट्टी सरीरको लगानेवाले, गंगानदी के उत्तर दक्षिणमें सदा रहनेवाले, संख बजा भोजन करनेवाले, सदा ऊभे रहे, ऊंचा दंड रख फिरनेवाले, म्रिगतापस, हथीतापस, दिशा पोखीतापस, वल्कल के वस्त्र पहरनेवाले, सदा राम २ कृष्ण २ कहनेवाले, बिल (खडे) में रहनेवाले, वृक्ष के नीचे रहनेवाले, फक्त पाणी पीके रहैं, वायूभक्षी, सेवालभक्षी, मूल आहारी, कंद-आहारी, पत्तआहारी, पुष्पआहारी, स्नान किये विन नहीं जीमे ऐसे, पंचाग्नी तापनेवाले, कठीण सरीर करनेवाले, सूर्य की आतापना लेनेवाले, धगधगते खीरे (अंगारे) पास सदा रहनेवाले, इत्यादि अनेक कष्ट सहन कर आयुष्य पूर्ण कर, ज्योतिषी देवतामें एक पल्पोपम उपर एकलाख वर्ष के आयुष्यवाले देवता होवे.

७ पूर्वोक्त ग्रामादिक के विषे प्रवर्ज्या (दिक्षा) धारी साधू, साधू की क्रिया तों पाले परंतु काम जाग्रत होवे ऐसी कथा करे, नेत्र मुखादिखकी कु-चेष्टा काम चेष्टा करनेवाले, अयोग्य निर्लेज बचन बोलनेवाले, वाजिंत्र पे गायन करनेवाले, आप नृत्य करे दूसरेको नचावे, इत्यादि कर्म करे सो मरके सों-धर्मा देवलोकमें कंद्रपी देवतामें एक पल्प उपर एक हजार वर्ष की उम्मरवाले देवता होवे.

८ पूर्वोक्त ग्रामादिकके विषे हजार परिव्राजक (तापस) होवे सो सांख्य मती, अष्टांगके जाण, योग साधनेवाले, कपिल के * किये शास्त्रको माननेवाले, व-

* श्री ऋषभदेवजी के साथ भरतजी के पुत्र मरीयंचने दिक्षा ग्रहण करी. पीछेसें साधु की अति कठीन क्रीया पालने असमर्थ हुवा. बुद्धि के जोगसे मन कल्पित भेष बनाया. साधु तो नीर्मळ वृतधारी हे और में मलिन हुवा, श्वेत वस्त्र छोड के भगवे वस्त्र धारण कीये. साधु के शीरपे तो तीर्थंकर भगवान की आज्ञा रुप छत्र हें, मेंने आज्ञाका भंग कीया. इस लीये वासका छत्र रख्खा. साधु तो मनादि त्रीदंड रहीत हे, और में तीन दंड युक्त, इस लीये त्रीदंड (लकडी)

नवासी, नग्न रहैं, हमेशा फिरते रहैं, तथा मठावलंबी रहके क्षमा सील संतोष धारे, नारायण की उपासना करे. १ कृष्ण. २ करकट. ३ अंबड. ४—परासर. ५ कणीय. ६ दीपायन. ७ देवपुत्र. ८ नारद. ये ८ ब्राह्मणके जातीके दंड धारी तापस, और १ सिलाइ २ शशी हर, ३ णगइ, ४ मग्रइ, ५ विदेही राजा. ६ राम, ७ बलभद्र ये ७ क्षत्री जातीके तापस इन तापसोंका आचार ऋजुवेद, यजुर्वेद, स्यामवेद, अथर्व

रख्खे, इत्यादि भेष बना के भगवान साथ फीरे परंतु समवसरण के बाहिर रह के उपदेश करे. कोइ दीक्षा लेनेका इरादा करे तो ऋषभदेव स्वामीको भेज देवे. एकद्रा बीमार हुवा तब वयावच करानेके लीये शीष्य की इच्छा हुइ, इतनेमें एक कपील नामक गृहस्थ आया. वो उनका उपदेश सुन ऊनका ही शीष्य होनेका आग्रह करने लगा. इसलीये उनको शीष्य बनाया. और मरीयंच आयुष्य पुर्णकर देव हुवा. शीष्यपे ममत्व होनेसें उसके पास जा साहाय देकर अनेक शास्त्र रचाये और सांख्य पंथ चलाया. वीष्णु शास्त्रमें ही भगवानका पुत्र मनु, मनुका पुत्र मरीयंच, और मरीयंचका पत्र कपील गुरु लीखा हे, ए वीष्णुमतकी उत्पत्ति जाणना.

वेद, इतीहास पूराण, निघंट इत्यादी शास्त्रों की रह-स्यके जाण, दूसरेको पढावे, गुरु गमसे धारण कीये हुये व्याकरणके जाण, शुद्ध उच्चारके करनेवाले, छे अंग शास्त्र साठ तंत्र शास्त्र गणित शास्त्रके पारं-गामी, अक्षरोंकी उत्पत्तिके जाण, छंद बनाने और ऊचारने समर्थ. ग्रंथका अन्वय (पद च्छेद) करे. ज्योतीषादि अनेक शास्त्रके पारंगामी. इनका धर्म दान देना, शुची रहना, तीर्थ करना, इत्यादि धर्म आप पाले और दूसरेको पालनेका उपदेश देवे. ये तापस फक्त गंगा नदीका जल दूसरे की आज्ञासे ग्रहण करे, छाणके वावरे, विन छाणा न कल्पे, अन्य जल ग्रहण न करे, ये तापस गाडी प्रमुख फिरते, घोडे प्रमुख चरते, और झाझ नाव प्रमुख तीरते वा-हाणपे नही बेठे. ये किसी प्रकारका नाटक महोत्सव नही देखे, ये अपने हाथसे वनस्पतिका आरंभ नही करे, ये स्त्रीयादि ४ विकथा नही करे. ये धातु पात्र न रक्खे, फक्त तूंबके मट्टीके पात्र रक्खे. ये फक्त पवित्री (मुद्रिका) सिवाय आभरण न रक्खे. ये गेरुके रंग वस्त्र रक्खे, दूसरा रंग न कल्पे. ये गोपीचं-दन सिवाय दूसरा तिलक छापा न करे. ऐसी क्रिया

कर आयुष्य पुर्ण कर उत्कृष्ट पंचमें देव लोकमें दश सागरका आयुष्य पावे. †

---

† कपिलपुरमें अंबड सन्यासीने श्री महावीरस्वामीका उपदेश सुण श्रावक के वृत धारण कीये. परंतू सन्यासीका लिंगका त्यागन नही कीया. कारण, मेरे महजब वालेको में इस भेषमें रहके जैन धर्मका तत्व बता के जैनी बना सकूंगा. ये अंबड सन्यासी प्रकृती के विनीत और भद्रिक (सरल) पणेसे बेले (छट) २ पारणा करे. और दोनु हाथ ऊंचे कर सूर्य की आतापना लेवे. यों सुभ अध्यवसायसे वरतते, वैक्रिय लब्धी (एक रुपके अनेक रुप कर लेवे) अवधी ज्ञान पेदा हुवा. ये आयूष्य पूर्ण कर पांचमे देवलोकमें गये. वांहां एक भव कर मोक्ष जायेंगे.

इस अंबड सन्यासीके ७०० शिष्य, उन्हाले (जेष्टमास) में कपिलपुर नगरसें विहार कर पुरीमंताल नगरको गंगा नंदीके पास होके जाते थे. रस्तेमें पाणी खुट गया और तृषा व्यापी तब पाणी लेनेको आज्ञा लेने वालेकी चोकस करने लगे. बहुत चोकस करनेसे कोइ नही मिला. तब आपसमें कहने लगे कि अब क्या करना ? परं सातसे मेंसे कोइ ऐसा न कहे कि

९ पूर्वोक्त गामादिकके विषे साधू होके आचार्यके उपाध्यायके कुलके गणके इत्यादी गुणी जन की निंदा करनेवाले, अपयशके करनेवाले, खोटे अध्यवसायके धणी, मिथ्या द्रष्टी पणा उपार्जके किल्मिषी देवता (जैसे मनुष्यमें भंगी की जात है तैसे देवतामें वो नीच हैं) में तेरे सागरका आयुष पावे.

१० पूर्वोक्त ग्रामादिकके विषे जो सन्नी पचेंद्री तिर्यंच जलचर—पाणीमें रहनेवाले, थलचर—पृथवीपे चलनेवाले, खेचर—आकाशमें उडनेवाले पक्षी, उनमें कित्नेकको अच्छे—निर्मल प्रणाम आनेसे ज्ञानावरणी

में आज्ञा देताहुं. क्यों कि अपने २ व्रतभंगका सबको डर, कोन गृहस्थ जैसा होय ? अखीर ७०० ही संन्यासी उस गंगा नंदीकी अती उष्ण वालूमें वालू का संथारा (बीछोणा) कर नमो थूणं से अरिहंत सिद्ध और गुरुको नमस्कार कर जाव जीव तक चारही आहारका त्याग रुप सलेषणा कर अठारे पापका जा जीव त्यागन कर आयुष्य पूर्ण कर पांचमे देव लोकमें १० सागरके आयुष्य वाले देवता हुवे. देखीये वृतकी दृढता. इनकी क्रिया आराधिक (परमेश्वरकी आज्ञामें) ग्रही हैं.

कर्म पतला पडनेसे जाती स्मर्ण ज्ञान प्राप्त होनेसे, पूर्व भवमें व्रत पच्चखाण धारन किये और उसका भंग करनेसे तिर्यंच हुवे इत्यादि वीचार आनेसे उसी गतिमें उस ज्ञानके पसायसे वो पंच अणुव्रत ग्रहण कर बहुत सीलादिक व्रत पाल, सामायिक पोसह † उपवासादि करणी कर, अंत अवसर सलेषणा कर, समभाव आयुष पूर्ण कर आठमे देवलोकमें अठारे सागरका आयुष्य पावे.

११ पूर्वोक्त ग्रामादिकके विषे अजीवका समण–गोसालाके मत वाले एक दो तीन जावत बहुत घरके आंतरेसे या विजली चमकनेसे भिक्षा लेवूगा इत्यादि अभीग्रह करनेवाले ऐसे साधू मरके बारमे देवलोकमें २२ सागरका आयू पावे.

१२ पूर्वोक्त ग्रामादिकके विषे साधू–महा अहंकारी, निंदक, मंत्र–जंत्र–तंत्र–औषध–जोतीष इ-

---

† प्रश्न–पाणीमें रहके सामायिकादि क्रिया कैसे बने? उत्तर–जैसे चालती गाडीमें बेठके एकासणा करनेसे निपजता है. तैसे जलचर जीव पाणीमें वृतका काल पूरा न होवे वहां तक सरीरको स्थिरीभूत निश्चल करके रहे तो वृत निपजे.

त्यादी करनेवाले, सरीर की विभूषा करनेवाले. बहोत दिक्षा पाल पाप की आलोयणा किये विन मरके १२ मे स्वर्गमें २२ सागरका आयु पावे.

१३ पूर्वोक्त ग्रामादिकके विषे निन्हव साधू है. १ काम पूरा हुये हुया कहना जमालीवत. २ एक प्रदेशी आत्मा माननेवाले तिसगुप्तवत्. ३ साधू है की नही ऐसे संदेहवाले अषाडाचार्यवत्. ४ नर्कादिक गतीमें छिन विछिन्न पणा माननेवाले. अश्वमित वत्. ५ एक समयमें दो क्रिया लगे. ऐसें माननेवाले गर्गाचार्यवत्. ६ जीव, अजीव और जीवाजीव ये तीन रासी माननेवाले गोष्ट महीलावत्. ७ जीवको कर्म सांप कांचली की तरह लगे हैं ऐसे माननेवाले प्रजापत वत्. ये ७ निन्हव (परमेश्वरके वचनके उत्थापक) असुभ अध्यवसायसे मिथ्यात्व द्रष्टी पणा उपराजे, कदाग्री, उत्कृष्ट क्रियाके प्रतापसे उत्कृष्ट नवग्रीवेकमें ३१ इकतीस सागरका आयुष्य पावे. ये पुर्वोक्त १३ कलममेंसे १० मी कलम छोड बाकी सब विराधिक जाणना. अर्थात् इनकी क्रिया भगवान की आज्ञाके बाहिर है; लींडेपे सक्करके ग लेप जैसी.

१४ पूर्वोक्त ग्रामादिक के विषे मनुष्य श्रावक आरंभ परिग्रह कमी करनेवाले, श्रुत–चारित्र धर्म यथा-सक्त ग्रहण करनेवाले, दूसरेको उपदेश आदेश कर धर्म ग्रहण करानेवाले, व्रत प्रत्याख्यान निरतीचार पालनेवाले, सूसील, सूवृती, सदा खुशी साधूकी भक्ती करनेवाले, कित्नेक तो अवृती सम्यक द्रष्टी, कित्नेक थूल प्रणातीपात वेरमणादिक वृत के धरनेवाले, कित्नेक १८ पाप से नही निवृते, कित्नेक निवृते, कित्नेक आरंभ समारंभ से निवृते, कित्नेक किसीको ताडन तर्जन वध बंधनका त्याग कीया, कित्नेक स्नान शृंगारसे निवृत विषय शब्द रुप गंध रस फरस पे राग भाव नही धरे, कित्नेकने सावद्य जोग के त्याग किये, कित्नेक जीव अजीवको पेछाणे, पुन्य पाप आश्रव संवर निर्जरा क्रिया, अधीकरण (कर्म बंध के कारण) बंध मोक्ष इनके जाण हुये, देव दानव मानव के चलाये हुवे भी धर्म से नही चले, जिनेश्वर के धर्ममें संका कंखा वितीगिच्छा; रहित प्रवर्ते. हाड २ की मींजी धर्ममें भीजी, नित्य शास्त्र सुणे, अर्थ ग्रहण करे, संदेह उत्पन्न हुये पूछ के निश्चय करे, फक्त एक जिनेश्वर के बचनको सार

जाणे और सब असार समजे, स्फाटिक रत्न जैसे निर्मल, अनाथ जीव के पोषणे खुले द्वार रखते हैं, राजा के भंडारमें तथा अंतेउरमें जावे तो भी अ-प्रतीत न उपजे, आठम चउदस पक्खी के प्रतीपूर्ण पोसा करनेवाले, साधू साधवीको आहार पाणी—सुखडी—पक्कान—मुखवास—वस्त्र—पात्र—कंबल—बीछो-णा—औषध—भेषध—पाट बाजोट—पराल—स्थानक इ-त्यादि उलट भाव से प्रतीलाभे (देवे) ऐसे गुणवंत आयुष्य पूर्ण हुये सलेषणा आलोयणा कर आरा-धिक हो १२ मे स्वर्गमें २२ सागरका आयुष्य पावे.

१५ पूर्वोक्त ग्रामादिक के विषे ऐसे उत्तम प्राणी है की जो सर्वथा आरंभ परिग्रहसे निवर्ते, महा धर्मी, धर्म ही जिनोंका इष्ट हैं, चारित्र धर्मको उत्तम रीत से पाले, अच्छा है जिनोका सीलव्रत—आचार, सदा हर्षायमान चित्तवंत, सर्वथा प्रकारे १८ पाप से निवर्ते, सर्वथा प्रकारे पचन पचावन पीटण.पीटावण ताडन तर्जन वध बंधन स्नान शृंगार शब्दादी विषय से निवृते इनको अणगार (साधू) केणा. ये पांच सुमती तीन गुप्ती युक्त जिनेश्वर के मार्गको आगे करके विचरे, शुद्ध भावमें आयुष्य पूर्ण कर कर्म

खपे तो मोक्ष जावे और पुन्य वधे तो सर्वार्थ सिद्ध वीमानमें ३३ सागरका आयू पावे.

१६ पूर्वोक्त ग्रामादिक के विषे उत्तम प्राणी वो सर्वथा प्रकारे काम भोग रागद्वेष स्नेह क्रोधादि कषाय से निवर्तें सो कर्म खपाके मोक्ष पधारे. अहो सम्यक्त्वी जीवों! देखीये, करणी के फल थोडे बहुत जैसा करेगे वैसा अवस्य पायेंगे. ये उववाइ सुत्रका फरमान हैं. इसमें विशेष इत्ना ही है की जो जिनेश्वर की आज्ञा मुजब करणी करेगा वो संसार घटावेगा. और आज्ञा के बाहिर की करणी करेगा उसको वो उत्ना ही फल तो जरुर देवेगी, परंतू संसार नही घटावेगी. ऐसा जाण वितराग की आज्ञा मुजब करणी कर अल्प संसारि होणा.

कित्नेक कहते हैं की करणीका फल हमारेको प्रत्यक्ष द्रष्टी क्यों नही आता हैं? तब उन्का चित्त समाधान करनेको प्रत्यक्ष ये द्रष्ट है की, औषध ग्रहण करते ही तुर्त आराम नही करती हैं, उसके नियमित दिन पूर्ण हुये और यथायोग्य पथ्य (परेज) पालेगा तब गुण देती है. ऐसे ही आम लगते है और हमेशा पाणी देते है. परंतू उस्का काल परिपक्व

होगा तब फल देता हैं. खेतमें बीज भी वाया हुवा कालांतर से फलीभूत होता हैं. इत्यादि अनेक द्रष्टांत से अवधी काल पूर्ण हुये करणी अवस्य फलीभूत होगी.

द्रष्टांत, किसीने किसी हकीमजीको पूछा की ताकाद कायसे आती हे? हकीमने कहा दूध पीनेसे. वो घर जाके खूब पेट भर दूध पी आया और पहेलवानों से बोला की आ जावो, क्या देखते हो? उस्के साथ लडाइ करी तब हार गया, पीछे क्रोधातुर हो के हकीम के पास गया, कहने लगा के, तूम झूटी दवाइ बताके दूसरे की इज्जत लेते हो. हकीम हंसके बोला, बाबा वस्तु गुण करते करेगी. अब किजीये हकीमने क्या झूटी दवाइ बताइ? ऐसे ही जिनेश्वरने जो करणी के फल कहे हैं वो अवस्य मिलेगे. ऐसा निश्चय रक्खो.

४ "पाषंडी की प्रशंसा":–पूर्व जो पाखंडीयोंका वर्णन किया है, उन पाखंडीयोंमें कोइ विशेष पढा हुवा या क्रियावंत, भक्तीवंत, इत्यादिको देखके प्रशंसा नही करनी, कि क्या पंचधूणी तापते हैं? कैसे भगती करते है? क्यों कि उनकी क्रिया और भक्ती

सारंभी है. जो उस्की प्रशंसा करता है तो उस्को उस आरंभका हिस्सा आता हैं. मिथ्यात्वीयों की प्रशंसा करनेसे मिथ्यात्वका बढानेवाला होता है. पतीवृता स्त्री अपने पतीको छोड अन्य पुरुष कैसा भी होय तो उस की प्रशंसा न करे, तैसे जाणो.

५ " पाखंडीका संस्तव परिचय "—पाखंडी—मिथ्यात्वीयों की सदा संगत नही करनी; क्यों कि 'सोबत जैसी असर' अवस्य होती हैं. निमक और दूधका संयोग होनेसे दूध फटके निकम्मा हो जाता है. न वो दूधमें और न वो छाछ (मही) में रहता हैं. तैसे ही मिथ्यात्वीयोंका हमेशा परिचयसे समद्रष्टी की विप्रीत श्रद्धा हो जाती हैं. वो दोनुमें न रहता हैं.

ये सम्यक्त्वके ५ दुषण कहे. इनको विशेष सेवनेसे सम्यक्त्वका नाश होता हैं. और थोडा सेवनेसे सम्यक्त्व मलीन हो जाती है. ऐसा जाण विवेकी सम्यक् दृष्टी प्राणी इन पांच दोषसे सदा दूर रहै. सम्यक्त्व पाले.

६ बोले, " लक्षण पांच ":—जैसे पुन्यवंतको सत्य वर्तणुकादि शुभ गुणसे पेछाणा जाय ऐसे स-

म्यक्त्वीको भी पांच लक्षणसे पेछाणे जाते हैं. (१) 'सम' शत्रू मित्र पर या शुभाशुभ वस्तू पर सम भाव रक्खे. सम्यक्त्वी ऐसा बीचारे की "मितिमे सव्व भूएषु, वैरमझं न केणइ" इस विश्वके सब जीव मेरे पर्म मित्र है, सत्रू कोइ नही हैं. हे प्राणी! तूं ही तेरा स्वजन है और तूं ही तेरा मित्र हैं, जरा ज्ञान द्रष्टीसे वीचार, जो तेरे शुभ कर्मका जोर है तो तेरे सब स्वजन हो रहैंगे. और अशुभ कर्मका उदय हुवा तो, तेरे प्रिय स्वजन ही दुशम्मण हो जायगे तो दूसरे की क्या कहना? तथा अनाथी निग्रंथने कहा हैं "अप्पा कत्ता विकत्ताय, दुहाणय सुहाणय अप्प मित्तम मित्तच, दुप्पठीओ सुपठिओ" अर्थात् अपणी आत्मा ही अच्छे की और बुरे की कर्ता हैं. अपनी आत्मा ही सुख दुःख की कर्ता हैं. अपनी आत्मा ही शत्रु और मित्र है. और अपनी आत्मा ही सु-प्रतिष्ट और दुप्रतिष्ट हैं. सो देखीये, जो अपन स-बसे नम्रतासे मधुरतासे मिलके रहे और निज आत्मा का माल बचाके किसीका चित्त नही दुःखाया तो सब अपने स्वजन ही रहते है और कठिणता कटूबचन तथा दूसरेको हाणी पहोंचे ऐसा वर्तन रखनेसे सर्व

दुश्मन बन जाते हैं. ऐसा जाण प्राणी सदा समभावमें रमण करे. यों रहते ही कोइ दुःख उपजावे तो ऐसा बीचार करे कि ये मेरे पूर्व कृत कर्म उदय आये है, जो में समभाव रख सहन करुंगा तो इन उदय आये कर्मों की निर्जरा होगी और नवीन कर्मका बंध नही पडेगा. और विषम भाव धारण करुंगा तो उदय आये सो तो भोगवने ही पडेंगे. रोनेसे पश्चाताप करनेसे या सराप देनेसे कुछ कर्म दूर नही होते है, उलटा नवीन कर्मोंका बंध होता हैं. और "कडाण कम्मा न मोख अत्थी" अर्थात् बंधे हुये कर्म भोगवे विन छूटका नही. ऐसा जाण कर्म समभावसे भोगवे. ऐसे ही काइ शब्द रुप गंध रस स्पर्शादिकके शुभा शुभ पुद्गलका संजोग बने तब उसपे भी अनुरक्त न होता यों बीचारे कि पुद्गलोंका स्वभाव क्षणभंगूर है, जो पुद्गल अबी अपनको मनोज्ञ लगते हैं वो ही क्षणमें, या स्वभाव पलटे अमनोज्ञ लगने लगते हैं. देखीये भोजन तूर्तका तैयार हुवा अच्छा लगता हैं. और वो ही उलटी होनेसे पीछा निकल जाय तथा कालांतरसे बिगड जाय तब खराब लगणे लगता हैं. ऐसे ही मिट्टी पत्थर यों पडे

हुये खराब लगते है, और कोरणीयादिक कर उसे योग्य ठीकाणे लगानेसे अच्छे लगने लगते हैं. जिनकी प्रणीतीमें फरक पडे उनपे रागद्वेष करना ही व्यर्थ हैं. ऐसी तरह बीचारसे सर्व शुभा शुभ बनावोंमें समपणा रक्खे.

(२) 'संवेग'-सम्यक्त्वी सदा अंतःकरणमें संवेग (वैराग्य) भाव रखे.

शरीर मनसा गन्तु वेदना प्रभवाद्भवात् ।
स्वप्नेन्द्र जाल सङ्कल्पाद्भीतिः संवेग उच्यते ॥

अर्थात् संवेगी ऐसा बीचारे की "संसारंमी दुःख पउरय" ये संसार शारीरिक (देह सम्बंधी रोगादिक) और मानसिक (मन सम्बंधी चिंता) इन दोइ दुःखों करके प्रतीपूर्ण भरा हैं. किंचित् ही जगा खाली नही हैं. इसमें तू सुख की अभिलाषा करे सो तेरेको सुख कहांसे प्राप्त होवे? तथा जो पुद्गलोंका संयोग मिला है सो भी कैसा है कि यथा द्रष्टांत, किसी क्षुधा पिडित भिक्षुक बजारमें हलवाइ की दुकान पे अनेक पक्वान देख बीचार करतां २ रसोइ बनाने कन्डे (छाणे) लायाथा उसको सिर नीचे दे सो गया. उसे स्वप्न आया कि

इस गामका राजा मरनेसे में राजा बन ऊंचा सिं-
हासन पे बेठ छत्र चमर धराने लगा और मिजवानी-
में घेवर प्रमुख अत्युत्तम पक्वान जीम शयन कीया.
इत्नेमें ही कुछ अवाज होनेसे जाग्रत हो देख २
रोने लगा. ग्रामजनके पूछने से उत्तर दीया की
मेरा राजद्वार सुख सायबी कहां गइ? और अबी
मेंने इच्छित भोजन किये थे सो भी कहां गये? ये
कन्डे ही रह गये. लोक कहने लगे ये दीवाना हो
गया, सो बकता हैं. ऐसे ही ये मनुष्य जन्म रुप
सायभी स्वप्न के संपत मिली हैं, इस्को गुमा देने से
दिवाने की तरह रोना पडता है. मतलब ये संपत
सब स्वप्न या इंद्र जाल, गारुडी के ख्याली जैसी
प्रत्यक्ष दिखती हैं. ऐसे दुःख सागर अथिर संसारमें
लुब्ध न होवे. सदा कर्म बंध के कारणों से डरता
रहैं. इनको छोडने की सदा अभीलाषा रक्खे, सो
सम्वेगी जाणना.

(३) 'निर्व्वेग' अर्थात् समकिती आरंभ
और परिग्रह से यथाशक्त निवृते. आरंभ परिग्रहको
महा अनर्थका कारण, दुर्गतीका दाता, जन्म मरण-
का बढानेवाला, पापका मूल, क्षमासील संतोषमें

दावानल समान, मित्रताको तोडनेवाला; वैर विरोधका बढानेवाला, ऐसा खोटा जाणे और दिनादिन कमी करे, तथा पंच इंद्री के विषय पूर्ण मिले है उनमें लुब्ध न होवे, दिनोदिन घटावे, सर्वथा छोडने की इच्छा रक्खे.

(४) "अनुकंपा"—सम्यक्त्वी प्राणी दुःखी जीवोंको देख अनुकंपा करे.

सत्व सर्वत्र चित्तस्य दयार्द्रत्वं दया नवः ।
धर्मस्य परमं मूल्मनुकंपा प्रवक्ष्यते ॥

जगतवासी सर्व जीव सुखसे जीवीतव्य के अभीलाषी हैं. दुःख प्राप्त होनेसे घबराते हैं. और दुःख प्राप्त हुये, उस दुःखमें से कोइ छुडानेवाला मिला जाय तो वो हर्ष मानते हैं. इसलिये सम द्रष्टी प्राणी दुःखी जीवों की अनुकंपा ला के, उनको उस दुःख से अवस्य छुडावे. ये अनुकंपा ही धर्मका मूल हैं. जिनके हृदयमें से अनुकंपाका नाश हुवा हैं, उनके सर्व गुणका नाश हुवा हैं, कित्नेक अनाथ जीवोंको बचानेमें पाप बताते हैं. कहते हैं की वो जीवेंगे वांहातक पाप करेंगे, उसकी क्रिया उस छुडानेवालेको आयेगी. कित्नी दीर्घ द्रष्टी ! तथा पइसे

से जो अनर्थ होगा उस्का पाप लगेगा. तब तो साधूजी भी यों बीचारेंगे की हम किसीको दिक्षा देवेगें और वो मरके देवता होगा, देवांगना के साथ क्रिडा करेगा सो पाप साधूजीको ही लगेगा! इस बीचार से तो सर्व धर्म कार्य करना बंध हुवा! ऐसी कू कल्पना से जो घटमें से अनुकंपा निकाल कठोर चित्त करते हैं वो महा वज्र कर्म बांधते हैं; ऐसा उपदेश सुण अनुकंपाका त्यागन नही करना. बने वाहां लग बीचारे जीवोंको अभयदान देना. समक् द्रष्टी कषाइ आदि दुष्ट प्राणीयों की भी अनुकंपा करे कि ये बीचारे हिंसा करके कर्म बांधते हैं. ये कैसे भोगवेगे? उसको उपदेशादि साह्य देके हिंसा बंध करानी. जो न छोडे तो द्वेष न करे. सर्व जीवको अपनी आत्मा समान लेखे. "आत्मवत् सर्व भूतानी पस्येत्" जैसे अपने कुटंबको दुःखी देख उस दुःख से उनको मुक्त करने के उपाय करे, तैसे ही समद्रष्टी प्राणी सब की दया करे. दान से भी दया ज्यास्ती हैं. क्यों कि धन खुटने से दान देना बंध पड जाता हैं. परंतू दया—अनुकंपाका तो अखूट अंतःकरणका सरणा हैं. ये सम्यक् द्रष्टी के हृदयमें

हमेशा झरता ही रहता हैं. ये श्रेष्ट हैं.

(५) 'आसता'—श्री जिनेश्वरके मार्गपे या बचनपे पक्की आसता रक्खे. एक जिनेश्वरके मार्गको सच्चा जाणना. द्रढ श्रद्धा रखनी. देवादिक कोइ धर्मसे चलायमान करे तो चलायमान न होवे. अरणीकजी, काम देवजी कि तराह द्रढता रक्खे. देहका विनास होते भी धर्मको झूटा न जाणे. क्यों कि देहादिक अनंत वक्त मिली, परंतू धर्म मिलना मुशकल हैं. इस लिये सरीरसे ज्यादा धर्मका यत्न करना. बोलते है "आसता सुख सासता" आस्तासे ही मंत्र जंत्र औषध फली भूत होता हैं. इस वक्त दान धर्म क्रिया कष्ट करनेवाले बहुत हैं परंतू द्रढ आसता वाले बहुत थोडे है. जिससेही महा प्रभाविक नवकार तथा क्रियाका प्रत्यक्ष फल किंचित द्रष्टी आता हैं. बहुत धर्मीजन तो गोबरके खीले जैसे जिधर नमावे उधर नम जावे और नरबदाके गोटे की जैसे जिधर गुडावे उधर गुड जावे. ऐसे बहुत है. इसालिये धर्मी होके दुःख पाते हैं. बहुत धर्म कर यथा तथ्य फल प्राप्त नही कर सकते हैं. ऐसा जाण सम द्रष्टी प्राणी यथा शक्त करणी करे परंतू पूर्ण आसता

रखके पूर्ण फल लेवे. इन पांच लक्षणों कर सम्यक्त्वी प्राणीको पेछाणना.

७ " मे बोले भूषण पांच ":—जैसे मनुष्य उत्तम वस्त्राभूषण कर सोभता हैं, तैसे सम द्रष्टीके पांच भूषण है. (१) "जैन धर्ममें कुशल होवे" जैसे चालाक मनुष्य संसार व्यवहारके हीसाबमें तथा लेखन कलामें, वेपारमें, भोजन वस्त्रादि निपजानेमें, भोगवनेमें कैसे चालाकी वापरता हैं? किसीके छल छिद्रसे ठगाता नही हैं, तैसे समकिती प्राणी धर्म कार्यमें हुस्यारी रखवे, अनेक नवी युक्तीयों धर्म वृद्धीकी नीकाले, बहुत शास्त्र थोकडे गंगीय अणगारादिकके भांगेका जाण होवे. अनेक नवीन तपमें क्रियामें उपदेशमें कला कौसल्यता बतावे, पाखंडी अन्य मतावलंबी अनेक हेतू कूतर्क करके ठगे तो आप ठगाय नही, उत्पात बुद्धी करके उनको निरुत्तर करे. सत्य धर्म फेलावे.

(२) "तीर्थ की सेवा करे" संसार रुप समुद्रके पेले तीर [किनारे] पर मोक्ष है. उस्को प्राप्त होवे सो तीर्थ. ये तीर्थ चार हैं. साधू, साधवी, श्रावक, श्राविका. इनकी यथायोग्य सेवा—भक्ती करे अर्थात्

साधू—साध्वी पधारे तब यत्नासे सन्मुख जावे, गुण-गान करते स्वग्राममें प्रवेश करावे, यथा योग्य मकान (स्थानक) उतरनेको देवे या दिलावे, आहार पाणीके लिये साथ फिर दलाली करके दिलावे, औषध वस्त्र जो वस्तू की खप होवे सो आपके पास होय तो देवे, नही तो दलाली कर दिलावे, नित्य व्याख्यान आप सुणे दूसरेको सुणनेको लावे, उपदेश धारे, यथा शक्त व्रत प्रत्याखान करे, तन मन धन कर धर्म की प्रभावना करे, चौथे आरेमें ग्रामके बाहिर मुनी महाराज उतरते थे वाहां भी सब सामग्रीसे बहुत लोक दर्शन करनेकु व्याख्यान सुणनेकु जाते थे. अबी तो जो घरके नजीकमें मुनी उतरे होय तो भी कित्नेक भारी कर्मी तो दर्शनका लाभ भी नही ले सकते हैं. कहा है " पुन्य हीणको न मिले, भली वस्तूका जोग, जब द्राक्ष पकन लगे, तब काग, कंठ होय रोग. " भारी कर्म जीवकी ये ही गती हैं.

मात मिले, सुत भ्रात मिले, पुनीतात मिले, मन वंछित पाइ;
राज मिले, गज वाज मिले, सब साजमिले, जुवती सुखदाइ;
लोक मिले, परलोक मिले, सब थोक मिले, वैकुंठ सिधाइ;
सुंदर सब सुख आनमिले, पन संत समागम दुलभ भाइ.

और श्रावक श्राविका साधर्मी की जो इनमें

जैन मार्गको प्रकाशमें लाणेवाले होय, तपस्वी होय, इत्यादी गुणवानके गुण ग्राम करे और जो अशक्त होवे उनको साह्य देवे, आहार वस्त्र जो चाहिये सो देवे. और अपनेसे गुण ज्ञानमें बडे होवे तो घरको आवे तब सत्कार दे वंदणा करे, ज्ञान चर्चा करे, जाती वक्त पहोंचावे, इत्यादी चार ही तीर्थ की सेवा भक्ती गुणग्राम सो ही सम्यक्त्वका भूषण हैं.

(३) "तिर्थके गुणका जाण होय." साधूके २७ श्रावकके २१ इत्यादी गुणका जाण होय. जो गुण जाणेगा सो ही सत्पुरुष की पेछाण कर सकेगा. और ढोंगी धूर्तारसे नही ठगायगा. अपनेमें तो "गुण की पूजा और निगुणको पूजे वो पंथ दूजा" कित्नेक तिर्थके गुण जाणे विन साधू श्रावक या समद्रष्टी नाम धारण करा लेते हैं और अज्ञान तासे अजोग काम कर धर्मको लजानेवाले हो जाते हैं. इस कालमें कित्नेक साधू और श्रावकका भेष लेके पेट भराइ करने निकल जाते है. भोले गामडेके लोकोंको गप्पे सप्पेसे भरमाके जैन धर्म लाजे ऐसे शास्त्र विरुद्ध लोक विरुद्ध कामों करते हैं. धर्म को लजाते हैं. और लोकोंको श्रद्धाभ्रष्ट करते हैं.

उन्के कारणसे लोगों सच्चे साधूको भी ठग जाणते है. और अनेक परिसह उपजाते है, इसलिये तिर्थके गुणका जाण अवस्य होणा और नवीन साधू श्रावक देखके शंका होवे तो उनकी पुरी चोकस हुये विन विशेष सहवासका बीचार करना. और तपास करते जो वो धर्मभृष्ट निकले तो उनको पद भ्रष्ट करना, कि आगे ऐसा काम न होवे.

४ "धर्म से अस्थिर हुयेको स्थिर करे" अर्थात् कोइ साधू श्रावक स्वधर्मी-अन्यमतीयोंके प्रसंग से तथा मोह के उदय से या किसी प्रकारका संकट प्राप्त होने से धर्म से चल विचल प्रणाम होय या अन्य धर्म स्विकारने की अभीलाषा करता होय और सम्यक द्रष्टीको इस्की मालम पड जाय तो तुर्त आप उसके पास जाके अपनी अक्कल से या कोइ गीतार्थका संयोग मिलाके उसकी संकाका निवारण करे तथा उस्पे जो संकट आके पडा है उसे आप निवारण करने समर्थ होय तो आप करे, नही तो अन्य स्वधर्मीयों की साहायता से दूर करावे. कदापि कोइ सारीरीक कर्म संबंधी संकट होय तो उसे कर्म की विचित्रताका स्वरुप बता के, या जो बडे तिर्थंकर

चक्रवर्ती आदिक पे संकट पडे है उनका चरीत्र सुणावे की ऐसे संत सतीयों पे संकट पडे है और वो सत्यमें स्थिर रहे तो उन्का संकट भी दूर हुवा. पुनरपी सर्व सुखकी प्राप्ती हुइ. और अब्बी लग जिनके नाम के केइ ग्रंथ तैयार है वो संकटमें स्थिर रहे तो अपने नामको अम्मर कर गये. और कहे के मालधणी होयगा उस्के पीछे ही चोर लगेगा और वो ही हुस्यार रह अपने मालको बचावेगा. नग्न के पीछे क्या लगे ! ऐसे ही जो द्रढ धर्मी होगा उस्पे ही संकट पडेगा. और वो ही सहन कर अपना धर्म कायम रखेगा. सोनेको तापमें देते है तो वो ज्यादा तेज होके निकलता हैं. इत्यादि उपदेश करके उसे धर्मस्थानमें स्थिर करे. ये पद के किल्ने कहेगे की धर्म करने से संकट पडता है तो फिर धर्म करना ही क्यों? तो उन्को ऐसा कहा जाता है की धर्म करने से संकट पडता नही, परंतू संकट टलता है. बांधे हुये कर्म तो अवस्य भुक्तने ही पडेगे. जैसे हकीमजी किसीको दवाइ दीये पहले जुलाब देते हैं, की कोठा साफ हुवे दवाइ असर अच्छी करेगा. क्यों की रोग निकले विन दवा असर कर सकती

नही हैं. ऐसे ही कर्म करे विन सुख की प्राप्ती हो सकती नही हैं. इसलिये उस जुलाब के किंचित संकट के सामे मत देखो, परंतु आगे कित्ना गुण होयगा इस्का विचार करो. जो उस जुलाब के या दवा के दुःख से न घभरायगा अपथ्यका सेवन नही करेगा तो सुखी होयगा. और जो घभराके अपथ्य खा लेवेगा तो दुणा दुःखी होयगा. ऐसे ही जो धर्म करते संकट पडा तो उससे न घबराते अन्यमत रुप अपथ्य न सेवन करते द्रढ रहेगा तो उनकी अनंत कर्म वर्गणा रुप रोग दूर होके थोडे कालमें अजरा मर सुख देवेगा.

८ मे बोले "प्रभावना आठ":–समकितीको जिस मार्गको ग्रहण करने से आत्माका कल्याण होगा ऐसा मालम हुया तो उनको योग्य हैं की वोही मार्ग अन्य प्राणी ग्रहण कर सुखी होवें ऐसा उपाव करे. येही सम्यक्त्वीका मुख्य कर्त्तव्य हैं. परंतू सत्य और निरालंबी धर्म विन चमत्कार विन्द दूसरे के हृदयमें ठसना मुशकिल हैं. अन्यको उन्मार्ग से मार्गमें लाने–उनकी सत्य मार्ग पे प्रीती जगाने– जैन धर्मको बढाने–ऊंचा लाने–उन्नती करने नीचे

लिखे हुवे आठ काममें से यथाशक्त कार्य करे.

(१) 'पव्वयणे' जिस कालमें जित्ने शास्त्र हैं उनको पढे पढावे सुणे सुणावे. श्रवण मनन करके ज्ञानको पक्का करे कि वक्तपर दूसरेको रस्ते ला सके और अपनी आत्माको उन्मार्ग से बचा सके.

(२) "धम्म कहा" सम्यक्त्वी जीव सभा मिला के या कोइ ठेकाणे सभा हुइ होय उसमें जाके द्रव्य क्षेत्र काल भाव देख विचक्षणतासे सर्वको प्रिय लगे—हृदयमें ठसे—सर्व मान्य करे ऐसी तरह स्याद्वाद शैली से निःसंकितपणे सब समजे ऐसी भाषामें मोटे मंडाण से धर्म कथा कह कर जैन मार्ग दीपावे.

(३) "निरुपवाद" स्वमतानुयायीको किसी प्रकार की संका पडी और आप निराकरण करने समर्थ होय तो शांत पणेसे समाधान करे तथा अन्यमताव लंबी स्वधर्मीयोंको भ्रष्ट करने लगे होय तो आप उनसे विवाद कर उनको हटावे. तथा कोइ छल कपट कर नवे मुनीराजके पास आके उनको छले ओर आप जाण जाय तो महाराजको समस्या से चेताके आप उनके साथ विवाद यथा योग्य रीतसे करके हरावे. सूपक्ष कूपक्षका निराकरण करे.

समर्थ हो समर्थाइ गोपवे नही; यों करके जैन मार्ग दीपावे.

(४) " त्रीकालज्ञ " मन प्रमाणसे तथा ज्योतिषादिक करके भूत भविष्य वर्तमान कालका जाण होय. दुष्कालादिक संकटसे अपनी आत्माको और स्वधर्मीयोंकों बचाके जैन मार्ग दीपावे.

(५) " दुक्कर तप " चोथ छट अठम मासी दो मासी छ मासी आदि यथा शक्त तपस्या करके मार्ग दीपावे. क्यों कि अन्य मतीयोंमें जो सागर तप दूधादि पदार्थ कंद मूलादिक खाके जो तप करते हैं उनको भी धन २ गिणते हैं, तो निराधार ऐसी तपस्या करेगे उनको देख अन्यधर्मी आश्चर्य पावे इसमें संदेह ही क्या ?

(६) " सर्व विद्याका जाण होय " रोग निवारण, कार्य साधन, इत्यादि अनेक चमत्कारी विद्याओंका संग्रह कर अवस्य कारण उपने विगर प्रयोजे नही. पर जो दूसरा प्रयोजता होय और वो करामत समकिती जाणता होय तो उसे आश्चर्य नही आवे. उससे मोहाय नही. और वक्त पे जैन मार्ग दीपावे.

(७) 'प्रगट व्रत ग्रहण करे " सील [ब्रह्मचर्य] चोविहारका निशी (रात्री) भोजन परिहार, सचित [कच्चा] पाणीका त्याग, सचित वनस्पति (हरीका) त्याग. ये चार खंध कहे सो स्वल्प (थोडी) वयमें धारण करे जिससे लोकोंको चमत्कार उपजे कि इस धर्ममें ऐसे २ वैरागी पुरुष हैं.

(८) "कवी प्रभावना" जिनेश्वरके साधू साध्वीके व सत्योपदेशिक स्तवन, पद, सवैया, छंद बनाके जैन मार्ग दिपावे.

इन ८ प्रकारसे जैन मार्ग दीपावे परंतू ऐसा मनमें अभीमान न लावे कि मैं ऐसा पराक्रमी हुं, धर्म दीपाता हुं. जो अभीमान करता हैं उसे प्रभाविक नही कहते हैं. जो फक्त जैन की उन्नती करने समभावसे उपर कहे आठ ही काम करे, उनको जैन धर्मके प्रभावक कहे जाते हैं.

९ मे बोले "जयणा (यत्ना) छे":—अर्थात् समकिती अपनी समकितको निर्मल रखने और समकितीयों की वृद्धी करने के लिये समकितीकी छे प्रकार से यत्ना करे. (१) 'अलाप' कहता मिथ्यात्वी अपनको न बोलावे तो उनके साथ बोलना नही.

और समकिती एक ही वार बोलावे तो उनको योग्य उत्तर देना. (२) 'सलाप'—मिथ्यात्वीयों के साथ विशेष भाषण नही करना, क्योंकि वो छल छिद्र के भरे हुये रहते हैं. इसलिये बट्टा लगा दे और समकितीकी साथ वारंवार ज्ञान चर्चा अवश्य करनी. (३) 'दान'—मिथ्यात्वीयोंको धर्म निमित दान नही देना. अनुकंपा—दया निमित्ते देवे सो बात जुदी. और समकिती जीवको जो वस्तू अपने पास होवे तो उनको आमंत्रे (देवे). गरीब स्वधर्मीयोंको शक्तीवंत होके साहाय करे. (४) 'मान'—मिथ्यात्वीयोंका सत्कार सन्मान न करे, और सम्यक्त्वी आवे तो उनके सामे जावे सत्कार करे. (५) 'वंदणा' कहता मिथ्यात्वीयोंके गुण ग्राम न करे. उनकी हिंसक क्रिया की प्रशंसा नही करे और सम्यक्त्वी के गुण ग्राम करे, उनकी क्रिया की प्रशंसा करे. (६) 'नमस्कार'—मिथ्यात्वीयोकों नमस्कार मुजरा सलाम नही करे तथा आपसमें मुजरा (सलाम) करे तो जय गोपालादिक नाम उच्चार के नही करे. और स्वधर्मी अपने से ज्ञान गुणमें बडा होय उसे संखजीकी स्त्रीने पोखलीजीको तिखुत्ता के

पाठ से नमस्कार करी तैसे आप भी करे. और बरोबरी के या छोटे स्वधर्मी के साथ जयजिनेंद्र—जयजिनराय. वगैरा जैन शब्द से नमन करे. अन्य लोक अपने देवके नामसे नमे तो जैनीयोंको भी अपने देव के नाम से ही नमना चाहीये. ये ही प्रत्यक्ष सम्यक्ती के लक्षण है. ये छे प्रकार की यत्ना कर के सम्यक्त्व रत्नको मिथ्यात से बचावे.

१० मे बोले "आगार छे":—सम्यक्त्वीका निश्चय तो सदा जिनेश्वर की आज्ञा प्रमाणे वर्तनेका हैं. परंतु कोइ वक्त परवसपणे से समकितमें वट्टा लगे ऐसा काम भी करना पडे. तो छे कारण उपने समकित विरुद्ध काम करे तो सम्यक्त्वका भंग नही होवे (१) "राय भियोगेणं" राजाका आगार अर्थात् सामान्य राजा सो राज के नोकरादिक तथा मोटा राजा सो एक देशका तथा सर्व देशका वो हुकम करे की अमुक काम अवस्य करना ही पडेगा जो न करेगा वो मेरा गुनेगार होयगा. वो काम सम्यक्त्वीको करने योग्य न होय तो भी करना पडे. क्यों कि राजा हैं. बदल जाय तो धर्मका तथा उसका अपमान करे, जीव से मरा डाले, घरबार लूटे.

इत्यादि केइं जुलम करे, ऐसा डर लाके पश्चाताप युक्त काम करें की जो में साधू हो जाता तो मेरी सम्यक्त्वमें बट्टा तो नही लगता. ऐसे बीचार से किंचित दोष तो लगता है. परंतू सम्यक्त्वका भंग नही होता है.

२ " गण भिउगेणं " समकितिको कुटुंब न्यात जात पंच इत्यादिक कोइ समकित विरुद्ध काम करनेका कहे, की ये हमारे कुल देव है, कुल गुरु है इनको वांदो पूजो सेवा भक्ती नमस्कार करो, ये सम्यक्त विरुद्ध काम करने की कहे जो समकिती नहीं करे तो वो पंचादिक दंडकर जाती बाहिर निकाले गुरुका धर्मका तथा उस्का अपमान करे. उस्को उस्के कुटुंब दुःख देवे इत्यादि बीचारसे डरके पश्चाताप युक्त उनका फरमाया काम करे तो किंचित् दोष लगे पण सम्यक्त्व भंग न होवे.

३ " बल भिउगेणं " कोइ पराक्रमी, विद्यावंत, जबर दस्त समकितीको कहै कि ये मेरे देव गुरु है, या ये मेरा अमुक काम हैं तू कर जो नहीं करेगा तो में मेरे पराक्रमसे या विद्या-मंत्रादीके प्रभावसे तेरेको व तेरे कुटुंबको दुःखी करुंगा. इस उपद्रवसे

डरके समकिती सम्यक्त्व विरुद्ध काम करे तो दोष लगे पण समाकितका भंग नही होवे.

४ "सुरा भिउगेणं" कोइक मिथ्यात्वी देव समकितीको कहे की तू तेरे नियमका भंग कर नही तो मैं तुझे मरणांतिक कष्ट देऊंगा. तेरे कुटुंबका धनका नाश करुंगा. ऐसे बचनसे डरके समकिती सम्यक्त्व विरुद्ध काम करे तो किंचित दोप लगे पण सम्यक्त्वका भंग न होवे.

५ "कंतार विती" कोइ वक्त मार्ग भूल अटवी (महा जंगल) में पड गये रस्ता नही मिले तब क्षुधा शांत करने मर्यादा उप्रांत वस्तू भोगवे तथा अटवीमें कोइ मिला और वो कहे कि अमुक काम करे तो तुझे रस्ता बताउ तो तथा प्राणांतिक प्रमुख बडा संकटोमें आके प्राणको कुटुंबको बचाने कोइ सम्यक्त्व विरुद्ध काम करे तो किंचित दोष लागे पण समकित न भांगे.

६ 'गुरु निग्गहो' कोइ बडा आदमी या माता पिता बडे भाइ आदिक माननिय पुरुष समकितीको कोइ समकित विरुद्ध कार्य करने की कहैं के ये काम कर, जो नही कर तो हमारे घरमेंसे नि-

कल; इत्यादी उपसर्ग करे उनसे डरके उनका हुकम अनुसार करे. तथा कोइ मिथ्यात्वी आके अपने देव गुरु धर्मका गुण ग्राम करे और उस अनुरागसे उस्का सत्कार करना पडे तथा कोइ जबर कारण उत्पन्न हुये धर्म गुरु धर्माचार्य कोइ विरुद्ध कार्य करनेका कहै और उनके कहे मुजब करे, ये तीन प्रयोजनसे कोइ काम करे उसे गुरु निग्गहणं कहते हैं. तो सम्यक्त्वका भंग नही होवे.

इन छहीको कोइ 'आगार' और कोइ छ छिडी कहते हैं. ये छेइ आगार कुछ सर्व सम्यक्त्वीके लिये नही हैं. जो कायर है और उक्त छे कारण उत्पन्न हुवे अपना नियम नही निभा सकते हैं, तो उनके लिये कहा हैं के सर्व वृतका तो भंग नही होयगा. अपने धर्ममें तो कायम रहेगे. इन छेकारणोंसे कोइ वक्त सम्यक्त्वमें बट्टा लग जाय तो समकितीको उस की आलोयणा गुरुके पास कर प्रायछित लेके शुद्ध होना. और जो सच्चे २ सम्यक्त्वी हैं जिनो की हाड मींजी किरमजी रेसमके रंग जो धर्ममें भीजी हैं उनपे ते मरणांतिक संकट भी जो कदी आके पड जाय तो सूर वीर धीर होके प्राण छोडने

डरके समकिती सम्यक्त्व विरुद्ध काम करे तो दोष लगे पण समकितका भंग नही होवे.

४ "सुरा भिउगेणं" कोइक मिथ्यात्वी देव समकितीको कहे की तू तेरे नियमका भंग कर नही तो में तुझे मरणांतिक कष्ट देऊंगा. तेरे कुटुंबका धनका नाश करुंगा. ऐसे वचनसे डरके समकिती सम्यक्त्व विरुद्ध काम करे तो किंचित दोष लगे पण सम्यक्त्वका भंग न होवे.

५ "कंतार विती" कोइ वक्त मार्ग भूल अटवी (महा जंगल) में पड गये रस्ता नही मिले तब क्षुधा शांत करने मर्यादा उप्रांत वस्तू भोगवे तथा अटवीमें कोइ मिला और वो कहे कि असुक काम करे तो तुझे रस्ता बताउ तो तथा प्राणांतिक प्रमुख बडा संकटोमें आके प्राणको कुटुंबको बचाने कोइ सम्यक्त्व विरुद्ध काम करे तो किंचित दोष लागे पण समकित न भांगे.

६ 'गुरु निग्गहो' कोइ बडा आदमी या माता पिता बडे भाइ आदिक माननिय पुरुष समकितीको कोइ समकित विरुद्ध कार्य करने की कहैं के ये काम कर, जो नही कर तो हमारे घरमेंसे नि-

कल; इत्यादी उपसर्ग करे उनसे डरके उनका हुकम अनुसार करे. तथा कोइ मिथ्यात्वी आके अपने देव गुरु धर्मका गुण ग्राम करे और उस अनुरागसे उस्का सत्कार करना पडे तथा कोइ जवर कारण उत्पन्न हुये धर्म गुरु धर्माचार्य कोइ विरुद्ध कार्य करनेका कहे और उनके कहे मुजब करे, ये तीन प्रयोजनसे कोइ काम करे उसे गुरु निग्गहणं कहते हैं. तो सम्यक्त्वका भंग नही होवे.

इन छहीको कोइ 'आगार' और कोइ छ छिंडी कहते हैं. ये छेइ आगार कुछ सर्व सम्यक्त्वीके लिये नही हैं. जो कायर है और उक्त छे कारण उत्पन्न हुवे अपना नियम नही निभा सकते हैं, तो उनके लिये कहा हैं के सर्व वृतका तो भंग नही होयगा. अपने धर्ममें तो कायम रहेंगे. इन छे कारणोंसे कोइ वक्त सम्यक्त्वमें बट्टा लग जाय तो समकितीको उस की आलोयणा गुरुके पास कर प्रायछित लेके शुद्ध होना. और जो सच्चे २ सम्यक्त्वी हैं जिनो की हाड मींजी किरमजी रेसमके रंग जो धर्ममें भीजी हैं उनपे ते मरणांतिक संकट भी जो कदी आके पड जाय तो सूर वीर धीर होके प्राण छोडने

तो कबूल करेंगे, परंतू अपने सम्यक्त्वमें किंचित् ही दोष नही लगावेंगे. और कायरजनोंको भी लाजीम है की ये कारण उत्पन्न हुये, कभी दोष लगाणा पडे तो मनमें बीचार तो उपर लिखा ही रखना कि धन्य है उन सत पूरुषोंको कि जो ऐसे संकटमें भी दोष नही लगाते है. धिक्कार है मेरेको, कि में कायरता धरता हुं. वो दिन कब होयगा कि निर्मल व्रत पाल मेरी आत्माका कल्याण करुंगा, यों बीचारे.

११ मे बोले 'भावना छे':–समकितीको सम्यक्त्व द्रढ रखने के लिये हमेशा अंतःकरणमें छे प्रकार के बीचार रखना. (१) "धर्मरुप वृक्षका सम्यक्त्व रुप मूल" जैसे झाडका मूल (जड) जो मजबूत होय तो वो काल वायूआदिक उपद्रव से अडग हो बहुत काल तक स्थिर रहे शाखा प्रतिशाखा पत्र पुष्प फल संयुक्त हो इच्छित सुखका दाता होता हैं. ऐसे ही धर्मरुप वृक्षका सम्यक्त्व रुप मूल है. जिस धर्मात्मा सम्यक्त्वमें द्रढ होगा वो मिथ्यात्वादि वायू से पराभव नही पाता. कीर्तीरुप शाखा, दयारुपी छाया, सद्गुणरुप पुष्प, निरामय सुखरुप फलका स्वाद भोगव के इच्छितार्थ सिद्धी करेगा. अर्थात् अनेक धर्म कार्य

कर अंतमें मोक्ष प्राप्त करेगा.

२ "धर्मरुप नगरका सम्यक्त्वरुप कोट" जैसे नगरका कोट मजबूत होय तो नगर पे परचक्रीका जोर चले नही. ऐसे ही धर्मरुप नगर सद्गुणरुप रिद्धी करके पूर्ण भरा हुवा इसकी रक्षा के लिये सम्यक्त्वरुप कोट मजबूत हुवा तो मिथ्यात्वी—पाखंडीयोंरुप पर चक्रीका जोर नही चले. पाठांतर "धर्मरुप नगरका सम्यक्त्वरुप दरबज्जा":—नगरमें प्रवेश करनेको अबल दरबज्जे की जरुर है. तैसे धर्म—सद्गुणोरुप नगरमें प्रवेस करनेको सम्यक्त्वरुप दरबज्जे की जरुर हैं. नगरमें प्रवेस करने जैसी दरबज्जे की जरुर है तैसे धर्ममें प्रवेस करनेको अव्वल सम्यक्त्व की जरुर है. सम्यक्त्व विन सर्व गुण व्यर्थ हैं.

३ "धर्मरुप मेहलकी सम्यक्त्वरुप नीव" जैसे नीव (पाया) पक्की हुइ तो उसपे मरजीमें आवे जित्नी मजलका मकान बंधावो तो वो बहुत काल टिकके आराम देने समर्थ होता है. तैसे ही धर्मरुप भव्य महल की जो सम्यक्त्वरुप नीव मजबूत हुइ तो वो जित्नी धर्म क्रिया करेगा उत्नी सब उसे पूर्ण फल—निर्जरा रुप होवेगा.

४ "धर्मरुप मकानका सम्यक्त्वरुप स्थंभ" जैसे मकानको स्थंभ ठेहरा रखता हैं. तैसे धर्मको सम्यक्त्व स्थिर रखती हैं. सम्यक्त्व विन धर्म टिक सकता नही हैं. धर्मीको सम्यक्त्व की जरुर हैं.

५ "धर्म रुप भोजनका सम्यक्त्व रुप भाजन" जैसे भोजन पक्कान साल दाल घृतादिक विन भाजनसे टिकता नही हैं तैसे धर्म भी सम्यक्त्व विन टिकता नही हैं, धर्म लेखे लगता नही हैं.

६ "धर्म रुप किरणाको सम्यक्त्व रुप दुकान" जैसे कोठार विन धन धानादि उत्तम पदार्थका चोर हरण करता हैं, या विणस जाता हैं; तैसे ही सम्यक्त्व विन धर्म रुप उत्तम पदार्थ रहता नहीं हैं; उसे इंद्री कषायादि चोर हरण कर जाते हैं. तथा मिथ्यात्व रुप कीडा लगके विनास हो जाता हैं. सम्यक्त्वसें बंदोबस्त है. ये ६ प्रकारके भावसे समकिती सम्यक्त्व को सार पदार्थ जाणके सदा बंदोबस्तसे रखते है. विनाश न होने देवे.

१२ मे बोले "स्थानक छे"—सम्यक्त्वीके प्रणामको चलानेके लिये मिथ्यात्वी छे प्रकार की कल्पना करके धर्म स्थानसे चलाते हैं. उन छेही कामों-

ले जीव जाता है. उनके फल भोगवता है. जैसा मदिराका सीसा तो जीवके साथ नही जाता हैं. परंतू पी हुइ मदिरा तो उस्के साथ रहती हैं और पीये पीछे उसकी मुद्दत पूरी हुये तो उस मदिराका स्वभाव नशा रुप जीवपे असर कर उसे अचेत बना देता हैं. ऐसे ही कीये हुये कर्म जीवके साथ जा मुद्दत पके उसके शुभाशुभ फल यहां या आगे जन्ममें उनके स्वभावसे अवश्य भुक्तता हैं. और संपूर्ण कर्म फल भुक्ते रहे पीछे कर्मसे छुट मोक्षमें जाता हैं.

५ "मोक्ष है":-ये उपर की बात सुण कित्नेक मिथ्यात्वी कहते है की हां ठीक जीव शाश्वता है, कर्मका कर्त्ता है और भोक्ता है. जैसे ये सिलसिला अनादिसे चले आया है वैसे ही आगे अनंतकाल तक चला करेगा. परंतू ऐसा कभी नही होणेका की सर्व कर्म रहित जीव होके कर्मसे मुक्त होवे. इसलिये मोक्ष है ही नही. सदा सकर्मी जीव रहेगा. इनको उत्तरः-ये कल्पना भी बरोबर नही हैं. अनादिसे जो वस्तू है आगे वेसी ही बनी रहेगी? देखीये, सुवर्ण और मिट्टी अनादिसे मिली हुइ है. सो

प्रयोगसे दूर हो जाती हैं. सूवर्ण अपणे निजरुपमें आ जाता है और मिट्टी अपने रुपमें हो जाती है. ऐसे ही ये जीव और कर्मका अनादिसे संयोग हैं परंतू उपाय मिले कर्म रुप मिट्टीका त्यागन कर निज स्वरुप सुवर्ण रुपको प्राप्त होता हैं. और जो निज स्वरुपको प्राप्त होता हैं उसे ही मोक्ष कही जाती हैं.

६ "मोक्षका उपाय हैं:—उपरोक्त बात सुणके मुमुक्षोंको स्वभाविक ही इच्छा हुइ के जो मोक्ष है तो मोक्षका उपाव भी हुवा चाहीये. जैसे मूसी, अग्नी, सोहागी खार, और फूकणेवालेके जोगसे सुवर्ण निजरुपको प्राप्त होता है. तैसे जीव कोन २ से काम करनेसे कर्मसे छुट मोक्ष स्थानको प्राप्त होता है? ऐसे मुमुक्षु भव्यजनोंको कहा जाता हैं. जैसे सुवर्णको निजरुप लाने ४ उपाय हैं ऐसे इस जीवको भी कर्मसे छोडानेके चार उपाय हैं. (१) ज्ञान करके कर्मोंका स्वरुप जाणना के कर्म आठ हैं इनमें मोहराजा हैं इस मोहके टिकणेसे आठ ही कर्म टिक रहे. इस मोहके दो भेद है (१) दर्शन मोह (सच्चेको झूटा और झुटेको सच्चा जाणे) (२) चारीत्र मोह

निज गुण प्रगट न होने दे ऐसा जाण फिर इनके बंधनेका कारण राग-द्वेष-विषय-कषाय जाणना (२) दर्शन (सम्यक्त्व) करके इस कर्म स्वरुपको और बंध पडनेके कारणको सत्य सर्दहणा के हां इन कर्म करके ही में संसारमें परिभ्रमण कर रहा हूं. (३) चारित्र करके इन कर्मोंको तोडनेको उपाय बंधका उलट वीतरागीपणा निरवीकारपणा क्षमासील संतोषादिको ग्रहण करे. और बंध के कारणका त्याग करे. (४) तप करके, ग्रहण कियें हुये कार्यमें अहोनिश प्रवर्ते, उद्यम करे, और मोक्ष के जीवों की अपने जीवों की एकता करे, कि में चैतन्य मय हुं और कर्म जड हैं, इसलिये में और कर्म दोनु भिन्न २ (अलग २) हुं. इन कर्मों से मलीन हो रहा था अब शुद्ध होने निजरुप प्रगट करने समर्थ हुवा हुं. जो इन कर्मोंसे छूटा के तत्काल में मेरे (चैतन्यमय) पदको प्राप्त हो अजरामर अवीकार स्वयंज्योती, परमानंद परमात्म पदको प्राप्त होवूंगा.

ऐसी ही भावना भावता २ और इसी ही भावना प्रमाणे प्रवर्तता निश्चय प्राणी कर्म बंधसे छूट के

मोक्षपद पाता हैं. ये ४ सर्दहना, ३ लिंग, १० विनय, ३ शुद्धता, ५ लक्षण, ५ भूषण, ५ दुषण, ८ प्रभावना, ६ यातना, ६ भावना, ६ स्थान, ६ आगार, सर्व व्यवहार सम्यक्त्व के ६७ बोल पूर्ण हुये.

इन ६७ गुण युक्त होवे उनको व्यवहार सम्यक्त्वी कहना. ऐसे सम्यक्त्ववंत जीवको दश प्रकार की रुची (स्वभावसे इच्छा) होती हैं.

निसग्गुवएस रुइ, आणारुइ सुत बीय रुइमेव ।
अभिगम्म वित्थरारुइ, क्रिया संखेव धम्मरुइ ॥
-श्री उत्तराध्ययन सूत्र.

१ " निसग्ग रुइ " कित्नेक हलूकर्मी प्राणी ऐसे हैं की, गुरुके उपदेश विन जाती स्मरण ज्ञानसे जिन्ने पुर्व जन्म करणी कर रक्खी हैं, जिनकी आत्मा पूर्ण शुद्ध हुइ हैं, उन्को किसी वस्तू के संजोग से जैसे आंबको देख, स्थंभको देख, सांडको देख, चूडीयोंका अवाज सुण इत्यादि कारण से जाती स्मरण ज्ञान प्राप्त होवे उससे जीवादिक नव पदार्थोंको जाणे. सो निसग रुची तथा कोइ अन्यमती अकाम कष्ठ (तप) करते ज्ञानावरणी कर्म के क्षयोसम से विभंग अज्ञान पेदा होवे उससे जैन मत

को ह्यां बांचके प्रणामों की स्थिरता करनी चाहीये.

१ " आत्मा (जीव) हैं ":—कित्नेक की ऐसी समज हैं की जीव है ही नहीं. फक्त कल्पना मात्र हैं. जो जीव होय तो द्रष्टी क्यों नही आवे ? जैसे नाटकीये कपडे के पूतले बना के नचाते हैं तैसे इन मनुष्य पसू पक्षीरुप नाना प्रकारका पूतले ईश्वर बना के अपना मन प्रसन्न करने नचाता हैं. उसने डोरी छोडी के सब पड जाते हैं. इत्यादि कू कल्पना कर जो सम्यक्त्वीको चलाते हैं, उनको ऐसा बीचारना कि जो जीव नही है तो ये कल्पना ही कोण करता हैं ? तथा शब्द रुप गंध रस स्पर्श इनका विज्ञान ही किनको होता हैं ? स्वप्नमें जो जो पदार्थ देखनेमें आते हैं वो याद ही किसको रहते हैं ? इत्यादि अनेक रीतीसे बीचार के देखते हैं तो ये सब बातको जाणनेवाला इस देहीमें दुसरा कोइ जरुर होना ही चाहीये. तो जो दूसरा है इस जगत के वर्तावको जाणनेवाला हैं सो जीव ही हैं. जहांतक आत्मामें जीव है वांहातक ज्ञान संज्ञा रहती हैं और जीव निकले पीछे ये जड (अजीव) पदार्थ सुस्त होकर के पड जाता हैं. आत्मा आगे जाती हैं.

२ "आत्मा (जीव) नित्य (शाश्वता) हैं":— ये उपरोक्त श्रवण कर कित्नेक कहते हैं की हां जीव तो हैं, परंतु (१) कहे जीव रक्त रुप हैं (२) वायूरुप हैं. (३) अग्नीरुप हैं. जीव जब सरीरमें से निकल जाता हैं तब इन तीन ही का विणास हो जाता हैं सो ये तीन ही जीव हैं इन तीनका विनास हुये जीवका ही विणास हुवा समजो. अर्थात् जैसे नवीन सरीर *पंचभूत (पृथवी, पाणी, अग्नी, हवा, आकाश.) से पैदा होता हैं, तैसे जीव भी पैदा होता हैं और इन पांचोंका विनाश होनेसे जीवका

* १ आकाशसे—काम, क्रोध, शोक, मोह, भय.

२ वायूसे—धावन, वलण, प्रसरण, आकूचन, निरोधन.

३ तेज (अग्नी) से—क्षुधा, तृषा, आलस, निद्रा, मैथून.

४ अप (पाणी) से—लाल, मूत्र, शोणित (रक्त), मज्जा, रेत.

५ पृथवीसे—अस्थी (हड्डी), नाडी, मांस, त्वचा, रोम.

ये ५ भूतसे २५ तत्व पेदा होते है.

ही विनास हो जाता हैं. उनको उत्तर दिया जाता हैं की ये तो निश्चय समजो की जडसे चैतन्य और चैतन्य से जड कभी पैदा होता नही हैं. ऐसे ही चैतन्यका कभी विनास होता नही हैं, जो नवीन जीव पेदा होय और पूराने जीवका विनाश होय तो फिर पुन्य पाप का फल भोगवणे की नास्ती हुइ, तो ये तो दिखता नही है. देखीये. एक सुखी, एक दुःखी, एक श्रीमंत, एक कंगाल, इत्यादि ऊंचता हीणता क्यों प्राप्त हुइ? जन्म से ही ऊंदर बिल्ली प्रमुख जीवमें वैर भाव क्यों द्रष्टी आता हैं? इस से निश्चय होता है की कोइ दूसरी देहमें इसने कर्म किये सो इस भवमें इसे उदय आये हैं. ऐसे ही इस भव के किये कर्म आगे भोगेगा. इससे आत्मा शाश्वती हुइ.

३ "आत्मा कर्ता है":-ये उपरोक्त बचन श्रवण कर कित्नेक कहते है की आत्मा शाश्वती है, परंतू कर्म की कर्त्ता आत्मा नही है; बीचारी आत्मा की क्या सत्ता के कर्म करे? ये तो इश्वराधीन हैं. उनके हुकम-मन प्रमाणे स्वभावसे ही दुनीयामें कर्म होते हैं. जो आत्मा कर्म की कर्ता होय तो अपने हाथसे खोटे कर्म कर दुःखी क्यों होय? सदा अच्छे

ही कर्म करे. उनसे कहा जाता हैं की जो कर्मकर्ता होता है वो ही कर्मका भूक्ता होता है. तुम इश्वर इच्छानुसार कर्म होते बताते हो तो फिर इन कर्मों-का फल ईश्वर ही भूक्तेगा क्या? जो ईश्वर कर्म भूक्ते-गा तो शुद्धका अशुद्ध हो दुनिया की वीटंबणामें पडके दुःखी होयगा. तब तो वो ही आत्मा जैसा अशक्त और दुःखी हुवा. ईश्वर की ईश्वरताका नाश हुवा. ये कभी होय नही, इसलिये तुमारी कल्पना मिथ्या हुइ और जीव ही कर्मका कर्ता और भूक्ता ये सत्य हुवा.

४ "आत्मा भुक्ता हैं":—ये सुण मिथ्यात्वी बोले की आत्मा शाश्वती, कर्म की कर्ता, ये सत्य हैं; परंतू आत्मा भूक्ता नही हैं. क्यों कि कर्म तो जड (निर्जीव) हैं, इनमें कुछ चलन शक्ती नही हैं की जीवके साथ साथ जाके जीवको फल देवे इसलिये किये कर्म ही रह जाते है और जीव आगे जाता है. ये कल्पना पहले तो ठीक करी और पीछे बावले जैसे बोल दीया. हां, ये सत्य है की कर्म जड हैं उ-नमें जीवके साथ जानेकी तो सक्ती नहीं है. परंतु किये कर्म जीवको लग जाते है. और उनको साथ

की शुद्ध क्रिया देख अनुराग जगे, उसके पसाय से अज्ञानका अवधी ज्ञान के साथ सम्यक प्राप्त होवे. उसे निरारंभी—निःपरिग्रही जैन धर्मपर रुची जगे सो निसग्ग रुचि.

२ 'उपदेश रुची' सो केवली भगवान के तथा छद्मस्थ के उपदेश से जीवादिक नव पदार्थका जाण होय और उससे धर्मपर रुची (इच्छा) जगे सो उप०

३ 'आज्ञा रुची' सो राग द्वेष मिथ्यात्व अज्ञान इत्यादि दुर्गुणोंका निकंद करनेवाली सद्गुणमें स्थापन कर अनंत भव भ्रमण मिटाके मोक्ष पंथमें लगानेवाली ऐसी श्री जिनेश्वर की आज्ञामें प्रवर्तने की इच्छा उपजे.

४ सूत्ररुची—द्वादशांग (१२ अंग) रुप जिनेश्वर की वाणीको श्रवण करता या आप पोते उसे पढता, अनुभव लगाता, उस्का चमत्कार—रस हृदयमें प्रगमते विशेष २ श्रवण—पठन—मनन करने की इच्छा उपजे और उस इच्छा—उत्कंठा युक्त ज्ञानका अभ्यास करे सो सुत्र रुची.

५ 'बीजरुची' जैसे शुद्ध किये हुये खात दीये हुये और पाणी से तृप्त कीये हुये उत्तम खेतमें

बीज डालने से एक बीज के अनेक दाणे होते, तैसे हल्लूकर्मी प्राणी ज्ञानादि शुभसंयोग युक्त गुरवादिक के मुख से सूत्रका एक ही पद श्रवण कर उसके अनुसारसे अनेक पद गाथा या संपूर्ण शास्त्रका ज्ञान जिसको होवे विस्तार पावे सो बीज रुची. इस रुची-में पाणीमें तेलका बुंदका भी द्रष्टांत देते हैं. जैसे पाणी तेल पसरे तैसे श्रवण किया हुवा स्वल्प (थोडा) ज्ञान उसके हृदयमें विस्तार पावे सो.

६ 'अभीगम रुची'—जिसे अंग उपांगादिक-का ज्ञान अर्थ पर्मार्थ हेतू यूक्त धारण कीया. और उसे उस ही रुपसे दूसरे के हृदयमें प्रगमा दे सो अभीगम०

७ "विस्तार रुची"—नवतत्व, षट द्रव्यादिक पदार्थ के ज्ञानको द्रव्य गुण पर्याय कर के तथा अनुमानादि चार प्रमाण कर के नैगमादि सात नय करके द्रव्यादि चार निक्षेप करके इस विस्तार से श्रुत ज्ञानमें किये प्रमाणे जाणपणा होय सो विस्तार रुची.

८ "क्रिया रुची"—सम्यक दर्शन, सम्यक ज्ञान, सम्यक चारित्र, सम्यक तप, विनय, इत्यादि युक्त ५ समिती, ३ गुप्ति आदि क्रिया करे सो क्रिया रुचि.

९ 'संक्षेप रुची'-कित्नेक एसे हलू कर्मी जीव पूर्व के ज्ञानावरणी कर्म की प्रबलता के योग से विशेष ज्ञानका अभ्यास तो नही हुवा, परंतू सत संगतादि योग से या मोह कर्म की हिणता से स्वभाव ही की रीत से उसने छोडा है. मिथ्यात्वी-निन्हव-पाखंडी-इनी संगत थोडे ही ज्ञानसे जिसकी कुमती-मनकी भ्रमणाका नाश होके सत्य-शुद्ध-जिनेश्वर के मार्ग पे इच्छा जगी सो संक्षेप रुची.

१० "धर्म रुची"-सूत्र धर्म, सम्यक्त्वादि चारीत्र धर्म खंती आदि यती धर्म इनको संपूर्ण पणे आराधने की अभिलाषा. और धर्मास्ती या षट द्रव्यके सुक्ष्म ज्ञान निसंदेह पणे धर्मानुष्ठान करे सो धर्मरुची. इत्यादिं अनेक रीतसे सम्यक्त्वका स्वरुप जाणना. ये सम्यक्त्व हैं सो धर्मका मूल हैं धर्म अंगीकार करे पहले सम्यक्त्वकी जरुर हैं. सम्यक्त्व विन ये प्राणी अनंत वक्त धर्मकर आया परंतु कुछ लेखे लगा नही-कार्य सिद्ध हुवा नही.

एक सम्यक्त्व पाया विना, तप जप क्रिया फोकँ ।
जैसे मुरदो सिणगार वो, समज कहे तिलोक ॥

सम्यक्त्व रत्नको संभालके रखनेके लिये श्री

महावीर परमात्माने प्रथमांग श्री आचारांगजीके प्रथम श्रुत स्कंधके चौथे अध्ययनमें जो हित शिक्षा दी है उस्का हमेशा मनन करना सम्यक्त्वीको उचित है.

१ भूत भविष्य वर्तमान कालके सर्व तिर्थंकरोंका एक ये ही उपदेस है कि सर्व प्राण (बेंद्री. तेंद्री—चौरिंद्री) भूत (वनस्पती) जीव (पचेंद्री) सत्व (पृथवी—पाणी—अग्नी—वायू) इनकी किंचित मात्र ही हिंसा नही होती हो, किंचित ही दुःख नही उपजता हो ये ही सत्य सनातन पवित्र धर्म रागी त्यागी योगी और भोगीकों एक सा अंगीकार करने योग्य हैं.

२ ऐसा धर्म ग्रहण कर प्रमादी [आलसी] नही होना. इसमें अडग रहना.

३ मिथ्यात्वीयोंके ठाठ पाठ पाखंड देखके मोहित नही होना.

४ दुनिया—मिथ्यात्वीयों की देखा देखी नही करनी.

५ जो देखा देखी नही करता हैं उससे कुमती दूर रहती हैं.

६ उपर कहे धर्म पे जिनकी श्रद्धा नही हैं उस जैसा कूमती कोइ नही हैं.

७ उपरोक्त धर्म प्रभूजीने देखके, सुणके, जाणके, और अनुभव करके फुरमाया हैं.

८ संसारमें–मिथ्यात्वमें फसे हुये जीव अनंत संसार परि भ्रमण करे हैं.

९ तत्व दर्शी पुरुष सदा धर्ममें प्रमाद छोड सदा सावध पणे बीचरते है.

इति प्रथमोद्देशक.

१० जो कर्म बंधके हेतू हैं वो सम्यक्त्वीको कर्म तोडनेके हेतू वक्तपे हो जाते हैं.

११ जो कर्म तोडनेके हेतू है सो मिथ्यात्वीयोंको कर्म बंधके हेतू हो जाते हैं.

१२ जित्ने कर्म बंधके हेतू है उत्ने ही कर्म खपानेके हेतू भी जाणना.

१३ कर्म पिडित जगत जीवको देखके कोण धर्म करने सावध न होयगा?

१४ जिनेश्वरका धर्म विषयाशक्त प्रमादीयो भी सुणके तुर्त ग्रहण कर लेते हैं.

१५ मृत्यूके मुखमें रहे अज्ञानी आरंभमें तल्लीन हो भव भ्रमण बढाते हैं.

१६ कित्नेक जीव नर्कके दुःखके भी शोकीन होते हैं. वारंवार जानेसे तृप न होते हैं.

१७ क्रूर कर्मी अती दुःख पाते हैं और कूकर्म नहीं करे सो सुख पाते हैं.

१८ जैसे केवलीके बचन वैसे ही श्रुत केवली (१० पूर्व धारी) के जाणना.

१९ जो जिव हिंसा करनेमें दोष नही गिणते है सो ही अनार्य हैं.

२० ऐसे अनार्य लोकोंका उपदेश बावले लोक बकें जैसा हैं.

२१ जो जीवको मारते नही, दुःख देते नही है, सोही आर्य हैं.

२२ हिंसा धर्मीको पूछना की तुमारेको "सुख खराब लगते है की दुःख खराब लगता हैं"? इसके उत्तरसे सत्य धर्मका निश्चय हो जायगा.

इति द्वितियोदेशक.

२३ पांखडीयो की चाल चलनपे लक्ष नही देवे सो ही विद्वान.

२४ हिंसाको दुःख देनेवाली जाणके त्यागे, सरीर पे ममत्व न करे, धर्म के तत्त्व के जाण, निष्कपटी, कर्मों के तोडनेमें सावधान सो ही सम्यक्त्वी.

२५ बने वांहा लग किसीको दुःख नही देवे सो धर्मात्मा.

२६ जिनेश्वर की आज्ञा पाले, आत्मा ऐकली जाणे, तप से सरीर तपावे सो पंडित.

२७ पुराना लकड की तरह जल्दी सरीर की ममत न कर कर्मको जलावे सो मुनी.

२८ मनुष्यका अल्प आयु जाण क्रोधको जीते सो संतः

२९ क्रोधादिक से जगत दुःखी हो रहा है ऐसा वीचारे सो ज्ञानी.

३० कषायको उपसमा के शांत होवे सो सुखी.

३१ क्रोधाग्नी से जले नही सो सच्चा विद्वान.

—इति त्रयोदेशक.

३२ प्रथम थोडा, फिर विशेष, यों अनुक्रमे धर्म तप की वृद्धी करनी.

३३ शांतता, संयम, ज्ञान, इत्यादि सद्गुणों की वृद्धीका हमेशा उद्यम करना.

३४ मुक्तीका मार्ग बहुत वीकट हैं.

३५ ब्रह्मचर्यको निभाणे और मोक्ष प्राप्त करने 'तप' मोटा उपाव हैं.

३६ जो पहली संयमी—धर्मी हो के भ्रष्ट हो गये, वो कुच्छ भी काम के नही.

३७ मोहरुप अन्धकारमें प्रवर्तनेवालेको परमेश्वर की आज्ञाका लाभ नहीं होवे.

३८ जिन्ने गये जन्ममें जिनाज्ञा न अराधी वो अब क्या आराधेंगे ?

३९ ज्ञानी होके आरंभ से बचे उसकी प्रशंसा होती हैं.

४० आरंभ से अनेक दुःख पैदा होते हैं.

४१ धर्मार्थी प्रतीबंधको त्याग एकांत मोक्ष तर्फ द्रष्टी रखते हैं.

४२ किये कर्मके फल भुक्तने पडेगे, ऐसा जाण कर्म बंधसे डरना.

४३ जो उद्यमी, सत्य धर्ममें वर्तनेवाला, ज्ञानादि गुणमें रमनेवाला, पराक्रमी, आत्म कल्याण तर्फ द्रढ लक्ष रखनेवाला, पापसे निर्वतनेवाला, यथार्थ लोकको देखनेवाला होता है, उसे कोइ भी दुःख

देने समर्थ नही हैं ये तत्व दर्शी सत्य पुरुषोके अभिप्राय हैं. जो इस अभिप्राय प्रमाणे वर्तेगा वो आधी, व्याधी, उपाधी, आदी सर्व दुःखसे निवर्तके अनंत, अक्षय, अव्वाबाध सुख की प्राप्ती होयगी.

समत्त दंसण रत्ता, अनियाणा सुक्क लेसामो गाढा ।
इय जे मरंती जीवा, सुल्लहा तेसिं भवे वोहि ॥

उत्तराध्ययन अ० ३६ गा. २६२

पूर्वोक्त कहे हुये सम्यक्त्व दंशण (मजब) के विषे जे जीव रक्त प्रेमानुराग रक्त हैं, किसी प्रकारका नियाणा (फलकी इच्छा) नही करते हैं और सुक्ल (निर्मल) लेशा (प्रणाम) युक्त जो हैं वो इस भवमें और पर भवमें सुलभ (स...) बोध (सद् ज्ञान) को प्राप्त कर स्वल्प काल में ... सुखके भोगी होते हैं.

इति परमपूज्य श्री कहानजी ऋषीजी के ... चारी मुनि श्री अमोलख ऋषि ... तत्वप्रकाश" ग्रंथका द्विती... नामक चतुर्थ प्र...

प्रकरण ५ वा.

सागारी धर्म.

श्रावक.*

श्री सर्वज्ञ पदाब्ज सेवन मतिः शास्त्रा गमे चिन्तना,
तत्वातत्व विचारेणे निपुणता सत्संयमो भावना,
सम्यक्त्वे रचता अघोप शमता जीवादिके रक्षणा,
सत्सागारि गुणा जिनेन्द्र कथिता येषां प्रसादाच्छिवम्.

सर्वज्ञ जिनेश्वर भगवानकी सेवा (आज्ञा आराधनेमें) जिनकी मती (बुद्धी) लगी हैं, सदा शास्त्रार्थ आगम (जिनेश्वर कथित) की जिनके मनमें चिंतवन—विचारणा

---

* 'श्रावक' शब्दमें ३ अक्षर है, श्र—श्रद्धा, व—विवेक, क—क्रिया, अर्थात् जिस मनुष्यमें श्रद्धा हो और जो विवेक पूर्वक क्रिया करे सो श्रावक. अथवा श्रु—श्रवण करना, अर्थात् जो मनुष्य धर्म कथा श्रवण करे सो श्रावक.

बनी रहती हैं, सदा तत्वातत्व (अच्छा बुरी–न्याया न्याय–धर्मा धर्म) का निश्चय करनेमें बुद्धी फेलाते हैं, अघ (पाप) को उप समाने–खपाने सदा उद्यम करते हैं, त्रस स्थावर जीवोंका रक्षण (प्रति पालन) हमेशा करते हैं, ऐसे ' सागारी ' (गृहस्थवासमें रहके धर्म पालनेवाले) के गुण की कथना–परुपणा जिनेंद्र–तिर्थंकर भगवानने करी हैं, जो जिनेश्वर की कृपा (मार्गानुसारी होने) की अभिलाष होय तो उपरोक्त गुणका स्विकार करो.

न्यायो पातधनोयजन्गुण गुरुन्सद्गी स्त्रिवर्ग भज ।
न्नन्योन्या गुणं तदर्ह गृहिणी स्थाना लयो–ही मयः ॥
युक्ताहार विहार आर्य समितिः प्रज्ञः कृतज्ञोवशी ।
श्रुण्वन्धर्म विधिं दयालु रघभी सागर धर्मचरेत ॥

न्यायसे धन उत्पन्न (पेदा) करनेवाले, गुणवंत के गुण के अनुरागी, तीन वर्ग (धर्म अर्थ और काम) के सेवनेवाले, सद्गुरु की सेवामें अनुरक्त, ग्रहिणी (स्त्री) को धर्म मार्गमें प्रवर्तानेवाले, या कुल वधू जैसे अपगुणों की लज्जा युक्त रहनेवाले, मर्यादा युक्त प्रवर्तनेवाले, योग्य आहार (भोजन) व्यवहार (व्यापार) करनेवाले, सत्पुरुषों की संगत करनेवाले, सदा सूमती (सू बुद्धी) वंत, महा बुद्धीवंत,

कृतज्ञ (किये उपकार के माननेवाले), षट्रीपू (काम, क्रोध, मद, मोह, लोभ, मत्सर ये छे शत्रू) को स्व वसमें करनेवाले, सदा शास्त्र के श्रवण करनेवाले, यथा विधी धर्म के आराधनेवाले, महा दयाल्ल, पाप से डरनेवाले, ये 'सागार' (श्रावक) धर्म के आचार (आदरने योग्य गुण) बताये.

अनंतानु बंधी अप्रत्याख्यानी और तीन मोहनीय ये ११ प्रकृतीका क्षयोपसम होता है, तब जीव पंचम देशविरती गुणस्थानको प्राप्त होता है. सर्व विरती (साधू) की अपेक्षा से देश विरती कहे जाते हैं.

सागार—आगार युक्त धर्म सो सागार धर्म, साधूका मार्ग अनगारका हैं, अर्थात् दिक्षा ग्रहण करे पीछे तावे उम्मर जिनेश्वर की आज्ञामें चले. त्री करण त्री योग से संपूर्ण पंच महाव्रत पाले सो अनगार. और श्रावक के १२ व्रत है, उसमें से १—२ यावत् १२ जित्नी सक्ती होवे उत्ने ग्रहण करे, इसमें कर्ण—योग की भी विशेषता नही हैं. मरजी होवे तो एक कर्ण, एक योग से, और मरजी होवे तो तीन करण, तीन योग से व्रत ग्रहण करे.

दृष्टांतः—साधू के व्रत तो मोती जैसे हैं. जैसे

मोती आधा—पाव ग्रहण नही होता है. लेना होय तो संपूर्ण लिया जाता है. तैसे साधूका मार्ग जो अंगीकार करना धारेगा उन्हे पांच ही महाव्रत धारण करना पडेगा. और श्रावक के व्रत सुवर्ण जैसा है. शक्ती होय तो मासा ग्रहण करो और शक्ति होय तो तोला भर. तैसे ही, मरजी होय तो एक व्रत और शक्ती होय तो बारे व्रत धारण करो.

'श्रावक के २१ गुण'.

अखुद्दो रुववं, पगइ सोमो लोग पियाओ ॥
अक्रूरो भीरु असठ, दाक्खिन लजालू दयालू ॥ १ ॥
मझत्थ सुदिठी, गुणानुरागी सुपक्ख जुत्तो सूदीह ॥
विसेसन्नु वृधानुग, विनीत कयनु परिहिय कारिये लद्धलखो ॥२॥

१ 'अखुदो'—अक्षुद्र, अर्थात् क्षूद्र (खराब) स्वभाव (प्रक्रती) करके रहित. सरल गंभीर धैर्यवंत अपराधीका भी खोटा नही चिंतवे.

२ 'रुववं'—रुपवंत, तेजस्वी, अंगोपांग की हीणता रहित होए.

३ 'पगइ सोमो' प्रक्रतीका सौम्य—शीतल—शांत, सर्वसे हिलमिल कर चले.

४ "लोग पियाउ" जो जो कामसे जगतमें

निंदा होती हैं ऐसा काम नही करे, सर्व जीवोंसे प्रिती उपजे ऐसा काम करे. उदार चित्तसे दानादिक करे.

५ 'अक्रूरो' क्रूर द्रष्टीवाला नही होवे. किसीके भीं छिद्र नही देखे. छिद्र ग्राहीका चित्त सदा मलीन रहता हैं.

६ 'भीरु' पापका–कुकर्मका लोकोपवादका पर भवका अनाचारका डर रक्खे.

७ 'असठ' मूर्खाइ पणा रहित होवे, दगा–कपट नही करे. क्यों कि कपटीका चित्त सदा मलीन रहता हैं. कपटीपे जगतका विश्वास नही रहता हैं. इसलिये सरल रहैं.

८ 'दक्खिन' दक्ष–बिचक्षण; निघामें समजनेवाला, अवसरका जाण होय.

९ 'लजालू' लोको की लज्जावंत, व्रत भंग की कर्म की लज्जा धरे; लज्जावंत कित्ना ही दुर्गुणी हुवा तो ठिकाणे आता हैं. लज्जा सर्वका भूषण हैं.

१० 'दयालु' दुःखी प्राणीको देखके अनुकंपा लावे. यथा सक्त साता उपजावे. बणे वहां लग उस्का दुःख मिटावे. मृत्यूके मुखसे छुडावे. दयाळ होवे.

११ 'मझत्थ' मध्यस्त प्रणामी होय, किसी भी

अच्छी और बुरी वस्तूपे अत्यंत राग द्वेष न धरे. शुष्क–लुख वृत्ति रक्खे. क्यों कि अत्यंत ग्रधी पणा अत्यंत निबड–मजबूत कर्मोंका बंध करता हैं. फिर वो छूटने मुशकल होवे. और लुख वृत्तिसे शिथिल कर्मोंका बंध होता है सो शिघ्र छूट जाता हैं.

लालाजी रणजीतसिंहजीने कहा हैं–

ज्यों समद्रष्टी जीवडा, करे कुटंब प्रतिपाल;
अंतर घट न्यारो रहे, ज्यों धाय खिलावे बाल.

१२ 'सुद्दिठी' सदा सू–भली द्रष्टी रक्खे, किसीका भी बूरा नही चिंतवे, किसी भी पदार्थको विकार द्रष्टीसे नही देखे, सौम्य ढलते नेत्र रक्खे.

१३ 'गुणानुरागी' ज्ञानवंत क्रियावंत क्षमावंत धैर्यवंत, विनीत, धर्म दीपाणेवाला, ब्रह्मचारी, संतोषी. इत्यादी गुणके धारक जो होवे उनके गुणका अनुराग करे–उनपे प्रेम धरे. बहुमान करे. साता उपजावे कीरती करे, गुण दीपावे, खुशी होवे की अपणे धर्ममें ऐसे उत्तम पुरुष की उत्पत्ति हुइ तो इनसे अपने धर्म की उन्नती होवेगा. ऐसा अनुराग धरे.

१४ 'सुपक्ख जुत्तो'–न्याय पक्ष धारण करे. अन्यायीका पक्ष त्यागन करे. तब कोइ कहेगा की

तुमने राग द्वेष करने की तो प्रथम ना कही और फिर अच्छेका पक्ष धारण करने की कहते हो. उनसे कहा जाता है कि. जेहरको जेहर और अमृतको अमृत कहनेमें कुछ हरकत नही है. जो जेहर अमृत एक जाणेगा तो जरूर मिथ्यात्व लगेगा; खोटेको खोटा और अच्छेको अच्छा जाणेगा तब ही खोटेको छोडेगा.

१५ 'सूदीह' अच्छी दीर्घ–लंबी द्रष्टीवाला होवे. कोइ भी कार्य बिगर बीचारा नही करे. जो कर्ता कर्मके निपजाणेको और फलको जाणेगा वो लोक अपवादसे बच सकेगा. विगर बीचारे करने वाला पीछे पीछताता है.

१६ "विसेसन्नु" विज्ञानी होय. अच्छी बुरी सर्व वस्तुका जाण होए. क्यों कि अच्छी २ देखी और खोटीको नही देखी होयगा वो खोटी से कैसे बचेगा? नवतत्वमें भी ३ जाणने योग्य, ३ आदरने योग्य और ३ छोडने योग्य हैं. इन तीन ही का जाणपणा विस्तार से करना पडता हैं. गायका और आकका दूध सुवर्ण और पीतल एकसा होता हैं. अजाण ठगा जायगा.

१७ 'वृधानुग' अपने से गुण ज्ञानमें जो वृद्ध होवे उनकी सेवा भक्ती करे.

१८ 'विनीत' सब से सदा नम्रभूत हो रहैं "धर्मका मूल विनय ही हैं".

१९ 'कयनु' किये हुये उपकारका मानने-वाला होवें; कृतघ्नी न होवे. कहा है "कृतघ्नं महा भारा" इस पृथ्वी पे कृतघ्नीका जबर बोजा हैं.

२० "परिहियथे कारीये" जो काम करने से अन्यका हित और अपनेको दुःख होता होय तो अपणे दुःखकी दरकार न करता परोपकार करे. कहा है की "परोपकाराय पुन्नाय" परोपकार करना ये महा पुन्य उपराजनेका ठाम हैं.

२१ 'लद्ध लखो' जो ग्रहण करने जैसा ज्ञाना-दि गुण हैं उसको लक्ष पूर्वक ग्रहण करे; जैसे लोभी धनका. और कामी स्त्रीका लालची होता हैं तैसे श्रावकजी ज्ञानादि गुण ग्रहण करने के लालची होवे. सदा नया २ ज्ञान ग्रहण करे. कहा है "खंड खडे तू पडेतू" खंड २ करके अर्थात् थोडा २ ज्ञान ग्रहण करके भी बुद्धीवंत थोडे काममे पंडित होते है. एकेक गुण ग्रहण करने से अनेक गुणका धारी हो

जाते हैं. इसलिये सदा नवीन २ ज्ञानादि गुण ग्रहण करनेको लब्धलक्षी होणा. सामायिक सूत्र से लगा के द्वादशांगका पांठी होवे. सम्यक्त्व की क्रिया से लगा के सर्व वृती की क्रिया तकका अभ्यास करे. पहले चतुर्थ कालमें देखीये चंपानगरीका पालित श्रावकको कहा है, 'निग्गंथ पव्वयणे, सावय सेवि कोवीये' निग्रंथ प्रवचन (शास्त्र) का पालित श्रावक पारगामी था. और राजमतीजीको कहा है की "सी-लवंता ब्रहु सुया" सीलवंती बहोत शास्त्रकी जाण थी. इन वचनों से समजा जाता हैं की आगे श्रावक श्राविका शास्त्र के जाण थे. इसलिये अब्बी भी श्रावक श्राविकाको शास्त्रका जाण होना चाहिये. ये २१ गुण युक्त होवे उनको श्रावक कहना. शक्ती युक्त गुण स्वीकारना.

दूसरी तरह २१ गुण, श्रावकके.

१ "अल्पइच्छा"–थोडी इच्छा–विषय तृष्णा शब्द रुपादिकका विषय कमी करे. विषयमें अत्यंत ग्रध न होवे. लुख वृत्ति रहैं.

२ "अल्पारंभ" छे कायका आरंभ बढावे नही, अनर्था दंड सेवन करे नही, जित्ना आरंभ घटता

होय उत्ना घटानेका उद्यम करे.

३ "अल्पपरिग्रही" धनकी तृष्णा थोडी, कू कर्म—कू व्यापारकी इच्छा नही. जित्ना प्राप्त हुवा है उत्नेपर संतोष रक्खे, मर्यादा संकोचे.

४ "सुशील" ब्रह्मचर्यवंत, तथा आचार गोचार प्रशंसनिय रक्खे.

५ "सुवृति" व्रत प्रत्याख्यान शुद्ध निरतीचार चडते प्रणाम से पाले.

६ "धर्मिष्ठ" नित्यनियम प्रमाणे धर्म क्रिया करे.

७ "धर्मवृत्ति" मन वचन काया के योग सदा धर्म मार्गमें प्रवृता रहे.

८ "कल्प उग्रविहारी" जो जो श्रावक के कल्प (आचार) है उसमें उग्र विहार करनेवाले अर्थात् उपसर्ग उत्पन्न हुये भी स्थिर प्रणाम रक्खे.

९ 'महा संवेग विहारी' सदा निवृत्ति मार्गमें तल्लीन हो रहैं.

१० 'उदासी' संसारके कार्यमें सदा उदासीन वृत्ति युक्त रहैं.

११ 'वैराग्य वंत' सदा आरंभ परिग्रहसे निवर्तने की अभीलाषा रक्खे.

१२ 'एकांत आर्य' निकपटी–सरल–बाह्याभ्यंतर एक सरीखे रहैं.

१३ "सम्यग मार्गी" सम्यक ज्ञान दर्शन चरीता चरीतेमें सदा प्रवर्तें.

१४ "सू साधू" धर्म मार्गमें नित्य वृद्धि करते आत्म साधन करे.

१५ "सूपात्र" ज्ञानादि वस्तूका विनाश न होवे तथा दान फली भूत होवे.

१६ "उत्तम" मिथ्यात्वी, सम्यक्त्वी आदिकसे गुणाधिक श्रेष्ट हैं.

१७ "क्रिया वादी" पुन्य पापके फलको माननेवाले. शुद्ध क्रिया करनेवाले.

१८ "आस्तिक्य" द्रढ श्रद्धावंत जिन या साधूके वचनपे पूर्ण प्रतीतवंत.

१९ "आराधिक" जिन वचन अनुसार करणीके करनेवाले. शुद्ध वृत्ति.

२० "जैन मार्ग प्रभावक" तन मन धन करके धर्म की उन्नती करे.

२१ "अर्हतके शिष्य" साधू जेष्ट शिष्य और श्रावक लघू शिष्य, ऐसे अनेक उत्तमोत्तम गुणके

धरण हार श्रावक हैं. बारे व्रत ग्रहण कर अव्रतको रोकते हैं.

" श्रावकके १२ व्रत "

पांच अणूव्रत, साधूके पांच महाव्रत की अपेक्षासे छोटे होते हैं अर्थात् देशसे जो मर्यादा करते है उसे अणुव्रत कहते हैं.

पहला व्रत अहिंसा (दया)

" पहला अणुव्रत थूलाओ पाणाइ वायाओ विरमणं " अर्थात् पहले छोटे व्रतमें स्थूल (मोटा) प्राणी (जीव) का अतीपात (हिंसा) से वेरमणं निवर्तना अर्थात जीव की हिंसा दो तरह की है (१) सुक्ष्म सो त्रस स्थावर किसी प्राणीका किंचित मात्र वध—हिंसा नही करनी ये सर्वथा हिंसासे ते गृहस्थसे निवर्तना मुशकिल हैं. (२) स्थूल—बडी हिंसा तो त्रस (हलते चलते) प्राणी की हिंसा नही करना. इन त्रस प्राणीके ४ भेद, १ बेंद्री (लट कीडे प्रमुख) २ तेंद्री (ज्यू कीडी पटमल प्रमुख) ३ चौरिंद्री (मक्खी पतंग विच्छू प्रमुख) ४ पचेंद्री (नर्क स्वर्ग मनुष्य पसु पक्षी प्रमुख) इनका ' जाणी ' जाणके इन्को ' पीछी ' देखके मारने की बुद्धी करके की इस्को

मारे नहीं, 'आकुटी' वैरभाव धरके हणे (मारे) नही. और हणावे (मरावे) नही. जाव जीव [जीवे] वांहा लगे दुविहं तिविहेणं दो करण तीन जोगसे करु नही मन बचन कायासे कराव्रू नही. मन बचन कायासे फक्त करनेको अच्छा जाणना, खुला रहा क्यों कि संसारमें बेठे हैं. और कोइ हिंसाका काम सुण खुसी आ जावे तथा राजा प्रमुख शीकार खेलके झगडा जीतके आये उसकी अनुमोदन (प्रशस्त) करनी पडे. या खुशाली जाणने निजराणा महोत्सव करना पडे तो वो अलग. पहला व्रतमें आगारः—स्व संबंधी—अपणा कुटुंब दास दासी या गाय घोडा आदि पसू जिनके सरीरमें रोगादि कारणसे त्रस बेंद्री आदि जीवों की उत्पत्ति हो गइ होय तथा 'सरीर मांहे पीडाकारी' अपने सरीरमें क्रिम प्रमुख जीवोंकी उत्पत्ति हो गइ होय और उनको निवारने रेच मलम पट्टी औषधादिक करना पडे तथा 'स अपराधी' कोइ शस्त्रादिकसे अपनको मारनेको आया या शत्रू (परचक्री) अपने सामे चडाइ करके आया तथा चोरादिक अपना अपराध कीया और उनका वध करना पडे. इन कारन से जो त्रस प्राणीका वध करने से तथा

पृथवी खोदते, पाणी पीते गणनेमें से निकल जाय एसे वारीक त्रस जीव अग्नी प्रजालते हवाकी झपट-में वनस्पतिका छेदन भेदन करते, विना उप्योग से तथा बचानेका उपाय करते २ हलते चलते सूते बेठते. जो कोइ त्रस जीवका वध हो जाय तो पाप तो लगे परंतु व्रतका भंग न होवे. इन कारण उप्रांत त्रस जीवकी हिंसा से सर्वथा निव्रते सो श्रावक और जो त्रसकी हिंसा होवे एसे काम करे उसे श्रावक नहीं कहना. चोइस ठाणेमें कहा है. बारे अव्रत (पांच इंद्री, मनकी छे कायकी) में से पंचम गुण-स्थान व्रतीको इग्यारे अव्रत लगती है. त्रसकी अव्रत से निवर्ते है. त्रसकी हिंसा टालने नीचे लिखे काम मे वचना.

१ प्रहर रात गये पीछे और दिन ऊगे पहले जोर से बोलना नहीं. क्यों कि विसमरी (पाली) जाग के बेठ हुये मक्खी प्रमुख जीवोंका भक्षण कर जाय तथा पडोसी जाग्रत होय तो मैथून पचन खंडन पीसनादि अनेक क्रिया करे. २ रातको छाछ (मही) नहीं करना. (३) लीपणा नही. बुहारना (झाडना) नहीं. भोजन (आहार) नहीं निपजाना.

(४) मार्गमें नही चलना. (५) वस्त्र नही धोना. (६) स्नान नही करना. (७) †भोजन नही करना. इत्ने काम रातको नही करना. इन से त्रस जीव की घात और आत्महत्या होनेका कारण होता हैं (८) संडास (पायखानेमें) दिशा नही जाना, क्यों कि उसमें असंख्य छमुछिम मनुष्य पेदा होके मरजाते हैं. (९) खडेपे—फटी भूमी पर या तूष राखके ढगलेपर दिशा नहीं जाना, उसमें

---

† मृतस्वजन गोत्रेपि, सूतकं जायते किल,
अस्तंगते दीवानाथे, भोजनं क्रियते कथं ॥१॥

जो स्वजनोका वियोग (मृत्यु) होता है तो भी भोजन नही करते हो, तो दिवसनाथ अस्त हुवे कैसे करे?

रक्तं भवंती तोयानी अन्नानिपिशिजानीच,
रात्री भोजन सक्तस्य ग्रासतेन मांसभक्षणं ॥२॥

रात्रीको अन्न मांस और पाणी रक्त तुल्य होताहैं, जो रात्री भोजन करे हे, वो ग्रास २ में मांस खाते.

उदकं नैव पातव्यं, रात्रीवात्र युधिष्ठर,
तपस्विना विशेषिणा, गृहिणा च विवेकीनां ॥३॥

हे युधिष्टर! धर्मात्मा गृहस्थको और तपस्वी सा- रात्रीमें पाणी भी नही पीना चाहीये.

जीव मृत्यू पाते हैं. (१०) मोरीमें नालीपे पेशाब नही करना तथा स्नान नही करना. (११) देखे विन धोबीको कपडे धोणे नही देने. (१२) खाट पिलंगको पाणीमें न डूबाणा. तथा उपर गरम २ पाणी नही डालना. (१३) दिवाली प्रमुख पर्वको जो घरमें षटमलादिक जीव होय तो लीपणा छा-

---

येरात्रौ सर्वदाहारं, वर्जयंति सुमेधसे,
तेषां पक्षोपवासस्य, फलं मासेन जायते ॥ ४ ॥

महाभारत.

जो सर्वथा रात्रीको आहार नहीं करते है उनको एक महीने में १५ उपवासका फल होता है.

नैवाहुतिर्न च स्नानं, नश्राधं देवतार्चनं,
दानंवोविहित रात्रोत्रौ भोजनंतु विशेषतः ॥ १ ॥

स्कंधपुराण.

रात्रीको देवताको आहुती, स्नान, श्राध, देवपूजा, दान वगैरा नही होवे, तो भोजन कीस्तरे कीया जावे?

हृन्नाभि पद्मसंकोच श्चंडरोचिरपायतः ।
अतोनक्तं न भोक्तव्यं, सुक्ष्मजीवादनादपिः ॥ १ ॥

आयुर्वेद.

हृदयकमल और नाभीकमल सूर्य हस्त हुवे पीछे संकोच पाते हैं इस लिये रात्री भोजनसें रोग पेदा होता है और सूक्ष्म जीवोंका संहार होता हैं.

वणा नही करना. (१४) सडा धान, सडी हुइ कोइ भी वस्तूको धूप (तडके) में नही धरना. (१५) आटा दाल, शाख, लकडी, छाणे, घंट्टी, ऊखल, वर्तन, इत्यादी कोइ भी वस्तू देखे विन वापरनी नही. (१६) आटा दाल शाख गोवर विगेरे बहुत दिन तक संग्रह करके रखणा नही. (१७) चौमासेके कालमें घरमें घर वर्तनादिकको सुकुमाल

मेधां पिपीलिका हन्ति यूका कुर्या जलोदरं ।
कुरुते मक्षिका वांति कुष्टरोगं च कोलिकः ॥
कंटकोदारु खंडं च वितनोति गलव्यथाम् ।
व्यंजनांतर्निपतितं तालु विध्यति वृश्चिकः ॥ १ ॥

रात्रीको भोजनमें कीडी आवे तो बुद्धिका नाश होवे, ज्यूसें जलोदर होवे, मक्खीसे उलटी होवे, करोलीयेसें कोढ निकले, कांटा आवे तो कंठमाल होवे, बालेसें श्वरभंग, और बिछूके कांटेसें तालू भेदे.इत्यादिक अवगुण जाण रात्री भोजन त्यागना.

चीडी कमेठी कागला, रात चुगण नही जाय;
नरदेह धारी मानवी, रात पड्या क्यों खाय? ॥१॥
आंधो जीमण रातरो, करे अधरमी जींव;
ओछा जीतव कारणे, दे नरकारी नींव. ॥ २ ॥

सणकी तथा ऊनकी पूजणीसे पूजे विन वापरना नही, क्यों कि कुंथुवादिक जीव बहुत पेदा होते हैं (१८) चूला पें शडां घंटी ऊखलादि, चंदरवा छित विन रखने नही. (१९) पाणी छाणे विन वापरना नही. ‡ [२०] पाणी छाणे पीछे रही हुइ जीवाणी

‡ संवत्सरेण यत्पापं, कैवर्त्तस्यादि जायते ।
एकाहेनप्नोती, अपूतं जल संग्रहः ॥

मच्छी पकडनेवाला भोइ बारे महीनेमें जित्ना पाप करता है उत्ना पाप एक दीन विन छाणे पाणी वापरने वालेको लगता है.

विशत्यंगुलमानंतु, त्रिंशदंगुलमायतो ।
तद्वस्त्रं द्विगुणा कृत्यं, गालये जलमा पिबेत्.
तस्मिन् वस्त्रे स्थितान् जीवान् स्थापयेज्जलमध्यतं
एवं कृत्वा पिबेत्तोयां, स याति परमांगती ॥

२० अंगुलका चोडा तीस अंगुल का लंबा उसको दोवडता कर उसमे पाणी छाणके वावरे और उसमें रहे जीव पीछे उसही सरोवरमें डाले सो पर्म गती पावे.

जलमें झीणा जीव थाग नही कोयरे,
अण छाण्यो जल पीवे ते पापी होयरे;
काठे कपडे छाण्या विन नही पीजीए,
जीवाणीका जत्न जुगत स्यूं कीजीये.

दूसरे सरोवरमें तथा पाणी विगरके ठीकाणे नाखना नही. (२१) बने वहां तक हिंसक व्यापार दाणेका किरेणेका, मिल (गीरनी)का करना नही. (२२) दूधका, दहीका, घीका, तेलका, छाछका, पाणीका, विगेरे प्रवाही (पतले) पदार्थके वस्तूके बरतन खुला रखणा नही. [२३] दीवा पिलसोद चूला खुला रखना नही. (२४) सडे हुये धानको पाणीमें नीवाणमें धोना नही. (२५) बोर भाजी भूट्टे प्रमुख जो जो त्रस जीव की वस्तु निजर आवे सो खाणा नही. (२६) गायादिकके वाडेमें तथा जिहां मच्छरादिक जीवकी उत्पत्ति होवे वांहा धूंवा करना नही. (२७) जूतेको नाल खीले लगाना नही और पहली लगी होए सो पहरना नही. इत्यादिक जो जो त्रस जीव की हिंसाके कामे है उनको समद्रष्टी श्रावक उप्योग रखके सदा वर्जे. ऐसे त्रस की हिंसासे सर्वथा निवर्ते और स्थावर (पृथवी आदिक) की यत्ना करे. जो आरंभ लगता होय उस उप्रांत आरंभके त्याग करे.

१ पृथवी काय—कच्ची मिट्टी. विना कारण मकान बंधाना, जमीन खोदाना, सचेत मिट्टी से

दांतण करना, हाथ धोने, चूला कोटी बना के रखणे इत्यादी जो जो पृथवी कायका आरंभ है उसको घटावे, विना व्याजबी न करे.

२ अपकाय—पाणीका जीव. नित कूवे, तलाव, वावडी, नल प्रमुख की मर्यादा करे, विशेष न लगावे, और स्नान करनेका काम पडे तो निवाण (सरोवर) में प्रवेस (अंदर जाके) स्नान न करे, क्यों की अपणे सरीरको लगा हुवा गरम पाणीका फरस जित्ने दूर पाणीमें वह के जाता है वो सब जीव जल मरते है. कित्नेक मिथ्यात्वीयोंको देख मुरदे की राख हड्डी पाणीमें डालते है, ये भी श्रावकको करणा अयोग्य है. क्यों कि मरे पीछे इस सरीर के नाशवंत पदार्थको कैसी ही यत्ना करो तो कुछ जीव स्वर्गमें नही जाता है. वो तो उस्की करणी के प्रभाव से जिस गतीमें जाणा था वहां चल गया. वो राख और हड्डी पाणीमें पडती है वांहा के पाणीका हड्डीयों की उष्णतासे नजीकमें रहे हुये मच्छादिक त्रसजीवोंका भी घमशाण हो जाता है. कित्नेक भोळीये मिथ्या-त्वीयों की देखा देखी ग्रहणमें सब घरमेंका पाणी ढोल देते है. पूछने से कहते है, ग्रहण लग जाता हैं!

परंतु इत्ना नहीं बीचारते हैं कि घरमें ढके हुवे पाणी-
को ग्रहण कहां से लग जाता है? जो ग्रहण की
छाया से बचा है, उस्को ढोल के जिस पे ग्रहण की
छाया पडी है उसको घरमें लाते है. अच्छा, पाणीको
ग्रहण लगता है तैसे दूध दही घी तेल आदि पदा-
र्थको भी लगता होयगा तो फिर उसको क्यों नही
डालो? तब कहते है उसमें द्रोव रखते हे! अच्छा, तो
फिर पाणीमें क्यों नही रखी? परंतू मुफतका पाणी
ढोलनेका कोन बीचार करे? इनकी देखादेखी
श्रावकको कभी नही करना. ग्रहण लगने से कुछ भी
अपवित्रता या चंद्र सूर्यको किंचित दुःख नही
होता हैं. श्रावककी करणीमें कहा हैं, "घृत तणी
परे वापरीये नीर,, अणगल नीरमें मत धोवजे चीर"
इस आंकडीको ध्यानमें लेनी चाहीये. और घी से
भी ज्यादा कीमती पाणीको जाणना चाहीये. क्यों
कि घी नही मिलने से कोइ मरता नही है, परंतू
पाणी नही मिलने से मर जाता हैं. कित्नेक पाणी
पीये पहले झलक डालते है (उपरका थोडा पाणी
ढोल देते हैं) ये भी अयोग्य हैं. इत्यादि पाणीकी
यत्ना श्रावकको करनी.

२ तेउकाय, अग्नीका आरंभ बिना व्याजबी श्रावकको नही करना चाहीये. जो ओडनेका वस्त्र होय तो तापमें नही बेठणा. अग्नी ताप से रुप वीनाश होता है. सरीरमें सर्द गरमी की बीमारी होती है. और वस्त्रादी लग जाय मृत्यू से गांठ पडती हैं. और अब्बी अग्नी के ख्याल बहुत करते है ये अनर्थक हिंसक लोकों के देखादेखी नही करना. आतसबाजी दारु के ख्याल नही छोडने; इस से बहुत अनर्थ पेदा होता हैं. बहुत वक्त आदमी जैसे मर जाते है तो दूसरे की क्या कहना ? अग्नी के आरंभका व्यसन तमाखू पीनेका ये भी श्रावकको नही चाहीये. इसमें अग्नी के आरंभ उप्रांत तमाखू गांजे से सरीरका नुकशान क्षय रोग होता है. दीवाली के दिन लोकों के देखा देखी विशेष दीवे लगाना तथा आतस बाजी [दारुखाना] छोडना भी योग्य नही हैं; क्यों कि इसमें अग्नी सीवाय और भी पतंगीया आदिक त्रस जीव की घात होती हैं और लक्ष्मी आणेके बद्दल लक्ष्मीको (धनमें) लाय (अग्नी) तो पहली ही लगाते हो तो फिर लक्ष्मी कैसे आयगी ? धूप दीप यज्ञ होम इत्यादीमें धर्म

निमित्त अग्नीका आरंभ जैनीको करना योग्य नहीं है. अग्नी दश ही दिशाका शस्त्र है.

४ वायु काय. श्रावकको पंखा लगाना योग्य नहीं हैं. तथा झूलेमें हीडोले हींचणा नहीं. बणे वहां तक उघाडे मुहसे भी नहीं बोलना. इस वायु काय की संपूर्ण दया पलनी बहुत ही मुशकील है.

५ वनस्पति काय सो 'श्रावक' बणे वांहां तक सर्व लिलोत्री हरी कायका त्याग करे. नहीं तो सचित-सजीव-कच्ची लीलोत्रीका त्याग करे; इत्ना ही नहीं तो २२ अनंत काय * का तो भक्षण

---

* १ सर्व कंद जाती जैसे स्त्रीका पेट चीर फाडके कच्चा गर्भ निकालते हैं तैसे पृथवीको फाड के कच्चा (कंद कभी पकता नहीं है) कंद निकालते हैं. २ सूरण कंद. ३ वज्रकंद. ४ हरी हलदी. ५ अद्रक (आदा) ६ कचूरा. ७ सतवारी. ८ विराली. ९ कुआरी. १० थोहरी. (थूवर) ११ गिलाइ (गुलवेल) १२ लसण १३ वंसकरेला. १४ गाजर. १५ साजी वृक्षजाती है. १६ लोढक (पद्मकंदी) १७ गिरकरणी. (नवे पत्तेकी वेल) १८ खीरकंद. १९ थेगकंद. २० हरीमोथ. २१ लोण वृक्षकी छाल. २२ खिलुडा कंद. २३ अमृत (अ-

स्पर्श भी नही करे. इत्यादिक पांच ही स्थावरों की यथा सक्त यत्ना करनी. मनमें वीचारना की अव्वी जगतमें कान (बैरा) आंख (अन्धा) एक इंद्री करके हीण होता हैं उसकी भी अपनेको दया आती हैं, कि वेचारे दुःखी है, अपंग हैं. तो जो चार इंद्री करके हीण हुये अर्थात कान नही (बैरे) आँख नही (अन्धे) नाक नही (गुंगे) मुख नही

मर) वेल. २४ मूला. २५ भूंफोडा. २६ विरुडा (धान अनाज के अंकूर) २७ ढकवथवो. २८ सुकवाल (कांदा) २९ पालको शाख. ३० कच्ची अमली जिसमें गुठली न वंधी होय. ३१ आलू. ३२ पींडालू. ए ३२ अनंतकाय तथा और भी मूंग चीणे प्रमुख पाणीमें भींजोणेसे अंकूर फूट आवे सो भी अनंतकाय. गुठली वाले फलके अंदर गुठली नही बंधी सो. तथा जिसकी नश संधी गाठ दिखती हैं सो. जिसको तोडनेसें बरोबर दो टूकडे हो जावे सो पत्तेकी नशे दिखती होय सो नागरवेल प्रमुख, जिसको तोडनेसें दूध निकले सो तथा संधी टूटने से वो जगा गरम २ लगे सो इन लक्षणोवाली वनस्पतिमें भी अनंत जीव गिणे जाते हैं. ये सर्व श्रावक लोक के खाने योग्य नहीं है.

(मुक्के) फक्त स्पर्श इंद्री (काया) ही जिनके हैं उन की तो विशेष ही दया पालनी. जो इन पांच स्थावरोंने पूर्व जन्ममें महा पाप कीये हैं जिससे बेचारे एकेंद्री पणा परवस पणा पाये हैं. उनके कर्म तो वो भोगव रहे हैं. अब अपण उनको सताके-दुःख देके नवीन कर्मोंका बंध किस लिये करना चाहीये? ऐसे श्रावक प्रथम व्रतमें त्रसकी हिंसाका सर्वथा त्याग कर स्थावर की यत्ना करे.

पहले व्रत के ५ अतीचार.†

पहला थूल प्राणातीपात वेरमण व्रतका पंच अइयारा पयाला. अर्थात् पहले व्रतमें थूल (बडे-

† जैसे किसी वस्तु के पच्चखाण हैं, और वस्तू किसी ठिकाणे पडी हैं, उसको लेणेको उठे सो अतिक्रम, उसके पास जावे सो व्यतिक्रम, उसको ग्रहण करे सो अतिचार. और भोगव लेवे सो अनाचार. इस्में से अतिक्रम व्यतिक्रम तो संसारीयोंको सहज ही लग जाता हैं, इस्का पाप तो विशेष कर पश्चाताप से शुद्ध होता हैं, अतिचार आलोयणा से तथा मिथ्या दुक्कृत्य देणेसे, तथा अनाचार प्रायछित ले तप करने से शुद्ध होवे.

त्रस) प्राणी की घात (हिंसा) से निव्रते (छोडे) इसके पांच अतीचार पाताल-अधोगतीमें ले जाने-वाले जिनको-"जाणीयव्वा नसमारियव्वा" जाण-पणा तो जरुर करना पण समचारना-अंगीकार करना नही. क्यों कि जाणेगा सो ही उस से बच सकेगा. जैसे जाणेगा की ये जेहर है तो उस से बचेगा, और नही जाणेगा वो अमृत के भाव जेहरका भक्ष कर लेवेगा. इसलिये जाणपणेका जरुर हैं. अब पांच अतीचार कोन २ से 'तंज्जहा' सो जैसे हैं वैसे 'आलोउ' कहताहू. १ बंधे-निवड बंधन से नही बांधे. अर्थात् कुटुंब मित्र दास पसू (गाय बेल भेंस घोडे इत्यादी) जो अपने २ कार्य-काममें रीती प्रमाणमें चलते होवे उनको किसी प्रकारका बंधन करना-दुःख देना योग्य नही हैं. और वो कभी चूक जाय हुकम उदल जाय, और जो क्षमा न रहे तथा वो क्रूर द्रष्टी और कठोर बचन कहने से वो न समजे तो कदापि बंधनमें बांधना पडे तो कठण-मजबूत नीबड बंधनसे बांधणा नही, कि जिससे कापा पड जाय, घाव पड जाय, हलन चलन करने कि शक्ती न रहें. अशी आदिक उप-

द्रव होनेसे वो अपनी जान नही बचा सके ऐसा नही बांधे. ऐसा बांधनेसे कोइ वक्त मृत्यू निपज जाय तो पचेंद्री की घात निपजे. महा पातक लग जाय. तथा सूवा–तोता–मेना–इत्यादि पक्षीयोंको पींजरेमें रखना सो भी बंधण हैं, कदाक कोइ पक्षीके घाव लग जाय और उससे उडा नही जाय उस की रक्षा निमित पींजरेमें रखना पडे तो, आराम हुये बंधमुक्त करे, सुवर्ण पिंजर और मिष्ट भोजनको भि पक्षी बंधन समजते हैं.

२ 'वहे' कहता कठोर मारसे मारे नही. अर्थात बंधनादिकसे न समजे, क्षमा न रहैं और उनको जेष्टिका (लकडी) आदिकका प्रहार करना पडे तो निर्दय होके ऐसा प्रहार न करे कि जिससे उस्के घाव पड जाय, रक्त छूट जाय, मुर्छा खाके पड जाय, प्राणमुक्त हो जाय. ऐसा नही मारे. और जिस ठिकाणे पहली प्रहार किया होय उस ठिकाणे पे पीछा दूसरी वक्त प्रहार न करे और मर्म स्थान सिर गुदा गुसेंद्री इत्यादी ठिकाणे न मारे. क्यों कि उससे वहुत दुःख होता हैं.

३ "छविछह" कहता–अवयवका छेदन करे

नही अर्थात स्वजन मित्र पुत्र दास पसुके अंग उपांग इंद्रीयोंका छेदन नही करे, बींदे नही; कित्नेक पुत्रादिकको दागीने—गहणे पहशनेको उनके नाक कान छेदन (बींदते) हैं. ये कर्म जबर दस्तीसे श्रावकको करना योग्य नही हैं. जो उनकी मरजी होवे तो उनकी वो जाणे. और कित्नेक गाय भेंस अश्व आदिक पसुको सोभाके लिये नाथ पेरानेके लिये, नाक कान छेदते है. कानमें कंगूरे पाडते हैं, तथा सांड बणाने त्रीसूल चक्र इत्यादी गर्म कर लगाते हैं. पगमें खीले ठोकते हैं. सींग पूछ काटते हैं. ये सोभा बणाने करते है, परंतु यों नही जाणते है कि वीचारे अनाथ जीवोंको नाहक त्रास होती हैं. ये काम श्रावकको करना अनुचित (अयोग्य) हैं. लोहीं बीकार गुमडा आदिक निवारने अंगोपांगका छेदन करना पडे तो वो बात अलग है, परंतु आराम हुये पहले उनके पास कोइ भी काम लेना नही, तकलीफ देना नही. दया रखणी.

४ " अइभारे " कहना अतीभार भरे नही अर्थात दास घोडा गाडी पोठीया इत्यादी पे गजा (शक्ति) उप्रांत तथा मर्यादा (जिस देशमें जित्ने

२ सेरमणादिकका प्रमाण है उस) उप्रांत (ज्यास्ती) भार (बजन) भरे नही. उसने परवस पणेसे आजीवीका चलाना वो भारको उठा भी लेवे तो उस्के जीवको विशेष दुःख होता है. कभी मृत्यू भी निपज जाता हैं और घोडे की पीटपे चांदी पडी होय, बेल की गरदन घीसा गइ होय, तथा पसू लंगडाता होय, खान पान विने या वृद्ध अवस्थाके कारणसे दुर्बल निर्बल हो गया होय, रोगादिकसे हीन शक्ती हुइ होय, कमी उमर हीण सरीरका होय, इत्यादी पसूवों या ऐसे ही मनुष्यपे वजन बिलकुल नही लादना. वो कदी लोभके मारे उठाना चावे और अपनी शक्ती उसको साता उपजाणेकी होवे तो विना महीनत लिये ही उसे साता उपजाणी और निरोगी हष्ठ पुष्ट बजन उठाने योग्य पसूवोंपे भि कभी बजन लादे तो देश कालकी या उस की शक्ती मर्यादा उप्रांत न भरे. मनुष्यसे अव्वल पूछ ले, कि तूं इत्ना बजन उठा सकेगा ? वो हां कहे तो बात अलग है, परंतु जबरदस्ती से नही देणा, और पसूपे प्रमाण से बजन भरा है तो उसपे सवारी नही करनी. सवारी करनी होय तो बजन की कसर

रखनी. और कोशोकी मर्यादा बंधी हैं उस उप्रांत नही चलाना. दया रखनी.

५ “ भत्त पाणी विछेह ” कहता अहार पाणी की अंतराय नही देणी. अर्थात् स्वजन मित्र दास पसु पक्षी आदी किसीने कोइ प्रकार से छोटा तथा बडा अपराध कीया होय और आपसे क्षमा न होती होय तो उस अपराध के बदलेमें उसे भूखा प्यासा न मारे, क्यों कि भूख प्यास से जीवको बहोत तलतलाट (उचाट) रहता हैं. क्रोध और धेटाइ (जडता) की वृद्धी होती हैं. यों करने से उसके मनकी फिकर दूर हो जाती है और वो जास्ती बिगड जाता हैं. ये मनुष्य के लिये कहा. अब जो पसुने किसी प्रकारका अपराध कीया होय तो, वो तो बेचारा पसू–अज्ञानी ही हैं. बच्चा कोइ काम बीगाड देता है तो सर्व कहते है जाने दो जी, अज्ञा-न–बालक हैं. उस बच्चेको छोड देते हैं, तैसे उसको भि छोड देना. और समजगीर से जो कुछ अपराध होता है तो वहां जरुर बीचार करना कि ये बीगाड इसने जान–बूज नही कीया हैं. कुछ कारण से या परवसपणे से किया हैं, तो उसे वचन

दंड बहुत हैं. परंतू भूखे प्यासे नही रखणा. और भी कदी कोइ ऐसाही अन्याय कर दे की इसको भूख प्यासका दंड दीये विन सुधारा न होवे तो उस्को भोजन नही देवे वहांतक आप भी नही जीमे. कदाक ज्वरादिक रोग मिटाने भूखा प्यासा रखना पडे ये बात अलग हैं.

और भी कित्नेक दुष्कालादिक की वक्तमें, तथा अंग हीन निकम्मा हो जावे वृद्ध हो जावे तथा गाय भैंस दूध देती वंद हो जावे तव, उनका दाणा वाटा वंद कर देते है. चारा–घांस कमी कर देते है या घर वाहिर निकाल देते है और कित्नेक कृतघ्न तो कषाइ आदिक पापीको वेच देते हैं. ये भी वडी अयोग्यता–नीचता हैं. ऐसें ही जो आपका कुटुंब निकम्मा हो जाय, मा वाप वृद्ध हो जाय तो ऐसा ही घातकीपणा उनकी तर्फ गुजारते हो क्या? अरे मतलवसे तो सब ही पोषते हैं परंतू विन मतलवसे पोषे उनकी वलहारी हैं! और उनका ही धन पाया लेखेमें गीणा–जाता हैं. जो सच्च पूछो तो तुमारा कुडुंवसे तो तुमारे उपर पसू ज्यादा उपकार कर सकते हैं. देखीये–दूध, दहीं, घी, छाछ, म-

क्खन, घी, मावा, मलाइ, और किस्तूरी जैसे उत्तम पदार्थ तृण भक्षी—निसार आहारी पसुओंसे ही प्राप्त होता हैं. खेतमें हल चलाना, कूवेमेंसे पाणी निकालना, माल परगाव ले जाना, गर्म वस्त्रका साज देना, इत्यादी अनेक काममें सहाय भूत पसु ही होते हैं. सू मित्र की तरह प्रेम करने सु शिष्यके जैसे भूख प्यास सीत ताप खाड पहाड ग्राम बन इत्यादी दुःख की दरकार न रखते कार्य साधने (करने), साधू की तरह थोडे आहारसे संतोष करने, सीपाइ की तरह रखवाली करने इत्यादी अनेक कामोंमे पसु ही साहायक होते हैं. अरे पसू की निर्माल्य वस्तू भी कित्नी उप्योगमें आती हैं सो देखीये! गोमय (गोवर) से घर स्वच्छ करने, मूत्रसे रोग गमाने, केससे गरमाल करने, इत्यादी काम आते हैं. और मरे पीछे अपणा उप्योगी पणा कायम रखते हैं. चमडेसे अपने पांवका रक्षण करते हैं. हडीये खेतीके खातमें काम आती हैं. नशो बंधनमें काम आती हैं. इत्यादि अनेक महान उपकारी पसुको अपना मतलब पूरा हुवे पीछे खान पान बंध करना, छुट्टा छोड देना, या कसाइयोंको देणा ये बडी कृत-

मता है. ये काम किसी भी धर्मात्माओंको करना लाजिम नही हैं. अपना सरीर अपने कुटुंब की जैसी ही उनकी प्रती पालन करे सो ही दयावंत धर्मात्माके लक्षण हैं.

ये पहले अणुव्रतके पंच अतीचारोंका स्वरुप जाणके इन दुषणसे अपणी आत्माको वचावेगा, दया भगवती की आराधना करेगा वो ऐश्वर्यता, निरोगता, बल, जस, जय, सर्व प्राप्त कर दोनु भवोंमें सुखी होके अनुक्रमे मोक्षके अनंत सुख पायगा. ऐसा जाण यथा शक्त व्रत ग्रहण कर शुद्ध पालो.

२ "दुसरा अणुव्रत थूलाओ मुषाइ वायाओ वेरमणं" दूसरा अणू (छोटा) व्रत (पाप निवृत) सो थूल (मोटा) मुषाइ (मृषा–झूट) से, वेरमणं (निवृते) सो अर्थात् गृहस्थावासमें रह के सर्वथा प्रकारे साधू जैसे सत्य वचनी होना तो बहुत मुशकल हैं, क्यों कि संसारमें सहज स्वभावसे बोलते २ झूट बोला जाता हैं; जैसे, उठरे उठ पेहर दिन आया, और दिन तो घडी भी नही आया होयगा. इत्यादि जो सर्वथा झूट से निवृता नही जाय तो भी श्रावकको पांच प्रकार की झूट नही बोलनी.

१ " कन्यालिक " कन्या के लिये अलिक (झूट) नही बोलना. अर्थात् अपणी अपणे कुटुंब की या परकी कन्याका लग्न (व्याव) करना होय तव कोइ सगे पूछे तव कूरुपीको रुपवंत, काणी, अन्धी, बोवडी, लूली, निर्बुद्धी, कूलंछनी, गुणहीण, अंगहीण, इत्यादि दुर्गुण की धरनेवाली होवे उसको फसाणे दुर्गुण ढांक खाली प्रशंसा करके लग्न करादेवे. फिर उस कन्या के दुर्गुण प्रगट हुये वो बेचारा जन्म भर दुःखी होवे. और जिसने फंदेमें डाला है उसे क्या आर्शीर्वाद देवेगा सो वीचारो. जैसा कन्याका कहा तैसे ही वर आश्री भी जाणना. सद्गुणी कन्याका लग्न दुर्गुणी अयोग्य वर के साथ करने से भी महा अनर्थ निपजता हैं. इस कालमें महाजन जैसी उत्तम जातीमें कन्याविक्रय करनेका अती नीच रीवाज चला हैं. ये वडी शर्म की वात हैं. अरे उत्तम जाती के वणीये ! कन्या के घरका पाणी भी नही पीते हैं तो उस बेचारी अवलाको वेच रुपे घरमें धरना कहां रहा ? कन्याविक्रय करनेवालेका हृदय कसाइ से भी अधी कठीण होता हैं. कसाइ तो पसू-को मार के बेचता हैं. और वो तो अपणे पेट के

गोले (बच्चे) को बेचके तावे उम्मर रीबा २ के मारते हैं. अरे बारे वरस की कन्याको साठ वर्ष के बुढे की साथ देनी ! ' बीबी घर जोग, ' और ' मीया घोर जोग, ' ! इस कन्याविक्रय के रीवाज से उत्तम कुलमें व्यभिचार, और माता से अन्याय, बालविधवापणा, गर्भपात, बालहत्या, आत्मघात, महाक्लेश इत्यादि अनेक उपद्रव पैदा होते हैं. देखीये मुसलमानों की नेकी, गरीब से गरीब हुवा तो भी कन्या की एक कोडी नही लेता है. अपणी शक्ती प्रमाणे देता है. तो जैन जैसे दयामूल पवित्र धर्मात्माको ये कसाइ और चंडाल से भी नीच विश्वासघाती काम करना बिलकुल अयोग्य हैं. ऐसे ही नीच कु व्यसनी, मिथ्यात्वीको भी कन्या न देनी चाहीये ये स्वआत्मा परआत्मा और जगत डूबाणेका काम नही करना चाहीये. इत्यादी कन्यालिक कर्म कहे जाते है. तथा इस कन्यालिक शब्दमें सर्व द्विपद (दो पगवाली), वस्तू समजणा. जैसे किसीको दत्त (खोले) पुत्र लेणा होय तो दुर्गुणी पुत्र के लालचमें पड सद्गुण बतावे फिर दुर्गुणी निकले उसको दुःखदाइ होवे, ऐसे ही किसी के कोइ नोकर रखना

होवे तो, दुर्गुणीको कहे ये नोकर तो सत्यवंत सी-
लवंत, संतोषवंत, दयावंत, प्रमाणीक, सहासीक,
उद्यमी हैं, इत्यादी गुण कह के रख देवे, फिर वो
चोर जार निकल जाय तो रखनेवालेको पश्चाताप
होवे. ऐसे ही तोता मेना कावर प्रमुख पक्षी निर्गुणी-
का सद्गुणी कह बेचें कि इसें गाना नाचना बात
करना अच्छा आता है. और फिर वो वैसा नही
निकले तो उसे पश्चाताप होवे. इत्यादि द्विपदीक
झूटसे निवर्तना.

२ 'गवालिक' गायके लिये झूट नही बोले
अर्थात् गाय थोडा दूध देती होवे तो उसे बेंचनेकु
किसी पुद्गलोंका संजोग मिलाके लेप लगाके उ-
सके स्तन फूगाके कहे की देखीये इसके स्थन कैसे
दूधसे भरे हैं, बहुत दूध देती है, बडी गरीब है, कि-
सीका भी नुकशान नही करती है. इत्यादी गुण क-
हके बेच देवे. ले जाणेवाला कहे मुजब गुण नही
निकलनेसे पश्चाताप करे. इस गवाली शब्दमें सर्व
चौपद वस्तू समज लेणा. गाय जैसे ही भेंस बकरी
आदि पशुको जाणना. हाथी घोडा ऊंट बेल विगेरे
पसू की झूठी प्रशंसा करके बेच देवे और कहे मु-

जब गुण नही निकलनेसे उसे पश्चाताप होवे. ऐसा गवालीक असत्यको सर्वथा सदा वर्जना.

३ 'भूवालिक' कहता पृथवीके लिये झूट नही बोले. भूमी दो प्रकार की (१) खुली भूमी सो खेत, अडाण, बाग, वाडी इत्यादिमें धान फल फूल भाजी की पेदा थोडी होती होय और आप विशेष बतावे कि इसमें बहोत अच्छा और जादा अनाज पेदा होता है. इन बागोंमें मीठे मधूरे सुगंध बहुत फल फूल होते है. कूवा वावडी तलावादिक सरोवर को कहे इसका पाणी बहु स्वादीष्ठ-अखूट-स्वच्छ सुगंधी है. ये सब खुली (उघाडी) भूमीका जाणना. ऐसे ही (२) ढकी भूमी घर दुकान हवेली महल दुकान नोरा प्रमुख जो कच्चे बंधे होय या उन्में भूतादि तथा सर्पादि का भय होए, तथा किस प्रकारका दुर्गुण होय परंतु उस्की झूटी बडाइ करके कहे ये निरुपद्रवी साताकारी मकान हैं. ये सर्व वस्तु कहे प्रमाणसे उलटी निकल जाय तो उस लेनेवालेको जबर पश्चाताप होवे. तथा भूवालीक शब्दसें सर्व अपद (पग विना की) सचित अचित मिश्र तीनों जाणना. वस्त्र हलकेको चडते कहे, खोटा

नाणा चलावे, किरियाणादिकके काममें भाव तालमें झुट लगावे, ये सर्व झूट भूमालिक शब्दमें सर्व अपद वस्तू ग्रही हैं.

४ "थापण मोसो" कहता थापणको दबाके झुट बोले. अर्थात कोइ विश्वासी मनुष्य अपणे मित्र जाण अती मुशकलसे न्याय अन्यायसे धन भेला कर अपणे स्वजन मित्रसे छिपाके रखणे लिये मित्रके ह्यां रखे कि ये धन मेरे वक्तपे काम आयगा. फिर वो धन देख मित्र द्रोहिता धारण कर लोभके वस विश्वासघातसे न डरता उस धनको छिपा देवे, गला डाले, बेच देवे और उस्का मालक मांगणे आवे तब एकदम नट जाय और वस पूगे तो अपणी चोरी छीपाणे उस गरीब बेचारेको झूटा चोर बणाके उलटी फजीती करे. कीजीये इससे उसके जीवको कित्ना दुःख होता होयगा ? क्यों कि उसने मित्रपे विश्वास रख छीपाके रखा था उस्का कोइ साक्षी दार तो है ही नही. अरे इस नीचतासे कित्नेक बेचारे प्राणमुक्त हो जाते है, कित्ने वावले हो जाते हैं, कित्नेक झुर २ के मरते हैं. और कित्नेक उसको पूरा फजीत भी करते है. अरे बंधू !

ऐसे घोर पातक महा अन्याय करके जो द्रव्य संपादन करते हैं उस धनसे उनको कोनसा सुख प्राप्त होता हैं ? और अन्यायसे धन उपार्जन किये कित्नेक काल टिकता हैं ? इसका भी विचार करना और ये थापण मोसो कर्म अवस्य वर्जना. ये थापण मोसा है तो चौरीमें, परंतु इसमें झूट बोलने की मुख्यता है इस लिये इसको दूसरे व्रतमें लिया हैं.

५ "कूडी साख" किसी के आपसमें लेन देन हुवा हैं, उसे आप पहीछानता नही परंतु उनके बोलने उपर से सत्यासत्य निर्णय हो गया. और मालम पडा की अपणा स्वजन मित्र तो साफ झूटा हैं, फिर उसका पक्ष धर मुलायजेमें आके राजमें पंचमें झूटी साक्षी दे के झूटेको सच्चा और सच्चेको झूटा वणावे, तथा किसी प्रतीतदार मनुष्य के पास आके कोइ कहने लगा की में साफ झूटा हूं परंतू मेरे पे ये महान संकट आके पडा है मेरी इज्जत जायगी आप प्रतीतदार हो असुक झगडेमें मुजे सच्चा कर देवे तो में आपको अमुक रकम (लांच) देवूंगा. उस लांच के लोभमें आके झूटी साक्षी (गवाइ) भरे. वेचारे सत्यवंतका लेवालको झूटा वणावे, उसकी

इज्जत गमावे, ये महा अनर्थका काम है. इत्ना तो सत्य समजना के—दुहा

पाप छिपाया न छिपे, छिपे तो मोटा भाग;
दाबी दूबी न रहे, रुइ लपेटी आग.

रुइमें दबाइ अग्नी छिपी न रहती है त्यों पाप भी छिपाये नही छिपते हैं. जब वो पाप प्रगट होते हैं तब मानहीन और राज पंच दंड भोगवे और परभवमें मूकता आदि अनेक दुःख भोगवे.

ये पांच प्रकार की मोटी झुटके श्रावकको दो करण (बोले नही बोलावे नही) और तीन जोग (मन—बचन—काया) से सोगन होते है. इसमें फक्त इन पांच काम करनेवालेको अच्छा जाणने की छुट्टी रही है. निश्चयमें तो पांच ही अकर्त्तव्यके कामों की खुसी नही लाणी, परंतु अपने लाभके लिये खुशी आ जाती हैं. जैसे किसीने कहा, तुमारी भोली कन्याको प्रपंच कर बड़े ठीकाणे परणा दी है. अपणा खराब खेत घर बहुत कीमतमें बेच दीया हैं. तुमारे पुत्रादिकको खोटी साक्षीसे छुडा दीया हैं. अ-मुक थापणवाला मर गया है. इत्यादी सुण सहज खुसी आ जाती हैं. इस पापसे जो आत्मा बचे तो बहुत अच्छी बात हैं.

दूसरे व्रतके ५ अतिचार.

१ " सहसा भखणे " सहसात्कार किसीपे कुडा (खोटा) आल (कलंक) देवे किसी ज्ञानवंत गुण वंत सीलवंत आचारवंत धनवंत बुद्धीवंत तपवंत क्षमावंत इत्यादिक अनेक गुणवंत की कीर्ती महीमा सुणके वो सहन न होनेसे ईर्षामें भराके उनपे द्वेष भाव लाके खोटा (झुटा) आल चडावे, कहे की क्या उन्की प्रशंसा करते हो ? हम उनको अच्छी तरह जानते हैं. सीलवंत नाम धराके गुप्त व्यभिचार सेवते हैं, तपस्वी नाम धराके गुप्त आहार करते हैं. क्षमावंत उपरसे दिखते हैं, परंतु बहुत वक्त क्रोध करते हैं. आचारी दिखते हैं परंतु भीतर पोले हैं बोलनेमें बडे हुस्यार हैं. पंडित बनते हैं परंतू मेने प्रश्नादि पुछके देख लिये हैं, कुछ भी नही आता हैं. ऐसे ऐसे अनेक छोटे मोटे आल चडावे, गुणवंत की कीर्त्ति कम करे. अछती (झूटी) बातों मुख से बना के गुणी के गुण ढांकना ये बडा जबर पाप हैं. ऐसे के सदा मलीन प्रणाम रहते हैं. इसको वायस (काग) द्रष्टी कहते हैं. जैसे काग ताजे माते हृष्ट पुष्ट पसूको देखके दुःखी होता हैं. और दुबळा रोगीको देख

खुसी होता हैं; क्यों कि वांहां उसे खानेको मिलता हैं. ऐसे ही निंदक गुणीजनको देख छिद्र गवेसता है. और छिद्र मिले खुशी होता हैं. ये कुडे आल रखणे-वाले इस भवमें और परभवमें अनेक रोग दुःख वीयोग करके पीडाते हैं. मुखपाकादिक अनेक रोग भोगवते हैं.

२ "रहसा भखणे" रहस्य (गुप्त) बात प्रगट करी होय, अर्थात्, किसीके कुलमें बाप दादाने तथा उसने कुछ अयोग्य अकार्य काम कीया होय वो सुण के देख के ध्यानमें रखे और कुछ टंटा हो जाय तब अपणा मोटाइपणा और उसका हलकाइपणा करनेको कहे, जाणते है, क्या ऊंचा नाक करके बोलते हो? तुमने तथा तेरे बाप दादाने ऐसे २ अकार्य अनर्थ कीये है सो भूल गये क्या? बेचारा ये शब्द सुण सरमिंदा हो जाय. बीचारीये उसवक्त उसे वो बचन कित्ना खराब लगता होयगा सो तुम तुमारी आत्मा पर ही ख्याल करो. कोइ तुमको ऐसा कहे तो कैसा लगे? भाइ अपणी २ धोतीमें सब नंगे हैं. ऐसा तो जगतमें विरलाइ होयगा जिसमें एक सद्गुण और एक दुर्गुण न होय. अपणे दुर्गुण

न देखते दूसरे के देखणे ये बडा अन्याय है. समद्रष्टी श्रावकको ये दुर्गुण आत्मामें धारण करना अयोग्य हैं. कभी किसीकी भी गुप्त बात अकार्यादिक प्रगट करना नहीं.

और भी कित्नेक मनुष्य एकांत मिलके कुछ सलाह करते होय तब आप उन की नेत्र हाथ प्रमुख की दूरसे चेष्टा दिखके कहे की ये सब मिल राज विरुध बातों करते हैं. या वेम लाके राजमें जाके चुगली खाय की अमुक २ मिलके राजद्रोह की सला करतेथे. ये सुण विना कारन राजा उनको दुःख देवे.

और दो मित्रोंके आपसमे प्रिती होय उसे तोडाने एकेकके विरुध बातों कर उनकी प्रीती तोडावे. इत्यादी अनेक प्रकार रहस्य बातके हैं, जिसका भेद विवेकी श्रावक जाण, सागर जैसा गंभीर होवे. किसीकी कोइ खराब बात द्रष्टीमें आ जाय तो भी आप प्रगट नही करे, तो अछती बात प्रगट करना किधररहा?

३ "सदारामतभेए" अपनी स्त्रीके मर्म न प्रकाशे. अर्थात् सबसे ज्यादा प्रेम सती स्त्रीका अ-

पने प्राणपतिपे रहता है. स्त्रीयोंके पेटमें कोइ नवी बात सुणनेमें आवे तो उसका खटाव नही होता है तब अपना पेट खाली करने जाणे पति किसीको न कहेंगे ऐसा विश्वास ला अपने मनकी गुप्त बात पतीको कहै सो बात पुरुषको अन्य पुरुषके आगे नही प्रकाशनी. क्यों कि वो बात जो पीछे स्त्री सुण लेवे तो उसे पश्चाताप पेदा होवे और कुछ वीचार न करते आत्म हत्या कर ले. इत्यादि अनर्थ जाण स्त्री की गुह्य बात किसीको भी न कहनी.

ऐसे ही पुरुषको लाजम है की अपणी गुप्त बात किसीके आगे न प्रकाशनी. जो कदापि रहा नही जाय तो स्त्रींको तो कहणी ही नही. इत्नेपे ही मोह ग्रध होके कभी कोइ गुप्त बात स्त्रीके आगे कर दे तो उत्तम स्त्रीयोंको लाजम है की अपने पति की गुप्त बात किसीके आगे न करे. जो कभी कर दे तो आत्मघातादि अनर्थ निपजे तथा पतिप्रेमको गमावे. इत्यादि अनेक दुःख होवे.

ऐसे ही मित्र २ आपसमें कोइ बात करे या कोइ अपणको अच्छा जाण उसके दुःख प्रकासे, कोइ भोलपणसे गुप्त बात कर देवे तो; श्रावकको

उचित है की किसी के मर्म नही प्रकाशे. सब सुण पेटमें धर लेवे. इन तीनी अतिचारोंका मुख्य मतलब ये है की अपने से किसी गुणवंत के गुण ग्राम वणे तो जरुर करना. परंतु दुर्गुण तो किसी के भी कभी प्रकाशना नहीज.

४ "मोसो वएसे" कहता मृषा उपदेश न देवे अर्थात् जित्ने अन्यमत के शास्त्र हैं, जिनमें हिंसादिक पांच आश्रवका उपदेश होवे अष्टांग निमित मंत्र जंत्र तंत्र विगरे विगरे पाप शास्त्रोंका उपदेश न करे, क्यों कि जिससें हिंसादिक अनेक अनर्थ निपजते हैं. उसका हिस्सा उसे आता हैं. और भी किसी के आपसमें झगडा होवे और वो सल्ला पूछने आवे तो आप उसे झूट ठग बाजी कर जीतनेका उपाव न सीखवे. स्त्रीकी राजाकी देशकी भोजन की ये च्यार कथा नही करे, क्यों कि इस से विषयों की वृद्धि होती हैं, जिस से अनेक आरंभ निपजे. श्रावकको विशेष बोलने की मना दी हैं. †

† बोलनेके विषय श्रावकके आठ गुण ग्रंथमें बताये है, सो अवस्य धारण करो. १ थोडा बोले; बहुत बोलनेवालेका मान नही रहता हैं, इस लिये थोडे श-

कार्य उत्पन्न हुवा कभी बोलनेका काम पडे तो सत्य निर्दोष बहोत बीचार के ऐसा बोले की जिस से अपणी आत्मा पाप से न भराय.

ब्दमें बहुत मतलब निकले ऐसा बोलना. २ थोडा तो बोले परंतु वो भी मिष्ट (मीठा) बोले, सबको सुहाता, प्यारा बचन कहे. क्यों कि असुहाता बचन कटू बचन थोडा भी बोला दुःखदाइ होता है, निंदा पाता हैं, इस लिये मधूर बचन सर्वमान्य होता हैं. ३ मिष्ट तो बोले परंतु अवसर देख बोले. क्यों कि विन अवसर की बोली बात खाली जाती हैं. वक्तपे अच्छी बात भी अवसर विन नुकशान करनेवाली हो जाती हैं. देखीये यों कोइ गाली देवे तो झगडा हो जावे. और ओरतो सबंधी (व्याइ) जमाइको अवसरसे हजारो हलकी २ गालीयों सुणा देती हैं, उसे वो प्रेमसे–खुश होके सुणाते है. मुरदेको उठाते जय गजानंद कहनेसे लडाइ हो जाती है. क्यों कि वो अछी बात भी अवसर विन नुकशान करती है. ४ अवसर देखे परंतु चतुराइसे बोले, कि वो बचन सबको हितकर लगे, अपणा २ रस खेंच ले. वाक्य चातुरी वाला बडी २ सभाका चित्त हरण कर लेता हैं ५ चतुराइसे तो बोले परंतु अहंकार

५ " कुड लेह करणे " कहता खोटे लेख नहीं लिखे. अर्थात् किसी से लेण देण होय या अदावदी (वैर वीरोध) होय तो उसको ठगने दगा बाजी कर खोटे लेख न लिखे. सो रुपे की जगामें एक बिंदू ज्यादा लगा के हजार कर दे. तथा नाम ठाम जाणता होय तो झूटा रुका बणा लांच दे गवाइ खडी कर, झूटी अरजी–फर्यादी कर दूसरे के अक्षर

रहित बोले. अपनी २ बडाइ न करे, अपने मुखसे अपनी बडाइ हीनता दरसाती हैं. पर गुण उचारता निज गुण प्रगट करे. ६ अभीमान रहीत तो बोले परंतू किसीके मर्म न प्रकाशे, मार्मिक नम्र बचन भी दुःखदाइ होता है. ऐसे मनुष्यको सहत की छुरी कहेते हैं. ७ मर्म मोसा तो न प्रकासे परंतु शास्त्र की शाख युक्त बचन बोले. शास्त्र बचन सर्व मान्य होता हैं. ८ शास्त्र की साख युक्त तो बोले परंतु सर्व प्राण भूत जीवको साता कारी बोले. क्यों कि शास्त्रमें भी हेय ज्ञेय उपादेय तीन प्रकारके बचन हैं. कित्नेक शास्त्रि बचन भि विन अवसर नही प्रकासे जाते हैं. जैसे " भूत्ता दीयाणं तम तमेणं " इस पदका अर्थ अवसरसे ही होता हैं. इस लिये सबको साता उपजे ऐसा बचन बोले.

जैसे आप अक्षर लिखे, चिट्ठी पत्री हुंडी वगैरा के पढाइ जावे, जो न पटे तो राजमें फिरयादी कर लेवे. आप सत्तावंत होवे तो जीत जावे. और उस बेचारे गरीबको नाहक खुवार करे. उसको ऐसी खोटी फिरयादीकी या झूठे खतकी खबर पडती हैं तब उसको धास्का पड जाता है. बहोत तलतलाट लगती है. बीचारा वो अपणी इज्जत रखणेको गेणे कपडे वेच सिरपे करज कर उनका खड्डा भरता है. और उनको बहोत पश्चाताप होता है. और कितनेक तो धसका के लिये मर भी जाते हैं.

और जो वो खोटा लेख राज पंचमें प्रगट हो जाय तो दंड खोडा बेडी आदि शिक्षा भुगते इज्जत गमावे. इत्यादिक अनेक दुर्गुण खोटे लेखमें हैं ऐसे अन्याय से पैदा किया द्रव्य बहुत काल टिकता नहीं है.

अन्यायोपार्जितं वित्तं, दश वर्षाणि तिष्ठति ।
प्राप्ते षोडश वर्षे, समूलञ्च विनश्यति ॥

अन्याय करके उपार्जन किया हुवा द्रव्य दश वर्ष रहे, और जो सोले वर्ष रहे तो पहले के द्रव्यको ले के चले जाता है. इस जक्तमें विशेष करके झूठ बोलने के मुख्य १४ कारण:—१ 'क्रोध के वश हो'

क्यों कि क्रोध से आदमी कभी ऐसा जबर बचन निकाल देता है की जिससे पचेंद्री की घात हो जाय. २ 'मान कर के' अभीमान के वसमें हो ऐसे २ गपोडे उडाता है की जाणे इस जैसा इस विश्वमें दूसरा कोइ नही है. ३ 'कपट से' दगाबाजी तो झूटका मूल ही हैं. ४ 'लोभ से' लोभी लोभ के वसमें हो खरे खोटेका कुछ बीचार ही नही रखता हैं. लोभी वेपारीमें ही असत्यका वास हैं. ५ राग, प्रेम से पुत्रादिकको खिलाते–रमाते. ६ द्वेषसे. रुष्ट हुये वैरीयों पे खोटे आल चडावे. झूटी साक्षी फीरीयादी करे. ७ हास्यसे. हंसी कितोलमें चडे हुये केइ गप्पे सप्पे मारने लगते हैं. ८ भयसे. इजत के डर से राजा सेठ के डर से केइ झूट बोलना पडता हैं. अपणा अन्याय छिपाता हैं. ९ 'लज्जा से' कू कर्म कर छिपावे. १० क्रिडासे, स्त्रीयादिक के सन्मुख. ११ हर्ष से लडकोड करता. १२ 'शोक से' उदासीमें निश्वासे नाखता. १३ दाक्षिणतासे, अपनी चतुराइ बताणे, विद्वता जणाने, विवादमें छलने. १४ बहुत बोलने से भी झूट लगती हैं. ये १४ कारण झूट बोलने के सत्यवंत जाण वर्जे.

झूटसे दुर्गुण.

अप्रतीत होती है. झूटे पे किसीका विश्वास नही रहता है. एक झूट दुर्गुणसे सब सद्गुण ढक जाते हैं. झूटेको लोक गप्पी लबाड लुच्चा ठग धूतारा इत्यादी नामसे बुलाते है. झूटसे अकाल मृत्यू निपजता है. कित्नेक सच्चे बचन भी झूट जैसे हैं; जैसे अन्धेको अन्धा, काणेको काणा, कुष्टीको कुष्टी, नपूसकको नामर्द, चोरको चोर, जारको जार, लबाडको लबाड, इत्यादि जिस बचन करके दुसरेको दुःख होवे वो वचन सच्चे होवे तो भी झूट जाणना. ऐसे बचन नही बोलना. सत्यवंत सबको विश्वासी होता हैं. यशस्वी, वल्लभ, बचन सिद्ध, सत्यके प्रभावसे विद्या मंत्र जंत्र तत्क्षण फली भूत होते हैं, धर्मका फल सत्यसे ही मिलता है. लक्ष्मीका वास सत्यवंत के घरमें ही होता हैं. सत्यवंतका कार्य सिघ्र होता हैं. सत्यके प्रभावसे बडे २ रोग मिटते हैं. बडे २ झगडेमें विजय पाता हैं. सत्यवंतको चिंता कम रहती है. मुह नही छिपाणा पडता हैं. सत्यवंत की देवेंद्र नरेंद्र पूजा करते है, सन्मान देते है, बात कबल करते हैं, सब काममें सल्ला लेते हैं. सत्यसे सर्व दु-

श्मनका नाश हो देवलोकके सुख भोगवके अनुक्रमे अनंत अक्षय मोक्ष सुख मिलते है.

३ "तीसरा अणुवृत थूलाओ अदीन्नं–दाणाओ वेरमणं" कहता तीसरे छोटे व्रतमें स्थूल (मोटी) अदीन्नं–विन दीया, दाणाओ–ग्रहण करना–लेणा, जिससे वेरमणं–निवर्तना अर्थात् गृहस्थावासमें रहके छोटी चोरीसे तो निवर्तना मुशकील हैं. जैसे त्रण कंकर धूल विगेरे निर्माल्य वस्तू ग्रहण करते किसी की आज्ञाकी दरकार नही गिणते है. ऐसे ही कोइ मोल वस्तू लाये और वो निघा चूकसे सेरके ठीकाणे सवासेर आगइ तो पावसेर पीछी कोण देणे जावे? इत्यादि अनेक संसार व्यवहारी बावतोमें सहज चौरी लग जाती है. ये चौरी लोकीक विरुद्ध तो है, परंतू लोक विरुध नही है. इस चौरीसे राजा प्रमुख दंड नही कर सकते हैं. तो भी जो गृहस्थ इन चोरीसें अपणी आत्मा बचावे उनको धन्य हैं. इनसे जो कभी आत्मा नही बचे तो नीचे कही हुइ पांच चोरी तो श्रावककों करना बिलकुल योग्य नही हैं:–

१ "खातर खणी" कुद्दाली प्रमुख शस्त्रसे कि-

सीके ग्रहादिक की भीत फोड कमाड तोड ताला तोड या भीतादिक उलंघ उपरवाटसे उसके घरमें जाके उसके द्रव्यादिक पदार्थका हरण करे सो.

२ "गठडी छोडी" विश्वाससे कोइ नोली, डब्बा, गठडी, अनाजका थेला, संदूक, पटारा विगेरे रख जाय और उसके गये पीछे कोइ युक्तीसे उसमें-की असल वस्तु निकाल उसके बदले पीछा कुछ भर योंका त्यों कर मालधणी आये उसके हवाले करे और अपणी सहुकारी बताणे कहे के संभाल ले, भाइ, तेने रखी थी वैसी है; पीछेसे कुछ कहेगा तो हम नही मानेगे. वो बेचारा विश्वासपे हां कहे, अपने घर जा उसे अती उमंगसे खोले और वो माल नही निकले तब उस्के मनमें कित्ना दुःख होता होयगा सो आप ही बीचारो. आपका एक पाइका नुकशान हो जाय तो अन्नसे प्रीति उतर जाती है. और उस की जिंदगानीका निर्वाह तोड डाला इससे ज्यादा क्या चोरी होती है?

३ "वाट पाडी" रस्ता लूट करे अर्थात् जंगल उजाडादि एक स्थलमें रस्तेपे बहुत टोली जमाके बेठे; मालधणी कोइ आवे जावे तब मारकूट उसका

माल खोस (छीन) ले, ऐसे ही बहुत जणे मिल धाड पाडे, खेत गाम घर बजार लुटे, तथा उच्चल्या धूतारा (पोटली बाज) पणा करे, निधा चोराके वस्तू उठा ले जाय, खीस्सा कतरले, दागीने (गेहणे) काट ले, बच्चेको उठा ले जाय, माल लेके मारडाले, ये सर्व वाटपाडी कर्म कहे जाते हैं; महा अनर्थके कामे हैं.

४ "ताला पड कूची" तालेपे दूसरी कूची (कुंज्जी) लगाके खोलके चौरी करे, अर्थात कोइ परगामादिक किसी कार्यके लिये जाती वक्त अपने घरको ताला लगाके विश्वासु मित्रादिकके ह्यां कूची रख जाय पिछेसे वो विश्वासु लालचके वस हो उस कूचीसे उसका घर खोल सारे पदार्थ निकाल लेवे. तथा दूसरेके वांहासे या मोल दूसरेके ताले पे जमे ऐसी कूंची लाके उसके घरका सार २ माल निकाल पीछा योंका त्यों कर ताला लगा चुप बैठे. घरधणी घरका सार पदार्थका हरण हुवा देख कित्ना दुःखी होता होयगा ? क्या करे किसका नाम लेवे ? मनमें झूरे, और दुःखी होवे.

५ "पडी वस्तु धणीयाती जाणी लेवे." कोइ रस्तेमें पड गइ है या रख के भूल गये है और

अपनको उसके धणी की मालुम है कि ये वस्तू अमुक की है. और फिर उसे छिपावे, अपनी करके रक्खे, तो चोरी लगे. जो कदी यों वस्तू मिलजाय और धणीको नही जाणता होय तो चार मनुष्य की साक्षी से उसे रखे और धणी मिले तब चोकस कर जिसकी रकम जिसको देवे. लोभका त्याग करे. ये पांच प्रकार की मोटी चोरी करने से सरकार तर्फ से शिक्षा मिलती है. इज्जत जाती हैं. विश्वास उठता हैं. इत्यादी अनेक दुःख होते हैं.

इस तीसरे व्रत के पांच अतीचार जाणने परंतु आदरने नही सो. १ 'तन्हाडे' चोर की वस्तू ले अर्थात् ऐसा बीचार करे की मेने पोते चोरी करने के त्याग कीये हैं परंतू चोर की चोराइ वस्तू लेणेमें क्या हरकत है? ऐसा बीचार के चोरीका बहुत कीमतका माल थोडी कीमतमें लेवे, लालचमें पडा हुवा कुछ गुणोगुणको नही देखता बीचारे की आज बहुत अच्छा दिन उगा कि इत्नी कमाइ हो गइ! परंतु ऐसा नही बीचारे की जो प्रगट हो गइ तो इससे दूणा चोगणा धन देते भी इज्जत रहेगी? ये लालच गला कटाता है फिर पश्चाताप करते हैं.

कित्नेक कहते है की हमारेको क्या मालम पडे की ये चोरीका माल हैं? परंतू लालच छोड जरा दीर्घ द्रष्टी से बीचारे तो सहज से भास होयगा की ये सो रुपेका माल पचासमें देता है सो क्या मुफतमें आया हैं ?और चोर की बोली आंखो विचार बिलकुल छिपता नही हैं.

२ ‘तक्कर पउगे’ चोरको साज देवे अर्थात् चोरको कहे की तुम डरो मत, हुंस्यारी से चोरी करो, और मेरेको माल देवो, मैं तुमारा साह्यक हुं. साह्य देणे के लिये प्रश्न व्याकरणमें चोर की १८ प्रसूती कही है.

“ चोर की १८ पसूती ”

१ चोर के साथ मिल के कहे डरो मत, मैं तुमारे सामिल हूं, काम पडेगा तब साज देउंगा. २ चोर मिले तब सुख समाधी पूछे. ३ चोरको अंगुली आदि संज्ञा करके कहे की अमुक ठीकाणे चोरी करने जावो. ४ आप प्रतीत दार–साहुकार बणके पहले राजा सेठके धनादिकके ठीकाणे देख आवे और फिर चोरको बतावे की अमुक जगे धन हैं. ५ चोरी करने जाय और कोइ पकडनेवाला मिल जाय

तो पहले उसे छिपनेका ठीकाणा बता दे. ६ किसीको चोर की खबर लगी और वो पकडने आवे चोर नहीं मिलने से उस जाणतेको पूछे की चोर किधर गये वो जाणता आप उनका धन लेणे पूर्व गये होय तो पश्चिममें बतावे. पश्चिममें गये होय तो पूर्व बतावे. ७ चोरी करके आये हुये चोरोंको अपणे घरमें माचा (खाट) पिलंगादि आसन सोणे बेठने देवे. ८ चोर चोरी करते कहींसे पड गये तथा शस्त्र गोली लगी जिससे अंग उपांगका भंग हुवा घाव लगा उस्को घर पोंछाणे आप घोडा प्रमुख वाहन दे. ९ वाहनपे बेठके जाणे की शक्ती न होवे तो आप अपणे घरमें गुप्त रखे. १० चोरका भारी २ माल आप लेके भक्ती करे. ११ चौरको ऊंचे आसण बेठावे. १२ चोर अपने घरमें है और उनको पकडनेवाले आये तब आप उनको छिपाके केवे के ह्यां नही हैं. १३ चोरको खान पान माल पकान आदिक भोजन देके साता उपजावे. जाती वक्त आगे खाणेको भाता बंधावे. १४ जिस २ ठिकाणे उनको जो जो वस्तु की चाहाना होवे सो उनको गुप्त पणे पहोंचावे. १५ चौर थकके आया होय उसको तैला-

दिक मर्दन करावे, उष्णोदकसे न्हवावे, गुल फटकडी आदी खवावे, अग्नीमे तपावे, घाव लगा होय वांहा मलम पट्टी बांधे. इत्यादि साता उपजावे. १६ रसोइ नीपजाणे अग्नी पाणी प्रमुख आप ला देवे. १७ घवरा कर आये उसे हवा कर शांत करे. १८ चोरके लाये हुये धन धान पशु प्रमुखको अपणे घरमें बंदोवस्तके साथ रखे जो चाहीये सो देवे.

ये १८ प्रकारे चोरको साज देणेसे चोर ही कहणा. ये अठारे काम करनेवाला राजमें चौर जित्नी ही शिक्षा पाते हैं.

और भी चोरको कहे की बेठे २ क्या करते हो? वहोत दिन हुये चोरी करने क्यों नही जाते हो? जावो अव तो कुछ माल लावो, हम सव तुमारा माल खपा देवेंगे, कुछ फीकर मत करो. तथा अमुक ठीकाणे कल गये थे, कुछ हाथ लगा की नही? बतावो जी और भी कुदाली कोस प्रमुख उनको चाहीये सो शस्त्र की साज दे. इत्यादी सब काम करनेवालेको चोर ही कहना. ये काम श्रावकको करने उचित नही हैं. इस लालचसे विवेकवंत अवस्य वचेंगे.

२ 'विरुध रजाइ कमे' राज विरुध काम करे

अर्थात् गाम या देश के राजाने अपने राजमें जिस २ वेपार या कार्य करने की मर्यादा करी हैं ना कही हैं सो काम लोभ के लिये आप करे. गुप्तपणे इधर की उधर, उधर की इधर वस्तू लाके बेचे, दाण चोरावे, इत्यादी काम करने से राजा दंड देवे, इज्जत लेवे.

४ " कुडतोले कुडमाणे ' खोटे तोले, खोटे मापे रखे. अर्थात् तोले सो रती मासा सेर मणादिक और मापे पायली कुडा तपेला प्रमुख तथा गज—हत्थी प्रमुख खोटे रखे. लेणे के ज्यादा और देणे के कमती रखे. तथा देती वक्त हाथ चालाकी से तोलने मापणेमें चोरी करे. देते कमी, लेते ज्यादा लेवे. गीणते २ आंकडेमें गडबड कर देवे. इत्यादी कर्म विश्वासघातिक कहे जाते हैं. बेचारे गरीब लोक महा महीनत के साथ सर्व दिन अति कष्ट सहन कर चार आने के पइसे ले वणीये की दुकान पे आके सहूकार कह के वस्तु मांगे और निर्दय दिखने के साहूकार और कर्म के चौर बण के बेचारे के पलेमें चार आने ले के दो आनेका भी माल न डाले ये कित्ना जबर जुलम ? कैसी निर्दयता ? ये कर्म श्रावकको नही करने चाहीये.

५ " तपडी रुवग व्यवहारे." तत् प्रतिरुप वस्तु मिलाके बेचें अर्थात् जैसा उस वस्तूका रुप है वैसे ही रंगकी उसमें मिलती कोइ हलकी कीमत की वस्तु उसमें मिला के बेंचे. घीमें§ चरबी प्रमुख मिलावे

§ अबी इस थोडे कालमें हिंदुस्तानमें मिलावटी वस्तूका प्रचार बहुत हो गया हैं. ये मिलावटी वस्तू हिन्दुको ग्रहण करना तो अलग रहा परंतु छीने लायक भी नही है. देखीये–घी सक्कर जैसे उत्तम पदार्थ की जो हर हमेश उपभोगमें आवे उनमें ऐसी खराब वस्तूओंका भेल होता है की जो सचा हिंदुका बीज है वो उस्का कभी स्पर्श नहीं करता है. गाय को हिन्द माता तरीके पूज्य मानते हैं, और घीमें गायकी भेंस बेल और सूवरकी चरबी मिलाते हैं. सक्करमें गाय बेलकी हड्डीयोंका चूरा मिलाते है. बैलके रक्तसे धोते है. केसरमें गायके मांसके चूंथे मिलाते है. सबण (साबू) में ढोरोंकी चरबी मिलती है. वीलायती कपडेपे चरबीका पांजल कल्प देते हैं. ऐसा २ अनेक नीचताका प्रसार हो गया है. ये बातों अबी बहुत वर्त्तमान पत्र (अखबारों) में प्रसिद्ध होने लगी है. बहूत जगे जाणते है–पढते हैं, परंतू . ७५ लोभी पइसा बचाणे अपनी जाती–धर्म और

और उत्तम घी के भाव बेचें. ये भी एक जबर चोरी कही जाती है. तथा कोइ माल लेणे आवे तब उसे वानगी (नमुना) तो अच्छे मालका बतावे और देती वक्त चालाकी से खोटा माल दे देवे. तथा अच्छा और खोटा दोइ की मिलावट करके बेंच देवे. तथा चोरी की वस्तू ली है उसको छिपाणे भांग तोड गला या दूसरा रंग चडा, पसूवों के अंग उपांग छेदन भेदन कर रुपप्रवर्तन कर बेच देवे. ये भी एक प्रकार की चौरी है. श्रावकको अनुचित हैं. इन पांच ही प्रकार के अतीचारोंका स्वरुप जाण विवेकी वरजे. एक ग्रंथमें लिखा है की १ चोर. २ चोर के पास रहनेवाला. ३ चोर से बात करनेवाला. ४ चोरका भेद लेनेवाला. ५ चोर की वस्तू खरीदनेवाला या चोरको वस्तू बेचणेवाला. ६ चोरको खानपान देनेवाला. ७ चोरको मकान देणेवाला. इन ७ को चोर ही कहना. श्रावकको लाजिम है की जो जो कामों

जन्म भृष्ट होता है. इस भवमें अनेक दुष्ट रोगोंसे पीडाना और परभवमें नर्कके अनेक दुःख के भुक्ते होणा; जांगते ही ऐसी नीच वस्तूका स्विकार करते हैं उनको क्या कहना ?

करने से तीसरे व्रतका भंग होवे सो काम नही करना. इत्ना ध्यानमें रखणा की चोरीका माल दोइ भवमें सुखका देणे वाला नही होता हैं. यों बीचार संतोष लाना. जिस २ देशमें जैसा २ कर्म उचित होवे उसके विरुध नही करना. और जैन धर्म की महीमा दिखाणे–दुष्कालादिक कोइ वक्तमें वस्तू बहुत महगे हो जाय चोगणे पांच गुणे भी जो दाम आते होय तो आप संतोष रख के दूणे ज्यादा न करे. इससे लोकमें प्रसिद्ध होय की जैनी लोक बडे दयाल और संतोषी होते हैं. ऐसे ही व्याजमें भी संतोष करे, ज्यादा मिलता होय तो आप ग्रहण न करे.

ये तीसरा संतोष व्रत के आराधने से सर्व लोकको विश्वास उपजाणेवाला होता हैं. लक्ष्मी की वृद्धि होती हैं. और न्याय से धन भेला कीया हुया बहुत काल टिक के सुख देणेवाला होता हैं. कीर्तिका विस्तार होता हैं. राज के भंडारमें सेठकी दुकानमें जावे तो अप्रतीत नही आती हैं. सदा निश्चिंत रहता है. दया भगोती सदा हृदयमें नीवास करती हैं, त्याग पच्चखाण शुद्ध निर्वाह कर सक्ता हैं, राजमें ... माननिय होता हैं, अनेक उपद्रवों से अपणी

आत्माको बचाता हैं. भाग्य से पाइ हुइ संपदा पे संतोष लाता है. और कहा है की "संतोषं परमं सुखं" संतोष है सो ही परम सुखका ठीकाणा है. संतोष से इस लोकमें अनेक सुख भुगत आगेको स्वर्ग मोक्ष के अनंत सुख पाता हैं.

४ "चौथा अणुव्रत थूलाओ मेहुणाओ वेरमणं" चोथे छोटे व्रतमें स्थूल (मोटे) मैथूनसे निवर्तना, अर्थात् गृहस्थ वासमें रहके सर्वथा ब्रह्मचर्य पालना मुशकील हैं, क्यों कि और गती करता मनुष्य † गतीमें मैथूनका उदय ज्यादा हैं. कारण जैसे शत्रू बलिष्ट होता है तब प्रती शत्रू अपणी सत्ता (ताकत) बहुत बताता है. उसको दबाने-दटाने जो शत्रूको प्रती शत्रू की प्रबलता देख और अपणे बलका गुमराइ होवे तो वक्तपे उसे हटा अपना हक्क कायम करे. और जो कायर हुवा तो प्रति शत्रु उसे अपणे ताबेमें लेके रगडेगा ही.

भावार्थ-जीव की शक्ती कर्मोंको हटाणे की

† नर्कमें भय संज्ञा ज्यादा, तिर्यंचमें आहार संज्ञा ज्यादा, देवतामें लोभ संज्ञा ज्यादा, और मनुष्य में मैथून संज्ञा ज्यादा.

मनुष्य जन्ममें ही प्रबल होती है. तब कर्म (मोह) अपणी ताकद विशेष बताता है, जिससे विषय-विकार की प्रबलता होती हैं. जो जीवमें आपेका मान होवे तो विषय उमरावको मार अपणा-निजगुण रुप हक कायम करे. ये सूरवीरोंका काम है. जो कर्मके वसमें पडता वो चार ही गतीमें इस की वीटंबणा करनेवाले, ऐसा जाण सर्वथा विषयका नाश करना. परंतु अनंत कालसे जिस की संगत उससे एकाएक प्रेम टुटणा मुसकील. इस लिये ही 'श्रावक' पणेमें आसते २-धीरे २ विषय वासना (इच्छा) कमी करे. अर्थात् सर्वथा न बणे तो "सदारा संतोषी आवशेषं मेहुणं सेवनके पच्चखाण" अर्थात अपनी स्त्रीको संतोष * उपजावे या अपनी स्त्रीसे ही आप संतोष लावे. और परस्त्रीका सर्वथा त्याग करे. ये सदारा संतोष व्रतके त्यागीको देवता की स्त्री (देवां-

* देखीये इस शब्द पे जरा निघा लगाइ हैं. श्रावक मैथून सेवते हैं तो फक्त अपनी स्त्री को संतोष उपजाणे लिये, कुछ उनको विषय अभीलाषा नही है. ऐसा श्रावकको लुख वृती होणा. तब श्रावक पद प्राप्त होता है.

गना) साथ मैथून सेवणेके पच्चखाण, दो करण और तीन जोगसे होते हैं. अर्थात् आप सेवे नही और दूसरेके पास सेवावे नही, मन बचन काया कर. फक्त देवादिक की मैथून क्रिया की प्रशंसा सुण मनमें खुसी आ जाती हैं, वचनसे बडाइ हो जाती है, कायासे इच्छा हो जाती है; इसलिये मनके तीन ही भांगे खुले रहे हैं. और मनुष्यणी तिर्यंचणी संबंधी एक योगसे, अर्थात् अपणी काया करके मैथून सेवू नही, बाकी सेवावणा भला जाणना बाकी रहता हैं. क्यों कि संसारमें बेठे हैं, सहजमें पूत्रको कह दे, जावो भाइ अपणे ठिकाणे सोवो. पुत्र की स्त्री मर जाय तो तथा पुत्रादिक निमित दूसरा लग्न करावे. और गाय भेंस घोडीका संयोग मिलावे. इत्यादी कारणसे ये व्रत निभणे एक करण एक योगसे सोगन होते हैं. अब स्व (पोताकी) स्त्रीका जो आगार रखा है सो फक्त उसको संतोष उपजाणे, हाथ पकडके उसको लाये हैं. उस की आत्माको अ संतोष होणेसे आत्म हत्या या व्यभिचारका संभव होवे, जिससे अपणी जगतमें निंदा होवे, इत्यादि भयसे विषय सेवता है. परंतू उसमें ग्रधी पणा नही, की

दुनियामें सर्व सुखका सार ये ही मुजे मिला है, ऐसा फिर मुजे मिलेगा की नही हैं. ऐसा उसमें आशक्त न होवे, क्यों किं आशक्तता है सो चीकणे कर्म बंधनेका कारण है. इसमें और भी छे पर्व (दूज, पांचम, आठम, इग्यारस, चौदश, पुनम, अमावस्या) * में ब्रह्मचर्य जरुर पाले. 'विष्णु पुराण' में कहा है कि, चतुर्दशी (चौदश) अष्टमी, अमावस्या, पूनम, ग्रहणके दिन, दीतवारको, संक्रांती इन दिनोंमें तेलका स्त्रीका और मांसका जो सेवन करता है वो मिष्टा और मूत्रका सेवन करता है, और वो मरके नर्कमें

* पांच पर्वका कारण–शास्त्रमें कहा है की जीव परभवका आयुष्य तीसरे भागमें बांधता है. इस मतलबसेही पर्व कीये दिखते है. देखीये. तीज और चोथ गइ पांचम पर्व आया. छट और सातम ये दो भाग गये आठम पर्व आया. नवमी और दशम गइ इग्यारस पर्व आया. बारस और तेरस गइ चौदश पर्व आया. वो तीसरा भाग लीया है. इन दिनोंमें परभवका आयुष्यका बंध पडनेका संभव है. इस लिये इन दिनमें तो अवस्य सर्व संसार कार्य छोड दया सील संतोष सामायिक पोषध आदि धर्म कार्यमें प्रवर्तना.

जाता हैं. किजीये, इससे और क्या ज्यादा कहै? इन दिनको स्त्रीसेवन करनेसे जो गर्भ रहे और पुत्र की प्राप्ती होय तो वो कुपुत्र कू लंछनी निकले. ऐसा जाण वेजना. और दिनको तो कभी भी स्त्री सेवन नही करना क्यों कि इससे मोहोदय निर्लज्जता जास्ती होती हैं. तथा संतती खराब होती हैं और रात्रीको भी एक वक्तसे ज्यादा स्त्री संग नही करना, क्यों कि शास्त्र (तंदुलवियालिय) में कहा है कि एक वक्त मैथूनसेवन किये पीछे बारे (१२) मुहुर्त योनी सचित रहती हैं. अर्थात जीव मरते हैं और उपजते हैं. दूसरी वक्त मैथून सेवनेसे नवलाख सन्नी पचेंद्री और असंख्याता असन्नी पचेंद्री की घात होती हैं. ऐसा अनर्थका कारण जाण एक वक्त उप्रांत मैथून नही सेवणा. विषय सेवन से निस्तेज, कमताकत, मंदबुद्धी, भ्रमिष्ट इत्यादिक अनेक दुर्गुण होते हैं. और कित्नी ही वक्त सेवन कीया तो भी तृप्ती नही आती है. बीचारना की देवांगना के † हजारों वर्ष के संयोग से तृप्ती न हुइ तो ये मनुष्य

† विमानिक देवका दो हजार वर्ष, जोतषी देवका पन्नरसो वर्ष, भवनपती देवका हजार वर्ष और बाण व्यंतर देवका पांचसो वर्ष तक संभोग रहता हैं.

के अशुची क्षिण भंगूर विषय से क्या तृप्ती होयगी.? यों बीचार संतोष लाणा, विषय इच्छा नित्य घटाना. गृहस्थका मैथून सेवणेका मुख्य हेतु पुत्रोत्पत्तिका है. सो तो फक्त स्त्री ऋतूकाल से निवृत हुये पीछे है. फिर तो एक महीने आत्मा वसमें रखणी ही चाहिये. विशेष विषय सेवन से गर्भ नाश होता है. इस चोथे व्रत की हिजापत (बंदोवस्त) के लिये पंच अती-चारोंका स्वरुप श्रावकको जाणना, परंतु आदरना नही. इनका स्वरुप इस तराह है.

१ " इतरिये परिगाहिय गमणें " थोडे काल की स्त्रीसे गमन करे, अर्थात् (१) कित्नेक परस्त्रीका त्याग कर ऐसी अभीभाषा करे की वैस्या तो किसी की स्त्री नही हैं, इसलिये इसको में द्रव्य दे के मास वर्षादिकका करार (वायदा) करके रखू कि इत्ने दिन तक अन्यपुरुषका सेवन नही करना. ऐसा वंदोवस्त कर लेवूं तो फिर ये मेरी स्त्री हुइ. ऐसा वीचार कर उन के साथ संभोग करे तो पहला अति-चार लगे. क्यों कि जो पंचों की साक्षी से ग्रहण की ि.ती हैं वोही पत्नी होती हैं और सब परस्त्री की

गिनतीमें हैं. ‡ (२) पाणी ग्रहण तो कीया अर्थात् परण तो लिये परंतू जबतक वो रूतू प्राप्त न होवे तब तक भोगणे जोग नही हैं. क्यों कि उसकी विषय पे रूची नही, फक्त परवस से पति की आज्ञा-का स्विकार करती हैं. जो वय प्रगमे विना स्वस्त्रीका सेवन करे तो ये अतीचार लगे.

२ " अपरि गाहीया गमणे " अपरणी (अ-विवाही) स्त्री से गमन करे सो. अर्थात् (१) ऐसा बीचारे की मेने परस्त्री के सोगन किये हैं परंतू ये तो कुवारी है किसी की स्त्री हुइ नही हैं. दूसरेका नाम न धरावे वांहा तक इसके साथमें गमन करू तो मेरे व्रत भंग नही होयगा. ऐसा बीचार कुवारीकासे गमन करे तो अतीचार लगे. क्यों कि ये काम राज पंच विरुद्ध है. अनीती है, गर्भ रहणे से निंदा और आत्मघात निपजे. वो किसी की पत्नी न हुइ तो

‡ सुचना–चोथे व्रत के पहले अतीचारकी पहली कलम और दूसरे अतीचार की १–२–३ कलम साफ अनाचार रुप जाणनी. ऐसा अर्थ करने की अब्बी रुढी है इसलिये ह्यां लिखी हैं. पेले अतीचार की २ कलम और दूसरे अतीचार की ४ कलम अतीचार रुप जाणना.

तेरी कहां से आइ? अब्बी तो वो पराइ स्त्री है.

(२) कोइ एसा बीचारे की ये विध्वा हो गइ इसका मालक मर गया अब इसका मालक होवू तो क्या हरकत हैं? यों बीचार विधवा से गमन करे तो ये अतीचार लगे, क्यों कि पती मर गया तो भी स्त्री उसी की बजेगी. विधवा गमन से गर्भपात आत्मा घात निपजणेका संभव हैं.

(३) कोइ बीचारे की वैस्या किसी की स्त्री नहीं है इस के साथ गमन करनेमें क्या दोष है? ऐसा जाण गमन करे तो दोष लगे.

(४) किसी की सगाइ (सादी) तो हो गइ है परंतू लग्न नहीं हुवा तब मनमें बीचारे की ये तो मेरी ही स्त्री है, इसके साथ संगम करने की कोनसी हरकत है? यों बीचार उसके साथ गमन करे तो अतीचार लगे, क्यों कि लग्न हुये पहले कोइ कारण निपज जाय तो उसको दूसरा भी ग्रहण कर लेवे. तथा पंच साक्षी विरुद्ध काम हैं.

कुमारी विधवा वैश्या या पर स्त्री * इनका ग-

---

* प्यारी कहे, सुणो, प्राण प्रिय? परनारके संग न जावणाजी,
एक जान जावे, दुजा जोर हटे, तीजा गोठका माल खिलावणाजी;
भाइ बंध सुणे फिट २ करे, तेरी जुवानीमें धूल न्हखावणाजी,
राजा सुणे तव दंड लहे, और जुत्यों की मार पडावणाजी;
९. ओगण जाण हो प्राणपती! परनारके संग न जावणाजी.

मन दोनु लोकमें दुःख देनेवाला होता है (१) जो स्त्री उसके पती की नही हुइ तो, तेरी कहांसे होनेवाली ? और वेश्या तो महा कपट की खान, किसी की हुइ नही, होवे नही, और होवेगी नही. जब तक धन देते हो तब तक वो अन्धा, बैरा, लुला, पांगला, वृद्ध, बाल, कुष्टी, भंगी ढेडादि नीच कु रुप सुगल—मलीन कैसा भी होवे उसे प्राणसे भी ज्यादा प्यारा कहती हैं. और धन खुटे प्राण प्यारेको धक्का मारके निकाल देती हैं. ऐसी रचना देख कर भी जो पर स्त्रीका संग नही छोडते है वो इस लोकमें फजीत होते है, राज दंड पंच दंड पाते है, सूजाक गरमी आदि बीमारीसे सडके २ विना मोत रो रोके मरते हैं (२) और परभवमें नर्कमें जाते हैं, वहां यम लोहे की गर्म पूतली करके चेटाते हैं. इत्यादी अनेक दुःख देते है. ए दोइ भवमें महा दुःखका ठीकाणा जाण पर स्त्रीका संग छोडनाजी.

३ " अनंग क्रिडा करणे " कहता योनी सीवाय अनेरे अंग (सरीर) की साथ काम क्रिडा करे अर्थात् (१) ऐसा वीचारे की मेने परस्त्री के साथ मैथून क्रिया के सोगन लिये हैं, कुछ अनंग क्रिडा

के तो नही लीये हैं, यों वीचार अधर चुवन, कुच-मर्दन, आलिंगन, इत्यादि करे परंतु ये अयोग्य कर्म हैं. श्रावकको तो परस्त्री के गुप्त अंगोपांग देखणा भी योग्य नही है तो फिर अनंग क्रिडा करनी कांहा रही? और अनंग क्रिडा भी व्यभिचार ही हैं. ये कर्म हुये पीछे वृत पालना मुशकील हैं. इसलिये वर्जें (२) काष्ट की मट्टी की कपडे की पत्थर की चमडे की इत्यादी पूतली के साथ काम क्रिडा करे सो भी अनंग क्रिडा की गिनतीमें है (३) कित्नेक हस्त कर्म और नपुसक संगमको भी अनंग क्रिडा कहते हैं. ये सब कर्म महा मोहका, कर्मबंधका स्थानक हैं, व्यभिचार ही है. इन सब कर्मोंको आत्म हितार्थी श्रावक सर्वथा वर्जें.

४ "पर विवहा करणे" कहता कुटुंब सिवाय दुसरेका व्याव लग्न करे अर्थात् गृहस्थको अपणे न्याती गोती भाइबंध जिनकी मालकी कर बैठे है उनके लग्न विवाह करने से बचना तो बहुत मुशकल हैं, परंतु श्रावकको अन्यमतावलंबीयों की तरह कन्यादानका पुन्य जाण ब्राह्मणादिक की कन्या परणाना तथा अपणा मोटाइपणा कायम रखणे आप

अगवाणी होके सर्व गाम या देशवालेका सगा सम्बंधी न्यात जात के सर्व जणे के व्याव के काममें अगवाणी होके सगपण (स्यादी) करावे. ये महा कर्म बंधका कारण है. संसार बडानेका कारण हैं. मैथून क्रिया की वृद्धी होणेका कारण हैं. और योग जोड नही मिले तो दंपतीयोंमें क्लेश होवे उस्का अपयश उसको मिलता हैं. इत्यादी अनर्थका कारण जाण श्रावक दूसरे के सगपण के झगडेमें तो नही ज पडे, जित्ना कर्मबंध से बचाव होय उत्ना बचे.

५ "काम भोगेसु तिव्वा भिलासा" काम भोग की तिव्र (अती) अभीलाषा (इच्छा) करे. अर्थात् (१) काम—छे राग तीसरागणी अनेक विणादिक वाजिंत्रों के साह्य से तल्लीन हो श्रवन करना. स्त्री के गुप्त अंगोपांग नग्न चित्रका वारंवार अवलोकन करना (देखना). (२) भोग—फूल अंतरादि सुगंधी द्रव्य सदा सूंघणा. नित्य पांच (दूध दही घी तेल मीठाइ) तथा नव (पांच पहले—दारु मांस मद्य (सहेत) मक्खन) विषय नित्य भोगवे. रसायणका सेवन करे. वीर्य स्थंभन गुटिका औषध लेवे. नित्य षट रस भोगवे, वारंवार आलिंगन चूंबनादि

करे. पूष्प शय्या अतर फूल लगा के सोले शृंगार सज के चाक पाक रहे की स्त्री देख के आसक्त हो जाय. वसीकरण आकर्षण मंत्रका आराधन करे. इत्यादी योग से अहो निश विषयाभीलाषा करे. इन वस्तूका संजोग मिले अति आशक्त प्रेमाणू राग रक्त हो जाय, सो पांचमा अतीचार. इस तिव्र अभीलाषा से या रसायणादिक के सेवन से बहुधा सरीरमें व्याधी उत्पन्न होणेका संभव हैं. सरिरमें धातू फूट निकलती है, सूजाक, सूल, भ्रमचित्त, कंपवायू, मुरछा, सुसती, विकलता, क्षय रोग, निर्बलतादिक बामारी से अकाल मृत्यू निपजती हैं. और तिव्र अभीलाषा से समे २ बज्र कर्म बंधते हैं, शास्त्रमें कहा हैं कि, “काम पत्थेव माणा, अकामा जंती दुग्गइ” काम की प्रार्थना करे और काम भोग सेवन नहीं करे तो भी मर के नर्कादि दुर्गतीमें जावे. ऐसा जाण तिव्राभीलाषा रुप पांचमा अतीचार सर्वथा वरजे. जो इच्छा रुकते भी न रुकती होय तो विगय त्यागे. तपस्या करे और ब्रह्मचारी के चरित्र और विषय निषेधक पुस्तकोंका सदा पठन करे.

चोथे व्रतके पांच अतीचार टालके सर्व व्रतका

मूल व्रत ब्रह्मचर्य इस्की सम्यक प्रकारे जो आराधना करता हैं उनकी देव दानव मानव सेवा करते हैं. सर्व विश्वमें कीर्ती निवास करती हैं. बुद्धी की प्रबलता होती हैं. सरीरमें रुप तेज बल की वृद्धि होती हैं. दुश्मनके किये हुये मंत्र जंत्र कामण टुमण मूठ इत्यादी कुछ नही चलते हैं. दुष्टदेव व्यंतरादिक किसी प्रकारका उपद्रव नहीकरसकते है. सीलकेप्रभावसे अग्नी पाणी रुप, समुद्र स्थल रुप, सिंह बकरी रुप, सर्प डोरी रुप या फूलकी माला रुप, उजाड वस्ती रुप, जेहर अमृत रुप इत्यादी सर्व अनिष्ट प्रादूर भाव पाके सुभ रुप प्रगम जाते हैं. कोइ क्रोड सोनैये नित्य दान देवे और कोइ एक दिन सील पाले तो तूल नही. सीलवंत ह्यां अनेक सुख भुक्त स्वर्ग मोक्ष पायगा.

५ "पांचमा अणुव्रत थूलाओ परिग्गहाओ वेरमणं" कहता पांचमे व्रतमें श्रावक थूल (बहुत) परिग्रहसे निवर्ते. अर्थात् सर्वथा परिग्रहका तो त्याग होना मुशकिल हैं, क्यों कि गृहस्थका परिग्रह विन कार्य भार कैसे चले? तथा कहा है की "साधूके पास कोडी होय तो साधू कोडीका और गृहस्थके

पास कोडी नही होय तो कोडीका" इसलिये गृह-स्थ द्रव्य रखते हैं. परंतु ऐसा नही कहा है कि धनके लिये मर्यादा भंग करना, अति आसा करना या बे मर्याद हो रात दिन मार २ फिरना. क्यों कि कित्नी भी महिनत करी तो भाग्य उप्रांत लक्ष्मी प्राप्त नही होती हैं. और कित्नी भी लक्ष्मी प्राप्ती हो गइ तो संतोष विन तृप्ती होणे वाली नही. कहा हैं. "जहा लाहो तहा लोहो, लाहो लोहो पवढइ" ज्यों ज्यों लाभमें वृद्धि होती हैं त्यों त्यों लोभमें वृद्धी होती है. तृष्णाको विन पालका तलाव कहा है, अर्थात् जिस तलावको पाल नही होती है उसमें कित्ना भी पाणी आया तो भी वो भराता नही हैं. ऐसे ही लोभी मनुष्यको सर्व सृष्टीका द्रव्य प्राप्त हो गया. तो भी उसका पेट भराता नही हैं. देखिये की एक वक्त जि-नको पहरने कपडे, खाने अन्न नही मिलता था, वृक्षके पत्ते उनके वस्त्र और फल कंद जिनका आहार तथा मुहको मट्टी लगाइ वोही उनको सृंगार सो राजा महाराज हो गये तो भी उनका पेट नही भ-राया. और ठिकाणे २ लखो क्रोडो मनुष्यका कट्टा कब्जा संपूर्ण पृथवी पत हो जाय तो भी कभी पेट

भराय क्या? जो अत्यंत हीन स्थीतिको प्राप्त हुये राजा महाराज हो गये उनकी इच्छा तृप्त न हुइ तो अहो भव्य! तुम लाख क्रोड कमानेसे क्या तृप्त हो जायगे? "संतोषं परम सुखं" संतोषी परम सुखी कहा है. इसलिये सम्यक् द्रष्टी श्रावकको परिग्रह की मर्यादा अवस्य करनी. परिग्रह नव प्रकारका:—

१ "खेत यथा पम्माण" खेत (उघाडी भूमी) का इच्छित प्रमाण करना. अर्थात् खेत (वर्षादसे धान निपजें सो) अडाण (कुवा वावडीके पाणीसे अनाज निपजे.) बाग (अनेक फल फूल पैदा होवे सो) वाडी (अनेक भाजी शाक पेदा होवे सो) वन (एक प्रकारके बहुत वृक्ष होवे सो) तथा छूट्टी भूमीमें घांस प्रमुख निपजे सो, ये सब उघाडी भूमीका जाणनी. बणे वहां लग तो श्रावकको उपरोक्त वस्तूका संग्रह नही करना; क्यों कि ये सर्व महा आरंभ (सदा छे कायका घमशाण होवे) ऐसा ठिकाणा हैं. इस कर्ममें त्रस जीव की भी हरेक वक्त घात होती हैं. महा दोषका ठिकाणा जाण छोडना. जो नही छूट सके तो जित्ना चाहीये उत्ने नंग की एक दो जावत खप लगे उत्ने खेत अडाण बाग

इत्यादी रखके उन की लंबाइ चोडाइ विगेरेका प्रमाण करे. थोडेसे काम चले वहां तक विशेष न रखे और घटाता रहै.

२ " वत्थ यथा पम्माण " वत्थ (ढकी भूमी) का ईच्छित प्रमाण करे. अर्थात् घर (एक मजल) महल (दो आदी बहु मजल) प्रासाद (शिखर बंद घर सो) तलघर (धरतीमें के भूवारे) हाट (व्यापारका मकान) इत्यादी ढकी भूमी—घरादिक इन की १—२ उप्रांत मर्यादा करनी और लम्बाइ चोडाइ ऊंचाइका भी प्रमाण करना. जहां तक सीधा बणा हुवा मकान मिले या अपनको रहणेको होवे वहां तक नवीन मकान बंधाणेका आरंभ नही करे, क्यों कि नवा मकान बणानेमें छे कायाका बहुत काल तक कुटारंभ होता हैं. इसलिये चीकणे कर्म बंधका कारण हैं. ऐसा पाप से डरे. द्रव्य के जास्ती खरच सामे नही देखणा. परंतु पाप से आत्मा बचाणा. जो नही चले तो जित्ने घरादिक चाहीये उनकी लंबाइ चोडाइ ऊंचाइका प्रमाण कर ज्यादा बंधाणेका त्याग करे. और पाप घटे वांहा तक घटावे.

(३—४) " हिरण सुवण यथा पम्माण " चांदी

सोनेका इच्छित प्रमाण करे अर्थात् ये सोने चंदी दो तरह से रहते हैं (१) विना घडा चांदी, सोना, थेपी, लगडी प्रमुख. (२) घडा हुवा सोना चंदी प्रमुख सो मुद्रिका आदिक आभरण (गेहणा) इन के नंगका तथा बजन तोला सेर प्रमुख और कीमतका प्रमाण करे. तथा चले वहां तक नये गेहणे घडावे नही. क्यों कि घडानेमें अग्नी वायू पाणीका विशेष आरंभ निपजता हैं और अग्नीका जिहां आरंभ होता है वहां छे ही कायका आरंभ होणेका संभव हैं. तय्यार दागीने मिलते कोण सुज्ञ श्रावक नवीन घडाने धातू गलाणेका महा आरंभ कर के कर्म बंधेगा ? जो कदापी नही चलता होय तो नंग बजन कीमतका प्रमाण करे.

५ "धन पम्माण" धनका प्रमाण करे अर्थात रत्न माणक हीरे पन्ने मोती मणी तुमली लसणीया प्रवाल प्रमुख तथा नगद नाणा रुप्पा मोहर प्रमुख सिक्काके नाणे इन की, नंग की और कीमतका प्रमाण करे. और नवीन खान खुदाके पत्थर चिराके नवीन जवेरात निकलावे नही, क्यों कि पृथ्वी खोदनेमें पत्थर चीरनेमें अनेक मसाले लगानेमें अनेक

जीवोंका घमशाण होता है. और मोती निकलाने सीपो चिरानी नही, क्यों कि सीप बेंद्री जीव हैं उनको चीरनेसे रक्त जैसा पाणी निकलता है. और अरराट शब्द कर वो रोती है, आक्रंद करती हैं. ये महा अनर्थका कारण हैं. जो सीधी सर्व वस्तु मिलती हैं. तो नाहक कायको कर्म बांधणा चाहीये? इत्ने उप्रांत नही सरता होय तो मर्यादा करे कि इत्ने उप्रांत न करुंगा.

६ " धान्न प्पमाण " धान (अनाज) का इच्छित प्रमाण करे, अर्थात् शाल, गहु, चीणा, जवार, बजरी, मकी, आदी धान तथा धान जैसे ही राजग्रा खसखस प्रमुख और भि वस्तु हैं. तथा धान शब्दमें सब खाद्य (खाणेके) पकवान, घी, गुड, सक्कर, मेवा, किराणा, लुण, तेल, प्रमुख सर्व जाणना, इत्यादिक की मण सेरादि प्रमाण से जात प्रमाण से मर्याद करे. और इन पदार्थको बहुत काल तक संग्रह करके नही रखणा, क्यों किये वस्तू बहुत काल तक टिक सकते नही हैं. अनेक त्रस जीवों की उत्पत्ति हो जाती हैं. इसलिये इनको रखणे के कालकी भी मर्यादा करनी चाहीये. और बणे वहां

लग इनका वैपार नही करना, क्यों कि इस के संग्रह से अनेक त्रस जीवकी घात निपजती हैं. तथा इस वैपारवाले के बहुत कर के खोटे प्रणाम रहते हैं, ये दुष्काल पडना बहुत चाहाते हैं. कदापि इसके वैपार विन नही चले तो वजन की काल की, मर्यादा करे. घटे जित्ना पाप घटावे.

७ "द्वीपद यथा पम्माण" कहता दो पगवाली वस्तूका इच्छित प्रमाण करे अर्थात् (१) बच्चपण से मोल ले के रखे सो दास. वर्ष मासादिक की मर्यादा कर के रखे सो कामकर (नोकर) तथा नित्य दाम दे के रखे सो चेटक (चाकर) इत्यादिक. वणे वहां तक तो बहुत नोकर रखणा ही नहीं, क्यों कि इस से प्रमाद बढता हैं. और जित्ना अपणे हाथ से यत्ना से काम होता है उत्ना उनसे होणा मुशकील हैं. कदापि नही बणे तो मर्यादा करे की इत्ने उप्रांत नही रखूंगा. (२) पक्षीयोंका पालना सो भी दो पदमें गिणा जाता हैं. ये काम भी करना योग्य नही हैं. (३) गाडी दो चक्र (चाक) वाले वाहणको भी द्वुपदमें गिणते हैं. (४) और ऐसी भी मर्यादा करे की मैरे इत्ने पुत्र पुत्री हुये पीछे में

ब्रह्मचर्य धारण करुंगा. इत्यादी दो पदकी मर्यादा करे.

८ "चौपद यथा पम्माण" चौपदवाली वस्तू-का यथा प्रमाण करे. अर्थात् गाय भेंस घोडे ऊंट बकरे इत्यादी पसुवोंका श्रावकको संग्रह नही करना, क्यों कि इनके संग्रह से वनस्पति (हरी) काचा पाणी और त्रस जीव मच्छर बग प्रमुख की विशेष घात करनी पडती हैं. और एक अंतराय कर्म बंध-णेका भी खाता हैं. गाय भेंसादिकका दूध निकालने पहले उसके बच्चेको छोडते हैं उस्के मुहमें दूधका घुटका आया के तुर्त छुडा लेते हैं. उसे तडफडते त्रसाते हैं. ये महा कर्म बंधका कारण हैं. कदापि चौपद रखे विन नही चले तो उनका प्रमाण करे की इत्ने उप्रांत नहीं रखूंगा.

९ "कुविय धातू पम्माण" तांबा, पीतल, कांसी, कथीर, सीसा, लोहा इत्यादी धातू तथा इ-नके बर्तन (वासण) थाली लोटा प्रमुख जो कुछ घर कार्यमें लगे सो. उनका वजनका नंगका प्रमाण करे. और मिट्टीके लकडके वस्त्रके तथा कागज गला करके टांटादिक वणाते है सो सब इसमें गिणा जाते हैं. और कुविय शब्द घर वीखरेमें जो जो छोटे मोटे

पदार्थों तथा पहरने ओडनेके वस्त्रादिक सब गिण लेणा. इनके नंग की बजन की और कीमत की मर्यादा करे. विशेष घर विखेरा न बढावे. कहा है की "संपत जित्नी वीपत." ये नव प्रकारके परिग्रह की मर्यादा इस तरह करे कि जित्नी अपने पास वस्तू है और इसमें अपणा गुजरान तावे उम्मर सुखे हो जायगा तो फिर ज्यादा आडंबर बढाके कर्म बंधका अधीकारी नाहक कोण होयगा ?

कित्नेक कहते हैं की अपणे संग्रह करके नही रखेंगे तो अपणे बाल बच्चे पीछेसे क्या करेंगे ? ये उनका कहना भोलपका हैं. क्यों कि निश्चयमें कोइ भी किसीको सुखी दुःखी नही कर सकता हैं. सब पूर्व जन्मसें जित्ने २ पुदगल भोगवणेका संचय करके आते हैं उत्ना २ संयोग उनको सहज ही बण जाता हैं. गरीब मा बापके पुत्र श्रीमंत और श्रीमंतके पुत्र गरीब अनेक इस सृष्टीमें द्रष्टी आते है. जो मा बापके धनसे वो सुखी दुःखी होवे तो ये दशाको क्यों प्राप्त होवे ? और भी गर्भमें जठराग्नी के तापसे बचके बाहिर पडे तब आपको माताके दूध की जरुर थी सो कोण पैदा कर सकता हैं ? परंतु

दैवसे वक्तपे वो भी मिल जाता है तो क्या खान पानादी इच्छित सामग्री वक्तरे न मिलेगी? नाहक दूसरेके लिये अरन कर्मका बंध कर दुःखी क्यों होना? आगे आनंदजी प्रमुख श्रावकोंने मर्यादा करी है सो उनके पास द्रव्य था उत्ने उप्रांत द्रव्य की करी है. आप की इत्नी तृष्णा न रुके तो इच्छा प्रमाणे रख मर्यादा कर पापसे जरुर बचो. कोइ कहेगा की पास सो रुपेका धन नही और लाख उप्रांत सोगन कर लिया तो उसे क्या फायदा? परंतु "स्त्री चरित्र पुरुषस्य भागं देवो न जानाति कुतो मनुष्यः" पुरुषके भाग्यको देवता भी नहीं जाणता है. कि इस गरीब आगे कोनसी ऊच्च स्थितीको प्राप्त होयगा? गायो और बकरीयोको चरानेवाले राजा महाराजा हो गये सो प्रत्यक्ष दिखते है इसे याद करो. तथा मर्यादा होनेसे तृष्णा रुक जाती हैं के मुजे इस उप्रांत नही रखणा है ज्यादा हाय दोड करके क्या करु? यों संतोष आणे-से उस्को पर्म सुख की प्राप्ती होती हैं. इस लिये मर्यादा अवस्य ही करनी चाहीये. ये व्रत एक करण तीन योगसे ग्रहण कीया जाता हैं. मैं रखूं नही मन बचन काया करके. पुत्रादिकको र-

खणेका कहना और रखतेको अच्छा जाणनेका आगार है. इस पांचमे व्रतके पांच अतीचारका स्वरुप जाणके इन अतीचारोंसे इस व्रतको बचाके निर्मल रखणा.

१ " खेत वत्थू पम्माणाइ कम्मे " खेत घरका प्रमाण अतीक्रमे (उलंघे) अर्थात (१) पहले पांच खेत रखे है और फिर छटा खेत आ गया तो उन पांच खेतमेंसे एक खेत की पाल (मर्यादा) तोड उसमें मिला लेवे, तो अतीचार लगे. क्यों कि प्रमाण करती वक्त लंबाइ चोडाइ विगेरेका भी प्रमाण किया है सो टूटे. कदापि लंबाइ चोडाइका प्रमाण नही भी किया होवे तो भी दोष लगे. क्यों कि वो छटा खेत प्रत्यक्ष पांचमें मिलाया मन साक्षी देता है. (२) ऐसे ही वत्थू (घर) की बाबतमें जाणना. पहले घर रखे है उस से ज्यादा आ जावे तो भीत फोड उसमें मिलावे तो अतीचार लगे. और जास्ती घर आया धर्मस्थान खाते दे देवे तो धर्म होवे.

२ " हीरण सुवर्ण पम्माणाइ कम्मे " चांदी सोनेका प्रमाण अतिक्रमे. अर्थात् घडे विना घडे चांदी सोनेके ढपे तथा दागीनेका प्रमाण कीया है उससे

जास्ती आ जाय तो पहले के गेणेमें तोड भांग मिला लेवे. तथा बीचारे की ये प्रमाण तो मेरे है कुछ मेरे पुत्रादिक के तो नही और आप कमा के उनको देवे तो भी अतीचार लगे. हां धर्म खातेमें वापर देवे तो पुन्य उपार्जन करे.

३ "धन धान पम्माणाइ कम्मे" धन धानका प्रमाण अतीक्रमें अर्थात नगद सोने रुपेका नाणेका तथा जवेरातका तथा धान (अनाज) का प्रमाण कीया है और मर्यादा उप्रांत बढ जाय तो पूर्वोक्त पुत्रादिक की नेसरायमें करे तो पाप लगे. धर्म–पुन्य काममें लगावे तो बचे.

४ "दोपद चौपद पम्माणाइ कम्मे" दोपद नोकर मनुष्य पक्षी इत्यादीका तथा चौपद गाय घोडी प्रमुखका प्रमाण कीया है. और उस उप्रांत जो कभी आ गये उनको अपणी नेसरायमें रखे तो पाप लगे तथा लाये पीछे बच्चे हुये होय तो उस्का आगार रखणे का, पच्चख्खाण के वक्तमें, विवेक रखणा. जो आगार न रखा होय तो उनको दूसरे आराम ठीकाणे पहोंचावे तब ही अतीचार से बचे. और पसू पक्षी कोइ मरता होय उसे दया निमित छोडा के

लाये वो दूसरे ठीकाणे जाणे असमर्थ हैं. उसे दया निमित रखे तो दोष नहीं. लोभ नीमित रखे तो दोष लगे.

५ " कुविय धातू पम्माणाइ कम्मे " तांबा पीतलादिक धातू तथा उनके बर्तन और सर्व घर वीखेरा जिसकी मर्यादा करी हैं उस उप्रांत हो गया और उनको तोड फोड दोके एक करे तथा पुत्रादिक स्वजन की नेसरायमें रखे. एक सूइ मात्र भी जो मर्यादा उप्रांत रखे तो अतीचार लगे.

इन पांच ही अतीचारको टालके शुद्ध व्रत पाले. तृष्णा रोकना. कुछ ज्यास्ती धन से ज्यास्ती सुख प्राप्त नहीं होता हैं. धन पैदा करती वक्तमें भी भूख प्यास सीत ताप अनेक कष्ट सहन करने पडते है. पैदा हुवे पीछे चौर अग्नी कुटुंबादिक से बचा के रखणा पडता हैं. भरनिंदमें से खटका सुण चौक के उठना पडता हैं. यों आता ही दुःख देता है. और मूंजी (कृपण) तो खरचते हुये रोते हैं. दूसरे के नशीबमें न होय और आके चला जाय तो भी रोणा पडता है. ऐसा अनर्थका-दुःखका मूल धन है. तो हे भव्य ! जो सर्वथा न छुटे तो मर्यादामें रह

संतोष धारण करो. दुःख से बचो. क्योंकी जित्ना तुमने संग्रह कीया उत्ना कुछ तुमारा नही हैं. तुमारे काममें तो उसमेंका थोडा ही हिस्सा आवेगा. हजार घोडे हुवे तो एक पे हीं चडोगे. तथा तुमारा तो वो ही है की जो तुमने सुकृत्य दया धर्म–ज्ञान वृद्धीके कार्यमें लगाया सोइ आगेको पावोगे. ऐसा जाण संतोप धरो. तृष्णा घटावो. जो इस संतोप व्रतको सर्वथा प्रकारे त्रीयोग शुद्धीसे आराधेगा, वो सर्व सुखको किंचित कालमें प्राप्त करेगा. संतोषीके पास लक्ष्मी स्थिर होके रहती हैं. यश की वृद्धी होती हैं. लोकोंमें बहुमान होता हैं. हृदय सदा संतुष्ट रहता हैं. सुखसे सर्व जिंदगानी गुजरती हैं. इस लोकमें अनेक सुख भोगवके पर भवमें स्वर्ग मोक्षके अनंत सुख अनुक्रमें प्राप्त करता हैं.

॥ इति पांच अणुव्रत समाप्त ॥

तीन गुण व्रत.

अब तीन गुण व्रतका बयान करते हैं. पूर्वोक्त पांच अणुव्रतको गुण के करता जैसे कोठारमें माल रखणे से बिगडता नही हैं तैसे तीन गुण व्रत धारण करने से पांच अणुव्रतका जापता होता हैं.

६ "दिशी वेरमणव्रत" देशावरमें जाणे के कोशकी मर्यादा करे. अर्थात् जहां लग ये प्राणी दिशायों की मर्यादा नही करता है वहां लग इस जगतमें जित्ना पाप होता है उस की क्रिया (हिस्सा) चली आती हैं. ये दिशा जघन्य तीन (ऊंची नीची तिरछी), मध्यम छे (पूर्व दक्षिण पश्चिम उत्तर ऊंची नीची), उत्कृष्ट दश (चार तो पूर्वादिक पहले की सो और चार अग्नी, नैरुत्य, वायू, इशाण कूण. तथा ऊंची और नीची) और भेदांतरसे अठारे (चार दिशी. चार विशी. आठ इनके आंतरे और ऊंची नीची) दिशी होती हैं. * इनमेंसे ह्यां पहली कही सो तीन दिशा ही प्रमाण करनेके लिये ग्रहण करी जाती हैं.

---

* अठारे भाव दिशी, १ पृथवी २ पाणी, ३ अग्नी ४ हवा. ५ सुक्ष्म वनस्पति ६ संख्यात जीववाली, असंख्यात जीववाली, ८ अनंत जीववाली (ए ४ वनस्पति) ९ बेंद्री १० तेंद्री. ११ चौंद्री. १२ पचेंद्री. (ये ४ त्रस तिर्यंच) १३ समुत्सम १४ कर्म भूमी १५ अकर्म भूमी. १६ अंतर द्वीपा के मनुष्य १७ नर्क. १८ स्वर्ग. इन १८ भाव दिसीसे जीव आता है.

१ " उड्ढ दिशा यथापम्माण " ऊंची दिशामें जाणेका प्रमाण करे अर्थात् (१) पहाडपे झाडपे मेहल तीरस्थंभ (मीनारेपे) चडनेका तथा विद्याधर देवताके विमानमें गुब्बारेमें या यांत्रीक घोडे गरुड प्रमुखपे स्वार हो ऊंचा जाणा पडे तो उस्की मजल हाथा कोशादिकके हिसाबसे मर्यादा करे (२) कोइ ऐसा भी कहते हैं की पश्चिमसे पूर्व की जमीन ऊंची हैं इसलिये पश्चिमके रहणेवालेको पूर्व दिशामें जाणेके ऊंच पणेका कोशादिकसे इच्छित प्रमाण करे.

२ " अहो दिशी यथा पमाण " अधो (नीची) दिशीमें जाणेका प्रमाण करे अर्थात् गुफामें, भोंयरेमें, तल घरमें, खदानमें, तथा पूर्वोक्त रीतसे पूर्व दिशाका मनुष्य पश्चिममें जावे तो इच्छित नीचे उतरेने की मर्याद करे.

३ " तिरिय दिशा यथा पमाण " तिरछी दीशाका इच्छित प्रमाण करे अर्थात् पूर्वादिक चार दिशी विदिशीमें जाणेका प्रमाण करे. इस प्रमाणमें जित्ने कोश रखे हैं उसके अंदर की अव्रत तो आती है और सर्व देश ऊणी तीनसे त्रीस चालीस राजू की अव्रत (पाप) आणा बंद हो गइ और जो पच्च-

खाण किये हैं उसके उप्रांत जाके पापके पांच (हिंसा, झूट, चोरी, मैथून, परिग्रह) आश्रव नही सेवे. परंतु जीव छोडाने साधूके दर्शन करने या दिक्षा ग्रहण करे पीछे जावे तो पच्चखाण भंग न होवे. इस व्रतके पच्चखाण दो करण और तीन जोगसे होते हैं. इस व्रतके रक्षणके लिये पांच अतीचार जाणके छोडना चाहीये.

१ " उड्ढ दिशी पमणाइ कम्मे " प्रमाण कीये उप्रांत ऊंचा जावे अर्थात् ऊंची दिशामें जाणेका कोशोंका जो प्रमाण कीया हैं उस उप्रांत जाणके जावे तो अनाचार लगे और अजाणमें जावे तो अतीचार लगे, परंतु इत्ना जरुर ध्यान रखना चाहिये की मर्याद् उप्रांत भूलके गये बाद जहां याद आवे वांहासे पीछा पलट जाय, आगे ना बढे तथा देवता विद्याधर प्रमुख कोइ हरण कर जाय, हवामें कोइ वस्तू उडजाय तो आप मर्यादा उप्रांत न जाय. अपणी मर्यादामें वो वस्तू आके पडजाय तथा कोइ लाके अपनको देवे उसे ग्रहण करे तो व्रतका भंग नही होवे. ऐसे ही देवतादिक जबरदस्तीसे ले जावे तो भी व्रत नही भंगे. परंतू वस पहोंचे वांहांतक

पीछा मर्यादामें जो न आवे तो वहांतक आश्रव नही सेवे.

२ " अहो दिशी पमणाइ कम्मे " नीची दिशीका प्रमाण अतीक्रमे, अर्थात् जैसी ऊंची दिशा की विधी कही वैसी ही नीची दिशा की जाणना. जो वावडीमें खाडमें मर्याद उप्रांत वस्तू पड गइ या कोइ ले गया तो आप नही लावे. अपने कहे विन कोइ दूसरा ला देवे तो व्रतका भंग न होवे.

३ तिरिय दिशी पमणाइ कम्मे " तिरच्छी दिशाका प्रमाण अति क्रमे (उलंघे) अर्थात पूर्व दिशा चार दिशा विदिशा की मर्यादा ऊंची दिशा की तराह अतीक्रमे तो अतीचार लागे. रेलगाडीमें निद्रादिक के योगसे या समुद्रमें झाज आदिकमें तोफानादिक के योगसें जो मर्यादा उप्रांत चला जाय तो जिहां स्मृति आवे वांहासे शक्ती होवे तो तुर्त पीछा आवे, नही अवाय तो मर्यादामें न आवे वहां तक आश्रवका सेवन न करे.

४ ' खेत वुद्धी ' जमीन बधावे अर्थात पूर्वादिक दिशामें ५०–५० कोश रखे है और पूर्व दि- सो कोश जाणेका काम आ गया तब बीचारे

की मेरेको पश्चिममें जाणेका काम पडताही नही हैं, इस लिये पश्चिमके ५० कोस पूर्वमें मिलाके सो पूरे कर लेवे तो दोष लगे. यों नही करना.

५ ' सइ अंतरधा ' भ्रम चित्तसे, नशेके योगसे, या भूलके कि मेंने इस दिशीमें ५० कोस रखे है कि सो, जहांतक पूरा निश्चय न होवे वहां तक ५० उप्रांत जावे तो अतीचार लगे. याद शुद्ध न आवे वहांतक आगे नही जाणा. ये अतीचार टालके छट्टाव्रत निर्मल पालेगा उस्को मोटा गुण तो ये हुवा की ३४३ राजूकी बहुत अव्रत मिटा दी और किंचित रही इससे तृष्णा रूकी मन शांत हुवा. अव्रत रूकनेसे अनंत भव भ्रमण मिटाके स्वर्ग सुख भोग शिघ्र पद प्राप्त करेगा.

७ " सातमा उवभोग परिभोग विहं पच्चखाय माणं " कहता सातमे व्रतमें उपभोग परिभोग की मर्यादा करे अर्थात् (१) जो वस्तू एक वक्तसे ज्यादा भोगवणेमें नही आवे जैसे आहार पाणी पक्कान तंबोलादिक एक वक्त भोगव लिये पीछे निक्कम्मी हो जाती हैं इस भोगको उपभोग कहते हैं (२) जो वस्तू वारंवार भोगवणेमें आवे जैसे वस्त्र स्त्री मकान बरतन इत्यादिक को परिभोग कहते हैं.

इन उपभोग और परिभोग दोनुके मुख्य २६ भेद किये हैं सो इन २६ बोलकी मर्यादा करनेसे, सर्व जगतका मेरु जित्ना पाप हैं, उसे घटाके राइ जित्ना रह जाता हैं. इन २६ बोलके नाम—

१ "उलणीया विहं" शरीरको पूछणे (साफ करने) के टुवाल प्रमुख वस्त्र २ दंतण विहं—दांतको साफ करनेको दातण[1] मंजण प्रमुख. ३ फल विहं —वृक्षके फल आमृ जाम प्रमुख. ४ अंभंगण विहं —तेल फूलेल अतर[2] प्रमुख. ५ उवट्टण विहं. पीठी उगटणा तथा चीगटाइ निकालने हाथको गोबर मिट्टी धूल राख लगावे इत्यादी तथा साबू[3] खारा दिक जा

१ श्रावक सचित मिट्टीसे तथा हरी लकडीसे दातण नही करे. २ शोक निमित्ते श्रावक अंतरतेल शरीरको न लगावे, औषधादी निमित्ते लगावे तो प्रमाण करे. ३ इस वक्तमें चरबी साबण बहुत आता हैं सो श्रावकको छीने लायक भी नही है तो वापरना किधर रहा ? तथा खारादिक वस्त्रको लगाके और तेल आमले उगट शरीरको लगाके नदी तलावके अंदर स्नान नही करे क्योंकी उस्का रेला जावे वांहातक जीवोंका संहार हो जावे.

शरीर साफ करने लगावे सो. ६ 'मंजण विहं'–स्नान (अंगोल) करे. सो स्नान[1] दो प्रकारके होते है (१) देश स्नान सो गोडे नीचे पग खूणी तक हाथ और गर्दन (गले) उपरका सरीर धोवे सो. (२) सर्व स्नान सो नख शिख सर्व सरीर पखाले सो. ७ "वत्थ विहं" सूत उन रेसमादिक के पहरने ओडने के कपडे. ८ "विलेवणविहं" केसर चंदन गोपीचंदन कूंकुम इत्यादी सिरके लगाणे (तिलक करने) की वस्तू. ९ "पुप्फविहं" चंपा चमेली केवडा गेंदा

---

१ स्नान करे तो गरम पाणी ठंडा पाणी न मिलावे. और मोरीपे, लीलोत्रीपे, कीडी नगरेपे स्नान करने बेटे नही.

२ रेशमके कीडे मकडी तरह अपने मुहमेंसे तंतू (तार) नीकालके अपने शरीरको लपेट लेते है, उनको पालने वाले लोक तुर्त उकलते पाणीमें डाल मार डालते है; क्योंकि वो कीडे बाहीर निकलते है तब उस तारके टुकडे २ हो जाते है. ऐसे त्रस जंतूकी हिंसासे रेशम निपजता हैं. इस लिये श्रावकको रेशम तथा रेशमी वस्त्र वापरने योग्य नहीं है.

गुलाब इत्यादी फूल[१] १० " आभरण विहं " सिरपेच कानके नाकके हाथके कमर पेरके इत्यादिक ठिकाणे पहेरनेके सोने चंदी जडावू गेणे (दागीने) ११ "धूपविहं" पंचांग दशांग अगरबत्ती ऊदबत्तीया सूगंधी धूप तथा मीरचीयादी अन्य द्रव्य की दुर्गंधी धूप[२] १२ " पेज विहं" चाहा काफी धनागरा उकाला कादा प्रमुख. तथा ठंडाइ भांग इत्यादी. १३ " भखण विहं " अपने घरमें बणाये हुये तथा हलवाइके ह्यां बणाये हुये पक्वान खाजा प्रमुख फीके, लाडू ज-

१ फूलमें नरमाइके जोगसे अनंत जीवोंका संभव है. तथा फूलमें त्रस जीव बहुत रहते हैं. इस लिये फूलको छीना भी योग्य नही है. कित्नेक देखा देखी हरेक काममें फूलका आरंभ करते हैं. तूररे गजरे हार छोग वगेरे बणाते हैं. ये कर्म श्रावकको करना बिलकुल अयोग्य है.

२ सुगंधी या दुर्गंधी. धुपके धुवेसे मच्छर प्रमुख बहुत त्रस जीव मरजाते हैं. तथा अग्नी विन धूप होती नही हैं. और अग्नी महा जबर दश ही दिशामें छे कायका शस्त्र हैं. इस लिये धूप नही करना. कोइ औषधी आदिक निमित धूप करना पडे सो बात जुदी हैं.

लेबी कलाकंद प्रमुख मीठे[1]. १४ उदन विहं मूंग चीणे मसूर प्रमुख की दाल १५ 'सूपविहं' चावल गहुं प्रमुख २४ जातका अनाज. पाठांतरे एक चांवलके जित्ने प्रकार होवे सर्व. १६ "विगय विहं" दूध दही घी तेल सक्कर गुड तलवणी[2] धारविगयादी[3]. १७ 'साग विहं' शाक मेथी मूले प्रमुख की भाजी[4]

---

१ चीन्नी सक्करकी मीठाइ तो छीने लायक भी नही है. इस्का तो पहले बयान कीया हैं. और श्रावकको विशेष मीठाइ खाना नही चाहीये, क्यों कि इस से त्रस क्रमी जीवोंकी उत्पत्ति तथा सरीरमें व्याधी उत्पन्न करनेका स्वभाव हैं.

२ तेल घीमें जो पदार्थ तलते हैं, पूडी पापड प्रमुख उसे तलवणी कहते हैं.

३ दूध घी आदिक जो पदार्थ देते धार बंधे उसे धार विगय कहते है. खीर बासूदी वगैरे तथा बहुत विगय के सेवनसे प्रमादकी वृद्धि होती हैं इस लिये ज्यादा नही खाणा.

४ बहुत शाख रोगसे भरे हुवे हैं. इसलिये सर्वथा न छूटे तो विशेष शाख नही खाणा. और कित्नीक

तथा तोरुककडी आदी वेल फल. १८ 'माहुर विहं' मधूर पदार्थ, बिदाम पिसते द्राक्ष प्रमुख मेवा, मुरब्बा प्रमुख. १९ "जीमण विहं" जित्ने प्रकारके पदार्थ भोजन की वक्त खाणेमें आवे सो. २० 'पाणी विहं' नदी नल प्रमुख नीवाण घरके पीरेडे. और पाणी जित्ना पीणेमें आवे सो तथा सरबत. २१ 'मुखवास-विहं' मुख सफा करनेके पदार्थ, पान सुपारी लवंग इलायची चूर्ण खटाइ वगैरे. २२ 'वाहन विहं' (१) हाथी घोडे ऊंट प्रमुख चरते हुये, (२) गाडी बगी-म्याना पालखी प्रमुख फिरते, (३) झाज नाव बोट मछवा, प्रमुख तिरते, (४) गभारा, विमान प्रमुख उडते. २३ "वाहानी विहं" पग रक्षण पगरखी, मुड्डे, खडावे, मोजे, वगैरे.[१] २४ 'सयण विहं' सेज्या

भाजीके पत्तेपे त्रस जीव होते हैं. उसे बर्जना. तथा श्रावण महीनेमें शाख नही खाणा, क्यों कि नवा पाणीका रोग से भरा होता है; पसू घास खाते है सो भी नही पचते, पतला गोबर करते है.

१ खीले–नालवाली पगरखी तथा लकड की खडाओ नही पहरनी; इससे त्रस जीव की घात होनेका संभव है.

पलंग× माचा (खाट) कौंच टेबल खुरसी पाट व-गैरे. २५ 'सचित विहं' सजीव पदार्थ कच्चा पाणी कच्चे दाणे (अनाज) कच्ची हरी-लिलोतरी. लूण* वगैरे. २६ 'दव विहं' जित्ने नाम तथा स्वाद प-लटे उत्ने द्रव्य. जैसे गहु तो एक ही वस्तू है परंतू इसके रोटी बाटी पूडी बाफला ये चार द्रव्य हो गये. ऐसे ही पूंडी तो एकही वस्तू हैं परंतू एक पूडी तवे की एक पूडी कडाइ की ऐसे दो द्रव्य हुये. यों जित्ने नाम स्वाद पलटे उत्ने द्रव्य जाणना. ये छ-व्बीस बोल कहे इसको विवेकी श्रावक अंतःकरणमें बीचारके जो जो बहोत आरंभ की वस्तु निजर आवे उस्का सर्वथा त्याग करे. और जो जो वस्तू भोगवे विन काम नही चलता होय तो उस की

× बणे वांद्दा लगे नीवार डोरी या वेतसे वुणे हुये आसनपे सोणा बेठना नही. कारण उस्के अंतर (छेटी) में त्रस जीव आके मर जाते हैं.

* श्रावकको सचीत वस्तु बिलकुल नही खाणी; कित्नेक हरीको त्याग सुखाके खाते हैं वे बडा अन्याय करते हैं. आरंभ बढाते है. तृष्णा न रुके तो सुखा साक सीधा बहुत मिलता है.

गिणती तथा बजन की मर्यादा करे. और उसमेंसे भी समे २ घटाता रहैं. और भी श्रावकको २२ प्रकारके अभक्ष्यका सर्वथा त्याग करना.

२२ "अभक्ष्य."

१ बड के फल. २ पीपल के फल. ३ पिंपरी (फेंफर) के फल. ४ उंबर (गुलर) के फल और ५ कोटिबडी (कबीठ) ये पांच प्रकार के फल अभक्ष्य है, क्यों कि इनमें अनेक त्रस जीव रहते हैं, फोडे तब भर उडते हैं.

६ मदीरा (दारु) महुडे की, खजूर (शींदी) की, द्राक्ष की, इत्यादिकको बहुत काल तक सडाते हैं, कि जिसमें कीडे पड जाते हैं. फिर उसको यंत्र और अग्नी पाणी के संयोग से अर्क (रस) निकालते हैं. उसे दारु या सराब कहते हैं. उसको पीनेसे आदमी बे शुद्ध—विकल वावला बण जाता हैं; नशे के धुंदमें चडा हुवा निर्लज शब्द बोलता हैं और निर्लज कर्म अपनी माता भगिनी से करने में नहीं चूकता हैं. इसे खाद्य अखाद्य (भक्षाभक्ष) का बीचार नही होता हैं. बहुत नशा के चडने से चक्कर आते है, वान्ती (उलटी) होती है. मलमूत्रादिक के

ठिकाणे पड जाता हैं. इज्जत और धन गमाता हैं. बहुत नशे के जोर से वक्त पे मृत्यू भी निपजती हैं. नशे के उतारमें मिष्ठान खानेको चाहीजते है. उसके लिये दागीने वस्त्र घर बेच के नग्गे बण जाते हैं, जो मिष्ठान नही मिलते तो स्त्री पुत्र आदी स्वजन-को मारते हैं. घरमें बहुत वक्त क्लेश बणा रहता हैं. इत्यादी महा हिंसा, महा दुर्गुणका ठीकाणा हैं. श्रावकको बिलकुल ही सेवन करने योग्य नही हैं.

७ 'मांस.' १ जलचर (मच्छ कच्छादि पाणीमें रहणेवाले जीवका) २ थलचर पृथवी पे चलनेवाले जीव (१) गाय, भेंस, बकरे, प्रमुख, ग्राम के रहवासी पसु. (२) हिरण, सुसल्या, सूर रोज प्रमुख जंगल के रहवासी पसु. ३ खेचर आकाशमें उडनेवाले चीडी कमेडी मोर तोते प्रमुख पक्षी. ये तीन प्रकार के पसु–जानवरोंका वध (घात) करने से मांस निपजता हैं. ये बीचारे पसु–और सृष्टी के अनेक कामों के करता अनेक उत्तम २ पदार्थ के देणेवाले जिनको विन अपराध से मार के कृतघ्नी होणा ये बडा अयोग्य काम हैं. बडे राजा महाराजोमें ये रीती है की कोइ महा गुना करके मुखमें त्रण ले लेवे तो उसे छोड

देते हैं. और बीचारे त्रणभक्षी—उत्तम पदार्थ के देनेवाले निरपराधी पसुओंकी घात करते विलकुल लज्जा धरे नहीं, ये वडी आश्चर्य की बात हैं. (१) विष्णु धर्मवाले कहते हैं, परमेश्वरने मच्छ कच्छ नरसिंह (सिंघ) वराह (सूर) अवतार धारण किया हैं. और फिर भी उन्हों की सीकार खेलते हैं, ये कित्नी जबर भूल है? (२) मुसलमान इस दुनियामें दो तरह के पदार्थ कहते हैं (१) आभी—पाणी से पेदा होवे सो अनाज फल प्रमुख ये पाक (पवित्र) है (२) और पेशाबी—पैश (मुत्र) से पेदा हुवे आदम, जानवर सो नापाक हैं. पैसाबको इत्नी नापाक गिनते है की उसका दाग कपडेको न लगे इसलिये वजू करते हैं (पेशाब कीये पीछे मिट्टी ठीकरे से पवित्रता करते है) और पेशाब से पैदा हुये गोसको खा जाते है ये कित्नी ताजुबीकी बात! मांस देखते खराब दिखता है. रक्त हड्डी आदि अशुची पदार्थ से भरा हुवा हैं, दुर्गंध आती हैं. स्वतः ही मलीन हैं. और इस्के खाणे से क्षय, गंडमाल, रक्त पित्त, वात, पित्त, सन्धीवायू, ताव (बुखार), (मिटफीवर), अतीसारः इत्यादी रोगों पैदा होते हैं.

ये मांस भक्षण हिंसाका मूल है अर्थात हिंसा कीये विन मांस पैदा होता नही हैं. मांसाहारीको जाती कूजाती भेद रहता नही है. किसी भी पसूको देखके रौद्र घातिक प्रमाण हो जाते हैं. अपवित्र रक्तसे भरा हुवा क्षणमें कीडे पडे ऐसा महा दुर्गंधी वस्तु हैं. शुक्र (वीर्य) और रक्तसे पैदा हुवा है. सत्पुरुषोने इस्की ठिकाणे २ निंदा करी हैं. ऐसा कोण आत्म द्रोही मनुष्य होगा की अपवित्र मांस खायगा ? कित्नेक कहते है कि हम सीधा मांस खाते हैं, इसलिये हिंसा नही लगती हैं. परंतु महात्मा श्री मनुने कहा है किः–

जीव बध करने की आज्ञा देनेवाले, काटने-वाले, मारनेवाले मोल लेनेवाले, बेंचनेवाले, पचाने-वाले, देनेवाले, उठालानेवाले, खानेवाले ये आठको घातिक कहे हैं.

८ " मध "–सहेत; सहत की मक्खीयोंने अ-नेक वनस्पतीका रस एक ठिकाणे संग्रह करे हैं और उस्पे सदा बेठी रहती है, भील प्रमुख अनार्य लोक सेहत लेणेको अग्नी प्रयोगसे जलाके तथा कंबलमें उस की गठडी बांधके नीचो डालते हैं, रस निकालते

हैं, उससे कित्नीक मक्खीयों तथा उन्के ईन्डे मरके उस रसमें मक्खीयोंका रस भेला आता है. ऐसे अनर्थसे सेहत पैदा होती हैं. इसलिये सेहत (मध) भी अभक्ष्य—खाने योग्य नही हैं.

९ लोणी—मक्खन छाछमेसे बाहिर नीकाले पीछे असंख्य जीव पेदा हो जाते है. इसलिये ये भी अभक्ष्य हैं.

१० 'हीम'—बर्फ ये एक कच्चे पाणीका असंख्य जीवोंका पिंड होता हैं.

११ 'विष' जेहर. अफीम, वच्छनाग, सोमल, माजम, भांग, इत्यादी जेहरी पदार्थका सेवन करनेसे आत्मघात निपजता है. और आत्मघात करनेवाले बहोत भवमें ऐसे ही मरते हैं. और जो शोक (मजे) नीमिते खाते हैं वो आगे उनको विष रुप हो जाती हैं. जब जोग नही बणे तब सब शुद्धी भूल जाते हैं, अशक्त हो जाते हैं, और वक्तपे मृत्यू भी निपजती है. खाये पीछे लेहर आती है जिसमें कुछका कुछ कर देते हैं. इससे सरीरका रुपका शक्तीका तेजका बलका नाश होता हैं. और भी अफीम तैयार करे (बट्टी बणाते) है वांहा अनेक कुटुंब (त्रस प्राणी)

का घमशाण होता हैं. श्रावकको इसका सेवन अयोग्य हैं.

१२ 'गडे'—आकाशमें पाणी जमाणे की योनी (गर्भस्थान) है. ह्यां शीत उष्णकी विशेषता होती है, तब वांहा गर्भ रहता हैं. साडे छे महीनेमें अंदाज गर्भ पकता हैं. तब वर्षाद् वर्षने से निरोगी पाणी पडता हैं. और बीचमें जो उस गर्भको प्रतीकुल वायू आदिक संजोग मिले तब अधूरा (अपक्क) गर्भ खिरजाता हैं. तब गडे—अर्थात् बंधे हुवे पाणीके कंकर शिल्ला आकाशमेंसे पडती हैं. असंख्य सुक्ष्म जीवोंका पिंड हैं, अभक्ष्य है.

१३ 'सर्व मिट्टी' गेरु खडी मणासिल पांच वर्ण की मिट्टी, लूण, ये सर्व असंख्य जीवोंका पिंड हैं. और खाणेसे पत्थरी मंदाग्नी उदरवृधी, बंधकोष्टादी रोग होते हैं. कच्ची मिट्टी नही खाणी चाहीये.

१४ 'रात्री भोजन' सूर्य अस्त हुये पीछे सुर्य उदय होवे वांहातक अन्न पाणी आदि सर्व खाद्य पदार्थ अखाद्य हो जाते हैं. दीवा और मशाल लगाइ तो भि सूर्य की बरोबरी न हो सक्ती है. रात्री भोजनमें इस वक्तमें बिल्ली की भिष्टा, उंदरके बच्चे

पीसके गिलोरी मकरी सर्पका गरल आदी खाके मरे जिसके अनेक दाखले मिल सकते. इसलिये रात्री भोजन भी अभक्ष्य हैं.

१५ पंपोट फल. दाडिम जाम तीजारेके डोडे कि जो केवल बीजमय हैं. जिसमें जित्ने बीज होते हैं उत्ने ही उसमें जीव है; इसलिये अभक्ष्य हैं.

१६ 'अनंतकाय' पहले वृतमें ३२ अनंतकाय कही सो भी अभक्ष्य हैं.

१७ संधाणा–अथणा केरी लिंबू प्रमुखका अभक्ष्य है. क्यों किये थोडे कालमें पकता नही है. तथा बहुत काल रहे पीछे फुलण और सडनेसें त्रस जीव की उत्पत्ति बहुत हो जाती हैं. बहुत दिनका पाप पहेली ही करना पडता हैं. वो खूटे वांहा तक जीव की नहीं पर पापका गठडा तो अपने सिरपे बांधके ले जाये, इसलिये अथणा अभक्ष्य हैं.

१८ "घोलवडे" जो कच्चा दहीका घोल करके उसमें वडे डालते हैं सो.

१९ रींगणे बेंगण भट्टे इसमें बहुत बीज होते हैं और कूरुप होते हैं.

२० 'अजाण फल' जिस्का नाम गुण की मालूम न होए ऐसे के खाणेसे अकाल मृत्यू नीपजणेका संभव है.

२१ 'तुछ फल' खाणा थोडा और डालना बहुत ऐसे शीताफल, सांठा (सेलडी), बोर, जांबू आदी ये भी अभक्ष्य है. *

२२ 'रस चलित' जिस वस्तूका रस (स्वाद) विगड गया होए अर्थात् खट्टाका मीठा और मीठेका खट्टा हो गया दुर्गंध आणे लगी उसमें असंख्य जीव उत्पन्न होणेका संभव है. इसलिये अभक्ष्य है.

ये २२ प्रकार के अभक्ष्य कहे सो धर्मात्मा पुरुषोंको खाने लायक नहीं है. इस से असंख्य जीवोंका बध और उन्माद (मद) प्राप्त होता है. धर्म से बुद्धी भ्रष्ट होती है और अनेक अनर्थ निपजते हैं. ऐसा अनर्थका मूल सुज्ञ श्रावक जाण सर्वथा वर्जेगा.

इस सातमे व्रत के रक्षण के लिये २० अतीचार टालना चाहीये. इन अतीचार के दो भेद कहे है.

---

* कित्नेक सांठा खाके रस्तेमें छोते डाल देते हैं. जिससे अनेक कीडीये पग नीचे दब मरती हैं.

(१) भोजन से अर्थात् खाणे के बाबतमें पांच अतीचार टालना. (२) कर्म से व्यापारकी बाबतमें १५ अतीचार टालना. प्रथम भोजन के ५ अतीचारः—

१ "सचित अहारे" सचितका आहार किया अर्थात् जिस श्रावकको सचित भक्षण करने के पच्च-खाण हैं और उनके भोजनमें कोइ वस्तू आइ उसकी पूरी समज न हुइ की ये सचित है या अचित हैं और निश्चय हुये विन उसे खावे तो अतीचार लगे. तथा सचित वस्तु खाणेका प्रमाण किया है उसकी विस्मृति से प्रमाण उप्रांत सचित वस्तु खा लेवे तो अतीचार लगे. और जाण के व्रत भंग करे तो अ-नाचार लगता हैं. चले वांहा लग सर्व सचितका त्याग ही करना चाहीये.

२ "सचित पडिबुध्द अहारे" सचित प्रति-बधका आहार करे अर्थात् सचित प्रतीवध उसे कहते है जो उपर से अचित होवे और भीतर सचित होवे जैसे आंबा खरबूजा खिरनी (रायण) विगेरे पका अचित और भीतरकी गुठली सचित. इनको खाणे के लिये एसी इच्छा करे कि बीज सचित हैं सो निकाल डालू और खा जावू. यों कर खावे तो

अतिचार लगे. (२) तुर्त झाडसे उतरा हुवा गूंद, तूर्तकी बाटी हुइ चटनी, तत्कालका धोवण पाणी, इत्यादी अचेत हुये विन वापरे तो अतीचार लगे.

३ "अप्पोलियोसही भखणया" अपक्क वस्तू खावे अर्थात् केरीकी शाख केले सीताफल विगेरे पकाणे के लिये परल (घांस) प्रमुखमें दबाये हैं वो पूरे पके नही होय, थोडे दिनका अथाणा, इत्यादी वस्तु अचेत की बुद्धी से भोगवे तो अतीचार लगे.

४ "दुप्पलियोसही भखणया" दुपक वस्तू भोगवे. अर्थात् आधा कच्चा आधा पक्का होला (चीणे के बूट (छोले) सीखे हुये) ऊंबी (गहूकी) भुट्टे (मक्की के) पूख (जवारके) हुरडे (बाजरी के) इत्यादी घांसमें सेके हुये जिसमें कोइ दाणा तो सिक गया कोइ कच्चा रह गया कित्नेक मिश्र रहे ये भोगवे तो अतीचार लगे.

५ "तुच्छो सही भखणया" खाणा थोडा और न्हाखणा बहोत. साठा–सीताफल–बोर–होले –ऊंबी विगेरे खाय तो दोष. ये सातमे वृत के भोजन आश्री पांच अतीचार कहें.

अब कर्म (वेपार) आश्री १५ अतीचार. १

'इंगाल कम्मे' कोयलेका वैपार अर्थात् (१) हरे सूखे लकडको अग्नी से अधजले कर पाणी से बुजा के कोयले बणा के बेंचे. [२] जो कोयले जला के आजीवीका करे. सोनार, लुहार, कुंम्भार, हलवाइ, भाडभूंजा, प्रमुखका वेपार सो भी इंगाल कर्म की गिणती हैं. २ 'बण कम्मे' (१) बाग वाडी बगीचे लगा के जिनमें फल फूल भाजी वगैरे कंदमूल घांस लकडी इत्यादी उत्पन्न कर काट चूट तोड बेंचे सो. (२) वन कटाइ करे, जंगलमेंसे लकडी काट मोली बणाके संग्रह कर लकड पीठ बणाके लकडी बेचे. तथा वांसके टोपले सुपडी करंडी बणाके बेचें बसोडका वेपार करे. सो वन कर्म. ३ "साडी कम्मे" गाडी छकडे बग्गी तांगे म्याने पालखी नाव झाज बणाके बेंचे तथा इनके उपगरण पइडे पाठे आरे थंभ विगेरे बणाके बेंचे. ४ "भाडी कम्मे" गाडी घोडे ऊंट बेल इत्यादीका संग्रह करके रखे और भाडे ले जावे तथा दूसरा लेणे आवे तो देवे सो भाडी कर्म. ५ "फोडी कम्मे" (१) धरती खोदके मट्टी कंकर पत्थर सिला रेलवाइ कोयले आदिक बेचे. (२) कूवा वावडी कुंड बणाके बेचे. (३) घंटी

ऊखल कूडी प्रमुख बणाके बेचे. (३) हल बखर चलाके पृथ्वी (खेत) सुधार देवे. (४) चीणा मूंग आदिक की दाल बणाके बेंचे, धान पीसणेका कूटनेका या खला करे. (५) सडकके पुलके तलाव-आदिक बणाणेका ठेका लेवे. इत्यादि कर्मको फोडी कर्म कहते हैं. ये पांच अयोग्य कर्म कहें.

६ " दंत वणिज " हाथीके दांत तथा हड्डीयों§ घुंघू (उल्लू) के वाघ नख. हिरण वाघादिकका चर्म. चमरी गाय की पूछ (चमर) * संख, सीप,

---

§ खड्डा खोद उपर पतले वास बीछा जिसपे कागज की हथणी खडी करते हैं. उस्के विश्वाससे हाथी उस खड्डेमें पड जाता है. उसे मार उस्के हड्डीयोंके चूडे प्रमुख बहुत रकम बणाते है. जो उसे खरीदते है बेचते है वापरते है वो हाथीके घातीक है. जैनीयोंमें हाथी दांतके चूडे पेरनेका रीवाज अती खराब हैं. इसे मिटाणा चाहीये. सुणा है हड्डीके लिये फ्रांसदेशमें दरसाल ६ हजार हाथी मारते हैं.

* जीवती चमरी गायकी दगेसे पूछ काटके लाते है, उसके चमर बणाते है. ये वापरने योग नहीं हैं.

सींग, कोडी, कस्तुरी, आदिक सर्व व्यापार इस दंते वणिजमें हैं. ७ लख वणिज्ज लाख. † चपडी गूंद. मणशिल. धावडीके फुल. कसुंबा. हडताल. गुली, महुडे. साजी साबू वगेरे बेंचणा सो सब लख वणिजमें लीया हैं. ८ "रस वणिज" दूध, दही, घी, तेल, गुड, काकव, मध (सहत) मुरब्बा, सरबत, वगेरे. ९ " विष वणिज " जेहरी वस्तू अफीम, वछनाग, सोमल, इत्यादी (२) तरवार, तीर, कटार, छुरी, बरछी, भाला, गुप्ती, तमंचा, बंदूक, तोप, सूइ, कतरणी, चक्कु, मूसल, खल बत्ता, इत्यादी छोटे मोटे सर्व प्रकारके शस्त्र भी विषवणिजमें है. १० "केस वणिज" (१) बकरे की उनके वस्त्र कंबल, बनात, दुशाले, प्रमुख सर्व ऊनी वस्त्र जाणना. चमरी गायके केस भी इसमें लेते हैं. मनुष्य, पसु, पक्षी. इत्यादी बेंचे सो जाणना. ये पांच प्रकारके अयोग्य वणीयेके वणिज जाणना. ११ "जंतु पीलण कम्मे" घाणी (तिलादी पील के तेल निकालने की) चरखी कोलू [साठा पीलने की] चरखा [कपास पीलनेका] तथा गिर-

† झाडको टोंचके उस्का रस नीकालते हैं उस्की लाख होती हैं. जैसे मनुष्यका रक्त निकालते हैं.

नी, संचे, मील, अंजन, घट्टा, घट्टी, इत्यादि जो वस्तू पीलने के यंत्र इनका वेपार करे सो. १२ "निलंछन कम्मे" (१) बेल घोडा प्रमुख जीवों के अंड फोडे, इंद्री छेदे. (२) जनावरोंके कान, नाक, सींग, पूंछ, छेदे, काटे. (३) मनुष्यको नाजर करे, सो नीलंछन कर्म. १३ "दवग्गी दावणिया कम्मे" खेतमें, बागमें, बहुत घांस या कचरा हो जाय उसे निवरने, तथा नवीन घांस उगाणे जूना घांसको जला देवे. और कित्नेक भील धर्म निमित्ते ही वनमें लाय (आग) लगाते है.

१४ "सर दह तलाग परिसोसणीया कम्मे" सरोवर (धरतीआदिक विन खोदे पाणी भराय सो), द्रह (झरणेका पाणी आवे) तलाव (चार ही तर्फ पाल बांधी होय सो.) और नदी नाला कूवा वावडी, इनमें खेतको बगीचेको पाणे या साफ करने 'पाणी उलीछे (नीकाले) के सुकावे. १५ "असंजइ पोषणीया कम्मे" असंजती (अव्रती) को पोष (पाल) के बेंचे. अर्थात्, (१) ऊंदर मारने बिल्ली, बिल्ली मारने तथा सिकार खेलने कुत्ते पाले, और बेंचे. (२) सालुंकी मेना तोता, कावर, मुरगा, कबूतर, सिखरा

(बाज) इत्यादी पक्षीयोंको पालके बेचे. (३) दास पालके बेचे. (४) तथा दासीयोंको आप खान पान देके उनको गणिका जैसे कर्म अनेक पुरुष के साथ गमन करा के उस्का दाम जो पेदा होवे उसे आप रखे. इत्यादी कर्मको असंजती पोषणीया कर्म कहते है. दया निमित पोषणेमें हरकत नही.

इन पनरेको कर्मादान कहते हैं अर्थात् कर्म आने के ठिकाणे हैं. ये पनरे ही महा अनर्थ के ठिकाणे, बज्र कर्म बंध के ठिकाणे, अकृत निंदनीक जाण के श्रावक सर्वथा प्रकारे तजे और सातमा व्रत सम्यक परे आराधे पाले. जो इस सातमे व्रत के २० अतिचार टाल के शुद्ध निर्दोष पालेगा वो इस भवमें निरोगता, अशोगता, अल्पारंभी, संतोषी, सुख से अपणा जीवीतव्यका निर्वाह करनेवाला होगा. मेरु जित्ना जगतका सर्व पाप रोक के फक्त राइ जित्ना अव्रत रह जायगा. इस के पसाय से आगे स्वर्गादिक के अनोपम सुख भुगत थोडे कालमें मोक्ष पायगा.

८ " आठमो अनर्थो दंड वेरमण व्रत " कहता अनर्थ दंडसे निवर्ते. अर्थात् संसारी जीव है

जो आरंभ परिग्रह मोह मायामें फस रहे हैं उनको सर्व प्रकारे दंड (पाप) से निवर्तना तो मुशकील हैं तो भि दंड (पाप) के दो भेद किये हैं,(१) अर्था दंड—सो सरीरका कुटुंबका आश्रितोंका स्वरक्षण करने छेकाय जीवोंका आरंभ करना पडता हैं. ये आरंभ किये विन संसारमें निर्वाह होणा बहुत मुशकील हैं. श्रावक तो इस आरंभका भी नित्य प्रती संकोच करते हे और वक्तपे सर्वथा त्यागने की अभीलाषा करते है. जो आरंभ करते है सो पाप से डरते पश्चाताप युक्त करते हैं. सो अर्था दंड. (२) अनर्था दंड, विना कारण. जिससे मतलब तो कुछ नही निकले और हिंसादिक पाप होवे. इस अनर्था दंडके चार प्रकार १ "अवझाण चरियं" अव—खोटा ध्यान—वीचारना—चिंतवणा सो अव ध्यान चरित. अर्थात् इष्ट संजोग और अनिष्टके ;वियोगका वीचार करना. इष्टके संयोगसे आनंद और अनिष्टके संयोगसे उदासी मानना. ऐसा ध्यान ध्यावणा श्रावकको जोग नही है. क्यों कि विचार करनेसे कुछ फायदा होता नही है. होणहार हो सो हुया ही रहता है. और खोटे बीचारसे नाहक कर्मका बंध हो

जाता हैं. ऐसा जाण खोटा वीचार नही करना और कभी आवे तो, ऐसा बीचारना की रे जीव जो तेरेको कभी पुन्योदयसे इष्ट वस्तुका संयोग मिल गया तो तेरेको कोनसा फायदा हुवा ? चेतनीक सुख प्रगट करनेकी कुछ पुदगलोमें सत्ता नही हैं. जो होय तो इनके सुखोंसे अनेक गुण अधिक देवताओके सुख भोगव आया वांहा ही तृप्ती नही हुइ तो ह्यां क्षणीक अपवित्र सुखोंसे क्या तृप्ति होणे वाली है? और अनिष्टका संयोग मिले तो यों बीचारे की नर्क तिर्यंचादिक दुर्गतीमें परवस पणे तूं अनेक दुःख सहन कर आया हैं, वैसे तो दुःख तुजे ह्यां नही हैं. यों वीचार कर समभाव रखे, अति रौद्र ध्यानके रागद्वेष करके नाहक कर्मोंका बंध नही करे. इत्ने वीचारसे जो मन वसमें न रहै और स्वजन तथा धनके वियोगसे आर्त ध्यान उत्पन्न होवे तो एक मुहुर्तमें ज्ञानसे चित्त शांत करले, परंतू सिर छाती कूटणी नही, हाय त्राय करना नही, संताप उपजाणा नही. शांत रहना.

२ 'पमाए चरियं' प्रमाद (आलस) चरित आचरे सो प्रमाद चरित. अर्थात् प्रमाद ५ प्रकारके

(१) मद अहंकार. (२) विषय—पंच इंद्रीके सुख की लोलुपता. [३] कषाय—क्रोधादिक की उदेरना. (४) निंदा—दूसरे की निंदा करनी सो (५) विकथा स्त्री की, राजाकी, भोजन (आहार) की, देश देशांतर की कथा वार्ता करे सो, ये पांच ही कामे श्रावकको करने योग्य नही है. क्यों कि इससे किसी प्रकारका फायदा नही होता है और कर्म बंधसे जमे होता हैं. और भी प्रमाद चरित इसको कहते हैं कि संसारि जनको काम काज होवे तब तो संसार व्यववहार चलाते ही हैं. परंतु निकम्मे हो जावे निवरे होवे तब धर्म कर्म—ज्ञानाभ्यास करना छोड जूवा—चोपट, गंजीफा, तास (पत्ते), बुद्धिबल विगेरे खेल कुतुहल करके वक्त गमाना ये कर्म दोनु भवमें दुःखदाइ हैं. (१) इस ख्यालमें लगे पीछे भूख प्यास ठंड ताप निद्रादिक की शुद्ध नही रहती है, जिससे सरीरमें रोग पैदा होता हैं. हार जीत होनेसे हारनेवाला अत्यंत आर्त ध्यानमें प्रवेस करता है, सरमिंदा होता है. वक्त पे बडे २ झगडे भी पेदा होते हैं. इत्यादी ओगण जाण ये ख्याल कितुहल श्रावकको करना योग्य नही. और निकम्मे हुये पीछे चार जणे

मिलके धर्म कथा छोड इदर उधर के गपौडे मारे सो भी प्रमाद चरीत हैं. ऐसे ही कित्ने निर्दोष रस्ता छोड उजाड पे हरी पे मिट्टी पे उदाइयों के घर फोडते अनाज खूदते पाणीमें होके ऐसे ही रस्तेमें झाड आया तो डाली पत्ते तोड डालते है. पसुको लकडीका पगका प्रहार करते हैं और छत्ती जगा छोड के घास पे अनाज के गंज पे या थेले पे बेठते हैं. दरवज्जा लगती वक्त देखते पूंजते नही. दूध दही घी तेल प्रमुख पतले पदार्थ के वरतन उघाडे रखे. लीपन, पीसन, खांडन, सीवणा, धोवणा, इत्यादी काम, बिन प्रतीलेखे (देखे) करे. ये सब; प्रमाद चारित अनर्था दंड जाणना. इन कामों से फायदा कुछ नही, नुकशान बहुत होता है. इसलिये ही इसे अनर्था दंड कहा है. श्रावकको ये वर्जने योग्य है.

३ "हिंसवयाणे." हिंसाकारी बचन बोले. अर्थात् जिस बचन बोलने से त्रस स्थावर जीवोंका बध होवे, ऐसे निरर्थक बचन बोले. चलो बेठे २ क्या करते हो? स्नान कर आवो, अमुक हरी बहुत स्वादिष्ट है अब तो सस्ती मिलती है चलो ले आवो, अरे आलसू यों क्या बेठा है, कुछ धंधा करो. दुकान मांडो,

वर्षा आइ घर सुधरावो, उनाला आया पाणी छिटा-ओ, सीयाला आया ताप करो, खेत सुधारो, हल चलावो, अनाज वावो, खात न्हाखो, निदणी करो, खेत पक गया काटो, खला करो, अनाज भरो बेंचो, घर फोडो नवा बंधावो, लीपो छावो रंगो, भोजन नीपजावो, पाणी लावो, इत्यादी अनेक प्रकार की सावद्य—हिंशक बचन कर्म बंध के हेतु जाण श्रावक वरजे.

सू कडेति सुपकोति, सुछिन्ने सुहडे मडे
सू ठिए सुलठेति, सावज्जं वज्जए मुनी *

उतराध्ययन दशवैकाल.

सूकडे—ये मकान पकवान वस्त्र भुषण इत्यादी बहुत अच्छा बणाया.

सूपक—झाडके फल खाने योग उम्दा पके हैं.

* गाथाका दूसरा अर्थ अच्छा किया संथारा, अच्छा पकाया संयम, अच्छा छेदा स्नेह, अच्छा हर्या मोह अच्छा मरा पंडित मरण, अच्छी स्थापी संयममें आत्मा, अच्छा सोभता है इनको दिया संयमका सिणगार. जो बोले विन रहवाय तो एसी निर्वद्य भाषा नही बोले,

रसोइ उम्दा पकाइ, क्या मशाला डाला बघार दीया.

सूछिन्ने–इस फलको भाजीको कैसी उमदा बारीक कतरा हैं, झाड काटके केसा बरोबर किया है. लकडमें कैसी उम्दा कोरनी करी हैं.

सुहडे–बहोत अच्छा हुवा वो कंजुस–कृपण लूटा गया, उस्का धन चोर हर गये. दीवाला निकल गया. माल जल गया, डुब गया. हं कृपणका तो एसा ही हाल होणा चाहीये.

सूमडे–क्या वो दुष्ट पापी कसाइ पाखंडी अन्याइ मर गया बहुत अच्छा हुवा. साप विच्छु डांस मच्छर षटमल ये तो मरेइ कामके.

सूठीए–क्या असल जमाइ दुकान, पक्कान, दही, घर माला तुररा गजरा.

सूलठेति–ये कन्या या लडका कैसा सुंदर है, इसे जल्दी परणावो इत्यादी सावध–हिंशाकारी पापकारी भाषा सर्वथा बरजे. इन पापकारी भाषा बोलनेमें कुछ फायदा नहीं हैं इसलिये अनर्था दंड कीया हैं.

४ "पाप कम्मो वएसे" पाप करनेका उपदेश देवे अर्थात् हिंशक बचन सो संसार निमित्ते

और हिंशक उपदेश सो धर्म नीमित्ते धर्मशाला देवालय बंधावो. कूवा निवाण खुदावो. मूल पत्ते फल फूल बकरे मुरगे काटो चडावो. धूप दीप करो, पंखा लगावो. यज्ञ होम करो. तथा पाप शास्त्र जिसमें लडाइ झगडे विषय क्रिडा कोकशास्त्र चौरासी आसनों की कथा, जोतिष, निमित, जंत्र, मंत्र, तंत्र, औषध, अंजन सिधीयो विगेरेका उपदेश करे. इस उपदेश से जितना आरंभ निपजे उनका भागीदार वो उपदेशक होता हैं. और एसे पापी उपदेशकोंके हाथमें कुछ भि नहीं आता हैं, इसलिये ये भी अनर्था दंड हैं.

ये चार ही प्रकारके निरर्थक पापोंसे सुज्ञ श्रावक अपणी आत्मा बचावे. इस आठ व्रतको निर्मल रखणेके लिये पांच अतीचारको जाण वरजे.

१ 'कंदपे' कंद्रप जगे एसी कथा करे अर्थात् स्त्रीयोंके आगे पूरुषके और पुरुषके आगे स्त्रीके शृंगार बोलना हांसी मस्करी करना गुप्त अंगोपांगके नाम लेके वार्तां कर कामवीकार बडावे ऐसी वात करना योग्य नही हैं. क्यों कि इस करनेवाले सुणनेवाले दोइको काम उत्पन्न हो अनेक कूकल्पना (बीचार) मनमें आवे

जिससे नाहक कर्म बंधे और हाथ तो कुछ आवे नही. इससे अतीचार लगे.

२ ' कुकुइए ' कूचेष्टा करे अर्थात् भृकूटी चडावे नेत्र टमकावे, होट वजावे, नाक मरोडे, मुख मलकावे, हस्तांगुलीयादी कू तरह करे, पग नचावे, पग की अंगूली वजावे, दीन पणा करे, काम इच्छा जणावे एसी चेष्टा करे, ये सर्व कू चेष्टा श्रावकको करना कराना, होलीके दिनोमें नग्न रुप धारण करना, नाचना, कूदना, योग्य नही है. नाहक कर्म बंधते हैं.

३ ' मोहोरीए ' मुखारी वचन बोले अर्थात् वाचाल पणा करे, असमंध बचन ऊचारे, ममा चचा की गाली देवे, रे तू गालीयो गावे, चांग ढोलक वजावे, विकारीक ख्याल जोडे, ये सब खराब वचन काम स्नेहके जगानेवाले, महा कर्म बंधके कारण, ऐसा अनर्था दंड श्रावक वरजे, अज्ञानीयों की देखा देखी जो श्रावक ऐसे वचन बोलने लगा तो जगतमें निंदाका पात्र होयगा. वहुत वोलनेवाला सबको खराब लगता है. और कभी मार भी खा लेता हैं. ऐसे बीचार करके बोलनेवालेको मुखारी बचन तो बोलना हा ही कहां ?

४ " संजुत्ताहीगरणे " अधीकरण (शस्त्र) का संयोग मिलावे. अर्थात् ऊखल होय तो मूशल और मुसल होय तो ऊखल नवा करावे. ऐसे ही घट्टी (चक्की) का एक पुड होय तो दूसरा करावे. चक्कू छुरी के हाथा नही होय तो हाथा लगावे. बोठे होय तो धार करावे. कुराडी हाल भाला बरछीको हाथा भाल लगावे. इत्यादी उपकरणोंको अधूरेको पूरे करने से महा अनर्थ निपजता है, क्यों कि अधुरे होते है वहां तक उप्योग (काम) में नही आते हैं और पूरे हुये पीछे उनसे हिंसा निपजती हैं. उस सब आरंभका हिस्सा संयोग मिलानेवालेको आयगा. और भी एक वीचारनिय बात है की जो अधूरे उपकरण होवे और कोइ मंगाणे आवे तो सहजे ही पाप कट जाता हैं. और पूरे होवे तो आरंभ की वृद्धी होवे, ऐसा जाण पापकारी उपगरणोंका संयोग मिलाणा वरजे. तथा विशेष पापका उपकरणका संग्रह भी घरमें नही करे. जो पहले के होवे तो वो ऐसे रखे की दूसरे के हाथ न लगे. ऐसे ही किसी पाप कार्य के विषयमें आप सकल पंच होणे अग-वाणी भाग न लेवे. ब्याव की खरच (औसर) की

गुल सक्कर गालने की परवानगी (रजा) कोइ मंगे तो अपना वस चले वहां तक जबान न हलावे. दिपवाली होली आदी आरंभी पर्वमें कोइ भी आरंभी काम लीपणा-रंगना इत्यादी आप सब के पहले न निकाले, कि जिसके देखा देखी सब करे उसका पाप उसे आवे. इत्यादि पाप कामों से अपणी आत्मा बचावे.

५ "उपभोग परिभोग अइरत्ते" उपभोग (एकवार भोगवणेमें आवे सो) परिभोग (बार २ भोगवणेमें आवे सो) आइरत्ते-अतीरक्त (लुब्ध) होवे अर्थात् राग रागणीयों सुणनेमें नाटक ख्याल देखणेमें सुगंध सूंघणेमें रसवती (मनोज्ञ आहार) भोगवणेमें स्त्रीयादिक सेवणेमें अती-बहुत आशक्त होवे, हाहा करे, वारं २ कहे क्या मजा आती है, जाणे मोक्ष ह्यांइ मिल गइ हैं, एसे ग्रध श्रावकको होणा योग्य नहीं हैं. क्यों कि बहुत ग्रद्ध होणे से बहुत बज्र कर्मका बंध होता हैं. जैसे रेसमकी गांठ छूटनी मुशकल तैसे कर्म भी न छूटे. कहा है.-

समज्या संके पापसे, अण समज्या हरकंत;
वे लूखा वे चीकणा, इण विध कर्म बधंत. ॥

समजगीर वो ही, की जो पाप करता मनमें डर लावे. जो डरेगा उस्के कर्म जैसे रेतकी मूठी भीतको मारने से नीचे गिर जाती हैं, त्यों थोडे से ही कर्म छूट जाते हैं. और लुब्ध होता हैं उस्के कर्म जैसे कीचड (कादव) का गोला भीत पे लगाया तैसे चोट जाते हैं. ऐसा जाण काम भोगमें आशक्त न होवे. लुखवृत्ति रखे या लुब्ध होवे दोइ रुपमें वस्तुका प्रणाम तो एकसा होता हैं फिर लुब्ध होके नाहक कर्मका बंध क्यों करना ?

ये पांच अतीचार कहे और भी विवेकी श्रावक अनर्थ के कामे अपणी मती से और शास्त्रकी नय से जाण सर्वथा वरजे. इस आठमा व्रतको सम्यक् प्रकारे आराधेगा सो अनर्था दंड से जीव के वज्र कर्म बंधते है उससे बचेगा. हुस्यार रहने से अकाल मृत्यू से बचेगा, नुकशानी से बचेगा, चिंता कमी होयगी, यशस्वी पूर्ण आयुष्यका भोगी होके सुखे २ जिंदगी पूरी कर के देवलोक के सुख भोगव के अनुक्रमे मोक्षस्थान प्राप्त करेगा. ८

ये ५ अणुव्रत और ३ गुणव्रत जाव जीव के हैं.

इति ३ गुणव्रत.

" चार शिक्षा व्रत "

शिक्षा व्रत उसे कहते है, कि जैसे (१) कोइ उत्तम पदार्थ किसीके सुप्रत करके कहते हैं शीखामण देते है, कि इसको वार २ संभालते रहना, कीडा न लगे या नुकशान न होवे; ऐसे ही चार शिक्षा व्रतमें प्रवर्तनेसे पूर्वोक्त जो ८ व्रत की जावजीव की मर्यादा करी हैं उसमें किसी प्रकारका दोष रुप कीडा न लगे. भंगरुप नुकशान न पडे एसी संभाल करने कि फुरसत मिलती हैं. जिसमे लगे हुवे दोषका ज्ञान और आवते कालमें निर्दोष रहणे की शिखामण प्राप्त होवे. (२) जैसे शिक्षण (ज्ञान) लेणेको किसी बालकको पाठक अध्यापकके पास (मदरसेमें) बैठाते हैं, कि जिससे वो संसारमें हुस्यारीसे प्रवर्त अपणी आजीविका चलाणेका, कुटुंब निर्वाह विगेरे अभ्यास कर फिर संसारमें उस प्रमाणे प्रवर्त सुखी होवे, तैसे ही श्रावक शिक्षा व्रतमें प्रवेश कर आठ व्रतोंको ग्रहण कर पालने विधी यथा तथ्य धार धर्म मार्ग यथोक्त विधीसे प्रवर्त अपणी पराइ आत्माका कल्याण करे (३) शिक्षा नाम दंडका भी हैं. पूर्वोक्त आठ व्रतोंमें प्रमादके वस कोइ दोप लग जाय तो

उस दोष से निवर्तन होणे गुरु महाराज शिक्षा व्रत-मेंका कोइ भी शिक्षा (दंड) दे के निर्दोष—शुद्ध करे. इत्यादी कारणसे शिक्षाव्रत कहे हैं. ये शिक्षा व्रत चार प्रकारके होते हैं:—

१ "सामायिक व्रत" में सामायिक करे, अर्थात इस सामायिक शब्दके तीन शब्द हैं. सम, आय, इक. सम कहता सम—बरोबर जथा तथ्यको जथा-तथ्य जाणे वो अजथा तथ्यको अजथा तथ्य जाणेगा. [२] सम कहता शत्रु मित्र उपर समभाव रखे. (३) सम—सब जीवोंको अपणी आत्मा जैसे जाणे; ऐसे भाव रुप 'आय' कहता लाभ जिससे मिले सो सामायिक. ये निश्चय सामायिक जाणना. और व्यवहार सामायिक करने की रीत ऐसी हैं; सर्व संसारके कामकाजसे निवृत (दूर हो) अपने पास फूल पानादी सचित वस्तू न रखे. अशुची रक्तादिसे भरे कपडे न रक्खे. एकांत स्थान—पौषध शाला—उपासरा—स्थानकमें यत्ना से जावे, एकांत स्थानमें संसार स्वरुपको बताणेवाले अंगरखी पगडी विगेरे खोलके रक्खे, गेणे दागीने भी उतार * पेरने की धोती और ओडनेका पंच्छा

* सामायिकमें दागीने नही रखणे विषय दाखला

(दुपटा) पडीलेहे (आंखोंसे सर्व देखे) फिर फासुक (निर्जीव) जायगा गोच्छा (पूजणी) से पूज (झाडं) के आसण (बेठका) बीछावे, फिर मूहपतीको प्रतिलेहके मुहपे बांधे. फिर गुरु महाराजको तथा पूर्व उत्तर दिशा तर्फ पंच परमेष्टी (अरिहंत सिद्ध आचार्य उपाध्याय साधू) को पंच अंग (दो हाथ दो गोडे मस्तक) धरतीको लगाको " तिखूत्तो" (तीनवार उठ बेठ), "आयाहीणं" बहुत दूर नही बहुत नजीक नही ऐसे रहके, "पयाहीणं" (दोइ हाथ सिरपे फिराके आवर्तन–प्रदक्षिणा करके) "वंदामी" [गुण ग्राम करे] ' नमंसामी ' (नमस्कार करे) "सक्कारेमी" (सत्कार देवे) "समाणेमी" (सन्मान देवे) "कल्लाणं" (आप मेरे कल्याण कारी हो) "मंगलं" (आप मंगलिक हो) "देवयं" § आप धर्म देव हो "चेइयं" (आप ज्ञान वंत हो) "पज्जुवासामी" आप पूज्य हो, हो स्वामीजी "मथेण वंदामी" (मस्तक करके

उपाशक दशांगके छटे अध्यायमें कुंडकोलीये श्रावक सामायिक करी है, वाहां नाम छतका मुद्रिका भी खोलके दूर रखी हैं.

§ देव पांच प्रकारके हैं. देवाधी देव–अरिहंत.

वांदणे योग्य हो.) इस पाठसे विधी युक्त वंदना कर कहे.

" आवस्यइ इच्छा कारण संदह सह भगवान इरिया वहियं पडीकमामी " आवश्यकता है की आप की आज्ञा होय तो हे भगवान में सामायिक करनेको आते हुवे रस्तेमें जो पाप लगा होय उससे निवर्तूं. तब गुरु महाराज कहे, 'इच्छं' तुमारी इच्छा. तब शिष्य—'इच्छामी पडिकम्मिओ'—जो हुकम, प्रतिक्रमताहूं (नीवर्तताहूं), 'इरिया वहीयाये' रस्ते चलते, 'विराहणाए' विराधना हुइ होए. 'गमणा गमणे'—जाते आते, 'पाणकमणे' प्राणी बेंद्रीयादी खूंदा होए. 'बीकमणे'—बीज दाणा (अनाज) खूंद्या होए. 'हरी कमणे'—वनस्पती, 'उसा' औसका पाणी, 'उतिंग'—किडीनगरे, 'पणग'—लीलण, फूलण—'दग' पाणी, 'मट्टी'—मट्टी, 'मकडा'—*करोलिये. 'संताणा'—संताप दीया. 'संकमणे'—

नर देव—चक्रवृती. धर्म देव—साधू. भाव देव—भवन पति आदि देव, और भवी द्रव्य देव—जो ह्यांसे मरके आगे देवता होयगे सो.

* रस्तेमें खड़ा कर मकडी जैसे जीव रहते है सो.

संक्रमे चलाये. 'जो'—जो. 'मे'—मेने 'जीवे' जीव 'विराहीया'—विराधा होए वो. 'एकिंदीया'—एकेंद्री. 'बेंदीया'—बेंद्री. 'तेंदीया'—तेंद्री. 'चौरिंद्रीया'—चौरिंद्री. 'पचिंदीया'—पचेंद्री. 'अभीहया'—सामे आते. 'वत्तीया'—मसले होय. 'लेसीया' रगडे होए. 'संघाया'—भेले किये होए. 'संघटीया'—छीया होओे. 'परियाविया'—परिताप उपजाया होए. 'किलामिया'—किलमणा उपजाइ होए. 'उदविया'—उद्वेग (चिंता) उपजाया होओे 'ठाणा उठाणा'—एक स्थान से उठा दूसरे स्थान रखे होए. 'संकामीया'—संकट दीया होए. 'जीवीयाओ विवरोवीया' जीवोंकी विराधना कियी होए. तो 'तस्स मिच्छामी दुकडं' ये पाप मिथ्या (खोटे) दुकृत (दूर) होवो. फिर रस्ते चलते जो पाप लगा होय 'तस्स'—उसको, 'उतरी'—उतारने, 'करणेणं'—करता हूं, 'पायछित करणेणं' पाप निवारने, 'विस्सो ही करणेणं' विशुद्ध—निर्मल होणे, 'विसल्ली करणेणं'—सल्ल रहित होणे, 'पावाणं कम्माणं'—पाप कर्म 'निग्घाए निठाए' दूर करने के लिये, 'ठामी काउसग्गं' करता हूं कायोंत्सर्ग (कायाको दुःख)(काउसगमे इत्ने आगार रहते हैं:—)

'अन्नत्थ '-इत्ना विशेष ' उसासिएणं '-उंचा श्वास लेवू. 'निसासिएणं'-नीचा श्वास रखू. 'खासीएणं'-खांसीका. ' छीएणं '-छीकका. 'जंभाइएणं '-उवासीका. ' उड्डूएणं '-अंग फरुके तो. 'वायनिसग्घेणं' अपान द्वार वायू सरे तो. ' भमली '-चंकर आवे तो. ' पित '-पित पडे तो. ' मुच्छाए ' मूरछा आवे. 'एव मय एहिं' †इत्यादिक 'आगारेहिं'-मेरेको आगार हैं. (इस उप्रांत) 'अभग्गो' नहीं भांगू 'अविराहीओ' नही विराधू. 'हूज्जमे'-होवो मेरेको. 'काउसग्गो '-कायोत्सर्ग. कहां तक कि में ' जाव ' जहां तक, 'अरिहंताणं' अरिहंत शब्द् कहुं, 'भगवंताणं' भगवानका नाम लेवू, ' नमुकारेमि ' नवकार कहु, ' ताव ' वहां तक, ' कायां ' काया, 'ठाणेणं' एक ठिकाणे रखूगा, 'मोणेणं ' बोल्हगा नही, 'झाणेणं ' धर्म ध्यान ध्यावूगा, ' अप्पाणं ' मेरा सरीर की, ' वोसीरामी ' ममत्व त्यागता हुं. इत्ना कहके दोनु हाथ बरोबर रख, पगके अंगूठे सन्मुख द्रष्टी रख, स्थिर हो खडा रहे. मनमें

---

† इत्यादी शब्दमें, जीव रक्षाके निमित, अग्नीका योग, या राजाका कोप होवे तो और संयम व्रतमें. कोइ भंग लगता देख काउसग पारे तो दोष नही लगे.

प्रथम कही सो आवस्य ही इच्छा करनेकि पाटीका अर्थ बीचारे कि इन पापमेंका कोइ पाप मेरेको लगा तो नही. वीरो वीय तक अर्थ बीचार फिर 'नमो अरिहंताणं' कह काउसग्ग ठीकाणे करे. निर्विघ्न कायोत्सर्ग की समाप्ती हुइ उस्की खुशाली के लिये चोवीस तिर्थंकर कि स्तुती दो हाथ जोड इस्तरह करेः-लोगस्स-लोकमें, उज्जोयगरे-उद्योत* के कर्ता; धम्मतिथ्थ-धर्म के तीर्थ, अरह-इंद्रों के पुज्य, जिणे-जिनेंद्र (केवलीआदि मुनी के मालक), अरिहंत-कर्म नाशक, (आपकी) कितिइसं-कीर्तीकुरु, चोविसंपि-२४ तिर्थंकर, केवली-केवल ज्ञानीयों कि, (२४ के नाम) उस्सभ-ऋषभ, मजीयं-अजित, च-और, संभव-संभव, मभीणंदणं-अभीनंदनजी, च-और, सुमइं-सुमती, च-और, पहुम पहं-पद्मप्रभू, सूपासं-सूपार्श्व, जिणं-जिनेश्वर, च-

* तिर्थंकर भगवान जन्मते हैं तब हि स्वर्ग मृत्यू पाताल तीन लोकमें सूर्य जैसा प्रकाश हो जाता हैं. और दिक्षा लिये पीछे केवल ज्ञान पाके मिथ्यान्धकारका नाशक प्रकाशते हैं.

और, चंदपहं—चंद्रप्रभू, वंदे—वंदता हु,‡ सुविहं—सुबुध्दी,§ च—और, पुष्फदंत—पुष्पदंत, सीयल—शीतल, सीयंस—श्रेयांस, वासपुज्यं—वास पुज्य, च—और, विमल—विमल, मणंत—अणंत, च—और, जिणं—जिनेश्वरं, धम्म—धर्म, शंति—शांती, च—और, वंदामी—मे वंदता हुं, कुंथु—कुंथु, अरहं—अरिहंत, च—और, मल्लिं—मल्ली, वंदे—वंदता हुं, मुणीसुव्वयं—मुनीसुवृत, नमी—नेमी, जीणं—जिनेश्वर, वंदामी—में वंदता हुं, रिठनेमी—रिष्टनेमी, पासं—पार्श्व, तह—त्यांही, वद्धमाणं वृधमान, च—और, एव—इन (२४ की), अभिथुआ—स्तूती करी, विहूय—दूर करी है, रयमल—कर्मरुप रजमेल, पहीण—निवृते हैं, जरमरणा—जन्म मरण से, चोविसंपि—चौवीसोंही, जिणवरा—जिनेंद्र हैं, तित्थयरा—तिर्थंकरों, मे—मेरे पे, पसीयंतु—प्रसाद करो. कितिये—वचनसे कीर्ती करु, वंदे—कायासे वंदना करु, महीया—मनसें पूजा करुं, जे ए लोगस्स—लोकमें, उत्तम—श्रेष्ट, सिद्धा—सिद्ध पुरुष हैं, आरुग्य—आरोगता, वोहीलाभं—बोध (सम्यक्त्वका) लाभ, सामाहीवर—श्रेष्ट समाधी, मुत्तम—उत्तम, दिंतू—मुजे देवो

‡ गुणाग्राम करता हुं. § नवमे तिर्थंकरको सुबुद्धी नाथजी और पुष्फ दंतजी एसे दो नाम है.

(बक्षीस करो). इत्ना कह के फिर 'सामायिक' व्रत ग्रहण किया जाता हैं–सो गुरु महाराज तथा बडे भाइ हाजर होवे तो उनके पास से प्रत्याख्यान ग्रहण करे और वो नही होवे तो आप पूर्व उत्तर सन्मुख मुख कर प्रत्याख्यान ग्रहण करे. सो पाठ.

करे–करुं, मी–मे, भंते–हे पुज्य, सामाइयं–चित्त समाधी–समता भाव रुप वृत. इस वृतका नियम सावज्ज जोग पच्चखामी=सावद्य जिससे अन्य प्राणीका मृत्यू या दुःख होवे एसे योग प्रवृतन रुप क्रियाके पच्चखामि में प्रत्याख्यान (त्याग–सोगन) करता हुं. कित्नी देर तक तो जाव नियम जघन्य एक मुहुर्त (पहरका चौथा हिशा ४८ मिनिट) उत्कृष्ट जहांतक स्थिरता होवे वहांतक. पज्जुवा सामी =परमेश्वर की सेवा भक्ती करुंगा. ये नियम गृहस्थ दुविहं दो करण तिविहेणं तीन योगसे* ग्रहण करता हुं. दो करण कोनसे–पूर्व कह्या सो सावद्य

* दो करण और तीन योगके छे भांगे एसे होते हैं–१ करु नही मनसे. २ करु नही बचनसे. ३ करु नही कायासे. ४ कराबू नही मनसें. ५ करावू नही बचनसे. ६ करावू नही कायासे. ये ६ हुये.

काम न करेमी—में करु नही. नकारवेमी—मे दूसरेके पास कराउ नही. मणेणं—मन करके, वायाए— बचन करके, कायणं—काया (सरीर) करके. तस—इस (पाप) से, भंते—हे भगवान्, पडीकमामि प्रतिक्रमू—पीछा हट्ठ ‡ निवर्तू, निंदामी—अवृतमें रहके जो सावद्य कर्म किया है उस की निंदा करुं कि मेने ये काम खोटा किया, ग्रहामी—(१) गुरुवादिक जेष्ट पुरुष की सन्मुख सावद्य कर्म की निंदा करुं के हे पुज्य मेने श्रावक नाम धरा मोह जालमें फस ये काम अयोग्य किया. (२) तथा गुरुवादिक जेष्ट की साक्षीसे वृत ग्रहण करे क्यों कि वृत ग्रहण किये पीछे कोइ गाढ कार्य आजाय प्रणाम ठीकाणे न रहे वृत भंग करनेका इरादा हो जाय तो भी जिनकी साक्षी से लिया है उनकी शर्म आजाय के ये क्या कहेंगे. फिर सर्म के मारे वृत भंग न कर सके. इसलिये

‡ प्रतिक्रमण—पडीकमण भी इसे ही कहते हैं कि किये हुये पापों की यादी कर पीछे हटना अर्थात जैसे किसीको अजाणमें ठोकर लग गइ तो उसे पीछा खमाते हैं कि माफ करो. एसे ही प्रतिक्रमणमें पापको याद कर पश्चाताप करता है कि मेने ये खोटा किया हैं.

साक्षी से व्रत ग्रहण करता हु. अप्पाणं-मेरी आतमा करके वोसीरामी-(सावद्य काम) वोसराता हूं. छोडता हूं. कि इत्नी देर तक सावद्य काम नही करुंगा. इस पाठ से नवमा व्रत धारण किया जाता हैं. इसमें 'करंतंपि अन्न समणु जाणामी, मनसा वायसा कायसा' अर्थात् सावद्य काम करने-वालेको मन बचन काया करके अच्छा जाणना खुला रहा हैं. क्यों कि गृहस्थका मन निग्रह होणा बहुत ही मुशकील हैं. सावद्य काम से निवृत के सामायिक करी है. उसकी लेहर आणेका संभव रहता हैं. कोइ कहे की तुमारे पुत्र प्राप्ती हुइ तो मन हुलसे. बचन हुंकार निकले और काया करके मुह-पर खुशी जणा आवे. इसलिये ये तीसरा कर्ण तीन योगसे खुला हैं. इस नवमे वृतको निर्मल आराधने पांच अतीचारका स्वरुप जाण उनसे बचना.

१ "मण दुप्पडिहाणे" मनसे दुप्रति (खोटा) ध्यान प्रवृताया होय. अर्थात इस मनको शास्त्रमें विन लगामका अश्व (घोडा) कहा हैं इसको लगाम लगानेसे बांधनेसे ये ज्यादा दोडते नहीं हैं. अर्थात पाप मार्गमें प्रवर्तते तो ये स्थिरीभूत हो जाता है

और धर्म मार्गमें प्रवेश करते ये उछल २ के पाप मार्गमें जाता हैं. इसलिये इसे सामायिक वृतमें विराजे हुये श्रावक दश काममें जाता रोके.

'मनके दश दोष':-१ 'अविवेक दोष'-जिसको सामायिकका फलका ज्ञान न होय एसे जीवको कभी सामायिक कराके बेठा दिया तो वो बीचारेगा की यों मुह बंध कर बेठनेसे क्या धर्म होयगा? ये क्या धर्म लगा दीया हैं? इत्यादी कल्पना करे.

२ "यशो वांछा दोष" में सर्वसे बडा हूं और में जो सामायिक करुंगा तो मुजे सर्व लोक धन्य २ करेंगे. मुजे धर्मात्मा कहेंगे. मेरी कीरती बडेगी; इत्यादी कल्पना करे.

३ "धनेच्छा दोष" 'करुंगा समाइ तो होवेगा कमाइ.' में दरिद्री हूं, धर्म से सूखी होवूंगा. अमुक २ धर्म ध्यान सामायिक जास्ती करते हैं वो सुखी है वैसे में भी होवूंगा.

४ "गर्व दोष" मेरे जैसा निर्दोष त्रिकाल सामायिक करनेवाला और कोन हैं?

५ "भय दोष" एसा बीचारे की मेरे बाप

दादे धर्म बहुत करते थे, सदा वाख्यानमें आगे बेठ सामायिक करते थे; जो में नही करुंगा तो लोक मेरी निंदा करेंगे कि एसे द्रढ के पुत्र हो एक सामायिक भी नही करते हैं; एसा बीचारके करे.

६ " नियाणा दोष " नियाणा करे कि मेरी सामायिकका फल होय तो मुजे धन पुत्र सुख संपत इच्छित इष्ट वस्तूका संजोग मिलो, दुःख जावो.

७ संसय दोष–में काम छोड नित्य सामायिक करता हुं इसका मुजे फल मिलेगा कि नही, के मेरी दोनु लोक की कमाइ व्यर्थ जायगी, यों संशय लावे.

८ " कषाय दोष " ४ कषाय के वस हो सामायिक करे; जैसे (१) झगडा होय तो आप रीसाके सामायिक करके बेठ जाय (२) छोटे २ सब काम कर रहे है, में बडा हुं सो सामायिक करुं. (३) में सामायिक करुंगा तो मुजे कुछ काम नहीं करना पडेगा. (४) में सामायिक करुंगा तो मुजे कुछ प्राप्ती होयगी. इत्यादी बीचारे.

९ " अविनय दोष " पुस्तक मालादि धर्म उपगरण तो नीचे रखे और आप ऊंचा बेठे. साधू

साध्वी आवे तो सत्कार न देवे, मनमें संकल्प विकल्प रखे.

१० " अपमान दोष " (१) अंग करडा करके बेठे की इससे अमुकका अपमान होयगा तथा (२) सामायिकका अपमान करे अर्थात् जैसे हम्माल के सिर पे बोजा दीया, वो बीचारे की कब घर आवे और बोजा फेंक के हलका होवूं. ऐसे ही विना मनसे किसी के सरमा सरमी या कहने सुणने से सामायिक तो कर ली फिर घडीयाल हलाया करे, मिनीट गिणा करे, पुरी सामायिक न आते पारने की गडबड करे. पूरी हुयी के जाणे सिरका बजन उतरा, फंदसे छुटा, इत्यादी कल्पना करे; सो मनदुप्रतीध्यान. ऐसे २ बीचार करनेसे हाथ तो कुछ नही आता है. और सामायकका महा फल हाथ आया निष्फल जाता हैं. ऐसा जाण मन शुद्ध निर्मल रखणा चाहीये.

२ " वय दुप्पडि हाणे " वचन दुप्रतीध्यान (खोटा) उच्चार कीया होए. अर्थात् कित्नेकका स्वभाव से ही जास्ती बोलनेका स्वभाव होता हैं. सूमार्ग बचन निकालना मुशकील हैं और अशुभ

बचन सहज ही निकल जाता है, इसलिये सावद्य बचनका निरुंधन करनेको ही सामायिक की जाती है. सामायिक व्रतधारीको दश प्रकार के बचनका उच्चार नहीज करनाः—

१ "अलिक दोष"—झूट बोले, असबंध, असुहामणे खराब बचन उच्चारे.

२ "सह सत्कार दोष" जैसा उपजे वैसा बचनका योग्यायोग्य द्रव्य क्षेत्रकाल भाव अवसर देखे विन मनमें आवे वैसा झट बोल देवे.

३ "असाधारण दोष" सुश्रद्धाका विनाश करनेवाला बचन बोले. अन्य मतावलंबीयोंके आडंबर की महीमा करे. खोटे उपदेश कर साथी की श्रद्धा बीगाडे.

४ "निरापेक्षा दोष" शास्त्र की अपेक्षा रहित ऐकेक वचनसे दूसरा बचन अमिलता तथा आपसमें विरोध पडानेवाला, दूसरेको दुःख उचाट उपजे ऐसा बोले.

५ 'संक्षेप दोष' सामायिक की पटीयों प्रतिक्रमण नवकारादिक जल्दी पूरा करने या दूसरेके आगे निकलने झट २ अधूरे २ बोलके पूरे करे.

६ ' क्लेश दोष ' दूसरेके साथ जूना क्लेश उदेरे तथा मार्मिक बचनसे क्लेश उपजावे.

७ " वीकथा दोष " स्त्री पुरुष की, देश देशांतर की, राज सायबी की, भोजन पक्वान की इत्यादी निरर्थक पाप बडानेवाली वीकथाओं करे सो.

८ ' हास्य दोष ' हंसी मस्करी कुतुहल करे तथा अपंग को चीडावे, हांसी करे.

९ ' अशुद्ध दोष ' नवकार सामायिक की पाटीयों शास्त्रके पाठ अर्थादी काना मात्र ह्रस्व दीर्घ कमी जास्ती अशुद्ध अयोग्य शब्द उच्चारे तथा अशुद्ध निर्लज चकार मकारादिक की गालीयों देवे.

१० ' मुम्मण दोष ' ऐसा गडबडाटसे बोले कि सुणनेवालेको बिलकूल समज नही पडे. कुछ मुखमें कुछ बाहिर ऐसा शब्द उच्चारे. इत्यादी कू बचन उच्चारण करनेसे द्रव्ये तो अपयश और भावसे आत्मा मलीन होती है. फायदा कुछ भी नही निकलता है तो फिर कोण सुज्ञ श्रावक खोटे बचन बोलके सामायिकका महा लाभ गमावेगा ?

३ " काय दुपडी हाणे " कितनेकको स्वभावसे ही काया की चपलता संकोचन पसारण हलण चल-

णादी विशेष रहती हैं, जिससे बहुत वक्त अनर्थ निपजता हैं. उस अनर्थसे आत्मा निवारने सामायिक व्रत धारण किया जाता हैं, सो सुज्ञोंको लाजिम हैं कि बारे दोषोंसे कायाको अवस्य बचावेगे.

१ 'अयोगासन दोष' बेठने योग्य नही ऐसा आसनपे बेठे सो अर्थात् (१) पग उपर पग चडा करके बेठनेसे अभीमान मालम पडता है और बडों की असातना होती हैं (२) आसन (बेठका) के नीचे अस्तर लगाना तथा श्वेतरंग छोड दूसरे रंगका बेठका रखणा सो भी अयोग्य है, क्यों कि दोपट अंदर तथा बेरंगमें उस रंगका जीव आणेसे मरता हैं. इसलिये ये अयोग्य आसन कहे जाते है. सामायिकमें दोनु वर्जना.

२ " चलासन दोष " अस्थिर आसन बेठे अर्थात् (१) शिला पाट प्रमुख डग २ करते होवे वहां बेठे नही, क्यों कि उस नीचे जीव आके मरजाता हैं. (२) जिस जगे बेठनेसे वारंवार उठणा पडे वहां बेठे तथा समायिक करे पीछे विन कारन उठ बेठ तो हिंसा होणेका विग्रह होणेका संभव है.

३ 'चल द्रष्टी दोष' द्रष्टी की चपलता करे;

अर्थात वारंवार इधर उधर देखे, ख्याल तमासा नाटक स्त्रीयोंका शृंगार अंगोपांग त्रोर चपल द्रष्टीसे वीकार द्रष्टीसे अवलोकन करे. क्यों कि प्रगट देखे तो कोइ टोक देवे.

४ 'सावद्य क्रिया दोष' पापकारी काम करे अर्थात् ऐसा बीचारे की फुरसत तो है नही और सामायिक करनी हैं, तो सामायिक करके नामा लेखा करु, कपडे सीवूं, अचित पाणी से लीपणा, कसीदे काडना, लडकेको खिलाणा, इत्यादी कामों में कोनसी जीव हिंसा होती हैं? ऐसा बीचार कर समायिकमें उपरोक्त काम करे तो दोष लागे. क्योंकि ये संसारी काम है सो सावद्य हैं. सामायिकमें धर्मकार्य छोड अन्य सर्व काम करने की सर्वथा मना हैं.

५ "आलंबन दोष" अन्यका आसरा लेके बेठे सो दोष अर्थात् भींतका स्थंभका कपडे की गठडी प्रमुखका टेका लेके नहीं बेठे; क्यों कि टेका लेणे से उस्पे चलता जीव दब के मर जाता है तथा निद्रादिक प्रमादका संभव है. वृद्ध रोगी तपसी अशक्त से जो कभी टेके (आधार) विन नही बेठा जाय तो विना पूंजा (झाडे) किसी अवलंबन न

लेवे. बहुत हलन चलन न करे.

६ 'अंकूचन पसारण दोष' सरीर संकोचे पसारे अर्थात् बेठे २ कोचवा जाय तब हाथ पाव लंबे पसारे भेले करे. पग पसार के बेठे. इत्यादी करे सो दोष.

७ 'आलस दोष' अंग मरांडे, उबासी लेवे, सरीरको इधर उधर डाले, सो दोष.

८ 'मोडन दोष' हाथ पग अंगुली प्रमुख सरीर के करड के मोडे तो दोष.

९ 'मल दोष' निकम्मे बेठे २ सरीरका मेल उतारे, पूंजे विन खाज खिणे सो दोष.

१० 'विमासण दोष' गलेको हाथ लगा नीची धुन कर संसार कार्य की देन लेन घर धंधा, वेपार वणज इत्यादिक विमासण (चिंता) करे.

११ 'निद्रा दोष' निद्रा लेवे, समायिक भी होयगी और नींद भी निकल जायगी !

१२ 'वयावच्च दोष' विन कारण हाथ पग पीठ दबावे चपावे तो दोष. इत्यादी प्रकारसे काया प्रवर्तानेसे अनेक छोटे मोटे जीवका वध होता है और धर्म की हीणता लगती है. इसलिये सामायिकका फल प्राप्त होणा मुशकील हैं. इसलिये ऐसे अ-

कार्यसे कोण सुज्ञ सामायिक गमायगे ?

ये १० मनके, १० बचनके, १२ कायाके सर्व मिलके ३२ दोष पूरे हुये.

४ " सामाइ यस संसय करणीयाए " संसयमें समायक पुरी करे, अर्थात् निद्राके मूरछाके चिंताके वस हो स्मृती भूल जाय की मेरी सामायिक आइ के न आइ. उस संसयसे निवर्तें विन सामायिकं पारे तो दोष लगे.

५ " सामाइयस अणवठियस अकरणीयाये " सामायिक करनेका अवसर आया तो भी सामायिक न करे तो अर्थात संसार कार्यमें फसे हुयेसे धर्म क्रिया होणी मुशकील है और उसे निवर्तन हुए—फुरसद मिले ही जो धर्मक्रिया न करे तो फिर धर्म पायेका क्या फायदा हुवा ? इसलिये अवसर पाके धर्म क्रिया न करे तो अतीचार लगे.

ये नवमे व्रतके पांच अतीचार टालके शुद्ध सामायक व्रत करना.

प्रश्नः—एसी निर्दोष सामायिक तो इस कालं होणी मुशकील है. इस लिये सदोष समायिक करते तो सामायिक न करे सो ही उत्तम हैं.

समाधानः—ऐसा कहना तो ऐसा हुवा कि खावू तो पक्वान ही खावू, नही तो भूखा ही मरुं; पेरुं तो रत्न कामल, नही तो नंगा ही फिरु! एसा बीचार वाला तो विन मोत मर जायगा! और जो पक्वान खाने की अभीलाष धर पक्कान न मिले वहांतक रोटीसे पेट भरे और पक्वानकी इच्छा रखे तो कभी पक्वान भी मिले ऐसे ही शुद्ध सामायिक करने की अभीलाषा रखे और शुद्ध न होवे वांहातक जैसी बणे वैसी करे, तो वक्त पे शुद्ध सामायिक भी हो जायगी. जित्नी सकर पडे उत्ना मिठा जरुर होयगा. मनमें तो शुद्ध सामायिक की अभीलाषा हैं. और काल दोष प्रमादादिक के कारण से न होवे तो उसका पश्चाताप करे. नित्य शुद्ध करनेका उद्यम करे. एकदम कोइ भी काम सुधरना मुशकील हैं. लिखते २ अक्षर, गाते २ स्वर सुधरता हैं. ऐसे ही पढते २ पंडित होते हैं. जो पहली खराब अक्षर देख के लिखणा छोडे और दुष्कर विद्या आती देख पढना छोड दे तो मूर्ख ही रह जाय. फिर सुधरने की आसा तो किधर ही रही? ऐसे ही नित्य सामायिक करते और शुद्ध की वांछा रखते कभी शुद्ध सामायिक भी होयगी. जरा निश्चय समायिक के अर्थ पे निघा देवो, कि

एक समय मात्र भी शुभ प्रणाम आ जाय तो उसकी सामायिक निपज गइ. तो क्या एक मुहुर्तमें एक समय भी शुद्ध प्रणाम नही होते होयगे? ऐसा समज नित्य प्रति अवस्य सामायिक करना चाहीये.

प्रश्न–सारा दिन अनेक पाप कर एक दो सामायिक करी इससे क्या फायदा?

समाधान–देखीये, पतंगको आकाशमें उडाते है तब सेंकडो हाथ डोर छोड फक्त दो अंगुल डोर हाथमें रखी. या कूवेमें लोटे के साथ सेंकडो हाथ डोर छोड फक्त दो अंगुल डोर हाथमें रखी. तो खेंचके लोटेको और पतंगको प्राप्त कर सकते हैं. और बीचारे की दो अंगुल हाथमें रही तो क्या हुवा, और गइ तो क्या? ऐसा बीचार दो अंगुल डोर छोड देवे तो पतंग और लोटा दोनुकों गमावे. ऐसे ही सर्व जन्म तो संसार रुप कूपमें डाल दीया है फक्त दो घडी रुप सामायिक व्रत की नित्य प्रती आराधना करी तो धारेगा तब ज्ञानादि त्रीरत्न हाथमें ले सकेगा. इसलिये सामायिक अवस्य ही करना चाहीये.

ये सामायिक व्रत है सो दो घडीका संयम ही

हैं. संयम जावजीवका होता है इसलिये खान पान सयनादि कार्य की नियमित छुट्टी हैं और सामायिक स्वल्प काल की है इसलिये ये बंदोबस्त कीया हैं.

सामायिकके फल की गाथा, संबोध सित्तरी कीः—

दिवसे २ लख्खं देइ सुवन्नस्स खंडीयं एगो ।
इयरो पुन सामाइयं न पहुपहो तस कोइ ॥

कोइ नित्य प्रत्ये एक २ लाख खंडी (२० मणकी एक खंडी) सोनैया देवे और कोइ एक सामायिक करे तो उस एक सामायिक तुल्य वो दान नही.

समाइयं कुण तो समभावं सावउ अघडीय दुग्गं ।
आउ सुरस बंधइ इति आमिताइ पलियाइ ॥
वाणवइ कोडीउ लख्खा गुण सठि सहस्स पण वीसं ।
नवसय पण वीसाए सत्तिइ अड भाग पलियस्स ॥

जो श्रावक समभावसे दो घडी की सामायिक करेगा वो ९२ क्रोड ५९ लाख २५ हजार ९ सो २५ पल्योपम और एक पलके आठ भाग करना उसमें के ३ भाग इत्ना देवताका आयू बांधे और नर्कका बांधा होय तो तोड देवे.

अन्यमतावलंबी क्रोड पूर्व लग मास २ तप करे

तृणाग्रपे आवे इत्ना अन्न और अंजलीमें आवे इत्ना पाणी पारणे के दिन लेवे उसका पुन्य और ज्ञान-युक्त दो घडीकी करणी अर्थात् सामायिकका फल के सोलमे हिस्सेमें भी नहीं हैं.

एसा महा लाभका कारण, जन्म मर्ण निवारनें-वाली, चित्त समाधीकी करनेवाली, मोक्ष पंथ लगाने-वाली, आत्मरुप अनंत शक्ती के प्रकाश करनेवाली, राग द्वेष शत्रुओंका नाश करनेवाली, ज्ञानादी त्री-रत्न के लाभको देणेवाली, 'सामायिक' हमेशा करनी चाहीये. ज्यास्ती न बणे तो त्रीकाल (फजर दो पहर और स्याम) तो अवस्य ही करना. इन त्रीकालोंमें त्रिझमक देवका आवागमन रहता है. उसवक्त अपणे शुद्ध प्रणाम रहें और पुन्य प्रगटणे होवे तो सहज महा लाभकी प्राप्ती हो सकती हैं. जो त्रीकाल न बणे तो फजर स्याम ये दो वक्त जरुर करनी. कदापि कार्य बाहुल्यतासे दो वक्त न बणे तो, नित्य एक वक्त तो जरुर ही करनी चाहीये. अन्य जन भी कहते है कि "आठ पहर घरकी तो दो घडी हरकी," तथा "आठ पहर कामकी तो दो घडी राम की" अर्थात् आठ पहर अकार्यमें

लगाते हो तो दो घडी तो जरुर नित्य प्रत्ये आत्म-कल्याण के मार्गमें लगाणी ही चाहीये.

जो ये नवमा व्रतका तहा मनसे सम्यक् प्रकारे आराधन करेगा वो ह्यां अनेक सुख भोगव स्वर्ग सुखका अनुभव ले मोक्ष पावेगा.

१० दिशावकासीव्रत कहता दिशा की मर्यादा करे अर्थात् छटे व्रतमें जो छे दिशा की मर्यादा करी सो जाव जीव की जाणनी परंतु नित्य कुछ उत्ने कोश जाणेका काम पडता नही. तो नाहक इत्नी छुट्टी रख पापमे क्यों डूबणा? इसलिये "दिन २ प्रते"—नित्य (हमेशा) जित्ना काम पडे उत्नी 'प्रभात से प्रारंभी' सुबू (सवेरे) से ही "पूर्वादिक छेही दिशाकी मर्यादा करी हैं"—पूर्व पश्चिम उत्तर दक्षिण ऊंची नीची ए छेही दिशामें कोश की गि-नती कर, उप्रांत (आगे) जाने के पच्चखाण (सोगन) करे कि मेरको आज या आजसे इत्ने दिन पक्ष मास तक इस मेरे बिस्तरे (बीछोणे) के घर के गाव के या माइल कोश योजनादी उप्रांत नही जाउंगा. सो भी "स्वइच्छा काया करके" मेरी इच्छासे और मेरी कायासे अर्थात् देवता या

विद्याधर हरण कर ले जाय, राजा निकाल दे, तथा उन्माद आदी रोग से परवसपणे चला जावूं सो बात जुदी (अलग), और में कायासे न जावू इसका मतलब ये है कि किसी नोकरको भेजना पडे या खत (पत्र) देणा पडे सो भी बात अलग हैं. इन कारणों उप्रांत जाणे के पच्चखाण हैं. सो किसके पच्चखाण है कि "आगे जाके पांच आश्रव सेवने के पच्चखाण" मर्याद उप्रांत जाके पंच आश्रव (हिंसा-झूट-चोरी-मैथून-परिग्रह) के काम नही करुंगा. परंतू जीव छोडानेको, मुनीराज के दर्शनको या किसी धर्म कार्य के लिये यत्ना से जावे और धर्म सिवाय अन्य काम किंचित ही नहीं करे तो व्रतका भंग न होवे. ये पच्चखाण दो करण और तीन योग से होते हैं. सामायिक की तरह जाणना. अब "पूर्वादिक" छे दिशा के मांय जो भूमीका मोकली रखी हैं. 'ते मांहे' उसके अंदर भी द्रव्यादिक की मर्यादा करनी अर्थात् दशमे व्रत के धरण हारको जो सातमे व्रतमें २६ बोलकी मर्यादा जावजीव की करी है उत्नी वस्तु कुछ हमेशा भोगवनेमें नही आती हैं, परंतु जो अव्रत न मिटावे तो सबका

पाप आवे, इसलिये ह्यां उसमें से भी संकोचन करना अर्थात् नित्य नियम धारना. जित्नी वस्तू भोगवणेमें आवे उस उप्रांत त्यागन करना. इस मर्यादा के सतरे भेद कीये हैं सोः—

१७ नित्य नियम—१ 'सचित'—बणे वहांतक तो दशमे व्रत धारिको सर्वथा त्यागन करना, जो कदापी नहीज चले अर्थात् व्यसन पूरा करना ही पडे तो सचित (सजीव) (१) मट्टी लूण या लूण डाला हूवा चूरण कि जिसको किये पीछे वृष्टी (वर्षाद) न हुइ होए एसा. (२) पाणी, सरोवर या पीरेंड नल प्रमुख. (३) अग्नी, चूला दीपक हुक्का बीडी प्रमुख. (४) वायू, पंखा, पखी, झूला, बाजिंत्र प्रमुख. (५) वनस्पति, भाजी फल फूल कच्चा अनाज विगेरे के तोलकी मर्यादा करे कि इत्ने उप्रांत न लगावूंगा. २ 'द्रव्य' खाणे के पदार्थ के नाम तथा स्वाद पलटे उत्ने ही द्रव्य होते हैं. उस्की गिणती करे की आज इत्ने उप्रांत नहीं खावूगा. ३ 'विगय' दूध दही घी तेल मिठाइ इनमें से एक तो नित्य जरुर ही त्यागे और लगे उनके वजनकी मर्यादा करे. ४ पन्नी—पगरखी बूट मोजा

वगैरे की गीनती करे. चले वहांतक चमडे की तथा खीले (नाल) वाली नही पहरे. ५ 'तंबोल' पानमें तो अनंत कायका संभव हैं कित्ने पके (पीले) पानको अचेत गिणते हैं सो अयोग्य है, पान सूखे विन निर्जीव न होवे. इसलिये बणे वहां लग श्रावकको पान नही खाणा. और लोंग सूपारी इत्यादिक के बजनका प्रमाण करे. ६ 'कुसुम'—फूल तो सूंघणा ही नही और तमाखू (तपखीर—छीकणी) या कोइ औषध सूंघणेका काम होवे तो बजनका प्रमाण करे. ७ 'वत्थ'—रेसम के वस्त्र तो वापरना ही नही और सूत ऊन सण इत्यादिक के वस्त्र के हाथका या नंगका प्रमाण करे. ८ 'सयण'—बणे वहां लग खाट पिलंग पे नही सोणा और पाट गादी सतरंजी इत्यादी बीछाव की लंबाइ चोडाइ के हाथ या नंगका प्रमाण करे. ९ 'वाहण'—चरते घोडे हाथी प्रमुख, फिरते गाडी बग्गी म्याना प्रमुख, तिरते झाझ नाव प्रमुख, उडते—वीमान गुब्भारे प्रमुखका नंगका प्रमाण करे. १० 'विलेवन'—तेल पीठी वगैरे सरीरको लगाणा पडे तथा केसर चंदन वगैरे तिलक करना पडे उसके बजनका या प्रकारका प्रमाण करे.

११ 'अबंभ'—बणे वहां तक तो ब्रह्मचर्य पाले, नहीं तो एक वक्त उप्रांत त्याग करे. स्त्री भरतार एक ही सेजपे सयन नही करे. भेले रहणे से एकेकका श्वासोश्वास एकेकको लगनेसे रोग उत्पन्न होता है तथा तिव्र अनुराग से कठिण कर्म बंधते हैं. १२ 'दिशा'—पहली कहे मुजब छे दिशाकी मर्यादा करे. १३ 'न्हावण—धोवण'—छोटी स्नान बडी स्नानका तथा कपडे धोणेका वक्तका या नंगका प्रमाण करे. विन छाणे पाणी से न्हावे धोवे नहीं. विशेष पाणी ढोले नही. १४ 'भत्तेसु'—खाणे पीणेका आहार पाणी के बजनका प्रमाण करे. बणे वहांतक अेंठ (झूटा) न डाले. ये चउदे और १५ 'अस्सी'—पचेंद्री की घात होवे ऐसा हत्थीयार नही चलावे. और चकू सूइ कतरणी लकडी के नंग की मर्यादा करे. १६ 'मस्सी'—बहुत दिन स्याइ एक दुवातमें भर के न रखे तथा बहुत सकडे मुह की दवात न रखे और दुवात कलम कागज या जवेरात कपडे किराणे आदी वेपार के नंगका प्रमाण करे. १७ 'कस्सी'—कृषी खेतीवाडीका कर्म श्रावकको करणा योग्य नहीं हैं. आसामी आदिक रखे तो प्रमाण करे.

ये सतरे नियमकी मर्यादा नित्य फजर करे और स्यामको याद कर ले कि मेने कित्नी वस्तू रखीथी और कित्नी लगी, जो स्मृती चूकसे ज्यादा लग गइ होय तो मिच्छामी दुष्कृत्यादि प्रायछित ले शुद्ध होवे. फिर रातकी मर्यादा करे. इन सतरे नियम के पच्चखाणः 'एगविहं तिविहेण' एक करण और तीन योग से होते हैं अर्थात् में मन बचन काया करके करूंगा नहीं, इसमें दूसरे के पास करानेका और करतेको अच्छा जाणनेका आगार रहा हैं. दश पच्चखाण भी इस दशमे व्रतमें ग्रहण कीये जाते हैं.

१. "सूरे ऊगे नमोकारसहियं पच्चखामि अनथ्थणा भोगेणं सहस्सागारेणं वोसीरे" अर्थात् नोकारसी (पोरसीका चौथा भाग तथा नोकार गिणके पारे सो) इसमें दो आगार (१) अनथ्थणा भोगेणं-भूलके कोइ वस्तू मुखमें डाल देवे (२) काम करते मुखमें उछलकें पड जाय जैसे गायका दूध निकालते उसका छांटा उडके मुखमें पड जाय.

२. "सूरे ऊगे पोरसहियं पच्चखामि अनथ्थणा भोगेणं, सहसागारेणं, पछन्न कालेणं, दिशा मोहिणं, साहुवयणेणं. सव्व समाहि वित्तिया गारेणं वोसीरे."

दूसरे पोरसीके पच्चखाणमें ६ आगार. (१–२) दो का अर्थ पहले हुवा सो (३) बादलमें सूर्य छीप जाय और वक्त की मालम न पडे तो. (४) दिशा की भूल पडनेसे कित्ना दिन आया ऐसा मालम न रहणेसे खाय सो. (५) कोइ वक्त उत्कृष्ट कार्य होणेसे गुरु हुकम करे तो. (६) सर्व समाधीसे स-रीर रहित हो गया परवस पड गया होय तो.

३. "सुरे ऊगे पूरि मड्ढं पच्चखामि अन्नथ्थणा भो-गेणं. सहस्सागारेणं. पछन्न कालेणं. दिशा मोहेणं, साहुवयणेणं. महत्तरागारेणं. सव्व समाही वित्तिया गारेणं. वोसीरे." दो पोरसीके पच्चखाणमें ७ आगार है उसमें से छेका अर्थ तो पहले हुवा और ७ मा महत्तरागारेणं सो कोइ महा मोटा उपकारका काम होय तो.

४. " एगासणं पच्चखामि " "अन्नथणाभोगेणं. सहस्सागारेणं. सागारी आगारेणं. आउट्टण पसारेणं. गुरु अभूठाणेणं परिठावणिया गारेणं, महत्तरा गारेणं. सव्व समाही वत्तिया गारेणं. वोसीरे"—एका-सणेके पच्चखाणमें ८ आगार, जिसमें से दोका अर्थ पहले कहा हैं और (३) गृहस्थ आ जाय और

उठणा पडे तो. (४) हाथ पाव संकोचने पसारने पडे तो. (५) गुरु पधारे और सत्कार देने ऊभा होणा पडे तो. (६) दूसरे साधूके आहार बढ जाय वो परिठवणे जावे उसे भोगवे तो. (७-८) का अर्थ पहले लिखा हैं.

५ " एकल ठाण पच्चखामी " "अन्नत्थणा भोगेणं, सहस्सागारेणं. सागारी आगारेणं. गुरु अभुठाणेणं. परिठावणीया गारेणं, सव्व समाही वत्तिया गारेणं. वोसीरे" एकल ठाणा (एक ठीकाणे हलन चलन करे विन आहार करे सो) के ७ आगारका अर्थ पहली हुवा.

६ " आयंबिलं पच्चखामि " "अन्नथणा भोगेणं. सहस्सागारेणं, लेवालेवेणं. गिहत्थ संसठेणं. उखित विवग्गेणं. परिठावणीया गारेणं. महत्तरागारेणं. सव्व समाहि वत्तीया गारेणं. वोसी रे." आंबिल (एक ही अनाज लूखा पाणीके साथ एक ठीकाणे बेठ एक ही वक्त खावे सो) के आगार ८, जिसमें से (१ -२-६-७-८) इनका अर्थ तो पहली हुवा. (३) सहज लेप लग जाय जैसे लुखी रोटी चोपडीपे रखणेसे लगे. (४) अहार देनेवालेके हाथ विगय

से भरे होवे और वो देवे सो. (५) गुड प्रमुख सूखी वस्तु उसपे रखके उठा ली उसका रहसा लग जाय सो. और का अर्थ पहली हुवा.

७ " सुरे ऊगे अभत्तठं पच्चखामि " "अन्नथ्थणा भोगेणं. सहस्सागारेणं. परिठावणिया गारेणं. महत्तरा गारेणं. सव्व समाही वित्तिया गारेणं. वोसीरे. उपवास (आठ पहर ४ चार ही आहार नही भोगवे सो) के ५ आगार, अर्थ हुवा.

८. "दिवस चरिमं पच्चखामि" "अन्नथ्थणा भोगेणं सहस्सा गारेणं महत्तरा गारेणं सबसमाही वित्तिया गारेणं वोसीरे." पिछेका दिन थोडासा रहे तब चार ही आहारके त्याग करे सो दिवस चर्म, इसके ४ आगार, अर्थ हुवा.

९ गंठ सहीयं पच्चरखामी. "अन्नथा भोगेणं. सहस्सा गारेणं. महत्तरागारेणं सव्व समाहि वित्तिया गारेणं वोसीरे." किसी कपडेको या चोटीको गांठ लगाके नियम करे की मैं इस गांठको नही खोलुंगा वाहां तक कुछ खांवूगा पीवूंगा नही. सो गंठी पच्चखाण†

† ऐसे ही मुठी पच्चखाण होते है की, आहार करुंगा वहा लग डाबे हाथ की मुट्ठी भीड रखुंगा.

इसके ४ आगार, अर्थ हुवा.

१० "निविगइयं पच्चखामि" "अन्नथ्थणा भोगेणं, सहस्सागारेणं, लेवा लेवणं, गिहत्थ संसंठेणं, उखित्त विवगगणं, पडूच्चमखिएणं, परिठावणीयागारेणं. महत्तरागारेणं, सव्वसमाहिवत्तीयागारेणं, वोसीरे."

नीवी (इसमें दूध, दही, घी, तेल, मीठाइ, ये पांच वस्तू नही खावे. कोइ ठंडी रोटी छाछमें खाते हैं.) इसके ९ आगार. उसमें से आठ आगारका अर्थ तो पहली हुवा और (९) किसी वस्तु के पडमें विगय लगाइ होय और मालम नही पडते भोगवणेमें आ जाय तो.

इन दश पच्चखाणोंमें.* साहुवयेणं, सागारी आगारेणं, परिठावणीयागारेणं, गिहत्थ संसठेणं. ये ४

---

* इन दशही पच्चखाणमें जो तिविहार करना होय (पाणी पीणा होय) तो असणं खाइमं साइमं ये शब्द मिलाणा. और चोविहार करणा होय तो असणं पाणं खाइमं साइमं ये शब्द मिलाणा. एसेही सब पच्चखाण जाणना.—जैसे—उगेसूरे नमुकारसीयं पच्चखामि चोविहंपीआहारं असणं पाणं खाइमं साइमं. अनथ्थणा भोगेणं सहसागरेणं वोसीरे.

आगार साधू आसरी जाणने. एसे है छोटे मोटे जित्ने पच्चखाण है वो सबका दशमे वृतमें समावेस होता हैं. इसलिये इस वृतमें सब वृतों (११ वृत) का समावेस होता हैं. ये दशमे वृत करने का अब्बी दो तरहका रिवाज द्रष्टीगोचर होता हैं. (१) गुजरातमें तो फजरसे-सुबुसे ही उपासरा-स्थानकमें आके इस व्रतमें लिखे मुजब दिशा की और उपभोग परिभोग की मर्यादा करते है. सब दिन सचितका त्याग कर सीधा नीपजा हुवा आहार मिले उसे भोगवते है. और सब दिन रात धर्म ध्यान करते हैं. (२) मालवा मेवाड मारवाड दक्षिणमें जिस श्रावकने उपवासके दिन पाणी पीया अफीम तमाखु खाइ या स्यामको थोडा दिन रहते आया उसे दशमा वृत (दशमा पोसा) करते हैं. परंतु किसी तराह अवृत रोक वृत धारण करे उसमें नफा हैं. इस दशमे वृतको निर्मल रखणे पांच अतीचारका स्वरुप जाण वर्जना.

१ 'आण वण पउगे' जित्नी भूमीका मर्यादामें पहली रखी हैं उसके वा बाहिरसे वस्तु दूसरे के पास मंगावे तो अतीचार लगता हैं.

२ 'पेच्चावण पउगे' मर्याद उप्रांत कोइ वस्तु भेजे (मोकले) तो अतीचार लगे क्योंकि इस वृतमें दिशी की मर्यादा दो करण तीन जोगसे की हैं. इसलिये मंगाणा और भेजना दोनु बंद हुवा हैं. करना—कराना दोनु बंद हुये हैं.

३ 'सद्दाणुवा' विचारे कि मेरेको मर्यादा उप्रांत लगता था, दूसरेको भेजना तो कल्पे नही, परंतु जिससे मेरे काम हैं वो आ गया हैं तो उसे बुला लेवू. यों बीचार उसे बोलावे तो अतीचार लगे; क्यों कि तीन जोगसे त्याग कीया हैं, जिसमें बचनका योग बुलाणा भी बंद हुवा हैं.

४ 'रुवाणुवा' एसा बीचारे, बोलणा तो बंद हैं परंतु छीक वागासी खेंकार इत्यादी करु, वो मेरे को देख लेवेगा तो मेरे पास आ जायगा, यों बीचार आप आपणी मर्यादाकी भुमीमें रह ऊंचा नीचा हो उसे रुप बतावे इसारा जणावे तो अतीचार लगे. क्यों कि इसमें बचन और काया दोइ जोग प्रवर्तते हैं.

५ "वहीया पोगल पखेवा" एसे ही कंकर

काष्ट तृण प्रमुख उसपे डाल संकेत कर उसे बोलावे तो भी अतीचार लगे.

ये तो फक्त दिशी कीं मर्यादा आश्री ५ अतीचार कहे. सुज्ञ श्रावक इसके अनुसार से ही जो द्रव्यादिक की मर्यादा करी हैं उसके भी अतीचारोंको जाणेगा, कि नियम किये हैं उस (१) उप्रांत वस्तू भोगवे नही. (२) अव्बी रहन दों, फिर में भोगवूंगा ऐसा कहे नही. (३) बीचारे नही कि कब वृत पूरा होवे और उसे खावू पेरु भोगवू! क्यों कि एक करण और तीन जोगसे पच्चखाण है सो अपणे भोगवणे आश्री तीन योगका वेपार रुका हैं. (४) अन्य वस्तूके वखाण करे नही की ये वस्तु बडी मनहर हैं (५) और मर्याद करके जो वस्तू रखी है उसमें अतिरक्त होवे नही. एसा बीचारे कि धन्य है सर्ववृती पुरुषाकों कि जो सर्व अव्रतकों रोक निराश्रवी हो बीचरते हैं. धिक्कार हे मेरेको कि में इत्ना भी नही छोड सकता हु. एसी लुख वृत्ति रखे. ऐसे उपभोग परीभोग (१७ नियम १० पच्चखाण) के अतीचार टालके शुद्ध वृतका आराधन करे.

ये दशमा व्रत ‡ हरवक्त हमेसा पूर्वे करी हुइ मर्यादामें से संकोच २ के करनेका हैं. सुज्ञ श्रावक अवसर पाके तथा तिथीआदिकका उत्तम संयोग पाके इस्की आराधना यथासक्त जरुर ही करेगें. क्यों कि इसमें विशेष देहको कष्ट देणेका काम नही हैं. फक्त इछा निरोधका ही मामला हैं. प्रमाद आलस कमी करने से ये नित्य ही निपज सक्ता हैं. इस वृत के आराधने से जैसे मंत्रवादी मंत्र के प्रभाव से साप वींछूका जेहर हटा के फक्त डंक के ठिकाणे लियांता हैं, थोडी २ क्षण २ रहती हैं, तैसे गुरु रुप मंत्रवादी श्रावक की सर्व जक्त की क्रिया रोक के थोडीसी रह जाती हैं. संतोषका सागर, सर्वका मित्र बणानेवाला, मोक्षका मार्ग इस वृतको धार स्वर्ग सुख भूक्त अनुक्रमे मोक्ष प्राप्त करेगे.

---

‡ ५ खंध भी इसी वृतमें हैंः—१ सर्वथा ब्रह्मचर्य. २ सर्वथा हरीका त्याग. ३ सर्वथा कच्चा पाणीका त्याग. ४ सर्वथा चोविहार—रात्री चार आहार त्याग. ५ सर्वथा सचित के त्याग. जीवनपर्यंत पांच ही आराध सके तो बहुत उत्तम हैं. नही तो ५ मेंका १ तो नित्य सर्व श्रावकको धारणा जरुर ही करना चाहीये.

११ मा 'पोषध व्रत' इग्यारमे व्रतमें पोषा करे अर्थात् छेही काय के जीवको पोषे तथा ज्ञानादिकसे अपणी आतमाको–धर्मको पोषे सो पोषा. इस पोषाको ग्रहण करने की विधी ऐसी हैं.–

अठारे (१८) दोष से निवर्तन होवे तब शुद्ध पोषा होता हैं. इनमें से छे दोष तो पोषा किये पहले टालना सो.

१ कोइ ऐसा वीचार करे कि कल तो मेरे पोषा है सो स्नान हिजामत कुछ कराना नही है, इसलिये आज करलूं. यों बीचार स्नानादी करे तो दोष. २ पोसह के पहले दिन मैथून सेवे तो दोष. ३ कल उपवास है, इसलिये आज खूब खा पी लेवू. यों वीचार सरस आहार नसा वगैरे भोगवे तो दोष. ४ पोषा के निमित वस्त्र धूवावे तो दोष. ५ पोषा के पहले दिन गेणा पहेरे तो दोष. पोषेमें तो धातू मात्र रखणे की मनाइ है. ६ पोसा के लिये वस्त्र रंगावे तो दोष. ये छे काम पोषा के पहले दिन नहीं करना. और ग्रंथोंमें भी कहा है कि पोषे के पहले दिन 'एगं भत्तं च भोयणं,' एक वक्त ही भोजन करना. ब्रह्मचर्य और शुभ ध्यान युक्त पहली

रात्री गुजार दूसरे दिन सूयगडांगजी के दूसरे श्रुत-स्कंध सातमे अध्ययनमें कहे प्रमाणे 'अमुच्चए अपेच्चाए' अर्थात् "निद्रा से निवर्तन हो के तुर्त दूसरा काम बिन किये पोषा धारे" निद्रासे निवृत राइसी (रात्रीका) प्रतिक्रमण करे. फिर पोषेमें जो वस्त्र ७२ हाथ के अंदर रखे है उसे प्रतिलेखे अर्थात् आंखोंसे देखे और जो जीव हाथ से लेणे जैसो न होए उसे पूंजणी (गोछे) से पूंज के अलग करे. उनमें जीव प्रवेश न कर सके ऐसा रखे. फिर 'आवस्यइ' 'तसुत्तरी' की पाटी कही कायोत्सर्ग करे. कायोत्सर्गमें आवस्यइ की पाटी कहे. पारके 'लोगस्स' कहे. फिर कहे कि पडीलेहणमें छे कायकी विराधना करी होय तो तस्स मिच्छामी दुकडं. फिर दूसरी वक्त आवस्यइ तसुत्तरी की पाटी कही आवस्यहीका काउसग करी लोगस्स कही पोसह पच्चखे. सो पाठ.

इग्यारमो, 'पडीपूणी'-प्रती पूर्ण, 'पोसह वृत' गुणको पोषणेका व्रत, (जिस्में) 'असणं'-अन्न अनाज) के, 'पाणं'-पाणीके, 'खाइमं'-सूखडी (मेवा मिठाइ), 'साइमं'-स्वादिम (तंबोल) 'चउविहं' ये चार ही, 'ऽपी' इन उपांत और भी खान

पान या सूंघणे की आदी सर्व, 'आहारं'—आहारके, 'पच्चखामि'—पच्चखाण (सोगन), 'अबंभ'—(मैथून) सेवनेके पच्चखाण, 'माला'—फुल सुवर्णादिक कि माला, 'वनंग'—दूसरे आभरण (गहणे), 'मिलेवण' —तेल चंदनादीका सरीरके विलेपन (लगाने) का 'पच्चखाण'—सोगन, 'मणी'—हीरे पन्ने आदि जवे-रात, 'सोवन'—सोने रुपेके नाणेका, 'पच्चखाण' —सोगन. 'सत्थ मुसलादिक'—मूसल तरवारादि सर्व शस्त्रके और "सावज्जजोग"—जिस मन वचन का-यासे किसी भी जीवको किंचित दुःख होवे ऐसे प्र-वर्तानेके 'पच्चखाण'—सोगन. [इस व्रतमें इत्ने सो-गन होते हैं] "जाव अहोरतं"—एकदिन और एक रात (अष्ट प्रहर) के, 'पजुवासामी'—प्रभू की पर्यु-पासना सेवा; (ये व्रत) 'दुविहं'—दो करण, 'तिवि-हेणं'—तीन जोगसे. (दो करण) में 'न करे मि'— करु नही, "नकारवेमी"—दूसरेके पास करावू नही. (तीन योग) 'मणेणं'—मनसे, 'वायाए'—बचनसे, 'कायणं'—कायासे. "तसभंते पडीकमामि निंदामी, ग्रहामि, अप्पाणं वोसीरामी."

इस्तराह ये व्रत धारण किये पीछे गुरु सामने

तथा पूर्व उत्तर सन्मुख मुख करके डाबो गोडो ऊंचो कर जीमणा गोडा धरतीको लगा, दो नमोथ्थुणं कहैं. फिर कोइ छुट्टा गृहस्थके पास से आज्ञा ग्रहण करे कि औघा पूंजणी, भाजन या मात्रादिक परठे-वणेको जो वापरनेमें आवे उनकी आज्ञा ग्रहण करे. फिर लघूनीति आदिक कारण उत्पन्न होवे तब पहले पीतल मिट्टी आदिक भाजन की योजना कर रखी होय उसमें निवेडे, मकानके बाहिर निकलती वक्त 'आवस्य ही' २ शब्द कहै फिर जिहां अचित (निर्जीव) भूमी होवे वहां, द्रष्टीसे देखके फिर "अणुजणहाजसोगं" कह परिठवे (यत्नासे थोडा २ डाले) फिर 'वोसीरे' २ कहके स्थानकमें प्रवेश करती वक्त 'निसही' २ कहके प्रवेश करे. यत्नासे भाजन रख पूर्वोक्त रीतीसे 'अवश्य ही' का कायोत्सर्ग करे. मात्रादिक परिठवता छेही काय की विराधना करी होए उसका 'मिच्छामी दुक्कडं' देवे. और कदापि वडी नीति (दिशा) का कारण पड जाय तो जैसा पोपाका भेप है वैसे ही तरह रहे कदापि सरम आती होय तो वस्त्रसे सिर मुख ढांक किसी श्रावकके ह्यांसे अचेत पाणी लोटे प्रमुख लेके अचेत भूमीकामें नी-

वेडे और सर्व क्रिया लघूनीत पठेवते करी वैसी करे. ये पोषामें कारणसे निवर्तन की विधी कही.

अब पोसा को ग्रहण किये पीछे १२ दोष से बचना सो. पोसा लिये पीछे १ अव्रतीको सत्कार देवे, बेठनेको बीछोणा देवे, हाथ पाव दाबे तो दोष. २ सरीरकी विभूषा करे केश दाढी मूछ संवारे, धोती-की पटली जमावे वगैरे. ३ अपने तथा दूसरे के सरीरका मेल उतारे. ४ निद्रा जास्ती लेवे तो दोष. अर्थात् पोषामें दिनको तो सोणा ही नही हैं, रातको पहर रात गये पीछे प्रमाद नीवारे और पीछली पहर रात्री रहे तब जाग्रत होके धर्मध्यान ध्यावे. ५ गोच्छा से सरीर पूंजे विन खाज खिणे (कुचरे) तो दोष. ६ देशदेशांतर की राज रजवाडे की लडाइ झगडेकी स्त्रीयोंके शृंगार की विलास की भोजन निपजाणेकी स्वाद की इत्यादी पाप कथा करे तो दोष. ७ चाडी-चुगली-निंदा करे तो दोष. ८ संसारी वेपार वणज लेणदेण की तथा खाली गप्पे सप्पे मारे तो दोष. ९ अपना सरीर तथा स्त्रीयादिकका सरीर अनुराग (प्रेम) द्रष्टी करके देखे तो दोष. १० नाते मिलावे. तुमारा ये गोत्र है और मेरा या मेरा अमुकका ये

गोत्र है इसलिये तुम मेरे या मेरे अमुकका सगा लगता हो ११ जिसके पास सचित वस्तू होय या उघाडे मुख से बोलता होय उस से बोले तो दोष. १२ हांसी मस्करी तथा रुदन सोक संताप करे तो दोष.

ये छे पेली के और १२ ये, यों १८ दोष टाल के पोषा होवे सो शुद्ध हैं. इस पोषध व्रतको निर्मल रखणे पांच अतीचारको निवारना सोः—

१ "अप्पडि लेहीय दुप्पडी लेहीय सेज्जा संथारए." पोषह के लिये अव्वलसे ही निर्वद्य मकान की योजना चाहीये. अर्थात् घर दुकान से अलग उपासरा स्थानादिक होय तो बहुत अच्छी बात नहीं तो जिहां अनाज हरी पाणी किडीनगरा फूल फल इत्यादि सचित वस्तू न होय या किसी प्रकार के उपद्रव उपजणे जैसी जगा न होए ऐसी जगाको अच्छी तरह सुक्ष्म द्रष्टी से देख के वापरे, तथा जब उठने बेठनेका जिस २ जगे काम पडे वांहां देखे विन बेठे उठे तो अतीचार लगे. तथा कुछ देख कुछ न देखे; चंचल द्रष्टी से देखे, विप्रीतपणे देखे तो भी अतीचार लगे.

२ "अप्पमज्जीय दुप्पमज्जीय सेज्जा संथारए."

पूर्वोक्त रीतीके मकानमें द्रष्टी से देखते जो जीवादिक की संका पड जाय तो रजूहरण गुच्छादिक से पूजे (झाडे). कचरा प्रमुख रहणे से उसके आश्रित त्रस जीव आके मरणेका संभव है. इसलिये पोषध करने की जगा साफ रखे. जो यत्ना से नही पूंजे तथा थोडा पूंजा थोडा नही पूंजा, बरोबर नही पूजे चंचल चित्त से पूंजे तो अतीचार लगे.

३ " अप्पडी लेहीय दुप्पडी लेहीय उच्चार पासवण भूमी " लघूनीति–वडीनीति तथा पित्तादिकका उठाव हो जाय तो पहली उसके लिये आप पहले दिन होय वहांतक जगाको देख लेवे कि जिहां अनाज हरी कुंथवे किडीयादिक न होवे फिर जब काम पडे तब वाहां द्रष्टी से पडीलेह (देख) के यत्ना से काम निवेडे. जो जगा देख नही रखे या चंचल चित्तसे बरोबर न देखे तो अतीचार लगे.

४ " अप्पमजीय दुप्पमजीय उच्चार पासवण भूमी " जो प्रथम वडी नीति लघू नीति भित्त की भूमीका की प्रतिलेहण कर रखी हैं उसमें कारणसे निवर्तन होते जो कोइ जीव की संका पड जाय तो रजोहरणादिकसे पूंजे. जो बरोबर न पूंजे तथा स्थिर

चितसे न पूंजे तो दोष लगे.

५ "पोसहस्स समं अणणु पालणयाए" पोसा और उपास सम्यक् प्रकारे न आराधा होय अर्थात् जैसी विधी पोषह करने की बताइ है उस विधी प्रमाणे पोषा न किया होय तथा करके यथा विधी न रखा होय, पोसेमें विचारे कि मेरे आज अमुक काम था, मेंने निरर्थक पोसा किया तथा कब पोषा पूरा होवे और अमुक कार्य सिघ्र करुं, अमुक वस्तू लावू, निपजावू, खावू तथा पारणेके लिये ये ये वस्तू निपजाणी है. इत्यादी विचारके बहुत हलन चलन करे, असंमंद बचन बोले, अयत्नासे कार्य करे तो अतीचार लगे.

ये पांच अतीचार और अठारे दोष रहित होवे सो शुद्ध पोसा कहा जाता हैं.

एसी रीत से विशेष न बणे तो महीनाके छे (२ अठमका उपवास और चउदश अमावस्या तथा चउदश पुनमका बेला यों ६) पोसे तो जरुरही करना चाहीये. छे नही बणे तो चार आठम पखीके; चार ही नही बणे तो पख्खीके दो दिवस तो जरुर ही करने चाहीये. अन्य लोक भी कहते है कि "म-

हीनेके अठाइ दिन गधे की तरह चर, परंतू मेरे भाइ दो एकादशी तो कर." इसलिये एक महीनेमें दो दिन जरुर ही निकालना चाहीये. इस वक्त धर्मात्मा हो जग रुढीसे (देखा देखी) आठम चउदशके उपवास तो करते हैं; परंतू पोषा नही करते हैं. ये बडी ताजूबी की बात है. जग धंधा इत्ना प्यारा लगता है कि खानेके दिन तो नही छूटे सो नही छूटे, परंतू भूखे मरे उस दिन भी नही छोडे! और कित्नेक पोषाका नाम रखणे सब दिन घर धंधा कर दिन अस्त होते २ दोडते २ आते हैं, झट बिस्तर डाल, कपडे खोल, दट्टा बंध, हाथ जोड, धोती की लांग खोलते खोलते कहते हैं, कराइये महाराज! इग्यारमा पोसा, मेने पाणी नही पीया हैं. पोषा पचख ताण खूटी जो सोते है तो दिन उगा देते है! उठे नमोहत्याणं नमो सध्याणं कहके मथेणं वंदामी करते घर भग जाते हैं! हा हा देखीये, संसार की लालसा कैसी जबर है? ऐसे को पोसेका क्या फल होता होयगा? हां करणीका फल तो निष्फल नही जाणेका; परंतू इनको निर्जरा होणी मुशकील हैं. ऐसी खोटी चाल निकालके ढाला बिगाड

देते हैं. सुज्ञ श्रावक तो आत्मकल्याणके लिये निदोंष पोसा कर महा लाभ उपराजता हैं. द्रव्य पोसा करनेसे अर्थात् चक्रव्रत वासूदेव जो खेड साधने तेलाका पोषा कर देवताकी आराधना करते हैं सो उनके देव आधीन हो जाते, तो जो वांच्छा रहित तप करे उसके कर्म कंटक कटे इसमें संदेहही क्या ? देखीये एक पोपाका कित्ना फल होता है सो. २७०० क्रोड ७७ क्रोड ७७ लाख ७७ हजार ७ से ७७ पल्योपम झाजेरा १ पोसा करनेसे इत्ना देवताका आयुष्य बांधता है. ये तो व्यवहारिक पोसेका फल हैं. और जो अंतःकरण की शुद्धीसे आणंद्जी कामदेवजी प्रमुख श्रावकोंने पोपा कियाथा सो एकावतारी (एक भव कर मोक्ष गामी) हुये. ऐसा जाण जो इस व्रतको यथातथ्य आराधेगा वो ह्यां अनेक सुख भोगके स्वर्ग सुखका अनूभव ले मोक्ष प्राप्त करेगा.

१२ "अतिथि संविभाग व्रत" अतिथि उनको कहते हैं कि जिन के आनेकी तीथी नहीं के अमुक दिन अमुक वक्त आयेंगे, नित्य भी नहीं आवे, ऐसे तीसरे के तीसरे दिन भी नहीं आवे, जो अणचिंते

अचानक आ जावे सो ही अतिथि-साधू. ऐसे साधू के लिये, भोजन करने बेठती वक्त नित्य अवश्य एसा बीचारे कि ये दोष रहित शुद्ध आहार मेरे सन्मुख आया हैं, इस वक्त जो कोइ मुनीराज पधार जाय तो इसमें से कुछ उनको वेहरा (दे) के कृतार्थ होवूं. ऐसा बीचार के अपने चार ही तर्फ देखे कि कोइ सचित वस्तुका संग्घट्टा तो नहीं है. जो होय तो आप उस से दूर रहे. और दरवज्जे सन्मुख देखे कि महाराज पधारे क्या? इत्नेमें कोइ साधू मुनीराज द्रष्टी आ जाय तो आप उस भोजन की यत्ना करे कि उसमें कोइ जीव न पड सके; ऐसी यत्ना कर तुर्त मुनी के सन्मुख आय और अर्ज करे कि हे पूज्य! पावन करो. इत्यादी आग्रह पूर्वक विनंति करे. जो महाराज अपने घरमें पधारे तो बहुत हर्ष पूर्वक घरमें भोजन शालामें आके उन समण-जिनने समाये (खपाये) है क्रोधादी रिपूको-तपवंत, निग्गंथे-निग्रंथ, द्रव्ये परिग्रह रहित, भावे कर्म गांठ से न बंधाय ऐसेको, फासुक-फ्रासुक-अचित, एवेणिजेणं-एषणिक-निर्दोष-सूजती, १ असणं-अन्न की जात रांधी सेकी, तली, भूजी, इत्यादी सर्व, २

पाणं—अचित पाणी धोवण उष्ण छाछ साटेका रस इत्यादी सर्व, ३ खाइमं—खादिम सूखडी पक्कान मेवा मिठाइ प्रमुख, ४ साइमं—स्वादिम लवंग सूपारी चूरण खटाइ प्रमुख, ५ वत्थं—वस्त्र सूतके सणके रेसमके इत्यादी, ६ पडिगहं—पडगा—पात्रा लकडके तूंबेके मिट्टीके इत्यादी, ७ कंबल—उनके वस्त्र कंबल बन्नात प्रमुख, ८ पायपूछणं—बीछाणेका जाडा वस्त्र, ये ८ वस्तू मुनीको आवगी दी जाती हैं अर्थात देके पीछी ग्रहण नही करी जाय. ९ पीढ—छोटे पाट बाजोट प्रमुख, १० फलग—बडे पाट शयनके लिये, ११ सेजा—मकान सझाय करने वखाण बाचने या रहणेके लिये, १२ संथारह—बीछाणेके लिये गहुका शालका कोद्रवका इत्यादी पराल, १३ औसहं—औषध सूठ काल्ह लूण या लिम्बू मेका तथा सेखणेको गरम किया सो लूण, काली मिरच वगैरे फुटकर वस्तु. १४ भेषज—चूरण गोली सत पाकादिक तेल. इत्यादी १४ प्रकार वस्तूमें से जो हाजर होवे सो सर्व आमंतरे, गडबड न करे, जो निर्दोष—सूजता लेणे वाले होवे उनको झूट बोलके असूजता—सदोष न देवे. जो शुद्ध लेणेवालेको अशुद्ध देवे तो अधूरा

आयुष्य बांधे, अर्थात् दूसरे जन्ममें बालपणे या जुवानपणेमें मृत्यू पावे. इसलिये जैसा होय वैसा कहदे. इत्ना उप्रांत कोइ जो कहे कि हे आयुष्यवंत गृहस्थ ! ये हमारेको नही कल्पे, तब गृहस्थ अपणे अंतराय कर्म की प्रबलता जाणे, पश्चाताप करे और उसदिन किसी प्रकारके त्याग कर देवे. और जैसा है वैसा कहे उप्रांत ही कोइ रस लंपट साधू ग्रहण करलेवे तो गृहस्थको कुछ दोष नही. क्यों कि गृहस्थके अभंग द्वार हैं. जित्नी वस्तू मुनीको खपे सो उलट प्रणाम से वेहरावें. जित्ना पात्रमें पडे उत्ना ही संसार की लायमें से बचा समजे. दान लेके साधूजी जावे तब आप सात आठ पग पहोंचानेकु जावे. फिर वंदणा कर कहे कि हे पूज्य ! आज अच्छा लाभ दीया. ऐसे ही कृपा वारंवार कीजीये. जो मुनीराज ग्राममें न होय तो ऐसी चिंतवणा करे की धन्य है वो ग्राम नगर की जिहां मुनीराज बिराजते हैं और धन्य है वो श्रावक श्राविकाकों जो चौदे प्रकारका दान देके लाभ लेते हैं, मैं निर्भागी दान दिये बिन आहार करता हूं. इत्ना बीचार दरवज्जे कि तर्फ देखे, क्यों कि साधूका कुछ भरोसा नही; अचिंत्य ही अ-

प्रतिबंध विहार करते पधार जाय तो किसे मालम ? ये सब बारमे व्रतवाले श्रावक की रीती कही.

इस व्रतका लाभ लेणेके लिये पांच अतीचार-का स्वरुप जाण वर्जे.

१ 'सचित निखेवणिया' दान देणेकि वस्तू सचितपे रखे, अर्थात् कित्नेक भारी कर्मी जीव की ऐसी इच्छा होय कि ये वस्तू मेरे या मेरे कुटुंबके निमित निपजाइ हैं, जो साधूजी आ गये तो उनसे ना तो नही कही जायगी, इसलिये ऐसी रखू की वो ले न जाय, इत्यादी प्रणामसे अचित साधूके लेणे जेसी वस्तुको सचितपे रखे.

२ 'सचित पेहणिया'—पूर्वोक्त बुद्धीसे सचित वस्तुसे अचित धरे. (ये दोनु आतिचार टालनेके लिये दानेश्वरी श्रावकको जरुर ध्यान रखके जो जो वस्तू साधूके देणे योग्य हैं उसे सचित पदार्थ के पास रखे नही. ये धरती लेती वक्त उपयोग रखे.—

३ 'कालाइ कम्मे'—काल अतिक्रमे पीछे भावना भावे, अर्थात् कित्नेक अभीमानी श्रावक दान देणे की वंक्त कमाड लगा रखे, तथा असूजता रहैं

और वक्त टले पीछे स्थानकमें आके सर्व लोकोंके समक्ष कहें की यों क्यों म्हाराज गरीव श्रावकपे कृपा कमी दिखती हैं? इत्ने दिन पधारेको हुये कभी घर ही पावन नही किया, कभी तो कृपा करो. तथा कित्नेक तो कहे की महाराज तो वडे २ के घर पधारते है. गरीवके ह्यां भाजी रोटी लेणे क्यों आवे ? इत्यादि अनेक वातों सुण लोक जाणे कि वडा भाविक श्रावक हैं. यों ठगाइ करे तो अतीचार लगे.

४ 'परोवयसे' (१) वस्तू तो घरमें हैं परंतु नही देणेके भावसे कहे कि महाराज ये वस्तू तो मेरी नही है, मैं कैसे देवू? (२) आप तो सुजता है परंतु अभीमानसे दूसरेको कहे अरे महाराज आये है इनको कुछ दे दो *

५ 'मछरीयाए'–(१) ऐसा वीचारे कि साधू तो पीछे पडे हैं जो न देवूगा तो लोकमें अपयश होयगा ऐसा जाण देवे. (२) सरस २ वस्तू छोड

* जिनके हाथसे दान दियां जाता है उनको ही दानका फल होता है. दान देणे कि वस्तू जिस्की होती है उसे दलाली मिलती हैं.

निरस देवे. (३) अभीमान करे कि मेरे जैसा दूसरा कोइ दातार नहीं है तब ही फिर २ महाराज मेरे ह्यां आते हैं. (४) साधूके मलीन वस्त्र और गात्र देख दूगंच्छा करे. (५) ये तो मेरी संप्रदाय–गच्छ के साधू नही है इनको क्या देवू? इत्यादी बीचार करे तो पांचमा अतीचार लगे.

ये पांच अतीचार तथा और भी इन जैसे अतिचारका स्वरुप जाण अनंत लाभार्थी पुरुष सर्व दोषको वर्जके लाभके अवसर लाभ ले.

इस विश्वमें कित्नेक ऐसे भारी कर्मी जीव हैं कि सूपात्र दानका जोग मिलते ही लोभ द्वेष पक्षपात के वस होके लाभ गमा देते हैं और दूसरेकों देणे की अंतराय देते हैं की इनको दान न देणा चाहीये.

ऐसे हि कित्नेक साधू पक्षपात से या द्वेष बुद्धी से अपणी संप्रदाय और गच्छ छोड के दूसरे साधूको दान देणे की ना कहते है, सोगन कराते हैं, ये भी जबर अंतराय कर्म बांधते हैं. और भोले लोक भी इस उपदेशको धारण करके दानांतराय उपार्जन कर लेते हैं.

बावा फकीर ब्राह्मणादिक गृहस्थ से भी अन्य-पक्ष के साधूको खराब जाणते हैं ये बडी मोह दशा हैं.

कित्नेक राग भाव से दान देवे हैं की ये मेरे संसार पक्ष के सगे है इसलिये इनको जरुर ही देणा चाहीये. ऐसे ही कित्नेक द्वेष करके यों जा-णते है की ये बीचारे अपणा साधू इनको अपन न देवे तो दूसरा कोण देवेगा? इन दोनु बुद्धी से दान देणा सो भी दोषका कारण. सर्व व्रतमें ये बारमा व्रत अति श्रेष्ट हैं. क्यों कि इग्यारे व्रत तो तिर्यंच भी * पाल शक्के हैं. और बारमा व्रत तो फक्त आर्य क्षेत्रवासी मनुष्य महा पुन्य जोग जोग मिले निपजा

* असंख्यातमा अरुण १२ द्विपमें संख्यात योज-नका लंबा चोडा मानसरोवर (तलाव) है. जिसमें ह्या व्रत भंग करनेवाले श्रावक मरके मच्छ होते है. वांहा जोतषी देवता क्रीडा करने आते हैं. उनको देख जाती स्मरण ज्ञान प्राप्त होता हैं. जिससे वो वांहा पीछे ११ वृत धारण करते है. संवर समायिक पोषा प्रतिक्रमण करते है. वांहा से मरके जोतषी देवता होते है. फिर मनुष्य देवादिक के जन्म कर थोडे भवमें मोक्ष प्राप्त करते हैं.

सकते हैं. इस व्रतको आराधनेवाले द्यां यश संपदा-
का अखंड सुख भोगते है. तिर्थंकर पद उपराजते हैं,
जुगलीपणा प्राप्त करते हैं और देव सुख भोग अनु-
क्रमे मोक्ष पाते हैं.

ये पांच अणुव्रत तीन गुणव्रत चारं शिक्षाव्रत
सर्व १२ व्रत पूर्ण हुये. इसमें से कोइ की विशेष शक्ती
न होए तो एकही व्रत धारण करे और विशेष
शक्तीवंत होय तो यथा शक्त १२ व्रत धारण करे.

" इग्यारे श्रावककी प्रतिमा. "

ऐसे बारे वृत पालते जो कभी जास्ती वैराग्य
प्राप्त हो जाय तो ११ पडिमा (प्रतिमा) अंगीकार
करे. तब पहली अपणे घरमें बडा पुत्र बडा भाइ जो
कोइ योग्य होय उसे घरका भार सब सूप्रत करके
धर्मोपकरण, बेठक, पूजणी, पुस्तक, धर्मशास्त्र,
मातरीया, बीछोणे वगैरे लेके पौषधशालामें तथा
स्थानकमें आकर धर्मक्रिया करे.

१ " दंशण प्रतिमा "—एक महीने तक सम्य-
क्तव निर्मल पाले, संका कंखादिक दोष किंचित न
लगावे. संसारीको मुजरा सलाम न करे. और एकां-

तर उपवास करे. २ "व्रतप्रतिमा"—दो महीने तक व्रत निर्मल पाले, अतिचार लगावे नही, सदा शुभ उप्योग रखे और बेले २ पारणे करे. ३ "सामायिक प्रतिमा" तीन महीने तक नित्य त्रिकाल सामायिक ३२ दोष रहित जरुर करे और तेले २ पारणा करे. ४ "पौषध प्रतिमा" चार महीने तक महीने के छे पोसे १८ दोष रहित जरुर करे. और चोले २ पारणा करे. ५ 'नियम पडिमा' पांच महीने तक १ स्नान करे नही. २ हीजामत करावे नही. ३ पगरखी पहेरे नही. ४ धोतीकी १ लांग खुली रखे. ५ दिनका ब्रह्मचर्य पाले. ओर पचोले २ पारणा करे. ६ "ब्रह्मचर्य पडिमा" छे महीने तक नव वाड विशुद्ध ब्रह्मचर्य-पाले. ओर छे उपवास के पारणे करे. ७ "सचित परिहार प्रतिमा" सात महीने तक सर्व सचित (सजीव) वस्तूका त्यागन करे और सात २ उपासके पारणे करे. ८ 'अणारंभ पडिमा' आठ महीने तक आपके हाथसे छे ही काय जीवोंका वध करे नही. और आठ २ उपवासके पारणे करे. ९ 'पेसारंभा प्रतिमा'—नव महीने तक दूसरेके पास आरंभ करावे नही. और नव २ उपवासके पारणे करे. १० 'उदिष्ट कृत प्रतिमा'—पडिमा

धारी श्रावकके लिये छे कायका आरंभ करके कोइ वस्तू निपजाइ होय तो दश महीनेज आप भोगवे नहीं; दश २ उपास पारणा करे. ११ "समण भूय पडिमा" इग्यारे महीने तक साधू जैसे लिंग (भेष) धारण करे, फक्त इत्ना फरक दाढी मूछ और * सिरका लोच करे. फक्त शिखा (चोटी) रखे. रजोहरण (ओघे) की दंडीपे कपडा नही चडावे. धातु (पीतल तांबे) के पात्र रखे. स्वजातीमें भिक्षा करे. ४२ दोष टाल शुद्ध आहार ग्रहण करे. कोइ कहे पधारो म्हाराज तब कहे में साधू नही हुं, श्रावक की इग्यारमी प्रतीमा वह रहा हुं. फिर उपासरेमें आके वो लाया हुवा आहार मूर्छा रहित भोगवे. और इग्यारे २ उपवास पारणा करे. इन ११ प्रतिमामें जो अलग २ क्रिया कही है सो पिछे की पडिमा की क्रिया युक्त आगे की प्रतिमामें प्रवृत किसी प्रकार खामी न डाले. इन ११ प्रतिमा वहणेमें साढी पांच वर्ष लगते हैं.

ये इग्यारे प्रतिमा पूर्ण हुयें पीछे कित्नेक तो पीछे घरको चले जावे. कोइको वैराग्य आवे तो दिक्षा लेवे. और समर्थाइ घटी देख आयुष्य नजीक आया

* शक्ति नही होय तो खुर मुंड करावे.

देख कोइ संथारा करके आत्म कार्यसिद्धी करे. एसे जघन्य सम्यक्त्व, मझम बारा वृत, उत्कृष्ट इग्यारे पडिमा धारी यों तीन तरहके श्रावक होते हैं.

आगारी सामाइयंगाइ, सड्ढी काएण फासए।
पोसहं दुहउ पक्खं, एग राय न हावए॥
एवं सिक्खा समावन्ने, गिहीवासे विसूवए।
मुच्चइ छवि पवाउ, गच्छे जरव्वस लोगयं॥ २४॥

श्री उत्तराध्ययन सुत्रके छटे अध्यायमें फुरमाया है की जिस्की दिक्षा ग्रहण करने कि सक्ती न होय वो गृहस्थ वासमें रहके शुद्ध सम्यक्त्व युक्त सामायिकादिक व्रत शुद्ध श्रद्धा करके श्रधे और काया करके फरसे अर्थात करे. तथा दोनु पक्ष की पोषना करे अर्थात संसारमें हैं इसलिये संसार पक्ष की भी पोषना करनी पडती है सो सुख वृत्तिसे जल कमल वत् अलिप्त रहके करे और सर्वमें सार एक धर्म पदार्थको जाणा है सो वक्तोवक्त हुलांस प्रणामसे धर्म पक्षको भी पोषे, परंतु धर्म क्रियामें एक रात्री की भी हाणी नही करे. अर्थात् संसारके कोइ कार्यमें हरकत हो जाय उस की फिकर नही पण धर्म कार्यमें तो किंचित् ही हरकत नही करे. एसी रीत जो

चार शिक्षा व्रत युक्त तथा बारे विशुद्ध व्रत युक्त गृहस्थाश्रममें रह के धर्म पालेगा वो ये मळ मूत्र से भरा हुवा उदारीक सरीरका त्यागनकरे (छोड) अत्युत्तम देव गतीको प्राप्त करेगा. और थोडा ही भव कर मोक्ष के अनंत सुख पावेगा.

इति परमपूज्य श्री कहानजी ऋषिजी के संप्रदाय के बाल-
ब्रह्मचारी मुनि श्री अमोलख ऋषिजी विरचित्
श्री "जैन तत्वप्रकाश" ग्रंथका द्वितीय
खंडका "सागारी धर्म" नामक
पंचम प्रकरण समाप्तम्. ॥

प्रकरण ६.

आंतिक शुद्धि.

मृत्यू मार्गे प्रवर्त्तस्य, वीतरागौ ददातु मे ।
समाधि बोध पाथेयं, यावन्मुक्तिपुरी पुरः ॥ १ ॥

मृत्यु महोत्सव.

हो श्री वितराग भगवान! में मृत्यू मार्गमें प्रवेशता हुं, इसलिये आपसे प्रार्थना करता हुं की मेरेको चित्त की समांधी और ज्ञानादि त्रीरत्नके लाभ रुप बोध (साहाय्य) देके मुक्ति पुरीमें पहोंचाइये.

जैसे कोइ प्रदेशमें रहता हुवा पिता अपने पुत्रको घर पहोंचाती वक्तमें साथ भाता (रस्तेमें खानेके लिये सूकडी) देके उसे रस्तेसे वाकेफ करता है, कि इस रस्तेसे सुखे २ घरको पहोंच जावोगे; वो उस भाताके साह्यसे अपने पिताके बताये हुये रस्तेसे निज ग्राम प्राप्त करता हैं. तैसे ही हे कृपाल!

वितराग पिता ! मुजे समाधी बोध रुप भाता दिजीये और मार्ग बताइये की जिस भाते की साहाय्यसे आपके हुकम मुजब मोक्षमें पहोंच जाउ.

इस जक्तमें मरण दो प्रकारसे होते है, ऐसा श्री उत्तराध्ययनजीमें कहा है.

वालाणं अकामंतू मरणं असइ भवे ।
पंडियाणं सकामंतू, उक्कोसेणं सइ भवे ॥
अध्ययन ५

बाल अज्ञानी जीव अकाम मरणसे मरते हैं. उनको इस विश्वमें अनंत जन्म मरण करने पडते हैं. और पंडित पुरुष सकाम मरणसे मरते हैं वो एक ही वक्त मृत्यूसे जन्म मर्ण मिटाके अजरामर पद प्राप्त करते हैं.

अब ह्यां सकाम (पंडित) मरणका स्वरुप कहते हैं, कि जिस के जाणने से जिसका प्रतिपक्षी अकाम मरण सहज ही समज जावोगे.

सम्यक् ज्ञानी पुरुषको सहज ही समाधी—सकाम मरण मरने की अभिलाषा रहती हैं. वो निरंतर ऐसी भावना भाते है कि हे प्रभो ! वो दिन कब होवे की मैं सर्व प्रपंच से निवर्त समाधी मरण प्राप्त

करुं! मरण की इच्छा करणी इसको कित्नेक बन्धू खराब गिणतें है परंतू ये तो सत्य समजो कि जो जन्मा है सो तो एकदिन अवस्य ही मरेगा. जैसे कोइ सूरवीर क्षत्रीय राजाने सुणा की वडा जव्वर शत्रु चडाइ करके आया हैं. यों सुण वो वीरक्षत्रीय उस शत्रुका पराजय करनेकु सव प्रकार के सुखका त्यागन कर चतुरंगिणी शैन्यको ले प्रवल शत्रू के कटकको अपणे पराक्रम से धूजाता हुवा पराजय कर अपणा राज्य निर्विघ्न करे. तैसे ही समाधी मरण की इच्छा करनेवाला महात्मा कालरुप शत्रुको नजीक आया जाण उसकी शैन्यका पराजय करनेकु ज्ञानादि चतुरंगिणी शैन्यसे प्रवर्या अपने शांत दांत तेजसे कालका पराजय कर मोक्षस्थान रुप अपणा राज्य कायम करे. इस तराह काल शत्रुका पराजय होता हैं उसके ३ नाम हैः–(१) 'संथारा'–वीछोणेको संथारा कहते है. अर्थात् छेला (फिर नहीं करना पडे ऐसा) वीछोणे पे वीराजे. अंतका वीछोणा करे सो संथारा. (२) 'अणसण' तीन आहार या चार ही आहारका जाव जीव त्याग करे. सो अणसण. (३) 'सलेषणा' सलकी एषणा–गवेषणा

करे. अर्थात् साधूको या श्रावकको किसी प्रकार की धर्म क्रिया करते प्रमाद से योगों की चपलतासे छद्मस्थ स्वभावसे जो कोइ (१) माया कपट के वसमें हो उपरकी और भीतर की ऐसी कपट क्रिया करी होय (२) नियाणा-निदान करणीका अमुक फल प्राप्त होवो ऐसा निश्चय किया होय (३) या मिथ्यात्व मत की कोइ सल-शंका अंतःकरणमें रही होय उसका उद्धार-उच्छेदन करने आंतिक शुद्धी की वक्तमें उसको प्रकाश के शुद्ध होवे सो सलेषणा.

ये आंतिक शुद्धी-सलेषणा तीन प्रकार से होती हैं. (१) इतर-स्वल्प (थोडे) कालका संथारा सो, नवकारसी आदी तप करना उसे कहा जाता हैं. तथा साधूजी और श्रावकजी रात्रीको सयन करती (सोती) वक्तमें अवस्यइ आदि पूर्वोक्त विधि से चार लोगस्सका काउसग कर प्रगट लोगस कहै; हाथ जोड कहे कि. " भक्षंति, दझंति, मारंति, मरंती. किं वि उवसग्गेणं मम आउ अंत भवंति तओ सरीर, सम्बंध, मोह, ममत्व, चउविहं पि आहारं वोसिरे, सुहसमाहीएणं, निंदा वइकीति.

तस्स आगार, " जो मेरे इस सरीरको कोइ सर्पादिक भक्षण करे, अग्नी प्रयोग से जल जाय, कोई शस्त्रादिक से मार जाय, या आयुष्य पूर्ण हो जाय इत्यादी कोइ भी उपसर्ग से मेरे आयुष्यका अंत हो जाय तो मेरे सरीर से और कुटुंब संपती से मोह ममत्वको वोसीराता हूं-छोडता हूं. और सुखे समाधे निद्रासे मुक्त होवू-जागृत होवू तो मेरेको सर्व आगार है, मैं छुट्टा हूं. इत्ना कहके नमस्कार (नवकार) मंत्रका स्मरण कर सोवे इसे 'सागारी संथारा' कहते हैं. ये सागारी संथारा वाला सुखे समाधे जागृत हो जाय तो पूर्वोक्त रीतीसे चार लोगस्सका काउसग्ग करे. फिर कहे. " पडिकमामि-निद्राके पापसे निवर्तू हूं. 'पगामसिज्जाय'-हदसे ज्यादा बीछाना किया होय. " निगाम सिज्जाय " औछा बीछोणा किया होय. 'संथारा उवटणाये' पूंजे विगर पग हाथा दी संकोचे (भेले) किये होय. 'परियटणाये' लम्बे किये होय. 'अउट्टणाये पसारणाए' बार २ लंबे भेले किये (संकोचे पसरे) होए. 'छप्पइ संघट्टणाये' ज्यू षटमलादिक जीवको दबाये होए. 'कुइए ककराइए'-उघाडे मुखसे बोला होवू. 'छीए'-छीका होवू. 'जंभाइए'

उवासी ली होए. " आमोसे ससर खामोसे " किसी भी सचित वस्तु की विराधना करी होए. "आउल माउलाय"—आकुल व्याकुल हुवा—घबराया होवू. "सुवण वात्तियाए " स्वप्नमें ' इत्थी विपरियासियाए ' स्त्रीयादिकसे विषय सेया होए ' दिठी विपरिया सियाए ' द्रष्टी (बुद्धी) खोटी हुइ होए ' मण विपरिया सियाए ' मन खोटा प्रवर्ता होए. " पाण भोयण विपरिया सियाए " आहार पाणी भोगवे (खाये) होय "जोमे रायसि अइयार कउ"—जो रात्रीमें (निद्रामें) अतीचार—पाप दोप लगा होय, "तो तस्स मिच्छामी दुकडं" वो सब पाप दूर होवो ‡ इत्ना कहके फिर कहणा कि. " सागारि अणसणस्स पच्चखाण सागारी (आगार युक्त) संथारा किया था उसके पच्चखाण (सोगन) 'समकायणं'—जिनाज्ञा मुजब या उप्योग युक्त, ' फासीयं'—मेरी कायासे फरसे 'पालियं' पाले ' तिरियं'—किनारे पहोंचाये. 'कितियं'—अच्छे जाणे, 'सोहियं'—शुद्ध निभाये, 'अराहीयं' आराधे. (इत्नेपे भी जो) 'आणाए'—जिनाज्ञाका 'अणुपा-

---

‡ ये पाठ रात्री संबर वालेको और पोषे वालेको निद्रासे निवृत हुये सदा कहना चाहीये.

लिता'–यथा तथ्य पालन 'न भवइ'–न हुया होय तो 'तस्स मिच्छामी दुकडं' †

२ "भत्त पच्चखाण" दूसरे साधूको साधूवों की साहाय से और श्रावकको श्रावकों की साहाय से किया जाय सो. इसमें कोइ तीन आहार के और कोइ चार आहार के त्याग करते हैं. जिसकी रीती.

'सलेषणा.'

"अपश्चिमा,"–जो समाधी मरण करनेकु तय्यार हुये हैं उनके पीछे इस दुनियामें कोइ भी काम बाकी नहीं रहा. अर्थात् जो सर्व काम से निवर्त, सर्व वांछा रहित हुये, सो "मरणांति"–मरण के अंतमें अर्थात् किसी भी लक्षण से अपणे आयुष्यका अंत आया मालम पड जाय तब 'सलेहणा'–सलेषणा अपणे आत्मामें जो जो सल्य होय उसकी गवेषणा करे अर्थात् इस जन्ममें आये पीछे तथा सम्यक्त्व–व्रत धारण करे पीछे जो कोइ प्रकारका पाप लगा होए–व्रतका भंग हुया होए उसको प्रायछित तपमें कहे, गुणवंत साधू के आगे. साधूका जोग न होय तो

† ये पाठ–हरकोइ पच्चखाण–सामायिक पोसा या नोकारसी आदिक सबको पारती वक्त बोला जाता हैं.

वैसे श्रावक के आगे, श्रावकका जोग नही होय तो साध्वी (आर्याजी) के आगे, जो आर्याजीका जोग नही होए तो श्राविका के आगे और कोइका भी जोग न होय तो जंगलमें जिहां कोइ नही होए ऐसे एकांत स्थलमें तथा गुप्त स्थानमें पूर्व और उत्तर सन्मुख खडा हो, श्री मंदिर स्वामीको वंदना कर जोर से कहे कि हे प्रभो ! मेरे से जो जो अन्याय हुवे हैं, इसके लिये मेरी धारणा प्रमाणे अमुक २ प्रायछित ग्रहण करता हुं. ऐसे कह सल्य से रहित होवे. ऐसे 'आलोयणा'–आलोचना–बीचारना करके सर्व पाप से अपणी आत्माको निर्मल करे. फिर कर्म कलंक दूर होणेको 'झूसणा' करे अर्थात् जैसे काले कोयलेको अग्नीमें झोंस श्वेत राख करते हैं, तैसे ये आत्मा कर्मकलंक करके काली हो रही है उसे उज्वल–पवित्र करनेको सलेषणा–समाधी मरण करते हैं.

[ये समाधी मरण (संथारा) ग्रहण करने की विधी] प्रथम तो स्थान–"पोषधशाला" पोषध करनेका मकान अर्थात् जहां किसी प्रकार की खाने पीने की भोग विलास की वस्तू न होय तथा अन्य संसारीयों के

शब्द सुणते न होय तथा त्रस स्थावर जंतू की घात होणे जैसी न होए, ऐसे निर्दोष मकानमें तथा निर्दोष जंगल पहाड गुफादिक जो चित्त समाधीको योग्य जगा लगे उसे 'पूंजीने' रजू हरण गोछादिक से यत्ना से आस्ते २ पूंज किसी पाटीयादिकमें यत्ना से कचरा ग्रहण कर एकांत जहां बहुत मनुष्यका आगमन न होए ऐसे ठिकाणे छीदा २ (चोडा २) पठोवे (डाले) फिर उच्चार—वडी नीत (दिशा) के लिये, पास—लघूनीत (पेशाब), वण—वमण (उलटी) होय तो उसके लिये और भी खेंगार—नाकका मेल जो कुछ पठोवणे जैसी वस्तू होय उसके लिये उसको न्हाखणे के लिये 'भूमीका' जायगा 'पडिलेही' आंखोंसे देखे कि जहां हरी अंकूरे दाणे कीडी प्रमुख के नगरे न होय. क्यों कि संथारा किये पीछे जो मल मुत्र निवारनेका काम पड जाय तो वक्त पे तकलीफ न पडे. अयत्ना न होवे. इसलिये पहली देख रखे, फिर पोषधशालामें आके "गमनागमनी पडिकम्मीने" अर्थात् ये प्रतिलेखनादी क्रिया करते जाण अजाणमें कोइ भी त्रस थावर जीवकी विराधना (हिंसा) हुइ होय तो उस से निवर्तने, पूर्वोक्त

विधी से अवस्यइ की पाटीका कायोत्सर्ग करे. फिर "दाभादिक संथारा संथरीने" गहु चावल कोद्रव राल तृण प्रमुखका घांस होय उसमें दाणे तथा लट प्रमुख जीव न होय ऐसा परालका संथारा (बीछावणा) संथरी (बीछावे) साडे तीन हाथ लंबा और सवा हाथ चोडा उसपे स्वच्छ—निर्मल श्वेत वस्त्र ढांकके फिर "दर्भादिक संथारा द्रोहीने" उस दर्भादिकके संथारे (बीछावणे) पे यत्नासे बेठे, (सो किस तराह बैठे) 'पूर्व तथा उत्तर दिशा' सूर्य उदय होय सो पूर्व दिशा और उससे डाबी तर्फ उत्तर दिशा, ये दोनु दिशामेंसे एक दिशा की तरफ मुख करके "परियंकादिक आसन बेसीने" पालखी घालके जो बेठने की शक्ती न होय तो फिर मरजी प्रमाणें स्थिर आसन करे. फिर 'करियल'—करतल दोनु हाथ की हथेलीयों "संपगहीयं" भेली (एकठी) करके, दस्नहं—दोनु हाथके दश नख (अंगुली) भेलीकर "सिरसा वत्तं" मस्तकपे आवर्तन करे, जैसे अन्यमती उनके देवों की आरती उतारते—घुमाते हैं तैसे दोनु हाथ मस्तकपे जीमणी बाजूसे घुमता डाबी बाजू तर्फ जोडे हुये हाथ लावे

ऐसे तीन वक्त घुमाके (फिराके) फिर " मत्थेण अंजली कट्टू " मस्तक दोनु जोडे हुये हाथ स्थिर केस रखके ' एवं वयासी ' यों बोले. " नमोथ्थुणं" –नमस्कार युक्त स्तुती करता हुं (किनकी करता हुं तो) ' अरिहंताणं ' अरिहंत की, 'भगवंताणं' भगवंत की, आप केसे हो? 'आदीगराणं'–धर्मके आद कर्ता, 'तित्थयराणं'–तिर्थके कर्त्ता की 'सहसं बुद्धाणं'– स्वय मेव प्रतिबोध पाये 'पुरुसुत्तमाणं' उत्तम पुरुष 'पुरुष सिहाणं'–पुरुष सिंह 'पुरुषवरपुंडरियाणं'–पुरुषोमें प्रधान, पुंडरिक कमल जैसे 'पुरुष वर गंध हत्थीणं' पूरुषमें प्रधान गंधहत्थी जैसे, ' लोगुत्तमाणं '–लोकमें उत्तम, 'लोग नाहाणं '–सर्व लोकके नाथ, ' लोगहियाण–हित कर्ता, 'लोग पइवाणं'–जगत दीपक, 'लोक पजोयगएणं'–त्रिलोक सुर्य, ' अभयदयाणं '– अभय दाता, ' चखुदयाणं ' ज्ञान चक्षुदाता, ' मग दयाणं '–मोक्ष मार्ग दाता, ' सरण दयाणं'–सरण दाता, 'जीवदयाणं'–जीवीतव्य दाता, 'बोही दयाणं'– बोध दाता, ' धम्म दयाणं'–धर्मदाता, ' धम्म देसीआणं'–धर्मके उपदेशक, ' धम्म नायगाणं '– धर्म नायक, ' धम्म सारहीणं '–धर्म सार्थवाही,

'धम्म वर चाउरंत चक्क वटीणं'—धर्म चक्रव्रत, 'दिवो ताणं सरण गइ पइठा'—द्वीप समान आधार भूत, 'अपडी हय वरनाण दंशण धराणं'—अप्रतिहत ज्ञान दर्शनके धारी, 'वियट छउमाणं' निवर्ते है छद्म-स्थ अवस्थासे, 'जिणाणं जावयाणं'—कर्मरिपुको आप जीते, दूसरेको जीताते है, 'तन्नाणं तारियाणं' —आप तीरे, दूसरेको तारे, 'बुद्धाणं बोहियाणं'—आप बूजे, दूसरेको बुजावे, 'मुत्ताणं मोयगाणं'—आप छुटे, दूसरेको छुडावे, 'सवन्नुणं सव दरिसिणं'—सब जाणो देखो, 'शिव' निरुपद्रवी, 'मयल'—अचल, 'मरुअ'—आरोग्य, 'मणंत'—अनंत, 'मखय'—अ-क्षय, 'मव्वाबाह'—अबाधिक, 'मपुणरावितीं' —पुनरावृती रहित, 'सिद्धी गइ नाम धेयं ठाणं'—सिद्ध स्थान. 'संपताणं'—पाये, 'नमो जिणाणं'—न-मस्कार ओ जिनेश्वर, 'जिय भयाणं'—जीते भयको.

ये नमथ्थुणंका पाठ सिद्ध भगवंतको कहा ऐसे ही दूसरी वक्त अरिहंत भगवंतके करे. विशेष इत्ना "सिद्धि गइ नाम धेयं ठाणं संपाविउ का-मस"—सिद्ध गती के अभीलाषी, ऐसा कहै; और सब वैसा. "एम अरिहंत सिद्धने वंदणा नम-

स्कार करी" यों अरिहंत और सिद्धको विधी पूर्वक वंदणा नमस्कार करके 'वर्तमान काल' आप है इसी वक्तमें जो विराजमान होवे, 'पोता के धर्मगुरु धर्माचार्यजी' धर्मोदेश के दाता धर्म मार्गमें लगाणेवाले गुरु महाराजको 'वंदणा नमस्कार करी' गुण ग्राम और सविनय नमस्कार करके, फिर "पूर्वें जे व्रत आदर्या" इस वक्त पहली जो जो त्याग व्रत पच्चखाण नियम ग्रहण किये थे उनमें 'दोष अतीचार लाग्या होय' जो कोइ उसमें जांण अजांण स्ववस परवस मोहवस दोष लगा होय सव्व 'आलोइ' प्रगट कह देवे कि मेने ऐसे कर्म किये हैं, "पडिकम्मी'—फिर आगे ऐसे कर्म नही करे तथा किये हुयेका पश्चाताप करे, 'निंदी'—निंदा करे कि मेने खोटे कर्म किये, 'ग्रही'—गुरुकी साखसे पश्चाताप करे, ऐसे आत्माकी निंदा करे, 'निशल्य थइ'—तीन प्रकार के सल रहित होवे अर्थात् किसी प्रकार की गुप्त बात न रखे. ऐसा निर्मल होके फिर आवते काल के 'सव्व पाणाइ वायाओ पच्चखामी' सर्वथा प्रकारे प्राणातिपात (जीव हिंसा) का पच्चखाण सो- करे, हिंसा छोडे. "सव्वं मुसावायं पच्चखामी"—

सर्वथा प्रकारे झूट बोलने के पच्चखाण. 'सव्वं अदीन्नं दाणाओ पच्चखामी'—सर्वथा अदत्ता दानका पच्चखाण करे. "सव्वं मेहूणं पच्चखामी"—सर्वथा, मैथूनका पच्चखाण करे. ऐसेही 'सवं'—सर्वथा 'कोहं'—क्रोध के, 'माणं'—मान के, 'मायं'—कपट के, 'लोहं'—लोभ के, 'रागं'—प्रेम के, 'द्वेषं'—द्वेष के, 'कलहं'—क्लेश के. 'अभ्याख्यानं'—खोटे आल देणे के, 'पैशुन्य'—चुगली के, 'परपरावाद'—निंदा के, 'रत्यारत्य'—खुशी नाराजी के, 'माया मोसो'—कपट युक्त झूट के, 'मिथ्या दंशण सल्य के'—जिनेश्वर के मार्ग सिवाय अन्य मजहब की श्रद्धा प्रतीत के, 'एवं अठारे पाप स्थानक पच्चखीने'—यों १८ ही पाप के और जो इस जगतमें 'अकरणीज्जं जोग'—अकर्तव्य करने जोग कामे नही हैं ऐसे जगत निंद्य खोटे कर्म करने के 'पच्चखामि' पच्चखाण करे. ये पूर्वोक्त पच्चखाण कहांतक कहा हैं कि 'जावजीवाय' जाव जीव, तावे उम्मर तक किसी भी प्रकारका पाप नही करुंगा. 'तिविहं तिविहेणं'—तीन करण और तीन योगसे ये पच्चखाण होते हैं, सो तीन करणके नाम 'न करेमि' पूर्वोक्त काममें नही करुंगा, 'न कारवेमी.'

दूसरेके पास नही करावूंगा, और ' करतंपि अन्नं न समणु जाणामि' ए जो काम दूसरा कोइ करता होयगा उसको में अच्छा भी नही जाणूंगा. तीन जोग ' मणसा '=मनसे इच्छु नही, 'वायसा'-बचनसे कहूं नही, 'कायसा'-कायासे करु नही ' इम अठारे पाप पचखीनें ' ये तेतीसके भांगेसे अठारे पाप अकर्त्तव्यके त्याग करके फिर ' सव्व ' सर्वथा प्रकारे, ' असणं '-अन्नके, ' पाणं ' पाणीके, ' खाइमं '-सुखडीके, ' साइमं '-मुखवासके, ' चउविहंपि-ये चार ही आहार और ' अधिक ' कहता जो कोइ खाने पीने सूंघणे, या आंखमें डालने की जो वस्तू हैं उन सर्वको पच्चखामी-पचखाण करके फिर 'जं' जो, 'पियं'-प्रियकारी, 'इमं'-ये प्रत्यक्ष ' सरीरं '-सरीर, 'इठं' इष्टकारी अर्थात् जैसे इष्ट देव की भक्ती करते है तैसे इस्की भक्ती करके पाला हुवा, 'कंतं' कंत कारी जैसे स्त्रीको भरतार वल्लभ लगता है तैसे मुजको ये सरीर वल्लभ लगा ' प्रियं '-प्रियकारी जैसे सत् पुरुषको सती स्त्री प्यारी लगती हैं तैसे ये सरीर मुजे प्यारा लगा, (और भी इस दुनियामें सरीरसे ज्यादा कोइ भी प्यारी वस्तु नहीं हैं). ' मणुनं '-अच्छा

उमदा, ' मणामं '-मनोज्ञ मन गमता, ' धीजं ' इस सरीर से ही जीव धैर्य धर सकता हैं, ' विसासियं '-इस सरीरका जीवको पूर्ण विश्वास (भरोसा) हैं, ' समयं '-इस सरीरको माननिय कर रखा हैं, ' अणुमयं '-अणुत्तर प्रधान इस सरीरको ही जाण रहा हैं, 'बहुमयं'-बहोत बंदोबस्त (हिजापत) करके इसको पाला. इस सरीर पे कैसी ममत्व करी कित्नी यत्ना करी सो द्रष्टांत से कहते हैं. ' भंड करंडग समाणे '-जैसे लोभी गृहस्थ गेणा (आभूषण) के करंडीये (डब्बे) को हिजापत से रखता हैं, प्राण से जास्ती जाणता हैं, तैसे इस सरीरका जापता किया. तथा ' रयण करंडग भूया ' जैसे देवता रत्नों के भुषण के करंडीयेको जापते से रखते हैं. तैसे इस सरीरका जापता करके रखा. कोनसे २ कामों से उपद्रवों से बचाया सो कहते है. " माणुसीयं "-अब शीतकाल आयगा, रखे मेरे बदनको शीत लगे, ऐसा बीचार पहले से ही उन वस्त्र कोट कबजे, साल दुशाले आदिकका बंदोबस्त रखा और सीत प्राप्त हुये चार ही तर्फ से ढांक ढूप किंचित हवा न लगने दी. ' माणं उन्हं ' ग्रीष्म ऋतुमें गरमी-

से मेरा जीव घवरायगा ऐसा जाण पतले वस्त्र शीतोदक वगैरे की तजवीज कर रखी और शीतोपचार के लिये अनेक पंखे पखीये के झपट पुष्प शय्या विगेरे से हवामेहलमें लेंहरों लेते काल गुजारा. 'माणंखुहा' रखे मेरेको भूख लगेगी, ऐसा वीचार पहले ही खानपान मेवा मिष्टान इत्यादी इच्छित रुचिकर वस्तुका संग्रह कर रखा. और क्षुधा प्राप्त होवे तब भोगव के तृप्त हुये. 'माणं पिवासा' रखे मेरेको प्यास लगे ऐसा वीचार के शीतोदक करने मटकी कुंजे वर्फ गडे सरवत इत्यादी केइ वंदोवस्त करके रखे और वक्त पे भोगव शांत हुये. 'माणंवाला' रखे मुजे व्याल (सर्पादिक) जीव काटे, ऐसा वीचार के मंत्र जडी प्रमुख योग्य वंदोवस्त करके रखा. 'माणं चोरा' रखे मुजे ठग चोर लुटारे इत्यादी दुष्ट जन आके सतावे या मेरा धनादि हरण करे, ऐसा समज ढाल तरवार वंदुक आदि शस्त्र तथा सीपाइ ताला कमाडादिकका पक्का वंदोवस्त करके रखा. 'माणं दंश मसगा' रखे मेरे सरीरको डांस मच्छर पटमल इत्यादि उपद्रव करे ऐसा वीचार मच्छरदानी कर या महा पापी हो धूंवे

से बेचारे जीवोंको मार अपणे बदनको आराम दीया. 'माणं वाहिया' रखे मेरे बदनमें कोइ प्रकार की व्याधी उत्पन्न होवे तथा वाइ (बादी) करके मेरा सरीरको तकलिफ होवे. ऐसा बीचार जुलाबादि औषधीका सेवन किया. 'पीतीयं' रखे मेरेको पित्तका उठाव होवे ऐसा बीचार सुंठादिकके मोदक सेवन कर जापता किया. 'संभीमं' श्लेष्मका रोग उत्पन्न होवे ऐसा बीचार त्रीफलादिकका, सेवन किया. 'सन्नीवाइयं' रखे सन्नी पात होवे यों बीचार उष्ण पदार्थका सेवन किया. (ये मुख्य ३ त्रीदोष (रोग) के नाम लिये) और भी इस जक्तमें 'विवहा रोगायंका' ज्वरादिक अनेक प्रकारके रोग करके सरीरको दुःख होवे ऐसा बीचार अनेक महा आरंभ करके औषधीयोंका सेवन किया तथा 'परिसह' रखे मुजे शत्रु आदिक की तर्फसे दुःख होय ऐसा बीचार उसका बंदोबस्त करे. 'उवसग्गा' व्यंतरादिक देव की तर्फसे मुजे उपसर्ग होवे, ऐसा बीचार मंत्र जंत्र तावीजादिकसे बंदोबस्त करे. इत्यादी प्रकारे 'पासा फुसंति' फरसे (दुःख) फुसंति फरसे (होवे) ऐसा बीचार अनेक प्रकारके बंदोबस्तसे इस सरीरको

बचाया. ये मेरी असमज हुइ, क्यों कि इत्ने बंदोबस्त करने पर भी ये मुजे दगा देणे लगा. अब में इस सरीरको 'चरमेहिं' चरम (छेला) 'उसास निसासेहिं' श्वाशोश्वास रहे वहां तक 'वोसिरामी' वोसीराता हुं, छोडता हुं, ममत्व भाव त्यागन करता हुं अब कुछ भी होवो तो में इस सरीरका नहीं और ये सरीर मेरी नही. 'तिकट्ट' ऐसा निश्चय धारके और पुर्वोक्त रीतसे इस सरीरको वोसीराके "काल अणव कंख माणे विहरामि" काल (मरण) वांछा नही करता वीचरे (रहे)

ऐसी रीतसे समाधी मर्ण—सलेपणा—संथारा ग्रहण करे, समभाव रखे. इस सलेषणाके पांच अतिचारका स्वरुप जाणके सर्व वर्जे.

१ "इह लोग संस पउगे" इस लोकके सुख की वांछा करे अर्थात् जो मेरे संथारेका फल होय तो मुजे मरे पीछे ह्यां राज पद, राणी पद, सेठ—सेठाणी पद, रिद्धी सिद्धी संपदा, सायबी पावूं; रुपवंत धनवंत सुखी होवू.

२ 'पर लोग संस पउगे' परलोकके सुख की अभीलाषा करे. देवता, देवांगना, इंद्र इंद्राणी, अह-

मेंद्रादी देव दीव्य तेजवंत होवू, ऐसी वांछा करी. ये दोनु तराह की वांछा करनी योग्य नहीं हैं, क्यों कि इस वांछासे वो बहुत करणीका फल थोडेमें नाश हो जाता हैं. और करणी केसी होवे तो वो फल व्यर्थ जाय. ऐसा जाण इस लोक परलोकके किंचित् फल की अभिलाष न करे, सम प्रणाम रख एकांत मोक्ष सामना द्रष्टी रखके प्रवर्ते.

३ ' जीवीया संस पउगे ' संथारा लिये पीछे आयुष्य की आसा करे. अर्थात् महीमा पूजा देखके ऐसी इच्छा करे की में कैसा जैन धर्म दीपा रहा हुं, जो में बहुत जीवूंगा तो जैन धर्म बहुत महिमा होयगी, इसलिये मेरा संथारा बहुत दिन चलो.

४ ' मरणा संस पउगे ' मरने की इच्छा करे अर्थात् क्षुधा वेदनीका या अन्य वेदनीका जोर जास्ती होय तो ऐसी इच्छा करे की में जल्दी मरजावूं तो अच्छी बात. ये दोनु प्रकारके वीचार करना अयोग्य है क्यों कि ऐसी इच्छासे कुछ आयुष्य ज्यास्ती होता नहीं हैं. जित्ना बांधा हैं उत्ना ही भोगवणा पडेगा. परंतु कर्म बंध हो जाते हैं.

५ " काम भोग संस पउगे " काम भोग रुप

सुख मिलने की अभीलाषा करे अर्थात् इस करणीका फल होवो तो चक्रवर्त बलदेवके सुख, श्री देवी कामधेनू इत्यादी रिद्धी, राग रागणीयों नाटक चेटक सुगंध, खान पान, स्त्रीयादि संबंधी भोग इत्यादिक प्राप्त होवो, ऐसी इच्छा करे.

इन पांच ही प्रकारके कू बीचारोंसे आत्माको निवारके सदा धर्म ध्यान सुक्ल ध्यान ध्याता प्रवर्ते.

समाधी मर्णवाले कि भावना.

१ अहो देखीये, इस पुद्गल पर्यायका स्वरुप कैसा विचित्र हैं! अनंत पुद्गल परमाणुओं इकट्ठे होके ये सरीर बना और देखते २ ही बिरलाने लगा, देखीये ये कैसी विचित्रता हैं!

२ अहो जिनेंद्र प्रभू! आपके बचन सत्य है कि, " अधुव असा सयंमि " ये सरीर अध्रुव (अस्थिर) और अशाश्वता (अनित्य) है. सो इत्ने दिन इस की पर्यायका पलटा होता था उस्का पूर्ण पणे ज्ञा- न में नही रखता था, अब इस देहकी ये रचना देख आपके वाक्योंका पूर्ण विश्वास हुवा.

३ जैसे अनेक मनुष्यों के मिलने से मेला (बजार) होता हैं, और बहुत दिन रहके विखर

(चले) जाते हैं, तब वो शुन्यारण हो जाता है. तैसे ही ये संसाररुप मेला या इस सरीर रुप मेला अनेक परमाणूओं के संयोग से हुवा और विखरने लगा, इसमें मेरा क्या नुकशान? कारण मैं कुछ इस पुद्गल मय नहीं हुं. मैं तो (चैतन्य) इस तमासे-का देखनेवाला तमाशगीर हुं.

४ इस जगतमें सर्व पदार्थ अपने २ स्वभावसे मिलते हैं और बीखरते है. इसका कर्त्ता हर्त्ता कोइ नही हैं. इसलिये ये सरीर मेरे रखने से रहे नही और मेरे वीखरने से विखरे नहीं. तव मैं इसका वि-योग होते क्यों चिंता करुं? जो होणा होयगा सो होयगा.

५ मैं (चैतन्य) एक ज्ञायक स्वभाव मय उसीका कर्त्ता भोक्ता और अनुभवता हुं सो ज्ञायक-का स्वभाव अवीनासी है. उसका किसी भी तराह नाश न होता हैं. सरीर रहा तो क्या और गया तो क्या? रहते और जाते मेरा स्वभाव तो एकसाही रहेगा. फिर सरीरके विनाशसे चिंताका क्या कारण?

६ हे जिनेंद्र! इत्ने दिन मैं जाणता था कि ये सरीर मेरा हैं. परंतु अब मुजे सत्यभाव हुवा कि ये

सरीर किसीका न हुवा, न होवेगा. जो मेरा होता तो मेरे हुकममें क्यों नी चला ? यह प्रत्यक्ष रोग जरा और मृत्यू अवस्थाको क्यों प्राप्त होता हैं ?

७ अरे भोले जीव ! इस सरीरको माता पिता पुत्र बणावे, भाइ भगिनी भ्रात बणावे, पुत्र पुत्री तात बणावे, स्त्री भरतार बणावे, तूं तेरा जाणे; ये एक सरीर इत्नेका कैसे होवे ? जो होवे तो कोइ इसका विणास होते राख लेवे ! इसलिये सरीर और कुटुंब कोइ भी तेरा नहीं है. तूं सर्व से भिन्न चिदात्मक पदार्थ हैं.

८ ये संपत तो—जैसे इंद्रजाल की माया, बदल की छाया, स्वप्न राज, दुर्जनकाज, जैसी क्षणभंगूर हैं. तूं क्यों मोह धरता हैं ?

९ इत्ना तो जरुर ही जाणो कि जो जीवता है सो मरता नही है, और मरता है सो जीवता नही हैं ! अर्थात् जीव अमर है और काया मरनेवाली हैं. तो सोच करना ही क्यों ? कारण काल तो इस सरीर पेदा हुवा वहां से ही भक्षण कर रहाथा, और में तो अनादीसे एसा ही हुं ऐसा ही रहूंगा. मुजे मरण त्रीकालमें प्राप्त होइ नही.

१० में अकाशवंत हूं. अग्नीका पाणीका शस्त्रका इत्यादी मृत्यू देणेवाले कोइ भी पदार्थोंका मेरे उपर किंचित् ही जोर नही चलनेका; में पकडा जावू नही, इसे नाश पावू नही. परंतू आकाशमें और मेरेमें इत्ना फरक है कि वो तो अचैतन्य अमूरती है. और में सचेतन अमूरती हुं. इस से आकाश से ज्यादा सत्तावंत हूं.

११ जैसे किसी श्रीमंत के पुत्र के दोनु खीसेमें मेवा भरा है वो जिधर हाथ डाले उधर मजाही हाथ लगे, तैसे मेरे दोनु हाथमें लड्डू हैं. अर्थात् जीता हुं तो व्रत नियम तप संयमादि शुभ उपयोग की आराधना करता हुं, और मर गया तो स्वर्ग मोक्ष सुखका भुक्ता होवूंगा. विदेह क्षेत्रमें विहर मान तिर्थंकर के केवली भगवान मुनीमहाराज महासतीयों के दर्शन करुंगा. देशना सुणुंगा. प्रश्नोत्तर कर निःसंसय होवूंगा. तत्ववेत्ता हो राग द्वेष के क्षय करने समर्थ होवूंगा. फिर मनुष्य जन्मको प्राप्त हो दिक्षा ग्रहण कर दुष्कर तप कर घनघातिक कर्मका नाश कर केवलज्ञान प्राप्त कर अक्षय सुख पावूंगा.

१२ जैसे किसी के पहली रहणेका घर जूना—

पूशना–पडने जैसा होता है तब रहणेको बहुत द्रव्य खरच दूसरा मकान बणाता हैं और तैयार हुये तूर्त अती हर्ष और अति उत्सव के साथ उसमें प्रवेस करता हैं. तैसे ही हे जीव ! तेरी ये नर देही आधी (चिंता) व्याधी (रोग) उपाधी (दुःख) कर के गल गइ, शिथिल पड गइ, जरा और कालने तेरी सत्ता हर ली और तेने पहली धर्म क्रिया करी है इसलिये तुझे अवस्य देवादिक उत्तम गतीमें महा-दिव्य मनोहर इच्छितरुप बनानेवाली निर्विघ्न सुख देनेवाली वैक्रिय देही (सरीर) प्राप्त होयगी तो अब इस अस्थि मांस रक्त केश आदि मलीन पदार्थों से भरी हुइ क्षणभंगूर निकम्मी देहपर क्यों ममत्व कर-ता है ? झुंपडी छूटी के महेल मिला !

१३ जैसे कोइ वैश्य शीत ताप क्षुधा तृषा अ-नेक दुःख सहन कर मालका संग्रह करता हैं और भाव आनेकी राह देखता है की तेजी होय तो माल बेच नफा करु. और जब भाव आता हैं तब अति कष्ट से संग्रह किये माल पे किंचित् ममत्व नही करता शिघ्र लाभ उपार्जन करता हैं. तैसे ही है जीव ! तेने भी आरंभ और परिग्रह तथा प्राण प्यारा कुटुं-

वका त्यागन कर, अनेक शीत ताप क्षुधा तृषा मोक्षरुप लाभ उपार्जनेकु सहन करी सो अब ये कालरुप तेजीका भाव आया हैं, और मृत्यू मित्र तेरे मालके बदलेमें तुझे इछित सुख देता हैं, सो तूं अब इस देह पे ममत्व न करतां ये अनंत लाभ उपार्जने की वक्तमें लाभ ले ले.

१४ अपने किये हुये कृत्योंका फल तो मृत्यू ही देणेवाला है. मृत्यू हुये विन करणीका फल कैसे मिले ? इसलिये मित्र मेरे पे तो उपगार करता हैं.

१५ जैसे कोइ परचक्री किसी राजाको पकड पींजरेमें डाल खानपानादिकका अनेक दुःख देता हैं और उसके कोइ जबर मित्रराजाको इस बातकी खबर मिलने से अपने मित्रको शत्रु के ताबेमें से छुडा के सुखी करता हैं. तैसे कर्म नाम शत्रु मुजे देहरुप पींजरेमें घाल श्वासोश्वास, क्षुधा तृषा ताडन तर्जन, रोग, सोग, दुःख, पराधिनता इत्यादी बंदीखाना (काराग्रह) जैसा अनेक दुःख दीया. अब मृत्यू नामे मेरे परम मित्रकी मेरे उपर परम कृपा हुइ हैं, जिस से इस जेलखाने से छूडा मेरेको स्वर्ग मोक्षस्थान देवेगा.

१६ समाधी मरण विन स्वर्ग मोक्ष देनेकु दूसरा दुनियामें कोइ भी समर्थ नही हैं.

१७ जैसे भोग भूमी के मनुष्य-जुगलियेकों इच्छीत सुख पूरनेवाले कल्पवृक्ष होते हैं और कल्पका स्वभाव है की उस नीचे बेठ शुभाशुभ जैसी करणी करे वैसे फलकी प्राप्ती होती हैं, तैसे अपणी इच्छा पूरनेवाला कल्पवृक्ष समान ये मृत्यू प्राप्त हुआ है; अब इसकी छायामें बेठ के जो अशुभ इच्छा विषय कषायादिक धारण करोगे तो नर्क तिर्यंचादि अशुभ गती प्राप्त होयगी. और सम, समवेग, त्याग, व्रत, नियम, सत्य, सील, क्षमा, संतोष, समाधी भावका सेवन करोगे तो स्वर्ग सुख के भुक्ता हो एक भवसे मोक्ष प्राप्त करोगे.

१८ जरजरित अशुची अपवित्र देह से छुडाके देव जैसा दिव्य रुप मरण ही दे सक्ता है.

१९ जैसे मुनी महाराज अनेक नय उपनय प्रत्यक्ष परोक्ष द्रष्टांतों से सरीरका स्वरुप बताके ममत्व दूर कराते है तैसे ये मेरे बदनमें रोग पेदा हुवा है सो मेरेको प्रत्यक्ष प्रमाणसे उपदेश कर्ता है कि हे पुरुष! तूं इस सरीर पे क्यों ममत्व करता हैं? ये देह

तेरी नही है, ये तो मेरे पती (काल) की भक्ष हैं !

२० जहां तक इस सरीरमें किसी प्रकार की व्याधी न होए वहां तक इस उपरसे ममत्व न उतरे और विशेष २ इस की पोषणा कर पुष्ट करे. यों पोसते २ ही जब रोग प्राप्त होता है और अनेक उपचार करते रोग नही मिटता है तब इस देह उपरसे स्वभाविक ही प्रेम कमी हो जाता हैं. इसलिये मुनीराजसे भी ज्यादा उपदेशक–देह से ममत्व छोडानेवाला उपकारी मेरे तो रोग हुवा है.

२१ रे जीव ! इस रोगको देखके जो तूं घबराता होय, सचमुच जो तुजे रोग खराब लगता होय, इस दुःखसे कंटाला आता होय, तो बाह्य औषधीयोंका सेवन छोड; क्यों कि ये रोग कर्माधीन है और औषधीयोंमें कुछ कर्मको हटाणे की सत्ता नही है. कदापि औषधोपचारसे एकदा रोग मिट गया तो क्या हुवा ? मिटा रोग तो संख्यात| असंख्यात कालमें पीछा प्राप्त हो जाता है. इसलिये जिनेंद्र रुप सर्व रोग ओर सर्व चिकित्साके ज्ञाता महा वैद्य की फुरमाइ हुइ समाधी मरण रुप महा औषधीका सेवन कर, की जिससे सर्व आधी व्याधी उपाधीका नाश हो अज-

रामर अनंत अक्षय अव्याबाध मोक्ष सुख मिले.

२२ जो वेदनाका उठाव ज्यादा होय तो आप मनमें ज्यादा खुशी होय की जैसे तिव्र तापसे सुवर्ण शिघ्र निर्मल होता हैं, तैसे इस तिव्र वेदनीसे मेरे कर्म रुप मेल शिघ्र दूर होयगा. ऐसा बीचार वेदनीका दुःख समभाव सहन करे.

२३ नर्कमें तेने परवस पणे अनंत वेदना सहन करी, परंतू जित्नी निर्जरा न हुइ उत्नी निर्जरा अबी जो तूं समभाव रखके सहेगा तो तुजे होयगी.

२४ जो देनदार नम्रतासे साहुकारको सो रुपेके बदल ७५ रुपे देके फारकती मांगे तो मिल सकती है. और करडाइ करे तो सवाये दाम देनेसे भी छूटका होणा मुशकील हैं. तैसे ये कर्म रुप लेणदार लेणा लेणे खडे हुये है तो तूं नम्रतासे इनको देणा चुका फारकती लेनेका प्रयत्न कर; फारकती ले छुटका कर.

२५ ये तो जरुर जाण कि कर्मका देणा दिया विन मोक्ष कदापि न मिलनेकी.

२६ जैसे भाव आनेसे निर्माल्य वस्तूको बेचके वाणिक महा लाभ प्राप्त करता हैं, तैसे ही जो स्वर्ग

मोक्षके आतिंद्रीय सुख मुनी महाराज पांच महाव्रत इन्द्रीयदमनादि अनेक जप तप संयम करके प्राप्त करते है. वो सुख प्राप्त करनेका ये मृत्यू रुप अत्युत्तम मोका (अवसर) आया है. सो अब जरा समभाव धारण कर. किंचित् मन वसमें कर, जिससे स्वर्ग मोक्ष सुखके भोक्ता होय.

२७ रे आत्मन्! तेने इत्ने दिन जो ज्ञानादिकका अभ्यास किया हैं सो इस समाधी मरणमें सम प्रणाम रखणेके लिये, सो अब याद कर.

२८ जिस वस्त्रको, वापरते बहुत दिन जाते हैं, जिससे विशेष परिचय होता है, उससे स्वभावसे ही मोह कमी होता है, तैसे ही इस सरीरसे जाण.

यों सरीरसे ममत्व उतरी हुइ देखके कोइ कहे कि, ये सरीर तो तुमारा नही है, परंतु इस मनुष्य जन्मके सरीर की पर्यायको प्राप्त होके शुद्ध उप्योय व्रत संयमका साधन करते हो, इसलिये ऐसे उपकारी सरीरका रक्षण करना उचित हैं, पण विनाश नहीं करना.

तो उस्का समाधान ये है कि–अहो भाइ! तुमारा कहना सत्य हैं. हम भी यों ही जाणते हैं, कि

मनुष्य जन्ममें ही आत्म सिद्धीका आराधन हो सक्ता हैं, ऐसा दूसरेमें होणा दुर्लभ हैं. परंतु जिस काम निपजाणेको ये सरीर पाये हैं वो निपजे वांहा तक ये सरीर अच्छी तरह रहो. ये सरीर कुछ हमारा वैरी नही, है कि जिससे हम इसका विनाश करे. परंतु हरेक प्रयत्न करते न रहे तब क्या इसके विणास होते आत्म गुणका तो विणास नही किया जाय? जैसे सहुकार वेपार कर द्रव्य कमानेको दुकान की हिजापत कर रखता हैं, और उस दुकानके साह्यसे अनेक द्रव्य उपार्जन कर उसमें रखता हैं. कोइ वक्त उस दुकानमें अग्नी प्रयोग होने से लाय लगे तब वो वेपारी उसका उपाय चले वांहांतक तो उस दुकानका और धनका दोनुका रक्षणका उपाय करते हैं; इत्नेपर भी जो दुकानको नही बचती देखे तो उसमें से अपणा धन छोड उपाय कर बचे जित्ना बचाते हैं, परंतु दुकान के पीछे अपना धन नही गमाते हैं. तैसे ही ये सरीररुपी दुकान के साह्य से अनेक आत्म गुण तप संयम की कमाइ होती थी और इसपे किसी प्रकारका विघ्न नही होवे वहांतक इसको खानपान वस्त्रादिक की सहाय दे रखी और रोग रुप अग्नी

प्रयोग होते औषध उपचार कर ही बचाइ, परंतु अब मृत्यूरुप महा लाय (अग्नी) लगी हैं ये कोइ भी उपाय से नही बुजे, दुकान नही बचती दिखे, इसलिये हम हमारे आत्म गुण की हिफ़ाज़त करने इस झूपडीको जलती छोड, आत्म गुण की संभाल करनेमें लगे हैं. जो हमारे आत्मगुनका बचाव हुवा तो हमारेको इस देह की कुछ प्रभा नही हैं. आत्म गुण के पसायसे सब सुख प्राप्त कर सकेंगे. ऐसा जाणभेद विज्ञानी पुरुष समाधी मरण करती वक्त संथारे सलेषणामें किंचित् ही प्रणामों की अस्थिरता न करे.

आंतिक शुद्धी के ४ ध्यान.

पूर्वोक्त रीती से प्रणाम की स्थिरता करके चित्त समाधी से उत्तरोत्तर ४ ध्यान धरे.

१ "पदस्थ" प्रथम तो नवकार लोगस्स नमोथ्थुणं वगैराका स्मरण करे.

२ "पिंडस्थ" देहका स्वरुप तथा लोकका स्वरुप दूसरे प्रकरणमें कहा सो बीचारे. देह चैतन्य की भिन्नता लेखे. और बीचारे कि जो इस संसारमें कुछ सार होता तो इसे तिर्थंकर भगवान क्यों छोडते? इत्यादी बीचारे.

३ 'रुपस्थ' अरिहंत प्रभू के गुण पहले प्रकरण में कहे प्रमाणे तथा अरिहंत की शक्ती और आत्म शक्ती की एकत्रता करे.

४ 'रुपातीत' सिद्ध के गुण और सिद्ध स्वरुप से अपणी आत्मा की एकत्रता करे कि मेरी आत्मा सिद्ध जैसी सत्–चित्–आनंद युक्त अनंत अक्षय अव्याबाध अनंत ज्ञानमय अनंत दर्शनमय अनंत चारित्रमय, अनंत तपमय, अनंत वीर्यमय; अरुपी, अखंड, अजर, अमर, अविनासी, अकषायी; अनुपाधी, शांत स्वरुप सिद्ध स्वरुपमय है. ऐसी शुद्ध भावना शांत चित्त से भावता, सर्व जीव की साथ मित्र भाव रखता, अनाकुलता–निश्चलता–समाधी भाव से देह मुक्त हो सर्व सुख स्वर्ग सुख इंद्र अहमेंद्रादिक के पदका भोक्ता होय. एकांत उज्वल सम्यक् द्रष्टीपणा पाय. वांहा से आयुष्य भवस्थितिका क्षय कर उत्तम जाती कुल के विषे जन्म ले. पूर्व धर्म के पसाय से विषय भावमें अलुब्ध हुवा हुवा, संयम आराध, शुद्ध क्रिया यथाख्यात चारित्र की आराधना कर, चार घनघातिक कर्मका अंत कर, केवलज्ञान प्राप्त करे. फिर भूमंडके अनंत जी-

वोंपे अनंत उपकार कर आयुष्यके अंत बाकीके चार अघातिक कर्मका क्षय कर, समाधी युक्त अनंत अक्षय अव्याबाध मोक्ष–सिद्ध सुख पावे.

ॐ शांति, शांति, शांति, शांति.
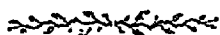
एसे धम्मे धूय नितीए सासए जिण देशीयं ।
सिझा सिझंसि चाणेणं सिझासंति तहावरे तिबेमी ॥

ये सूत्र और चारित्र धर्मका सविस्तर यथामति बयान किया, सो धर्म धूव (निश्चल) है, नित्य (सनातन) है, शाश्वत (अनंत) हैं. श्री जिनेश्वर भगवानने द्वादस जातकी प्रषदामें प्रगट उपदेश्या है. इस धर्मको यथा तथ्य आराधके गये कालमें अनंत जीव मोक्ष गतीको प्राप्त हुए हैं. वर्तमान कालमें संख्याते जीव मोक्ष सुख प्राप्त कर रहें है और इस ही धर्मको आवते कालमें अनंत जीव आराधके मोक्षके अनंत सुखको प्राप्त करेंगे.

और इस वक्तमें ये ही धर्म सर्व जीवको–'हीयाए' –हितका कर्त्ता, 'सुहाए' सुखका कर्ता, 'खेमाए'–क्षेम–कल्याणका कर्ता, 'निसेसाए'–आत्माका विस्तारका कर्ता, 'अणुगामी भवीस्सइ'–अनुक्रमे सिद्ध गतीका देणेवाला होवेगा. तथास्तु !

विनंति.

सुज्ञ पाठक गण ! इस 'जैनतत्व प्रकाश' ग्रंथ, कि जो मेने श्री जीनेश्वरने फुरमाये हुवे मूल सूत्रों की साहाय्यसे व कितनेक ग्रंथों और विद्वानों की साहाय्यसे तैयार किया है इसमें जो कुच्छ दोष होवे सो बाजुपे रख उस्मेंका सदुपदेश तर्फ ही द्रष्टि रखना और इस तराह गुणानुरागी हो अपनी आत्माको लाभ पहुंचाना ऐसी प्रार्थना है; क्युं कि भव्य जीवोंको लाभ पहुंचानेके लिये ही मेंने ये तकलीफ उठाइ हैं. में नहीं समझता हूं कि में विद्वान हूं, परंतु परोपकार की द्रष्टिसे ही ये साहस किया है. इस लिये मेरे आशयपे द्रष्टि रख, दोषोंको क्षमा कर, गुण ही लेनेकी विनंति है.

☞ पृष्ट संख्याका हिसाबः—इस पुस्तकके २ खंड हैं, दुसरे खंडके ६ प्रकरणोंमें सर्व मिलकर ५३२ पृष्ट हैं. प्रथम खंडके ५ प्रकरणोंमें अनुक्रमे ,५८, १०६, १०४, ९४, ३६ पृष्ट हैं अर्थात् प्रथम खंडमें सर्व मिलकर ३९८: दोनो खंडके मिल कर ९३० पृष्ट है. मुख पृष्ट—प्रस्तावना—शुद्धिपत्र—नुकसे इत्यादि पृष्टोंकी गीनती ९३० में नहीं की गइ है.